१९२१ की अहमदाबाद कांग्रेसमें

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२२

(दिसम्बर १९२१ - मार्च १९२२)

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भारत सरकार

जून १९६७ (आषाढ़ १८८९)

साढ़े सात रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, दिल्ली – ६ द्वारा प्रकाशित
और जीवणजी डाह्याभाई देसाई, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद – १४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

इस खण्डमें १५ दिसम्बर, १९२१ से ३ मार्च, १९२२ तककी सामग्री संगृहीत है। भारतके अहिंसात्मक स्वतन्त्रता संग्रामके इतिहासमें यह अवधि वृष्टिछायाकी अवधि है। ठीक उस समय जब कि हमारे संघर्षकी सफलताकी लहरें ऊँचीसे-ऊँची उठ रहीं थीं, चौरीचौरामें भीड़ हिंसा कर बैठी और गांधीजीने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको तत्काल स्थगित कर दिया। उनका एक यही काम असन्दिग्ध भावसे यह सिद्ध कर देता है कि अहिंसा उनके लिए नीति ही नहीं थी, एक नैष्ठिक सिद्धान्त था। "आक्रामक कार्यक्रमसे बिलकुल पीछे हट जाना राजनीतिक दृष्टिसे भले ही गलत और अबुद्धिमत्ताका काम हो, किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह कदम धार्मिक दृष्टिसे एकदम सही है।" (पृष्ठ ४४०)

खण्डका प्रारम्भ होता है देशके नाम इस अपीलसे कि सरकार चाहे जितनी गिरफ्तारियाँ क्यों न करे, वह गिरफ्तार होनेवाले स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाओंकी संख्यामें कमी न पड़ने दे, और अन्त होता है अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्योंके नाम इस अपीलसे कि वे "फौरन संघर्ष शुरू करनेसे सम्बन्धित चीख-पुकारकी ओर ध्यान न दें" बल्कि अपना पूरा ध्यान लगायें "आत्मशुद्धि, आत्मनिरीक्षण और खामोशीके साथ संगठन" (पृष्ठ ५२७) की ओर। इस खण्डकी सामग्री इस निर्णयसे उस निर्णय तक जानेकी प्रक्रियाको स्पष्ट करती है और उससे गांधीजीके मनकी उस हिचकिचाहट और शंकाओंपर प्रकाश पड़ता है जिसके कारण उन्होंने सविनय अवज्ञाका कार्यक्रम अनिश्चित कालके लिए मुलतवी कर दिया।

यद्यपि १७ नवम्बरको बम्बईमें जो दंगे हुए थे उससे सार्वजनिक अहिंसात्मक सविनय अवज्ञाके बारेमें देशकी तैयारीके प्रति गांधीजीका विश्वास हिल गया था किन्तु जब सरकारने तमाम नेताओंको अकारण गिरफ्तार कर लिया और असहयोग तथा सविनय अवज्ञा आन्दोलनोंको दबानेकी दृष्टिसे अन्य दूसरे कदम उठाये, तो गांधीजीके सामने सिवाय इसके कोई चारा नहीं रहा कि वे व्यक्तिगत और सार्वजनिक सविनय अवज्ञाकी योजनाको पुनर्जीवित करें। सरकारकी कार्रवाईको उन्होंने देशके आत्मसम्मानको चुनौतीके रूपमें स्वीकार किया और देशसे उसका प्रत्युत्तर देनेकी माँग की। २८ दिसम्बर १९२२को अहमदाबाद कांग्रेस अधिवेशनमें बोलते हुए उन्होंने कहा: "मैं शान्तिप्रिय व्यक्ति हूँ।. . .पर मैं शान्ति हर मूल्यपर नहीं चाहता। मैं उस तरहकी शान्ति नहीं चाहता जो हमें पत्थरोंमें मिलती है; मैं उस तरहकी शान्ति नहीं चाहता जो कब्रोंमें मिलती है . . ." (पृष्ठ १११)। ब्रिटिश शासन दावा तो इस बातका करता था कि वह भारतको क्रमश: उत्तरदायी स्वशासन देनेके लिए उत्सुक है, किन्तु देशकी नई मन:स्थितिको समझना उसके बूतेसे बाहरकी बात थी, क्योंकि देश अब कृपापूर्ण संरक्षणकी बात सुननेके लिए तैयार नहीं था। लॉर्ड रीडिंगके एक भाषणका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा कि उन्हें "यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि हम

असहयोगी सरकारके साथ संग्राम कर रहे हैं" (पृष्ठ ३०)। किन्तु गांधीजीने उस समय भाषणमें इतना ही कहा कि हमें खिलाफत मामले और पंजाब-जुल्मोंके आधार-भूत स्वराज्य ही की ओर देखना है और उसे प्राप्त करना है। इस सीमित उद्देश्यके लिए किये जानेवाले संघर्षमें वे सरकारपरस्तोंकी भी सहानुभूति और समर्थन प्राप्त करना चाहते थे। उन्होंने असहयोगियोंसे बार-बार उनकी सद्भावनाएँ पानेकी कोशिश करनेको कहा। पण्डित मदनमोहन मालवीयने सरकारके साथ बातचीतके लिए गोलमेज परिषद् करनेकी सम्भावनाके विचारार्थ जो सर्वदलीय सम्मेलन बुलाया था, गांधीजीने स्वयं उसमें भाग लिया। बम्बईके इस अधिवेशनको गांधीजीने सफल और असफल बताकर वर्णित किया: "जहाँतक उसका सम्बन्ध उपस्थित सज्जनोंकी इस उत्कट अभिलाषासे है कि वर्तमान झगड़ेका निपटारा शान्तिके साथ किया जाये तथा जहाँतक उसके द्वारा परस्पर भिन्न मत रखनेवाले लोगोंको एक ही मंचपर लानेका सवाल था, वहाँतक तो उसके काममें सफलता प्राप्त हुई है" (पृष्ठ २२६)। और वह असफल हुआ; क्योंकि उपस्थित व्यक्तियोंमें समस्याकी गम्भीरताका ठीक-ठीक एहसास दिखाई न पड़ता था। उक्त सम्मेलनने समझौतेका एक प्रस्ताव पास किया और गांधीजीकी सलाहपर कांग्रेस कार्यकारिणीने उसके अनुकूल प्रतिक्रिया प्रकट की (पृष्ठ २२२-२३) गांधीजीको प्रस्तावित गोलमेज परिषदसे ऐसी कोई आशा नहीं थी कि उसके फलस्वरूप कोई निश्चित निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं। वे अंग्रेजी शासनके मानसको जानते थे और इसलिए उन्हें भरोसा था कि वह नाक दबाये बिना मुँह खोलनेवाला नहीं है। उन्होंने कहा: "इस दृष्टिसे सोचनेपर पूर्ण स्वराज्य-की योजना तैयार करनेके लिए कोई ऐसी सभा करनेका विचार मैं इस समय अवश्य ही अनुपयुक्त मानता हूँ। भारत अपनी शक्तिका कोई अकाट्य प्रमाण अभीतक नहीं दे पाया है। माना कि उसने भारी कष्ट उठाये हैं किन्तु अभी अपने ध्येयके गौरवकी दृष्टिसे उसे और भी कष्ट सहन करना जरूरी है।" (पृष्ठ २३१)

गोलमेज परिषदका यह प्रस्ताव सरकारने नामंजूर कर दिया और दिसम्बर १९२१ के अहमदाबाद अधिवेशनमें पास कांग्रेस-प्रस्तावके अनुसार गांधीजीने बारडोलीमें सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ करना तय किया। उन्होंने पहली फरवरीको अपना विचार सूचित करने और "अवैध दमन" को समाप्त करनेकी अपनी अन्तिम प्रार्थनाके साथ वाइसरायको पत्र लिखा और उसमें वचन दिया कि यदि सरकार उक्त आशयकी घोषणा कर दे तो वे देशसे कहेंगे कि "वह लोकमतको और भी तैयार करे और भरोसा रखे कि लोकमतके बलपर देशकी वे माँगें पूरी हो जायेंगी, जिनमें किसी तरहका परिवर्तन नहीं किया जा सकता" (पृष्ठ ३२०)। इस बीच बारडोलीमें सत्याग्रहकी तैयारियाँ चलती रहीं और गांधीजीको विश्वास हो गया कि संघर्षके लिए आवश्यक शर्तोंको जनताने लगभग पूरा कर लिया है। (पृष्ठ ३१०)। उन्होंने यह भी कहा कि सरकार भी बड़े संयमसे काम ले रही है: "सरकारके इस व्यवहारको देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। उसकी यह रीति प्रशंसनीय है। यह लेख लिखते समय तक दोनों ही पक्षोंके लोग प्राचीन वीर योद्धाओंकी

तरह अमल कर रहे हैं" (पृष्ठ ३१२)। गांधीजीने यह लेख अंग्रेजीकी अपनी प्रिय "लीड काइंडली लाइट"वाली प्रसिद्ध प्रार्थनाका उद्धरण देकर समाप्त किया।

इसके बाद वह दुर्घटना हुई जिसे गांधीजीने "चौरीचौराका हत्याकाण्ड" (पृष्ठ ४३८) कहा। ४ फरवरी १९२२को उत्तर प्रदेशके गोरखपुर जिलेके चौरीचौरा गाँवमें जनताका जुलूस निकला। पुलिसकी ज्यादतियोंसे उत्तेजित होकर उसने स्थानीय पुलिस स्टेशनकी इमारतमें आग लगा दी, इक्कीस सिपाहियोंको जानसे मार डाला और उनके शव फूंक दिये (पृष्ठ ४०७ और ४३८–९)। गांधीजीने इस घटनाको "दैवी चेतावनी" (पृष्ठ ४८६-५०) की तरह ग्रहण किया और जो कदम आगे बढ़ाया था, उसे वापस ले लिया। उनके कहनेपर १२ फरवरीको कांग्रेस कार्यकारिणीने एक प्रस्ताव द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलनको अनिश्चित कालके लिए मुल्तवी कर दिया और जनताको सलाह दी कि असहयोग कार्यक्रममें समाविष्ट रचनात्मक कामोंपर ध्यान लगाया जाये। (पृष्ठ ३९९–४०३) सार्वजनिक सविनय अवज्ञाके लिए बारडोलीके कार्यकर्त्ताओंकी जो टोली तैयार हो रही थी उनमें से हरएकने, फिर वे तरुण थे या वृद्ध, गांधीजीसे कहा कि एक बार सरकारको चुनौती दे चुकनेके बाद यदि आप पीछे हटेंगे तो सारी दुनियाके सामने देशका सिर नीचा हो जायेगा। उनका यह कथन मानों राष्ट्रका ही कथन था। गांधीजी राष्ट्रके मानसको जानते थे। जवाहरलाल नेहरू उन दिनों जेलमें थे। गांधीजीने उन्हें लिखा: "देखता हूँ, तुम सबको कार्य-समितिके प्रस्तावोंसे भयंकर पीड़ा हुई है।" (पृष्ठ ४५७) किन्तु प्रस्तावोंके विरोधमें जो तूफान उठा, वे उसमें अडिग रहे और उन्होंने कहा कि मैं ऐसे किसी भी आन्दोलनका नेतृत्व नहीं कर सकता जो "आधा हिंसक और आधा अहिंसक हो, फिर चाहे उसके बलपर स्वराज्य ही क्यों न मिलनेवाला हो।" (पृष्ठ ३७०)। क्योंकि वे जानते थे कि वह उनकी कल्पनाका स्वराज्य नहीं हो सकता।

२४ और २५ फरवरीको दिल्लीमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी जो बैठक हुई उसमें कार्यकारिणीके उक्त प्रस्तावोंका 'भीषण विरोध' किया गया (पृष्ठ ५२६)। गांधीजीने उस बैठकमें कहा: "मेरा रोग तो असाध्य है।... मैं इस दुनियामें अगर किसी आलिमके आगे सिर झुकाता हूँ तो वह है 'मेरे अन्तस्तलकी शान्त, सूक्ष्म आवाज'।" (पृष्ठ ५२५)। कार्यकारिणी द्वारा पास किया गया उक्त प्रस्ताव बिना किसी बड़े फेरफारके अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने भी स्वीकार कर लिया, किन्तु बैठकके दरम्यान जो-कुछ हुआ, उससे गांधीजी पहलेसे भी अधिक दुःखी हो गये। किन्तु साथ ही उन्हें परिस्थितिकी भी अधिक ठीक जानकारी हो गई। (पृष्ठ २५६)। उन्हें कुछ दिनोंसे इस बातका आभास तो था कि अहिंसाको नीतिकी दृष्टिसे भी सभी असहयोगी सदा पालनीय नहीं मानते। सविनय अवज्ञा आन्दोलनके मुल्तवी किये जानेके बाद उन्होंने जवाहरलालको लिखा: "मैं तुम्हें बता दूं कि इस घटनाके बाद मेरे लिए कोई चारा ही नहीं रह गया था। वाइसरायको पत्र भेजते समय मन शंकाओंसे खाली नहीं था, जैसा कि उसकी भाषासे जाहिर है।... ये सब खबरें और दक्षिणसे अन्य खबरें भी मेरे पास पहुँची थीं कि चौरीचौराके समाचारोंने बारूदमें

है।" (पृष्ठ ५२६)

सविनय अवज्ञा आन्दोलनको अनिश्चित कालके लिए बन्द कर देनेसे लोगोंको ऐसा लगा कि गांधीजीका राजनीतिक नेतृत्व एकदम असफल हो गया है। आलोचकोंने इसे उनकी 'कलाबाजियां' (पृष्ठ ५१३) घोषित किया। किन्तु यह कोई पहला ही अवसर नहीं जब गांधीजीकी निष्ठाकी कसौटी हुई हो और वे प्रत्यक्ष असफलताकी आगमें पड़कर और भी निखरकर न निकले हों। अपनी सभी सार्वजनिक गतिविधियोंमें वे सदा ईश्वरको ही अपना पूरा आधार मानते थे। इसीसे उन्हें शक्ति मिलती थी। इस खण्डका पहला ही शीर्षक उनकी इस निष्ठाको अभिव्यक्त करता है: "यदि हम केवल परमात्माको ही अपना सहारा मानें और अपनेको उनकी शरणमें छोड़ दें तो हम सरकारकी तमाम अग्नि-परीक्षाओंमें से बेदाग बाहर निकल आयेंगे।. . . हमपर जरा भी आँच न आने पायेगी। . . . जालिमके सामने अडिग खड़े रहनेकी रीति यह नहीं है कि हम उससे घृणा करें या उसपर हाथ उठायें, बल्कि यह है कि हम अपने उस दुःख और क्लेशके समय ईश्वरके दरबारमें नम्र होकर सच्चे दिलसे पुकार करें" (पृष्ठ ४–५)। गांधीजीने इसी भावसे काम किया और उत्पन्न परिस्थितिसे बाहर निकले। उन्हें जो *व्यक्तिगत अपमान सहना पड़ा, वह बेशक जबरदस्त था।* "किन्तु शैतानकी आवाज गूंजी, 'वाइसरायको भेजे गये आपके घोषणापत्र तथा उनके उत्तरमें लिखे गये आपके प्रत्युत्तरका क्या होगा? अपमानका यह घूंट सबसे अधिक कड़वा था" (पृष्ठ ४३९)। किन्तु अबतकका पशोपेश दूर हो चुका था और गांधीजीको अपना रास्ता बिलकुल साफ दिखाई पड़ रहा था: "हमारे अपमान और कथित पराजयपर प्रतिपक्षियोंको खुश होने दीजिए। . . . अपने प्रति झूठा सिद्ध होनेकी अपेक्षा संसारकी आँखोंके सामने झूठा सिद्ध होना लाख गुना अच्छा है। . . . मुझे वैयक्तिक रूपसे प्रायश्चित्त करना होगा। मुझे एक ऐसा संवेदनशील उपकरण बनना है जो आसपासके नैतिक वातावरणमें होनेवाले सूक्ष्मतम परिवर्तनको स्पष्ट रूपसे अनु-

भव करके प्रकट कर सके। मेरी प्रार्थनाओंमें और भी अधिक गहरी सचाई और नम्रता होनी चाहिए।" (पृष्ठ ४४२) इस विचारके अनुसार प्रायश्चित्तके रूपमें उन्होंने उपवास किया। अपने कनिष्ठ पुत्र देवदासको १२ फरवरीके अपने पत्रमें उन्होंने उपवासका उद्देश्य समझाते हुए लिखा: "पीड़ा तो प्रसूताको ही भोगनी पड़ती है।. . . मुझे भी अहिंसा और सत्य-धर्मको जन्म देना है, इसलिए उपवासादिकी पीड़ा तो मुझे ही भोगनी होगी।" (पृष्ठ ४१८)

गांधीजीने अपने राजनीतिक कार्यक्रमकी इस पराजयको स्वीकार किया, किन्तु उसका यह अर्थ नहीं है कि स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी उनकी निष्ठामें कहीं भी कोई कमी हुई। वे ब्रिटिश शासनको सुधारना चाहते थे, अथवा समाप्त ही कर देना चाहते थे। लॉर्ड वर्केनहेड कहिए अथवा श्री मॉन्टेग्यु कहिए, के वक्तव्योंमें भारतीय राष्ट्रवादियोंसे यह कहा गया था कि वे भारतके स्वतन्त्र होनेकी आशा छोड़ दें। गांधीजीने इसका जो जवाव दिया उससे सन् १९२० की उनकी मनःस्थितिकी याद आ जाती है, जब वे ब्रिटिश शासनकी वुराइयोंके विरोधमें जैसे जले जा रहे थे और जब वे उसे वार-वार आसुरी शासन कहते हुए थकते नहीं थे: "शक्तिके मदमें चूर और कमजोर जातियोंको लूटने-खसोटनेवाला कोई भी साम्राज्य दुनियामें कभी चिरकाल तक नहीं टिका; और यदि ईश्वर है तो ब्रिटिश साम्राज्य भी अधिक दिनों तक नहीं टिक पायेगा; क्योंकि इसका आधार योजनावद्ध शोषण और निरन्तर पशुवलका प्रदर्शन है। . . . मैं जानता हूँ कि सात समुद्र पारसे आई हुई इस धमकीके वारेमें मैंने वहुत कड़े शब्द कहे हैं, लेकिन अव वह अवसर आ गया है जब अंग्रेजोंको यह अहसास करा देना वहुत जरूरी है कि जो लड़ाई सन् १९२० में छिड़ी है, वह अन्तिम लड़ाई है। . . ." (पृष्ठ ४८२)। "गर्जन-तर्जन" नामक इस लेखके लिखे जानेके कुछ ही दिन वाद गांधीजी गिरफ्तार कर लिये गये। उनपर लगाये गये तीन अभियोगोंमें से इस लेखका लिखा जाना भी एक था।

असहयोग आन्दोलनके कारण एक ही कुटुम्वके लोगोंके वीच भी मतभेद पैदा हो गये थे, किन्तु, जैसा कि मालवीय परिवारके सम्वन्धमें लिखी गई टिप्पणीसे स्पष्ट है, (पृष्ठ १७४) गांधीजीने पिता-पुत्रके वीच कभी दरार पदा नहीं होने दी, और जवकि नवयुवक अपनी अन्तरात्माके आदेशपर निर्द्वन्द्व और मुक्त ढंगसे चलते रहे, उन्हें अपने उदारमना वुजुर्गोंके आशीर्वादसे वंचित नहीं होने दिया। इस प्रकार संघर्षकी आँधी और तूफानके वीच भी उन्होंने व्यक्तिगत सौहार्द और पारिवारिक निष्ठाके अनिवार्य कर्त्तव्यका निर्वाह किया।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली; आन्ध्र सरकार; श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली; तथा 'बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'बापुनी प्रसादी', 'माई डियर चाइल्ड', 'सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी', 'सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी', खण्ड २ (संक्षिप्त संस्करण), 'स्टोरी ऑफ माई लाइफ', पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा निम्न-लिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओंके आभारी हैं: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'गुजराती', 'नवजीवन', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इंडिया', 'लीडर', 'हिन्दी नवजीवन' तथा 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए हम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रेफरेंस डिवीजन), नई दिल्ली; श्री प्यारेलाल नय्यर तथा कागजातकी फोटो नकल बनानेके लिए सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही उसे सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके हैं हमने उनका, मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया है। जिन नामोंके उच्चारणके बारेमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं हैं, कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन तिथि दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत, साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका; 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०', सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय, (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

परिशिष्ट

१. टिप्पणियाँ

देशबन्धु दास[1]

लॉर्ड रीडिंगने[2] जो कहा था लगभग कर दिखाया। देशके बड़ेसे-बड़े नेता भी गिरफ्तारीसे नहीं बचे।[3] लॉर्ड रोनाल्डशेके[4] भाषणका अभिप्राय लोगोंने यह समझा था कि देशबन्धु दास कांग्रेसके अधिवेशनसे पहले गिरफ्तार नहीं किये जायेंगे और अगर उसके बाद गिरफ्तार हुए भी तो कुछ अनुचित किये जानेपर ही। किन्तु लॉर्ड रीडिंगकी धमकी इसके बाद सामने आई और उससे लॉर्ड रोनाल्डशेके अभिप्रायपर हरताल फिर गई। यदि मनोनीत सभापति स्वयंसेवक बनाता रहे और घोषणापत्र जारी करता रहे तो फिर उसे क्यों आजाद रहने दिया जाये? और फिर कलकत्तेमें युवराजके आगमनके दिन हड़ताल करनेकी हलचल भी जैसीकी-तैसी चल ही रही है। मेरे खयालमें ऐसा ही कुछ सोचकर मनोनीत सभापति गिरफ्तार किये गये हैं। उनके साथ-साथ दूसरे अनेक प्रधान कार्यकर्त्ता भी पकड़े गये हैं। मौलाना अबुल कलाम आजाद[5] जो कि मुस्लिम उलेमाओंमें सर्वाधिक बड़े विद्वानोंमें हैं, मौलवी अकरम खाँ जो कि खिलाफत समितिके मन्त्री हैं, श्री ससमल जो कि बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री हैं, बाबू पद्मराज जैन जिनका प्रभाव कलकत्तेके मारवाड़ीसमाज-पर है, सभापति महोदयके साथ गिरफ्तार हुए हैं। यह स्पष्ट है कि ये गिरफ्तारियाँ हड़तालको रोकनेके लिए हुई हैं। इन गिरफ्तारियोंसे यह नतीजा निकलता है कि अधिकारीगण लोगोंको शान्तिके साथ समझा-बुझाकर हड़तालके लिए राजी करनेकी बात बरदाश्त नहीं कर सकते। वे तो यही चाहते हैं कि जबरदस्तीसे ही क्यों न हो, दुकानें खुली रखी जायें। अलबत्ता वे कर्नल जॉनसनकी[6] तरह लोगोंको डरा-धमकाकर दुकानें खुलवाकर वहाँ सिपाहियोंको पहरेपर बिठा देना नहीं चाहते; बल्कि नेताओंको गिरफ्तार करके डरपोक दुकानदारोंको भयभीत कर देना चाहते हैं। सो कलकत्तेके व्यापारियोंके लिए अब यह अवसर आ गया है कि वे, अपने नेताओंके उनसे अलहदा कर दिये जानेपर भी, उस दिन हड़ताल रखें और इस तरह अपने निश्चय और स्वतन्त्र-वृत्तिका परिचय दें। अब तो २४ तारीखको हड़ताल रखना

१. चित्तरंजन दास (१८७०-१९२५); वकील, वक्ता और लेखक; १९२१ में कांग्रेसके अध्यक्ष; १९२३ में स्वराज्य पार्टीकी स्थापना की।

२. १९२१ से १९२६ तक भारतके वाइसराय।

३. अभिप्राय १० दिसम्बर, १९२१ को देशबन्धु दासकी गिरफ्तारीसे है।

४. बंगालके तत्कालीन गवर्नर।

५. १८८९-१९५८; प्रसिद्ध नेता, दो बार कांग्रेसके अध्यक्ष; स्वतन्त्रता प्राप्तिके बादसे १९५८ तक केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्री।

६. अप्रैल-मई १९१९ में मार्शल लॉके दौरान लाहौर क्षेत्रके कमांडिंग अफसर।

पहलेसे भी अधिक आवश्यक हो गया है। युवराजके स्वागतके प्रति विरोध-प्रदर्शनकी भावना अब गौण हो गई है। अब तो अपने नेताओंके गौरव और सम्मानके लिए कलकत्तेके लोगोंको पूरी हड़ताल करना आवश्यक हो गया है। इससे अपने नेताओंके प्रति उनकी निष्ठा सिद्ध होगी और यह भी सिद्ध होगा कि वे स्वयं भी अपने मतके अनुसार आचरण करनेमें समर्थ हैं। मुझे आशा है कि कलकत्तेकी जनता आगामी २४ दिसम्बरको अपने इस स्पष्ट कर्त्तव्यका पालन करनेमें नहीं चूकेगी और इस समय जब हमारे नेता जेल जा चुके हैं, शान्ति-रक्षाके लिए हरएक असहयोगी स्वयं नेता बन जायेगा। सबसे अच्छा तो यह हो कि २४ तारीखको वे अपने घरोंमें रहें और सिर्फ स्वयंसेवक ही बाहर रहें। स्वयंसेवकोंका कर्त्तव्य होगा कि वे उन लोगोंको किसी तरहकी हानि न पहुँचने दें, जिन्होंने उस दिन दुकान खोले रखना तय किया हो। यह तो गृहीत ही है कि कांग्रेस और खिलाफत समितियोंके नये पदाधिकारियोंका चुनाव हो गया होगा। हमारी सच्ची कसौटीका समय तो यही है। आज नेतृत्व ग्रहण करना वैसा ही है जैसा कि आयरलैंडके स्वर्गीय शहीद मैक्स्विनीका[1] लॉर्ड मेयरका पद ग्रहण करना था। क्योंकि नेता-पदपर प्रतिष्ठित होनेके साथ-ही-साथ तुरन्त जेल जानेकी जिम्मेदारी भी आ जाती है। यदि सचमुच राष्ट्रका उत्थान हो चुका है तो नेताओं और उनके अनुगामियोंका प्रवाह बराबर उमड़ता रहेगा। सरकार हमसे जितनी चाहे हम बराबर उसे अपनी ही आहुतियाँ देते रहें। और जैसे ही हम सरकारकी यह माँग पूरी कर देने योग्य सिद्ध हुए, हमें विजय मिल जायेगी।

सबके जेल जानेकी उपयोगिता

हम सब लोगोंको अपने जेल जानेके औचित्यके विषयमें सन्देह नहीं होना चाहिए। यदि इसके लिए जितने लोग चाहिए उतने आगे न आयें तो हमें साहसपूर्वक अपना अल्पमतमें होना स्वीकार कर लेना चाहिए और फिर यदि हममें अपने कार्यक्रमपर निष्ठा है तो हमें चाहिए कि हम वचनसे नहीं अपने कर्मसे उसका प्रसार करके इस अल्पसंख्याको बहुसंख्यामें परिणत कर लें। हमें अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि तिल-भर आचरणका मन-भर उपदेशसे अच्छा होनेकी बातमें कितना बल है। नये साधनोंकी खोजमें समय बरबाद करनेकी अपेक्षा उपलब्ध साधनोंका उपयोग करना सही अर्थशास्त्र है। यदि हम अपने मौजूदा साधनोंका उपयोग करते रहें तो नये साधन अपने-आप जुट जायेंगे। यदि यह भी मान लिया जाये कि लोग जेल जानेके लिए आगे नहीं आयेंगे, तो इतना तो निश्चित है कि जो जेल नहीं जाना चाहते वे कामका कोई दूसरा तरीका स्वयं ढूँढ़ लेंगे। इसमें कमसे-कम सत्यशीलता तो होगी। भारतके जो लोग कष्ट सहन करते हुए असहयोग करनेके कायल हैं, वे पूरी तरह उस मार्गका अवलम्बन करेंगे। यदि हम बीसों दफा जेल जायें और फिर भी जेल जानेवालों की तादाद न बढ़े तो मैं तो उस समय भी यही कहूँगा कि "हमको अपना प्रयत्न तबतक बराबर जारी

१. आयरलैण्डके देशभक्त और कार्कके लॉर्ड मेयर। आयरलैण्डकी मुक्तिके लिए १९२० में ६५ दिनके आमरण अनशनके बाद उनका देहावसान हुआ।

बुरे व्यवहारकी आशा कर रखी है। अतएव यह सरकार हमारी कार्रवाई रोकने या कम करनेके लिए चाहे जो करे मुझे अचम्भा नहीं होता। मुझे न आश्चर्य होता है और न सन्ताप ही। वह तो अपनी हस्तीकी रक्षाके लिए ही लड़ रही है; और मैं समझता हूँ कि यदि मैं उसकी जगहपर होता तो मैं भी वैसा ही करता जैसा वह कर रही है। शायद इससे भी ज्यादा करता। हम उससे अपने अधिकारोंका उपयोग न करनेकी आशा ही क्यों करें। हमारा काम तो सिर्फ इतना ही है कि हम उसकी मददके बिना अपने निर्वाहका और असहयोगको जारी रखनेका जरिया खोज निकालें। यदि हमारी खबरोंका एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें भेजा जाना बन्द कर दिया जाये तो भी हमें अपने चित्तको स्थिर रखना चाहिए। कार्यक्रम तो सभी प्रान्तोंको अच्छी तरह मालूम ही है; अतः उन्हें अपना-अपना काम करते रहना चाहिए। बल्कि मैं तो इसमें फायदा ही देखता हूँ। यदि कहीं किसी प्रान्तमें कमजोरी आ गई तो खबरोंके अभावमें हमपर उसका कुछ असर नहीं पड़ सकेगा। मान लीजिए गुजरातवाले कुछ कमजोरी दिखा दें और सरकारके आगे घुटने टेक दें या मान लीजिए कि असमके लोग पागल हो उठें या अचानक हिंसा-काण्ड कर बैठें तो इसका बुरा प्रभाव पंजाबपर नहीं पड़ेगा। वैसे ऐसी कोई आशंका नहीं है। क्योंकि असम उत्तेजनाके जबरदस्त कारणोंके होते हुए भी अनोखी शान्तिका परिचय दे रहा है और मुझे आशा है कि गुजरात भी शीघ्र ही अपना पौरुष प्रकट करके दिखायेगा। और प्रान्तोंकी अपेक्षा शायद बम्बई प्रान्तकी सरकार अपने कामको ज्यादा अच्छी तरह करना जानती है। वह उनसे अधिक सहन-शील और कार्यकुशल तो निश्चय ही है। उसने असहयोगियोंको काफी गुंजाइश दे रखी है। परन्तु चूँकि अपनी अभीष्ट वस्तु न मिलनेकी अवस्थामें असहयोगी फाँसी-तकपर चढ़ जानेको राजी हैं, वे गुंजाइशका भरपूर उपयोग करते चले जा रहे हैं। लेकिन यह तो प्रसंगके बाहरकी बात हुई। भारतका वायुमण्डल विलक्षण है, कहा नहीं जा सकता इसके आकाशमें क्षितिजपर उठा हुआ एक छोटा-सा बादल भी कब कितना भयंकर रूप धारण कर ले। मैं जो बात आपसे कहना चाहता हूँ वह यह कि हमें तमाम उलझनों-का स्वागत और सामना करनेके लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए। उनको देखकर हम कभी विचलित न हों, कभी न घबरायें। जिस बातकी आशा की थी जब वह बात हो जाये तब तो हरगिज एक कदम भी पीछे न हटें।

धीरे-धीरे किन्तु निश्चित रूपसे

यदि हमें तारकी विशेष सुविधा न दी जाये तो हमें डाककी मार्फत अपना काम चलाना चाहिए। यदि डाकका रास्ता भी हमारे लिए बन्द कर दिया जाये तो हमें हरकारोंसे काम लेना चाहिए। इधर-उधर आने-जानेवाले मित्र हमपर यह कृपा कर सकेंगे। जब रेलोंका इस्तेमाल भी हमारे लिए बन्द कर दिया जाये तो हमें यातायातके अन्य साधनोंका उपयोग करना चाहिए। कितनी भी बाहरी रुकावटें क्यों न हों; हमारे कामकी गति धीमी नहीं पड़ सकती। बशर्ते कि हमें ईश्वरमें ऐसा विश्वास हो कि हम कह सकें "अशरणशरण, शरण हम तेरी", सभी धर्मोंमें इस आशयकी प्रार्थनाएँ मिलती हैं। यदि हम केवल परमात्माको ही अपना सहारा मानें और अपनेको उसकी

गोदमें छोड़ दें तो हम सरकारकी तमाम अग्नि-परीक्षाओंसे वेदाग वाहर निकल आयेंगे — हमें जरा भी आँच न आने पायेगी। यदि उसकी इच्छा और आज्ञाके विना एक पत्ता भी नहीं हिलता तो फिर इस वातपर विश्वास करनेमें कौन-सी दिक्कत है कि वह इस सरकारके द्वारा ही हमारी परीक्षा ले रहा है? मैं तो वस अकेले उसीको अपने दुःख-दर्दकी कहानी सुनाऊँगा। और क्रोध भी करूँगा तो उसीपर जो इतनी वेरहमीके साथ हमारी परीक्षा ले रहा है। और यदि हम केवल उसीपर निर्भर रहें तो वह हमें अवश्य सान्त्वना देगा और हमें क्षमा कर देगा। जालिमके सामने अडिग खड़े रहनेकी रीति यह नहीं है कि हम उससे घृणा करें या उसपर हाथ उठायें; वल्कि यह है कि हम अपने उस दुःख और क्लेशके समय ईश्वरके दरवारमें नम्र होकर सच्चे दिलसे उसे पुकारें।

आगा सफदरकी ओरसे

आगा सफदरके दो सुन्दर पत्र[1] प्राप्त हुए हैं जिनमें उन्होंने दर्शाया है कि कैसे वीर पंजावियोंको झंझटमें डालकर उनपर मुकदमे चलाये गये हैं, कैसे वे इस परीक्षामें सच्चे सिद्ध हुए हैं, किस प्रकार पराक्रमी सिख, जो अवतक सरकारके सर्वोत्तम मित्र और समर्थक रहे हैं, सरकारकी सारी शक्तिकी अवज्ञा कर रहे हैं जो कुटिलताके साथ उनके विरुद्ध प्रयुक्त हो रही है। तथा किस प्रकार पंजावके समस्त नेता एकमत होकर कार्य कर रहे हैं तथा कैसे इस असाधारण कठिनाईमें भी वे सव अपने मानसिक सन्तुलनको स्थिर रखे हुए हैं। प्रतिभाशाली तथा उदार आगा साहवने गौरवपूर्ण किन्तु आपतग्रस्त पंजावके विषयमें जो कहा है उसे उन्हींके शब्दोंमें सुनिए :

१

. . . एसोसिएटेड प्रेसके जरिये आपने उन परिस्थितियोंके विषयमें सुना होगा जिनमें कि गिरफ्तारियाँ की गई थीं। लालाजीने[2] वहुत चाहा कि आपकी इच्छाओंके अनुसार चलें और गिरफ्तार न हों परन्तु चूँकि वे पंजाव प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष थे, उन्हें सभामें जाना पड़ा और गिरफ्तार हुए। यह सभा सार्वजनिक सभाओंकी मनाही और स्वयंसेवक दलको समाप्त करनेके आदेश[3]

१. यहाँ पत्रोंके केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

२. लाला लाजपतराय (१८६५-१९२८); पंजावके राष्ट्रवादी नेता, लेखक और राजनीतिज्ञ; सर्वेन्ट्स ऑफ पीपुल्स सोसाइटीके संस्थापक; १९२० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

३. १७ नवम्बर, १९२१ को वम्वईमें हुए उपद्रवोंके वाद स्थानीय सरकारोंको सूचित किया गया कि "उत्तेजनात्मक भाषणोंकी वहुतायत रोकनेके लिए राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमके अमलकी इजाजत दी जायेगी. . . १९०८ का दण्डविधि संशोधन अधिनियम भाग २ सख्तीसे अमलमें लाया जाये ताकि उन स्वयंसेवक-संस्थाओंकी गैरकानूनी कार्रवाइयोंसे निवटा जा सके जिनकी कवायदों, धरनों और धमकियोंसे देशकी शान्तिको खतरा पैदा हो गया है. . . भारत सरकारने. . . प्रान्तीय प्रशासनको निर्देश दिया कि राजद्रोह सविनय अवज्ञाके उपक्रम और हिंसा भड़कानेवाले कार्मोसे तत्काल निपटा जाये।" इंडिया इन १९२१-२२।

जारी होनेके तुरन्त बाद की गई थी . . .। जिला न्यायाधीशने सभाको विद्रोहात्मक बताकर उसपर प्रतिबन्ध लगाया किन्तु चूँकि यह आदेश गैरकानूनी था इसलिए तय हुआ कि उसकी अवज्ञा की जाये।

लालाजी, सन्तानम्,[1] गोपीचन्द,[2] और लालखाँ अब केन्द्रीय कारागारमें हैं। वे प्रसन्न और सन्तुष्ट हैं। उन्हें बिस्तर और पुस्तकें भेज दी गईं; किन्तु बाहरका भोजन लेनेसे उन्होंने इनकार कर दिया और जेलका भोजन ले रहे हैं।

मुकदमेकी सुनवाई ७ दिसम्बरको होने जा रही है और कहा जाता है कि सुनवाई भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १४५ के अधीन होनेवाली है। . . .

पूरा प्रान्त शान्त है और कहीं कोई गड़बड़ नहीं हुई है। हम खादीपर और विदेशीके बहिष्कारपर जोर दे रहे हैं। . . .

हमारे खालसा (सिख) मित्र अब भी अमृतसरमें सार्वजनिक सभाएँ करनेमें लगे हुए हैं परन्तु और गिरफ्तारियाँ नहीं हो रही हैं। कुल २१ गिरफ्तारियाँ हुई हैं जिनमें से ११ पर पहले ही अभियोग चलाया जा चुका है। इसी तरह खालसा दीवानोंने लाहौरमें सभाएँ शुरू कर दी हैं और अबतक एक गिरफ्तारी हुई है।

हम सब अहिंसापूर्ण वातावरण बनाये रखनेका अपनी ओरसे पूरा-पूरा प्रयत्न कर रहे हैं और उसमें सफल होनेकी पूरी आशा है, क्योंकि लोग धीरे-धीरे इस भावनाको आत्मसात् कर रहे हैं और उत्तेजनात्मक परिस्थितियोंमें भी विचलित नहीं होते। . . .

२

आशा है कि आज सुबह जो पत्र मैंने लिखा था आपको मिल गया होगा। शामके ४ बजे ब्रैडलॉ हॉलमें एक सार्वजनिक सभाकी सूचना दी गई थी जिसकी अध्यक्षता सरदार प्रेमसिंह सोधवंस करनेवाले थे। दोपहर दो बजे तक लाठियों और राइफलोंसे लैस एक खासे बड़े पुलिस दलने हॉलको घेर लिया और वहाँ पहुँचनेके सब रास्तोंको रोक दिया। शामके ४ बजेके बादतक वे पहरेपर रहे और किसीको भी वहाँ प्रवेश करनेकी इजाजत नहीं दी गई। . . . सरदार प्रेमसिंह ३–३० बजे शामको आये परन्तु पुलिस-दलने उन्हें रोका और एक यूरोपीय पुलिस-अधिकारीने उन्हें चले जानेको कहा। वे भीड़के साथ-साथ वापस मुड़े और कुछ दूरीपर एक सभा की जिसमें प्रस्ताव पास करके लालाजी और उनके साथियोंको बधाई दी गई। उसके बाद सभा विसर्जित कर दी। किन्तु मैंने

१. के० सन्तानम्; राजनीतिज्ञ, लेखक और पत्रकार; १९१९ में पंजाबके उपद्रवोंपर रिपोर्ट देनेके लिए कांग्रेस द्वारा नियुक्त उप-समितिके सचिव; विन्ध्य प्रदेशके लेफ्टीनेंट गवर्नर; अध्यक्ष, वित्त आयोग।

२. डा० गोपीचन्द भार्गव (१८९०-१९६६); लाला लाजपतरायके मार्ग-दर्शनमें राजनीतिमें प्रविष्ट; १९४२-४३ में कारावास; पंजावके मुख्य मन्त्री।

अभी-अभी सुना है कि पुलिसके एक सिपाहीने एक विद्यार्थीको बुरी तरह पीटा और वह गम्भीर अवस्थामें अस्पतालमें पड़ा है। अभी-अभी पण्डित रामभजदत्त उसे देखने गये हैं।

लालाजी तथा अन्य लोगोंसे कल जेलमें भेंट की गई। सबके मन उत्साहपूर्ण हैं। उनका कोई खास खयाल नहीं रखा गया है। वे सब अलग-अलग कोठरियोंमें रखे गये हैं और जेलके भोजनपर रह रहे हैं।

मैंने गिरधारीलालसे सुना है कि अमृतसरमें कुछ गड़बड़ हुई है। सिख शान्तिपूर्वक अपनी सार्वजनिक सभा कर रहे थे कि इतनेमें अचानक ही वहाँ कुछ साधु आ पहुँचे और अपने लोहेके डंडोंसे बुरी तरह पीटने लगे। सिख अहिंसा-पूर्ण बने रहे और उनके कुछ लोग जख्मी हो गये। साधुओंके काण्डके साथ-साथ फौज और पुलिसके साथ डिप्टी कमिश्नर आ गये। डिप्टी कमिश्नरको तो आने दिया गया, किन्तु सिख नेता ज्ञानी शेरसिहने अधिकारियोंको दखल नहीं करने दिया और डिप्टी कमिश्नरसे कोई भी मदद लेनेसे इनकार किया। कहा जाता है कि स्थिति काबूमें है और फिर कोई हिंसाकी खबर नहीं मिली।

. . . अभी-अभी खबर मिली है कि पुलिस द्वारा पीटे गए विद्यार्थीकी हालत सुधर रही है।

आगा साहबने जो सरल और सुन्दर वर्णन किया है उसमें अपनी तरफसे कुछ भी जोड़ना मैं अनावश्यक मानता हूँ। मैंने दोनों पत्रोंमें एक भी शब्द नहीं बदला है। मैं लालाजी और उनके साथियोंको सादर प्रणाम करता हूँ जिन्होंने मुकदमेकी सुनवाईके दौरान भी जेलके खानेके अलावा कुछ और लेना अस्वीकार किया। मैं सरदार प्रेमसिंह सोधवंशको बधाई देता हूँ जिन्होंने मजिस्ट्रेटके आदेशकी अवज्ञा करते हुए पुलिसकी उत्तेजनात्मक मौजूदगीके बावजूद इतनी शान्ति और प्रतिष्ठाके साथ सभाका संचालन किया। मैं उस स्वयंसेवकको भी बधाई देता हूँ जिसका सिर फूटा। अमृतसरकी गम्भीर घटनाका विस्तृत ब्योरा मिलनेपर उसके सम्बन्धमें फिरसे लिखूंगा। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि सिखोंने अद्भुत साहस और संयमसे काम लिया है। जब लड़ाकू जातिके लोग अहिंसात्मक बन जायें, तो वे सर्वोच्च प्रकारके साहसका परिचय देते हैं। इतिहास इस बातका साक्षी है कि सिखोंने पहले भी ऐसा साहस दिखाया है। वे इन दिनों स्वयं अपने इतिहासकी पुनरावृत्ति कर रहे हैं। मुझे आशा है और मेरी प्रार्थना है कि वे सरदार खड्गसिंहके[1] आदेशोंका पालन करते हुए अन्ततक अहिंसात्मक बने रहेंगे और रहन-सहनमें सादगी अपनायेंगे तथा केवल खादी पहनेंगे।

सभापतिकी अनुपस्थितिमें

हमारे मनोनीत सभापतिकी गिरफ्तारीसे हमें विचलित होनेकी जरूरत नहीं है। वे शरीरसे न सही मनसे हमारे बीच उपस्थित ही हैं। देशके नाम उनके सन्देशसे तो हम

१. पंजाबके एक कांग्रेसी नेता।

परिचित ही हैं। वे खुद उसीकी जीती-जागती मूर्ति हो गये हैं। कांग्रेसके अधिवेशनतक जो लोग जेलके बाहर रह जायें अब हमें उन्हींमें से किसीको सभापतिका काम चलानेके लिए चुन लेना चाहिए। इस जैसी शुभ घड़ीमें आजतक कोई अधिवेशन नहीं हुआ। जो बात असम्भव दिखाई देती थी वही सरकारकी इस स्वागत-योग्य दमन-नीतिके द्वारा प्रायः सम्भाव्य होती दीख रही है। हमारे बहुत-से बड़े-बड़े और अच्छे-अच्छे लोगोंका जेलोंमें होना ही स्वराज्य है। यदि सरकार हरएक असहयोगीको सिर्फ यह फरमान भेज दे कि वह २६ दिसम्बरको या इसके पहले अपने नजदीकी पुलिस थानेमें हाजिर होकर जेल जानेके लिए गिरफ्तार हो जाये और फिर उसे तबतक न छोड़ा जाये जबतक या तो वह खुद ही असहयोगके लिए माफी न माँग ले या सरकारको अपनी करनीपर पश्चात्ताप न हो, तो इस स्थितिको भी म पूर्ण स्वराज्य कहूँगा। श्री वल्लभभाई पटेल[1] तथा उनके निष्ठावान् साथी गुजरातकी राजधानी अहमदाबादके लिए योग्य प्रतिनिधियोंके स्वागतकी तैयारी करनेमें रात-दिन एक कर रहे हैं तो भी मैं कांग्रेसके अधिवेशनका न होना मंजूर करूँगा क्योंकि मेरी दृष्टिमें तो सरकारकी ऐसी आज्ञा पूर्ण स्वराज्यकी प्राप्ति ही होगी। इस तरहसे सरकार भी असहयोगियों-के झगड़ेसे मुक्त हो जायेगी और असहयोगियोंका मनोरथ भी पूरा हो जायेगा। असहयोगियोंका तो यह सिद्धान्त ही है कि या तो स्वराज्य मिले या जेल। परन्तु यदि सरकार हमें इस नव वर्षके आगमनके उपलक्ष्यमें ऐसा कोई प्रेमोपहार न भेंट करे तो उसने जिन थोड़ेसे लोगोंपर यह दयादृष्टि की है उसीके लिए हमें अवश्य उसका कृतज्ञ होना चाहिए। पिछले कुछ दिनोंमें — अपनी याददाश्तके अनुसार — गिरफ्तार होकर अपनी मनोकामना पूर्ण कर सकनेवाले प्रमुख व्यक्तियोंकी सूची मैं नीचे दे रहा हूँ :

लाहौर

लाला लाजपतराय	के० सन्तानम्
डा० सत्यपाल	डा० गोपीचन्द
डा० गुरुबख्शराय	मलिक लालखाँ
एस० ई० स्टोक्स	

अजमेर

मौलाना मुइनुद्दीन	मौलवी अब्दुल्ला
मिर्जा अब्दुल कादिर बेग	सैयद अब्बास अली
हाफिज सुलतान हसन	मौलवी नूरुद्दीन
मौलवी अब्दुल कादिर बोढारी	

१. १८७५-१९५०; गुजरातके कांग्रेसी नेता; बादमें स्वतन्त्र भारतके प्रथम उप-प्रधान मन्त्री।

इलाहाबाद

पण्डित मोतीलाल नेहरू	मौलाना शरर
पण्डित जवाहरलाल नेहरू	एन० शेरवानी
पण्डित श्यामलाल नेहरू	कमालुद्दीन जाफरी
पण्डित मोहनलाल नेहरू	रणेन्द्रनाथ वसु
पुरुषोत्तमदास टंडन	जॉर्ज जोज़ेफ
गौरीशंकर मिश्र	के० वी० माथुर
पण्डित कपिलदेव मालवीय	

लखनऊ

हरकरननाथ मिश्र	मौलाना सलामतुल्ला
चौधरी खलीकुज्जमा	मोहनलाल सक्सेना
शेख मुहम्मद शौकत अली	डाक्टर लक्ष्मीसहाय
डा० शिवनारायण सक्सेना	हकीम अब्दुलवली
पण्डित बालमुकुन्द वाजपेयी	लालबहादुर श्रीपति

बंगाल

चित्तरंजन दास	ससमल
मास्टर सी० आर० दास	जितेन्द्रलाल बनर्जी
अकरम खाँ	मौलाना अबुल कलाम आजाद
पद्मराज जैन	मौलाना अब्दुल मुसाविर-सिलहट

दिल्ली

शंकरलाल	आसफअली

असम

टी० आर० फुकन	कलाधर चालिहा
एन० सी० बारदोलाई	आर० के० चौधरी
विष्णुराम मेंहदी	महीबुद्दीन

मद्रास

वेंकटसुब्बैया	लक्ष्मी नरसिंहम्

मैंने ये नाम याददाश्तसे दिये हैं। मैं जानता हूँ कि सूची पूरी नहीं है, और हो सकता है कि यह पूरी तरह प्रातिनिधिक भी न हो। तथापि यह देशकी प्रवृत्तिपर पर्याप्त प्रकाश डालती है। मेरे लिए यह देशकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिकी योग्यताका सुन्दर प्रदर्शन है, बशर्ते कि योग्यताका मेरा स्तर स्वीकार कर लिया जाये; मेरे लेखे जो लोग कष्ट सहनेको तैयार हैं वे स्वराज्यके लिए सबसे ज्यादा योग्य हैं।

बंगालका कर्त्तव्य

बंगालका कर्त्तव्य स्पष्ट है। उसे निर्वाचित अध्यक्ष तथा अन्य चुने नेताओंकी गिरफ्तारीका उपयुक्त उत्तर देना है। मौलाना अबुल कलाम आजादकी गिरफ्तारी मान्य अध्यक्षकी गिरफ्तारीके सदृश ही महत्त्वपूर्ण घटना है। मौलाना अबुल कलाम आजाद विशेषकर मुसलमानोंमें, अखिल भारतीय स्तरपर प्रतिष्ठित हैं। वे अनेक वर्षोंतक राँचीमें ही निर्वासित होकर रहे। वे एक तपःपूत सैनिक हैं। इस्लामके आलिमोंमें उनका बड़ा ऊँचा स्थान है। उनकी गिरफ्तारीसे भारतके मुसलमानोंके हृदयोंपर गहन आघात होना ही चाहिए। बंगालके हिन्दू और मुसलमान इसका क्या उत्तर देंगे? किसी क्रियाका उत्तर तो केवल ठीक प्रतिक्रियाके द्वारा ही दिया जा सकता है। हमें ज्ञात है कि ठीक प्रत्युत्तर क्या होना चाहिए? क्या बंगाली — हिन्दू और मुसलमान — हजारोंकी संख्यामें आकर स्वयंसेवकोंके रूपमें भरती होकर गिरफ्तार होंगे? क्या बंगाल केवल खादी पहनेगा, कुछ अन्य नहीं? क्या बंगाली विद्यार्थी उनसे अपेक्षित कांग्रेस अध्यक्ष द्वारा प्रचारित हृदयद्रावक अनुरोधका उत्तर देंगे?

अहिंसाकी विजय

मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि विशेष रूपसे कलकत्तेके तथा सामान्य रूपसे बंगालके हिन्दू और मुसलमान पूर्ण रूपेण शान्त रहेंगे। यदि वर्तमान शान्ति भविष्यका कोई संकेत दे सकती है तो बम्बईपर जो कलंक[1] लगा था वह लगभग पूरी तरह धुल जायेगा। बम्बईसे हमने सबक ले लिया है। और अब उसे सदा याद रखा जाना चाहिए। कलकत्ताके युवकगण जो नेता बच रहे हैं उनका अनुसरण करें। वे अधीर न हों। वे अपने मस्तिष्क शान्त रखें तथा अपने हाथोंका उपयोग सूत कातनेमें करें। प्रत्येक असहयोगीका नाम स्वयंसेवकोंकी सूचीमें हो तथा प्रतिदिन सूची अखबारोंमें प्रकाशित की जाये जिससे सरकारको, वह जिसे चाहे उसे गिरफ्तार करनेमें सुविधा हो। बंगालकी विलक्षण भावुकता हमारे राष्ट्रीय इतिहासके इस सर्वोपरि संकटकालमें सर्वोत्तम कोटिकी शान्त और शीतल शक्तिके रूपमें परिवर्तित होनी चाहिए। कोई क्रोधोन्माद नहीं, उपद्रव नहीं, दुःसाहस नहीं। केवल अपने ध्येयके प्रति धर्ममय अनुराग तथा करो या मरो का एक निश्चित संकल्प।

समस्त कांग्रेस-पदाधिकारियोंसे

मैं कांग्रेस कमेटियोंके सभी मन्त्रियोंसे अबतक हुई गिरफ्तारियों तथा गिरफ्तार-शुदा लोगों व पदाधिकारियोंके स्थानपर नये पदाधिकारियोंकी नियुक्तिसे सम्बन्धित सूची आमन्त्रित करता हूँ। यदि आवश्यकता हो तो वे मुझे दैनिक घटनाक्रम भी, प्रतिदिन उसी प्रशंसनीय ढंगसे भेजें जैसे आगा सफदरने भेजा था। मैं चाहूँगा कि उक्त विवरण संक्षिप्त तथा यथार्थ रूपमें एवं कागजके एक ही ओर साफ अक्षरोंमें लिखकर भेजें जिससे मैं उन्हें आवश्यकतानुसार सरलतापूर्वक छपवा सकूँ।

१. यहाँ स्पष्टतः संकेत १७ नवम्बर, १९२१ को युवराजके बम्बई पहुँचनेपर हुए दंगोंकी ओर है।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी आगामी महत्त्वपूर्ण बैठक २४ दिसम्बरको होनेवाली है। इस बैठकके निर्णयपर भविष्यके तमाम कार्यक्रमका आधार रहेगा। मुझे आशा है कि प्रत्येक सदस्य जो इस बैठकमें उपस्थित हो सकता है अवश्य उपस्थित रहनेका प्रयत्न करेगा। यह भी आशा है कि प्रत्येक सदस्य बिना किसी संकोचके पूरी आजादीके साथ अपना मत प्रकट करेगा। और फिर मत देनेका अर्थ उसके अनुसार व्यवहार करना है। हमारे राष्ट्रीय इतिहासके इस महत्त्वपूर्ण क्षणमें यन्त्रके समान मिला हुआ बहुमत किसी कामका नहीं। यदि हम किसी खास कार्यक्रमके पक्षमें अपना मत दें तो उसपर हमारा विश्वास, हमारी श्रद्धा होनी चाहिए और प्राणपणसे उसका पालन करनेकी तैयारी होनी चाहिए। हम जेलके दरवाजोंको खोल दें और जेलोंमें ऐसे दाखिल हों जैसे कि दूल्हा दुल्हनके कक्षमें होता है। स्वतन्त्रताके लिए प्रयास धारा सभाओंमें या अदालतोंमें या स्कूल-कालेजोंके कमरोंमें नहीं बल्कि कैदखानोंमें और कभी-कभी तो फाँसीके तख्तेपर चढ़कर ही किया जाता है। इस संसारकी प्रेमिकाओंमें स्वतन्त्रता सबसे अधिक चंचला है। वह सर्वाधिक लुभावनी रमणी है जिसे खुश कर पाना सबसे अधिक कठिन काम है। इसमें क्या आश्चर्य है कि वह अपना मन्दिर जेलोंमें या अगम्य ऊँचाइयोंपर बनाती है और जब हम (हिमालयकी-सी ऊँचाई पर स्थित उसके मन्दिरतक पहुँचनेकी आशामें) जेलकी दीवारोंको पार करनेका या काँटोंसे भरे ऊबड़-खाबड़ रास्तेको तय करनेका प्रयत्न करते हैं तो वह हमपर हँसती है। अतएव कांग्रेसकी बैठकके लिए आनेवाले सदस्योंको चाहिए कि वे अपना मत और अपने विचार निश्चित करके आयें। यदि हमारा जेल जानेमें विश्वास न हो तो हमें ठीकसे यह बात कहनी चाहिए और दूसरे उपाय सुझाने चाहिए। यदि इस समय या कभी आगे जेलके रास्तेमें मेरा विश्वास न हो तो अकेला रह जानेपर भी मैं उसके पक्षमें अपना मत कभी न दूंगा। और यदि मेरा उसमें विश्वास हो तो अपने पक्षमें एक भी समर्थक न होनेपर भी मैं बिना हिचकिचाहट अपनी वही राय दूंगा। आरामसे चलाये जानेवाले किसी कार्यक्रमसे हम इस स्थितिका सामना नहीं कर सकते। हम लोग जो जेलोंके बाहर हैं वे जेलोंकी जीवनदायिनी दीवारोंके अन्दर पहुँच जानेवाले लोगोंके न्यासी हो गये हैं। हम उनके विश्वासके योग्य सिर्फ एक ही तरहसे ठहर सकते हैं — वह यह कि अपने सिद्धान्तोंका पालन करते हुए जेलोंमें दाखिल हो जायें और आगेकी जिम्मेदारी अपने पीछे आनेवालों पर छोड़ दें।

कार्य-समिति

इस समितिका कार्यकाल अब समाप्त हो रहा है और इसकी यह अन्तिम बैठक बड़ी ही कठिन परिस्थितियोंमें होगी। इसके १५ सदस्योंमें से देशबन्धु दास, लाला लाजपतराय, पण्डित मोतीलाल नेहरू[1] तथा मौलाना अबुल कलाम आजाद, जो दिल्लीमें मौलाना मोहम्मद अलीके[2] स्थानपर अभी नियुक्त हुए थे, महामान्य

१. १८६१-१९३१; वकील और राजनीतिज्ञ; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके दो बार अध्यक्ष।
२. १८७८-१९३१; शौकत अलीके भाई और खिलाफत आन्दोलनके प्रमुख नेता।

सम्राट्के उस अतिथिगृहमें, जिसे कारागार कहते हैं, आतिथ्य ग्रहण करनेके कारण अनुपस्थित रहेंगे। अतएव मेरा सुझाव है कि जिन प्रान्तोंसे ये देशभक्त आये थे वे एक-एक ऐसा प्रतिनिधि भेजें जो मतदानका अधिकार न होते हुए भी कमसे-कम अपने सुझावोंसे तो समितिको लाभान्वित करे ही। अन्य प्रान्तोंको भी जिनका सीधा प्रतिनिधित्व समितिमें नहीं है मेरा सुझाव है कि वे भी अपना एक-एक प्रतिनिधि समितिके विचार-विमर्शमें भाग लेनेके लिए भेजें।

अहमदाबादका जाड़ा

मित्रोंने मुझे प्रतिनिधियों और दर्शकोंका ध्यान इस बातकी ओर दिलानेको कहा है कि अहमदाबादमें जाड़ा न तो बम्बईकी तरह कम और न दिल्ली या अमृतसरकी तरह तेज होता है। अतएव उन्हें मामूली जाड़ेके कपड़े और बिछौना आदि लाना चाहिए। कांग्रेस अधिवेशनके पण्डालमें कुरसियाँ नहीं रखी जायेंगी। अतएव जूते रखनेके लिए खादीकी थैलियाँ नाममात्र मूल्यपर दी जायेंगी। लोग चाहें तो अपनी-अपनी थैलियाँ भी ला सकते हैं। मण्डपके बाहर जूते रखना मुनासिब न होगा। स्वागत-समितिने भी बहुत सोच-विचारके उपरान्त जो लोग जूते बाहर उतारना चाहें उनके जूतोंकी हिफाजतके लिए किसी तरहका प्रबन्ध न करना ही तय किया है। खिलाफत सभामें तो जूतोंको कागजमें लपेटकर अथवा दूसरी तरहसे साथ रखनेका सिलसिला है ही। लेकिन इस कठिनाईको दूर करनेके लिए थैलियाँ रखना बड़ा अच्छा उपाय है। स्वागत-समिति बिजलीकी रोशनी, पानीके नल, टट्टी इत्यादिका बहुत अच्छा और खास तौर-पर इन्तजाम कर रही है जिससे कि प्रतिनिधियोंको यथासम्भव आराम हो और उन्हें सुविधा रहे। लेकिन मुझे स्वागत-समिति द्वारा आराम और सुविधा मिलने या न मिलनेका भविष्य-कथन नहीं करना चाहिए।

इस्तीफे

आजकल अखबारोंमें सभी सरकारी विभागोंमें कर्मचारियों द्वारा इस्तीफे देनेकी खबरें बराबर आ रही हैं। ऐसे एक इस्तीफेकी नकल बेलगाँव (कर्नाटक) से मुझे मिली है। वह आरोग्य-विभागके सहायक निदेशकके हैड क्लर्कका है, और उन्होंने कर्नाटकके नेता देशभक्त गंगाधरराव देशपाण्डेके[1] जेल भेजे जानेके विरोधमें इस्तीफा पेश किया है। अपने इस्तीफेमें उन्होंने अपनी कुछ शिकायतोंका भी जिक्र किया है; लेकिन वह उनके सरकारी नौकरी छोड़नेका गौण कारण है। असममें भी, वहाँकी सरकारकी दमन-नीतिके विरोधमें, कई वकीलोंने वकालत बन्द कर दी है। मुझे भरोसा है कि इस तरह और भी अनेक इस्तीफे पेश होंगे और अनेक वकील वकालत बन्द कर देंगे।

कठिनाइयोंका उदय

बिहारके एक भाई जिन्होंने अपना नाम भी प्रकट किया है, लिखते हैं[2]:

> . . मैंने असहयोगको प्रत्येक मुस्लिमके लिए धार्मिक दृष्टिसे अनिवार्य मानकर पूरी निष्ठाके साथ उसका समर्थन किया था। मैंने यह मानकर कभी

१. विख्यात राजनीतिज्ञ, जो 'कर्नाटक केसरी' के नामसे जाने जाते थे।

२. यहाँ केवल कुछ अंश दिये जा रहे हैं।

अपनेको धोखा नहीं दिया कि असहयोगके माध्यमसे ही भारतके पुनरुद्धारकी आशा है।...किन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि मैं असहयोगको कोई अल्प प्रभावी वस्तु मानता हूँ, बल्कि मैं अत्यन्त दृढ़तापूर्वक यह कहता हूँ कि हमारे देशवासियोंमें पूरी तरह अहिंसापर दृढ़ रहकर असहयोग करते रहनेकी सामर्थ्य नहीं है।...मेरे विचारसे देशका नैतिक स्तर इतना अधिक गिर चुका है कि हमारी वर्तमान पीढ़ी अहिंसक रीतिसे असहयोगका उचित पालन नहीं कर सकती। यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि आप जैसा उत्तरदायी नेता भी इस स्पष्ट और अधम वस्तुस्थितिको समझते हुए भी उस ओरसे अपनी आँखें मूँदे हुए है।

...इतनी असफलताओंके बाद भी आप क्यों अभीतक स्वराज्य-प्राप्तिकी अवधि महीनोंमें ही गिनते चले जा रहे हैं? यदि इसका अभिप्राय केवल जनताको सामूहिक रूपसे उत्तेजित करना ही था तो मेरी समझमें यह कदम सोच-विचारकर नहीं उठाया गया। ताजी घटनाओंने यह बात स्पष्ट भी कर दी है। कोरे सब्ज बाग दिखाना जनताकी भावनाओंके साथ खिलवाड़ करनेके सिवा और कुछ नहीं है।

...देशवासियोंको प्रशिक्षित किये बिना संघर्ष नहीं छेड़ा जाना चाहिए। हमने निकम्मे सैनिकोंके बलपर ही युद्ध छेड़ दिया है।...

मैं 'यंग इंडिया'के माध्यमसे आपके विचार जाननेका इच्छुक हूँ।

पत्र-लेखक बिहारके जाने-माने व्यक्ति हैं। इनकी सचाईमें कोई सन्देह नहीं। इसलिए उनके सुझावके अनुसार मैं उत्तरमें खुली चिट्ठी ही लिख रहा हूँ। यह ठीक है कि असहयोगका विचार सर्वप्रथम खिलाफतके सम्बन्धमें ही आया था किन्तु मैंने अथवा मेरे पूर्व सहयोगियोंने यह कभी नहीं माना था कि ब्रिटिश सरकारके साथ असहयोग करनेमें किसी भी रूपमें देशहितका कोई बलिदान होगा। बल्कि हमारा तो यही विश्वास था कि यदि हम खिलाफतके सम्बन्धमें सरकारको भारतके मुसलमानोंकी न्यायोचित माँगें मान लेनेको विवश कर सके तो हम पंजाबके मामलेमें भी तथा परिणाम-स्वरूप स्वराज्यके मामलेमें भी उसे अपनी माँग पूरी करनेके लिए विवश कर सकेंगे। अहिंसाको बिलकुल प्रारम्भसे ही असहयोगका एक अभिन्न अंग मान लिया गया था इसलिए उसके उल्लंघनका अर्थ ही अपने आप असहयोगकी असफलता होता। सच पूछिए तो हालकी घटनाओंने अहिंसाकी प्रगतिके प्रचुर प्रमाण ही प्रस्तुत किये हैं। मैं लगभग निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि उनसे यही स्पष्ट हुआ है कि बम्बईका सही रास्तेसे भटकना नियमका अपवाद है और वह किसी भी प्रकारसे देशकी सामान्य परिस्थिति-का परिचायक नहीं है। एक वर्ष पूर्व यह बात असम्भव होती कि सरकार देशके विभिन्न भागोंसे इतने सारे मूर्धन्य नेताओंको गिरफ्तार कर लेती और जनता पूर्णतः आत्मनियन्त्रित बनी रहती। यह मानना एक भूल होगी कि जनता मशीनगनोंके डरसे शान्त है। इसमें ऐसे भयका भाग हो तो सकता है किन्तु भयभीत व्यक्ति भी यह तो देख ही सकता है कि आज भारतमें यदि हजारों नहीं तो सैकड़ों व्यक्ति तो ऐसे हैं जिन्हें

ये मशीनगनें अब आतंकित नहीं कर पातीं। न मैं इस विचारसे ही सहमत हूँ कि देश नीचे गिरा है। इसके विपरीत प्रत्येक प्रान्तके जन-जीवनमें शुद्धीकरणके इस आन्दोलनके फलस्वरूप चमत्कारी परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। एक प्रतिष्ठित मुसलमान मित्र मुझे कल ही बता रहे थे कि किस प्रकार मुसलमान तरुणोंने आलस्य और नास्तिकतापूर्ण विलासिताका जीवन त्यागकर धार्मिक सादगी और उद्यमपूर्ण जीवनको अपना लिया है।

निश्चय ही हम स्वराज्य पानेके लिए बेचैन हैं। मगर यह तो हमारी लाचारी है। हमारी यह बेचैनी क्या रेलके डिब्बेमें ठूंस-ठूंसकर भरे हुए उन मोपलाओंकी बेचैनी-से भिन्न है जो तनिक-सी शुद्ध हवा और एक घूंट पानीके लिए तड़प-तड़पकर मर गये।[1] विदेशी सत्ताकी इस मृत्यु-वैगनमें हम नैतिक श्वासावरोधसे तड़प रहे हैं और हमारी नैतिक मृत्यु मोपलाओंकी भौतिक मृत्युकी अपेक्षा अनन्त गुना हेय है। यह अवश्य ही एक बड़ा आश्चर्य है कि इतने वर्षोतक हमने स्वाधीनताकी प्राण-वायुकी जरूरत महसूस नहीं की। फिर भी अब जब हमें अपनी स्थितिका ज्ञान हो गया है, तब क्या हमारा स्वराज्यकी शुद्ध वायुके लिए तड़पना नितान्त स्वाभाविक नहीं है? मैं नहीं मानता कि स्वराज्य-प्राप्तिकी एक अवधि निश्चित करके मैंने कोई गलत काम किया है। बल्कि अगर यह जानते हुए भी कि लोग यदि वे शर्तें पूरी कर लें जिन्हें सरलता-से पूरा किया जा सकता है, तो स्वराज्य १२ महीनेके भीतर अवश्य ही प्राप्त किया जा सकता है, मैं ऐसा न कहता तो वह अनुचित होता। यदि वास्तवमें अहिंसाका वातावरण तैयार हो गया है तो मैं साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि हम तत्त्वतः इस वर्षके बचे हुए दिनोंमें ही स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेंगे, भले ही अभी इसका स्वरूप स्थिर होनेमें और भी दिन लग जायें। समयकी अवधिका निश्चय जनताको भली-भाँति जाग्रत करनेकी दृष्टिसे नहीं किया गया था बल्कि वह तो कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंका ध्यान तात्कालिक कर्त्तव्यों और उनकी पूर्तिके प्रभावशाली परिणामोंके प्रति केन्द्रित करनेकी दृष्टिसे किया गया था। अवधि निर्धारित किये बिना न तो हम एक करोड़की धनराशि जुटा पाते, न इतने सारे चरखे चलते, न हजारों रुपयोंकी हाथ-कती खादीका उत्पादन होता और न देशमें दीन-हीन श्रमिकोंके मध्य लाखोंका वितरण ही कर पाते। बंगाल, संयुक्त-प्रान्त और पंजाबमें सरकार द्वारा तेजीसे गिरफ्तारियाँ होते रहनेके बावजूद जेल जानेवालोंका सामने आते चले जाना हमारे सैनिकत्वका कोई छोटा-मोटा प्रमाण नहीं है। यदि अन्य प्रान्तोंमें भी हिंसापूर्ण दमन-चक्र शुरू किया गया, तो मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि जिन तीनों भाग्यशाली प्रान्तोंका मैंने उल्लेख किया है, वे उनकी तरह चमककर दिखायेंगे।

कुछ प्रमाण

हम नीचे संयुक्त-प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके वर्तमान मन्त्री श्री जियाराम सक्सेनाका पत्र[2] दे रहे हैं; वह किसी टिप्पणीकी अपेक्षा नहीं रखता।

१. मलाबारके मोपलाओंने अगस्त १९२१ में विद्रोह किया तथा लूटमार, आगजनी और हत्याकाण्ड किये। १९ नवम्बरको लगभग ८० मोपला रेलसे बेल्लारी जेल ले जाते हुई श्वासावरोधसे मर गये।

२. इस पत्रके कुछ अंश ही यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं।

संयुक्त-प्रान्तकी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सभी स्थानीय पदाधिकारियोंमें से मैं ही एक अभागा अभीतक जेलसे बाहर हूँ। इसलिए यहाँ हालमें जो-कुछ हुआ है वह बताना मेरा काम है।

आधी रातके लगभग, प्रान्तीय कांग्रेसके कार्यालयकी तलाशी ली गई और प्रा० कां० कमेटी, कार्य-समिति तथा अन्य उप-समितियोंके रजिस्टर पुलिस अधीक्षक, जिन्होंने तलाशी ली, उठा ले गये। इसके अतिरिक्त गिरफ्तार हुए सज्जनोंके घरों और खिलाफत समितिके कार्यालयकी भी तलाशी ली गई।

हमने अब इलाहाबादमें भी सुनियोजित तथा संयत ढंगसे सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक बड़ी तेजीसे भरती हो रहे हैं। . . . कल १२ स्वयंसेवकोंकी एक टोलीने अपनी बाहोंपर राष्ट्रीय बिल्ले लगाकर, देशभक्तिपूर्ण गीत गाते हुए नगरमें चक्कर लगाया . . . किन्तु किसीको भी गिरफ्तार नहीं किया गया। . . . आज पुनः वही टोली अन्य १२ स्वयंसेवकों सहित नगरके विभिन्न भागोंमें घूमती रही। . . . आज भी कोई गिरफ्तारी नहीं हुई।

लाहौरका निम्नलिखित पत्र[1] भी इतना ही महत्त्वपूर्ण है:

वातावरण सामान्य तौरपर बहुत ही अच्छा है। जनता निर्भय तथा अहिंसक है। नगर कांग्रेस कमेटी स्वयंसेवकोंको एक ही समयमें शहरके विभिन्न स्थानोंपर सभाएँ आयोजित करने, एक-सा लिखित भाषण पढ़ने तथा एक-से गीत गाने एवं १०–१५ मिनटमें ही विसर्जित हो जानेकी हिदायतके साथ भेजती है। कल (८ तारीखको) इस प्रकारकी २० सभाएँ २० विभिन्न स्थानोंपर आयोजित की गईं। . . . गिरफ्तारी अथवा जेलका भय अब समाप्त ही हो चुका है।

निःसन्देह यह एक ऐसी बात है जिसपर किसी भी देशको गर्व होना चाहिए।

कहीं हम भूल न जायें

लाहौरके यही सज्जन खेदके साथ लिखते हैं कि खादी आन्दोलनकी प्रगतिमें प्रतिरोध उत्पन्न हुआ है। अब लाहौरमें खादी उतनी दिखाई नहीं देती जितनी कुछ दिनों पहले दिखाई देती थी। यदि यह ठीक हो तो यह अच्छा लक्षण नहीं है। केवल जेलोंको भरते चले जानेसे ही हमारा पूरा अभिप्राय सिद्ध नहीं होगा। यदि भारत स्वदेशीकी ओर उन्मुख नहीं होता तो जेलोंको भरते जानेसे न तो वह आत्मनिर्भर बनेगा और न करोड़ों लोगोंको रोजी-रोटी दे सकेगा। यदि कार्यक्रमके चारों परमावश्यक अंगोंको पूर्ण नहीं किया गया तो हम स्वराज्य नहीं ला सकते क्योंकि वे किसी वर्ग विशेषके लिए नहीं, सभीके लिए हैं। मैं बार-बार उनको गिनाता हूँ, इससे पाठकगण उकता न जायें: हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी ऐक्य; स्वदेशी अर्थात्

१. पत्रके कुछ अंश ही यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं।

सभी तरहके विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार और हाथ-कती खादीका उत्पादन तथा प्रयोग; हिन्दुओं द्वारा अस्पृश्यताका उन्मूलन तथा सभीके द्वारा अहिंसाका पालन — ये चारों मानो किसी तख्तके चार पाये हैं। इनमें से एकको भी अलग कर दें तो वह खड़ा नहीं रह सकता।

खादी टोपीपर प्रतिबन्ध

एक मित्रने मुझे एक कशमकशसे सम्बन्धित कागज भेजे हैं। रत्नागिरी जिलेमें देवरुखके एक स्थानीय वकीलका खादी टोपीको लेकर एक सब-जजसे झगड़ा हो गया। स्थानीय वकील श्री जे० बी० वैद्यके विरुद्ध उस सब-जजने निम्नलिखित आदेश दिया है:

> श्री वैद्य आज न्यायालयमें खादीकी टोपी, जिसे सामान्यतः "गांधी टोपी" कहते हैं, लगाकर उपस्थित हुए। मुख्य न्यायाधीश द्वारा रत्नागिरी जिला न्यायाधीशको हाल ही में प्रेषित एक पत्रमें प्रकट उच्च न्यायालयके मतके अनुसार, जिसका विवरण देवरुख न्यायालयको भी भेजा गया था, मैंने श्री वैद्यको बता दिया है कि आज खादीकी टोपी पहनकर उनका न्यायालयमें उपस्थित होना न्यायालयका अपमान है। अतः मैंने उन्हें आदेश दिया कि वे तत्काल न्यायालयसे बाहर चले जायें तथा जिला न्यायाधीश अथवा उच्च न्यायालय द्वारा अन्यथा आदेश न दिये जाने तक भविष्यमें कदापि इस प्रकार उपस्थित न हों। मैंने उन्हें यह भी चेतावनी दे दी है कि यदि वे फिर कभी ऐसी टोपी पहनकर न्यायालयमें उपस्थित हुए तो उन्हें न्यायालयकी मानहानिके सभी परिणामोंको भुगतनेका खतरा उठाना पड़ेगा। इस आदेश तथा श्री वैद्यके वक्तव्यकी एक-एक प्रति जिला न्यायाधीशको प्रेषित कर दी जायेगी ताकि इस सम्बन्धमें जो भी कार्यवाही वे उचित समझें की जा सके।

मुख्य न्यायाधीश द्वारा न्यायालयोंको प्रेषित पत्रके अंशोंकी प्रतिलिपि इस प्रकार है:

> उच्च न्यायालय वकीलों द्वारा न्यायालयमें गांधी टोपीके प्रयोगके निश्चय ही विरुद्ध है और वह न्यायालयमें किसी वकील द्वारा गांधी टोपीका प्रयोग न्यायाधीशकी अवमाननाका अपराध मानेगा।
>
> हम आशा करते हैं कि उच्च न्यायालयके विचारोंको जान लेनेपर वकील तदनुसार करना ठीक समझेंगे।
>
> कोई भी वकील पगड़ीके अतिरिक्त सिरपर अन्य कुछ धारण करके अदालतमें न आये।
>
> कृपया इन वकीलोंको सूचित कर दें कि उच्च न्यायालय उनके ऐसे आचरणको बिलकुल अमान्य करता है।

इसके साथ उप-न्यायाधीशका निम्नलिखित मन्तव्य भी संलग्न है:

> निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता यह आशा करता है कि वकील उच्च न्यायालयों द्वारा प्रेषित इन विचारोंका पालन करेंगे तथा ऐसा कोई अवसर नहीं आयेगा कि निम्न हस्ताक्षरकर्त्ताको इस न्यायालयमें उन्हें लागू करनेपर बाध्य होना पड़े।

आवश्यक मामलोंपर चर्चाके साथ-ही-साथ एक ऐसे आदेशकी चर्चाके लिए जो केवल कुछ वकीलोंसे ही सम्बन्धित है कुछ स्थान लेते हुए मुझे कोई संकोच नहीं है। खादीकी टोपीके विरुद्ध छेड़ी गई इस लड़ाईमें जो तत्त्व छिपा हुआ है वह बहुत महत्त्व रखता है। उससे जाहिर होता है कि विरोधियों द्वारा किस प्रकार निर्दोष किन्तु नैतिक तथा आर्थिक आन्दोलनोंको कुचलनेका प्रयास किया जाता है। मुख्य न्यायाधीश महोदय अवश्य ही अदालतोंसे बाहर लोगोंको अपने सिरपर ऐसा वस्त्र पहननेसे नहीं रोक सकते जिसे सम्पूर्ण भारतमें हजारों उच्चस्तरीय लोगोंने सम्मानजनक मान लिया है। जिन वकीलोंने राष्ट्रीय टोपी अपना ली है, वे भी उसे न्यायालयकी मानहानि करनेके लिए नहीं बल्कि स्वयं अपना सम्मान रखनेके लिए पहनते हैं। वे खादी-टोपी इस कारण भी पहनते हैं कि वे अपने धर्म अथवा अपनी राजनीतिको छिपाना नहीं चाहते, फिर चाहे उसका कुछ भी अर्थ क्यों न लगाया जाये। जो व्यक्ति स्वयं अपने सम्मानका खयाल नहीं करता वह दास ही बन जाता है। वकील उच्च न्यायालयके न तो दास हैं, न अधिकारी। वे तो अपनेको जनताकी स्वतन्त्रताका संरक्षक मानते हैं। तो क्या फिर वे स्वयं अपनी स्वतन्त्रताका अपहरण सह लेंगे? मैं समझता हूँ कि श्री वैद्यने यह तय कर लिया है कि यदि वे अपने गौरव और सम्मानकी रक्षा करते हुए वकालत न कर सकेंगे तो वकालत करना ही छोड़ देंगे। अतः उन्होंने इस आदेशके विरुद्ध लिखित आपत्ति की है और उक्त सब-जजकी अदालतमें पेशीमें जाना बन्द कर दिया है। अब वे वहाँ तभी आवेंगे जब निर्णय उनके पक्षमें होगा। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि स्थानीय वकील संघके अन्य सदस्य भी भूषाके सम्बन्धमें अपने सम्मान तथा स्वातन्त्र्यकी रक्षाके निमित्त मुनासिब कार्रवाई करनेके बारेमें आपसमें सलाह कर रहे हैं। यह आशा तो की ही जा सकती है कि जो वकील वकालत छोड़ने और जो विद्यार्थी सरकारी स्कूल और कालेज छोड़नेमें असमर्थ हैं वे कमसे-कम अपने व्यक्तिगत सम्मानकी रक्षाके लिए वैसा ही वीरतापूर्ण संघर्ष करेंगे जैसा विजगापट्टममें मेडिकल कालेजके विद्यार्थियोंने किया है।

कृपलानी और उनके साथी

बनारससे एक तार मिला है जिससे मालूम होता है कि आचार्य कृपलानी[1] और उनके आश्रमके १५ सदस्य गिरफ्तार कर लिये गये हैं। निरपराधियोंका बलिदान बढ़ता ही जा रहा है। आचार्य कृपलानी एक शिक्षा-शास्त्री हैं और उन्होंने अपनेको

१. जीवतराम बी० कृपलानी (जन्म १८८८); शिक्षाविद्, राजनीतिज्ञ और १९४६ में कांग्रेसके अध्यक्ष।

छात्रोंके साथ एकाकार कर दिया है। उनके अनेक निष्ठावान विद्यार्थी हैं जिनका जीवन उनके सम्पर्कमें आकर एकदम बदल गया है। वे अहिंसाके पथपर बहुत घूम-फिरकर आये हैं और अब बिलकुल पूरी तरह उसमें विश्वास करते हैं। वे अपनी और अपने छात्रोंकी सारी शक्ति स्वदेशीके रचनात्मक पक्षके विकासमें लगा रहे हैं और बनारसमें एक आदर्श संस्थाका संचालन कर रहे हैं। उन्होंने अपनी जरूरतें जितनी कम की जा सकती हैं, उतनी कम कर ली हैं और अपने विद्यार्थियोंके साथ संस्थाके रोजमर्राके काम और सुविधामें हाथ बँटाते हैं। सुविधाके नामपर वहाँ विद्यार्थियोंको मिलनेवाला आचार्य कृपलानीका प्रेरक सम्पर्क ही समझिए। अभीतक यह नहीं मालूम हो पाया है कि आचार्य कृपलानी और उनके १५ छात्र गिरफ्तार किस लिए किये गये हैं। मेरा खयाल है कि यह स्वयंसेवककी तरह काम करनेका परिणाम ही होगा क्योंकि वे ऐसे व्यक्ति नहीं हैं, जो जोखिमको देखकर डर जायें। कुछ भी हो इस तरह उन्होंने ऐसी अन्य संस्थाओंके लिए मार्गदर्शन ही किया है। अधिकसे-अधिक पवित्र मनके व्यक्ति स्वयंसेवक बनें और जेल जायें। इस सम्बन्धमें कार्यकारिणीकी हिदायतोंका अक्षरशः पालन किया जाना चाहिए। जिनके मन बिलकुल स्वच्छ हैं, सविनय अवज्ञाकारियोंके रूपमें वे ही जेल जानेके योग्य हैं, और कोई नहीं। यदि हमसे इस सम्बन्धमें भूल हुई हो तो अब हम स्वयंसेवक भरती करते हुए अधिकसे-अधिक बारीकी और सख्तीसे काम लें। मैं पूरी तरह यह आशा करता हूँ कि जिन लोगोंके मन साफ नहीं हैं अथवा जो स्वदेशी, अहिंसा या असहयोगके किसी ऐसे ही मार्मिक तत्त्वमें विश्वास नहीं करते, वे स्वयंसेवककी तरह भरती होनेके लिए प्रार्थनापत्र भी नहीं देंगे; स्वयंसेवक न बनकर वे सेवा ही करेंगे।

गुप्तियाँ

मुझे यह सुनकर दुःख हुआ कि स्वयंसेवकोंको चुननेके सवालपर सलाह-मशविरेके समय कलकत्तामें कुछ स्थानोंपर गुप्तियाँ और इसी तरहके दूसरे हथियार मिले। अहिंसाके सिपाहीको तलवार या लाठी नहीं रखनी चाहिए। जब अहिंसा हमारा हथियार है तो हमें हिंसाके सारे प्रतीकोंको त्याग देना चाहिए। छोटानी मियाँने[1] अपने घोषणा-पत्रमें यह बिलकुल ठीक कहा है कि हिंसा तो हमें मनमें भी नहीं लानी है।

आयरलैंड और भारत

लॉर्ड रीडिंगने हमपर आयरलैंडके मार्गपर जानेका आरोप लगाया है। हम उस अद्भुत राष्ट्रके बारेमें थोड़ा विचार करें। आयरलैंडको आज जो अधूरी-सी स्वाधीनता मिली है वह आयरिश लोगों द्वारा दूसरोंकी खून-खराबीके कारण नहीं मिली है; बल्कि उन्होंने स्वेच्छासे अपना जो मनों खून बहाया है यह उसीका फल है। पाठक मेरी इस बातपर विश्वास करें। इंग्लैंडको अपनी इच्छाके विपरीत उनके सम्मुख जो प्रस्ताव रखना पड़ा है उसका कारण यह भय नहीं कि उसे और अधिक जानें गँवानी

१. बम्बईके तत्कालीन राष्ट्रवादी मुसलमान नेता।

पड़ेंगी; बल्कि एक ऐसे राष्ट्रको और अधिक पीड़ा देनेसे होनेवाली लज्जा है, जो अपनी स्वाधीनताको दुनियाकी सब चीजोंसे अधिक चाहता है। इस फैसलेका मूल आयरिश देशभक्तोंका प्रचण्ड आत्म-बलिदान ही है। स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरने[1] जब अंग्रेजी साम्राज्यके खिलाफ अपना झण्डा खड़ा किया और उसे आखिरी चेतावनी दी तब उनके साथ उनके मुट्ठी-भर अशिक्षित देश-बन्धु ही थे। उस समय उन्होंने कहा था, मैं मानव-जातिको थर्रा दूंगा। उनके कहनेका मतलब यह था कि वे हर बोअर पुरुष, स्त्री, और बच्चेको बलिवेदीपर चढ़ा देंगे और एक भी बोअरको गुलामी स्वीकार करनेके लिए न छोड़ेंगे किन्तु अंग्रेज बोअर शहीदोंके खूनसे रँगी हुई दक्षिण आफ्रिकाकी रेगिस्तानी भूमिपर खुशीसे घूम-फिर सकेंगे। जब अंग्रेजोंके बन्दी शिविरोंमें बोअर रमणियाँ और बालक मक्खियोंकी तरह मर गये और जब इंग्लैंडकी पिपासा बोअरोंके दिये हुए खूनसे बुझ गई तब जाकर वह झुका। इसी प्रकार आयरलैंड भी गत कई वर्षोंसे मानव-जातिको थर्रा रहा है। और इंग्लैंडने उसकी बात तब मानी जब उसके लिए हजारों आयरिश देशभक्तोंकी नसोंसे खून बहनेके बीभत्स दृश्यको देखना असह्य हो गया। मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि हमारे मनोरथकी पूर्ति कानूनी चतुराई, न्यायके सम्बन्धमें सैद्धान्तिक वाद-विवाद या कौंसिलों और असेम्बलियोंके प्रस्तावोंसे नहीं होगी। दक्षिण आफ्रिका और आयरलैंडकी तरह हमें भी मानव-जातिके हृदयको थर्राना होगा। परन्तु असहयोगी दक्षिण आफ्रिका और आयरलैंडके इतिहासकी पुनरावृत्ति करनेके बजाय इन दोनों राष्ट्रोंके सशक्त उदाहरणोंसे अपने विरोधीके खूनका एक भी कतरा न गिराते हुए स्वयं अपना खून बहानेका पाठ सीख रहे हैं। यदि वे ऐसा कर सकें तो उन्हें थोड़े ही दिनों या महीनोंमें स्वराज्य मिल जायेगा। परन्तु यदि वे आँख मूंदकर दक्षिण आफ्रिका और आयरलैंडका अनुकरण करना चाहते हों तो भारतका ईश्वर ही रक्षक है। तब तो मौजूदा पुश्तमें स्वराज्य नहीं मिल सकता। और मैं जानता हूँ कि जिस स्वराज्य-का वचन श्री मॉन्टेग्युने[2] दिया है वह चाहे कितनी ही नेकनीयतीसे क्यों न दिया गया हो, अन्ततः एक भ्रम और जाल ही सिद्ध होगा। कौंसिलें सशक्त मनके मनुष्य तैयार करनेके कारखाने नहीं हैं; और सशक्त मनके मनुष्य उसकी रक्षाके लिए मौजूद न हों तबतक आजादी रोगका घर है।

स्वराज्य क्या है?

'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने प्रश्न किया है कि क्या मेरी स्वराज्यकी कोई स्पष्ट कल्पना है। यदि लेखक महोदय 'यंग इंडिया' के पिछले अंक उठाकर देखें तो उन्हें अपने प्रश्नका पूर्ण उत्तर मिल जायेगा। किन्तु मैं यहाँ संक्षेपमें कह दूं कि स्वराज्यका कमसे-कम अभिप्राय जनताके चुने हुए प्रतिनिधियोंकी इच्छाओंके अनुसार सरकारसे समझौता करना है। अतः यदि कांग्रेसके प्रतिनिधि गिरफ्तार होनेके लिए निरन्तर स्वयं-सेवकोंको भेजते रहकर अपना दावा सच्चा सिद्ध करें तो किसीभी होनेवाले समझौतेमें

१. एस० जे० पॉल क्रूगर (१८२५-१९०४); ट्रान्सवालके राष्ट्रपति, १८८३-१९०० ।

२. ई० एस० मॉन्टेग्यु (१८७९-१९२४); भारत-सचिव १९१७-२२ और मॉन्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधारोंके सह-प्रवर्तक ।

उनकी राय निर्णायक होगी। अतः स्वराज्यका अर्थ है भारतकी जनता द्वारा अपनी माँगोंको मनवानेकी क्षमता। वाइसरायके इस विचारसे मेरा पूर्णतः मतभेद है कि यदि स्वराज्य तलवारकी शक्तिसे नहीं आता तो वह अवश्य ही ब्रिटिश संसदकी ओरसे आयेगा। जब लोगोंकी इच्छा "तलवार"से अदम्य हो जायेगी तब ब्रिटिश संसद उसकी पुष्टि करेगी। असहयोगी इस्पातकी तलवारके बदले आत्मोत्सर्गकी तलवारको प्रयोगमें लानेका प्रयास कर रहे हैं, भारतकी आत्मा ब्रिटिश इस्पातके मुकाबले पर डटी है। लोक-स्वराज्य क्या है, यह जाननेके लिए हमें अधिक कालतक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

जेलोंमें काम

मेरे एक आदरणीय मित्र पूछते हैं कि जब सरकारने हजारों लोगोंको जेल जानेका मौका दिया है और हजारों लोग जेल जा भी रहे हैं, तब क्या कैदियोंका जेलोंमें कोई काम करनेसे कतई इनकार करना अधिक अच्छा न होगा। मुझे अन्देशा है कि यह बात नैतिक स्थितिको गलत समझनेके कारण कही गई है। हमने जेल-संस्थाको भंग करनेका बीड़ा नहीं उठाया है। हमें स्वराज्यमें भी जेलें तो रखनी ही होंगी इसलिए हमारी सविनय अवज्ञा देशके अनीतिमूलक कानूनोंको भंग करनेकी सीमासे आगे न बढ़नी चाहिए। कानून-भंग सविनय तभी हो सकता है जब जेलके नियमोंका पालन खुशी-खुशी और पूरी तरहसे किया जाये, क्योंकि किसी खास नियमका सविनय भंग करनेमें उस नियमको तोड़नेके लिए रखी गई सजाको खुशी-खुशी मंजूर करना भी आता है। और जब कोई आदमी किसी नियम तथा उसके भंग करनेकी सजा दोनोंका विरोध करता है तब वह विनयशील नहीं रहता और अव्यवस्था तथा अराजकताका कारण बन जाता है। सत्याग्रही एक परोपकारी प्राणी और राज्यका मित्र होनेका दावा करता है। अराजकतावादी राज्यका शत्रु अतः जन-शत्रु होता है। मैंने युद्धकी इस भाषाका प्रयोग इसलिए किया है कि तथाकथित वैधानिक रीति बिलकुल बेकार साबित हुई है। लेकिन मैं तो दृढ़तापूर्वक इस मतपर कायम हूँ कि सविनय अवज्ञा शुद्धसे-शुद्ध रूपका वैधानिक आन्दोलन है। यदि उसका सविनय अथवा शान्तिमय स्वरूप एक आभास-मात्र हो तो वह निश्चय ही निन्द्य और पतनकारी हो जायेगा। यदि अहिंसाकी सचाईको मान लिया जाये तो हिंसाकी सम्भावना होनेके कारण ही उग्रतम अवज्ञा-भंगकी भी निन्दा नहीं की जा सकती। किसी भी बड़े या तेज आन्दोलनका संचालन बिना भारी जोखिम उठाये नहीं किया जा सकता और यदि जीवनमें बड़े-बड़े जोखिम न आयें तो फिर उसमें कोई रस ही न रहे। क्या हमें संसारका इतिहास नहीं बताता कि यदि बड़े-बड़े जोखिम न होते तो जीवनमें कुछ भी सरसता न रह जाती? हमको जो गण्यमान्य लोग और समाजके नेता, संकटका जरा भी चिह्न दिखाई देते ही या जरा भी मारकाटकी ध्वनि कानमें पड़ते ही, भयभीत और घबराये हुए दिखाई देते हैं, यह हमारे समाजकी पतित अवस्थाका ही बिलकुल साफ सबूत है। हम यह तो जरूर चाहते हैं कि मनुष्यके अन्दरसे पाशविक वृत्ति दूर हो जाये; परन्तु हम उसे इसी कारण पौरुषहीन नहीं बना देना चाहते।

और मनुष्यको अपना वास्तविक स्थान प्राप्त करनेकी प्रक्रियामें, समय-समयपर उसकी पाशविक वृत्ति भद्दे रूपमें प्रकट होना अवश्यम्भावी है। मैं पहले भी इन पृष्ठोंमें कह चुका हूँ कि दुर्निवार्य परिस्थितियोंमें खून-खराबीके दृश्यको देखकर मेरा दिल नहीं दहलता; किन्तु जब मैं देखता हूँ कि कोई असहयोगी या उसका सहायक अपनी प्रतिज्ञाके खिलाफ खून-खराबी कर बैठा है तब मैं जीता हुआ भी अधमरा-जैसा हो जाता हूँ। मेरा तो खयाल है कि ऐसे मौकेपर प्रत्येक सच्चे असहयोगीकी ऐसी ही हालत होती होगी।

अतः हम अब अपने मूल तर्कपर आयें। हमें अवश्य ही सत्याग्रहीकी हैसियतसे अपनेको व्यापक नियमोल्लंघनसे बचाये रखना चाहिए। जबतक स्वयं जेलका शासन बिगड़ा हुआ या नीति-विरुद्ध न हो या जबतक वह हमें ऐसा न दिखाई दे तबतक हमें जेलके नियमोंका पालन अवश्य करना चाहिए। लेकिन आराम न मिलने, प्रतिबन्ध लगाये जाने तथा ऐसी ही दूसरी असुविधाओंसे जेलका शासन बिगड़ा हुआ नहीं कहा जा सकता। ऐसा तो यह तभी हो सकता है जब कैदी अपमानित किये जाते हों या उनसे बेरहमीका बरताव किया जाता हो — जैसे उन्हें गन्दी कोठरियोंमें रखना या उनको मनुष्योंके लायक खाना न देना। मैं यह आशा जरूर करता हूँ कि जेलमें असहयोगियोंका आचरण बिलकुल ठीक, गौरवपूर्ण और फिर भी नम्रतायुक्त रहेगा। हमें जेलरों और वार्डरोंको अपने दुश्मन नहीं मानना चाहिए; बल्कि अपने जैसा मनुष्य मानना चाहिए, जिनमें सहृदयताका सर्वथा अभाव नहीं है। हमारे नम्र और शिष्ट आचरणके कारण उनकी हर तरहकी शंका अथवा कटुता मिटे बिना नहीं रह सकती। मैं जानता हूँ कि एक ओर तो नियम पालनका और दूसरी ओर घोर कानून-भंगका यह पथ बहुत दुर्गम है; परन्तु स्वराज्यका सुगम राजमार्ग तो और कोई है ही नहीं। देशने बहुत सोच-विचारके उपरान्त इस तंग लेकिन सीधे रास्तेको पसन्द किया है। सीधी रेखाकी तरह यह पथ छोटेसे-छोटा है। परन्तु जिस तरह आपको सरल रेखा खींचनेके लिए अपना हाथ स्थिर रखनेकी और पूर्व अभ्यास करनेकी जरूरत है उसी तरह यदि हम अपने स्वीकृत मार्गमें बिना भटके आगे बढ़ना चाहते हैं तो हमें सतत नियम-पालन करने और अपने उद्देश्यपर अटल रहनेकी बड़ी आवश्यकता है।

मैं यह बात जानता हूँ और मुझे इसका दुःख है कि जेल किसी भी सत्याग्रहीको फूलोंकी सेजकी तरह सुखदायी नहीं हो सकती। और जब मैं पण्डित मोतीलाल नेहरू और देशबन्धु चित्तरंजन दासके सुखी जीवनकी याद करता हूँ तब मेरा सिर चक्कर खाता है और दिल धड़कता है। कहाँ उनके सजे हुए सुन्दर विशाल कमरे, अनगिनत दास-दासियाँ और हर तरहके धन-सुलभ आराम और ऐश्वर्यके साधन, और कहाँ ये जेलकी ठण्डी और भद्दी कोठरियाँ जिनमें उन्हें दीवानखानोंके मधुर संगीतकी बजाय कैदियोंकी बेड़ियोंकी कर्कश झंकार सुनाई देगी। लेकिन साथ ही मुझे खयाल आता है कि स्वराज्य तो ऐसे ही वीरोंके आत्म-त्यागसे मिलेगा। मैं यह सोचकर अपना दिल मजबूत कर लेता हूँ। जिस आत्म-बलिदानकी रूपरेखा हमने अपने लिए बनाई है उससे कहीं अधिक कुरबानियाँ दक्षिण आफ्रिका, कैनेडा, इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनीके महान्‌से-महान् लोगोंको करनी पड़ी थीं।

आगा साहव सफदर

अभी-अभी, तार नहीं वल्कि पत्र मिला है कि आगा साहव इसी १० तारीख़को स्यालकोटमें, जहाँ वे अल्पकालके लिए दौरेपर गये थे, गिरफ्तार कर लिये गये हैं। उनके पीछे-पीछे एक वहुत वड़ी भीड़ भी गई। आगा साहव ने कहा कि वे वारंटके विना नहीं जायेंगे, हाँ उन्हें पुलिस जवरदस्ती भले ही ले जाये। अन्तमें मजिस्ट्रेटको आकर उनकी गिरफ्तारीका हुक्म देना पड़ा। यद्यपि मजिस्ट्रेट यह नहीं वता सका कि वे क्यों गिरफ्तार किये जा रहे हैं; फिर भी आगा साहवने उस हुक्मको खुशीसे मान लिया। ज्यों ही जेलका फाटक खोला गया; भीड़में से कुछ लोग दौड़कर भीतर घुस गये और आगा साहवके साथ ही गिरफ्तार किये जानेका आग्रह करने लगे। उन लोगोंको स्वभावतः वाहर निकाल दिया गया। संवाददाताने यह भी लिखा है कि भीड़ने मजिस्ट्रेटका अपमान किया था। मैं आगा साहवको वधाई देता हूँ; किन्तु मैं भीड़को वधाई नहीं दे सकता, क्योंकि उसके लिए आगा साहवके पीछे जाना ठीक नहीं था। जो लोग जेलमें घुसे उन्होंने अहिंसाकी प्रतिज्ञाके अनुसार तो दुर्व्यवहार किया और जिन्होंने मजिस्ट्रेटका अपमान किया उन्होंने अपने ही उद्देश्यको हानि पहुँचाई, वे प्रतिज्ञाको भंग करनेके ही नहीं, वल्कि कायरता दिखानेके भी अपराधी हैं। मेरी जानकारीके अनुसार पुलिसके सिपाहियोंकी संख्या कम थी और उनके अधिकारीने शिष्टताका व्यवहार किया था। कदाचित् हमारे अहिंसापर विश्वास करनेके कारण मजिस्ट्रेटकी रक्षाकी व्यवस्था भी अपर्याप्त थी। मैं असहयोगियोंको चेतावनी देता हूँ कि यदि हम अपनी प्रतिज्ञाको तनिक भी भंग करेंगे तो स्वराज्य मिलना टल जायेगा यद्यपि वह तेजीसे हमारी ओर आता दिखता है। हमारा आदर्श होना चाहिए — मनसा वाचा कर्मणा अहिंसाका पालन।

मुझे मालूम हुआ है कि आगा साहवने लाला दुनीचन्दको अपना उत्तराधिकारी[1] नियुक्त किया है। मेरी शुभ कामना है कि जिस प्रकार आगा सफदर साहवको जेल जानेका सौभाग्य मिला है उसी प्रकार नये अध्यक्षको भी मिले।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१२-१९२१

१. पंजाव प्रान्तीय कांग्रेसके अध्यक्षके रूपमें।

२. महिलाओंका योग

कलकत्तेकी महिलाओं द्वारा खादी बेचनेके प्रयाससे कलकत्तेके आम रास्तेपर भद्र पुरुषोंके कामकाजमें बाधा पड़ गई तथा इसलिए समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित समाचारके अनुसार सरकारने उनको गिरफ्तार कर लिया।[1] जो महिलाएँ गिरफ्तार की गयीं उनमें मनोनीत अध्यक्ष महोदयकी[2] श्रद्धालु सहवर्तिनी, उनकी विधवा बहन तथा भतीजी[3] भी थीं। मुझे आशा थी कि शुरू-शुरूमें तो सरकार स्त्रियोंको जेल जानेका गौरव नहीं ही देगी। साधारणतया महिलाओंके सविनय अवज्ञामें सक्रिय भाग लेनेकी कोई बात नहीं थी; किन्तु बंगाल सरकारने स्त्री-पुरुषोंमें भेदभाव नहीं बरता और अपनी समदर्शिताके उत्साहमें आकर बंगालकी तीन महिलाओंको भी जेल जानेका गौरव प्रदान कर दिया। तब मैं आशा करता हूँ कि सम्पूर्ण देश इस नवोन्मेषका स्वागत करेगा। स्वराज्य प्राप्त करनेमें पुरुषोंके जितना ही भाग भारतकी नारियोंका भी होना चाहिए। सम्भवतः इस शान्तिपूर्ण संघर्षमें महिलाएँ पुरुषोंको मीलों पीछे छोड़ सकती हैं। हमें ज्ञात है कि वे अपनी धार्मिक निष्ठामें पुरुषसे कहीं बढ़कर रही हैं। नारी जाति मूक तथा गम्भीर सहिष्णुताकी प्रतीक है। और अब बंगाल सरकारने नारीको अग्नि-परीक्षाके घेरेमें खींच ही लिया है तो मुझे आशा है कि सारे भारतकी महिलाएँ इस चुनौतीको स्वीकार करेंगी तथा संगठित हो जायेंगी। पुरुषोंके बहुत बड़ी संख्यामें जेलोंमें चले जानेसे अपने नारीत्वके गौरवको देखते हुए उनको उनका स्थान लेनेको बाध्य होना ही पड़ेगा और अब यह योगदान जेल-जीवनकी कठिनाइयोंको पुरुषोंके साथ-ही-साथ झेलते हुए दिया जाये। ईश्वर उनके गौरवकी रक्षा करेगा। नारीके सहज संरक्षक, उसके पति भी द्रौपदीके चीर-हरणको रोकनेमें जब असमर्थ हो गये तब उसके सम्मानकी रक्षा उसके सतीत्वने की और मानो शरीर-बलका इस तरह उपहास किया। यह तो एक शाश्वत सत्य है कि निर्बलसे-निर्बलको भी अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य प्राप्त है। नारीको पुरुषका संरक्षण मिले किन्तु पुरुषोंकी अनुपस्थितिमें अथवा उसके संरक्षणके अपने पुनीत कर्त्तव्यका पुरुषों द्वारा पालन न कर पानेकी स्थिति-में भारतकी कोई नारी अपनेको असहाय न समझे। जो मरना जानता है उसे अपनी प्रतिष्ठापर आघात किये जानेपर विचलित होनेकी आवश्यकता कदापि नहीं है।

मैं भारतीय नारियोंको सलाह दूंगा कि वे बिना समय खोये शान्तिपूर्वक अग्नि-परीक्षाके इस घेरेमें पाँव रखनेके लिए तैयार बहनोंके नाम इकट्ठे करनेमें जुट जायें। वे अपनी सेवाका प्रस्ताव बंगालकी महिलाओंको भेजें ताकि बंगालकी महिलाएँ यह

१. उन्हें ७ दिसम्बर, १९२१ को मुख्य मार्गपर आवागमनमें बाधा डालनेका आरोप लगाकर गिरफ्तार किया गया था।

२. चित्तरंजन दास।

३. वे बादमें छोड़ दी गईं।

अनुभव करें कि उनकी दूसरी बहनें भी उनका अनुसरण करनेको तत्पर हैं। यह सम्भव है कि जेल-जीवन और उसके कारण बहनोंको जो तकलीफें झेलनी पड़ सकती हैं उन्हें सोचकर अधिक संख्यामें स्त्रियाँ सामने न आयें। यदि प्रारम्भमें थोड़ी ही बहनें इसके लिए तैयार हों तो यह राष्ट्रके लिए लज्जाका कारण नहीं हो सकता।

पुरुषोंका कर्त्तव्य स्पष्ट है। हमें उत्तेजित नहीं हो उठना चाहिए। उत्तेजित होनेसे देश अथवा हमारी नारी जातिकी रक्षा न होगी। हमने सरकारसे कहा है कि नारियों और बच्चोंका भी लिहाज न करे। पंजाबमें मार्शल लॉके उन दिनोंमें निश्चय ही उसने उनका लिहाज नहीं किया था। निस्सन्देह कलकत्ताके अधिकारियों द्वारा कमसे-कम कानूनका नाम लेकर उक्त महिलाओंके कामको गैर-कानूनी कहकर उन्हें गिरफ्तार कर लेना पंजाबके मनियाँवालाके उस कृत्यसे बहुत अच्छा है जिसमें बॉसवर्थ स्मिथ-जैसे लोगोंने औरतोंपर थूका, उन्हें गालियाँ दीं या अन्य प्रकारसे अपमानित किया था।[1] हम अपनी महिलाओंको ऐसे अपमानकी कल्पना करके आगे आनेको नहीं कहते; अलबत्ता यदि जनताकी सेवा करनेको सरकार अपराध मानकर उन्हें गिरफ्तार करे तो हम बेशक उन्हें आगे आनेके लिए कहते हैं। हमें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि हमारी महिलाएँ स्वदेशीका प्रचार करके विदेशी कपड़ेका आयात और फलस्वरूप सत्ता द्वारा भारतकी साधन-सम्पत्तिके शोषणको बन्द करके इस सत्ताके आधार को खोखला बनाती रहें और सरकार चुप बैठी रहेगी। अतः यदि हम लोग अपनी महिलाओंका स्वदेशी आन्दोलनमें भाग लेना ठीक समझते हैं तो पुरुषोंकी ही तरह उन्हें गिरफ्तार करनेके सरकारके अधिकारको भी हमें मान लेना चाहिए।

इसलिए हम उत्तेजित न हों। पहले द्वन्द्वके लिए चुनौती देना और चुनौती स्वीकार कर लिये जानेपर विरोधीकी भर्त्सना करना कायरता होगी। पुरुष जेलोंको भर दें और सरकारके सामने यह सिद्ध कर दें कि जागृति केवल कुछ ही लोगोंमें नहीं आई है बल्कि जन-जनमें व्याप्त हो गई है और इसी तरह अहिंसाकी भावना भी केवल कुछ-एक लोगोंमें ही नहीं, देशके ज्यादातर लोगोंमें घर कर गई है। हमें अपने व्यवहारसे दिखा देना चाहिए कि जो आकस्मिक विस्फोट हुआ वह अपवाद था, किसी आम बीमारीका लक्षण नहीं। तथा अब, जब कि हमारे उत्तेजित हो जानेका लगभग सर्वाधिक प्रबल कारण उपस्थित है, हम अधिकसे-अधिक सहिष्णुता तथा आत्मनियन्त्रण-का परिचय दें। मैंने विशेषणके पहले क्रिया-विशेषणका प्रयोग करके उसे सौम्य बनाया है। क्योंकि मेरी समझमें सर्वाधिक उत्तेजनाका अभीतक अवसर नहीं आया है। मैं ऐसे अवसरोंकी कल्पना कर सकता हूँ जिनसे असीम उत्तेजना फैल सकती है। यदि हमें स्वराज्य प्राप्त करना है तथा खिलाफत और पंजाबकी प्रतिष्ठाकी रक्षा करनी है तो उसके लिए हमें अधिक मूल्य चुकाना चाहिए तथा अधिकसे-अधिक जितनी उत्तेजना सम्भव है उसके बीच भी चित्तकी स्थिरता नहीं छोड़नी चाहिए। हम सरकारकी ओरसे बुरेसे-बुरे व्यवहारके लिए भी तैयार रहें तथा कमसे-कम अच्छे व्यवहारकी अपेक्षा करके उसे सज्जनताका श्रेय दें। हमें निस्संकोच भावसे स्वीकार करना चाहिए

१. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

कि ज्यादातर मामलोंमें वे सौजन्यके साथ, युद्धके नियमोंका पालन करते हुए चल रहे हैं। उन्होंने पीर बादशाह मियाँ तथा डा० सुरेश बनर्जीको हथकड़ियाँ अवश्य लगाईं किन्तु अली बन्धुओं, लाला लाजपतराय, मौलाना मुहीउद्दीन अथवा पण्डित मोतीलाल नेहरूके साथ ऐसा नहीं किया। यदि वे सभीको हथकड़ी लगाते तो मैं हथकड़ी लगाने-की बातपर लड़ नहीं सकता था। बन्दीको हथकड़ी लगाना जेलका एक नियम है। निश्चय ही मैं पण्डित मोतीलाल नेहरू तथा उनके पुत्रको साथ-साथ हथकड़ी लगाकर जेलतक पैदल ले जाते देखनेके लिए इलाहाबादतक जाना पसन्द करता। उनके हथकड़ी लगानेसे स्वराज्य पास सरक आयेगा इस बातकी प्रतीतिसे चमकते हुए उनके चेहरे देखकर मुझे बड़ी खुशी होती। किन्तु सरकारने इस खुशीका अवसर नहीं दिया। अलबत्ता मनुष्यकी प्रतिष्ठाकी दृष्टिसे मैं पंजाब जैसे ओछे और नीचे गिरानेवाले अपमानजनक कार्य तथा मोपला मृत्यु-वैगन जैसी अविचारपूर्ण अमानुषिकताओंकी पुनरावृत्तिकी अपेक्षा अवश्य नहीं करता। किन्तु असहयोगी तो इनसे बरी रखे जानेकी कोई गुंजाइश मनमें रखकर मैदानमें नहीं उतरे हैं। वे मानते हैं कि उनके साथ बुरेसे-बुरा व्यवहार किया जा सकता है; अपने उत्तरदायित्वकी पूरी चेतनाके साथ हमने अहिंसक रहनेकी प्रतिज्ञा की है। स्वराज्य लगभग हमारी मुट्ठीमें आ गया है; कहीं ऐसा न हो कि हम उसे अपनी असावधानीसे खो दें।

नेताओंके जेलमें होने पर भी, जहाँ-कहीं युवराज जायें वहाँ हड़तालें होनी चाहिए। हड़तालें करानेके लिए सभाओंकी आवश्यकता नहीं है। जनताको स्वतःस्फूर्त कार्रवाईका पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त हो गया है। यह बात सरकारकी समझमें आ जानी चाहिए कि हड़तालें जोर-जबरदस्तीसे नहीं, स्वेच्छया ही की जा रही हैं। सविनय अवज्ञा कहीं भी अनधिकृत अथवा दुर्विचारित ढंगसे नहीं की जानी चाहिए। हर नया कदम विचार-पूर्वक तथा शान्तिके साथ उठाना चाहिए। लोग प्रत्येक विषयपर अपने घरोंमें ही विचार-विमर्श कर सकते हैं। व्यापारी हजारों बार अपने व्यापारके सम्बन्धमें परस्पर मिलते ही रहते हैं। तो वे बहुत आसानीसे इस निरन्तर बदलती हुई परिस्थितिसे उत्पन्न होनेवाले सवालोंकी चर्चा कर सकते हैं और इसका निर्णय कर सकते हैं कि उनका अगला कदम क्या हो। मैं यह तो चाहता हूँ कि युवराज जहाँ जायें वहाँ हड़तालें भी हों मगर मैं इन्हें करने-करानेमें तनिक-सी भी हिंसा या जोर-जबरदस्ती या डराने-धमकानेकी बातकी गुंजाइश नहीं छोड़ना चाहता। योजनाके अनुसार हड़तालोंका न होना हमारे लिए थोड़ी-बहुत शर्मकी बात हो सकती है किन्तु इनके दरम्यान हिंसा हो गई तो वह भी हमारी प्रगतिको अवरुद्ध कर देगी और स्वराज्य भी अनिश्चित कालके लिए दूर खिसक जायेगा।

मुझे यह भी आशा है कि गिरफ्तारियोंके कारण प्रतिनिधियोंके रिक्त होनेवाले सभी स्थानोंकी पूर्ति कर ली जायेगी और कांग्रेसके सदस्य पूरी संख्यामें उपस्थित होंगे और वे जो करना चाहते हैं उसे तय करके आयेंगे और यह भी समझे हुए होंगे कि उसे किस तरह पूरा करना है।

इसके छपते-छपते सूचना मिली कि तीनों महिलाओंको कुछ घंटोंके बाद छोड़ दिया गया। तिसपर भी मैं इस लेखको जनतातक पहुँचाना चाहूँगा क्योंकि जो-कुछ

मैंने कहा है वह मूलतः ठीक है। मैं समझता हूँ कि महिलाओंको चेतावनीके साथ छोड़ा गया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१२-१९२१

३. लाला लाजपतरायकी ओरसे

प्रिय महात्माजी,

मैं आपको इतनी जल्दी यह पत्र इसलिए लिख रहा हूँ कि शामतक मेरे गिरफ्तार हो जानेकी पूरी सम्भावना है। ऐसा लग सकता है जैसे मैंने आपकी इच्छाकी अवहेलना की हो। इसका मुझे दुःख है किन्तु वास्तवमें परिस्थिति ही ऐसी है कि गिरफ्तार हुए बिना चारा नहीं है। हमने आज दोपहरको दो बजे प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक बुलाई है। जिलाधीशने उसे सार्वजनिक सभा माना है। . . .ज्यादातर तो इस बैठकपर प्रतिबन्ध लगा दिये जानेकी सम्भावना है। उन्होंने मोहल्लोंकी कांग्रेस कमेटियोंकी बैठकोंको भी सार्वजनिक सभाओंकी संज्ञा देकर हमें नोटिस दे दिया है। इसका अर्थ तो कामका पूरी तरह ठप हो जाना ही है। उनके ये आदेश गैरकानूनी हैं। . . .

ऐसी हालतमें यह तो असम्भव है कि मैं बैठकसे बचकर बैठ रहूँ। यह तो केवल कायरता ही होगी। मेरे इस कामपर आप मुहर न लगा सकें तो भी कृपया मुझे क्षमा करें। . . .भरोसा रखिए मैं आपके आन्दोलनको कलंकित नहीं करूँगा। यदि मैं कभी छिद्रान्वेषी तथा अविश्वस्त प्रतीत हुआ होऊँ तो उसके लिए भी मुझे क्षमा करें अपने सभी काम करते समय मुझे एक ही बातका ध्यान रहा है वह यह कि मैं अपने देश और देशवासियोंके प्रति वफादार रहूँ। यदि मुझसे गलतियाँ हुई हैं तो वे अनजानेमें ही हुई हैं। अपने सहृदय मित्रोंकी आलोचना करते समय भी मेरा कोई अन्य उद्देश्य नहीं रहा। . . .

सिखोंने तमाम उत्तेजनाओंके बावजूद अभीतक अपना सन्तुलन प्रशंसनीय रूपमें कायम रखा है। अधिकांश गिरफ्तारियाँ सैकड़ों-हजारों लोगोंकी उपस्थितिमें ही की गई हैं। . . .सत्यके लिए कष्टसहन, वीरता, तेजस्विताकी जितनी भी प्रशंसा की जा सकती है हमारे सिख भाई उस सबके अधिकारी हैं।

हमने प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष-पदके लिए आगा सफदरको अपना उत्तराधिकारी चुना है तथा तत्काल कार्रवाईके लिए कार्यक्रमकी रूपरेखा भी उनसे मशविरा करके तैयार कर ली है। . . .

आज सवेरे श्री स्टोक्स[1] गिरफ्तार कर लिये गये।

आपका निष्ठापूर्ण साथी,
लाजपतराय

३ दिसम्बर, १९२१
प्रातः ७ बजे

पाठक मानेंगे कि यह पत्र[2] प्रस्तुत करके मैंने ठीक ही किया है। प्रत्येक नेताने जेल जानेकी सम्भावनाको ध्यानमें रखकर व्यवस्था कर रखी है यह बात मार्केकी है। निःसन्देह लालाजीने जो-कुछ भी किया है उसके अलावा और कुछ नहीं कर सकते थे। उनकी हदतक मैं चाहता जरूर था कि यदि सहज भावसे सम्भव हो सके तो वे कांग्रेसका अधिवेशन[3] हो चुकने तक गिरफ्तार होनेका प्रयत्न न करें तो अच्छा हो। किन्तु उनके सामने जो परिस्थितियाँ थीं उनमें उद्देश्यको आघात पहुँचाये बिना बैठकसे गैरहाजिर होना सम्भव नहीं है। यदि एक सेनापति प्रस्तुत युद्धसे बचता है तो वह सेनापति ही नहीं रह जाता। मुझे तो लालाजीके प्रत्येक कार्यमें विवेकशीलता तथा शान्त शौर्य ही दिखाई देता है। मैं लालाजी द्वारा सिखोंकी प्रशंसाका पूरी तरह अनुमोदन करता हूँ। उनकी दृढ़ता, धार्मिक उत्साह, शान्ति तथा कष्ट-सहिष्णुतापर मैं बिलकुल मुग्ध हूँ। देशमें आज जो-कुछ हो रहा है वह सब नवजन्मदायी प्रसववेदना-सा दिखाई देता है। भगवान् करे कि हमारे निर्धारित लक्ष्यकी पूर्तिकी दिशामें कोई अविवेकपूर्ण कार्य न हो, हिंसाका विस्फोट हमारी अबाध प्रगतिमें बाधक न हो।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१२-१९२१

४. ईसाई तथा स्वराज्य

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

आज स्वराज्यके प्रति भारतीय ईसाइयोंके दृष्टिकोणके बारेमें अनेकानेक प्रश्न किये जा रहे हैं; इसलिए मैं विवेकशील ईसाइयोंके एक विशाल समुदायके प्रतिनिधिकी तरह आपके पाठकोंका ध्यान कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण तथ्योंकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ जिनसे हमारे बहुत ही कम हिन्दू और मुसलमान भाई परिचित हैं।

१. **टु अवेकिंग इंडियाके** लेखक। देखिए खण्ड २१।
२. यहाँपर केवल कुछ अंश दिये गये हैं।
३. दिसम्बर १९२१ के अन्तमें अहमदाबादमें होनेवाला अधिवेशन।

मैं सबसे पहले तो यह बात बिलकुल स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि तथाकथित भारतीय ईसाई ज्यादातर तो पश्चिमके लोगों द्वारा निर्मित समुदाय है। . . .भारतमें जिन दो चीजोंने ईसाइयोंमें अराष्ट्रीयता भरनेका कार्य सम्पन्न किया है वे हैं: (१) पश्चिमसे आई हुई मिशनरी संस्थाएँ तथा (२) हमारे अपने ही हिन्दू तथा मुसलमान भाई। . . .हमारे हिन्दू तथा मुसलमान सम्बन्धियोंने हमें भिन्न धर्म अपना लेनेके कारण बहिष्कृत कर दिया। . . .

मिशनरियोंके प्रभावमें आकर भारतीय ईसाइयोंने अंग्रेजी रहन-सहन अपना लिया और वे अपने-आपको कुछ बहुत विशिष्ट मान बैठे और इससे उनकी रही-सही देशभक्ति तथा राष्ट्रीय भावना भी नष्ट हो गई। . . .यह तो भगवान्‌की दया ही है कि मिशनरियों द्वारा हमें भटकाए रखनेकी कोशिशोंके बावजूद हमारे समुदायमें अन्ततः सच्ची जागृति आई और अब शिक्षा तथा समृद्धिके बढ़ते हुए साधनोंसे अपनी मातृभूमिकी सेवाका सच्चा भाव भी हमारे समुदायमें तेजीसे विकसित होता जा रहा है। . . .कुछ भारतीय ईसाई अपने-आपको यूरोपीयों तथा आंग्ल-भारतीयोंसे भी अधिक विदेशी समझनेमें गौरव मानते हैं। किन्तु सच्चे भारतीयोंको तो इनके प्रति सहिष्णु ही रहना चाहिए. . .उनके साथ मित्रों जैसा बरताव करके सिद्ध कर दीजिए कि सभी भारतीय चाहे वे हिन्दू, मुसलमान, पारसी अथवा ईसाई कोई भी हों सब एक ही माँकी सन्तान और परस्पर सच्चे भाई व सच्ची बहनें हैं। अपने ईसाई बन्धुओंको अपने सच्चे प्रेमका आश्वासन दीजिए और आप देखेंगे कि यदि भारतीय ईसाई एक बार देशप्रेमकी भावनासे प्रेरित हो गये तो वे देश-सेवामें अपना जीवन भी अर्पित कर देंगे। वे उसकी स्वतन्त्रताके पुनीत युद्धमें अपना रक्त बहा देनेमें भी आगा-पीछा नहीं करेंगे।

आपका,
भारत-माँका एक ईसाई बेटा

हिन्दू-मुसलमानोंसे किये गये अनुरोधके विचारसे मैं यह पत्र, व्यक्तिगत उल्लेखके दो अंशोंको[1] छोड़कर, सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। यूरोपीय मिशनरियोंके विषयमें अनुचित रूपसे किये गये उल्लेखको मैं पसन्द नहीं करता। यद्यपि लेखकने उनके विषयमें जो-कुछ कहा है वह अधिकांशतः सही ही है; फिर भी बहुत-से यूरोपीय मिशनरी न तो भारतीय विरोधी हैं, न हिन्दू और मुसलमान विरोधी ही। राष्ट्रवादियोंके समक्ष मार्ग स्पष्ट है। उन्हें अपने विशुद्ध प्रेम द्वारा सभी अल्पसंख्यकोंको अपनी ओर करना है; अंग्रेज भी इनमें आ जाते हैं। भारतीय राष्ट्रीयता, यदि उसे अहिंसक रहना है तो एकांगी नहीं हो सकती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१२-१९२१

१. यहाँ और भी बहुतसे अंश छोड़ दिये गये हैं।

५. चरखेके बारेमें

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

जिला कांग्रेस कमेटीके पास ऐसा कोई कताई विशेषज्ञ नहीं है जिसकी सलाहसे वह जन-साधारणमें प्रचारके लिए चरखेका चुनाव कर सके . . .

अधिकांश कार्यकर्त्ता अभीतक यह नहीं समझ पाये हैं कि ऐसे पतले तकुएपर ही जो चरखेके एक चक्करमें १५० चक्कर पूरे कर लेता है ठीक बुने जाने योग्य सूत काता जा सकता है।

कुछ स्थानोंमें 'यंग इंडिया' द्वारा सुझाये गये चरखेको आदर्श नमूना माना जाता है लेकिन उसके तकुए (जिसका व्यास आम तौरपर कमसे-कम आध इंच होता है) के चक्कर ४० से भी कम होनेके कारण तार खींचनेके बाद उसमें पूरे बट डालनेके लिए पहियेको ज्यादा बार घुमाना जरूरी हो जाता है जिससे उसमें समय ज्यादा लगता है।

इसका परिणाम यह होता है कि बहुत-से चरखे बेकार पड़े रहते हैं अथवा उनसे ऐसा सूत तैयार होता है जिसे बुनकर कम बटा या विषम होनेके कारण नहीं लेते . . . यदि समिति तिलक स्वराज्य निधिका अधिकांश भाग इसी कामपर खर्च करनेवाली हो तो धन देते समय उसे यह स्पष्ट शर्त रख देनी चाहिए कि जिस जिला संगठनको यह धन दिया जा रहा है उसके पास एक ऐसा कताई-विशेषज्ञ होना चाहिए . . .

आपका इत्यादि,
(डा०) ए० के० नूलकर
उपाध्यक्ष,
पूर्व खानदेश जिला कांग्रेस कमेटी

२१ नवम्बर, १९२१

इस पत्रको[१] मैं बड़ी प्रसन्नताके साथ प्रकाशित कर रहा हूँ। चाहता हूँ कि लोग इससे मौजूदा चरखोंमें सुधारकी ओर प्रेरित हों। इससे यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि हाथसे सूत कातनेके काममें पढ़े-लिखे लोग कितनी दिलचस्पी ले रहे हैं। मैं डा० नूलकरके उदाहरणको स्पृहणीय मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१२-१९२१

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

६. एक उलझन और उसका हल[1]

लॉर्ड रीडिंग उलझनमें पड़े हैं; उनकी बुद्धि चकरा गई है। कलकत्ताके ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन और बंगाल नेशनल चेम्बर ऑफ कॉमर्सके अभिनन्दन-पत्रोंका उत्तर देते हुए उस दिन वाइसरायने कहा कि

> **मैं जबसे यहाँ भारतमें आया हूँ तबसे बराबर मनन करते रहनेपर भी जब मैं जनताके एक विशेष समुदायकी हलचलपर विचार करता हूँ तो आज भी उलझनमें पड़ जाता हूँ, मेरी बुद्धि चकरा जाती है। मैं सोचता हूँ कि सरकारको चुनौती देनेके उद्देश्यसे तथा उसे गिरफ्तारीपर मजबूर करनेके लिए जान-बूझकर कानून-भंग करनेसे आखिर हाथ क्या आयेगा?**

इसका आंशिक उत्तर तो पण्डित मोतीलाल नेहरूने अपनी गिरफ्तारीके[2] बाद यह उद्‌गार प्रकट करके दे दिया है कि मैं स्वतन्त्रताके मन्दिरमें जा रहा हूँ। हम गिरफ्तारी इसलिए चाहते हैं कि यह नाम-मात्रकी आजादी वास्तवमें गुलामी ही है। हम इस सरकारकी सत्ताको इसलिए चुनौती देते हैं कि हम उसकी शासन-प्रणालीको बिलकुल बुरी प्रणाली मानते हैं। हम इस सरकारका तख्ता उलट देना चाहते हैं। हम उसे लोकमतके आगे झुकनेको मजबूर कर देना चाहते हैं। हम यह दिखाना चाहते हैं कि सरकारका अस्तित्व प्रजाकी सेवाके लिए होता है; प्रजा सरकारकी सेवाके लिए नहीं होती। इस सरकारके राज्यमें स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करना असह्य हो गया है; क्योंकि उसके लिए हमें जो कीमत अदा करनी पड़ती है वह बहुत ही ज्यादा है, इतनी ज्यादा कि लोगोंको उसकी कल्पना तक नहीं हो सकती। हम चाहे अकेले हों, चाहे हमारे साथ बहुत-से लोग हों, हम अपने आत्मसम्मान और अपने निश्चित सिद्धान्तोंको बेचकर आजादी नहीं खरीद सकते। मैंने देखा है कि छोटे-छोटे बच्चे भी उनके निश्चित उद्देश्यको भंग करनेका प्रयत्न किये जानेपर आनपर अड़ गये, जरा भी नहीं झुके; फिर उनके माँ-बापकी दृष्टिमें यह बात चाहे कितनी ही छोटी क्यों न रही हो।

लॉर्ड रीडिंगको यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि असहयोगी सरकारके साथ संग्राम कर रहे हैं। और जिस हदतक सरकारने मुसलमानोंके साथ विश्वासघात किया है, पंजाबकी बेइज्जती की है, और वह जिस तरह लोगोंको जबरदस्ती अपनी इच्छाके अनुसार चलानेका दुराग्रह कर रही है और अपने किये विश्वासघातका सुधार करने तथा पंजाबके अत्याचारोंका प्रायश्चित्त करनेसे मुँह मोड़ रही है, उसी हदतक हमने उसके खिलाफ विद्रोह किया है।

१. यह उन लेखोंमें से है जिसे लिखनेके कारण गांधीजीपर मुकदमा चलाया गया था और सज़ा दी गई थी।

२. वे ६ दिसम्बर, १९२१ को गिरफ्तार हुए थे।

लोगोंके लिए दो मार्ग खुले थे — एक तो सशस्त्र विद्रोहका और दूसरा शान्तिमय विद्रोहका। इनमें से असहयोगियोंने — कुछ लोगोंने अपनी कमजोरी और कुछने अपनी शक्तिके कारण — शान्तिका मार्ग अर्थात् स्वेच्छापूर्वक कष्ट-सहन, पसन्द किया है।

यदि देश इन कष्ट-सहन करनेवाले वीरोंके साथ होगा तो सरकारको या तो झुकना पड़ेगा या वह मटियामेट हो जायेगी; इसके सिवा दूसरी गति नहीं। यदि लोगोंने उनका साथ न दिया तो उन्हें कमसे-कम इस बातका तो सन्तोष होगा कि हमने अपनी आजादी बेच नहीं डाली। सशस्त्र युद्धमें आम तौरपर वही विजयी होता है जो अधिक मार-काट करता है। परन्तु शान्ति और कष्ट-सहन लोकमतको शीघ्र तैयार करनेका सबसे सुगम उपाय है और इसलिए इसके द्वारा प्राप्त की हुई विजय, सत्यकी विजय कहलाती है। लॉर्ड रीडिंगकी जिंदगी अदालतोंके वातावरणमें गुजरी है। अतएव उन्हें सत्ताके प्रति की गई सविनय अवज्ञाकी कद्र करना कठिन मालूम हो रहा है। परन्तु जब यह युद्ध समाप्त हो जायेगा तब वाइसराय इस बातको जानेंगे कि इन अदालतोंसे भी बढ़कर कोई अदालत है और वह है अन्तरात्माकी अदालत; जो दूसरी तमाम अदालतोंसे श्रेष्ठ है।

लॉर्ड रीडिंग चाहें तो इन तमाम कष्ट-सहन करनेवाले लोगोंको अपने हिताहित-का कुछ भी खयाल न रखनेवाले पागलोंकी संज्ञा दे सकते हैं। इसलिए उन्हें उन लोगोंको 'गलत रास्ते' से हटा देनेका भी अधिकार है। पागलोंके लिए तो यह व्यवस्था बिलकुल ठीक है; यदि यह सरकारके भी अनुकूल पड़ती हो तो फिर यह एक आदर्श अवस्था ही है। हाँ, यदि असहयोगी खुद ही जेल जानेका मौका आ जानेपर नाक-भौंह चढ़ाते हों, या मुँह फुलाते हों अथवा जैसा कि लालाजीने कहा है "सरकारसे दया और कृपाकी भिक्षा" माँगते हों, तो अलबत्ता वाइसरायको शिकायतका मौका हो सकता है। असहयोगीका बल तो इसी बातमें है कि बिना किसी तरहकी शिकायत किये जेल चला जाये। यदि खुद ही जेलका आह्वान करके, उसका पारितोषिक पाते ही, वह कुड़कुड़ाने लगे तो अपनी बाजी तुरन्त हार जाता है।

वाइसरायने जो धमकी दी है, वह अशोभनीय है। आखिरी फैसला हुए बिना युद्ध तो रुक ही नहीं सकता। यह लड़ाई तो पशु-बलकी सत्ता और लोकमतके बीच है। जो लोग लोकमतकी ओरसे लड़ रहे हैं वे पशुबलके सामने छाती खोलकर खड़े रहनेका निश्चय कर चुके हैं — वे अपने मतको छोड़ देनेके लिए हरगिज तैयार नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१२-१९२१

७. नगरपालिकाओंपर विपत्ति

अहमदाबाद, नडियाद और सूरतकी नगरपालिकाओंपर शिक्षा विभागको लेकर फिर विपत्ति आ पड़ी है।[1] सरकार नगरपालिकाओंको शिक्षा विभागको चलानेके अयोग्य ठहराकर उस विभागको अपने अधिकारमें करना चाहती है। इसीलिए उसने इस आशयका नोटिस जारी किया है कि यदि ये तीनों नगरपालिकाएँ १७ तारीखको पाँच बजेतक सरकारकी इच्छानुकूल बन्दोबस्त नहीं करेंगी तो सरकार शिक्षा विभाग-को अपने हाथमें ले लेगी। जहाँ नगरपालिकाको स्पष्ट बहुमत प्राप्त है वहाँ सरकारके लिए इस तरह कब्जा करना मुश्किल है।

अब नगरपालिकाका असहयोगी सदस्य सिर्फ एक ही उद्देश्यसे वहाँ रह सकता है। और वह यह है कि वह हर उचित तरीकेसे लोगोंके बलको बढ़ाये तथा लोगोंपर सरकारके अधिकारको कम करे। जहाँ सहयोगियोंकी संख्या अधिक होनेके कारण ऐसा न किया जा सके वहाँ असहयोगीको केवल अव्यवस्था पैदा करनेके लिए तथा चलते काममें दखल देनेकी खातिर ही नहीं रहना चाहिए। उसे समझ लेना चाहिए कि वैसा करनेसे जनबलमें वृद्धि नहीं होती; बल्कि यह तो केवल कालक्षेप है। अनुभव सिखाता है कि जिसके पास बहुमत है वह केवल धाँधलेबाजीके बलपर ही अपने निर्णयसे पीछे नहीं हट जाता और जब सिद्धान्तोंपर मतभेद होता है तब वह अपने बहुमतका पूरा उपयोग करता है। जहाँ सिद्धान्तोंपर मतभेद नहीं होता वहाँ बहुमतके नियमसे सुन्दर फलकी प्राप्ति होती है। जहाँ सिद्धान्तोंपर मतभेद हो वहाँ बहुमतके आगे झुकनेकी रूढ़िसे समाजका अधःपतन होता है। अतः जिस नगरपालिकामें हम बहुमत प्राप्त कर सकते हों हमारा उसीमें रहना वांछनीय है।

अब हम इस दृष्टिसे वर्तमान स्थितिकी जाँच करें। सरकारको शिक्षापर अधि-कार करनेसे रोकने और उसके साथ झगड़ा करनेसे बचनेका एक रास्ता यह है कि शिक्षाका प्रबन्ध उसी नगरकी राष्ट्रीय संस्थाको सौंप दिया जाये और अनुदान देकर उसकी सहायता की जाये। नगरपालिकाको ऐसी सहायता देनेका अधिकार है। अगर ऐसा किया जा सके तो भले ही सरकार शिक्षापर अधिकार जमा ले किन्तु उसका कुछ मतलब न होगा। वह इससे वर्तमान विद्यार्थियोंपर अधिकार नहीं जमा सकती और वे स्वाश्रयी ही रहेंगे। सरकारी अधिकारी नये स्कूलोंकी स्थापना करना चाहें तो करें। उन्हें कोई नागरिक ऐसा करनेसे अवश्य ही नहीं रोकेगा लेकिन सरकारको इस स्कूलमें जानेवाले बालक कहाँसे मिलेंगे? हमारी मान्यता तो यह है कि स्कूल जानेके इच्छुक सब बालक नगरपालिकाके स्कूलोंमें पढ़ने आते हैं। इसके अतिरिक्त नये विभागके लिए अर्थकी व्यवस्था करनेमें भी सरकारको दिक्कतका सामना करना

१. इन नगरपालिकाओंने अपने स्कूलोंमें राष्ट्रीय शिक्षा देने और सरकारी अनुदान न लेनेका निश्चय किया था; नडियाद नगरपालिकाके निर्णयके लिए देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ३४६-४७।

होगा। नगरपालिका स्वेच्छासे पैसा कदापि नहीं देगी। इसलिए सरकार हर वार जोर-जबरदस्ती करके नगरपालिकासे पैसा लेगी। अत: इसमें भी सरकारकी पराजय होगी।

दूसरा रास्ता यह है कि सरकार अपना अधिकारी नियुक्त करना चाहे तो भले ही करे; लेकिन नगरपालिका स्कूलोंको यह सलाह दे सकती है कि उनके अध्यापकगण उस अधिकारीके आदेशका पालन न करें और उसको, वह जो भी कदम उठाना चाहे उठाने दें। यदि ऐसा हो तो भी सरकार परेशान होगी।

तीसरा रास्ता यह है कि यदि सरकार वर्तमान स्कूलोंपर अधिकार जमानेके अपने प्रयत्नमें सफल हो जाये तो हमें मतदाताओंके वीच काम करना चाहिए। अर्थात् हम लोगोंको ऐसी तालीम दें जिससे कोई भी वालक सरकारी स्कूलोंमें न जाये और सव लोग नये स्कूल खोलकर अपने वालकोंको उनमें भेजें।

इन तीनों रास्तोंको एक साथ नहीं अपनाया जा सकता; लेकिन हमें तीनोंमें से एक रास्ता चुननेके वाद उसपर खूव ध्यान देना चाहिए। प्रतिनिधियोंका यह कर्त्तव्य है कि वे मतदाताओंको खूव तालीम दें ताकि वे प्रत्येक उचित कार्यके लिए तैयार रहें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-१२-१९२१

८. टिप्पणी

माँ-वापसे

जो माँ-वाप अपने वच्चोंको स्कूलों अथवा आश्रममें भेजते हैं उन्हें भी कुछ कर्त्तव्य पूरे करने होते हैं। यदि माँ-वाप ऐसा नहीं करते तो वच्चोंका, जिन संस्थाओंमें वे पढ़ते हों उन संस्थाओंका तथा स्वयं उन माँ-वापका नुकसान होता है। अत: वे जिन संस्थाओंमें वच्चोंको भेजें उन्हें उनके नियमोंको जान लेना चाहिए। उन्हें वच्चोंकी आदतों और आवश्यकताओंको समझ लेना चाहिए और एक वार निश्चय कर लेनेपर उसका पालन करना चाहिए। जव वच्चोंका आश्रममें रहनेका समय हो तव माँ-वाप-को उन्हें अपने स्वार्थसे प्रेरित होकर अथवा अपनी सेवा करवानेके लिए वापस नहीं वुलाना चाहिए। फिर विवाहोंमें भाग लेनेके लिए तो उन्हें वुलाया ही कैसे जा सकता है? ऐसे अवसरोंपर वच्चोंको क्यों वुलाया जाये? जिस तरह माँ-वाप वच्चोंको अन्य समस्त सामाजिक कार्योंमें नहीं फँसाते उसी तरह उन्हें विवाह-जैसे कार्योंमें भी नहीं डालना चाहिए। वच्चोंका शिक्षण काल ऐसा होता है कि उसमें उनका ध्यान पढ़ाईके अलावा किसी अन्य विषयपर नहीं होना चाहिए। इसके अतिरिक्त शिक्षण कालमें वच्चोंको व्रह्मचारी रहना चाहिए। यदि उन्हें विवाह-जैसे समारोह देखनेके चक्करमें डाला जायेगा तो उससे व्रह्मचर्य-पालनमें विघ्न उपस्थित होनेकी सम्भावना है। इसलिए वालकोंको सोच-समझकर वैसे कार्योंसे अलग रखनेकी आवश्यकता है। इसके

अतिरिक्त आजकलके जमानेमें विवाहकी बात ही विपरीत जान पड़ती है। ऐसी स्थितिमें जो बालक स्वयं उससे दूर रहना चाहता हो, उसे भी उसमें भाग लेनेके लिए ललचाना तो उसपर अत्याचार करने जैसा ही है। आज जब मन दुर्बल पड़ गया है और प्रलोभनोंका सामना करनेकी शक्ति क्षीण हो गई है तब अगर किसीने नियमोंका पालन करनेका निश्चय किया है और कुछ त्याग करनेकी इच्छा की है तो उसकी इस वृत्तिका पोषण किया जाना चाहिए। ऐसा करनेकी बजाय अगर हम स्वयं ही नियमोंको भंग करायेंगे तो हम दुर्बलताका पोषण करेंगे। मैंने जो बात विवाहके प्रसंगमें कही है वह अनेक प्रसंगोंपर लागू होती है। अपने बच्चोंका विचारपूर्वक पालन-पोषण करनेवाले माँ-बाप ऐसे अनेक प्रसंगोंको ढूंढ़ निकालेंगे जब उन्होंने अपने बच्चोंको आगे ले जानेकी बजाय पीछेकी ओर धकेला है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-१२-१९२१

९. पत्र : देवदास गांधीको

गुरुवार [१५ दिसम्बर, १९२१][1]

चि० देवदास,

तुम्हारे दो पत्र मिले। विषय-वस्तु जितनी सुन्दर है, तुम्हारी लिखावट उतनी ही खराब है। खूब प्रयत्न करो। मैं जानता हूँ कि अभी तुम्हें समय नहीं है। फिर भी तुम्हें प्रयत्न तो करना ही होगा।

हरिलालने बहुत सुन्दर काम किया। मैंने अभी-अभी सुना कि उसे छः मासका सपरिश्रम कारावास मिला है।

शेष बातें महादेवभाईको[2] मैंने जो पत्र लिखा है, उसमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ७७७५)की फोटो-नकलसे।

१. हरिलाल रविवार, १५ दिसम्बर, १९२१ को गिरफ्तार किये गये थे।

२. महादेव देसाई (१८९२-१९४२); २५ वर्षतक गांधीजीके निजी मन्त्री रहे।

१०. पत्र : महादेव देसाईको

गुरुवार [१५ दिसम्बर, १९२१][1]

चि० महादेव,

मैं तुम्हें लगभग नित्य ही पत्र लिखता रहा हूँ। स्वरूपरानीका[2] पत्र सुन्दर है, अर्थात् तुम्हारा पत्र सुन्दर है! लेकिन हमें किसी बातका श्रेय तो लेना नहीं है। सर्व-देवताओंको किया हुआ नमस्कार वस्तुतः केशवको ही जाता है। सब कार्य कृष्णार्पण हैं इसलिए कुछ भी चिन्तनीय नहीं है।

दासकी पत्रिकाएँ बहुत ओजपूर्ण हैं। उन्होंने [अहिंसाका] अमृत खूब पिया जान पड़ता है। बंगालने सचमुच गुजरातका स्थान ले लिया है और गुजरात पिछड़ गया है। मुझे यह अच्छा भी लगता है।

प्यारेलाल[3] शेष बातें तो तुम्हें बता ही देगा। उसका खूब उपयोग करना और अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। मैं चाहता हूँ कि तुम अब देवदासको जेल भेज दो। प्यारेलालको वहाँ भेजनेका यह कारण भी है।

गोडबोलेको[4] मैं अलग पत्र नहीं लिख रहा हूँ। वह सब कागजात लेकर यहाँ आ जाये। अगर वह यहाँ आ जायेगा तो कुछ काम जल्दी निपट जायेगा। वहाँ अब उसकी कोई जरूरत नहीं जान पड़ती।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

निस्सन्देह गोडबोलेको स्वयंसेवकके रूपमें अपना नाम दर्ज करवानेकी कोई जरूरत नहीं है।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२७)की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीने गुरुवार ८-१२-१९२१ को, श्री देसाईको लिखे एक पत्रमें यह इच्छा व्यक्त की थी कि स्वरूपरानी उन्हें पत्र लिखें। उन्होंने श्री देसाईको यह भी लिखा था कि वे उनकी सहायताके लिए प्यारेलालको भेजनेको तैयार हैं। उन्होंने यह पत्र सम्भवतः अगले गुरुवारको लिखा था।

२. मोतीलाल नेहरूकी पत्नी।

३. प्यारेलाल नय्यर, १९२० से गांधीजीके दूसरे निजी सचिव; इन्होंने १९४२ में महादेव देसाईकी मृत्युके बाद उनका स्थान ग्रहण किया; **महात्मा गांधी : दि लास्ट फेज** आदिके रचयिता।

४. गुजरात विद्यापीठके भूतपूर्व प्राध्यापक; अ० भा० कां० कमेटीके संयुक्त-सचिव।

११. तार[1]

[१५ दिसम्बर, १९२१ के लगभग][2]

असहयोगी पूरी तरहसे प्रतिरक्षात्मक भर हैं। जबतक सरकार पश्चात्ताप न करे तथा जनमतकी सर्वोच्चता न माने किसी भी सम्मेलनसे लाभ नहीं हो सकता।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

सेवेन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१२. तार: राजेन्द्रप्रसादको[3]

[१५ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

राजेन्द्रप्रसाद[4]
छपरा

अवश्य भरती हो जाइये पर विश्वस्त युवकोंको निर्देश देकर ताकि अहिंसाका उल्लंघन न होने पाये।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२६)की फोटो-नकल से।

१. यह तार जबलपुरके एक जमींदारके तारके उत्तरमें भेजा गया था जो इस प्रकार था: "स्थिति अत्यन्त गम्भीर। दोनों ही पक्ष बराबर दृढ़। अवांछनीय घटनाएँ होना असम्भव नहीं। आपकी जिम्मेदारी अत्यधिक। गोलमेज परिषद् करना ठीक होगा। वाइसरायसे भी सुनवाईकी प्रार्थना की गई है।"

२. मूल स्रोतसे।

३. यह तार राजेन्द्रप्रसादके १५ दिसम्बर, १९२१ को मिले तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "सरकारने स्वयंसेवक दलको अवैध घोषित कर दिया है। शफी, जनकधारी तथा ५० अन्य घोषणाकी अवहेलना करनेपर गिरफ्तार कर लिये गये हैं, हमारा सुझाव है कि हक, ब्रजकिशोर, दीपनन्दन तथा मैं इसमें भरती हो जायें। तार द्वारा छपरा हिदायत भेजें।"

४. १८८४-१९६३; राजनीतिज्ञ तथा विद्वान्; भारतके प्रथम राष्ट्रपति।

१३. तार : श्रीप्रकाशको[1]

[१५ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

श्रीप्रकाश[2]
सेवाश्रम
बनारस

हार्दिक बधाई। ऐसी सफल परिणतिके लिए बिलकुल तैयार नहीं था।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२९) की फोटो-नकलसे।

१४. तार : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

[१५ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्][3]

सुन्दर। आशा है आपको अधिकतम दण्ड मिलेगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
सेवेन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१. यह श्रीप्रकाशके १५ दिसम्बर, १९२१ के तारके जवाबमें भेजा गया था। उनका तार इस प्रकार था: "पिताजी अपराध संहिताकी धारा १०७ के अधीन गिरफ्तार और सब ठीक है।"

२. (जन्म १८९०); बनारसके प्रसिद्ध विद्वान् बाबू भगवानदासके सुपुत्र; कांग्रेसी नेता; पाकिस्तानमें भारतके उच्चायुक्त; बादमें बम्बईके गवर्नर।

३. १५ दिसम्बर, १९२१ को १२ बजे चक्रवर्ती राजगोपालाचारीपर दण्डविधि संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत एक नोटिस जारी किया गया था तथा उसी दिन ४ बजे [अदालतमें] पेश होनेका आदेश दिया गया था। सुनवाई उस दिन स्थगित हो गई, पर साधन-सूत्रसे पता चलता है कि मामलेकी सूचना मिलनेपर गांधीजीने यह तार भेजा था।

१५. मदनमोहन मालवीयको भेजे जानेवाले तारका मसविदा[1]

[१६ दिसम्बर, १९२१][2]

चाहता हूँ आप समझ सकें कि यह संघर्ष अन्ततक चलनेवाला है। असहयोगी पूरी तरहसे प्रतिरक्षात्मक हैं। सार्वजनिक सभाओंका निषेध करने और उन्हें रोकनेवाले उत्तेजनात्मक आदेश यदि वापस ले लिये जाते हैं तो वर्तमान सविनय अवज्ञा स्वतः ही बन्द हो जायेगी। जबतक सरकार जनताकी इच्छाका आदर नहीं करती, स्वागत-समारोहका बहिष्कार अवश्य जारी रहेगा। सम्मेलन तबतक बेकार ही सिद्ध होगा जबतक सरकार सचमुच पश्चात्ताप न करे और बराबर चुभनेवाली शिकायतोंको दूर करनेकी इच्छुक न हो तथा जनमतकी शक्तिके सम्मुख न झुके। तथापि जमनादास[3] व कुँजरूसे[4] स्थितिपर चर्चा करूँगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

सेवेन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१. १८६१-१९४६; बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके संस्थापक; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके दो बार अध्यक्ष।

२. यह मसविदा गांधीजीने अपने निजी सचिव कृष्णदासको मालवीयजीका १६ दिसम्बर, १९२१ का तार मिलनेपर बोलकर लिखवाया था। तार इस प्रकार था: "वाइसरायपर गोलमेज सम्मेलनकी आवश्यकता-पर जोर डालनेके लिए २१ तारीखको लगभग सात आदमियोंके एक प्रतिनिधि-मण्डलकी व्यवस्था कर रहा हूँ, इसलिए कलकत्ता जा रहा हूँ। जमनादास और कुँजरू स्थितिका विवरण देने कल साबरमती पहुँच रहे हैं। ऐसा कहनेके लिए आपकी अनुमति चाहता हूँ कि यदि सम्मेलनका प्रस्ताव मान लिया जाता है और सरकार हाथ रोक लेती है तथा नेताओंको छोड़ देती है, तो आप युवराजके स्वागतका बहिष्कार नहीं करेंगे तथा सम्मेलनकी समाप्तितक सविनय अवज्ञा स्थगित रखेंगे। २१ तक कलकत्ताका पता होगा न० ३१, बरटिल्लो स्ट्रीट।"

कृष्णदासके कथनानुसार यह तार भेजा नहीं गया। जमनादास तथा कुँजरूके गांधीजीसे मिलनेके बाद जो उत्तर भेजा गया उसके लिए देखिए "तार: मदनमोहन मालवीयको", १९-१२-१९२१।

३. जमनादास द्वारकादास, होमरूल लीगके प्रमुख नेता।

४. हृदयनाथ कुँजरू (जन्म १८८७); भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के अध्यक्ष, उदार राजनीतिज्ञ तथा संसद-शास्त्री।

१६. परिपत्र[1]

साबरमती
१६ दिसम्बर, १९२१

प्रिय मित्र,

मैं नहीं जानता कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें कौन-कौन शामिल हो सकेगा। इसलिए मैं एक प्रस्तावका मसविदा आपको भेज रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि वह पास किया जाये। यदि आप शामिल न हो सकें तो क्या आप कृपया मुझे अपना मन्तव्य भेजेंगे? और यदि अपने प्रान्तमें शान्ति बनाये रखनेके लिए आपकी उपस्थिति आवश्यक हो तो अवसर होनेपर भी आप निश्चय ही बैठकमें शामिल होने नहीं आयेंगे। मसविदेको कतई प्रकाशित न किया जाये।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ९५४५) की फोटो-नकलसे।

१७. पत्र: देवदास गांधीको

आश्रम
शुक्रवार [१६ दिसम्बर, १९२१][2]

चि० देवदास,

तुम्हारा पत्र मिला। कैदियोंका चित्र सुन्दर भाषा किन्तु रद्दी अक्षरोंमें दिया है और इससे पत्रकी मिठास लगभग समाप्त हो गई है।

मैं तुम्हारे जेल जाने और महादेवके गिरफ्तार होनेके तारकी राह देख रहा हूँ। श्रीमती नेहरू वगैरा आयेंगे या नहीं, तारसे सूचित करना। आज महादेवको अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

तुम दोनोंकी तबीयत अच्छी रहनी चाहिए। प्यारेलालके वहाँ पहुँच जानेपर तुमपर बहुत बोझा तो नहीं पड़ेगा।

१. यह सम्भवतः विभिन्न प्रान्तोंके कांग्रेसी कार्यकर्ताओंको भेजा गया था।
२. जमनादास द्वारकादास और हृदयनाथ कुंजरू आश्रममें १७ दिसम्बर, १९२१ को पहुँचे थे।

आश्रममें अन्ना,[1] गोमतीबहन[2] और सरकारकी[3] भौजाई आ गई हैं। वसुमतिबहन भी यहाँ हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कल एन्ड्रयूज,[4] जमनादास और कुँजरू आ पहुँचेंगे।

गुजराती पत्र (एस० एन० ७६७७)की फोटो-नकलसे।

१८. तार : जियाराम सक्सेनाको[5]

[१६ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

जियाराम[6]
कांग्रेस कमेटी
इलाहाबाद

कार्य-समिति २३ को।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२३)की फोटो-नकलसे।

१. हरिहर शर्मा, जो शुरूमें गंगानाथ भारतीय विद्यालय, बड़ौदामें काम करते थे। बादमें दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके संगठनकर्त्ताओंमें से एक।

२. किशोरलाल मशरूवालाकी पत्नी।

३. पटवर्धन यादवाडकर, **यंग इंडिया**के अवैतनिक कार्यकर्त्ता। नागपुर कांग्रेसके अवसरपर दिसम्बर १९२० में निधन। देखिए खण्ड १९, पृष्ठ २१५-१६।

४. सी० एफ० एन्ड्रयूज (१८७१-१९४०); अंग्रेज मिशनरी; रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा गांधीजीके निकटतम सहयोगी; दीनबन्धुके नामसे प्रसिद्ध।

५. यह तार जियारामके १६ दिसम्बर, १९२१ के तारके जवाबमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "पत्र मिला। कृपया कार्य-समितिकी [बैठककी] तारीख तारसे सूचित कीजिए।"

६. संयुक्त प्रान्तकी प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटीके मन्त्री।

१९. तार: मौलाना अब्दुल बारीको[1]

[१६ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

इन सबके लिए हमें हर तरहसे ईश्वरकी कृपाका ही अनुगृहीत होना चाहिए। आशा है आप स्वस्थ होंगे।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२४)की फोटो-नकलसे।

२०. तार: सी० विजयराघवाचार्यको

[१६ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्][2]

आचार्य[3]
सेलम

आपको यहांकी स्थिति खूब समझकर ही आनेका निर्णय करना चाहिए।[4]

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२८)की फोटो-नकलसे।

१. १८३८-१९२६; लखनऊके राष्ट्रीय मुसलमान नेता, जिन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १९२१।

यह तार मौलाना अब्दुल बारीके १६ दिसम्बर, १९२१ के तारके जवाबमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "आज हैदराबादसे वापस आया हूँ। मौल्वी सलामतउल्ला तथा अपने अन्य बहुत प्यारे हिन्दू-मुसलमान दोस्तोंकी अजेय भावना देखकर मैं बहुत ही खुश हुआ। उनकी गिरफ्तारीपर मैं आपको बधाई देता हूँ। लखनऊ और इलाहाबादके नागरिकोंके धीरज, उनकी सहनशक्ति, अनुशासन, अमलकी एकता और कांग्रेसके हुक्मकी पाबन्दीके लिए हमें उनपर गर्व है। लखनऊ और इलाहाबाद दोनों जगह हड़तालका सही ब्यौरा यह है कि वह मुकम्मिल थी और पूरी तरह अहिंसात्मक भी। अभी-अभी पण्डित मोतीलालजी, मौलाना सलामतउल्ला और उनके साथियोंसे जेलमें मुलाकात की है। सभी बहुत खुश हैं। अभी-अभी आपके बेटेकी गिरफ्तारीकी बात सुनी। हार्दिक बधाई। आसार अच्छे हैं।"

२. यह तार १५ दिसम्बरके विजयराघवाचार्यके उस तारके जवाबमें दिया गया था जो गांधीजीको १६ को मिला था और इस प्रकार था: "कृपया तारसे सूचित कीजिए कि क्या २४ को मेरे वहाँ पहुँचनेसे काम चलेगा और यदि आपका विचार है कि इससे पहले मेरी उपस्थिति वहाँ नितान्त आवश्यक है तो बहुत ही असुविधाजनक होगा।"

३. १८५२-१९४३; प्रमुख वकील और सक्रिय कांग्रेसी; १९२० में नागपुर कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्ष।

४. अनुमानतः अहमदाबादके कांग्रेस-अधिवेशनमें शामिल होनेके लिए।

२१. तार: श्यामसुन्दर चक्रवर्तीको[1]

[१६ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

खाली जगहें भरी जानी चाहिए।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७३१)की फोटो-नकलसे।

२२. गहरे घाव

१७ दिसम्बर, १९२१

सरकारकी आज्ञाओंको भंग करनेवालों को — चाहे वे छोटे हों या बड़े — कैद करना, उनको साधारण मुजरिमोंकी तरह रखना, उनको कारावासकी सुविधाओंसे भी वंचित रखना, ये सब बातें तो समझमें आ सकती हैं। मैं उसे असद्व्यवहार नहीं कहूँगा। अगर हम अपनेसे ऊँचे किसी अधिकारीको, अथवा जिसके अधिकारमें हम थोड़ी देरके लिए भी हों, रुष्ट कर बैठें तो उसकी आज्ञाभंगके लिए हमें सजा मिलना अनहोनी बात नहीं है। किन्तु अगर वह हमारा अपमान करे, हमारे बच्चोंसे जबरन ऐसी बातें कराये जिन्हें हम और वे दोनों बुरी समझते हैं और जिन्हें करनेके लिए हम कानूनन बाध्य नहीं हैं, या हमारे साथ ऐसा बरताव करे जैसे हम बिलकुल नाचीज हों, तो यह हमें कभी बरदाश्त नहीं हो सकता। कहते हैं कि कोकोनाडामें एक मजिस्ट्रेटने स्वराज्य और खिलाफतके झंडोंको उखड़वा डाला, उसने यह हुक्म जारी किया कि एक सप्ताह तक ऐसे झंडे न लगाये जायें। यह भी सुनते हैं कि एक पाठशालाके बालकोंसे यूनियन जैकको जबरदस्ती सलाम कराया गया। हमने यह भी पढ़ा है कि कलकत्ताके एक विख्यात प्रोफेसर अपना चोगा पहने बाहर जा रहे थे; उन्होंने देखा कि सिपाही कुछ निरपराध व्यक्तियोंका पीछा कर रहे हैं उन्हें बड़ी निर्दयतासे पीट रहे हैं। वे प्रोफेसरका चोगा तो पहने ही थे सो उसके भरोसे ऐसा मानकर कि उनकी बात ध्यानसे सुनी जायेगी वे अधिकारीके पास पहुँचे और उससे उन्होंने बहुत निर्दोष भावसे इस मारपीटका कारण पूछा। बस, इस अपराधपर उन्हें भी अत्यन्त क्रूरतापूर्वक पीटा गया। इसी तरह, बहादुर और सुसंस्कृत युवकोंके एक दलको, उन लोगोंने जो उस समय उनके पहरेदार थे, ठोकरें लगाईं। लोगोंको अकारण इस तरह अपमानित किया जाता है, इससे यही जाहिर होता है कि हमारे शासकोंके तौर-तरीकों-

१. कलकत्ताके **सर्वेंट** पत्रके सम्पादक; देशबन्धु दासके बाद बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष। यह तार चक्रवर्तीके १६ दिसम्बर, १९२१ के तारके जवाबमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "कृपया तार द्वारा राय दीजिए कि क्या अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके गिरफ्तारशुदा सदस्योंके स्थान खाली माने जायें और क्या उनको भरा जा सकता है?"

में जरा भी फर्क नहीं पड़ा है। वह ओडायरी ठसक अभीतक गई नहीं है। फिर लॉर्ड रोनाल्डशे उन पीटे गये प्रोफेसर साहबको बुलायें, उनसे मीठी-मीठी बातें करें, उन्हें यह आश्वासन भी दें कि अब ऐसा न होने पायेगा तो इससे होना क्या है? फिर क्या ऐसा न होने पायेगा? क्या प्रोफेसर साहब फिर न पीटे जायेंगे? हां, यह तो मानी हुई बात है कि इस नाजुक समयमें तो फिर उनपर हाथ न उठाया जायेगा। खुद प्रोफेसर साहब भी विश्वविद्यालयके उस चोगेके भरोसे किसी पदाधिकारीको कुछ दिनोंतक न छेड़ेंगे। किन्तु क्या उस पदाधिकारीके हृदयमें उन प्रोफेसर साहबके प्रति थोड़ा भी आदर है? वे खुद अपने लिए तो उसके पास गये ही नहीं थे। वे तो अत्याचार-पीड़ित मनुष्योंकी हिमायत करने गये थे। क्या वाइसरायके उस आश्वासन-के कारण भविष्यमें भारतीयोंकी रक्षा और सम्मान होगा? बात यह है कि सिपाहियों-को तालीम ही ऐसी दी जाती है, सवाल उसीका है। उसके द्वारा सिपाहीको एक ऐसा क्रूर पशु बना दिया जाता है जिसे यथासमय निरपराध मनुष्योंपर छोड़ा जा सके। आज इतने 'दास' और 'आजाद' इसीलिए जेल गये हैं कि ऐसे अमानवीय और पाशविक अत्याचारोंकी पुनरावृत्ति न होने पाये। उन्होंने जेलका स्वागत इसीलिए किया है कि बुरेसे-बुरे अपराधीके साथ भी ऐसा घृणित अत्याचार न हो, उसके भी स्वाभिमानको कहीं धक्का न लगने पाये। एक संस्थाके हाथसे निकलकर किसी दूसरी संस्थाके हाथमें सत्ता चली जाये, सिर्फ इसलिए वे जेल नहीं गये हैं। वे जो चाहते हैं वह है शासन-प्रणालीमें आमूल परिवर्तन। जिस बातके लिए लालाजी बरसोंसे अपना शरीर घुला रहे हैं, जो आरामतलब मोतीलालजी नेहरूकी जीवन-धारा बन गई है, और जिसकी खातिर वे पूरे फकीर बन गये हैं, वह लॉर्ड रोनाल्डशेकी क्षमा-प्रार्थना-से — फिर वह चाहे कितनी ही सद्भावपूर्ण क्यों न हो, नहीं बन सकती और न वह लॉर्ड रीडिंगकी मीठी बातोंसे ही तथा उनकी इस निजी चिन्ता और सावधानीसे ही बन सकती है कि अधिकारीगण कानूनकी मर्यादाका उल्लंघन नहीं करेंगे। यह आमूल परिवर्तन तो शान्ति और वीरताके साथ उस कष्टको सहनेसे ही आयेगा जो लोगोंको इस समय भोगना पड़ रहा है और जिसे भोगनेके लिए, भगवान्की कृपासे, वे अपनेको तैयार भी पा रहे हैं। एक सावधान मित्र, मेरी इस आशावादितापर अंकुश लगानेके उद्देश्यसे कहते हैं कि कष्ट सहनेकी तो अभी शुरुआत ही हुई है और अपने अभीष्ट फलकी प्राप्तिके लिए तो हमें आजसे कहीं ज्यादा मूल्य चुकाना होगा। उन्हें लगता है कि इसके लिए तो हमें एकाधिक जलियाँवाला बागोंकी पुनरावृत्तिके लिए तैयार रहना होगा और इस बार पेटके बल रेंगनेके लिए प्रसिद्ध उस गलीके कोनोंतक डरके मारे काँपते हुए और अनिच्छापूर्वक नहीं बल्कि बहादुरोंकी तरह प्रसन्न मनसे और अपने कदम दृढ़तापूर्वक रखते हुए जाना होगा और रेंगनेसे इनकार करनेके लिए कोड़ोंकी मार खानी पड़ेगी।[1] मैं उन मित्रको विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे आशावादमें इन सब तथा इनसे भी इतनी खराब बातोंके लिए गुंजाइश है जिनकी कि उन्हें कल्पना तक न होगी। किन्तु साथ ही मैं यह भी वचन देता हूँ कि अगर भारतने शान्ति

१. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

बनाये रखी, चित्तको अविचलित रखा, और दिलमें बदलेका विचार भी न आने दिया (जो मैं मानता हूँ कि सचमुच बड़ी कठिन बात है, किन्तु साथ ही यह भी कहूँगा कि भारतकी वर्तमान उच्च मनःस्थितिमें उतनी कठिन नहीं है) तो हमारी इस तैयारी और साथ ही प्रतिक्रियाके अभावके कारण सरकारकी पाशविक वृत्ति, पोषक तत्त्व न पाकर अपने-आप मर जायेगी और लॉर्ड रीडिंग भी अपने-आप लम्बी-चौड़ी बातें अलग रखकर पश्चात्तापकी मानवीय भाषा अपनायेंगे और उन्हें भारतीय वातावरणमें नई राजनीतिके लिए क्षेत्र दिखाई देगा। परन्तु इसके प्रतिकूल अगर हम अपने-आपको और अपने वचनको भूल गये तो हमें हजारों 'जलियाँवाला' के दृश्य देखने होंगे और अपनी आँखोंसे सारे देशको एक विशाल बूचड़खाना बना हुआ देखना होगा। किन्तु राष्ट्रीय कांग्रेसके नव-निर्वाचित सभापतिने हमें इस नौबतके लिए पहलेसे ही तैयार कर दिया है। उन्हें यह यकीन हो गया है कि कैदका डर तो हमारे दिलसे दूर हो गया है। उन्हें शायद अपने बहादुर पुत्र तथा उसके साथियोंके अनुभव देखकर यह भी विश्वास हो गया है कि हम मार-पीट भी सहन करनेके लिए तैयार हैं। किन्तु वे तो हमें साक्षात् मृत्युका भी डर दूर कर देनेकी आज्ञा दे रहे हैं। अगर वह दिन देखना हमारे नसीबमें बदा होगा तो मुझे उम्मीद है कि तब भारतमें ऐसे पर्याप्त शान्ति-निष्ठ असहयोगी निकलेंगे जिनके विषयमें यह लिखा जा सकेगा कि :

> उन्होंने बिना क्रोधके और अपने मुँहसे उस नादान खूनीके लिए भी प्रार्थना करते हुए बन्दूककी गोलियाँ खाईं।

जो खबरें मिली हैं उन्हें यदि सच माना जाये तो दो असमिया स्वयंसेवकोंको कोड़े लगाये गये हैं। लाहौरके स्वयंसेवकोंने उनपर किये गये मनमाने अत्याचारोंको बड़ी शान्तिके साथ सहन किया है। यह लड़ाई मजाक नहीं है। हम गत बारह महीनोंसे भी ज्यादा अरसेसे बराबर तैयारी कर रहे हैं और अन्ततक हमें इसी तरह नियमोंका पालन करना होगा। पीछे लौटनेका तो कोई सवाल ही नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-१२-१९२१

२३. गुजरात क्या करेगा?

पिछले दस दिनोंमें बंगालमें पाँच सौ योद्धा पकड़े गये हैं। लगभग दो-तीन सौ संयुक्त-प्रान्तमें पकड़े गये होंगे। पंजाबमें सौ-एक लोग पकड़े गये हैं। यदि उपर्युक्त प्रान्तोंमें अधिक असहयोगी नहीं पकड़े गये हैं तो इसमें इन प्रान्तोंके असहयोगियोंका कोई दोष नहीं है। मुझे जो पत्र प्राप्त हुए हैं उनसे मैं देखता हूँ कि इन तीनों प्रान्तोंमें सरकार जितने योद्धा गिरफ्तार करना चाहे उसे उतने योद्धा मिल सकते हैं। अगर अभीतक जितने लोग पकड़े गये हैं उनकी संख्या कम जान पड़ती है तो इसका कारण सरकारकी सुस्ती है। प्रत्येक प्रान्तमें जेल जानेके लिए सैकड़ों जेल-यात्री तैयार हैं।

ऐसे समयमें गुजरात शान्त है, मौन है और धैर्य धारण किये बैठा है। मुझे ये शान्ति, धैर्य और मौन अत्यन्त प्रिय हैं, क्योंकि मुझे विश्वास है कि सैकड़ों गुजराती

जेल जानेके लिए बिलकुल तैयार बैठे हैं। गुजरातसे जेलें भरनेके कार्यमें पहल करनेकी आशा थी; लेकिन उस सम्मानका उपभोग तो इस समय बंगाल कर रहा है। फिर भी यदि हम सचमुच तैयार हों तो हमें उससे ईर्ष्या करनेकी कोई जरूरत नहीं। मुझे विश्वास है कि जब हमारी बारी आयेगी तब हम क्षण-भरमें बंगालके समकक्ष हो जायेंगे।

वह समय समीप आता जा रहा है।

बारडोली तैयार न हो और आनन्द तैयार न हो तो हम सामूहिक सविनय अवज्ञा नहीं कर सकते। लेकिन सविनय अवज्ञा करनेमें हमपर कोई प्रतिबन्ध लगा ही नहीं है। सामूहिक सविनय अवज्ञा करनेपर तो हम तुरन्त अपेक्षित परिणामकी उपलब्धि कर सकते हैं; परन्तु व्यक्तिगत रूपसे सविनय अवज्ञा करनेसे तनिक विलम्ब होगा। मुझे तो यह उम्मीद है कि बारडोली अवश्य तैयार हो जायेगा और इसीसे हम सामूहिक और अगर जरूरत पड़ी तो व्यक्तिगत अथवा दोनों प्रकारकी सविनय अवज्ञा करनेके लिए तैयार हो जायेंगे।

बारडोली, आनन्द और नडियाद भले ही सामूहिक सविनय अवज्ञाकी तैयारी करें। अन्य सब भागोंमें लोगोंको व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके लिए तैयार रहना चाहिए। प्रत्येक गाँवमें जितने लोग तैयार हों उन्हें अपनी ग्राम-समितिमें अपने नाम दर्ज करा देने चाहिए। यदि ग्राम-समिति न हो अथवा कोई नाम दर्ज करनेके लिए तैयार न हो तो वे ताल्लुकेकी समितिमें अपने दाम दर्ज करा दें। ग्राम-समितियोंको ताल्लुका-समिति-में नाम भेज देने चाहिए। ये सब नाम अन्तमें गुजरात प्रान्तीय समितिमें दर्ज करवा दिये जाने चाहिए।

शान्तिसे ही स्वराज्य मिल सकता है, जिसकी इसमें श्रद्धा न हो; जो हिन्दू तो हो, लेकिन अस्पृश्यताका त्याग करनेके लिए तैयार न हो; जो अच्छी तरह कातना न जानता हो, जिसने विदेशी कपड़ेका सर्वथा त्याग न किया हो, जो केवल हाथसे कते सूतकी और हाथ-बुनी खादीका उपयोग न करता हो और जो हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों, पारसियों, ईसाइयों और यहूदियोंके बीच मित्रताकी जरूरत न समझता हो, उसे जेल जानेका विचार ही नहीं करना चाहिए और इसीलिए उसे स्वयंसेवकोंमें अपना नाम दर्ज करवानेका विचार भी अवश्य छोड़ देना चाहिए।

जिन्होंने आत्मशुद्धि नहीं की है और जिन्होंने शराब आदि पीना नहीं छोड़ा है वे यदि इस धार्मिक युद्धमें शामिल न होंगे तो देशकी सेवा ही करेंगे तथा इससे वे यह बता सकेंगे कि उन्होंने अपनी मर्यादा समझ ली है।

जो स्वयंसेवक बनें वे अपने भरण-पोषणकी व्यवस्था स्वयंमेव कर लें। वे समिति-से भरण-पोषण करनेकी आशा न रखें। जो देश-सेवा तो करना चाहते हैं लेकिन जिन्हें एक भी ऐसा मित्र नहीं मिलता जो ऐसे समयमें उनकी आवश्यकताओंको पूरा कर सके, मेरे विचारसे वे देश-सेवा करने योग्य नहीं हो सकते। ऐसे लोगोंका खर्च अधिक नहीं होता और वह खर्च किसीको कदापि भारी नहीं पड़ेगा।

जो-कुछ मैंने पुरुषोंके सम्बन्धमें कहा है वह स्त्रियोंपर भी लागू होता है। हालाँकि स्त्रियोंको एकाएक जेल जानेके लिए निकल पड़नेकी कोई जरूरत नहीं है

फिर भी उनमें से जिन्होंने देशभक्तिका रस-पान किया है उन्हें तो इसके लिए अवश्य तैयार रहना चाहिए।

काठियावाड़के एक मित्र पूछते हैं कि देशी राज्योंमें रहनेवाले लोग क्या करें? देशी राज्योंके लोगोंको वहीं रहकर अपने नाम दर्ज नहीं करवाने चाहिए। लेकिन जिनका जेल जानेका विचार हो वे अपने नाम प्रान्तीय समितिमें दर्ज करवा सकते हैं और जो नाम दर्ज करवानेके लिए तैयार न हों वे लोग भी कमसे-कम स्वयंसेवकोंके जिन गुणोंका मैंने वर्णन किया है, उनका विकास तो कर ही सकते हैं।

जब हम इस तरह तैयारी करके हजारोंकी संख्यामें जेल जानेके लिए तैयार हो जायेंगे तभी हमारे धैर्य, शान्ति और मौन शोभान्वित होंगे और हमारी सच्ची बहादुरी-के अंग माने जायेंगे। यदि हम समय आनेपर इतने बलका परिचय न दे सकेंगे और इतना आत्मत्याग न कर सकेंगे तो हम कायर और निर्बल कहे जायेंगे। लेकिन मुझे अपने मनमें गुजरातके साहसके सम्बन्धमें कोई शंका नहीं है।

मैं सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि इस साहसके साथ लोगोंमें ज्ञान भी उत्पन्न हो। हमें जिस ज्ञानकी आवश्यकता है उसका सम्बन्ध स्वदेशीकी आवश्यकतासे और अस्पृश्यता-निवारणसे है। यह ज्ञान प्रत्येक पुरुषको अपने परिजनोंको तथा विवाहित होनेपर अपनी पत्नीको देनेका प्रयत्न करना चाहिए। अभी स्त्रियोंमें खादीके प्रति जितना चाहिए उतना प्रेम उत्पन्न नहीं हुआ है। उनका रंग-बिरंगे और आकर्षक नमूनोंके विदेशी कपड़ोंका मोह अभी नष्ट नहीं हुआ है। वे अभी अस्पृश्यताके पापसे मुक्त नहीं हुई हैं। उन्हें अभी धीरज और प्रेमसे समझाना बाकी है। यह कार्य सभी अपने-अपने परिवारोंमें आसानीसे कर सकते हैं। उन्हें उसमें सदा सफलता नहीं मिलेगी। यह बात समझमें आ सकती है, लेकिन हमें अपने प्रयासका आरम्भ अपने परिवारोंसे ही करना चाहिए। जिस तरह हम नवीन भोगोंमें अपने-अपने परिवारको सबसे पहले शामिल करते हैं इसी तरह नये त्याग अथवा सुधारोंमें भी हमें पहले उसीको भागीदार बनाना चाहिए।

इस मास गुजरात कांग्रेसके स्वागतमें जुटा रह सकता है; लेकिन जनवरीमें गुजरात को परीक्षाके लिए तैयार होना ही पड़ेगा। इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है। अतः मैं आजसे ही गुजरातियोंको सावधान करना चाहता हूँ। नये खृष्टीय वर्षमें प्रान्तीय समितिका सबसे पहला काम गुजरातियोंको आत्म-बलिदानके लिए तैयार करना होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१२-१९२१

२४. सभ्यता

सभ्यता, विनय और नम्रता — इन गुणोंपर आजकल इतना कम जोर दिया जाता है कि उससे ऐसा लगता है मानो हमारे चरित्रगठनमें उनका कोई स्थान ही न हो। यदि कोई मनुष्य स्थूल ब्रह्मचर्यका पालन करता है तो वह बाजीराव[1] बनकर सब लोगोंकी भर्त्सना करता और उन्हें धमकाता है। और हम उसकी इस असभ्यता-को दुधारू गायकी लातके समान सह लेते हैं। इसी तरह यदि कोई मनुष्य सत्य बोलता है तो उसे हम कड़वे वचन कहनेकी छूट दे देते हैं और जो खादी पहनता है वह खादी न पहननेवाले लोगोंपर धावा बोल सकता है। उसी तरह जो सविनय अवज्ञा करता है वह ऐसा व्यवहार कर बैठता है मानो उसे अविनय करनेकी छूट मिली हुई हो। असभ्योंकी इस सेनाके नायक ब्रह्मचारी, सत्यवादी, खादीवादी अथवा सविनय अवज्ञाकारी कदापि नहीं हैं। ये चारों अपनी-अपनी प्रतिज्ञासे उतने ही अधिक दूर हैं जितनी उत्तर दिशा दक्षिण दिशासे दूर होती है। और हम यह कह सकते हैं कि जहाँ विनय नहीं होती वहाँ विवेकका अभाव होता है और जहाँ विवेकका अभाव होता है वहाँ कुछ भी नहीं होता। विश्वामित्रकी तपस्या तबतक अधूरी ही रही जबतक उन्होंने विनय नहीं सीखी।

विनय और नम्रता शान्तिकी निशानी हैं। अविनय और उद्धतता अशान्तिकी सूचक हैं। इसलिए असहयोगी अविनयी तो हो ही नहीं सकता। तथापि असहयोगियोंपर सबसे बड़ा आरोप अविनयी और उद्धत होनेका ही लगाया जाता है और इस आरोपमें बहुत-कुछ सचाई है। असहयोगी होकर हम ऐसा समझने लगते हैं मानो हमने कोई बहुत बड़ा काम कर लिया है, ऐसे ही जैसे कोई मनुष्य अपने कर्त्तव्यका पालन करके यह मान बैठे कि उसे अब मानपत्र लेनेका अधिकार प्राप्त हो गया है।

ऐसी अविनयसे हमें अपनी लड़ाईमें विजय मिलनेमें देर होती है क्योंकि जिस तरह विनय रोष और द्वेषको रोकती है उसी तरह अविनय शत्रुताको बढ़ाती है। यदि असहयोगी सहयोगियोंके प्रति विनम्रताका व्यवहार करते, उन्हें गालियाँ न देते और उनके प्रति आदर-भाव दिखाते तो इस समय दोनों पक्षोंके बीच जो कटुता उत्पन्न हो गई है वह कभी उत्पन्न न होती और बम्बईमें इसका जो दुष्परिणाम निकला[2] वह कभी न निकलता। जिन विद्यार्थियोंने सरकारी स्कूलोंको छोड़ दिया है उन्हें स्कूल न छोड़नेवाले विद्यार्थियोंको सताना नहीं चाहिए और न गालियाँ देनी चाहिए, बल्कि उन्हें उनको अपने प्रेमसे जीतना चाहिए। उन्हें उनकी पूर्ववत् सेवा करनी चाहिए। जिस वकीलने वकालत छोड़ दी है उसे वकालत न छोड़नेवाले को चिढ़ाना नहीं चाहिए, अपितु उससे पहले जैसा ही मधुर सम्बन्ध रखना चाहिए। जिसने

१. मराठा साम्राज्यके एक पेशवा अथवा प्रधान मन्त्री।

२. वहाँ १७ नवम्बर, १९२१ को युवराजके आनेपर दंगा हो गया था; देखिए खण्ड २१।

सरकारी नौकरी छोड़ दी है उसे सरकारी नौकरी न छोड़नेवाले मनुष्यको गालियाँ नहीं देनी चाहिए।

यदि हम आरम्भसे ही अपना कार्य इस तरह करते तो आज हम उसे पूरा करके बैठ गये होते और देशने आज जितनी प्रगति की है उससे कहीं अधिक प्रगति कर ली होती। तब नरम दलके लोग हमसे अलग रह ही नहीं सकते थे।

मुझे उम्मीद है कि कोई भी मनुष्य विनम्र व्यवहार करनेका मतलब झूठी खुशामद करना नहीं समझेगा। विनम्र व्यवहार करनेका अभिप्राय यह भी नहीं है कि हम अपने धर्मके प्रति अपने भावको छिपायें। विनम्र व्यवहारका अभिप्राय तो यह है कि हम अपने धर्मपर आरूढ़ रहते हुए भी दूसरोंके प्रति आदर-भाव रखें। मैं तिलक तो लगाऊँ, लेकिन तिलक न लगानेवालेका उपहास न करूँ। मैं पूर्वकी ओर मुख करके प्रार्थना करूँ तो इसका अर्थ यह नहीं कि मैं पश्चिमकी ओर मुख करके नमाज पढ़नेवाले अपने मुसलमान भाईका तिरस्कार करूँ। मुझे संस्कृतका उच्चारण करना आता है इससे मुझे अरबीका उच्चारण करनेवाले की निन्दा नहीं करनी चाहिए। खादीवादी अपनी खादीकी टोपी पहननेके बावजूद सोला हैट पहननेवाले के प्रति सहनशीलता और प्रेमभाव रख सकता है। यदि खादीसे लदा हुआ मनुष्य विदेशी कपड़े पहननेवाले को गालियाँ देने लगे तो वह विदेशी कपड़ोंका सबसे बड़ा प्रचारक सिद्ध होगा। बम्बईके उपद्रवोंसे खादीके प्रचारमें वृद्धि नहीं हुई है। कुछ को तो इस समय खादीमें से दुर्गन्ध आने लगी है।

यदि हम खादीवादी यह चाहते हों कि समस्त हिन्दुस्तानके लोग खादी पहनने लगें तो हमें विदेशी कपड़े पहननेवाले लोगोंको धैर्यपूर्वक समझाना होगा। हम विदेशी कपड़ेकी चाहे कितनी ही निन्दा क्यों न करें; लेकिन हम उसे पहननेवाले लोगोंके प्रति तो प्रेमपूर्वक व्यवहार ही करें। प्लेग बुरी है लेकिन यदि हम रोगके पीड़ितोंका त्याग करेंगे तो हमें भी प्लेगकी छूत लगनेकी सम्भावना है। हम रोगके नाशकी इच्छा करें, रोगीके नाशकी कदापि नहीं। विदेशी कपड़े पहननेको यदि हम रोग मानते हैं तो हमें इस रोगसे पीड़ितोंकी सेवा करनी चाहिए। क्या विदेशी कपड़े पहननेवाले हमें रोगी नहीं मान सकते? भले ही मानें। वैसा होनेपर भी यदि हम एक दूसरेकी सेवा करते रहेंगे तो हम किसी-न-किसी दिन यह जान जायेंगे कि हममें से कौन अज्ञानमें है। किन्तु यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो हमें धर्म और अधर्मका भेद कभी मालूम ही न होगा।

जिस तरह सहयोगियोंके प्रति विनयका व्यवहार करनेकी आवश्यकता है उसी तरह हमें जेल जानेपर भी विनययुक्त व्यवहार करना होगा। एक ओर जेलके नियमोंका पालन करना तथा दूसरी ओर स्वाभिमानकी रक्षा करना दोनों कामोंको एक साथ निभाना कठिन है। जेलके कुछ नियम स्वभावतः हीनताकी भावना पैदा करनेवाले होते हैं। उदाहरणार्थ जेलकी कोठरीमें रहनेके अलावा हमारे लिए और कोई चारा नहीं है। इस तरह जो नियम जेलके अन्य सब कैदियोंपर लागू होता है उसे हमें अवश्य मानना चाहिए। लेकिन इसके साथ-साथ जहाँ हमें नीचा दिखानेकी खातिर ही कुछ किया जाता हो वहाँ हमें दृढ़तापूर्वक उसका विरोध भी करना चाहिए। यदि हम

एक बार विनयकी शिक्षा प्राप्त कर लें तो किस अवसरपर हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए, यह बात स्वतः मालूम हो जायेगी।

जहाँ आग्रह है वहाँ अविनय और उद्धतता है। जहाँ आग्रह नहीं है वहाँ सभ्यताके साथ-साथ स्वाभिमान है। अहंभाव रखनेवाले मनुष्यको शरीरका अभिमान होता है। स्वाभिमानकी रक्षा करनेवाला मनुष्य आत्माको पहचानकर केवल उसीकी चिन्ता करता है और उसके बाद शरीरको गला देनेके लिए तैयार रहता है। स्वाभिमानका पुजारी इस संसारमें सबके साथ विनयपूर्ण व्यवहार करता है, क्योंकि उसे अपने सम्मानके समान ही अन्य लोगोंका सम्मान भी प्रिय होता है। वह सबमें अपनेको तथा अपनेमें सबको देखता है और अपनेको दूसरेके स्थानपर रखता है। अहंकारी सबसे अलग रहता है। वह अपनेको सबसे ऊपर मानकर जगत्‌का काजी बननेकी कोशिशमें स्वयं ही अपना ओछापन सिद्ध करता है।

इससे सारे असहयोगियोंको विनयको एक अलग गुण मानकर उसका विकास करना होगा। और यही राष्ट्रकी अथवा व्यक्तिकी सभ्यताका मापदण्ड है। असभ्यता उद्धतता है, निश्चयपूर्वक ऐसा समझकर असहयोगियोंको उसका समूल त्याग करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१२-१९२१

२५. टिप्पणियाँ

धन्य है यह नारी!

ख्वाजा साहब राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालयके मुख्य व्यवस्थापक थे। मैं उनकी गिनती अत्यन्त शुद्ध-हृदय मुसलमानोंमें करता हूँ। वे जितने धर्माभिमानी हैं उतने ही देशाभिमानी भी हैं। वे स्वयं एक कुलीन खानदानके हैं। बैरिस्टरके रूपमें उनका वैभव विपुल था। आज वे धर्म और देशकी खातिर फकीर बन गये हैं। उनको भी सरकारने जेल भेज दिया है। इनका तार मुझे अभी-अभी उनकी बेगमकी ओरसे मिला है। उनका नाम खुर्शीद बेगम है। वे लिखती हैं: "आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मेरे पतिको सरकारने गिरफ्तार कर लिया है। अब विश्वविद्यालयको मैं चलाऊँगी।" मुझे जब यह तार मिला तब मेरा खून सवा सेर बढ़ गया; क्योंकि जहाँ एक ओर ख्वाजा साहबकी पाक कुर्बानी है वहाँ दूसरी ओर उनकी बेगमकी बहादुरी और धीरज है। जहाँ ऐसी बात हो वहाँ स्वराज्यको कौन रोक सकता है? खुर्शीद बेगमको अपना काम चलानेमें तनिक भी अड़चन नहीं होगी। विश्वविद्यालयके वीर और शुद्ध-हृदय विद्यार्थी खुर्शीद बेगमके आसपास इकट्ठे हो जायेंगे और सम्भव है कि जो काम वे ख्वाजा साहबकी खातिर न करते, उसे अब उनकी बेगमकी खातिर करेंगे। इसके अतिरिक्त खुर्शीद बेगम ख्वाजा साहबकी अपेक्षा इन विद्यार्थियोंको चरखेकी अधिक अच्छी तालीम देंगी।

जब हिन्दुस्तानकी बहुत-सी स्त्रियोंमें ऐसी ही हिम्मत आ जायेगी तब हमारी विजय अवश्य होगी। इस महान् जागृतिके समय बहनोंसे मेरी इतनी प्रार्थना है कि वे अपने भीतर संगठन-शक्ति भली-भाँति विकसित करें। उन्हें भी एक साथ मिलकर काम करना चाहिए। और ऐसा करनेका सरल मार्ग यह है कि वे परस्पर एक दूसरेकी टीका करनेकी बजाय अपने-अपने कार्योंमें जुट जायें। जो सेवाको ही सर्वस्व समझता है उसे टीका करनेका अवकाश ही नहीं मिलता।

पारसी बहनें

मुझे बम्बईसे एक पारसी बहनका एक पत्र प्राप्त हुआ है जो अत्यन्त दुःखजनक है। इस बहनकी शिकायत कुछ ऐसी है कि उसके मूलकी जाँच करनेमें मुझे समस्त जीवन व्यतीत करनेकी इच्छा होती है। लेकिन सिर्फ इस बहनके पत्रसे ही यह जाँच पूरी नहीं हो सकती। यदि मेरा यह लेख इस बहनके हाथमें पहुँचे तो मेरी उससे यह विनती है कि यह बहन मुझे अपना नाम-धाम लिख भेजे अथवा मुझसे आकर मिले। मैं इस बहनका नाम कदापि प्रकाशित नहीं करूँगा; लेकिन यदि यह बहन मुझे सारे तथ्य बतायेगी तो मैं उनकी अवश्य जाँच करूँगा और मुझसे जो मदद हो सकेगी सो करूँगा। यदि कोई स्त्री या पुरुष गुमनाम पत्र लिखे अथवा ऐसी कोई बात न लिखे जिससे मामलेकी पूरी जाँच की जा सके तो यह आसानीसे समझा जा सकता है कि उसका कोई उपचार नहीं किया जा सकता।

जो पारसी बहनें मुझे जानती हैं उनसे भी मैं विनती करना चाहता हूँ कि वे भी खूब जाँच करें और यदि उन्हें कोई संकटका समाचार मालूम हो तो वे मुझे सूचित करें।

चाहे कितनी भी सुरक्षित संस्था क्यों न हो फिर भी उसका कोई-न-कोई भाग ऐसा अवश्य रह जायेगा जिसमें अनेक उपाय करनेपर भी अत्याचारको नहीं रोका जा सकता। लंदन, न्यूयार्क, शिकागो और पेरिसमें आज जो अपराध होते हैं और जो अत्याचार गुप्त रूपसे किये जाते हैं हमें उनकी खबर तक नहीं होती, कोई उनकी जाँच तक नहीं कर सकता तथा उन स्थानोंकी सतर्क पुलिस भी उनका पता नहीं लगा सकती। मेरी ऐसी मान्यता है कि उपर्युक्त शहरोंमें कितने ही ऐसे अपराध होते हैं जिनकी हम कल्पना तक नहीं कर सकते। हममें से प्रत्येक भाई-बहनका यह धर्म है कि हम अपनी सेवासे जितने लोगोंके दुःख-निवारणमें हाथ बँटा सकें, बँटायें और उन्हें सहायता देकर अपने कर्त्तव्यका पालन करें। और जिस देशके अधिकांश लोग पराये दुःखोंको अपना दुःख समझकर उनके निवारणका प्रयत्न करें उस देशमें स्वराज्य है।

पुलिसपर दोष मढ़नेकी आदत

गुलामीमें रहनेवाले कायर मनुष्यकी ऐसी आदत होती है कि वह चूँकि अपनी भूल स्वीकार करनेमें डरता है इसलिए हमेशा दूसरोंके दोष ही ढूँढ़ा करता है। बम्बईकी दुःखजनक घटनाके सम्बन्धमें मुझे जितने पत्र प्राप्त हुए हैं उनमें से कुछ पत्र ऐसे हैं जिनमें सब दोष पुलिसके मत्थे मढ़ा गया है।

अगर पुलिस, जैसी इन पत्रोंमें बताई गई है, सचमुच वैसी ही भ्रष्ट है तो इसमें भी दोष हमारा ही कहा जायेगा। इन अत्याचारोंको बरदाश्त करनेवाले हम हैं अथवा अन्य कोई? पुलिसमें भी हमारे अपने ही भाई हैं और यदि हम पुलिस-मात्रको ही अपना शत्रु मानें और बदमाशोंके लिए उत्तरदायी न हों तो हम राज्य किस तरह चलायेंगे? स्वराज्यमें ऐसी भ्रष्ट पुलिस तथा बदमाशोंपर कौन नियन्त्रण रख सकेगा? यदि हमारी कल्पनाके स्वराज्यमें अंग्रेज होंगे तो वे जनताके सेवक होंगे और हमारे भाइयोंके समान रहेंगे। उस समय उनपर निर्दोष लोगोंकी रक्षा करनेकी जिम्मेदारी नहीं डाली जा सकेगी। फिर ऐसे लोगोंपर अंकुश कौन रखेगा?

क्षणभर विचार करनेसे ही हमें मालूम हो जायेगा कि हम जबतक पुलिसपर और जिन्हें हम मवाली तथा बदमाश समझते हैं उन लोगोंपर अपना प्रभाव नहीं डाल सकते तबतक हम स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। उन्हें दबाकर सरकार राज्य चला सकती है। हम तो उन लोगोंको प्रेमसे वशमें करके अथवा हम उनसे भी अधिक बदमाश और अत्याचारी बनकर ही राज्य चला सकेंगे। तीसरा रास्ता यह है कि हम उन्हें दण्ड देकर राज्य चलायें। अगर हमारी ऐसी इच्छा हो तो भी हममें वैसी शक्ति नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि हम या तो वैसी शक्ति प्राप्त करनेके लिए दो-चार सौ वर्ष रुकें और बादमें स्वराज्यका विचार करें अथवा उन्हें आजसे ही प्रेमसे वशमें करें।

मवाली-वर्गके अस्तित्व-मात्रसे ही यह मालूम होता है कि इस समय अधर्म और पाखण्डका प्राधान्य है। इस पाखण्डको बढ़ाकर तो हम कदापि स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। इस अधर्मको धर्म द्वारा दूर करके ही हम भारतमें शान्तिका उपभोग कर सकते हैं। ब्रिटिश साम्राज्यको हम जो बरदाश्त करते हैं उसका कारण ही यह है कि ब्रिटिश साम्राज्य अधिकांशतः मवाली-वर्गको दबाकर दुर्बल प्रजाकी रक्षा करता है। लेकिन मैं उसका विरोध करता हूँ; उसका कारण यह है कि वह प्रजासे इस रक्षाकी कीमत इतनी अधिक लेता है कि वह स्वयं अब मवाली राज्य-जैसा हो गया है। दूसरे शब्दोंमें कहें तो हमें इस रक्षाकी कीमतके रूपमें अपनी प्रतिष्ठाका त्याग करना पड़ता है। हम इस अत्याचारसे मुक्त होनेके लिए यदि मवालियोंकी सहायता प्राप्त करनेकी कोशिश करें तो भी मरते हैं, और यदि उन्हें छोड़ देते हैं तो भी मरते हैं। हमें उन्हें उनकी खुशामद किये बिना प्रेमसे जीतना चाहिए और उनसे डरना छोड़ देना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें हमें उन्हें धार्मिक बनाना चाहिए। यदि उनमें से थोड़ेसे लोग धार्मिक बन जायें तो दूसरोंको उनका अनुकरण करनेमें कोई देर न लगेगी। जो सिद्धान्त उनपर लागू होता है वही पुलिसपर भी लागू होता है। हम पुलिससे किसलिए डरें? वह अगर श्वेत टोपी पहनकर भी आये तो किसे छल सकती है? आप भला तो जग भला। हम इतने कायर क्यों बनते हैं कि कोई भी हमें छल सके। मान लीजिये कि पुलिसने खादीका वेश धारण करके किसीपर अत्याचार किया। इससे हम उत्तेजित क्यों हों? हम उससे विनती करें। अगर वह न माने तो हम प्रयत्न करना छोड़ दें। हममें अगर उतना बल हो तो उसे अत्याचार करनेसे रोकनेमें अपने प्राणोंको उत्सर्ग कर दें। यदि हम ऐसा करते हैं तो हम बहादुर सिद्ध होते हैं। पुलिस हमारी

इस बहादुरीको अवश्य देखेगी और अपना सुधार करेगी। पुलिस कायरको मारकर अत्याचारी बनती है। वह वीर पुरुषको मारकर अवश्य भयभीत होती है। मुझे लाहौरसे एक पत्र प्राप्त हुआ है। उसमें एक मित्र लिखते हैं कि युवक तथा शक्तिशाली मनुष्य भी जब उसका प्रतिरोध नहीं करते तो इससे वह डर जाती है। उनको मारनेकी उसकी हिम्मत नहीं होती, हो ही नहीं सकती। मुझे तो ऐसे बहुतसे व्यक्तिगत अनुभव हुए हैं। यह निर्भीकता किसीके सिखानेसे नहीं आती। यह तो स्वयं अभ्याससे ही प्राप्त की जा सकती है। इसलिए मुझे पत्र लिखनेवालों को समझ लेना चाहिए कि हमारा कार्य बदमाशोंपर नियन्त्रण प्राप्त करना तो है, लेकिन अगर हम खुशामद करके उनपर नियन्त्रण प्राप्त करना चाहते हैं तो इससे "चूल्हेमें से निकला, भाड़में गिरा" वाली कहावत चरितार्थ होगी। वे हमारे भाई जरूर हैं लेकिन वे रोगी हैं, उनकी हम सार-सँभाल तो करें परन्तु अपने-आपको उनके सुपुर्द न करें। हम जिस दिन पुलिसका भय छोड़ देंगे उसी दिन पुलिस हमारी मित्र बन जायेगी। पुलिसका भय छोड़ देनेका अर्थ यह नहीं कि हम पुलिसको मारें अथवा गालियाँ दें; अपितु उसका अर्थ यह है कि हम पुलिसकी मार खा लें और उसकी गालियाँ खा लें — ठीक उसी तरह जिस तरह चित्तरंजन दासके बहादुर लड़केने मार खाई। वह पुलिसको मार सकता था। उसके सब साथी हट्टे-कट्टे और नौजवान थे। लेकिन उन्होंने सब-कुछ सहन किया। गालियाँ खा लेना एक बात है। यह असहयोग है। लेकिन गालीके उत्तरमें दो गालियाँ देना सहयोग है, क्योंकि तब हम गालियाँ देनेके दोषी ठहरते हैं। गालियोंके वश होना उनकी गुलामी करना है। गालियाँ खा लेनेका अर्थ यह नहीं कि गालियाँ देनेवाला जो-कुछ कहता है हम वही करें। गालियाँ खा लेनेका अर्थ है गालियाँ देनेवाले की इच्छाके वशमें न होना। यदि कोई हमसे गालियाँ देकर विष्णुका नाम भी जपवाये तो भी हम न जपें। गालियाँ देनेवाला यदि हमें पेटके बल रेंगनेके लिए कहे तो हम सीधे तनकर चलें। वह अगर बैठनेका आदेश दे तो खड़े रहकर उसकी पिस्तौलकी गोलियाँ खायें। इस तरह वह पूर्ण पराजित ही है, क्योंकि उसका हमें झुकानेका मनोरथ पूरा नहीं हुआ। रावण सीताको अपने कन्धेपर बिठाकर तो ले गया; लेकिन सीताने उसका कहना नहीं माना। वह यद्यपि सीताका वाहन बना, तथापि उनके स्पर्शसे पवित्र न हो सका तथा अपयशका भागी हुआ। और सीता एक दुर्बल नारीसे जगदम्बा बन गईं। तात्पर्य यह है कि निर्भय होकर गालियाँ खा लेना, और मार सहन कर लेना ही सच्ची बहादुरी है। जो मारके भयसे चुपचाप गालियाँ सुनता रहता है वह न तो मनुष्य होता है और न पशु। हिन्दुस्तान इस समय मर्दानगीका पदार्थ-पाठ सीख रहा है। यदि वह इसे पूरा सीख लेगा तो स्वराज्य प्राप्त कर सकेगा।

तीन भय

श्री देशबन्धु दासके जेल जानेसे पहले उनके जो लेख प्रकाशित हुए हैं वे उनकी उन्मत्त दशाके परिचायक हैं और मननीय हैं। "मन, वचन और कर्मसे शान्ति बनाये रखें।" "नरम दलको भी विनयसे अपनी ओर करें।" उनके ये सब वचन अमर वचन हैं और ये वचन ऐसे समय उनके मुखसे निकले, इससे इनकी सुन्दरता और भी बढ़

गई है। उन्होंने तीन भयोंका वर्णन भी इसी प्रकार किया है। वे कहते हैं, "हमने जेलके भयको जीत लिया है।" कौन जानता है कि उन्होंने ये शब्द अपने लड़केको ही ध्यानमें रखकर कहे हों। "दूसरे प्रकारका भय मारका भय है। हम इसे जल्दी ही जीतनेकी स्थितिमें है।" तीसरा भय गोलीका है जब हम इसे जीत लेंगे हमें तभी स्वराज्य मिल जायेगा। स्वराज्यकी कुंजी ही इसमें निहित है। यदि हम मारने और मरनेके भयको त्याग दें तो हमें न तो सरकार दबा सकती है और न मवाली दबा सकते हैं। और हम तभी स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं जब हमें इस त्रिविध भयको जीतनेवाले लोग मिल जायें; अन्यथा हमें स्वराज्य कदापि नहीं मिलनेवाला है।

वचन-भंग

एक सज्जन लिखते हैं:[1]

यह तो सीधा न्याय कहा जायेगा। अन्तर सिर्फ इतना ही है कि मैंने यह वचन कोई अपनी सत्ताके बलपर नहीं दिया था। मैं तो जनताका दास हूँ, उसका एलची, गुमाश्ता हूँ। गुमाश्ता अपनी ओरसे कोई वचन दे ही नहीं सकता। इसलिए यदि अली बन्धु और उनके साथी ३१ दिसम्बरतक नहीं छूटेंगे तो मैं उपर्युक्त सज्जनको तथा जनताको दोषी ठहराऊँगा। मैं बम्बईकी जनतापर आरोप लगाऊँगा कि जिस प्रजा-ने मेरे सैकड़ों भाषणोंको सुना उसीने मुझे धोखा दिया है। मैंने तो १७ तारीखको जो जन-समूह देखा, जो आग देखी उसे सत्य मानकर ही यह कहा था कि "आज संध्याको मैं बारडोली और आनन्दकी परीक्षा लेने जाऊँगा और मुझे उम्मीद है कि हम वहाँ सविनय अवज्ञा होते तथा आपके द्वारा शान्ति रखे जानेके फलस्वरूप दिसम्बरके मध्यमें स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे और जेलके दरवाजोंको खोलकर अली बन्धुओं, गंगाधर-राव देशपाण्डे और अन्य सज्जनोंका स्वागत करेंगे।" मैंने तो यह बात बम्बई तथा हिन्दुस्तानपर विश्वास रखकर कही थी। यदि अली बन्धु इसी महीने नहीं छूटेंगे तो समस्त हिन्दुस्तान विश्वासघाती ठहरेगा। उसमें आप भले ही मेरी भी गिनती करें। भले ही आप ऐसा विश्वास रखनेपर मुझे भोला मानें। लेकिन मैं ऐसा विश्वास तो हमेशा ही रखूँगा।

लेकिन मेरी मान्यता तो ऐसी है कि जो-कुछ हुआ है उससे वचनकी पूर्ति हुई मानी जायेगी। लालाजी, दास, मोतीलालजी, अबुल कलाम आजाद, मुहीउद्दीन, आगा सफदर, जवाहरलाल आदि जो जेलमें गये हैं, क्या यह बात अली भाई और उनके साथियोंको मुक्त करानेके बराबर नहीं है? उनके साथ अन्य जो सैकड़ों लोग गये हैं वे उन्हें लेने गये हैं। उनके प्रयत्नोंको बल प्रदान करना तो हमारा काम है। यदि हिन्दुस्तान पूर्ण शान्ति रखेगा, लोग स्वेच्छासे गिरफ्तार भी होते रहेंगे एवं ऐसा करते हुए अपने सिर तुड़वायेंगे और मरेंगे तो वे अली भाइयों आदिको अवश्यमेव जेलसे बाहर ला सकेंगे। मैं लेखकको विश्वास दिलाता हूँ कि इन नेताओंके जेलमें पहुँच

१. यह पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। इसमें लेखकने कहा था, आपने वचन दिया था कि आप ३१ दिसम्बरसे पहले-पहले अली बन्धुओंको रिहा करवा लेंगे। यदि आप इसमें सफल नहीं होते तो आपपर भी वचन-भंग करनेका वही आरोप लगेगा जो आपने लॉयड जॉर्जपर लगाया है।

जानेसे अली भाइयोंको इतना बल मिला है कि उससे उनकी बेड़ियाँ ही मानो कट गई हों। बीच-बीचमें सियालकोटके लोगोंका अविचारपूर्ण व्यवहार-जैसे विघ्न रुकावट पैदा करते हैं। हमारी गिरावटकी वजह यही है। आगा सफदर पकड़े गये इसलिए लोग पागल हो गये। कुछ जेलमें घुस गये। किसीने मजिस्ट्रेटका अपमान किया। जोर-जबरदस्ती करना, अपमान करना और गालियाँ देना हमारे लिए हराम है। अगर ऐसा होनेपर भी लोग भूलें करते रहें तो बेचारा एलची क्या कर सकता है? लोग उसे बहुत कोंचेंगे तो वह अधिकसे-अधिक त्यागपत्र देकर हिमालयमें भाग जा सकता है।

'नवजीवन'में भूलें

एक दूसरे सज्जन 'नवजीवन' की कई भूलोंकी ओर संकेत करते हैं। मैंने जो जाँच की है उससे पता चलता है कि उन्होंने जो भूलें बताई हैं वे नहीं हुई हैं। तथापि अगर अन्य पाठकोंको भी ऐसी गलतफहमी हो तो वह दूर हो जाये इसको ध्यानमें रखकर मुझे इतना बता देना चाहिए कि 'नवजीवन' में जितने लेख प्रकाशित होते हैं वे सबके-सब मेरे लिखे नहीं होते। मैं सबकी छानबीन नहीं कर सकता और मैं अपने 'यंग इंडिया' में प्रकाशित लेखोंका अनुवाद भी नहीं करता। भूलें न हों इसके लिए बहुत सावधानी बरती जाती है। मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार अच्छेसे-अच्छे अनुवादक ढूँढ़कर रखे हैं। वे मेरे एक साथी कार्यकर्त्ता हैं।[1] ईमानदारीसे सबके प्रयत्न करनेपर भी कई बार भूलें तो रह ही जाती हैं। एक भाषासे दूसरी भाषामें अनुवाद करना जितना सुगम जान पड़ता है, उतना सुगम नहीं होता। इसके लिए दोनों भाषाओंपर समान अधिकार तथा विषयका ज्ञान होना चाहिए। तभी कुछ हदतक मूलके सही अर्थकी रक्षा हो सकती है। इसी कारण अनुवादकी कीमत मूलकी अपेक्षा बहुत कम होती है। इसलिए पाठकोंको यह जान लेना चाहिए कि 'नवजीवन' में भूल जान-बूझकर नहीं छोड़ी जायेगी और जब कोई पाठक सुधारने लायक कोई भूल बतायेगा तब वह तुरन्त सुधार दी जायेगी।

शंखध्वनिके साथ

जिस समय देशबन्धु पकड़े गये उस समयका वृत्तान्त जानने योग्य है। उन्हें उनके घरमें ही पकड़ा गया था। शामके चार-एक बजे पुलिस आई। उस समय सब लोग चाय पी रहे थे। उनके सचिव श्री ससमल पुलिससे मिलनेके लिए नीचे उतरे। उन्होंने ज्यों ही अपना नाम बताया, त्यों ही वे पकड़ लिये गये। इसी बीच देशबन्धु दास भी नीचे आ गये।

"आप मुझे गिरफ्तार करना चाहते हैं?"

"जी हाँ।"

१. सम्भवतः वालजी देसाई; किसी समय अहमदाबादके गुजरात कालेजमें अंग्रेजीके प्राध्यापक; वे नौकरीसे त्यागपत्र देकर गांधीजीके पास आ गये थे; बादमें उन्होंने **सत्याग्रह इन साउथ आफ्रिका**का अनुवाद किया था।

"तब मैं तैयार ही हूँ।"

ऐसा कहनेके बाद देशबन्धु अपनी पत्नीसे मिलनेके लिए ऊपर भी नहीं गये और पुलिसके साथ हो लिये। जब उनकी गाड़ी बाहर निकली तब बाहर खड़े लोगोंने हर्षनाद किया और ऊपर खड़ी स्त्रियोंने शंखध्वनि की। बंगालमें जब किसीका स्वागत करना हो अथवा किसीको शुभ कार्यके निमित्त विदाई देनी हो तब शंख बजाया जाता है। यह शुभ शकुन माना जाता है। जब स्त्रियाँ अपने पति अथवा पुत्र अथवा पिताके जेल जानेपर नहीं रोयेंगी तथा उनके जेल जानेमें देश और धर्मकी भलाई है ऐसा जानकर हर्ष मनायेंगी तब धर्मका प्रसार होगा और अधर्मका अवश्य ही नाश होगा। इसीसे इस शंखध्वनिमें मैं हिन्दुस्तानकी विजयके चिह्न देखता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१२-१९२१

२६. पत्र : महादेव देसाईको

रविवार [१८ दिसम्बर, १९२१][1]

चि० महादेव,

'इंडिपेन्डेन्ट' की छपाई सुन्दर नहीं है; उसका कारण मशीनकी खराबी ही होगी।

स्वयंसेवक दलके सम्बन्धमें कांग्रेसमें प्रस्ताव अवश्य पास किया जायेगा। अच्छे लोग ही उसमें भरती किये जायेंगे। तुमने प्रस्ताव तो देखा ही होगा।

स्वरूपरानी और अन्य महिलाएँ आयेंगी अथवा नहीं और अगर आयेंगी तो कब आयेंगी?[2]

इसके साथका पत्र श्रीमती जोजेफको[3] दे देना।

गोडबोले पहुँच गये हैं। मालवीयजी सम्मेलनकी व्यवस्था कर रहे हैं।

अपने और दुर्गाके स्वास्थ्यका समाचार देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

श्रीमती जोजेफ तो कलकत्ता गई हैं इसलिए मैं उनका पत्र उनके बताये हुए पतेपर भेज रहा हूँ।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२५) की फोटो-नकलसे।

१. महादेव देसाईको गांधीजीने १५ दिसम्बर, १९२१ को लिखे अपने पत्रमें इच्छा प्रकट की थी कि गोडबोलेको अहमदाबाद आ जाना चाहिए। इस पत्रमें गांधीजीने कहा है कि "वे यहाँ पहुँच गये हैं"। अतः यह पत्र स्पष्टतः १५ दिसम्बरके बाद आनेवाले रविवारको लिखा गया होगा।

२. अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें भाग लेनेके लिए।

३. जॉर्ज जोजेफकी पत्नी।

२७. तार : सी० विजयराघवाचार्यको[1]

[१८ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

साधारण
आचार्य
सेलम

श्राद्धमें कोई कठिनाई नहीं।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७४४) की फोटो-नकलसे।

२८. तार : मदनमोहन मालवीयको[2]

१९ दिसम्बर, १९२१

मालवीय

जमनादास [और] कुँजरूसे मिला। कृपया दमनकी चिन्ता न करें। सरकार जबतक सचमुच गलती नहीं मानती और तीनों मसलोंका निबटारा करनेकी कोशिश नहीं करती तबतक सम्मेलनका कोई परिणाम नहीं होगा।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७३०) की फोटो-नकलसे।

१. यह तार विजयराघवाचार्यके १७ दिसम्बर, १९२१ के तारके जवाबमें था। तार इस प्रकार था: "कांग्रेस [अधिवेशन] के बाद ही स्थानीय स्थितियोंसे निपटना ठीक होगा। क्या आप श्राद्ध करनेके लिए स्थानकी व्यवस्था कर सकते हैं? यह भी स्मरण रहे कि कानूनन हम श्रीयुत दासकी जगह कार्यवाहक अध्यक्ष ही चुन सकते हैं। साल-भरतक वही स्थायी अध्यक्ष रहेंगे।"

२. यह मालवीयजीके १६ दिसम्बर, १९२१ के तारके उत्तरमें भेजा गया था। देखिए "मदनमोहन मालवीयको भेजे जानेवाले तारका मसविदा", १६-१२-१९२१ की पादटिप्पणी।

२९. तार: चित्तरंजन दास और अबुल कलाम आजादको[1]

१९ दिसम्बर, १९२१

चित्तरंजन दास
अबुल कलाम आजाद

आपका तार मिला। सम्मेलनके गठन और उसकी तिथि पहलेसे निश्चित होनी चाहिए। रिहाईमें कराचीके बन्दियों सहित फतवेके[2] लिए सजा पाये सभी बन्दियोंकी रिहाई भी शामिल होनी चाहिए। यदि आपकी लगाई शर्तोंके साथ इन शर्तोंको मान लिया जाये तो मेरी रायमें हम हड़तालका निर्णय छोड़ सकते हैं।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७३०) की फोटो-नकलसे।

३०. मथुरादास त्रिकमजीको[3] लिखे एक पत्रका अंश

मंगलवार, २० दिसम्बर, १९२१

. . . मैं २२ तारीखको खादीनगरमें[4] ही रहूँगा। आप भी वहीं रहें। मैं आपको अपने साथ अथवा अपने पास ही रखूंगा। आपका पाँव यहीं जल्दी ठीक होगा। ऐसे जख्मको भरनेके लिए यहाँकी आबहवा बहुत अनुकूल है।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. यह तार सर्वश्री दास और मौलाना आजादके १९ दिसम्बर, १९२१ के इस तारके उत्तरमें भेजा गया था: "हम इन शर्तोंपर हड़ताल वापस लेना ठीक समझते हैं; १. सरकार कांग्रेस द्वारा उठाये सभी प्रश्नोंपर शीघ्र विचार करनेके लिए एक सम्मेलन बुलाये। २. हालकी सरकारी विज्ञप्ति और पुलिस तथा मजिस्ट्रेट द्वारा निकाले हुए आदेश वापस लिये जाय। ३. इस नये कानूनके तहत सभी बन्दियोंकी बिना शर्त रिहाई हो। कलकत्ता प्रेसीडेंसी जेलके सुपरिंटेंडेंटकी मार्फत शीघ्र उत्तर दीजिए।"

२. मुसलमान धार्मिक नेताओं द्वारा जारी किये गये फतवे

३. १८९४-१९५१; गांधीजीकी सौतेली बहनके पौत्र; समाजसेवी, लेखक और गांधीजीके अनुयायी; बम्बई कांग्रेस कमेटीके मंत्री, १९२२-२३; बम्बई नगरनिगमके सदस्य, १९२३-२५।

४. अखिल भारतीय कांग्रेसके ३६वें अधिवेशनके लिए अहमदाबादके समीप बनाये गये नगरका नाम।

३१. वक्तव्य : गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें

[२० दिसम्बर, १९२१][1]

लॉर्ड रोनाल्डशे द्वारा पिछले सोमवारको बंगाल विधान परिषद्में दिये गये भाषणके सम्बन्धमें श्री गांधीने कल रातको अपने आश्रममें एसोसिएटेड प्रेसके संवाददाताको निम्नलिखित वक्तव्य दिया :

लॉर्ड रोनाल्डशेने बंगाल विधान परिषद्में जो भाषण दिया है उसे मैंने पढ़ा। उसमें मेल-मिलापकी जो ध्वनि है उसकी मैं कद्र करता हूँ। परन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि भाषण नितान्त भ्रामक है। उनके भाषणके जो अंश आलोचनाके योग्य हैं उनपर मैं यहाँ टीका-टिप्पणी नहीं करूँगा। मैं तो सिर्फ यह कह देना चाहता हूँ कि वर्तमान स्थिति खुद लॉर्ड रोनाल्डशे तथा वाइसरायकी पैदा की हुई है। यद्यपि मैं हृदयसे चाहता हूँ कि मैं भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारोंपर ऐसा सन्देह न करूँ कि वे जनताके साथ संघर्षको आमन्त्रण देना चाहते हैं, परन्तु अबतक मैंने जो-कुछ पढ़ा और सुना है उससे मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि मेरा सन्देह उचित है। यद्यपि मैं इस बातसे इनकार नहीं करना चाहता कि व्यक्तिगत तौरपर कुछ लोग थोड़ा-बहुत दबाव डालते होंगे बल्कि डराते-धमकाते भी होंगे; परन्तु मैं ऐसा माननेसे साफ इनकार करता हूँ कि १७ नवम्बरको उस जबरदस्त हड़तालके दिन कलकत्तेमें वहाँकी स्थानीय कांग्रेस या खिलाफत समितियों द्वारा अथवा उनकी तरफसे किसी भी प्रकारसे डराने-धमकानेकी तैयारी की गई और लोगोंको डराया-धमकाया गया। इसके विपरीत, मेरा निश्चित मत है कि इन दोनों संस्थाओंने अपने प्रभावका उपयोग इस ढंगसे किया जिससे लोग डराने-धमकानेका तरीका काममें न ला सकें। नैतिक दबाव अवश्य डाला गया था। और सभी महान् आन्दोलनोंमें ऐसा दबाव डाला ही जायेगा। लेकिन यह बात तो साधारण बुद्धि रखनेवालेकी भी समझमें आ जानी चाहिए कि ऐसी सोलहों आने हड़ताल — जैसी कि १७ नवम्बरको कलकत्तेमें हुई थी — महज डराने-धमकानेसे होनी असम्भव है। पर मान लीजिए कि डराने-धमकानेके तरीकेसे काम लिया गया था। लेकिन तब भी क्या स्वयंसेवक-दलोंको भंग कर देने, सार्वजनिक सभाओंपर रोक लगा देनेका और जिन कानूनोंको रद करनेका वादा किया जा चुका है, उन्हें लागू करनेका कोई औचित्य था? डराने-धमकानेका कोई भी सबूत देनेकी कोशिश क्यों नहीं की गई? मुझे बड़े दुःखके साथ कहना पड़ता है कि बंगालके गवर्नर महोदयने कलकत्तेमें एक स्थानपर कुछ गुप्तियाँ मिलनेकी छोटी-सी बातको लेकर बड़ी-बड़ी सार्वजनिक संस्थाओंपर कीचड़ उछाला है। सभी नेताओंकी गिरफ्तारीके

१. यह वक्तव्य एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें हुई भेंटके दौरान दिया गया था। भेंटका एक संक्षिप्त विवरण २१-१२-१९२१ के बॉम्बे क्रॉनिकलमें प्रकाशित हुआ था जिसके अनुसार यह भेंट तारीख २० दिसम्बरको अहमदाबादमें हुई थी।

बाद प्रयागमें जो पूर्ण हड़ताल हुई थी, उसके लिए वहाँ लोगोंको किसने डराया-धमकाया था? बल्कि कहा जाता है कि उलटे सरकारी नौकरोंने ही दुकानदारों और गाड़ीवालोंपर हड़ताल न करनेके लिए बेजा दबाव डाला। फिर लॉर्ड महोदय फरमाते हैं :

> यदि हम यह मानें कि इन घटनाओंसे यही सूचित होता है कि लोग सचमुच परिस्थितियोंमें सुधार चाहते हैं तो उसके लिए अनुकूल वातावरण होना आवश्यक है। दूसरे शब्दोंमें यों कहें कि किसी भी बैठकके लिए दोनों ओरसे शान्ति होना पहली आवश्यक बात है, यह तो सबको मानना ही पड़ेगा। यदि असहयोगके मुख्य-मुख्य नेता निश्चित आश्वासन दें कि स्थितिकी यह व्याख्या बिलकुल सही है, तब मैं भी कहूँगा कि वातावरण अनुकूल होता दीख रहा है और सरकारको अपनी बातपर पुनर्विचार करना ठीक होगा। लेकिन बातोंके अनुरूप काम भी होना चाहिए। यदि मुझे सिर्फ इतना ही इत्मीनान हो जाये कि आम तौरपर लोग सम्मेलनके लिए इच्छुक हैं और असहयोगके प्रधान नेतागण उसके अनुसार बरतनेको तैयार हैं तो मैं अपनी सरकारसे यह सिफारिश करूँगा कि इस बदली हुई स्थितिके अनुसार कदम उठाये जायें।

यह कथन अत्यन्त भ्रमोत्पादक है। इसमें जहाँ-जहाँ "असहयोगके नेता" शब्द आया है वहाँ-वहाँ यदि "सरकार" शब्द रख दिया जाये और यह सारा वक्तव्य किसी असहयोगीके मुँहसे निकले तो उससे सच्ची स्थितिका ज्ञान हो सकेगा। सच पूछिए तो असहयोगियोंको तो कुछ भी करनेकी जरूरत नहीं है; क्योंकि उन्होंने किसी भी मामलेमें झगड़ेकी स्थिति पैदा नहीं की है। वे तो जरूरत से ज्यादा सावधानीसे काम ले रहे हैं। लोग आक्रामक सविनय अवज्ञा शुरू करनेके लिए कितने उत्सुक थे! किन्तु बम्बईके उपद्रवोंके[1] कारण उनकी इच्छाओंको जबरदस्ती दबाना पड़ा। लेकिन आजकी स्थितिमें तो "सविनय अवज्ञा" मुहावरेका प्रयोग भी बहुत गलत अर्थमें हो रहा है। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि असहयोगी लोग जो-कुछ आज कर रहे हैं, ऐसी परिस्थितियोंमें कल हर सहयोगी भी वही करेगा। जब भारत सरकार या प्रान्तीय सरकार हमारे राजनीतिक अस्तित्व और आन्दोलनको, चाहे वह कितना भी शान्तिमय क्यों न हो, नष्ट करनेपर तुल जाये, तब क्या हमें अपनी शक्ति-भर ऐसे प्रयत्नका हर सम्भव वैध तरीकेसे विरोध नहीं करना चाहिए? मुझे तो इससे अधिक वैध और स्वाभाविक कोई बात नहीं दिखाई देती कि हम अपने स्वयंसेवक-संगठनोंकी प्रवृत्ति हिंसासे मुक्त रखते हुए जारी रखें और साथ ही सार्वजनिक सेवा भी करते रहें और ऐसा करनेका जो फल भोगना पड़े, उसे खुशीसे भोगें। सरकारी ज्यादतियोंके मुकाबले अपने बुनियादी अधिकारोंकी रक्षा करनेका दुस्साहस करनेके कारण सैकड़ों जवानों तथा बड़े-बूढ़ोंका, अपने बचावके लिए कुछ भी कहे बिना, कोई शिकायत किये बगैर चुपचाप जेल चले जाना क्या उनकी कानूनका आदर करनेकी प्रवृत्तिका काफी परि-

१. १७ नवम्बर, १९२१।

चायक नहीं है? इसलिए अगर किसीको सम्मेलनके लिए तथा अन्तिम निपटारेके लिए अपनी सच्ची-सच्ची इच्छा जाहिर करनेकी जरूरत है तो वह सरकारको ही है। सरकार-को ही अपनेको उस रास्तेपर जानेसे बचाना है जिसपर कि दमन उसे ले जा रहा है। असहयोगियोंके सम्मेलनमें शामिल होनेकी आशा करनेके पहले सरकारको ही अपने शुद्ध हेतुके विषयमें अपनी प्रामाणिकता सिद्ध कर दिखानी है। जब सरकार ऐसा करेगी तब उसे चारों ओर शान्ति-ही-शान्ति दिखाई देगी। जब सरकार हिंसात्मक कार्रवाइयोंके सिवा दूसरी बातोंका विरोध न कर रही हो, तब असहयोगसे कोई बुराई नहीं हो सकती। दरअसल हम ऐसा कुछ नहीं कर रहे हैं जिसे बन्द कर देनेकी जरूरत हो। क्या लड़कोंसे फिरसे कहें कि भाई, सरकारी विद्यालयोंमें पढ़ने जाओ? क्या वकीलोंसे कहें कि आप वकालत शुरू कर दीजिए? क्या लोगोंसे कौंसिलोंके लिए उम्मीदवार होनेकी सिफारिश करें? क्या उपाधिधारियोंसे कहें कि भाई अपने खिताब वापस माँग लो? यह सब कहनेकी आशा हमसे तबतक नहीं की जा सकती जबतक कि कोई निपटारा वास्तवमें न हो जाये या उसका आश्वासन न मिल जाये। इन सब बातोंको देखते हुए यह स्पष्ट है कि असहयोगियोंको कुछ भी करनेकी आवश्यकता नहीं है। हाँ, मैं अपनी तरफसे यह जरूर कह सकता हूँ कि यदि सम्मेलन करनेकी सचमुच इच्छा हो तो मैं आक्रामक सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेकी सलाह कभी नहीं दूंगा। वैसे मैं इरादा कर ही चुका हूँ कि ज्यों ही इस बातका पक्का विश्वास हुआ कि लोग अब अहिंसाका रहस्य समझ गये हैं, आक्रामक सविनय अवज्ञा छेड़ दूँ; और यहाँ मुझे यह भी कह देना चाहिए कि इन पिछले दस दिनोंकी घटनाएँ यह दिखला रही हैं कि लोग उसकी अपरिमित महिमा अच्छी तरह समझ गये हैं। सो यदि सरकार यह मानती हो कि अब असहयोगी खिलवाड़ नहीं कर रहे हैं, और अपने लक्ष्यकी सिद्धिके लिए वे असीम कष्ट सहनेको प्रस्तुत हैं तो सरकारको बिना किसी शर्तके ठीक रास्ते-पर आ जाना चाहिए, स्वयंसेवक-संगठनोंको भंग करने तथा सार्वजनिक सभाएँ बन्द करनेकी आज्ञाओंको रद कर देना चाहिए और भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके उन तमाम लोगोंको, जिन्हें इस कहने-भरकी सविनय अवज्ञाके लिए अथवा असहयोगकी सीमामें आनेवाले किसी भी उद्देश्यके लिए सजाएँ दी गई हैं, छोड़ देना चाहिए। हाँ, जिन्होंने हिंसा-काण्ड किया हो या उसका इरादा किया हो उनकी बात जाने दीजिए। सरकार हिंसा-कांडको अथवा उसकी उत्तेजनाको दबानेके लिए खुशीसे अपनी सत्ताका सख्तीसे प्रयोग करे; लेकिन हमारे इस हकको कि हम अपना मत बेधड़क प्रकट करें और तमाम वैध तथा अहिंसात्मक उपायोंसे जनताको शिक्षा देकर लोकमत तैयार करें, किसी तरहका जरा भी धक्का न पहुँचना चाहिए। इसलिए अगर किसीको बिगड़ी बात बनानी है, घोर अन्यायोंका परिमार्जन करना है तो वह सरकार ही है। और तब वह जो सम्मेलन कराना चाहती है वह अनुकूल वातावरणमें हो सकता है। मैं यह भी कह दूं कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं ऐसा कोई सम्मेलन नहीं चाहता जिसमें अस-हयोगसे निबटनेके उपायों और तरीकोंपर विचार किया जाये। इस अवस्थामें यदि किसी सम्मेलनसे लाभ हो सकता है तो वह ऐसे सम्मेलनसे जिसमें वर्तमान असन्तोषके

कारणोंको दूर करनेके उपायोंपर विचार किया जाये। ये कारण हैं — खिलाफत और पंजाबके साथ किये गये अन्याय तथा स्वराज्य। फिर वह ऐसा हो जिसमें केवल वही लोग न बुलाये जायें जिन्हें सरकार चाहे; बल्कि जनताके सच्चे प्रतिनिधियोंको बुलाया जाये। तभी वह सफल हो सकता है — तभी उससे लाभ हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१२-१९२१

३२. तार : मदनमोहन मालवीयको[1]

[२० दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

बहुत खेद है अपेक्षित आश्वासन देनेमें असमर्थ हूँ। सम्मेलनोंके सन्तोषप्रद परिणामके बाद ही असहयोग रुक सकता है। कांग्रेसकी ओरसे निर्णय करनेका मुझे बिलकुल कोई अधिकार नहीं।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७३०)की फोटो-नकलसे।

१. यह तार मालवीयजीके २० दिसम्बर, १९२१ के तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "निम्न आशयका तार तुरन्त भेजनेकी आपसे प्रार्थना — यदि आपके नाम दासके तारमें उल्लिखित मुद्दे स्वीकार हों और परिषद्के गठन तथा तिथिके बारेमें सहमति हो जाये तो आप हड़ताल वापस ले लेंगे और प्रस्तावित परिषद्का परिणाम निकलने तकके लिए राष्ट्रीय शिक्षा, स्वदेशी और मादक वस्तु-निषेधके सिलसिलेमें हर सूरतमें बिना धरनेके किये जानेवाले कामोंके अतिरिक्त असहयोग सम्बन्धी अन्य सभी कार्रवाइयोंको स्थगित कर देंगे और आप अपनी ओरसे युद्ध-विराम-सन्धिका सचमुच पूरा-पूरा पालन करेंगे। हम सभीके वांछित लक्ष्यके सर्वोपरि हितोंके लिए ऐसा आश्वासन अत्यावश्यक है।"

३३. तार: महादेव देसाईको[1]

[२० दिसम्वर, १९२१ या उसके पश्चात्]

महादेव देसाई
आनन्द भवन
इलाहाबाद

शावाश, प्रतिलिपियाँ तैयार करनेवाले जितने भी स्वयंसेवक मिल सकें भरती करो। रोनियोपर[2] प्रतियाँ तैयार कराओ। संक्षिप्तसे-संक्षिप्त समाचार और जानकारीवर्द्धक लेख दो। पत्रकी बिक्रीके लिए रोज काम करनेवाले स्वयंसेवक वनाओ।

बापू

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७४८)की फोटो-नकलसे।

३४. तार: श्यामसुन्दर चक्रवर्तीको[3]

[२१ दिसम्वर, १९२१ या उसके पश्चात्]

मेरी रायमें या तो असहयोगके स्थगनके विना ही सम्मेलन हो या फिर यदि युद्ध-विराम-सन्धि होनी हो तो सम्मेलनकी मुख्य शर्तों, उसके गठन इत्यादिके वारेमें पहलेसे फैसला हो जाना चाहिए। हम उग्र सविनय अवज्ञा नहीं कर रहे हैं। इसलिए यदि सरकारका मंशा सचमुच नेक है तो उसे

१. यह तार महादेव देसाईके २० दिसम्बर, १९२१ के इस तारके जवाबमें भेजा गया था: "आज सुबह ज़मानत जब्त। जारी किये गये नोटिसमें कहा गया है कि "श्रीमती मोतीलाल नेहरूका सन्देश" और "हम भी इसको कर देखें" शीर्षक लेखोंमें ऐसे शब्द हैं जो कानून और व्यवस्था बनाये रखनेमें बाधा डालते हैं। दूसरा नोटिस **यंग इंडियाको** तार द्वारा भेज दिया कि कलसे हस्तलिखित पत्रिका निकालनेका इरादा है। विस्तृत निर्देश तार द्वारा दीजिए, यद्यपि हर घंटे गिरफ्तारीका इन्तज़ार है।"

२. हस्तलिखित **इंडिपेंडेंट** निकालनेके लिए रोनियो मशीन; देखिए "टिप्पणियाँ", २२-१२-१९२१ का उप-शीर्षक "इंडिपेंडेंटका दमन"।

३. यह तार चक्रवर्तीके २० दिसम्बर, १९२१ के तारके उत्तरमें भेजा गया था जो गांधीजीको २१ दिसम्बरको मिला था। तार इस प्रकार था: "बंगाल प्रस्तावित परिषद् द्वारा प्रस्तुत वार्ताके अवसरके उपयोगके पक्षमें। वास्तविक युद्ध-विरामका आश्वासन देना ही पर्याप्त माना जा रहा है। जिन रिहाइयों-का सुझाव आपने रखा है उनकी उम्मीद परिषद्की बैठकसे ठीक पहले की जा सकती है। तार द्वारा तुरन्त परामर्श दीजिए।"

संस्था भंग करनेकी अधिसूचना बिना शर्त वापस लेकर, सभाओंपर लगाई रोक उठाकर अपना कदम पीछे लेना चाहिए, बिना वारंट गिरफ्तार बन्दियोंको रिहा करके आंशिक रूपसे प्रायश्चित्त करना चाहिए। जिन कानूनोंको रद करनेका वादा किया गया था उनको लागू करना क्या कुटिलतापूर्ण नहीं? प्रकट, अप्रकट या जानबूझकर की जानेवाली हिंसाका वह दमन जरूर करे; पर हमें विचार-स्वातन्त्र्यके घोर निरंकुश दमनका विरोध प्राणोंकी बाजी लगाकर करना चाहिए।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७३०)की फोटो-नकलसे।

३५. तार: जमनादास द्वारकादासको[1]

[२१ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

आपको दिये वचनका पाबन्द रहूँगा। व्यक्तिगत तौरपर किसी भी सम्मेलनमें बिना शर्त आनेको तैयार हूँ। वाइसराय आपको गलत राह सुझा रहे हैं। ठोस शर्तें बताइए जिनका पालन होगा। दासको भेजे तारमें[2] उल्लिखित शर्तें पूरी हुए बिना अपनी ओरसे हड़ताल रद नहीं कर सकता।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७५३)की फोटो-नकलसे।

१. यह तार जमनादास द्वारकादासके २१ दिसम्बर, १९२१के तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "आप अनुमान नहीं लगा सकते कि मेरे लिए यह कितना निराशाजनक रहा। निराशा व्यक्त करनेके लिए शब्द नहीं। बड़ी आशाएँ लेकर आया था पर देखा कि पण्डितजी और दासको बादमें भेजे गये अपने तारमें आपने लगभग उन सभी बातोंको रद कर दिया जो आपने मुझसे कही थीं। समझमें नहीं आया। विश्वास करता हूँ कि अभी समय है। आपसे प्रार्थना है कि देशके बड़े-बड़े हितोंके खयालसे युद्ध-विरामकी अपीलको मान लीजिए। कमसे-कम आप तो अधिक उदार दृष्टिकोण अपना सकते हैं। आपकी सहमति होनेपर हम अब भी सम्मेलनकी व्यवस्था कर सकते हैं। देशकी जनता और आपके अनेकानेक अनुयायी भी ऐसा सम्मेलन चाहते हैं। कृपया विस्तारपूर्वक तार कीजिए।"

२. १९ दिसम्बर, १९२१ को।

३६. टिप्पणियाँ

१९ दिसम्बर, १९२१

रँगारंग खबरें

हफ्तेभर मेरे पास जिन चिट्ठियों, तारों और अखबारोंका ताँता बँधा रहा उनमें से कुछ चुनिन्दा नमूने लीजिए :

अभी दो मुसलमान कार्यकर्त्ता ऐसे जमींदारसे सिर फुड़वाकर लौटे हैं जिसे सरकारका समर्थन प्राप्त है। —सिन्ध।

स्वयंसेवक-संगठन अवैध घोषित। बिहार-भरके प्रान्तीय, जिला और अन्य कांग्रेस-दफ्तरोंकी तलाशी। कागजात, बहियाँ, साइक्लोस्टाइल मशीनें, कांग्रेसकी मुहरें, स्वराज्यके झण्डे जब्त। प्रान्तीय कमेटी स्वयंसेवक दलमें भरती जारी रखनेको कृत-संकल्प। जनतामें उत्साह और प्रसन्नता। —विहार।

आज (१७ दिसम्बर) हथियारबन्द पुलिसने असम महापुरुषिया सम्प्रदायकी धार्मिक संस्था 'शंकर हॉल' पर, जिसके एक हिस्सेमें बारपेटा कांग्रेस कमेटीका दफ्तर था, कब्जा कर लिया। यह कार्रवाई 'शंकर हॉल' के अधिकारियोंको सूचना दिये बिना की गई। पहरेपर तैनात पुलिसके सिपाही हॉलके भीतर बीड़ी-सिगरेट पी रहे हैं, जिसकी कड़ी मनाही है और वे इस प्रकार लोगोंकी धार्मिक भावनाओंको ठेस पहुँचा रहे हैं। कांग्रेसकी चीजोंको लापरवाहीसे इधर-उधर फेंककर पुलिसने उसे अपने रहनेका स्थान बना लिया है और इस प्रकार लोगोंको वे अपने धार्मिक कृत्य पूरे नहीं करने दे रहे हैं। लोग अब भी अहिंसाका पालन कर रहे हैं। काम बड़ी तेजीसे आगे बढ़ रहा है। —बारपेटा, असम।

पण्डित रामभजदत्त चौधरी, प्रोफेसर रुचिराम साहनी और लाला लाजपतरायके मकानों, कांग्रेस कमेटीके दफ्तरों, खिलाफतके दफ्तरों, सिराजुद्दीनके मकान और सरलादेवीके[1] प्रेसकी तलाशी। लाहौर और अमृतसरमें पुलिस द्वारा स्वयंसेवकोंकी बुरी तरह पिटाई। खबर है लाहौर सेन्ट्रल जेलमें कैदियोंको बेंत लगाये गये।

इन रँगारंग खबरोंके नमूने मैंने यह दिखानेके लिए प्रस्तुत किये हैं कि यदि हम इस प्रकारके बरतावसे बचकर निकल सकें तो स्वराज्य आसानीसे हमारी पकड़में आ जायेगा। बच निकलनेका अर्थ यह है कि हम तैश खाये बिना बहादुरीसे उसका

१. सरलादेवी चौधरानी, पण्डित रामभजदत्त चौधरीकी पत्नी और रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी भानजी। सरलादेवी और उनके पति १९१९ में गांधीजीके अनुयायी बन गये थे।

सामना करें। और हारकर दम तोड़ती हुई इस शासन-व्यवस्थाके संचालकोंको यह कहना पड़ जाये, "हमने कोशिश तो की लेकिन कामयाबी नहीं मिली।" जब परवाना शमाके इर्द-गिर्द मँडराने लगता है तब उसका मरण निश्चित होता है। इसी प्रकार यह सरकार भी स्वयं अपनी हिंसाके भारके नीचे दबकर तेजीसे टूक-टूक होती जा रही है। यह जानते हुए भी कि कहीं कुछ छिपाकर नहीं रखा गया है और असहयोग आन्दोलन करनेवालों के पास छिपाकर रखनेको कुछ है भी नहीं, निजी मकानों और सार्वजनिक दफ्तरोंकी तलाशी लेना यदि पागलपन नहीं तो और क्या है? लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि ये तलाशियाँ इसी इरादेसे ली गई हैं कि लोगोंको जितना भी परेशान किया जा सके, किया जाये। एक पत्र भेजनेवाले ने मुझे लिखा है कि जेलोंमें जगहकी तंगी महसूस होने लगी है। जितनी बड़ी तादादमें रोज कैदकी सजाएँ दी जा रही हैं, जेलके अधिकारी उसके लिए तैयार नहीं थे। बहुतसे कैदियोंके लिए न उनके पास जगह है और न काम। इसलिए स्वाभाविक है कि आतंक जमानेके लिए दूसरे तरीके अपनाये जायें। इसलिए अब तो हमें और भी जल्दी-जल्दी ऐसे हमलोंके लिए तैयार रहना होगा। बेंत बरसाये जानेकी खबर अबतक ज्ञात होनेवाली सूचनाओंमें सबसे ज्यादा बुरी है। मैं अब भी यही आशा कर रहा हूँ कि शायद यह खबर सच नहीं होगी। यह खबर मैंने 'ट्रिब्यून'से ली है जो उन सबसे ज्यादा जिम्मेदार अखबारोंमें से है जो भारतके भाग्यसे यहाँ चल रहे हैं। यह खबर मार्शल लॉके दौरान लाहौरमें कोड़ोंसे की जानेवाली अन्धाधुन्ध पिटाईकी याद दिला देती है। पहले उसका भी प्रतिवाद किया गया था लेकिन बादमें उसकी सत्यता मान ली गई। पाठकोंको याद होगा कि कर्नल जॉन्सनने कैदकी सजासे काम न चलनेपर निवारक और शीघ्र प्रभाव दिखानेवाले दण्डके रूपमें कोड़ेका प्रयोग उचित ठहराया था।[1] फिर भी, यह खबर चाहे सच हो या नहीं; हमें बुरीसे-बुरी स्थितिका सामना करनेके लिए तैयार रहना होगा। आजादीके लिए बड़ेसे-बड़ा कष्ट भी कम होगा। आजादीका जितना भारी मूल्य हम अदा करेंगे, वह हमें उतनी ही ज्यादा प्यारी होगी।

लेकिन बारपेटाके मन्दिरपर कब्जा किया जाना तो कुछ मानीमें और भी बुरा है। यह बड़ा ही गम्भीर, अनावश्यक और भड़कानेवाला कार्य है। लेकिन मेरा यही आग्रह है कि इस प्रकार भड़काये जानेपर भी हमें अहिंसापूर्ण बने रहना है। हमें याद रखना चाहिए कि हमारा व्रत किसी प्रकारकी शर्तोंसे बँधा नहीं है। हमें हर कीमतपर उसे पूरा करना है। अनधिकार प्रवेश करनेवाला कोई व्यक्ति मन्दिरको अपवित्र नहीं कर सकता। मन्दिरकी पवित्रता तो उसके उपासकोंकी अपात्रताके कारण ही नष्ट हो सकती है। मौलाना अबुल कलाम आजादके शब्दोंमें हमें उस महानतम मन्दिर, अर्थात् भारतकी ओर देखना चाहिए जो हमारे गुलामीके सामने घुटने टेक देनेके कारण इतने वर्षोंसे अपवित्र होता आ रहा है। और जब हम इतने दिनोंसे इस अपवित्रताको सहन करते आ रहे हैं, तो अब इन स्थानीय मन्दिरोंमें अनधिकार प्रवेश और अनधिकारी व्यक्तियों द्वारा उनके दुरुपयोगके फलस्वरूप इनके और भी अपवित्र किये जानेपर

१. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

उत्तेजित होकर हमें पागल नहीं बनना चाहिए। क्या लॉर्ड रीडिंग इस मामलेमें भी यह दलील देकर इसका महत्त्व कम करनेके लिए तैयार होंगे कि अधिकारी अपने एक बड़े ही कठिन कर्त्तव्यका पालन करनेमें लगे हैं?

चटगाँवकी कुर्बानी

चटगाँवकी घटनाओंका सजीव चित्रण करनेवाला पत्र जिस दिन मुझे मिला था, उसी दिन तारसे यह सूचना भी मिली कि वह पत्र भेजनेवाले बाबू प्रसन्नकुमार सेन[1] भी गिरफ्तार कर लिये गये हैं। वहाँ गिरफ्तार होनेवाले स्वयंसेवकोंकी कुल संख्या अब तीन सौतक पहुँच गई है। पाठकोंको बाबू प्रसन्नकुमार सेनके पत्रके ये अंश दिलचस्प लगेंगे :

> अभीतक वास्तवमें हम लोग यह नहीं समझ पा रहे थे कि सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेका सबसे अच्छा तरीका कौन-सा होगा। कांग्रेस कार्य-समितिके दिल्लीमें स्वीकार किये गये प्रस्तावके बाद हमने लोगोंको कठोरतासे अहिंसाका पालन करनेका पाठ पढ़ाना आरम्भ कर दिया। हमारे प्रचारक ८ दिसम्बरको लौटनेवाले थे, लेकिन उस तारीखसे पहले ही १७ नवम्बरकी कलकत्तेकी हड़तालके कारण एंग्लो-इंडियन उग्र-पंथियोंके उकसावेमें आकर बंगाल सरकारपर पागलपन सवार हो गया और उसने भूले-बिसरे कानूनों और तरीकोंसे लाभ उठाकर स्वयंसेवक-संगठनोंको अवैध घोषित कर दिया। इस प्रकार उसने हमारी सहायता की है।
>
> पिछले कुछ दिनोंसे राष्ट्रीय स्वयंसेवक दृढ़ निश्चय लेकर पाँच-पाँचके जत्थोंमें प्रसन्नतासे जेल जा रहे हैं। उन्होंने जो अनुशासन और संयम दिखाया है वह असाधारण है और यदि आप अत्युक्ति न मानें तो मुझे यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं होगा कि इस दृष्टिसे वे युद्ध-क्षेत्रमें जानेवाले अच्छेसे-अच्छे अनुशासनबद्ध सैनिकोंकी बराबरी कर सकते हैं। पिछले तीन दिनोंमें तिरेसठ व्यक्ति गिरफ्तार हो चुके हैं। मुफस्सिल स्थानोंसे स्वयंसेवकोंका ताँता बँधा हुआ है और हमारा विश्वास है कि जल्दी ही इन बहादुर नौजवानोंको रखनेके लिए चटगाँव जेलमें अधिकारियोंको जगह नहीं मिलेगी।

इस प्रकार सरकारने शान्तिको अवैध और शान्तिके पहरुओंको अपराधी घोषित कर दिया है। वह उनको स्वेच्छासे शान्तिपर अमल नहीं करने देती, वरन् समय-समयपर केवल अंकुशके जोरसे उनको शान्तिका अमल सिखाती है।

मिले-जुले इरादे

एक मित्रने मुझे बताया है कि सरकार स्वयंसेवक-संगठनोंको इस कारण दबा रही है कि उसे इस बातका भरोसा नहीं कि ये सदा शान्तिपूर्ण बने रहेंगे। पत्र-लेखकने आगे लिखा है :

१. वकील और चटगाँव जिला कांग्रेस कमेटीके मन्त्री।

> उनका खयाल है कि आज तो आपके आदेशसे वे शान्त हैं लेकिन आपके अथवा आपके उत्तराधिकारियोंके आदेश किसी दिन भी बदल सकते हैं और स्वयंसेवकोंसे फौजी तौरपर हथियारबन्द होनेके लिए कहा जा सकता है। तब तो सरकारी फौजके खिलाफ स्थायी विद्रोही फौज खड़ी हो जायेगी।

इस पत्र-लेखकने एक यह भी सुझाव रखा है कि सरकार सशस्त्र क्रान्तिकी अपेक्षा इस अहिंसासे कहीं ज्यादा डरती है। ऐसे लोगोंसे जो बदला लेनेकी कोशिश नहीं करते, दुर्व्यवहार करते-करते पुलिस अफसर थक चुके हैं और उनकी हिम्मत टूट चुकी है। उनमें से कुछ यह मानने लगे हैं:

> अहिंसा रूपी दुश्मन तो बड़ा खतरनाक है। हिंसासे हम परिचित हैं और उसकी हमें कोई परवाह नहीं। लेकिन ऐसे आदमीको मारना, जो बदलेमें मारता न हो, अपनेको कितना छोटा बना देता है।

सचाई यह है कि ये दोनों ही बातें ठीक हैं। सरकार भविष्यसे डरती है और इस बातका प्रबन्ध कर लेना चाहती है कि लोग सशस्त्र विरोधकी ताकत हासिल न कर सकें, साथ ही वह शान्तिपूर्ण शक्तिके तेजीसे बढ़नेसे भी डरती है। संक्षेपमें, वह चाहती है कि न हम मर्द रहें न औरत। वह चाहती है कि हम नपुंसक बने रहें।

नपुंसक बनानेका तरीका

भारतमें नपुंसकीकरणके जिस तरीकेका प्रयोग किया जा रहा है, उसका बड़ा सजीव उदाहरण बेलगांवमें मिला है। एक मित्रने मेरे लिए बेलगांवसे मिली खबरोंका संक्षिप्त विवरण तैयार किया है, जो इस प्रकार है:

> बेलगांवके जिला-अधिकारियोंने असहयोग आन्दोलनको दबानेका एक बड़ा ही मौलिक तरीका निकाला है। पुलिस-सुपरिटेंडेंट श्री हेटरने एक परिपत्र निकालकर सभी सब-इन्स्पेक्टरोंसे कहा कि वे बल-प्रयोग द्वारा असहयोगका प्रसार रोकें। सब-इंस्पेक्टरोंने अपनी ओरसे परिपत्र भेजकर गांवोंकी पुलिससे कह दिया कि "असहयोगके पक्षमें भाषण करनेवाले लोगोंको बलात् रोका जाये। उन्हें गांवोंमें घुसने न दिया जाये और गांवोंसे निकाल दिया जाये और वक्ताओंको भाषण देनेसे रोका जाये। डी० एस० पी०का खयाल है कि यदि पुलिस-पटेल इतनी बात समझ लें तो काफी होगा। उच्च अधिकारी इस मामलेमें उचित सहायता देते रहेंगे।" लेकिन जब असहयोग-आन्दोलनकारियोंमें से कुछ भूतपूर्व वकीलोंने इस सम्बन्धमें कानूनके अनुसार काम करनेका प्रश्न उठाया, तो डी० एस० पी० ने १९२१का अपना परिपत्र संख्या ६३५९ निकाल दिया जिसमें कहा गया है कि जिला पुलिस अधिनियमकी धारा ५१ (ख) के अधीन पुलिसको अपराध रोकनेका जो अधिकार मिला हुआ है वह इस प्रयोजनके लिए काफी होगा। डी० एस० पी०का यह भी कहना है कि सार्वजनिक रूपसे ये असहयोग आन्दोलनकारी जब भी कुछ कहनेके लिए अपना मुंह खोलते हैं तभी अखिल भारतीय

दण्ड संहिताकी धारा १२४ क अथवा १५३ क के अधीन अपराध करते हैं। इसलिए पुलिस अधिकारियोंको, कानूनकी सीमामें रहते हुए, इस अपराधको रोकनेके लिए हर सम्भव उपाय करना चाहिए।

इस सबके अन्तमें मजाक यह रहा कि इन अधिसूचनाओंसे लैस होकर बेलगाँवके एक ताल्लुके बेलहोंगलका सब-इंस्पेक्टर उस समय वाकई जिला कांग्रेस कमेटीके एक मंत्रीका मुँह बन्द करने पहुँच गया, जब वे बेलहोंगलमें एक सभामें भाषण करनेके लिए खड़े हुए। घटनाका विवरण मन्त्रीके शब्दोंमें ही लीजिए :

> . . .जब मैं सभामें बोलनेके लिए उठा, तो पुलिस सब-इंस्पेक्टर मेरे सामने आ खड़ा हुआ और मुझसे कहने लगा कि मैं न बोलूं। माँगनेपर उसने कोई लिखित आदेश तो नहीं दिया, लेकिन उपर्युक्त परिपत्र संख्या ६३५९ दिखाया। . . .उसने मुझसे यह भी कहा कि यदि मैंने जिद करके बोलनेकी कोशिश की तो वह हाथ रखकर मेरा मुँह बन्द कर देगा। . . .यह बड़ी अनोखी बात थी। . . .मैंने वह आदेश मान लिया और मैं बोला नहीं। स्थानीय मजिस्ट्रेट और मामलतदार इस वाकयेके समय पूरे वक्त वहाँ मौजूद थे। . . .

लीजिए, इलाहाबादकी घटनाओंका संक्षिप्त विवरण देकर मैं इस वीभत्स चित्रको पूरा किये देता हूँ :

> पिछली २५ नवम्बरको सरकारने एक असाधारण गजट निकालकर १९०८के दण्डविधि संशोधन अधिनियमको संयुक्त-प्रान्तपर लागू कर दिया और विदेशी कपड़ेके बहिष्कार, धरना देने अथवा युवराजकी यात्राके बहिष्कारको अपना उद्देश्य मानकर चलनेवाले खिलाफत, कांग्रेस तथा वैसी ही अन्य संस्थाओंके स्वयंसेवक दलोंको अवैध संगठन घोषित कर दिया।
>
> उसी दिन, पहलेसे घोषित कार्यक्रमके अनुसार, प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक हुई जिसमें कार्य-समिति द्वारा निर्धारित रूपरेखाके अनुरूप स्वयंसेवक बोर्ड-की स्थापना करनेका निश्चय किया गया। एक शपथ-पत्रका मसौदा तैयार किया गया और सभामें उपस्थित ७५ व्यक्तियोंने स्वयंसेवकोंके रूपमें उसपर हस्ताक्षर कर दिये। लखनऊके पण्डित हरकरननाथ मिश्र, जो एक सभामें भाषण करने लखीमपुर गये हुए थे, सरकारी आक्रोशके पहले शिकार बने। इसके बाद ६ दिसम्बरको सवेरे-सवेरे लखनऊमें मौलाना खलीकुज्जमा और खिलाफत तथा कांग्रेस कमेटियोंके अन्य लोगोंको गिरफ्तार कर लिया गया। उसी दिन शामको पण्डित मोतीलाल नेहरू, पण्डित जवाहरलाल नेहरू[1], पुरुषोत्तमदास टण्डन[2] और

१. १८८९-१९६४, राजनीतिज्ञ और लेखक; भारतके पहले प्रधान मन्त्री, १९४७-१९६४; भारतरत्न; विश्व इतिहासकी झलक और मेरी कहानी आदिके रचयिता।

२. १८८२-१९६२; उत्तर प्रदेशके प्रसिद्ध वकील और नेता; हिन्दी साहित्य सम्मेलनके संस्थापक; १९५० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके सभापति; भारतरत्न। उस समय वे इलाहाबाद नगरपालिकाके अध्यक्ष थे।

अन्य व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये, जिन्हें इस बीच स्वयंसेवकोंके रूपमें नाम लिखानेके अपराधमें विभिन्न अवधियोंकी जेलकी सजा दे दी गई है। इसके बाद कुछ दिनका ठहराव आया जो ११ तारीखको उन ६७ स्वयंसेवकोंकी गिरफ्तारियोंसे टूटा जिनमें से अधिकांश आनन्द भवनकी[1] दीवारपर जनतासे इस आशयकी अपील लिखते हुए पकड़े गये थे कि वह युवराजके स्वागत-समारोहमें हिस्सा न ले। परन्तु, यह आक्रोश अपनी चरम सीमापर १३ तारीखको उस समय पहुँचा जब पूरी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको उसकी बैठकके दौरान पुलिसने घेर लिया और दो मन्त्रियों तथा अन्य दो व्यक्तियोंको छोड़कर बाकी सब लोगोंको हिरासतमें ले लिया। कमेटीकी बैठक दिनमें एक बजे शुरू हुई थी और रातको ९ बजेतक चलती रही। कैदियोंको ले जानेके लिए ६ मोटरगाड़ियाँ आईं। पुलिस मि० फर्ग्युसन नामक एक डी० एस० पी०के अधीन करीब साढ़े पाँच बजे कमेटीके भवनमें घुसी और उसने सभी रास्ते रोक लिये। वह रातको ९ बजेतक इमारतकी तलाशी लेती रही। बैठक खत्म हो जानेपर, जब सदस्योंने डी० एस० पी०से कहा कि वे जाना चाहते हैं तो डी० एस० पी०ने सभामें जाकर कहा कि कार्रवाईका विवरण उसे दिखाया जाये, और उसमें उसने जब यह प्रस्ताव देखा जिसमें सभी जिला और तहसील कांग्रेस कमेटियोंसे स्वयंसेवक दल संगठित करनेकी सिफारिश की गई थी तो उसने घोषणा कर दी कि दण्डविधि संशोधन अधिनियमके अधीन अपराध किया गया है। उसके बाद उसने वहाँ मौजूद सभी लोगोंसे एक-एक करके यह पूछा कि क्या वे कमेटीके सदस्य हैं और क्या उन्होंने इस संकल्पका समर्थन किया था। जब सभी सदस्योंने इन प्रश्नोंका उत्तर 'हाँ' में दिया, तो उसने पचपन सदस्योंको हिरासतमें ले लिया जिनमें प्रान्तभरके सभी प्रमुख कार्यकर्ता शामिल थे।

तलाशीके दौरान मि० फर्ग्युसनने 'स्वराज्य' के सम्पादक बाबू शीतलासहायको इतने लात-घूँसे मारे और इतने प्रहार किये कि उनके शरीरसे खून बहने लगा। लेकिन उन्होंने बड़े धैर्यपूर्वक इन कष्टोंको सहन किया। इसी अधिकारीने अन्य अनेक लोगोंके साथ दुर्व्यवहार और धक्का-मुक्की की। सभीने अपने गुस्सेपर काबू रखा। तलाशी और गिरफ्तारियोंके लिए न तो कोई वारंट ही दिखाया गया और न पुलिस अफसरोंने तलाशी शुरू करनेसे पहले अपनी खानातलाशी दी। पुलिसने सभी कागजात, रिकार्ड और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी मुहरें जब्त कर उनपर मुहरबन्द ताले लगा दिये हैं।

मेरे सामने यह बात स्पष्ट है कि कानून और शालीनताकी अवहेलनाकी ये कोई इक्का-दुक्का घटनाएँ नहीं हैं वरन् एक समझी-बूझी योजनाके अनुसार की जा रही

१. मोतीलाल नेहरूका निवास-स्थान।

कार्रवाइयाँ हैं ताकि स्वस्थ सार्वजनिक जीवनको नष्ट करके जनताकी हिंसात्मक प्रवृत्तिको उभारा जा सके और फिर जलियाँवाला बागका और भी व्यापक संस्करण प्रस्तुत किया जा सके। अच्छीसे-अच्छी मंशा लेकर उपर्युक्त घटना-क्रमपर उदारसे-उदार दृष्टिसे विचार करनेके बाद भी अन्य किसी निष्कर्षपर पहुँचना मेरे लिए सम्भव ही नहीं हुआ।

वाइसरायका दायित्व

आज भारतवर्षमें हिन्दुस्तानियोंको सदाके लिए पौरुषहीन कर डालनेकी जो साजिश चल रही है उसमें, मुझे शक होता है कि लॉर्ड रीडिंग भी शामिल हैं। पर एक मित्रने एक दूसरी बात सुझाई है। वे कहते हैं कि हाँ, लॉर्ड रीडिंग उन धमकियोंके लिए तो जरूर जिम्मेवार हैं जो हाल ही में उन्होंने अपने भाषणके द्वारा दी हैं; परन्तु उन्हें इस बातकी खबर नहीं होगी कि उनके मातहत अधिकारी इस तरह कानून-कायदे-का खून कर डालेंगे, या शायद उनका कुछ बस न चला हो — उनकी इस इच्छाकी कि कानूनकी मर्यादाका उल्लंघन जरा भी न किया जाये, नीचेके अधिकारियोंने पर-वाह न की हो। लेकिन मैं इन दोनों बातोंको नहीं मान सकता। लॉर्ड रीडिंग यदि लोगों द्वारा कानूनकी खिलाफवर्जीको कानूनी तरीकोंसे दबानेका प्रयत्न कर रहे हों तो उन्हें अपने इस अभियानकी गति-विधिका — जिसे वे 'दमन' तक नहीं कहने देना चाहते — अच्छी तरह मनन करें और उसे विधिवत् चलायें। दमनमें उनके मातहत अफसरोंका स्वार्थ है। अतएव यदि वे उनके हाथसे निकल गये हों, तो लॉर्ड रीडिंगको तुरन्त इस्तीफा दे देना चाहिए। कमसे-कम वे जाहिरा तौरपर ऐसी बेकायदा करतूतों और मार-पीट तथा हमलोंकी निन्दा अवश्य करें और "कठिन समयकी" दुहाई देकर उनके बचावकी कोशिश तो हरगिज न करें। इस सम्बन्धमें एक बात मैंने सोची है। हाँ, वाइसराय महोदय हमारी उच्च आकांक्षाओंसे हमदर्दी रखते हैं। वे अपने देश-भाइयोंकी स्थितिसे खूब वाकिफ हैं। अतएव वे इस बातकी आवश्यकता समझते हैं कि सुलह करनेके पहले हमारी खूब कड़ी परीक्षा कर देखें। सो वे कठोर दमनका प्रयोग करके यह जाँच लेना चाहते हैं कि हम उसे कहाँतक सहनेको तैयार हैं, अर्थात् आजाद होनेकी हमारी इच्छा कहाँतक सच है। इस तरह वे बतौर हमारे वकीलके अपने मुवक्किलका पक्ष मजबूत करके फिर किसी निबटारेपर आना चाहते हैं। तथापि मुझे अन्देशा है कि बात ऐसी नहीं हो सकती। मनुष्य-स्वभावकी यह रीति नहीं है। लॉर्ड रीडिंग सोलह आना स्वार्थसे बिलकुल खाली नहीं हैं। और यदि वे ऐसे हों तो ऐसी सरकारके यहाँ ठहर ही नहीं सकते जिसके वर्तमान गठनके अन्तर्गत प्रजाके दुःख दूर हो ही नहीं सकते। अतएव मुझे अपनी इच्छाके सर्वथा विपरीत यह निष्कर्ष निकालनेपर बाध्य होना पड़ता है कि लॉर्ड रीडिंग इस तरह भाषण-स्वातन्त्र्य तथा लोक-संस्थाओंका बलपूर्वक गला घोटकर भारतवर्षको पौरुषहीन करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। हाँ, मैं यह माननेको तैयार हूँ कि वे जो-कुछ कर रहे हैं वह यही समझकर कि इसमें हमारा भला है और अभी हम सच्चे पुरुष और स्त्री कहलाने योग्य नहीं हुए हैं। पर लॉर्ड रीडिंगकी आँखें शीघ्र ही खुल जायेंगी। वे जो चाहें सो माना

करें। उनके लिए हमें झगड़नेका कोई प्रयोजन नहीं। और न हमें चिन्ता ही करनेकी जरूरत है। हम तो बस सच्चे स्त्री-पुरुषोंकी तरह अपना फर्ज अदा करें। फिर हम देखेंगे कि हर बात हमारे अनुकूल हो जायेगी और हर आदमी हमारी तरफ झुक जायेगा।

गोलमेज परिषद्

सरकार क्या सोच रही होगी, इस बातकी छानबीनके लिए 'यंग इंडिया' में बहुत कम लिखा जाता है। उसकी अटकलबाजी तो व्यर्थ ही है। किन्तु चूंकि आजकल समाचारपत्र इस सम्मेलनके विषयमें चर्चा कर रहे हैं तथा उसके विषयमें वाद-विवाद करते हुए अपनी-अपनी राय जाहिर कर रहे हैं, मुझे भी अब यह उचित मालूम हो रहा है कि भारतमें चारों ओर जो यह नाटक खेला जा रहा है उसके नायककी मानसिक स्थितिका कुछ विवेचन 'यंग इंडिया' में भी किया जाये। मेरा तो खयाल यह है कि सम्मेलनका होना तबतक निरर्थक ही है, जबतक कि वाइसरायके दिमागसे यह भ्रम दूर नहीं हो जाता कि असहयोग तो कुछ गुमराह उत्साही लोगोंतक ही सीमित है। यदि उनकी यह इच्छा हो कि उनके साथ सहयोग किया जाये और देशमें शान्ति-सन्तोष फैले, तो उन्हें चाहिए कि वे असहयोगियोंको सन्तुष्ट करें — उनसे सुलह करें। उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि असहयोग कोई रोग नहीं है, यह तो एक रोगका मुख्य लक्षण है। खास रोग तो भारतकी जनतापर जो तीन तरहसे मर्माघात किया गया है, वही है और जबतक उस रोगकी जड़ नहीं काटी जायेगी तबतक इन ऊपरके सब उपायोंसे रोगीको जरा भी चैन नहीं मिलनेका। खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका उचित प्रतिकार और जनताके चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की गई योजनाके अनुसार स्वराज्यकी मांग पूरी करना, ये बातें यदि छोड़ दी जायें तो भले ही दमन किसी प्रकारके निपटारेका एक आसान और सीधा साधन दिखाई दे। हाँ, मैं बिलकुल मानता हूँ कि कोई भी वाइसराय परिस्थितिको भाग्यके भरोसे छोड़कर नहीं बैठ सकता। मैं मानता हूँ कि जिस बातके लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू किया गया है उसे मिटानेको यदि वे तैयार नहीं हैं तो उन्हें सशस्त्र विद्रोहकी तरह ही सविनय अवज्ञाको भी दबाना ही होगा। सत्यके कोरे सिद्धान्तका तबतक कुछ भी महत्त्व नहीं रहता जबतक वह, उन मनुष्योंमें जो उसकी हिमायतके लिए अपने प्राणोंको होम करनेको तैयार रहते हैं, मूर्त रूप नहीं ग्रहण कर लेता। हमपर होनेवाले अन्याय और अत्याचार दुनियामें अभीतक इसीलिए टिके हुए हैं कि हम उस सत्यके सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं। अपने इस दावेको सिद्ध करनेका एक ही मार्ग है। वह यह कि हम अपने जिम्मे डाले गये कामके लिए हर तरहके कष्ट सहनेको तैयार रहें। और हम तो इस उच्च कर्त्तव्यकी साधनाकी कई मंजिलें तय भी कर चुके हैं। किन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि हम इस बातका कोई निर्णायक प्रमाण अभी दे पाये हैं। यदि कैदमें कोड़ोंकी मार पड़े और दूसरी अनेक प्रकारकी यातनाएँ सहनी पड़ें, तो कौन कह सकता है कि हम जेलसे भी न घबड़ा उठेंगे? कौन जानता है कि फाँसीपर लटक जानेके लिए हममें से कितने आदमी तैयार हैं?

इसलिए मेरा तो खयाल है कि ऐसे सम्मेलनसे जिसमें सरकारके भी प्रतिनिधि हों, लाभ तभी होगा जब वह जी भरकर असहयोगियोंकी संख्या और उनकी क्षमताकी जाँच कर चुकेगी और उनकी कड़ी परीक्षा ले चुकेगी।

किन्तु असहयोग लोकमत तैयार करनेका एक उपाय है। इसलिए यदि सहयोगी और असहयोगियोंका सम्मेलन हो तो मैं जरूर उसका स्वागत करूँगा। मुझे यकीन है कि वे भी खिलाफत और पंजाबके अन्यायों और अत्याचारोंका प्रतिकार चाहते हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि जैसे असहयोगी देशके लिए स्वतन्त्रता चाहते हैं, वैसे ही वे भी चाहते हैं। सरकारकी इस दमन-नीतिकी भर्त्सना करीब-करीब सभी नरमदलीय समाचारपत्रोंने की है। यह देखकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। इससे कमकी मैंने आशा भी नहीं की थी। मैं कह सकता हूँ कि यदि असहयोगी आत्मसंयमी बने रहें, हिंसासे दूर रहें, अपने विरोधियोंके प्रति दुर्वचनोंका प्रयोग न करें, तो हर सहयोगी असहयोगी हुए बिना न रहेगा। यही क्यों, अंग्रेज भाई भी असहयोगियोंके दलमें आ मिलेंगे और सरकारको हमारी शरण लेनी पड़ेगी; वह इसके सिवा और कर ही क्या सकती है। असहयोगकी इस विधिका परिणाम यही हो सकता है। इसी उद्देश्यसे वह आरम्भ भी किया गया है और उम्मीद है कि यही होगा भी। यह विधि टकरावकी सम्भावनाको कमसे-कम कर देती है और यदि आज उसका परिणाम विपरीत दिखाई दे रहा हो, तो उसका कारण यही है कि असहयोगी सिर्फ अभी-अभी यह मानने लगे हैं कि केवल कार्यमें ही अहिंसा होना काफी नहीं, वाणी और विचारोंका भी अहिंसात्मक होना उतना ही आवश्यक है। असहयोगीके लिए शत्रुके प्रति भी बुरे भावोंको दिलमें आने देना अनुचित है। हमारे विरोधियोंको सबसे भारी आशंका तो यही है कि इस अहिंसाके आचरणमें अनियन्त्रित हिंसा भड़क उठनेकी सम्भावना छिपी हुई है। उन्हें हमारी, अर्थात् हममें से अधिकतर लोगोंकी, हृदयकी शुद्धिपर विश्वास नहीं है। उन्हें तो उसमें अव्यवस्था और सर्वनाशके सिवा कुछ दिखाई ही नहीं देता। इसलिए यह दमन तो एक तरहसे हमें ईश्वरीय वरदानके रूपमें मिला है। यह उनको और हमको दोनोंको दिखा रहा है कि जनतापर हमारा इतना असर हो गया है कि उत्तेजित कर देने लायक परिस्थितिमें भी हम उसे शान्त रख सकते हैं। किन्तु हमारे इस संयमकी अभी इतने अधिक समयतक परीक्षा नहीं ली गई है जिससे हम यह समझ लें कि यह शान्ति हमेशा ऐसी ही रह सकेगी। अब भी हमारे दिलमें धुकधुकी लगी ही रहती है। सियालकोटके लोगोंने आखिर यह रास्ता छोड़ ही दिया — फिर यह चाहे जितने छोटे पैमानेपर ही क्यों न हो। ऐसी छोटी-छोटी कितनी ही गलतियाँ हमसे हो चुकी हैं, जिनसे मालूम होता है कि हमारे अन्दर अभी सुरक्षाका भाव इस हदतक पैदा नहीं हुआ है जिससे बाहरी आदमीके हृदयपर भी उसका प्रभाव पड़े और उसके चित्तमें इस आन्दोलनके प्रति विश्वास और श्रद्धा उत्पन्न हो जाये। इसलिए मैं निष्पक्षताके आधारपर या असहयोगियोंकी सदाशयता सिद्ध करनेके लिए सहयोगियोंसे मुलाकात करनेके हर अवसरका स्वागत करूँगा। सरकारने खुद असहयोगको ही दबानेका इरादा जाहिर करके अपने सच्चे स्वरूपको अधिक स्पष्टतः

प्रकट कर दिया है। जबतक यह हिंसाके तथा उससे सहानुभूति रखनेवालों के या उसके लिए उत्तेजित करनेवालों के दमनकी कोशिश कर रही थी, तबतक तो ठीक था। इसलिए मुझे तो कोई शक ही नहीं है कि सहयोगी भी सरकारके इस पागलपन के — अपने दुःख-दर्द दूर करानेके उद्देश्यसे उठाये गये आन्दोलनको दबानेके इस निरर्थक प्रयत्नके — खिलाफ आवाज उठायेंगे। किन्तु मैं अपने मित्रोंको यह चेतावनी दिये देता हूँ कि जबतक वे यह यकीन नहीं कर लेते कि सरकार सचमुच पश्चात्ताप कर रही है और जनताके दुःखोंके साथ सहानुभूति रख रही है तबतक वे ऐसे सम्मेलनका खयाल न करें। युवराजके स्वागतके बहिष्कार तथा सार्वजनिक सभाएँ करनेके अधिकार अथवा स्वयंसेवक-दल या अन्य संगठनोंके विषयमें कोई सम्मेलन तबतक न किया जाना चाहिए जबतक कि उनका उद्देश्य हिंसा करना न हो। स्वागतका बहिष्कार तो रुक नहीं सकता और तबतक रुकना भी नहीं चाहिए, जबतक कि जनताकी इच्छाएँ, सार्वजनिक सभाएँ तथा संस्थाएँ पद-दलित की जायें और ये तो हमारे ऐसे बुनियादी अधिकार हैं जिनके विषयमें किसी प्रकारकी वार्ता चलानेकी जरूरत ही नहीं। हमें उन अधिकारोंके लिए लड़ना ही होगा।

साथ ही यह भी ध्यान रहे कि असहयोगी अभी उस प्रकारकी सविनय अवज्ञा नहीं कर रहे हैं जैसी कि वे चाहते थे। सार्वजनिक सभाएँ करने तथा शान्तिमय स्वयंसेवक-संगठन बनानेका वे जो आग्रह कर रहे हैं उसे सविनय अवज्ञाके नामसे विभूषित न करना चाहिए। असहयोगी तो अभी सिर्फ बचावमें ही लगे हुए हैं। अभी उन्होंने आक्रामक स्वरूप तो आरम्भ भी नहीं किया है, जो कि पूरी तरहसे अहिंसात्मक वातावरण बन जानेपर वे करनेवाले हैं। सरकारने उन्हें अपनी शक्तिकी परीक्षाका यह मौका देकर उनपर अनुग्रह ही किया है।

२० दिसम्बर

धरना देनेका अधिकार

बम्बईवालों ने शराबकी दूकानोंपर अपना धरना बन्द कर दिया है। यह देखकर सरकारने सोचा होगा कि और तमाम जगहोंपर भी ऐसा ही होगा। लेकिन पूनाने यह दिखला दिया है कि धरना देना हमारा हक है और बिना उचित कारणोंके उसे छोड़ा नहीं जा सकता। वहाँ धरना देनेकी मनाहीका हुक्म निकलते ही 'केसरी' के सम्पादक श्री केलकर[1] लिखते हैं:

> आज सुबह जिला मजिस्ट्रेटको नोटिस दे दिया गया है कि हम फलाँ जगह फलाँ वक्तपर जाकर आज ही आपकी आज्ञा भंग करेंगे। पहली टुकड़ीमें मैं, मेरा पुत्र और सर्वश्री भोपटकर,[2] गोखले[3], परांजपे[4] तथा १५-१६ दूसरे

१. नरसिंह चिन्तामण केलकर (१८७२-१९४७); महाराष्ट्रके राजनीतिक नेता; लेखक और पत्रकार; तिलकके निकटवर्ती साथी।

२. **लोकसंग्रह**के सम्पादक।

३. **मराठा**के सम्पादक।

४. **स्वराज्य**के सम्पादक।

सज्जन रहेंगे। मुझे विश्वास है कि हमारे पीछे और लोग भी टुकड़ियाँ बनाकर आयेंगे। देखें, पूना इस विषयमें क्या कर दिखाता है।

निश्चयके अनुसार वे लोग वहाँ गये और गिरफ्तार भी कर लिये गये। पर सिर्फ नाम लिखकर उन्हें छोड़ दिया गया। उसके पश्चात् एकके-बाद-एक टुकड़ी वहाँ जा रही है और उसी तरह नाम लिखकर छोड़ दी जाती है। निश्चय ही महाराष्ट्र कष्ट-सहनमें कभी पीछे नहीं रह सकता। महाराष्ट्रमें जैसे साहसी और कठिन कार्यकर्त्ता हैं वैसे सारे भारतमें नहीं हैं। देश-भरमें चारों ओर पहली पंक्तिके नेता बड़ेसे-बड़े जोखिम सिरपर ले रहे हैं। यह एक उल्लेखनीय बात है। श्री केलकर तथा उनके साथियोंको तो जेलका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ; परन्तु अजमेरके लोग उनसे अच्छे रहे। वहाँ तो बस मनाहीका हुक्म निकलते ही कार्यकर्त्ता दौड़ पड़े। चुनौतीका स्वागत किया और अपना 'धार्मिक अधिकार' समझकर धरना देने पहुँच गये। पण्डित चाँदकरण शारदा लिखते हैं:

शराबकी तमाम दूकानोंपर स्वराज्य-सेनाके स्वयंसेवक तैनात कर दिये गये। सरकारकी तरफसे भी हर दूकानपर पुलिसके जवान तथा घुड़सवार तैनात किये गये। उन्हें स्वयंसेवकोंको गिरफ्तार कर लेनेका हुक्म भी दे दिया गया था। एक दलके पकड़े जाते ही दूसरा दल वहाँ जा पहुँचा। पुलिसने सिर्फ १७ स्वयंसेवकोंको गिरफ्तार किया। उनपर तुर्त-फुर्त मामला चलाकर, उन्हें पौने पाँच महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी गई।

उन्होंने अपनी सफाई नहीं दी। इसके बाद अजमेरसे गिरफ्तारीकी खबर नहीं आई। जहाँ बिना दंगे-फसादके तथा दूकानदार और शराब पीनेवालों के प्रति दुर्भाव न रखते हुए, धरना दिया जा सकता हो वहाँ तो वह हमारा नैतिक कर्त्तव्य ही है। शराबखोरी बन्द करनेमें इसने जितनी सहायता दी है, उसको कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। अभी उस दिन करमसदके[1] ईसाइयों तथा हिन्दू ढेढ़ोंने मुझसे बड़ी कृतज्ञताके साथ कहा कि आपके धरनेकी बदौलत हमारी शराब पीनेकी आदत छूट गई। बम्बईने धरना देनेका अपना हक कुछ समयके लिए खो दिया है। उसने १७ तारीखको पारसियोंकी शराबकी दूकानें बुरी तरह जला और तोड़-फोड़ डालीं और ईसाइयों और पारसियोंके साथ बड़ी बदसलूकी की। तीन रोजतक बराबर यही हिंसा-काण्ड होता रहा। उसीका यह फल है। मैं आशा करता हूँ कि जहाँ-कहीं धरना देनेकी तजवीज की गई हो वहाँ यह काम ऐसे भाई-बहनोंके सिपुर्द किया गया होगा जिनके चाल-चलनपर कोई अँगुली नहीं उठा सकता तथा वे अपना काम बिलकुल मित्र-भावसे करते होंगे। हम पशुबलका प्रयोग करके लोगोंको नीतिवान बनाना नहीं चाहते।

महाराष्ट्रकी पार्टीका अपमान

श्री केलकरके पत्रके सम्बन्धमें यह कहना बहुत जरूरी है कि जो नेता अकोला गये थे उनकी जिस प्रकारकी आलोचना की गई है वह बहुत अनुचित थी। श्री केलकरके जिस पत्रसे मैंने उद्धरण दिये हैं, उसमें कहा गया है:

१. गांधीजी १७ दिसम्बरको करमसदमें थे।

समाप्त करनेसे पूर्व मैं उस अत्यन्त निर्दयतापूर्ण आरोपका खण्डन करना चाहता हूँ जो मुझपर और सम्मेलनपर लगाया गया है। व्यक्तिगत रूपसे मैं तो दर्शक-मात्र था और सिर्फ बहसके नियामकका फर्ज निभा रहा था। वहाँ जितने भी प्रस्ताव स्वीकार किये गये अथवा ठुकराये गये उनमें एक भी ऐसा नहीं था जिसकी शब्दावलीके साथ मेरी पूर्ण सहमति हो। मैं लोगोंसे एक ऐसा संशोधन मनवानेकी कोशिश कर रहा था जो सबको स्वीकार हो सके, लेकिन अकोला सम्मेलनके बारेमें कोई कुछ भी क्यों न कहे, आपको तो कमसे-कम इस बातपर विश्वास करना चाहिए कि यह सम्मेलन बुलानेका निश्चय जुलाई अथवा अगस्तमें ही हो चुका था और इसीलिए साधारण रूपसे ही यह इस समय हुआ था, और यह कहना बड़ी ही निर्दयताकी बात होगी कि हम इसलिए सम्मेलनमें शरीक हुए कि दमन-चक्रके कारण नेताओंकी संख्या घटती देखकर अपने विचार प्रकट करनेका, अथवा उससे भी जघन्य बात यह होगी कि अपनी जान बचानेका हम इसे अच्छा अवसर समझते थे।

श्री केलकरके कथनके एक-एक शब्दका मैं हार्दिक समर्थन करता हूँ। याद रहे, यह पत्र उस समय लिखा गया था जब वे यह समझते थे कि उनको गिरफ्तार किया जानेवाला है।

खादी बेचना

कलकत्तेमें श्रीमती बासन्तीदेवी दास[1] तथा उर्मिलादेवीने[2] सड़कोंपर और घर-घर जाकर खादी बेचना आरम्भ किया है। दूसरे प्रान्तोंमें भी तुरन्त ही इसका अनुकरण किया गया है। श्रीमती सरलादेवी चौधरानी लिखती हैं:

> मैं अभी शहरमें जाकर यह तजवीज करनेवाली हूँ कि ४० स्त्रियाँ खादी बेचनेके लिए भेजी जायें। दो-दो स्त्रियोंका एक दल रहे और हर दलके साथ दो-दो स्वयंसेवक हों। इस तरह ये २० दल २० भिन्न-भिन्न रास्तोंपर भेजे जायें।

मद्रासमें भी ऐसी ही व्यवस्था हो रही है। मेरी रायमें सूत कातनेके अलावा स्त्रियोंके लिए इससे अच्छा कोई धन्धा नहीं कि खादीकी बिक्री करके स्वयं उसका प्रचार करें। मिथ्याभिमान तथा संकोचशीलताको दूर करनेकी तैयारीका यह बहुत बढ़िया साधन है। और यह पुलिसको भी बिना खटकेकी खासी चुनौती है कि यदि उसकी हिम्मत हो तो गिरफ्तार कर ले। परन्तु यह रिवाज प्रचलित तभी हो सकता है जब अच्छे-अच्छे घरोंकी प्रौढ़ स्त्रियाँ इसका सूत्र-संचालन करें। किसी प्रकारके दिखावेकी जरूरत नहीं। यह कहनेकी तो आवश्यकता ही नहीं है कि बेजा दबाव डाल-कर उनसे खादी न खरीदवाई जाये। लोगोंको तंग करनेकी जरूरत नहीं है। हमारा

१. चित्तरंजन दासकी पत्नी।
२. बासन्तीदेवीकी बहन।

काम तो सिर्फ इतना ही है कि हम उनके दरवाजे यह उपयोगी राष्ट्रीय कपड़ा ले जायें — उनकी मर्जी हो तो खरीदें, न मर्जी हो, न सही।

योग्य पतिकी योग्य पत्नी

> सूचित करते हुए हर्ष है कि मेरे पति आज सुबह गिरफ्तार। जाते हुए उनका दिल खुशीसे भरा था, यह बात आपको तारसे बतानेको कह गये। उम्मीद है मैं उनका काम अपनी बिसात-भर जारी रखूँगी। अलीगढ़ पुरअमन लेकिन पूरी तौरपर तैयार है। खुर्शीद ख्वाजा।

पतिके जेल जानेके वक्त इतना शानदार सन्देश भेजनेके लिए मैं खुर्शीद बेगमको मुबारकबाद भेजता हूँ। ख्वाजा साहब[1] एक बैरिस्टर हैं जो सुख-वैभवकी गोदमें पले और बड़े हुए। मैंने उनके दोनों रूप देखे हैं। एक समय था जब वे बड़ी शौकीन तबीयतके आदमी हुआ करते थे। उन्हें अपनी सुन्दरताका अहसास था जिसे वे अच्छेसे-अच्छे यूरोपीय ढंगके कपड़ोंसे और भी निखारनेकी कोशिश किया करते थे। और आज मैं उन्हें लगभग फकीरीके बानेमें देखता हूँ। सबसे बहादुर और सबसे सच्चे मुसलमानोंमें उनकी गिनती है। वे भारतको भी उतना ही प्यार करते हैं जितना कि इस्लामको। मौलाना मुहम्मद अलीने जब देखा कि वे स्थायी तौरपर नेशनल मुस्लिम यूनिवर्सिटीमें नहीं रह पायेंगे, तब उनको ख्वाजा साहब ही एक ऐसे आदमी दिखे जो उनकी जगह ले सकते थे। ख्वाजा साहबने विश्वविद्यालयकी सेवा करनेकी खातिर पटनामें अपनी दिन-दिन और ज्यादा चमकती वकालतको लात मार दी। मैं जानता हूँ कि ख्वाजा साहब अपने ढंगसे अहिंसामें यकीन करते हैं, लेकिन वे कभी न टूटनेवाली हिम्मतमें भी यकीन करते हैं और जान देनेका हुनर भी जानते हैं। रौलट अधिनियम लागू होनेसे पहलेके दिनोंमें जब अली भाइयोंकी रिहाईके लिए मैं अपने कुछ मुसलमान दोस्तोंके साथ सत्याग्रह आरम्भ करनेका विचार कर रहा था[2] तब मैंने ख्वाजा साहबसे पूछा था कि सत्याग्रहमें कितने ऐसे मुसलमानोंके शरीक होनेकी उम्मीद की जाये जो किसीकी जान लिये बिना अपनी जान देनेको तैयार हो जायेंगे। उन्होंने उसी दम कहा था :

> शुएब[3] यकीनन उनमें से एक है। वह हमारा हीरो है। और शायद मैं भी आधा शुएब हूँ। अफसोस कि इससे ज्यादाके नाम मैं आपको नहीं गिना सकता।

जिक्र १९१७ या १९१८ का है, लेकिन ये चन्द जुमले कहते वक्त उनके सुन्दर मुखपर मैंने जिस ईमानदारी, सचाई और विनयकी छाप देखी थी वह आज भी ताजा है। वक्त काफी बदल चुका है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ख्वाजा साहबके व्यक्तित्वमें कहीं कोई कोर-कसर नहीं। उनकी उम्मीदके मुताबिक बहुत सारे मुसलमान

१. ख्वाजा अब्दुल मजीद, उन दिनों अलीगढ़ विश्वविद्यालयके उप-कुलपति।
२. देखिए खण्ड-१५।
३. शुएब कुरैशी, न्यू एराके सम्पादक।

अपनी वहादुरीका सबूत दे चुके हैं। और हमें कुछ भी अजव नहीं लगता जव उनकी पत्नी गर्वके साथ कहती हैं: "उम्मीद है मैं उनका काम अपनी विसात-भर जारी रखूंगी।" पाठकोंको इसपर अविश्वास नहीं करना चाहिए। अलीगढ़के विद्यार्थियोंको मैं जानता हूँ। वे लोग खुर्शीद वेगमके इशारेपर चलनेके लिए पूरे उत्साहसे तैयार रहेंगे जैसा कि शायद उन्होंने ख्वाजा साहवके लिए नहीं किया। जव एक पाक दिल औरत अपनी पवित्रतामें वहादुरी और मातृत्वके गुण मिला देती है, तव उसमें एक ऐसी चुम्वक-शक्ति पैदा हो जाती है जैसी कि किसी पुरुषमें सम्भव नहीं है। डा० मुहम्मद आलम विद्यार्थियोंके दिमागोंका खयाल रखेंगे पर वेगम साहिवा उनके दिलोंको प्रभावित करके उन्हें खरे सोनेमें ढाल देंगी। और इतना ही नहीं, चूंकि इन विद्यार्थियोंको कताईमें हुनरमन्द वनना है, इसलिए मुझे पूरा यकीन है कि खुर्शीद वेगम इस हुनरको सिखानेमें अपने पति और डा० मुहम्मद आलम दोनोंके मुकावले कहीं ज्यादा कामयाव सावित होंगी। वेगम मुहम्मद अलीने जितना रुपया इकट्ठा कर लिया है उतना शायद उनके शौहर न कर पाते। मैं अपनी राय जाहिर कर ही चुका हूँ कि वे मौलानासे ज्यादा अच्छा भाषण करती हैं। मैं पाठकोंको राजकी एक वात वतलाता हूँ। वंगालको सक्रिय वनानेमें सवसे वड़ा हाथ श्रीमती वासन्तीदेवी और उर्मिलादेवीका ही है। मेरे सामने एक पत्र पड़ा है जिससे पता चलता है कि इन तीनों महिलाओंके वंगाल जाने और उनके गिरफ्तार होनेकी वातने वंगालकी जनताको जितना आन्दोलित किया है उतना देशवन्धु दासके महान् वलिदानने भी नहीं किया। और कुछ हो भी नहीं सकता था। इसलिए कि स्त्री तो एक मूर्तिमान वलिदान है। वह जव सच्ची भावनासे किसी कामका वीड़ा उठाती है तो पहाड़ोंको भी हिला देती है। हमने अपने देशमें स्त्रियोंके साथ दुर्व्यवहार किया है। जितनी वन सकी हमने उनकी उपेक्षा ही की है। लेकिन ईश्वरकी कृपासे अव चरखा उनकी काया-पलट कर रहा है। और मुझे पूरा भरोसा है कि जव सभी नेता और सरकारके सभी विश्वासपात्र लोग जेलोंमें डाल दिये जायेंगे, तव भारतीय महिलाएँ पुरुषोंका वाकी वचा हुआ काम पुरुषोंसे कहीं अधिक शालीनताके साथ पूरा कर दिखायेंगी।

वावू भगवानदास[1]

जव आचार्य कृपलानी और उनके विद्यार्थी पकड़े गये, मैंने अपने मित्रोंसे कहा था, "क्या ही अच्छा हो यदि वावू भगवानदास गिरफ्तार हो जायें। आखिर आचार्य कृपलानी तो वनारसके रहनेवाले नहीं हैं। लेकिन वावू भगवानदास नहीं पकड़े जायेंगे।" उस समय मुझे पता नहीं था कि वावू भगवानदास ही उस पुस्तिकाके रचयिता थे जिसे आचार्य कृपलानी वेच रहे थे। पुस्तक लिखनेमें लेखकने वड़ी सावधानीसे काम लिया था। दूसरे ही दिन उनके पुत्रका शुभ संवाद मुझे मिला कि वावूजी पकड़े गये।[2] गिरफ्तारी-पर वे वड़े प्रसन्न थे। वावू भगवानदास असहयोगी हैं। ऐसे असहयोगी जो मनसा,

१. १८६९-१९५९; प्रसिद्ध विचारक और दार्शनिक; भारतरत्न; इन्होंने काशी विद्यापीठकी स्थापनामें प्रमुख भाग लिया था।

२. देखिए "तार: श्रीप्रकाशको", १५-१२-१९२१ या उसके पश्चात्की पादटिप्पणी १।

वाचा, कर्मणा हमेशा हिंसासे दूर रहते हैं। वे संस्कृत-साहित्यके अच्छे पण्डित हैं। वे बड़े ही धर्मनिष्ठ हैं। जमींदार हैं। श्रीमती बेसेंट[1] यदि सेंट्रल हिन्दू कालेजकी जन्मदात्री हैं तो बाबू भगवानदास उसके निर्माता हैं। अतएव उनकी गिरफ्तारी एक ऐसा बलिदान है जो ईश्वरको रुचिकर हुए बिना नहीं रह सकता। और वह पतित-पावनी विश्वनाथपुरी इससे अच्छा बलिदान और क्या करती? अखबार पढ़नेवाले लोग जानते ही होंगे कि बाबू भगवानदास कांग्रेस द्वारा स्वराज्य-योजना तैयार करानेका प्रयत्न कर रहे थे। उसके लिए वे स्वयं भी घोर परिश्रम कर रहे थे। उन्होंने मुझे कितने ही सूचक प्रश्नोंकी एक लम्बी सूची भेजी थी, जिसपर मैं वर्तमान घटनाओंके कारण अभीतक कोई ध्यान नहीं दे पाया। हिंसा न होने देनेकी वे बड़ी चिन्ता रखते थे। यदि उनकी गिरफ्तारीसे भी सरकारकी हिंसा-काण्डको न्यौता देनेकी उत्सुकताका पता न चलता हो तो मैं नहीं कह सकता कि किस बातसे चलेगा। मनुष्यके लिए यह बड़े भाग्यकी बात है जो ईश्वर उसकी योजनाओंको अक्सर उलट-पलट देता है। और आजकल जो नित नई घटनाएँ हो रही हैं उनसे तो यह अधिकाधिक निश्चित होता जाता है कि भगवान् इस सरकारकी तमाम योजनाओंको उलट रहा है। इतना होते हुए भी लोग शान्त बने हुए हैं।

मार्केका प्रमाण

अमृतसरके लाला गिरधारीलालने[2] वस्तु-स्थितिके बारेमें बड़े मार्केका प्रमाण प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है:[3]

> **कल १४ तारीखको पंजाब राष्ट्रीय स्वयंसेवक दलके २१ स्वयंसेवक खादीका प्रचार करते हुए फरीद चौकसे जलूस बनाकर हॉल बाजार होकर गुजरे। डी० एस० पी० श्री बीटी और सब-इंस्पेक्टर मो० फकीर हुसैनने स्वयंसेवकोंसे तितर-बितर हो जानेको कहा। स्वयंसेवकोंने तितर-बितर होनेसे इनकार कर दिया और कहा कि वे गिरफ्तारीके लिए तैयार हैं। इसपर श्री बीटी और मो० फकीर हुसैनने बड़ी बेरहमीसे स्वयंसेवकोंपर बेंत और हंटर बरसाने शुरू कर दिये। फकीर हुसैनने एक मुसलमान स्वयंसेवककी दाढ़ी पकड़कर उसे बेभावकी मार मारी। . . . स्वयंसेवकोंके चेहरों और शरीरपर सख्त चोटोंके निशान हैं। सब-इंस्पेक्टरने खिलाफत स्वयंसेवकोंको गन्दी-गन्दी गालियाँ दीं और जनता मौन और शान्तिपूर्वक इस कायरतापूर्ण हमलेको सहन करती रही। स्वयंसेवकोंने सिर्फ यही कहा कि यदि पुलिसमें साहस हो तो या तो उन्हें गिरफ्तार किया जाये अथवा (स्वयंसेवकोंको) गोली मार दी जाये। . . . इन बहादुर और**

१. एनी बेसेंट (१८४७-१९३३); थियोसाफिकल सोसाइटीकी अध्यक्षा; १९१७ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी अध्यक्षा। बनारसके केन्द्रीय हिन्दू कालेजकी संस्थापिका।

२. लाला गिरधारीलाल; अध्यक्ष, अमृतसर जिला कांग्रेस कमेटी।

३. यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

खूनसे लथपथ स्वयंसेवकोंने जरा आगे जाकर फिर स्वदेशीका प्रचार शुरू कर दिया। . . .

एक पत्रमें[1] उन्होंने घटनाका ब्योरा दिया है जिसमें से मैं निम्नलिखित उद्धरण ले रहा हूँ:

> दृश्य बड़ा उत्तेजक था। मैं सबसे ज्यादा तारीफ इस बातकी करूँगा कि मार और हंटरकी चोटसे शरीर जगह-जगह कट जानेके कारण घोर पीड़ा होनेके बावजूद भी स्वयंसेवक अदम्य भावसे और मुस्कराते चेहरोंसे फिर जलूस बनाकर चल पड़े। . . .
>
> मैंने डिप्टी कमिश्नरसे टेलीफोनपर पूछा कि किसके आदेशसे और किस कानूनके अधीन स्वयंसेवकोंको इतनी बशर्मीसे मारा गया था। उसने कहा कि बुरी तरह पीटे जानेकी उसे कोई जानकारी नहीं है। डिप्टी कमिश्नरका कहना था कि उसने स्वयंसेवकोंको तितर-बितर करनेका आदेश दिया था क्योंकि सरकारने राष्ट्रीय स्वयंसेवक दलको भी अवैध घोषित कर दिया था। उसने आगे बताया कि उसका आदेश था कि कमसे-कम बल-प्रयोग किया जाये। जब मैंने उसे बताया कि कमसे-कम नहीं बल्कि ज्यादासे-ज्यादा बल-प्रयोग किया गया है, तो उसने कहा कि वह पूछताछ करेगा। मैंने उससे पूछा कि उसने कानून लागू क्यों नहीं किया और स्वयंसेवकोंको गिरफ्तार क्यों नहीं किया गया। उसने जवाब दिया कि उसे दूसरा ही आदेश है। वे साधारण स्वयंसेवकोंको गिरफ्तार नहीं करना चाहते।
>
> लाहौरमें भी १३ तारीखको स्वयंसेवकोंके साथ इसी प्रकारका व्यवहार किया गया। . . . उनकी पीठोंपर पुलिस बेटनोंके कुन्दे मारे गये। बादमें रातको दो बजे स्वयंसेवकोंको जत्थोंमें शहरसे एक या दो मील दूर ले जाकर छोड़ दिया गया। उनके कोट उतार लिये गये। पंजाबकी इस कड़ाकेकी सर्दीमें इससे ज्यादा अमानुषिक काम और कुछ नहीं हो सकता। . . . मुझे पता चला है कि पंजाब सरकारने सब जिला-अधिकारियोंको परिपत्र भेजकर कहा है कि स्वयंसेवकोंके जलूस जबरदस्ती तितर-बितर कर दिये जायें; उन्हें गिरफ्तार न किया जाये। ऐसा केवल उन्हें नीचा दिखाने और हिंसाके लिए भड़कानेके विचारसे किया जाता है। . . . अबतक तो जनताने शान्ति कायम रखी है।

पंजाबी जिस बहादुरीसे इन कष्टोंका सामना कर रहे हैं ईश्वर उन्हें जल्दी ही उसका फल देगा। अगर जेल जानेके लिए लोग इसी प्रकार आगे आते रहे और सरकारी जेलोंमें उतने कैदियोंके लिए स्थान न रहा तो हमें आशा करनी चाहिए कि पंजाबमें आज जो हो रहा है वह भारत-भरमें होने लगेगा। जान देने और लेनेवाले

१. यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

युद्धमें भी हमें बहुतसे लोगोंके जीवनकी कुर्बानी देनी पड़ती। अब जब कि हमें केवल जान देनी है, तो मुझे इस बातमें जरा भी सन्देह नहीं है कि कुर्बानियोंकी संख्या उतनी न होगी और न हो सकती है जितनी जान देने और जान लेनेवाली लड़ाइयोंमें होती है। यह एक बड़े ही पवित्र कृत्यका नितान्त व्यावसायिक पहलू है। फिर भी यह बिलकुल सच्चा पहलू है और मुझे यह समझ लेनेमें कोई हर्ज नहीं लगता कि अपनेको बदला लेनेसे रोककर हम अपने-आपको इस बातके लिए जिम्मेदार बना लेते हैं कि कमसे-कम मनुष्योंको कष्ट उठाना पड़े।

निष्कलुष बलिदान

> **पुलिसने अभी मुझे धारा १२४ (क)के अधीन गिरफ्तार किया है। मातृभूमिकी इस प्रकार विनम्र सेवाका सुअवसर प्रदान करनेके लिए सर्वशक्तिमान्को अनेक धन्यवाद। मेरे मनमें किसी प्रकारका द्वेष अथवा अन्य कोई भाव नहीं, बल्कि यही एक विचार है कि भारतकी स्वतन्त्रताके लिए मैंने ईमानदारी और दृढ़तापूर्वक अपने कर्त्तव्यका निर्वाह किया है। मुझे विश्वास है कि जेलकी दीवारोंके भीतर रहकर मैं उतने ही उपयोगी ढंगसे और प्रसन्नभावसे देशकी सेवा कर सकूँगा जितनेसे इनके बाहर रहकर करनेका प्रयत्न करता था।**

यह तार जयरामदासका[1] है। उसी दिन मुझे उनका पत्र भी मिला जिससे श्री वेसूमल तेजूमल, मौलवी फतेह मुहम्मद और मौलवी सैयद अब्बास, जो तीनों ही बड़े प्रमुख कार्यकर्त्ता हैं, की गिरफ्तारियोंका पता चला। इन लोगोंकी गिरफ्तारियोंसे सिंधमें हुई गिरफ्तारियोंकी कुल संख्या ९५ हो गई है। जयरामदासके त्यागको मैं बिलकुल निष्कलुष समझता हूँ। मुझे पता है कि विचारोंमें भी उन्होंने किसीका बुरा नहीं चाहा। यह ऐसी बात है जो केवल थोड़ेसे लोगोंके बारेमें कही जा सकती है। वे कठोर सत्यव्रती और कामके पीछे अपनेको मिटा डालनेवाले कार्यकर्त्ता हैं। सरकारको यह जानना चाहिए कि जयरामदास कभी हिंसाको प्रोत्साहन नहीं देंगे, न हिंसाकी बात सोचेंगे। उन्होंने सदा स्वेच्छासे देशके कानूनोंका पालन किया है। इसीलिए वे सविनय अवज्ञाका अर्थ भली प्रकार समझते हैं। लेकिन जेलमें डाल देनेके अतिरिक्त शासनके लिए जयरामदासका और कोई उपयोग नहीं है। इसी प्रकारकी गिरफ्तारियाँ तो धार्मिक अर्थोंमें स्वराज्यके दिनको अधिक निकट लाती हैं।

दिल्लीकी कारगुजारी

दिल्ली जो कुर्बानियाँ दे रही है वे भी शान्तिके हितमें ही हैं। यह दिखानेके लिए कि शान्तिपूर्ण वातावरण बनाये रखनेके लिए दिल्लीमें कितनी असाधारण साव-

१. जयरामदास दौलतराम (जन्म १८९२); सिन्धके कांग्रेसी नेता; १९२० में असहयोग आन्दोलनमें शरीक हुए; भारत सरकारके खाद्य और कृषि-मन्त्री, असमके गवर्नर, सिन्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सचिव।

धानीसे काम लिया जा रहा है मैं यहाँ डा० अन्सारीके[1] पत्रसे निम्नलिखित उद्धरण[2] दे रहा हूँ :

१४ तारीखको एक भी स्वयंसेवक नहीं भेजा गया। १५ तारीखको सवेरे ४३ स्वयंसेवक गिरफ्तारीके लिए . . . डिप्टी कमिश्नरको भेजे गये पत्रमें लिखे स्थानपर पहुँचे। . . .

१६ तारीखको ४० और ४६ स्वयंसेवकोंके दो जत्थे क्रमशः दरियागंज पुलिस चौकी और सब्जीमण्डी पुलिस चौकीपर गये, लेकिन बार-बार अनुरोध करनेपर भी उन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया।

१६ तारीखको अधिकारियोंने शक्तिका असाधारण प्रदर्शन किया। घुड़सवार पुलिस, कुछ सार्जेंट, डिप्टी कमिश्नर, एस० पी०, डी० एस० पी०, एक मजिस्ट्रेट और अनेक भारतीय पुलिस अधिकारी भी मौजूद थे। सभी बैंकोंपर पुलिसका पहरा था और जगह-जगह पुलिसके जवान तैनात थे। पुलिसका भारी जमाव देखकर जैसे भीड़ लग जाती है, वैसे ही कोतवालीके सामने भी भीड़ जमा हो गई, लेकिन सादे लिबासमें हमारे लोग उन्हें हटाते जाते थे और शान्ति रख रहे थे। लेकिन कुछ सार्जेंट भीड़को हटानेमें अत्यधिक उग्र हो गये और चाबुक चलाने लगे। भारतीय पुलिसने तो मार्केका संयम दिखाया, लेकिन सार्जेन्टोंके जनतापर हमलेसे कई लोगोंको गम्भीर चोटें आईं।

इस हिंसात्मक हमलेके बावजूद लोगोंने बड़े साहसका परिचय दिया और शान्त बने रहे। उन्होंने बदलेमें हमला नहीं किया।

हमें पता चला है कि शक्तिके इतने उग्र प्रदर्शनका कारण यह झूठी अफवाह थी कि हकीम अजमल खाँ साहब[3] १६ तारीखको एक हजार स्वयंसेवकोंका जत्था लेकर निकलनेवाले हैं।

भविष्यके लिए अपनी योजनाओंमें हमने परिवर्तन कर दिया है। और अब हम स्वयंसेवकोंसे चरखे बाँटने, अलग-अलग स्थानोंसे सूत जमा करने, खादी तैयार करने और बेचने आदिका उनका सामान्य काम करायेंगे।

स्वयंसेवकोंको गिरफ्तार करनेसे इनकार कर देना इस बातका साफ सबूत है कि हमारी नैतिक विजय हो गई है, लेकिन हम चुप बैठनेवाले नहीं हैं। शहरमें प्रत्येक वयस्क पुरुषको राष्ट्रीय स्वयंसेवक दलमें भरती करनेके लिए जोरदार आन्दोलन चलाया जा रहा है। हमें आशा है कि जल्दी ही प्रत्येक

१. मुख्तार अहमद अन्सारी (१८८०-१९३६); चिकित्सक और राजनीतिज्ञ; अध्यक्ष भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, १९२७-२८।

२. यहाँ कुछ अंश ही उद्धृत किये जा रहे हैं।

३. १८६५-१९२७; हकीम और राजनीतिज्ञ; अध्यक्ष भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, १९२१; खिलाफत आन्दोलनके प्रमुख नेता।

> दुकानदार और उसके सहायक, प्रत्येक ताँगेवाला, प्रत्येक कुली और गाड़ीवान, यानी वास्तवमें दिल्लीका प्रत्येक निवासी अपना रोजमर्राका काम करते समय भी राष्ट्रीय स्वयंसेवक दलकी स्वदेशी वर्दी पहने दिखाई देने लगेगा।

इस पत्रसे जाहिर है कि अधिकारियोंकी गुण्डागर्दीका सामना करते हुए कितनी धार्मिक श्रद्धाके भावसे वे यह आन्दोलन चला रहे हैं। स्पष्ट है कि लाहौर और अमृतसरकी छूत फैलती जा रही है। उत्तरमें अमृतसर और लाहौर तथा अब दिल्लीसे अमन-चैनके पहरेदारोंके अकारण हमलों और पूर्वमें कलकत्तेसे इसी प्रकारके मनमाने व्यवहारकी खबरें शान्त-स्वभाव जनताके लिए असह्य होती जा रही हैं। क्या इस धार्मिक श्रद्धा-भावको छोड़कर दूसरी कोई चीज भारतकी जनताको इतना शान्त बनाये रख सकती है?

उल्लेखनीय शपथ

दिल्लीमें शान्ति कायम रखनेका काम कितने सम्पूर्ण ढंगसे किया जा रहा है यह दिखानेके लिए मैं श्री आसफअलीके[1] उस पत्रमें ली गई वह अनोखी शपथ नीचे उद्धृत कर रहा हूँ जो उन्होंने बावन अन्य लोगोंके साथ गिरफ्तार होनेके लिए जाते समय लिखा था :

> खुदाको हाजिर-नाजिर जानकर मैं यह ऐलान करता हूँ कि (१) पुर-अमन तरीकोंसे स्वराज्य हासिल करना, (२) हिन्दुस्तानकी अलग-अलग कौमों और मजहबोंके बीच एका और भाईचारा कायम करना, (३) किसी तबके या कौमको हकीर या अछूत न मानना, (४) अपने मुल्ककी इज्जतके लिए और उसके हकमें जानोमाल न्योछावर करना, (५) मुल्कमें ही हाथ-कता, हाथ-बुना कपड़ा पहनना, (६) हीला-हवाला किये बिना अधिकारियोंका हुक्म मानना, (७) और जबतक मुझे दलसे अलग न किया जाये (अथवा जबतक कांग्रेस इस नीति-पर कायम रहे) खुद अहिंसाका पालन करना और अहिंसाका पालन करनेके लिए दूसरोंको राजी करना मेरा पाक फर्ज होगा; और (८) अन्तमें मैं यह अहद करता हूँ कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक दलके सिलसिलेमें जितनी भी परेशानियाँ और मुसीबतें आयेंगी, मैं खुशी-खुशी उनका सामना करूँगा और न तो मैं और न मेरे आश्रित किसी तरहका हर्जाना पानेकी उम्मीद करेंगे।

द्रविड़ देशका अंशदान

मद्रास और आन्ध्र-देश शनैः-शनैः परन्तु जमे कदमों आगे बढ़ रहे हैं। कोई ताज्जुब नहीं यदि द्रविड़ लोग बंगालकी बराबरीपर आ जायें। बंगालमें अभीतक १,५०० लोग जेल जा चुके हैं। द्रविड़ देशमें भी, मद्यपान-निषेधके सम्बन्धमें, अकेले

१. १८८८-१९५३; बैरिस्टर और राष्ट्रवादी मुस्लिम राजनीतिज्ञ; खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया। अमेरिकामें भारतके राजदूत।

इरोडने बहुत-कुछ कर दिखाया है। इसके पुरस्कार स्वरूप श्री रामस्वामी नायकरको[1] एक मासकी सादी कैदकी सजा दी गई है। इस छोटेसे मुकामपर पिछले पन्द्रह दिनोंमें ३९ आदमियोंको सजाएँ दी जा चुकी हैं और अब श्रीमती नायकर तथा श्री नायकरकी बहनने धरना देनेपर कमर कसी है। दण्डविधि संशोधन अधिनियम अभी हालमें वहाँ जारी किया गया है। मद्रासके गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डनने[2] अपनी नीतिका खुलासा कर दिया है। सर हरकोर्ट बटलरकी[3] तरह वे भी कानून और व्यवस्थाके प्रति आदरकी रक्षा करना चाहते हैं। अतएव जहाँ अभी केवल मन्द वायुके झोके आते हुए दिखाई देते हैं वहाँ गिरफ्तारियोंका खासा पूरा तूफान उमड़ पड़ना बहुत सम्भव है। श्री राजगोपालाचारी और सुब्रह्मण्य शास्त्रीके मामलेमें सम्मन जारी किये जा चुके हैं। कार्रवाई प्रायः पूरी हो चुकी है। श्री राजगोपालाचारीने अधिकसे-अधिक सजा चाही थी। उनके अस्वस्थ शरीरकी चिन्ताओंका भार उनके मित्रोंसे हटकर कुछ समयके लिए जेलरके सिरपर चला गया। उनकी अस्वस्थतासे उनके साथियोंको हमेशा चिन्ता बनी रहती है। जबसे असहयोगका श्रीगणेश हुआ है तबसे श्री राजगोपालाचारी भी, पण्डित मोतीलालजीकी तरह, अपने शरीरको आराम नहीं लेने देते। अब कांग्रेसके मन्त्रियोंमें अकेले डाक्टर अन्सारी ही बच रहे हैं। लेकिन मुझे इसमें सन्देह नहीं कि उन्हें भी अपनी सुयोग्य सेवाओंके प्रतिफलका इन्तजार बहुत दिनोंतक नहीं करना पड़ेगा। सरकार तो लोगोंको इस अन्तिम घोषणाके लिए तैयार कर रही है कि कांग्रेस और खिलाफत समितियाँ गैर-कानूनी संस्थाएँ हैं। यह घोषणा हो जानेपर जो भी शख्स इन संस्थाओंसे सम्बन्ध रखते हैं वे सब गिरफ्तारीके पात्र हो जायेंगे। और ऐसी घोषणा कोई अजीब बात नहीं होगी। यदि कांग्रेसको अपना शान्तिपूर्ण कार्य जारी रखने दिया गया, तो वह निश्चय ही सरकारकी जड़ें उखाड़ फेंकेगी — यह एक ऐसी परिस्थिति है जिसे सरकार सहज मनसे स्वीकार नहीं कर सकती। कांग्रेस यदि जीवित रहनेके लायक है, तो उसे अपने मार्गसे इंच-भर भी न हटना होगा और यदि वह इस कठिन कसौटीपर खरी उतरी तो इसका कारण सरकारकी कृपा नहीं, बल्कि जनतापर स्वयं उसके अद्वितीय प्रभावका बल होगा। इस दृष्टिसे विचार करें तो सरकारकी इस चुनौतीके बाद कांग्रेसका जीवित रह जाना ही स्वराज्य है।

भाग लेना भी जुर्म

लाहौर पब्लिसिटी बोर्डके एक तारमें कहा गया है कि कांग्रेसके लिए चुने गये प्रतिनिधियोंको हजारा जिलेके डिप्टी कमिश्नरने यह चेतावनी दी है कि "यदि उन्होंने कांग्रेसमें भाग लिया तो सीमान्त अपराध विनियमकी धारा ३६ के अधीन उन्हें जिलेसे निकाल बाहर किया जा सकता है।" मुझे उम्मीद है हजाराके कांग्रेसी प्रतिनिधि इस

१. ई० वी० रामस्वामी नायकर, एक कांग्रेसी जिन्होंने बादमें कांग्रेस छोड़ दी और 'द्रविड़ मुनेत्र कषगम' की स्थापना की।

२. मद्रासके गवर्नर, १९१९-२४; वाइसराय, १९३१-३६।

३. संयुक्त-प्रान्तके गवर्नर।

चुनौतीको स्वीकार करेंगे और इसे अब अपनी इज्जतका सवाल बना लेंगे कि अपनी पूरी संख्यामें कांग्रेसमें आयें। हजाराके कमिश्नरकी यह कार्रवाई बंगाल, संयुक्त-प्रान्त और असममें खिलाफतके दफ्तरोंपर मारे गये छापोंके अनुरूप ही है। तरीकोंका एकसा होना यह दिखाता है कि उनकी साजिश एक ही है कि कांग्रेस और खिलाफत समितियोंको समाप्त करके आन्दोलनको कुचल दिया जाये।

बिहारका सहयोग

पटनासे आये एक तारमें[1] कहा गया है:

दूसरा तार है:

> **सोमवारको स्वयंसेवकोंके अठारह जत्थे १० से ४ बजेतक शहर-भरमें, मुख्यतः कचहरियोंमें घूमे। लोगोंसे अपील की गई कि अपने मामले पंचायतोंमें ले जायें। एक प्रमुख वकीलसे भी वैसा ही करनेका अनुरोध किया गया, अन्य वकीलोंने गालियाँ दीं, दो स्वयंसेवकों, हबीब और अब्दुल मजीदको चाँटे मारे जो बिलकुल शान्त रहे और अधिक दृढ़तापूर्वक अपने काममें जुट गये। लोग अहिंसाकी सचाईको समझ रहे हैं। खादीका प्रयोग आम होता जा रहा है। आगे और भी सविनय अवज्ञाकी तैयारीमें लगे हैं।**

जनक और सीताकी भूमि बिहार, भारतके सबसे विनम्र और सन्तप्त लोगोंकी भूमि बिहार, कष्टोंकी भूमि है। बिहार ही वह प्रान्त है जो सबसे ज्यादा अहिंसावादी रहा है। असहयोगकी अधिकांश बातोंके परिणाम वहाँ असाधारण रूपसे बढ़िया रहे हैं। अठारह महीने पहले जहाँ बिहार चरखे और खादीके इस्तेमालसे बिलकुल अनभिज्ञ था, वहीं अब उसके गाँवोंमें हजारों चरखे चल रहे हैं और हजारों औरत-मर्द आदतन खादी पहनने लगे हैं। वहाँ हिन्दू-मुसलमान दोनोंमें शायद हिन्दुस्तानके सबसे निःस्वार्थ कार्यकर्त्ता मौजूद हैं जो मौन रहकर काम करते रहते हैं, बढ़-बढ़कर बातें नहीं बनाते। किसीने वहाँके नेताओंकी ईमानदारीके बारेमें गुपचुप तौरपर भी कुछ नहीं कहा है, फिर भी उसके शान्तिपूर्ण कार्यकलापमें इतनी निर्ममतापूर्वक दखलन्दाजी की जा रही है।

लेकिन यह सब-कुछ देशके भलेके लिए ही है। यदि इन सब कैदकी सजाओं, लात-थप्पड़ों आदिको बिना कुढ़े, बहादुरीके साथ और बिना वैरभावके सहन कर लिया गया, तो इससे बिहारियोंकी शक्ति ही बढ़ेगी। जनताको यह अग्नि-परीक्षा देनी पड़ेगी कि अहिंसा, खादी, नशाबन्दी, मुकदमेबाजीसे बचने, आत्म-संयम और आत्म-शुद्धिमें उसकी कितनी आस्था है। यही स्वराज्यके लिए हमारी पात्रताका भी मापदण्ड होगा।

'इंडिपेंडेंट' का दमन

पाठकोंको याद होगा कि श्री जॉर्ज जोजफकी गिरफ्तारीके फौरन बाद जब प्रकाशक और मुद्रकके रूपमें श्री महादेव देसाईने नया डिक्लेरेशन दाखिल किया था,

१. तार यहाँ नहीं दिया गया है। उसमें सूचित किया गया था कि डेढ़ सौ स्वयंसेवकोंके अतिरिक्त एक दर्जन प्रमुख व्यक्तियोंको गिरफ्तार कर लिया गया है।

उस समय उनसे २,००० रु० की जमानत माँगी गई थी। पण्डितजीकी सलाहपर जमानत जमा कर दी गई थी और एक दिन बन्द रहनेके बाद यह अखबार फिर निकलने लगा था। जमानत इस महीनेकी ७ तारीखको जमा की गई थी। २० तारीखको वह जब्त कर ली गई। नीति या लहजेमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ था क्योंकि उसमें बदलनेके लिए कुछ था भी नहीं। 'इंडिपेंडेंट' का सम्पादन एक बैरिस्टर द्वारा किया जाता था जो लिखनेमें सदा संयम और मर्यादाका ध्यान रखते थे। श्री जोजेफके बन्दी बनाये जानेके बाद यह काम श्री महादेव देसाईने अपने हाथमें ले लिया था और उनकी शैलीसे 'यंग इंडिया' के पाठक अपरिचित नहीं हैं। जमानत "हमें यह काम पूरा करना है" और "श्रीमती नेहरूका सन्देश" शीर्षकसे उसमें प्रकाशित दो लेखोंके कारण जब्त की गई। पहले लेखमें स्वयंसेवकोंकी सूची दी गई है और दूसरेमें वस्तु-स्थितिके बारेमें बड़े संतुलित विचार व्यक्त किये गये थे। लेकिन स्थानीय सरकारका कथन है कि इन लेखोंमें "ऐसे शब्दोंका समावेश है जो कानून और व्यवस्था कायम रखनेके काममें हस्तक्षेप करते हैं।" कानून क्या है यह हमें मालूम है, यह अधिसूचना निकाली गई है कि स्वयंसेवक दलको भंग कर दिया जाये; व्यवस्था क्या है यह भी हम जानते हैं, क्योंकि सार्वजनिक सभाओंपर रोक लगा दी गई है। और यह निश्चित है कि समस्त राष्ट्रवादी अखबारोंकी तरह ही 'इंडिपेंडेंट' ने भी ऐसे कानून और ऐसी व्यवस्थामें हस्तक्षेप करनेके लिए प्रोत्साहन दिया है।

लेकिन सरकारको जल्दी ही अपनी गलती मालूम पड़ जायेगी। 'इंडिपेंडेंट' मर सकता है, लेकिन जनतामें जो भावना उसने जाग्रत कर दी है वह कभी नहीं मर सकती। 'इंडिपेंडेंट' भले ही न छपे, उसे लिखा तो जा ही सकता है। सम्पादकको जहाँ मालिकोंके हितोंकी रक्षा करनी पड़ती है वहाँ अपने व्यक्तित्वको भी अक्षुण्ण रखना पड़ता है। महादेव देसाई सम्पादकके रूपमें अब भी जीवित हैं, भले ही उनका मुद्रक-वाला रूप थोड़ी देरके लिए सो गया हो। और मुझे आशा है कि अब वे छापनेके स्थानपर अपना अखबार लिखना शुरू कर देंगे। खबरों और सम्पादकीय टिप्पणियोंको मजबूरीके कारण और भी सार-रूपमें प्रस्तुत करनेसे पाठकोंका ही लाभ होगा। अधिक संख्यामें प्रतियाँ तैयार करनेके लिए मेरा सुझाव है कि रोनियो, साइक्लोस्टाइल अथवा क्रोमोग्राफसे काम लेना चाहिए। और यदि कानून और उसकी मनमानी व्याख्या सरकारको साइक्लोस्टाइल अथवा रोनियो मशीन तक जब्त कर लेनेकी अनुमति देती हो, तब भी श्री देसाईकी लेखनी तबतक देशकी सेवा करती रह सकती है जबतक खुद उनको पकड़कर इलाहाबादकी सेन्ट्रल जेलमें न डाल दिया जाये। राष्ट्रवादी अखबारोंके मालिक खबरदार रहें। उन्हें आखिरी पाई खर्च होनेतक अपना संकल्प नहीं छोड़ना चाहिए।

आशाप्रद चिह्न

सरकारके वर्तमान दमनके कारण सारे भारतके वकीलों और विद्यार्थियोंमें नई जागृति आई है। कलकत्तेके कितने ही वकील वाइसरायके स्वागतमें शरीक नहीं हुए। हावड़ाके कई वकीलोंने वकालत बन्द कर दी है। पंजाबके बार एसोसिएशनने लाला

लाजपतराय तथा उनके साथियोंके मुकदमे जेलके अन्दर चलाये जानेपर तथा लालाजीके घरवालों को छोड़कर और लोगोंके वहाँ उपस्थित रहनेकी मनाहीपर अपना तीव्र असन्तोष प्रकट किया है। बिहार और असमके कितने ही वकीलोंने वकालत बन्द कर देनेकी सूचना दी है। दिल्लीसे डा० अन्सारी लिखते हैं:

> सबसे अधिक आशाप्रद चिह्न तो यह है कि हमारी सेवाओंका बड़ा अच्छा असर वकीलों और धनी लोगोंपर हुआ है। उन्होंने एक संघ बनाया है। उसके द्वारा वे उन लोगोंके कुटुम्बियोंकी सहायता करेंगे जो जेल जा चुके हैं। कितने ही लोगोंने इसमें अच्छी-अच्छी रकमें दी हैं। अबतक कोई २,००० रु० मासिक चन्देका इन्तजाम हो चुका है। उन लोगोंने यह-सब हमारे अनुरोध या इच्छा प्रकट किये बिना केवल परोपकारके भावसे प्रेरित होकर यह व्यवस्था की है।

विद्यार्थियोंका विरोध

जो हाल वकीलोंका है वही विद्यार्थियोंका भी है। बंगालके कितने ही कालेज खाली-से हो गये हैं। कुछ विद्यार्थियोंने कुछ समयके लिए और कुछने अनिश्चित समयके लिए हड़ताल कर दी है। लाहौरके दयालसिंह कालेजके लड़कोंने गत १६ तारीखसे सिर्फ खादी पहनने तथा युवराजके स्वागतके बहिष्कारका निश्चय किया है। उन्होंने उन नेताओंको जो जेल जा चुके हैं बधाई भी भेजी है। दयालसिंह कालेजके विद्यार्थियोंका यह काम बहुत ठीक हुआ है। यद्यपि श्रीमती वासन्तीदेवीकी हृदयस्पर्शी अपीलसे विद्यार्थी-वर्गका हृदय इतना अभिभूत नहीं हुआ कि वे कालेज छोड़ दें, तथापि उनसे आशा है कि वे इस आन्दोलनमें, जो कि दिनपर-दिन प्रबल और शक्तिशाली होता जाता है, अपने योग्य हाथ अवश्य बँटायेंगे। कलकत्तेके एक समाचारपत्रसे एक खबर नीचे दी जाती है। इसपर उनको ध्यान देना चाहिए:

> छतरिया राष्ट्रीय पाठशालाके दो लड़कों — ९ वर्षीय रामप्रसाद और १० वर्षीय हरिवंश मिश्र — को जिला मजिस्ट्रेटकी आज्ञासे उनके अर्दलीने उनके सामने बड़ी बेरहमीसे बेंत लगाये। उनका कसूर यह था कि वे सरकारी नौकरी छोड़नेके सम्बन्धमें फतवा पढ़ रहे थे। परन्तु उन बहादुर लड़कोंने मजिस्ट्रेटसे कहा कि तुमसे जितने हो सकें उतने बेंत लगाओ। चाहे हमारी कमर टूट जाये, चाहे पसलियाँ टूट जायें; पर हम फतवा पढ़ना तो नहीं छोड़ सकते।

हार्दिक उद्‌गार

कष्ट-सहनकी इन ज्वालाओंकी बदौलत कुछ दिव्य विचार सुन्दर भाषाके वेषमें प्रकट हुए हैं। आजतक कितने ही विचारपूर्ण भाषण हुए; कितने ही अभिनन्दनपत्र पढ़े गये। जिनसे कानोंको भी सुख मिला, चित्तको भी आनन्द हुआ। लालाजीके घोषणापत्रको देखिए, पण्डित मोतीलालजीके सन्देशको पढ़िए, या मौलाना अबुल कलाम आजादके पैगामको सुनिए, उनकी खूबियोंपर मुग्ध हुए बिना कोई रह ही नहीं सकता। परन्तु सभापति महोदयके भाषण और लेख जितने ओजपूर्ण, मर्मस्पर्शी और प्रगल्भ हैं

उतने किसीके नहीं। उनके सन्देश छोटे और तीखे हैं। वे सीधे उनके हृदयसे निकले हैं। क्या ही अच्छा हो यदि कोई साहसी प्रकाशक इन्हें संग्रह करके पुस्तक-रूपमें प्रकाशित कर दे। परन्तु विद्यार्थियोंको दिये गये उनके एक सन्देशके दो वचन यहाँ उद्धृत करनेका लोभ मैं संवरण नहीं कर सकता। वे प्रोफेसर जितेन्द्रलाल बनर्जीको दो सालकी कैदकी सजाका समाचार सुननेपर दिये गये सन्देशसे लिये गये हैं। पहला वचन खुद जितेन बाबूके ही जोरदार बयानमें है, जो उन्होंने अदालतमें पेश किया था। वह इस प्रकार है:

यदि अपने पूरे आत्मिक बल और जोरके साथ अपने देशभाइयोंके लिए आजादी चाहना पाप है, तो मैंने बेशक बड़ा भारी पाप किया है -- ऐसा पाप जो न माफीसे मिट सकता है, न पश्चात्तापसे कट सकता है और मुझे बड़ा हर्ष है कि मुझसे ऐसा पाप बन पड़ा। यदि अपने देश-बन्धुओंसे यह कहना गुनाह है कि भाई ये गुलामीकी बेड़ियाँ तोड़ डालो -- अरे, ये हमारी मनुष्यताको नीचे गिरा रही हैं, ये उसके विकासको रोक रही हैं तो मैं दुनियामें एक बड़ा भारी गुनहगार हूँ और मुझे बड़ा हर्ष है कि परमेश्वरने मुझे ऐसा अपराध करनेका साहस और दृढ़ता दी। और जिस तरह कि आजतक उस दयामयने मुझे अपने अन्तःस्थित सत्यको शब्दों द्वारा प्रकट करनेका साहस और सामर्थ्य प्रदान की है उसी तरह मुझे आशा है कि वह भविष्यमें भी मुझे उन यातनाओंको सहन करनेकी शक्ति देगा जो मनुष्य द्वारा दिये गये अन्यायपूर्ण दण्डसे हो सकती हैं।

और यह है देशबन्धु दासकी अपीलका अन्तिम अंश:

समझते हो, जितेन्द्रलाल बनर्जी क्या हैं? मैं विद्यार्थियोंसे कहता हूँ, उनके जीवनके मर्मको समझो। शब्द उसे कैसे प्रकट कर सकते हैं? उनके वे काम, उनका वह जीवन, बुद्धि और अन्तःकरणके उनके सद्‌गुण, और इन सबका एक महान् बलिदानकी सीमातक पहुँच जाना ये सब जितनी अच्छी तरहसे -- जिस प्रभावशाली ढंगसे उसे प्रकट कर रहे हैं -- उसके आगे मेरे शब्द फीके पड़ जाते हैं।

मैं फिर पूछता हूँ कि जितेन्द्रलाल बनर्जी क्या हैं? मैं चाहता हूँ कि कलकत्तेके विद्यार्थी यह जानें कि इस प्रश्नका उत्तर किस तरह दें। मैं अपनी पूरी हार्दिक लालसासे उनकी ओर देख रहा हूँ। जितेन बाबूने अपना सारा जीवन अपने प्रिय विद्यार्थियोंके कल्याणके लिए अर्पण कर दिया। क्या आज यहाँ कोई ऐसा विद्यार्थी नहीं जो उनके इस बलिदानका अर्थ बता सके? जोशीली बातोंसे नहीं, व्यर्थके आँसू बहाकर नहीं, बल्कि उस कामको अपने सिरपर उठाकर, जो उन्हें इतना प्यारा था, उनके कामको सशक्त बनानेके लिए आत्मबलिदान करके।

> **केवल जिन्दा रहना भी भला कोई जीवन है? क्या अच्छा हो जो मैं यह कह सकूँ, नहीं कलकत्तेके विद्यार्थी मनुष्योंकी तरह जिन्दगी बसर करते हैं, वे जितेन्द्रलाल बनर्जीकी तरह जीवित रहते हैं। अब उनका शरीर तो कैदखानेमें है। क्या कलकत्तेके इतने विद्यार्थियोंमें ऐसा कोई नहीं जो उनकी आत्माकी इस पुकारको सुनने लायक हृदय रखता हो?**

इन अपीलोंको महज भावुकताकी कोटिमें रखकर कोई इनका महत्त्व कम न करे। अब आगे बंगालकी भावनाको कोई हलकी चीज न समझे, उसकी दिल्लगी न उड़ाये। बंगाल आज माताकी पुकारपर दौड़ पड़ा है। उसपर मेरा दृढ़ विश्वास होते हुए भी खुद मैंने उससे इतनी आशा नहीं की थी। यह चमत्कार अकेले कलकत्ते या चटगाँवमें ही नहीं दिखाई दे रहा है, बल्कि उन सभी स्थानोंपर है जहाँ-जहाँ दमनने अपना जोर दिखाया है। कोरी अपीलोंसे अथवा महज भावुकतावश संसारमें कोई भी ऐसा कष्ट सहनेको तैयार नहीं होता। बंगालने सिद्ध कर दिया है कि उसकी भावुकतामें पुरुषार्थ भरा हुआ है।

एक आग्रहपूर्ण सन्देश

मैक्समूलरने कहीं लिखा है कि सत्यको बार-बार तबतक दोहराते जाना चाहिए जबतक कि वह लोगोंके हृदयमें अच्छी तरह पैठ न जाये, उसी तरह जिस तरह कि ईश्वरका नाम बार-बार रटना व्यर्थ नहीं होता, और उसे जान-बूझकर तबतक बार-बार दोहराना पड़ता है जबतक कि हम उसका साक्षात्कार न कर लें। सिख गुरुद्वारा प्रबन्धक समितिने सरदार खड़कसिंह द्वारा जेलसे भेजे गये दूसरे सन्देशको प्रचारित किया है। लगता है कि गुरुद्वारा प्रबन्धक समितिका प्रचार-विभाग बड़ा ही कार्यक्षम है। उनका यह दूसरा सन्देश एक तरहसे पहले सन्देशकी शाब्दिक पुनरावृत्ति ही है। सरदार साहबने खालसा लोगोंसे कहा है कि हर सिखको खादी पहननी चाहिए और सादा भोजन करना चाहिए। सफलताकी कुंजी है — अहिंसा। उन्होंने यह भी आशा व्यक्त की है कि आम तौरसे सिखोंको और खास तौरसे अकाली जत्थोंके सभी सिखोंको चाय पीना एकदम छोड़ देना चाहिए। सरदार साहबकी बात सोलहों आने ठीक है। सादे जीवनके बिना उच्च विचार सम्भव नहीं। यदि हमें अपने-आपको जनताके साथ घुला-मिलाकर रखना है तो हमें अपना जीवन अधिकसे-अधिक सादगीपूर्ण बनाना चाहिए। सादगी इतनी बरतनी चाहिए कि हम स्वस्थ रह सकें। हमारे पहननेके लिए खादीके अतिरिक्त अन्य कोई वस्त्र हो ही नहीं सकता। सादगीका जीवन ही अहिंसासे मेल खाता है। सरदार साहबने चायसे दूर रहनेपर जो इतना जोर दिया है, वह मेरी समझमें नहीं आया। मुझे ठीक मालूम नहीं कि क्या सिख लोग अन्य मादक पेयोंकी अपेक्षा चायको ही सबसे ज्यादा अपनाते जा रहे हैं। मैं तो यह सोच रहा था कि उनको सभी प्रकारके मादक पेयोंका प्रयोग छोड़नेके लिए कहना चाहिए। लेकिन शायद कुछ सिख मित्र इसका खुलासा करेंगे कि चायका प्रयोग बन्द करनेपर इतना जोर क्यों दिया गया है।

मद्रास परिषद्‌में चरखेकी चर्चा

मद्रास विधान परिषद्‌में चरखेके विषयपर चर्चा हुई थी। एक सदस्यने एक संकल्प प्रस्तुत किया था कि सरकारको और अच्छे किस्मके चरखे चालू कराने चाहिए और हाथकी कताई-बुनाईको प्रोत्साहित करना चाहिए। सविस्तार चर्चाके बाद प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया गया। २३ सदस्योंने उसके पक्षमें मतदान किया। प्रस्तावके विरोधमें ये दलीलें दी गई थीं कि "खादीका वस्त्र बोरे जैसा ही होता है और कोई भी समझदार आदमी मिलके सस्ते कपड़ेके मुकाबिले उसे पहनना पसन्द नहीं करेगा;" और "मशीनोंके इस युगमें हाथकी कताईकी ओर वापस लौटना अपराधपूर्ण होगा;" और "हाथका कता कपड़ा कमजोर होता है;" और आखिरी दलील यह कि "चरखेसे तो चरखा चलानेवालोंका ही पूरा भरण-पोषण नहीं हो पाता इसलिए उसपर जनताका पैसा बरबाद नहीं किया जाना चाहिए।" परिषद्‌में चरखेके हिमायती सदस्योंने इन सभी दलीलोंका काफी ठीक-ठीक उत्तर दिया था। लेकिन चर्चामें एक दिलचस्प बात यह सामने आई कि सम्बन्धित विभागके मन्त्रीने सिद्धान्त पेश किया कि चरखेसे जीविका-निर्वाह नहीं हो सकता, और मद्रास सरकारके अर्थ-विशेषज्ञ डा० स्लेटरने इस सिद्धान्तका विरोध किया और मन्त्रीसे अनुरोध किया कि वे इस मामलेपर "खुले दिमागसे", बिना किसी पूर्वग्रहके विचार करें। डा० स्लेटर इस तथ्यको समझते हैं कि भारतके दिन-दिन निर्धन बनते कृषकोंके लिए कताई-जैसे किसी एक अनुपूरक धन्धेकी बड़ी जरूरत है। परन्तु परिषद्‌के पूर्वग्रहग्रस्त सदस्योंके बहुमतने उनकी विशेषज्ञतापूर्ण रायकी परवाह नहीं की। परिषद्‌के सदस्य तथ्योंको खुली आँखों देखना भी नहीं चाहते। उनको पता ही नहीं है कि मद्रास प्रेसीडेंसीमें आजकल भी बड़ी ही महीन किस्मकी हाथकी कती खादी तैयार होती है। उन्होंने यह जाननेका कष्ट भी नहीं उठाया कि जीवन-भर सूक्ष्मसे-सूक्ष्म अनुसंधानोंमें और बड़ी-बड़ी कम्पनियोंको खड़ी करनेमें लगे रहनेवाले एक वैज्ञानिक डा० राय[1]-जैसे व्यक्तिने भी चरखेके सिद्धान्तको अपना लिया है। तब इसमें आश्चर्यकी बात ही क्या है कि खादीका सन्देश सुननेवाले उच्च-वर्गके स्त्री-पुरुष बाजारोंमें फेरी लगाकर खादीका प्रचार करना जरूरी समझते हैं?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१२-१९२१

१. डा० (सर) प्रफुल्लचन्द्र राय (१८६१-१९४४); वैज्ञानिक और देशभक्त।

३७. पत्र : महादेव देसाईको

[२२ दिसम्बर, १९२१][1]

चि० महादेव,

मैं तुम्हें नियमितरूपसे पत्र लिखनेका प्रयत्न अवश्य करता रहूँगा। ख्वाजा[2] पकड़ लिये गये हैं। उनकी पत्नीने लिखा है कि उनके स्थानपर अब वे काम करेंगी।

मुझे जो प्रस्ताव सूझ पड़ा है उसका मसविदा भेज रहा हूँ। उसे ध्यानसे पढ़कर अगर कोई सुझाव देना चाहो तो अवश्य देना। तार भेजना तो व्यर्थ ही है क्योंकि उन तक पहुँचता ही नहीं। एकाध तारकी बात अलग है।

मैं चाहता हूँ कि देवदास फौरन जेल चला जाये। इसका महत्त्व तुम समझ सकते हो।

स्वरूपरानीके सन्देशकी अंग्रेजी मुझे उत्तम जान पड़ी।

अपने स्वास्थ्यका खयाल रखना। क्रिस्टोदास[3] जो-कुछ भेजते हैं उसे मैं पढ़ जाता हूँ। मैंने जिसमें संशोधन कर दिया हो उसको यदि तुम जाँचे बिना भी प्रकाशित कर दो तो कोई हर्ज नहीं।

आजका 'यंग इंडिया' भी तुम्हारे 'इंडिपेंडेंट' को भर सकता है। दो दिनसे 'इंडिपेंडेंट' नहीं आ रहा है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२६)की फोटो-नकलसे।

१. इस पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें इस तारीखके **यंग इंडिया**का जिक्र है जिसमें गांधीजीने श्रीमती ख्वाजाका पत्र उद्धृत किया है।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", २२-१२-१९२१ का उप-शीर्षक "योग्य पतिकी योग्य पत्नी"।

३. कृष्णदास, गांधीजीके सचिव।

३८. पत्र : महादेव देसाईको

शुक्रवार [२३ दिसम्बर, १९२१ या उसके पूर्व][1]

भाईश्री महादेव,

तुम्हारा पत्र पढ़ा। तुम्हारे 'दुःख' और सुख दोनोंका ही कोई अन्त नहीं है। इसपर जिस दृष्टिसे विचार करना चाहें उस दृष्टिसे विचार किया जा सकता है। भगवान् करे, तुम अपने निश्चयपर अटल रहो।

तुम्हें जबतक वहाँ अथवा . . . रहनेकी जरूरत जान पड़े . . . तक रहो। अपने परिवारका तुमपर बड़ा दायित्व है, उसका भी तुम्हें निर्वाह करना है।

तुम्हें बहनोंके विवाहका प्रबन्ध करना चाहिए अथवा नहीं, इस सम्बन्धमें मैं किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँच सका हूँ। अगर मैं तुम्हारे स्थानपर होऊँ तो मैं पिताजीसे स्पष्ट-रूपसे बात कर लूं अथवा यदि उनका विवाह करनेका अधिकार मेरे ही हाथमें हो तो जिसने नरसिंह मेहताकी ओरसे भोजकी व्यवस्था कर दी थी उस भगवान्पर विश्वास रखता और अपनी बहनके गलेमें सूतकी माला पहनाकर उसे ससुराल भेज देता। मेरी सलाह यही है। तुम्हें दुर्गासे[2] सलाह . . . वह दुःखित हो तो . . . . पिताजीसे तो बात . . .[3] उनकी सलाह तो लेनी चाहिए और बादमें तुम्हारी आत्मा जो कहे सो करना चाहिए। तुम सब-कुछ दे दो तो भी कोई हर्ज नहीं और यदि कुछ भी न दो तो भी मैं समाजके सामने तुम्हारा समर्थन करूँगा। मेरी कलकी बात मेरे अन्तस्तलसे निकली हुई विचारधारा थी। उस धारामें मुझे ही बहना है, किसी दूसरेको नहीं। इस प्रवाहको देखकर यदि दूसरोंके हृदयोंमें भी वैसी ही भावनाएँ प्रस्फुटित हो जायें तो वे उनमें खुशीसे अवगाहन करें। सिखाये पूत दरबार नहीं चढ़ते। मथुरादासने जो उत्तर दिया वह सही था। जो सर्वस्व अर्पण करना चाहता है वह स्वतः करेगा ही।

हाँ, तुमने मुझसे पूछा सो ठीक ही किया। मैंने जो ऊपर कहा है वही तुमसे भी कहूँगा। हमें अधिकसे-अधिक श्रद्धावान् बननेका प्रयत्न तो करना ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ८७६३) की फोटो-नकलसे।

१. अनुमानतः यह पत्र प्रापकको २४ दिसम्बर, १९२१ को उनके जेल जानेसे पूर्व लिखा गया था। उनके पिता उस समय जीवित थे और तबतक उनकी किसी भी बहनकी शादी नहीं हुई थी। उनकी एक बहनका विवाह १९२२ में हुआ और १९२३ में उनके पिताकी मृत्यु हुई।

२. महादेव देसाईकी पत्नी।

३. साधन-सूत्र जहाँ-तहाँ क्षतिग्रस्त है।

३९. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे

[२३ दिसम्बर, १९२१][1]

कार्य-समितिकी बैठक आज सुबह और शामको, दोनों वक्त हुई और उसमें कांग्रेसके कार्यक्रम तथा आगेके कामसे सम्बन्धित मुख्य प्रस्तावपर विस्तारसे चर्चा की गई। अन्य विषयोंके अलावा श्री दासके स्थानपर काम करनेके लिए अध्यक्षके चुनावपर भी विचार किया गया और जैसा कि पहले ही सुझाव दिया गया था, हकीम अजमलखाँ उस पदके लिए चुन लिये गये। उनका नाम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी कलकी बैठकमें पुष्टिके लिए रखा जायेगा।

बैठक समाप्त होनेपर 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के एक प्रतिनिधि द्वारा भेंट किये जानेपर गांधीजीने कहा, बैठककी विशेषता यह रही कि उसमें भाग लेनेवालोंमें पूरा तालमेल और मतैक्य रहा। समितिके सदस्योंके अतिरिक्त प्रान्तोंके प्रमुख प्रतिनिधि तथा अन्य लोग खास तौरसे बुलाये गये थे। कर्नाटक, महाराष्ट्र और एक-दो अन्य प्रान्तोंमें काफी हदतक ऐसी भावना है कि विदेशोंमें प्रचार, जो पिछले वर्ष बन्द कर दिया गया था,[2] फिर शुरू किया जाना चाहिए और पूरी तरह नये ढंगसे चलाया जाना चाहिए ताकि बाहरी दुनियाके सामने भारतकी स्थितिकी निष्पक्ष जानकारी रखी जा सके। मालूम हुआ है कि विषय-समितिकी बैठकमें इस विषयपर एक प्रस्ताव रखा जायेगा। लगता है कि गांधीजी ऐसे प्रचारके पक्षमें नहीं हैं; परन्तु आशा है, इस चर्चाके परिणामकी प्रतीक्षा दिलचस्पीसे की जायेगी। गांधीजी वाइसरायके भाषणसे[3] निराश नहीं दिखते थे। क्योंकि उन्होंने पहले ही इस परिणामकी कल्पना कर ली थी। भाषणसे तो केवल ऐसे शिष्टमण्डलकी व्यर्थताके बारेमें उनके अपने विचारोंकी यथार्थता ही सत्य सिद्ध हुई। गांधीजीने कहा, मात्र संयोगकी बात है कि मैंने लॉर्ड रोनाल्डशेके भाषणकी रिपोर्ट देख ली और सोचा कि उसका जवाब दिया जाना चाहिए। मैं उसका जवाब[4] पहले ही दे चुका हूँ और जो-कुछ मैंने कहा था उसमें से कुछ भी ऐसा नहीं जो ठीक साबित न हुआ हो . . .।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-१२-१९२१

१. देखिए "तार : जियाराम सक्सेनाको", १६-१२-१९२१ या उसके पश्चात्।

२. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १८६।

३. मालवीयजीके नेतृत्वमें भेजे गये शिष्टमण्डलके जवाबमें २१ दिसम्बर, १९२१ को कलकत्तामें दिया गया भाषण।

४. देखिए "वक्तव्य : गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें", २०-१२-१९२१।

४०. तार: जमनादास द्वारकादास और हृदयनाथ कुँजरूको[1]

[२३ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

अब भी बिना शर्त किसी भी सम्मेलनमें शामिल होनेके लिए तैयार। क्या आपको नहीं लगता कि आपत्तिजनक विज्ञप्तियाँ वापस लेने और कैदियोंको रिहा करनेपर कोई कार्रवाई बन्द करनेके लिए नहीं रहती? क्या आप कोई बता सकते हैं? परन्तु विज्ञप्तियोंके वापस न लिये जाने और असहयोगियोंकी रक्षात्मक कार्रवाई जारी रहनेपर भी मैं व्यक्तिगतरूपसे शामिल होनेके लिए तैयार हूँ। काश आप समझ सकें कि शिष्टमण्डल गलत रास्तेपर ले जाया गया।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७३०)की फोटो-नकलसे।

१. यह जमनादास द्वारकादास और हृदयनाथ कुँजरूके २२ दिसम्बर, १९२१ को कलकत्तासे भेजे गये तारके जवाबमें दिया गया था और गांधीजीको २३ दिसम्बरको मिला था। तारके कुछ अंश इस प्रकार हैं: "पण्डित मदनमोहन मालवीयके नाम प्रेषित आपके तारको पढ़कर बहुत दुःख हुआ। मैत्रीपूर्ण समझौतेकी सारी आशाएँ ध्वस्त . . . आपका आश्वासन था आप सम्मेलनमें शामिल होनेकी कोई शर्त नहीं रखेंगे . . . हमें भरोसा था आप यह सुझाव नहीं ठुकरायेंगे कि सम्मेलन होनेतक दोनों पक्षोंकी कार्रवाई बन्द रहेगी . . . वाइसरायके भाषणसे कोई पूर्णतः सहमत न भी हो फिर भी उसका स्वर और स्वरूप बहुत ही सद्भाववर्धक है। उन्होंने केवल अस्थायी शान्तिकी माँग की थी . . . दोनोंमें से कोई भी पक्ष आवश्यक प्रारम्भिक शर्तके रूपमें दूसरेसे अपनी गलती माननेका आग्रह न करे तो सम्मेलन अब भी सम्भव . . . हार्दिक प्रार्थना मामलेपर फिर विचार करें . . . मालूम हुआ है बंगाल ऐसा मार्ग अपनानेके पक्षमें। निर्णयपर पुनर्विचार करें और देशमें शान्ति स्थापित करें। खयाल है अनिवार्य प्रारम्भिक शर्तें मान ली जायें तो सम्मेलनकी विचारणीय बातों, रचना आदिका निर्णय सुगम। . . . आप समझते हैं दण्डविधि संशोधन अधिनियम और राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमका प्रयोग सरकारके लिए विशेष रूपसे अनुचित क्योंकि उसने इनको रद करनेका वादा किया था। . . . वास्तवमें वर्तमान परिस्थितियोंको देखते हुए सरकारने दण्डविधि संशोधन अधिनियम भाग दो को रद करनेसे इनकार कर दिया और राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम रद करनेका निर्णय भी यह देखनेके लिए मुल्तवी कर दिया कि संसदके अगले अधिवेशन-तक देशमें वातावरण सुधरता है या नहीं। . . ."

४१. वक्तव्य : वाइसरायके भाषणके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेसको

अहमदाबाद
२४ दिसम्बर, १९२१

एसोसिएटेड प्रेसका एक संवाददाता महात्मा गांधीसे मिला था। पण्डित मदनमोहन मालवीयके नेतृत्वमें मिलनेवाले शिष्टमण्डलको उत्तर देते हुए वाइसराय लॉर्ड रीडिंगने कलकत्तामें जो भाषण[1] दिया था उसीके सम्बन्धमें प्रश्न किये जानेपर गांधीजीने निम्नलिखित वक्तव्य दिया :

मैं यह कहनेके लिए लाचार हूँ कि वाइसरायके उद्गारोंको पढ़कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। युवराजके भारत आगमनके सम्बन्धमें कांग्रेस और खिलाफत संस्थाओंके रुखके बारेमें उन्होंने शरारतपूर्ण ढंगसे गलतबयानी की है। इसकी मैंने कल्पना तक नहीं की थी। दोनों संस्थाओंमें से किसीके किसी भी प्रस्तावको उठा लीजिए, किसी भी वक्ताके भाषणको ले लीजिए, प्रत्येकमें यह बात काफी और पूरा जोर देकर कही गई है कि हम लोगोंके मनमें युवराजके प्रति व्यक्तिगत रूपसे कोई बुरा भाव नहीं है और न हम किसी प्रकार उनका अपमान ही करना चाहते हैं। उनके स्वागतका बहिष्कार एक सर्वथा सैद्धान्तिक कार्य है और उसका उद्देश्य नौकरशाहीके मनमाने तरीकोंके प्रति अपना विरोध प्रकट करना है। मैंने बराबर कहा है और अब भी कहता हूँ कि उस नौकरशाहीकी जकड़को और मजबूत करनेके लिए ही युवराजको भारतमें लाया जा रहा है जिसने भारतको एकदम भिखमंगा और राजनीतिक दृष्टिसे अर्ध गुलाम बना दिया है। अगर कोई यह साबित कर दे कि युवराजकी यात्राके उद्देश्यके बारेमें मेरी यह धारणा भ्रान्त है तो मैं बड़ी खुशीसे अपने अपराधके लिए माफी माँग लूँगा।

वाइसरायने इतनी ही दुर्भाग्यपूर्ण बात यह कही है कि युवराजके स्वागतके बहिष्कारका अर्थ है ब्रिटिश जनताके प्रति दुर्भाव प्रकट करना। उनको मालूम नहीं कि वे भारतके ब्रिटिश प्रशासकों और ब्रिटिश जनताको एक पांतमें बैठाकर खुद अपने देशवासियोंकी कितनी बड़ी हानि कर रहे हैं। क्या उनका मतलब यह है कि इस देशके अंग्रेज शासक ब्रिटिश जनताके प्रतिनिधि हैं और उनके तरीकोंके विरुद्ध आन्दोलन करना

१. वाइसरायने यह भाषण २१ दिसम्बर, १९२१ को दिया था जिसमें उन्होंने **इंडिया इन १९२१-२२** के अनुसार वे कारण पूरी तौरपर समझाये थे जिनसे बाध्य होकर सरकारको विशेष अधिनियम जारी करने पड़े, और कानूनकी पाबन्द प्रजाकी हर तरहसे रक्षा करनेका दृढ़ निश्चय व्यक्त किया गया था और साथ ही युवराजके आगमनके सिलसिलेमें कड़ी चेतावनी दी थी कि युवराजके अपमानका अर्थ इंग्लैंडकी जनता और संसदका अपमान होगा। वाइसरायने कहा कि सम्मेलनकी किसी भी योजनापर चर्चा भी तभी की जायेगी जब असहयोग पार्टी पहले अपनी सभी गैर-कानूनी कार्रवाइयाँ बन्द कर दे।

ब्रिटिश जनताके विरुद्ध आन्दोलन करना है। अगर सचमुच वाइसराय साहबका मत यही है, अगर नौकरशाहीके कार्योंके विरुद्ध जोरदार और प्रभावकारी आन्दोलन करना और उसकी असलियतको खोलकर दिखाना ब्रिटिश जनताका अपमान करना है, तो फिर मुझे अपनेको अपराधी मानना ही पड़ेगा। परन्तु तब मुझे विनीत भावसे यह भी कहना पड़ेगा कि वाइसराय महोदयने भारतमें उत्पन्न होनेवाली इस महान् राष्ट्रीय जागृतिको बिलकुल ही उलटे रूपमें ग्रहण किया है, उसको समझा ही नहीं है। मैं कहता हूँ और हजार बार कहूँगा कि हमारा आन्दोलन भूमण्डलके किसी भी राष्ट्र या किसी भी जनसमाजके विरुद्ध आरम्भ नहीं किया गया है। वह तो सीधा-सीधा उस शासन-प्रणालीके विरुद्ध आरम्भ किया गया है जिसके अन्तर्गत आज भारत सरकारका काम चलाया जा रहा है और मैं दावेके साथ कहता हूँ कि वाइसराय साहबकी कोई भी धमकी या तदनुसार कार्रवाई इस आन्दोलनका गला न घोट सकेगी और न इस जागृतिको मेट ही सकेगी।

लॉर्ड रोनाल्डशेके भाषणके उत्तरमें[1] मैं कह चुका हूँ कि हम असहयोगियोंने हमला शुरू नहीं किया है। हम आक्रमणकारी नहीं हैं। अतः हमें अपना हाथ भी नहीं खींचना है, न अपने किसी कार्यको रोकना है। सरकारका ही कर्त्तव्य है कि वह अपनी आक्रामक कार्रवाइयोंको रोके जो हिंसाके विरुद्ध नहीं, बल्कि एक वैध, अनुशासित, दृढ़ परन्तु सर्वथा अहिंसात्मक आन्दोलनके विरुद्ध की गई हैं। शान्तिपूर्ण वातावरण पैदा करनेकी जिम्मेदारी भारत सरकार और केवल भारत सरकारकी है, बशर्ते कि वह ऐसा करना चाहे। उसने खुद ही बारूद बिछाई और खुद ही उसपर बमका गोला भी पटका और अब आश्चर्य कर रही है कि उसकी बारूद भीषण विस्फोट उत्पन्न करने लायक क्यों न हुई।

इस समय फौरी प्रश्न खिलाफत,[2] पंजाब और स्वराज्यके प्रति किये गये अन्यायों-के निराकरणका नहीं है। इस समय तो फौरी प्रश्न है, सार्वजनिक सभाएँ करने और शान्तिमय कार्योंके निमित्त सभाएँ और संघ स्थापित करनेके हमारे हकका और हम अपने इसी हकको महफूज रखनेके लिए लड़ रहे हैं। हमारी यह लड़ाई केवल असहयो-गियोंकी ओरसे नहीं बल्कि समूचे भारतकी ओरसे, किसानोंसे लेकर राजा-महाराजाओंकी ओरसे, सम्पूर्ण राजनीतिक पक्षों और विचारधाराओंकी ओरसे लड़ी जा रही है। समाज-के संघटित विकासकी यह प्रधान शर्त है और वाइसरायके उद्गारोंमें मुझे आदिसे अन्ततक इसके विरोधी सिद्धान्तके आगे सिर झुकानेका ही आग्रह दिखाई देता है— ऐसे सिद्धान्तको जिसे स्वातन्त्र्यपर आधारित कानूनके एक भूतपूर्व समर्थकने एक ऐसे वातावरणमें फँसकर अपनाया है जिसमें कानून और व्यवस्थाके संरक्षणकर्त्ता स्वयं ही कानून और व्यवस्थाकी कोई परवाह नहीं करते। इसके दृष्टान्त देनेके लिए इतना ही काफी है कि मैं उन हमलोंका उल्लेख कर दूं जो अकारण ही, छुटपुट तौरपर नहीं, एक बड़े पैमानेपर पंजाब, दिल्ली और संयुक्त-प्रान्तमें किये जा रहे हैं। मुझे इसमें

१. देखिए "वक्तव्य: गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें", २०-१२-१९२१।
२. देखिए "टिप्पणियाँ", २२-१२-१९२१ का उप-शीर्षक "गोलमेज परिषद्"।

तनिक भी सन्देह नहीं है कि दमनकी यह अन्धाधुन्ध चक्की जैसे-जैसे तेज होती जायेगी वैसे-वैसे यह पूरा दुःखी देश आतंकमें डूबता जायेगा। इस दमनके लिए सभ्य तरीके अपनाये जायें या असभ्य, पर असहयोगियोंके लिए केवल एक मार्ग है। कमसे-कम मुझे तो भारतीय जनताके लिए कोई और मार्ग दिखाई नहीं देता। सार्वजनिक सभाएँ करने और संस्थाएँ कायम करनेके अधिकारके वारेमें समझौतेकी कोई गुंजाइश नहीं। हमने अपना पीछे लौटनेका रास्ता वन्द कर दिया है। इसलिए हमें तवतक वरावर आगे ही वढ़ते जाना होगा जवतक मनुष्योंका यह वुनियादी अधिकार सुरक्षित न हो जाये।

मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। समझौतेकी मुझे सवसे अधिक चिन्ता है। मैं चाहता हूँ कि सव पक्षोंका गोलमेज सम्मेलन हो। हमारी स्थितिको जो कोई भी समझना चाहे, हम उसे भली-भाँति समझा देना चाहते हैं। मैं कोई शर्त नहीं लगाता, परन्तु जव सम्मेलन वुलानेके पहले मुझपर शर्तें लगाई जाती हैं तव मुझे उन शर्तोंकी छानवीन करनेकी अनुमति अवश्य दी जानी चाहिए। और अगर मेरी छानवीनके वाद वे घातक ठहरें तो उन्हें स्वीकार न करनेके लिए मुझे क्षमा किया जाना चाहिए। भारत सरकारने ही यह तनाव पैदा किया है और वही इसे नियन्त्रित कर सकती है, क्योंकि आक्रमण उसीकी ओरसे हुआ है।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २६-१२-१९२१

४२. तार: देवदास गांधीको

[२४ दिसम्वर, १९२१ या उसके पश्चात्][1]

महादेवके सम्वन्धमें आह्लादित। आशा है दुर्गा सशक्त और स्वस्थ होगी। चाहे तो वापस आ सकती है। आशा है तुम गिरफ्तार होनेतक अखवार जारी रखोगे और अन्य लोग तुम्हारा स्थान लेनेके लिए तैयार होंगे।

वापू

[अंग्रेजीसे]

वॉम्बे क्रॉनिकल, ३-१-१९२२

१. स्पष्ट है कि यह तार २४ दिसम्वर, १९२१ को महादेव देसाईको इंडिपेंडेंटका हस्तलिखित संस्करण प्रकाशित करनेके जुर्ममें दण्डविधि संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत सजा होनेके तुरन्त वाद भेजा गया था।

४३. टिप्पणियाँ

होम करते हाथ जले

किसी पत्रका सम्पादन करना कोई आसान काम नहीं है; यह बात मैं अपने लम्बे अनुभवसे समझ रहा हूँ। सम्पादकको पहले तो अपनी भूलोंके लिए उत्तरदायी होना पड़ता है। इसके बाद उसे उसका सहायक जो लिखे उसकी जिम्मेदारी लेनी पड़ती है तथा संवाददाता अथवा बाहरके लेखकोंकी भूलोंके लिए उत्तरदायी बनना पड़ता है। कम्पोजिटर भूल करे तो भी सम्पादक उत्तरदायी होता है और प्रूफ-शोधक भूल करे तो भी सम्पादकका ही मरण होता है। मशीन टूट जाये और समयपर अखबार न जाये अथवा ठीक-ठीक अक्षर न उठें तो इन सबके लिए भी सम्पादक उत्तरदायी है। वह सिर्फ लेख लिखकर ही भार-मुक्त नहीं हो सकता। इन सबके उदाहरण मेरे पास मौजूद हैं। लेकिन इस नवीनतम उदाहरणको पढ़कर पाठक हँसेंगे। उस भूलके कारण तो एक भाईको बहुत बड़ी गलतफहमी हो गई। ११ दिसम्बरके 'नवजीवन' में पारसी भाई-बहनोंसे सम्बन्धित टिप्पणीमें[1] निम्नलिखित वाक्य है: "पारसी भाई-बहनोंको इतना आश्वासन तो मैं देता हूँ कि ऐसे सैकड़ों हिन्दू और मुसलमान हैं जो उनके लिए और इसी प्रकार ईसाई आदि अन्य अल्पसंख्यक समाजोंके लिए अपने प्राण दे सकते हैं।" मूलमें "वि.[2] नानी[3]" शब्द थे। कहनेका आशय तो यह था कि पारसी, ईसाई आदि छोटी कौमोंकी रक्षा करनेके लिए सैकड़ों हिन्दू और मुसलमान तैयार हैं। इसमें "वि" के बादका बिन्दु उड़ जानेसे "अजमेर गया" का "आज मर गया" वाली बात हो गई है। और एक ईसाईने इसका उलटा अर्थ निकालकर मुझे उसपर उलाहना दिया है। इसी विषयपर लिखे मेरे अन्य लेखों तथा इस वाक्यकी रचनाको ध्यानमें रखते हुए उलटा अर्थ करनेकी कोई गुंजाइश नहीं है। तथापि अगर 'नवजीवन' से अपरिचित व्यक्ति इतने ही अंशको पढ़े तथा जैसा ऊपर लिखा है वैसा उलटा अर्थ करे अथवा समझे तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। इस अनुच्छेदको लिखनेका एक उद्देश्य उपर्युक्त ईसाई भाईसे और उनकी भाँति ही अगर किसी और मनुष्यको गलतफहमी हो गई हो तो उससे क्षमा-याचना करना है। इसका दूसरा उद्देश्य यह है कि सभी पाठक इससे यह शिक्षा ग्रहण करें कि जहाँ प्रसंगके विरुद्ध अर्थ किया जा सकता हो वहाँ अगर प्रसंगके अनुकूल अर्थकी गुंजाइश हो तो वे प्रसंगके अनुकूल अर्थ ही करें। और इसका तीसरा उद्देश्य सम्पादकके लिए दयाकी भिक्षा माँगना है। सम्पादक हर किसी वस्तुका ध्यान नहीं रख सकता यह जानते हुए पाठकोंको उचित है कि वे उसके नामसे प्रकाशित पत्रके अनिवार्य दोषोंको दरगुजर कर दें। लेकिन यह

१. देखिए खण्ड २१।

२. वगैरा-वगैरा, आदि।

३. छोटी।

सब-कुछ मैं कोई भूल करनेकी छूट लेनेकी खातिर नहीं लिख रहा हूँ। सम्पादकका कर्त्तव्य तो अपनी जिम्मेदारीको अच्छी तरह निभाना और अगर वह उसे न निभा सके तो अपने पदको छोड़ देना है। सम्पादक बननेके लिए किसीपर जोर-जबरदस्ती तो की नहीं जाती। अगर पत्रको छापनेवाले, कम्पोजिटर तथा प्रूफ पढ़नेवाले सब कुशल कार्यकर्त्ता न हों तो इसमें दोष तो सम्पादकका ही माना जायेगा। इन परिस्थितियोंमें उसने सम्पादन-कार्यको सँभाला ही क्यों था? यह तो अन्तिम आदर्श ही है। लेकिन यदि कोई यह मानकर बैठ रहे कि वह आज ही इस आदर्शकी प्राप्ति नहीं कर सकता तो वह काम शुरू ही नहीं करेगा, तब तो वह इस आदर्शको कदापि नहीं पा सकेगा। इसलिए सम्पादकपर पाठकोंका चाबुक तो रहना ही चाहिए। मात्र चाबुक चलानेमें उन्हें थोड़ी कलाका परिचय देना चाहिए। एक तो डायरकी भाँति चाबुक मारनेवाला मनुष्य होता है और दूसरा उस उदार राजाकी भाँति जो शोभाके लिए ही हाथमें चाबुक रखता है, लेकिन बिगड़े हुए घोड़ेपर उसका इस्तेमाल करता है ताकि घोड़ा यह न समझ ले कि चाबुक केवल शोभाकी ही वस्तु है।

जेलमें नेहरूजीसे मुलाकात

एक आश्रमवासीने लखनऊ जेलमें पण्डित मोतीलाल नेहरूसे मुलाकात करनेके बाद मुझे एक पत्र लिखा है। यह इतना सुन्दर है कि मैं इसे पूराका-पूरा नीचे प्रकाशित कर रहा हूँ:[1]

राजकोटवासी

अगर कोई राजकोटपर आरोप लगाये तो मुझे दुःख हुए बिना कैसे रह सकता है? थोड़े दिन पहले एक बहनने मुझसे यह कहा कि अब यदि मैं राजकोट जाऊँ तो मुझे खादी-ही-खादी दिखाई देगी। वहाँ विदेशी वस्त्र तो बहुत कम लोग पहनते हैं। यह बहन फिलहाल राजकोटमें रहती है और स्वयं जब बाहर निकलती है तब तो मुख्यतः खादी ही धारण करती है। इससे उसने ऐसा मान लिया जान पड़ता है कि कमसे-कम राजकोटमें तो हर कोई खादी ही पहनता है। लेकिन राजकोट-निवासी एक नवयुवक जो स्वदेशीका पूरा-पूरा पालन करता है और जो अधिक घूमा-फिरा नहीं है, राजकोटके सम्बन्धमें यह लिखता है:[2]

यह टीका कड़ी है। इसका समर्थन अनायास ही एक ऐसे काठियावाड़ी सज्जनने किया है जो बहुत ही चतुर पर्यवेक्षक हैं। उक्त टीकामें सम्भावित अतिशयोक्तिकी गुंजाइश रख लें तो भी यह वास्तविक हो सकती है। काठियावाड़ने तिलक स्वराज्य-कोषमें उचित राशि दी थी। मैं जानता हूँ कि अमरेलीमें खादी बनानेकी सुन्दर व्यवस्था है और काठियावाड़में खादीका अच्छा उत्पादन होता है। किन्तु यह दुःखकी बात है कि बड़े शहरोंमें रहनेवाले काठियावाड़ी विदेशी वस्त्रोंके प्रति अपने मोहका

१. यहाँ पत्रका अनुवाद नहीं दिया गया है।

२. यहाँ इसका अनुवाद नहीं दिया गया है। इसमें लेखकने लिखा था कि राजकोटमें स्वदेशीकी दिशामें कोई प्रगति नहीं हुई है।

परित्याग नहीं कर सके हैं। काठियावाड़पर पाश्चात्य सभ्यताका अपेक्षाकृत कम प्रभाव होना चाहिए। काठियावाड़की शुष्क भूमिमें तो मजबूत, सरल, शूरवीर, भोले तथा उदार मनुष्योंका जन्म होना चाहिए। यदि इसके बजाय काठियावाड़के शहरोंमें सुखो-पयोग बढ़ता ही चला जाये तो काठियावाड़से हमें जो बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं उनका क्या होगा? यदि काठियावाड़ स्वराज्य-यज्ञमें अपना पूरा योगदान नहीं करेगा तो मुझे लगता है कि उसे हिन्दुस्तानसे अलग हो जाना चाहिए। मुझे यह उम्मीद है कि जब जेल जानेका समय आयेगा तब काठियावाड़ी अपना पूरा योगदान देंगे। लेकिन यदि खादी पहनने लायक सादगी भी हम लोगोंमें नहीं आई है तो हम जेलकी सादगीको किस तरह बरदाश्त कर सकेंगे? जहाँ एक ओर देशबन्धु दास खादी पहनते हैं, चरखा चलाते हैं; मौलाना शौकतअली, जिनके लिए खादी पहनना बहुत कठिन काम था, अब खादी पहनने लगे हैं और जेलमें चरखा चलाते हैं; वहाँ दूसरी ओर काठियावाड़के नागरिक क्या खादीका त्याग करेंगे? अब मैं समझ सकता हूँ कि लोग मुझसे यह शिकायत क्यों करते थे कि काठियावाड़में खादी बुनी तो बहुत जाती है लेकिन वहाँ उसकी खपत कम है। क्या कभी ऐसा भी समय आयेगा जब काठियावाड़की हृष्ट-पुष्ट औरतें बेशक बाजरेकी रोटी बनायेंगी और सवेरे छाछ बिलोकर बढ़िया मक्खन निकालेंगी; लेकिन बाजरेकी रोटी कुत्तोंको डाल देंगी और पाचनशक्ति मक्खन पचाने लायक न रहनेसे स्वयं बिस्कुट और चाय लिया करेंगी। और चूँकि काठियावाड़का गेहूँ भारी पड़ता है और बहुत लाल होता है इसलिए बम्बईसे मशीनका आटा मँगवाकर उसकी चपातियाँ बनाकर खाया करेंगी! यदि कोई ग्रीनकी तरह राजाओंकी लड़ाइयोंके इतिहासको न लिखकर जनताके उत्थान और पतनका हाल लिखने बैठ जाये तो वह यह बात अवश्य सिद्ध कर देगा कि हिन्दुस्तानमें जैसे-जैसे महीन और मुलायम कपड़ेका आयात बढ़ता गया वैसे-वैसे हिन्दुस्तानके लोगोंके शरीरोंका गठन ढीला पड़ता गया और उनका मनोबल कम होता गया। काठियावाड़की छः फुट ऊँची रबारी स्त्रीको यदि कोई जापानी मलमलकी रंगबिरंगी साड़ी दे तो क्या वह उसे पहनेगी और उसे पहने हुए अपने ढोर चरायेगी। हम तो रास्ता ही भूल गये हैं। हम अन्तरके शृंगारको छोड़कर बाह्य सजावटके मोहमें पड़ गये हैं। जिसके फलस्वरूप हम अपना देश अपने हाथसे गँवा बैठे हैं, अपनी देह खो बैठे हैं तथा आत्माको मूर्छित कर चुके हैं।

क्या काठियावाड़के नवयुवक बातें बनाना छोड़कर कपड़ा बुनने लगेंगे? क्या काठियावाड़की औरतें श्रीमती वासन्तीदेवीकी भाँति खादी बेचनेके लिए निकलेंगी? क्या काठियावाड़की जनता ढेढ़ और भंगी भाइयोंकी पुकारको सुनेगी? उनके स्पर्शसे अपवित्र हो जानेवाले लोगोंको जेल नहीं जाना है। वे जेल जानेके योग्य नहीं हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-१२-१९२१

४४. भाषण : विषय-समितिकी बैठकमें[1]

२५ दिसम्बर, १९२१

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक यहाँ आज प्रातःकाल आरम्भ हुई और उसमें पूरे दिन गांधीजीके रखे हुए मुख्य प्रस्तावपर विचार किया जाता रहा। यह प्रस्ताव कांग्रेस स्वयंसेवक दलका संगठन करने, सविनय अवज्ञा आन्दोलनको बढ़ाने और गांधीजीको या उनके बाद नियुक्त किये जानेवाले अन्य लोगोंको संकट-कालमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी ओरसे कार्रवाई करनेका अधिकार देनेके सम्बन्धमें था। . . . विरोधी पक्षने प्रस्तावमें से उन अंशोंको, जिनमें प्रतिज्ञा जबतक कायम है तबतक हिंसाका आश्रय लेनेकी सम्भावनाका या उसका विचार तक करनेका निषेध किया गया था, निकाल देनेकी बार-बार माँग की। इस पक्षका नेतृत्व ऑल इंडिया मुस्लिम लीगके मनोनीत अध्यक्ष हसरत मोहानीने[2] किया। उनका कहना था कि यदि अहिंसा असफल हो जाये तो उस अवस्थामें उनके धर्ममें हिंसाका आश्रय लेनेकी अनुमति दी गई है।

बहससे मालूम हुआ कि इस सम्बन्धमें स्वयं मुसलमान सदस्योंमें मतभेद है। उनमें से कुछने मत व्यक्त किया कि मौ० हसरत मोहानीके संशोधनोंको स्वीकार करनेसे कांग्रेसका सिद्धान्त ही बदल जायेगा। . . .

अपना प्रस्ताव उपस्थित करते हुए गांधीजीने एक लम्बा भाषण दिया। उन्होंने कहा, कल शाम मैंने महाराष्ट्र दलके नेताओंके साथ विचार-विमर्श किया था। उसके फलस्वरूप मैंने अपने मूल प्रस्तावमें दो-एक छोटे-मोटे परिवर्तन-परिवर्द्धन कर लिये हैं। महाराष्ट्र दलको असहयोग कार्यक्रमकी सभी बातें पूर्ण रूपसे स्वीकार हैं। परन्तु उसके कुछ अंशोंके विषयमें उसका असन्तोष है। इस असन्तोषको दलके नेताओंने व्यक्त किया। मैं सबको विश्वास दिलाता हूँ कि उक्त परिवर्तनों-परिवर्द्धनोंमें असहयोगके प्रधान सिद्धान्तका रत्ती-भर भी त्याग नहीं किया गया है। फिर भी महाराष्ट्र दलका और अधिक निष्ठायुक्त सहयोग प्राप्त करना निश्चित हो गया है। महाराष्ट्र दल, बल और त्यागमें बेजोड़ है, उसने भूतकालमें बड़े-बड़े कार्य किये हैं और भारतमें प्रजातन्त्रकी अदम्य भावना भर देना उसीका कार्य है। इस दलके नेताने,[3] जो बादमें सारे भारतके नेता हुए और जिनकी मूर्ति करोड़ों देशवासियोंके हृदयोंमें आराध्य

१. यह बैठक अहमदाबादमें हुई थी।

२. १८७५-१९५१; राष्ट्रवादी मुसलमान नेता। खिलाफत आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया।

३. लोकमान्य तिलक।

देवके रूपमें प्रतिष्ठित हो गई है, इस प्रजातन्त्रकी भावनाकी वृद्धि करते हुए ही इस संसारसे कूच किया।

उन्होंने आगे कहा कि इस दलकी यह इच्छा थी कि प्रस्तावमें ऐसा संशोधन कर दिया जाये जिससे उन वकीलों, अध्यापकों और दूसरे लोगोंकी दुष्टतापूर्ण अपमानसे रक्षा हो सके जो यद्यपि कांग्रेसके आदेशानुसार विशेष रूपसे त्याग नहीं कर सके हैं पर दूसरे असहयोगियोंसे कम देशभक्त और ईमानदार नहीं हैं। मैं प्रस्तावमें ऐसा कोई वाक्य रखनेका विरोधी हूँ, क्योंकि इसका महा अनर्थकारी अर्थ किया जाना सम्भव है, परन्तु मैं इस बातको पूरा जोर देकर कहता हूँ कि हम लोगोंको उन सब लोगोंका सम्मान अवश्य करना चाहिए जो यद्यपि असहयोगियोंकी दृष्टिसे कमजोर हैं, परन्तु जो देशभक्तिमें अवश्य ही किसीसे कम नहीं हैं। मैं वकीलोंका छिद्रान्वेषण नहीं कर सकता, क्योंकि उन्होंने उस समय देशकी अनुपम सेवा की है जब और लोग भयसे काँपते रहते थे।

गांधीजीने आगे कहा :

मैं आप लोगोंमें से प्रत्येकसे अनुरोध करता हूँ कि आप लोग यहाँसे नरम दलवालों, वकीलों, अध्यापकों, सरकारी नौकरों और खुफिया पुलिसके लोगोंके प्रति मनमें सद्भाव लेकर जायें। नरम दलवाले हमारे देशभाई हैं। आज वे हमारी ही पंक्तिमें आकर खड़े हो रहे हैं और जब वे देखते हैं कि देशकी स्वाधीनता खतरेमें पड़ गई है तब वे अपने विचारोंको बिलकुल निर्भीक होकर व्यक्त कर रहे हैं। 'लीडर' और 'बंगाली' के सम्पादकीय लेखोंको पढ़कर आत्माको आनन्द होता है। क्या हम सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीकी[1] सहायतासे सदाके लिए वंचित होनेके लिए तैयार हैं? जब-जब उनका किसी रीतिसे अपमान किया जाता है तब-तब मैं बिना आँसू बहाये नहीं रह सकता। मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीसे महाराष्ट्र दलकी उस स्तुत्य भावनाको ग्रहण और धारण करनेका अनुरोध करता हूँ जिससे प्रेरित होकर उसने अपनेसे भिन्न मत रखनेवालों के प्रति सहिष्णुता प्रकट करनेका आग्रह किया है। मुझे पूरा निश्चय है कि जब त्यागका समय आयेगा तब महाराष्ट्र बंगालसे कदापि पीछे नहीं रहेगा, बल्कि बहुत सम्भव है, उसका नाम सूचीमें सबसे ऊपर रहे।

महात्माजीने कहा कि इतनी कैफियतके बाद मुझे आशा है कि महाराष्ट्र दलके संशोधनका विरोध न किया जायेगा, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि जिस भावनासे प्रेरित होकर यह प्रस्तुत किया गया है उसको सब असहयोगी अपने भीतर उतारें।

अन्तमें गांधीजीने असहयोगके कार्यक्रमोंमें अहिंसाकी प्रधानतापर जोर देते हुए कहा :

या तो हमें इस कार्यक्रममें पूरा विश्वास रखकर नये वर्षमें पैर रखना और विद्युत् वेगसे इसे समाप्त करना होगा या अहिंसाका भक्त रहनेके करारको तोड़

१. १८४८-१९२५; १८९५ और १९०२ में कांग्रेसके अध्यक्ष और बादमें दलके नेता रहे।

देना पड़ेगा। सरकारके साथ यह हमारा अन्तिम मोर्चा है। अहिंसामें मेरा विश्वास इतना अधिक है कि यदि देश सच्चे अहिंसाके आचरणके लिए आवश्यक मानसिक स्थिति भी प्राप्त कर ले तो मैं यह वादा करनेके लिए तैयार हूँ कि हमें इसी महीनेके अन्ततक स्वराज्य, तत्त्वतः सच्चा स्वराज्य, मिल जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-१२-१९२१

४५. भाषण: विषय-समितिकी बैठकमें[1]

२७ दिसम्बर, १९२१

आज अहमदाबादमें सुबह चार घंटेकी बैठकके बाद भारतीय कांग्रेस कमेटी सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मामलोंमें निश्चित निष्कर्षोंपर पहुँची। उसने न केवल बहुत बड़े बहुमतसे गांधीजीका मुख्य प्रस्ताव[2] स्वीकार किया अपितु हसरत मोहानीके नेतृत्वमें होनेवाले ५२ सदस्योंके जबरदस्त विरोधको भी अस्वीकार कर दिया। इन सदस्योंने कांग्रेसके सिद्धान्तमें परिवर्तन करवानेके लिए और ब्रिटिश साम्राज्यके बाहर स्वराज्य-प्राप्तिको कांग्रेसका उद्देश्य निश्चित करवानेके लिए बहुत संघर्ष किया था। . . .

बैठककी कार्रवाई शुरू करते हुए अध्यक्ष हकीम अजमल खाँने घोषणा की कि उन्हें श्री गांधीके प्रस्तावमें ऐसे संशोधनोंके नोटिस मिले हैं जो सही अर्थोंमें कांग्रेसके सिद्धान्तके ही प्रतिकूल पड़ते हैं। इसलिए उन्होंने उनको नियम-विरुद्ध ठहराया; परन्तु यह सुझाव दिया कि यदि नोटिस देनेवाले लोग चाहें तो वे उन संशोधनोंको पृथक् और स्वतन्त्र प्रस्तावोंके रूपमें रख सकते हैं।

चूँकि स्थिति कुछ उलझी हुई दिखाई दी, इसलिए गांधीजीने एक संक्षिप्त भाषण दिया जिसमें उन्होंने इन विरोधी मुद्दोंका विश्लेषण किया और समितिके सामने उन्हें स्पष्ट करके रखा। उन्होंने कहा, यदि हसरत मोहानी और अन्य लोग चाहें तो वे कांग्रेस-सिद्धान्तमें परिवर्तन करवानेके सम्बन्धमें अलग प्रस्ताव रख सकते हैं। किन्तु, चूँकि मेरा प्रस्ताव अभी समितिके सामने है, अतः मैं चाहता हूँ कि वे सब लोग जो हसरत मोहानीकी तरह सोचते हैं यह याद रखें कि उन्हें मेरे प्रस्तावके पक्षमें मत नहीं देना चाहिए, क्योंकि मेरे प्रस्तावका मूल आधार ही यह है कि वर्तमान सिद्धान्त अवश्य ही बरकरार रहना चाहिए और हमें अपनी लड़ाई अन्ततक अहिंसाके अस्त्रसे ही लड़नी चाहिए। किन्तु उसके विपरीत हसरत मोहानीका दल पूर्ण स्वतन्त्रताके और स्वतन्त्रताकी लड़ाई हर सम्भव उपायसे लड़नेके पक्षमें है। मामला साफ और सीधा

१. यह बैठक अहमदाबादमें हुई थी।

२. देखिए "भाषण: अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें – १", २८-१२-१९२१।

है और मैं चाहता हूँ कि जो लोग सिद्धान्तमें परिवर्तन कराना नहीं चाहते कमसे-कम वे मेरे प्रस्तावमें निहित भावनाके पक्षमें मत दें। साथ ही वे यह याद रखें कि यदि वे बादमें हसरत मोहानीके प्रस्तावके पक्षमें मत देंगे तो वे मेरे प्रस्तावको व्यर्थ कर देंगे।

भाषण समाप्त होनेपर, गांधीजीके प्रस्तावपर मत लिये गये और वह हर्ष-ध्वनियोंके बीच पास हो गया। केवल १० सदस्योंने विपक्षमें मत दिये।

इसके बाद हसरत मोहानीने कांग्रेसके सिद्धान्तमें परिवर्तनका अपना पहला संशोधन रखा जिसमें उन्होंने शान्तिपूर्ण और वैध उपायोंके बजाय सभी सम्भव और उचित उपायों द्वारा स्वराज्य प्राप्त करनेका प्रस्ताव किया था।

इस संशोधनको कोई अच्छा समर्थन नहीं मिला, इसलिए प्रस्तोताने उसे वापस ले लिया।

उनके दूसरे संशोधनपर, जिसमें ब्रिटिश साम्राज्यके बाहर स्वराज्य लेनेकी बात कही गई थी, विशेष रूपसे बहुत विवाद हुआ।

एक दर्जन सदस्योंने उसका समर्थन किया . . .।

किन्तु इतने ही सदस्योंने संशोधनका विरोध किया . . .।

इसके बाद गांधीजीने एक संक्षिप्त भाषण दिया। उन्होंने कहा, मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि पंजाब और खिलाफतके मामलोंमें ब्रिटिश सरकारसे राहत पानेकी मुझे १५ महीने पहले जितनी आशा थी उससे अधिक आज है। कांग्रेसके सिद्धान्तके अन्तर्गत कांग्रेसमें अब भी ऐसे दो दलोंके रहनेकी गुंजाइश है जो ब्रिटिश साम्राज्यके अन्दर या बाहर स्वराज्य चाहते हों, परन्तु जो लोग हिंसाका सहारा लेना चाहते हैं, उनके लिए उसमें कोई गुंजाइश नहीं हो सकती; क्योंकि जैसे ही कोई व्यक्ति कांग्रेसमें शामिल होता है, उसे उसके सिद्धान्तके अनुसार अहिंसाकी प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करने ही पड़ते हैं। गांधीजीने जोर देकर कहा कि स्वराज्य प्राप्तिसे साम्राज्य-वाद स्वतः भंग हो जायेगा। भारत तब भी निश्चय ही स्वतन्त्र होगा। भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने सबको चेतावनी दी कि हम अपनेसे सहानुभूति रखनेवाले नरमदलीय और अन्य लोगोंको ऐसे कदम उठाकर अपनेसे अलग न करें। ऐसी कार्रवाइयोंसे हमारा वर्तमान सरल काम एक बहुत मुश्किल काम बन जायेगा।

हसरत मोहानीके संशोधनपर मत लेनेसे पहले सभी दर्शकोंसे कहा गया कि वे बाहर चले जायें . . .। उसके बाद उसपर मत लिये गये और वह भारी बहुमतसे नामंजूर कर दिया गया। उसके पक्षमें केवल ५२ मत आये . . .।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-१२-१९२१

४६. भाषण : विषय-समितिकी बैठकमें[1]

२८ दिसम्बर, १९२१

आज विषय-समितिने अपनी अन्तिम बैठक समाप्त करनेसे पूर्व पण्डित मदनमोहन मालवीयका वह प्रस्ताव भारी बहुमतसे अस्वीकार कर दिया जिसमें कांग्रेससे आग्रह किया गया था कि वह उचित शर्तोंपर गोलमेज सम्मेलनकी इच्छा व्यक्त करे और कलके मुख्य प्रस्तावमें से उस धाराको निकाल दे जिसमें उग्र रूपसे कानूनकी सविनय अवज्ञा करनेकी सलाह दी गई है।

समितिकी बैठक सुबह आठ बजे शुरू हुई। उसमें हकीम अजमल खाँ नहीं आ सके थे . . .।

तब गांधीजी अध्यक्ष चुने गये।

कार्रवाई प्रारम्भ करते हुए गांधीजीने समितिको बताया कि मद्रासके सदस्य, जिनमें सर्वश्री विजयराघवाचार्य, कस्तूरी रंगा आयंगार[2] और सत्यमूर्ति[3] भी हैं, मुझसे बहुत आग्रहपूर्वक कह रहे हैं कि वाइसरायके कलकत्तामें भाषणके जवाबमें एक प्रस्ताव पास करना वांछनीय है। इस प्रस्तावमें कांग्रेसकी ओरसे जोरदार शब्दोंमें यह घोषणा की जानी चाहिए कि भारतके भाग्यका निर्णय ब्रिटिश संसदके हाथोंमें नहीं है, वरन् कांग्रेसके हाथोंमें है और ब्रिटिश संसद तो सिर्फ भारतके लोगोंकी इच्छा ही पूरी कर सकती है। उन्होंने कहा कि दूसरी ओर पण्डित मालवीय और श्री जिन्ना यह जोर दे रहे हैं कि गोलमेज सम्मेलनके सुझावके सम्बन्धमें कांग्रेसको निश्चय ही अपनी स्थिति बतानी चाहिए।

गांधीजीने दोनों दलों द्वारा सुझाये गये आधारपर प्रस्ताव स्वीकार करनेका काम समितिपर छोड़ दिया क्योंकि वे खुद ऐसा प्रस्ताव नहीं तैयार कर सके थे जो सदस्यों-की इच्छाके अनुसार होता। उन्होंने कहा, मेरे, पण्डित मालवीय, श्री दास, मौलाना अबुल कलाम और श्री श्यामसुन्दर चक्रवर्तीके बीच गोलमेज सम्मेलनके बारेमें तारोंका आदान-प्रदान हुआ है। मैं सर्वश्री दास और चक्रवर्तीसे इस महीनेकी २४ तारीखको हड़ताल न करनेकी बातपर सहमत हो गया था बशर्ते कि स्वयंसेवक संगठनको विच्छिन्न करने और आम सभाओंको निषिद्ध ठहरानेवाली विज्ञप्तियाँ वापस ले ली जायें और इन विज्ञप्तियोंके अन्तर्गत जो सत्याग्रही कैद भुगत रहे हैं वे रिहा कर दिये जायें। श्री गांधीने कहा कि मैं अपनी माँग थोड़ी-सी बढ़ा रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि फतवा-सम्बन्धी

१. यह बैठक अहमदाबादमें हुई थी।

२. पत्रकार और मद्रासके कांग्रेसी नेता। सविनय अवज्ञा जाँच-समितिके सदस्य; हिन्दूके सम्पादक।

३. १८८७-१९४३; मद्रासके प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता और वक्ता।

कैदी, जिनमें कराचीके कैदी भी आते हैं, रिहा कर दिये जायें क्योंकि सरकार कराचीके मुकदमोंके समयसे ही पागल हुई है। उन्होंने यह भी कहा कि वे उन लोगोंके लिए संरक्षण नहीं माँगते जिन्होंने हिंसा की है। श्री गांधीने श्री चक्रवर्तीके एक दूसरे तारका, जिसमें कहा गया था कि कुछ शर्तोंपर कलकत्ताके लोगोंका मत एक गोलमेज सम्मेलन किये जानेके पक्षमें है, यह जवाब दिया कि या तो यह सम्मेलन बिना शर्त होना चाहिए, अर्थात् सरकार जो चाहे करती रहे और असहयोगी जो चाहें करते रहें; या यदि शान्ति आवश्यक है तो यह जरूरी है कि पहले शर्तें और सम्मेलनके गठनकी बातें तय हो जायें और सब कैदी, जिनमें कराचीके कैदी भी शामिल हैं, रिहा कर दिये जायें और आपत्तिजनक विज्ञप्तियाँ बिना शर्त वापस ले ली जायें।

भाषण जारी रखते हुए श्री गांधीने कहा :

मैं अपनी स्थिति बिलकुल साफ कर देना चाहता हूँ। व्यक्तिशः मैंने सम्मेलनके प्रश्नको जरा भी महत्त्व नहीं दिया है। मैं समझता हूँ कि सम्मेलनके सम्बन्धमें प्रस्ताव पास करना कांग्रेसकी प्रतिष्ठासे मेल नहीं खाता क्योंकि वाइसरायकी घोषणामें ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे लगे कि कांग्रेससे उत्तरकी अपेक्षा की जाती है। दूसरी ओर कांग्रेसके मुख्य प्रस्तावमें, जिसे मैं आशा करता हूँ कि आप कांग्रेसके पण्डालमें सर्व-सम्मतिसे पास करेंगे, ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे वाइसराय या किसी दूसरेके भी, जो गोलमेज सम्मेलन कराना चाहता हो, रास्तेमें रुकावट पड़ती हो। बल्कि उस प्रस्तावमें कुछ ऐसा है जो बहुत ही गौरवास्पद है। वह यह है कि यदि सरकार गोल-मेज सम्मेलन करना चाहती है तो वह केवल तभी हो सकता है जब हमें हृदय-परि-वर्तन होनेके संकेत मिलें और हमें यह लगे कि सम्मेलनके कुछ सफल परिणाम होंगे। यदि हम सम्मेलनमें जायें और वहाँसे बिलकुल खाली हाथ लौटें तो उससे हमारे लिए बहुत कठिन समस्या पैदा हो जायेगी। किन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे वाइसरायकी घोषणामें ऐसी कोई बात नहीं दिखती जिससे मुझमें विश्वास पैदा हो।

उन्होंने आगे कहा कि वाइसराय पहले ही पंजाब और खिलाफतके विषयमें अपनी लाचारी जाहिर कर चुके हैं और हमपर सुधार थोपे हैं। निस्सन्देह इस विचारमें बहुत-कुछ सार है कि जब कामकाजी लोग विचार-विमर्श करेंगे तो हम बिलकुल खाली हाथ नहीं लौटेंगे, किन्तु

मैं तो कहता हूँ कि कांग्रेसका यह काम नहीं है कि वह कमजोर आधारपर और केवल तिनकेका सहारा पानेकी आशासे ऐसी कोई घोषणा करे। डूबते हुए मनुष्यके सिवा तिनकेका सहारा दूसरा कौन लेता है? किन्तु कांग्रेस तिनकेका सहारा नहीं लेगी, क्योंकि वह तो आज जीवनी शक्तिसे स्पन्दित है। (देरतक तालियाँ)

अन्तमें श्री गांधीने पण्डित मालवीयसे, जिन्हें उन्होंने तालियोंके बीच सबसे महान् भारतीय बताया, अपने विचार व्यक्त करनेकी प्रार्थना की . . .।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, ३०-१२-१९२१

४७. भाषण : अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें – १

२८ दिसम्बर, १९२१

महात्मा गांधी सदाकी तरह लँगोटी धारण किये हुए जैसे ही सभा-मंचसे उतर-कर वक्ताके आसनकी ओर बढ़े वैसे ही लोगोंने श्रद्धा और उत्साहसे जोरोंकी करतल-ध्वनि की। उन्होंने आसन ग्रहण करनेके बाद हिन्दीमें बोलना शुरू किया :

सभापतिजी, भाइयो और बहनो,

हकीमजी साहबने[1] मुझे तीस मिनटका समय दिया है। उम्मीद है कि मैं इतने समयमें अपना भाषण पूरा कर लूँगा। लेकिन सभापति महोदय इस प्रस्तावको हिन्दी और अंग्रेजीमें पढ़कर सुनानेका समय इसमें जोड़ना भूल गये हैं। (हँसी)

आप लोगोंमें से जो भी अंग्रेजी नहीं जानते वे मुझे थोड़े समयके लिए क्षमा करें। मैं बादमें इसका सारांश आपको हिन्दीमें बतला दूँगा।

इसके बाद गांधीजीने अंग्रेजीमें प्रस्ताव पढ़ना शुरू किया और साथ-साथ वे प्रत्येक पैरेका अर्थ हिन्दीमें बतलाते जाते थे।

चूँकि कांग्रेसके पिछले अधिवेशनके समयसे भारतवर्षके लोगोंने प्रत्यक्ष अनुभवसे यह जान लिया है कि अहिंसक असहयोगको अपनानेकी बदौलत देशने निर्भयता, आत्मत्याग और आत्मसम्मानके मामलेमें बहुत प्रगति की है, और चूँकि इस आन्दोलनसे सरकारकी प्रतिष्ठाको बहुत धक्का पहुँचा है और चूँकि कुल मिलाकर देश स्वराज्यकी ओर तेजीके साथ आगे बढ़ रहा है; यह कांग्रेस कलकत्तेके विशेष अधिवेशनमें स्वीकृत और नागपुरमें पुनः स्वीकृत प्रस्तावकी परिपुष्टि करती है और अपना यह दृढ़ निश्चय प्रकट करती है कि जबतक पंजाब और खिलाफतके अन्यायोंका निवारण न हो और स्वराज्यकी स्थापना न हो तथा भारतीय सरकारका नियन्त्रण गैर-जिम्मेदार हाथोंसे निकलकर भारतके लोगोंके हाथोंमें न आ जाये, तबतक अहिंसक असहयोगका कार्यक्रम, प्रत्येक प्रान्त अपनी-अपनी तजवीजके अनुसार, और भी अधिक जोरके साथ जारी रखेगा।

और चूँकि वाइसरायने अपने हालके भाषणोंमें जो धमकियाँ दी हैं उनके फलस्वरूप भारत सरकारने भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें स्वयंसेवक दलोंको छिन्न-भिन्न करके तथा सार्वजनिक सभाओं और यहाँतक कि कमेटीकी बैठकोंको भी गैर-कानूनी तथा मनमाने तरीकेसे जबरन् बन्द करके तथा कितने ही प्रान्तोंमें बहुतेरे कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको गिरफ्तार करके जो दमन शुरू किया है उसके कारण, और चूँकि इस दमनका स्पष्ट उद्देश्य यह है कि कांग्रेस और खिलाफत-

१. हकीम अजमल खाँ।

की कार्रवाइयोंका दम घोट दिया जाये और जनता उनकी सहायतासे वंचित रखी जाये, अतः यह सभा संकल्प करती है कि जिस कद्र आवश्यकता हो, कांग्रेसके दूसरे तमाम काम बन्द रखे जायें और सब लोगोंसे अपील करती है कि वे पिछली २३ नवम्बरको बम्बईमें कार्य-समितिके प्रस्तावके अनुसार सारे देशमें संगठित होनेवाली स्वयंसेवक सेनामें भरती होकर शान्तिपूर्वक तथा बिना किसी तरहके दिखावेके अपनेको गिरफ्तारीके लिए अर्पित कर दें। परन्तु जो लोग नीचे लिखे प्रतिज्ञा-पत्रपर सही न करें, वे उस सेनामें भरती न किये जायेंगे:

ईश्वरको साक्षी मानकर मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि

(१) मैं राष्ट्रीय स्वयंसेवक सेनामें भरती होना चाहता हूँ।

(२) जबतक मैं इस सेनामें रहूँगा तबतक मैं वचन और कर्मसे अहिंसाका पालन करूँगा और सरगर्मीके साथ इस बातकी कोशिश करूँगा कि अपने इरादेमें भी *अहिंसक बना रहूँ; क्योंकि मैं मानता हूँ कि भारतकी वर्तमान परिस्थितिमें* केवल अहिंसाके द्वारा ही खिलाफत और पंजाबको सहायता मिल सकती है और स्वराज्यकी प्राप्ति हो सकती है तथा भारतकी तमाम जातियों —— हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई और यहूदियों —— में एकता स्थापित की जा सकती है।

(३) मैं ऐसी एकताका कायल हूँ और हमेशा उसकी वृद्धिके लिए प्रयत्न करूँगा।

(४) मैं मानता हूँ कि भारतकी आर्थिक, राजनीतिक और नैतिक मुक्तिके लिए स्वदेशी बिलकुल आवश्यक है, और दूसरे सब किस्मके कपड़ोंको छोड़कर सिर्फ हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी ही पहनूँगा।

(५) मैं एक हिन्दूकी हैसियतसे मानता हूँ कि छुआछूतकी बुराईको दूर करना आवश्यक और न्याययुक्त है और जब-जब अवसर आयेगा मैं अन्त्यज जातियोंके साथ मिलूँगा-जुलूँगा तथा उनकी सेवा करनेका प्रयत्न करूँगा।

(६) मैं अपने अफसरोंकी आज्ञाओंका और उन तमाम कानून-कायदोंका पालन करूँगा जिन्हें स्वयंसेवक समिति, या कार्य-समिति अथवा कांग्रेस द्वारा संस्थापित दूसरी कोई संस्था तैयार करेगी और जो इस प्रतिज्ञा-पत्रके तत्त्वके विरुद्ध न होंगे।

(७) मैं अपने देश और धर्मकी खातिर बिना गुस्सा लाये जेलके कष्ट सहने, मारपीट सहने और मौत तकको अपनानेके लिए तैयार हूँ।

(८) मेरे जेल चले जानेकी अवस्थामें मैं कांग्रेससे अपने कुटुम्बियों तथा आश्रित जनोंके लिए किसी तरहकी सहायताका दावा न करूँगा।

इस कांग्रेसको यह विश्वास है कि १८ वर्ष तथा इससे अधिक अवस्थावाले तमाम लोग तुरन्त स्वयंसेवक सेनामें भरती हो जायेंगे।

सार्वजनिक सभाओंपर प्रतिबन्धकी घोषणाओंके बावजूद और कांग्रेसकी बैठकोंको भी सार्वजनिक सभाओंमें शामिल करनेकी कोशिशोंके कारण, कांग्रेस सलाह देती है कि कमेटीकी बैठकें और सार्वजनिक सभाएँ बन्द जगहोंमें टिकट लगाकर और पहले ही से मुनादी कराके की जायें। जहाँतक मुमकिन हो वही वक्ता भाषण करे जिसका नाम पहलेसे जाहिर कर दिया गया हो और वह भी लिखा हुआ भाषण पढ़े। हर हालतमें इस बातकी सावधानी रखनी चाहिए कि कहीं उत्तेजना न फैल जाये और उससे लोग हिंसाके लिए प्रवृत्त न हों।

इस कांग्रेसका यह भी मत है कि किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा स्वेच्छाचारी और अत्याचारपूर्ण तथा पौरुषहीन कर देनेवाले ढंगसे सत्ताके उपयोगको रोकनेके दूसरे तमाम उपायोंके कारगर सिद्ध न होनेपर, सशस्त्र विद्रोहके बजाय सविनय अवज्ञा ही एकमात्र सभ्यतापूर्ण और कारगर इलाज है। इसलिए यह कांग्रेस उन समस्त कार्यकर्त्ताओंको, जो शान्तिमय उपायोंको मानते हैं और जिन्हें पूर्ण विश्वास है कि वर्तमान सरकारको भारतवासियोंके प्रति अपनी इस पूर्ण गैर-जिम्मेदाराना स्थितिसे च्युत करनेके लिए, किसी-न-किसी प्रकारके आत्मत्यागके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है, यह सलाह देती है कि वे व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाको ग्रहण करें और जब जनता अहिंसाकी पूरी तालीम पा चुके और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा दिल्लीकी पिछली बैठकमें बताई दूसरी शर्तोंका पालन करने योग्य हो जाये तब सार्वजनिक सविनय अवज्ञा भी शुरू कर दे।

इस कांग्रेसका यह मत है कि सविनय अवज्ञापर ध्यान केन्द्रित करनेके लिए — फिर चाहे वह व्यक्तिगत हो या सामूहिक, चाहे आक्रामक हो या रक्षात्मक — जो उचित सावधानी रखते हुए तथा कार्य-समिति अथवा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंकी ओरसे समय-समयपर निकलनेवाली सूचनाओंके अनुसार किया जाये, कांग्रेसकी दूसरी तमाम गतिविधियाँ जब कभी, जहाँ कहीं और जिस हद तक आवश्यकता हो, बन्द कर दी जायें।

यह कांग्रेस १८ और इससे अधिक उम्रके विद्यार्थियोंको, विशेष करके उन विद्यार्थियोंको जो राष्ट्रीय विद्यालयोंमें पढ़ते हैं तथा उनके अध्यापक-वर्गको निमन्त्रित करती है कि वे पूर्वोक्त प्रतिज्ञा-पत्रपर तुरन्त सही कर दें और राष्ट्रीय स्वयंसेवक दलोंमें भरती हो जायें।

कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंके एक बड़े भागकी गिरफ्तारीकी सम्भावनाके कारण यह कांग्रेस, अपने सामान्य तन्त्रको, जब कभी हो सके तब सामान्यतया उसका उपयोग करनेके लिए अक्षुण्ण बनाये रखना आवश्यक समझती है और इसीलिए महात्मा गांधीको, दूसरी सूचना निकलने तक, अपना मुख्तारआम मुकर्रर करती है और अ० भा० कांग्रेस कमेटीके तमाम अधिकार उन्हें देती है। इनमें कांग्रेसके,

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अथवा कार्य-समितिके विशेष अधिवेशन बुलानेका अधिकार भी शामिल है। इन अधिकारोंका उपयोग वे कांग्रेसकी किन्हीं दो बैठकोंके बीचकी अवधिमें ही कर सकते हैं। किसी आकस्मिक आवश्यकताके समय अपने स्थानपर किसी दूसरेको मुख्तारआम मुकर्रर करनेका भी अधिकार उन्हें है।

यह कांग्रेस ऐसे उत्तराधिकारी मुख्तारआमको तथा उनके पीछे जो-जो उत्तराधिकारी मुकर्रर होते जायेंगे उन सभीको पूर्वोक्त सभी अधिकार देती है।

पर इसमें शर्त यह है कि इस प्रस्तावकी किसी बातसे महात्मा गांधीको अथवा किसी भी पूर्वोक्त उत्तराधिकारीको यह अधिकार नहीं होगा कि वे भारत सरकार अथवा ब्रिटिश सरकारसे, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी मंजूरी लिये बिना अथवा उस मंजूरीको विशेष रूपसे आयोजित कांग्रेसके अधिवेशनमें स्वीकृत कराये बिना, किसी तरहकी सुलह करें; और एक शर्त यह भी है कि जबतक कांग्रेसकी आज्ञा पहले न प्राप्त कर ली जाये, महात्मा गांधी या उनके उत्तराधिकारी कांग्रेसके ध्येयको न बदलें।

यह कांग्रेस उन समस्त देशभक्तोंको बधाई देती है जो अपनी अन्तरात्माकी पुकारपर अथवा अपने देशके लिए कारावास भोग रहे हैं और यह मानती है कि उनके आत्मबलिदानने स्वराज्यके आगमनकी गतिको बहुत तेज कर दिया है।[1]

इस प्रस्तावको अंग्रेजी और हिन्दुस्तानीमें पढ़नेमें मुझे पूरे ३५ मिनट लगे हैं। यदि सम्भव हुआ तो मैं चाहूँगा कि मुझे अब ३० मिनट भी, जितना समय कि हकीमजी साहबने मुझे दिया है, न लगें। और यदि सम्भव हुआ तो मैं यह सब समय नहीं लूँगा क्योंकि मेरे खयालमें यह प्रस्ताव खुद बहुत साफ है। यदि पन्द्रह महीनोंकी लगातार सक्रियताके बाद भी यहाँ इस अधिवेशनमें एकत्रित आप सब प्रतिनिधियोंको यह मालूम नहीं कि आप करना क्या चाहते हैं, तो मैं निश्चित रूपसे कह सकता हूँ कि मैं दो घंटेके भाषणसे भी आपको विश्वास नहीं दिला सकूँगा। इसके अलावा, यदि मैं आज आपको अपने भाषणके बलपर विश्वास दिला भी सका तो मुझे भय है कि अपने देशवासियोंपर मेरी कोई आस्था नहीं रह जायेगी, क्योंकि इससे यह जाहिर होगा कि उनमें संगत ढंगसे सोचनेकी क्षमता नहीं है। कारण, मेरा कहना यह है कि इस प्रस्तावमें कुछ भी नया नहीं है, कोई चीज ऐसी नहीं है जो हम अबतक बराबर करते न रहे हों, अबतक बराबर सोचते न रहे हों। कोई भी चीज इस प्रस्तावमें ऐसी नई नहीं है जो तनिक भी चौंकानेवाली हो। आपमें से जिन्होंने कार्य-समितिकी हर महीनेकी कार्यवाहियोंपर और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी हर तीसरे महीनेकी कार्यवाहियोंपर ध्यान दिया है और उनके प्रस्तावोंका अध्ययन किया है, वे केवल एक

१. ये अनुच्छेद "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके छतीसवें अधिवेशनकी रिपोर्ट" में शामिल थे। इसके बादके अनुच्छेद १९-१-१९२२ के **यंग इंडिया**से लिये गये हैं, जिसमें इनकी प्रस्तावनाके रूपमें यह टिप्पणी दी गई थी: "यह श्री गांधीके उस भाषणका पुनरीक्षित पाठ है जो उन्होंने कांग्रेस अधिवेशनमें मुख्य प्रस्ताव पेश करते हुए दिया था।"

ही निष्कर्षपर पहुँच सकते हैं कि यह प्रस्ताव पिछले पन्द्रह महीनोंकी राष्ट्रीय गति-विधियोंका बिलकुल स्वाभाविक परिणाम है। और सरकारकी दमन नीति जिस — अधोगामी — मार्गपर चल रही है यदि आपने उसे तनिक भी समझा है, तो आप केवल इसी निष्कर्षपर पहुँच सकते हैं कि विषय-समितिका इस प्रस्तावपर पहुँचना ठीक ही है; और कि एक स्वाभिमानी राष्ट्र वाइसरायकी घोषणाओंका और इस देशमें जो दमन चल रहा है उसका केवल वही जवाब दे सकता है जो कि इस प्रस्तावमें दिया गया है।

स्वयंसेवकोंको जो शपथ लेनी है उसकी धार्मिक बारीकियोंके बारेमें मैं अंग्रेजी जाननेवाले मित्रोंका कोई समय नहीं लूँगा। उस विषयमें अपने विचार मैं हिन्दुस्तानीमें ही प्रकट करना चाहता हूँ। लेकिन मैं चाहता हूँ कि यह कांग्रेस इस प्रस्तावके आशय और परिणामोंको समझ ले। इस प्रस्तावका अर्थ यह है कि हम लाचारी और किसी भी व्यक्तिकी अधीनताकी स्थितिसे ऊपर उठ चुके हैं। इस प्रस्तावका अर्थ यह है कि राष्ट्र अपने प्रतिनिधियोंके माध्यमसे, अपनी इच्छानुसार कार्य करनेका संकल्प कर चुका है, जिसमें उसे दुनियाके किसी भी इन्सानकी मदद नहीं चाहिए, केवल एक भगवान्‌की मदद चाहिए।

यह प्रस्ताव जहाँ अपने अधिकार स्थापित करने और दुनियाकी नजरोंसे नजरें मिलनेके, राष्ट्रके अदम्य साहस और संकल्पको प्रकट करता है, वहीं पूरी विनम्रताके साथ सरकारसे यह भी कहता है: "तुम चाहे कुछ भी करो, चाहे तुम हमारा कितना भी दमन करो, पर एक दिन तुम्हें लाचार हो पश्चात्ताप करना ही पड़ेगा; और हमारा तुमसे कहना यह है कि तुम समय रहते सोच लो, इसपर ध्यान दो कि तुम क्या कर रहे हो और यह खयाल रखो कि भारतके ३० करोड़ लोग कहीं हमेशाके लिए तुम्हारे दुश्मन न बन जायें।"

यदि सरकार सचमुच चाहती है कि रास्ता खुला रहे तो यह प्रस्ताव उसके लिए रास्ता बिलकुल खुला छोड़ रहा है। यदि नरमदलीय (माडरेट) दोस्त खिलाफतके झण्डेके नीचे और पंजाबकी — इसलिए भारतकी — स्वाधीनताके झण्डेके नीचे इकट्ठे होना चाहते हैं, तो यह प्रस्ताव उनके लिए भी रास्ता बिलकुल खुला छोड़ रहा है। यदि सरकार न्याय करनेके लिए वस्तुतः इच्छुक है, यदि लॉर्ड रीडिंग वाकई न्याय करनेके लिए ही भारत आये हैं, उससे कम किसी चीजके लिए नहीं आये हैं — और हमें उससे अधिक कुछ नहीं चाहिए — तो मैं उन्हें इस मंचसे, ईश्वरको अपना साक्षी मानकर और यथाशक्ति पूरी गम्भीरताके साथ यह सूचित करता हूँ कि यदि उनका इरादा नेक है तो इस प्रस्तावमें उनके लिए रास्ता खुला है। लेकिन यदि उनका इरादा बद है, तो उनके लिए रास्ता बन्द है, फिर चाहे कितने ही आदमियोंकी बलि क्यों न देनी पड़े और यह दमन चाहे कितना ही भयंकर क्यों न हो जाये। उनके सामने एक गोलमेज सम्मेलन बुलानेका पूरा अवसर है, पर वह एक असली सम्मेलन होना चाहिए। यदि वे एक ऐसा सम्मेलन चाहते हैं जिसमें भाग लेनेवाले सब बराबर हों और एक भी याचक न हो, तो वहां रास्ता खुला है और वह हमेशा खुला रहेगा। इस प्रस्तावमें ऐसा कुछ नहीं है जिसमें किसी नम्र और विनयशील व्यक्तिको लज्जित होना पड़े।

यह प्रस्ताव किसीको भी घमण्ड-भरी चुनौती नहीं है, बल्कि यह चुनौती है उस सत्ताको जिसका सिंहासन घमण्डपर टिका है। यह चुनौती है उस सत्ताको जो करोड़ों विचारशील मनुष्योंके सुविचारित मतकी उपेक्षा करती है। यह एक विनीत किन्तु अटल चुनौती है उस सत्ताको जो अपनेको बचानेके लिए विचारकी स्वतन्त्रता और संस्थाएँ बनानेकी स्वतन्त्रताको — उन दो फेफड़ोंको जो स्वाधीनताकी आक्सीजन प्राप्त करनेके लिए मनुष्यके लिए अत्यावश्यक हैं — कुचलना चाहती है; और यदि कोई सत्ता इस देशमें भाषणकी स्वतन्त्रता और संस्थाएँ बनानेकी स्वतन्त्रताको रोकना चाहती है, तो मैं इस मंचसे आपकी ओरसे यह कहना चाहता हूँ कि वह सत्ता, यदि उसने पश्चात्ताप नहीं किया तो भारतके आगे जो उच्च साहस, महान् उद्देश्य और संकल्पसे इस्पात बन चुका है, नष्ट हो जायेगी, भले ही अपनेको भारतीय कहनेवाले सब नर-नारी इस पृथ्वीसे मिट जायें। ईश्वर ही जानता है कि यदि मैं आपको पहले गोलमेज सम्मेलनमें जानेकी सलाह दे सकता, यदि मैं आपको सविनय अवज्ञाके इस प्रस्तावको स्वीकार न करनेकी सलाह दे सकता, तो मैंने ऐसा ही किया होता।

मैं शान्तिप्रिय व्यक्ति हूँ। मेरा शान्तिमें विश्वास है। पर मैं शान्ति हर मूल्यपर नहीं चाहता। मैं उस तरहकी शान्ति नहीं चाहता जो हमें पत्थरोंमें मिलती है; मैं उस तरहकी शान्ति नहीं चाहता जो हमें कब्रोंमें मिलती है। मैं तो उस तरहकी शान्ति चाहता हूँ जिसका निवास मनुष्यके हृदयमें है — वह शान्ति जिसे सारी दुनिया अपने बाणोंसे बींधनेको तुली हुई है, पर जिसे सर्वशक्तिमान् प्रभुकी शक्ति सभी तरहकी क्षतिसे सुरक्षित रखती है।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके छत्तीसवें अधिवेशनकी रिपोर्ट

४८. भाषण : अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें – २

[२८ दिसम्बर, १९२१][2]

भाइयो और बहनो,

मैंने जो-कुछ अंग्रेजीमें कहा है वही आपसे नहीं कह रहा हूँ। जो बात आपसे कहता हूँ वह आप जानते हैं और समझते हैं। हमारी समस्या यह है कि सिख भाइयोंके बारेमें क्या करना है। मैं स्वराज्य पानेतक आपसे शान्तिसे जो काम कर रहे हैं करनेको कहता हूँ। आप लोग इरादेमें भी और खयालमें भी शान्ति रखें। हाथमें तो शान्ति कायम रखते हैं लेकिन जबान भी साफ रखनी चाहिए। हमारी वाणी अबतक साफ नहीं रही है। शान्तिसे काम करनेवालोंकी वाणी भी साफ रहनी

१. इसके बाद गांधीजीने हिन्दीमें भाषण दिया। हिन्दीके पाठके लिए देखिए अगला शीर्षक।
२. "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके छत्तीसवें अधिवेशनकी रिपोर्ट"के अनुसार।

चाहिए। हमारे दिलमें जो गुस्सा है अगर उसको हम बनाये रखना चाहते हों तो मैं कहता हूँ कि आपके लिए वाणी और हाथकी शान्ति रखना असम्भव है। हर एक औरत और मर्दको अगर काम करना है तो मैं कहूँगा कि हम इसका पालन करें और यह कसम लेकर यानी गुस्सेको निकालकर काम करें। मैं आपसे कहता हूँ कि अगर आप हिन्दुस्तानको आजादीकी मंजिलपर पहुँचाना चाहते हैं तो जरूर यह कसम लीजिए। अगर आप यह बात नहीं मानेंगे तो इस कामको नुकसान पहुँचायेंगे। हिन्दू और मुसलमान दोनोंका नुकसान होगा।

पागल हिन्दू कहेगा कि मुसलमानोंने सोमनाथका मन्दिर तोड़ा और इसी तरह पागल मुसलमान और बात करेगा। वह अफगानिस्तानकी ताकतका खयाल करेगा। आप शान्तिको छोड़ देंगे तो शान्ति नहीं रहेगी। शान्ति रखनेसे ही शान्ति रहेगी। हिन्दुस्तानकी जो हालत है उसका भी खयाल करना होगा। जो आप चाहते हैं कि हिन्दुस्तानमें हम पारसी, हिन्दू, मुसलमान, आपसमें मुहब्बतसे रहें तो यह कसम लेनी होगी। और तलवार खींचेंगे तो काम नहीं बनेगा। जो लोग ऐसे हैं वे अंग्रेजोंके पास चले जायेंगे। दूसरी बात और है, और वह यह है कि हम जेलके लिए तैयार हैं। मारपीट बरदाश्त करनेके लिए तैयार हैं। मौतको भी बरदाश्त करनेके लिए तैयार हैं। हमारा मजहब कहता है कि हम ऐसा करें। अब दूसरी शर्त क्या है? दूसरी शर्त यह है हम गुस्सा रोककर बरदाश्त करें। अगर गुस्सेपर काबू न करेंगे तो यह बरदाश्त, बरदाश्त नहीं होगी। हजरत अलीपर एक आदमीने थूका तो उन्होंने गुस्सा नहीं किया। ऐसा करते तो इस्लाम आजतक कायम न रहता। यह तो हमारा पुराना तरीका है। न यह 'गुरुग्रंथ' साहबमें है, न 'कुरान' में। हमारे मजहबकी बात है कि सब्रसे हम काम करें तो खुदा कहेगा अच्छा किया। तलवार नहीं चलानी चाहिए। अगर इस तरह हम काम करना चाहें तो अच्छा है। अगर आप मरने जाते हैं तो मरिए। हिन्दुस्तानके लिए मरना आत्महत्या नहीं है। आत्महत्या हिन्दू और मुसलमान दोनोंके लिए बुरी है। अगर आप किसी औरतकी बेइज्जती करना चाहते हैं तो जाकर डूब मरिए। आत्महत्या बुरी है मगर इस तरहकी आत्महत्या ठीक है। हम मरनेके लिए सब्रसे मरते हैं तो मर जाना चाहिए। मुझे आपसे और कुछ नहीं कहना है, और अगर और कुछ कहूँ तो आप और हम दोनों पागल हैं। आपने १५ महीनोंसे काम किया है। ऐसा ही काम करना चाहिए। शान्तिसे लाभ पहुँचा है या नहीं, असहयोग कुछ है या नहीं? स्वराज्य तो दमनमें है। स्वराज्य कमजोर दिलवाले के लिए नहीं है। शौकत अली होते तो कहते कि स्वराज्यके लिए मर जाना होगा। स्वराज्यके लिए यह बड़ी बात नहीं। अगर आप काम करना चाहते हैं तो मैं आपसे अपनी जबानसे कहना चाहता हूँ, मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ और आपसे कहता हूँ कि अगर कोई आदमी आपसे बात कहे तो कमरेमें जाकर खुदाकी मदद लें। अगर यह न कर सकें तो दिलसे पूछें कि जो बात मैं कह रहा हूँ, बड़ी है या नहीं। अगर नहीं है तो आप इस रिजोल्यूशन (प्रस्ताव) को अस्वीकार कर दें। अगर बड़ी है तो इसकी कद्र करें। अगर कद्र करना चाहें तो इसमें लिखी हुई बातको मानें। अब कोई आदमी जैसा कि मैंने ऊपर कहा इसका क्या जवाब देगा। अगर कोई इसके

खिलाफत चलेगा तो बड़ी मुश्किल होगी। आप उस तरीकेसे काम करें और तब शान्तिपूर्वक स्वराज्य और पंजाबका मसला तय करके खिलाफत भी ले लें।

आज, २-१-१९२२

४९. भाषण : हसरत मोहानीके प्रस्तावपर[1] – १

अहमदाबाद
२८ दिसम्बर, १९२१

अध्यक्ष महोदय, भाइयो और बहनो,

मुझे रंज होता है कि हमारे बीच आज ऐसे भी प्रतिनिधि बैठे हैं जो बिना सोच-विचारके ऐसी माँग करते हैं कि हम ऐसा चाहते हैं, हम वैसा चाहते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि हमारे सामने क्या माँग है, हम नहीं जानते। मुझे साथ-साथ यह खुशी है कि ऐसे भी आदमी हैं जो कुछ भी कहनेसे डरते नहीं। अब स्थिति ऐसी हो गई है कि जहाँ कभी हम स्वराज्यका नाम-भर लेनेसे डरते थे, वहाँ आज यह बात कह सकते हैं कि ब्रिटिश सल्तनतके साथ नहीं रह सकते, हमें पूरी आजादी चाहिए। इससे भी बड़ी बात कहनेसे नहीं डरते इसका मुझे विश्वास है।

आपने सुना कि हसरत मोहानीने क्या बमका गोला हमारे सामने रखा है। एक बात ही रखी है कि हमें पूर्ण स्वराज्य चाहिए। यह प्रस्ताव पिछले प्रस्तावका विरोधी है, 'कांग्रेस क्रीड'का भी विरोधी है। हम छोटी बातको नहीं कर सकते, और बड़ी बातको सोचना चाहते हैं, हसरत साहबके प्रस्तावका यही अर्थ है। जो कुछ उनके प्रस्तावमें अच्छा है, वह सब कांग्रेसके प्रस्तावमें है ही। हसरत साहबके प्रस्तावसे बहुतसे लोग डर जायेंगे। अबतक हमारे बीच हिन्दू-मुसलमान ऐक्य भी अच्छी तरहसे कायम नहीं हुआ है। उसके आगे हम लम्बी बात करना चाहते हैं। इससे हमारा काम बिगड़ता है। मुझे उम्मीद है आप हसरत साहबके प्रस्तावको नापसन्द करेंगे।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके छत्तीसवें अधिवेशनकी रिपोर्ट

१. कांग्रेस अधिवेशनमें, हसरत मोहानीके प्रस्तावके सम्बन्धमें दिया गया। प्रस्ताव इस प्रकार था : "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका ध्येय भारतकी जनता द्वारा सभी वैध और शान्तिपूर्ण साधनोंके बलपर ऐसा स्वराज्य या पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करना है जो सभी प्रकारके विदेशी नियन्त्रणसे सर्वथा मुक्त हो।" गांधीजीने पहले हिन्दी और बादमें अंग्रेजीमें भाषण किया। अंग्रेजी भाषणके लिए देखिए अगला शीर्षक।

५०. भाषण : हसरत मोहानीके प्रस्तावपर – २

२८ दिसम्बर, १९२१

स्वतन्त्रतापर मौलाना हसरत मोहानीके प्रस्तावके विरोधमें दिये गये भाषणका यह संशोधित रूप है :

मित्रो,

श्री हसरत मोहानीके प्रस्तावके सम्बन्धमें मैंने सिर्फ थोड़ेसे शब्द (हिन्दीमें) कहे हैं। मैं आपसे अंग्रेजीमें केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि आपमें से कुछ लोगोंने इस प्रस्तावके सम्बन्धमें जितनी उदासीनता दिखाई है, उससे मुझे दुःख हुआ है। उससे मुझे दुःख इसलिए हुआ है कि इसमें उत्तरदायित्वकी भावनाका अभाव दिखाई देता है। जिम्मेदार पुरुषों और स्त्रियोंकी तरह हमें याद रखना चाहिए कि हमने केवल एक घंटा पहले क्या किया है। एक घंटा पहले हमने एक प्रस्ताव पास किया है जिसमें वास्तवमें कुछ निश्चित तरीकोंसे खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका निराकरण अन्तिम रूपसे करानेका और जनताको सत्ता दिलानेका उल्लेख है। क्या आप एक अवास्तविक प्रश्न उठाकर भारतीय वातावरणमें यह बम फेंककर अपने मनसे उस सारी स्थितिको भुला देंगे? मैं आशा करता हूँ कि आपमें से जिन लोगोंने पहले प्रस्तावके पक्षमें मत दिया है, वे इस प्रस्तावको हाथमें लेने और इसके पक्षमें मत देनेसे पहले पचास दफा सोचेंगे। संसारके विचारशील लोग हमपर आरोप लगायेंगे कि हम अपनी वास्तविक स्थिति नहीं जानते। हमें अपनी मर्यादाएँ भी समझनी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंमें पूर्ण और अटूट एकता होनी चाहिए। क्या यहाँ कोई ऐसा है जो आज विश्वासपूर्वक यह कह सके कि "हाँ, अब हिन्दू-मुस्लिम एकता भारतीय राष्ट्रीयताका अविच्छेद्य अंग बन गई है?" क्या यहाँपर कोई ऐसा है जो मुझसे कह सके कि पारसी और सिख और ईसाई और यहूदी तथा अछूत जिनके बारेमें आपने आज शाम ही भाषण सुना है, ऐसे किसी विचारका विरोध नहीं करेंगे? इसलिए इस कदमसे आपकी कोई प्रतिष्ठा नहीं बढ़ेगी, आपको कोई लाभ नहीं होगा, बल्कि आपकी अपूरणीय हानि हो सकती है। आप ऐसा कदम उठानेसे पहले पचास बार सोचिए। सबसे पहले हमें अपनी शक्ति सँजोनी चाहिए; सबसे पहले हमें अपने कार्यकी कठिनाइयोंकी जाँच करनी चाहिए। हमें ऐसे पानीमें नहीं जाना चाहिए जिसकी गहराई हम नहीं जानते और हसरत मोहानीके इस प्रस्तावसे आप भारी कठिनाईमें फँसते हैं। मैं आपसे पूरे विश्वाससे कहता हूँ कि यदि आप उस प्रस्तावमें विश्वास करते हैं जो आपने सिर्फ एक घंटा पहले पास किया है तो आप इस प्रस्तावको अस्वीकृत कर दें। जो प्रस्ताव अब आपके सामने है, इससे उस प्रस्तावका सम्पूर्ण प्रभाव मिट जाता है जो आपने केवल एक क्षण पूर्व पास किया है। क्या सिद्धान्त भी कोई ऐसी मामूली चीज है जो कपड़ोंकी तरह जब चाहे तब बदली जा सके। सिद्धान्तोंके लिए लोग प्राण दे देते हैं और

सिद्धान्तोंके कारण वे युग-युग जीते हैं। क्या आप उस सिद्धान्तको, जिसे आपने नागपुरमें पूरी तरह सोच-विचारकर, और बहुत वाद-विवादके पश्चात् स्वीकार किया था, बदलने जा रहे हैं? जब आपने वह सिद्धान्त स्वीकार किया था, तब आपने एक सालकी कोई सीमा नहीं बाँधी थी। यह एक व्यापक सिद्धान्त है; इसके अन्तर्गत कमजोरसे-कमजोर और बलवानसे-बलवान सब आ जाते हैं और यदि आप मौलाना हसरत मोहानीके इस सीमित सिद्धान्तको स्वीकार करेंगे जिसके अन्तर्गत कमजोर भाई नहीं आते तो आपको अपने इन भाइयोंको संरक्षण देनेका सौभाग्य न मिलेगा। इसलिए मैं आपको पूरे विश्वासमें लेकर कहता हूँ कि आप उनके प्रस्तावको अस्वीकृत कर दें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

५१. आदर्श कैदी

क्या असहयोगियोंको जेलखानोंमें जेलके नियमोंके खिलाफ, इस तरह 'वन्देमातरम्'का घोष करना चाहिए, जिससे मामूली कैदियोंको दंगा-फसादकी उत्तेजना मिल सकती है, क्या असहयोगियोंको भोजनमें सुधार करवाने तथा दूसरी सुविधाओंके लिए भूख हड़ताल करनी चाहिए? क्या हड़तालके तथा दूसरे दिनोंमें उन्हें जेलके अन्दर काम बन्द कर देना चाहिए? क्या असहयोगियोंको जेलके ऐसे नियमोंको तोड़नेका भी हक हासिल है जो उनकी अन्तरात्माको चोट नहीं पहुँचाते?

कलकत्तेके एक असहयोगी मित्रने एक तार भेजा है। भारतके एक दूसरे प्रान्तसे भी एक असहयोगी मित्रने यह सुनकर कि असहयोगी कैदी जेलकी मर्यादाके अनुसार नहीं बरतते हैं, मुझसे कहा है कि जेलकी मर्यादाके पालनकी आवश्यकताके सम्बन्धमें मैं कुछ लिखूँ। दूसरी ओर, मैं ऐसे अनेक असहयोगी कैदियोंको जानता हूँ जो जेलकी मर्यादाका पालन सुयोग्य रीतिसे ठीक-ठीक कर रहे हैं।

आज जब हजारों आदमी जेल जा रहे हैं, यह समझ लेना आवश्यक है कि असहयोगी कैदियोंको अपनी अहिंसाकी प्रतिज्ञाके अनुसार किस तरह बरतना चाहिए। जब हम असहयोगके क्षेत्रकी सीमाओंको नहीं मानते तब वह एक कर्त्तव्य होनेके बजाय सब-कुछ करनेका एक खुला परवाना, अतएव, एक जुर्म हो जाता है। अच्छे और बुरेका भेद बतलानेवाली रेखा प्रायः इतनी सूक्ष्म होती है कि उसकी पहचान ही नहीं की जा सकती। लेकिन फिर भी यह रेखा तो है और अनुल्लंघ्य है तथा कहाँ है, इसके बारेमें कोई भ्रम नहीं हो सकता।

तब उन लोगोंमें जो कि अच्छे कामोंके लिए जेल गये हैं और जो बुरे कामोंके लिए जेल गये हैं, क्या फर्क है? अक्सर दोनों एकसे कपड़े पहनते हैं, एकसा खाना

खाते हैं और बाहरी तौरपर दोनोंको एक ही तरह जेलकी मर्यादाका पालन करना पड़ता है। परन्तु जहाँ ये दूसरे, बुरे कामोंके लिए जेल जानेवाले लोग, जेलकी मर्यादाका पालन अत्यन्त अनिच्छापूर्वक करते हैं और उसे लुके-छिपे अथवा हो सके तो खुलेआम भंग कर देते हैं; वहाँ अच्छे कामोंके लिए जेल जानेवाले लोग, खुशी-खुशी और अपनी पूरी योग्यताके साथ जेलकी मर्यादाका पालन करते हैं और अपने जेलसे बाहर रहनेकी अवस्थाकी अपेक्षा जेलके अन्दर अपनेको अधिक सुयोग्य और देशकी सेवाके अधिक योग्य सिद्ध करते हैं। हम देख ही रहे हैं कि इनमें जो बड़े-बड़े प्रसिद्ध कैदी हैं, उनके जेलमें रहनेसे उनके द्वारा देशकी जितनी सेवा हुई है उतनी उनके बाहर रहनेसे नहीं। जितनी कड़ाईके साथ जेलकी मर्यादाका पालन किया जायेगा उसी परिणाममें उनकी सेवाकी मात्रा बढ़ती जायेगी।

हमें यह याद रखना चाहिए कि हम जेलोंको तोड़ देना नहीं चाहते हैं। मैं तो समझता हूँ कि शायद स्वराज्यमें भी हमें जेलोंको कायम रखना होगा। यदि हम पक्के अपराधियोंके दिमागमें यह बात भर देंगे कि स्वराज्यकी स्थापनाके बाद वे रिहा कर दिये जायेंगे या उनके साथ बेहतर बरताव होगा तो हमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ेगा। मैं स्वराज्यमें जेलोंको कैदियोंके शिक्षालयोंमें बदल देना चाहता हूँ लेकिन अनुशासनका पालन तो उनमें भी कराना ही पड़ेगा। अतएव यदि हम अनुशासन-भंगकी प्रवृत्तिको उत्तेजित करें तो उससे वास्तवमें स्वराज्यकी प्रगति रुकेगी ही। यह स्वराज्यका तेज चालवाला कार्यक्रम तैयार ही इस विश्वासके आधारपर किया गया है कि हम सुसंस्कृत लोग हैं और इसलिए हम थोड़े ही समयमें अपने अन्दर ऊँचे दरजेके अनुशासनका विकास कर सकते हैं।

सच बात तो यह है कि एक ओर जहाँ सविनय अवज्ञा, उस राज्यके जिसे हम नष्ट कर देना चाहते हैं, अन्यायमूलक तथा अनीतिमूलक कानूनोंका अनादर करनेका अधिकार देती है, वहाँ दूसरी ओर वह यह अपेक्षा रखती है कि उस कानूनके अनादर-की सजा नम्रता और राजी-रजामन्दीके साथ कुबूल करो। जेलके कानून-कायदोंका प्रसन्न-चित्तसे पालन करो और उससे होनेवाले दुःखों और कष्टोंको सहन करो।

इसलिए इससे यह बात बिलकुल साफ तौरपर जाहिर हो जाती है कि जेलमें जाते ही सत्याग्रहीका प्रतिरोध बन्द हो जाता है और आज्ञापालन फिरसे शुरू हो जाता है। जेलके अन्दर रहते हुए वह किसी तरहकी विशेष सुविधाका दावा नहीं कर सकता — इस बिनापर कि कानूनका अनादर विनयपूर्वक किया है। जेलके अन्दर रहते हुए वह अपने अनुकरणीय आचरणके द्वारा अपने आसपासके मुजरिमोंका भी सुधार करता है, जेलर तथा दूसरे अधिकारियोंके हृदयको कोमल बनाता है। ऐसा नम्रतापूर्ण व्यवहार, जिसका उद्गम अपने बल और ज्ञानसे हुआ हो, अन्तको जालिमके जुल्मको मिटा देता है। इसी बिनापर तो मैं यह दावा करता हूँ कि स्वेच्छापूर्वक कष्टसहन बुराइयों और अन्यायोंको दूर करनेकी रामबाण दवा है।

अतएव यह प्रकट है कि किसी असहयोगीके लिए जेलकी मर्यादाको भंग करते हुए 'वन्देमातरम्' आदिका घोष करना विहित नहीं है और इसी तरह उसका जेलके नियमोंको चुपके-चुपके भंग करना भी नाजायज है। असहयोगी ऐसा कोई काम नहीं

करेगा कि जिससे उसके साथके कैदी नीति-भ्रष्ट हों। खुल्लमखुल्ला जेलके नियमोंको भंग करनेका या भूख हड़तालका मौका सिर्फ तभी हो सकता है जब या तो उन्हें अपमानित करनेका प्रयत्न किया जाता हो, या सन्तरी लोग खुद ही कैदीको आराम पहुँचानेके नियमोंको तोड़ते हों, जैसा कि वे अक्सर करते हैं, या जब कि खाना इतना खराब दिया जाता हो जिसे मनुष्य नहीं खा सकता, जैसा कि प्रायः दिया जाता है। हां, जब अपनी किसी आवश्यक धर्म-विधिमें बाधा डाली जाये तब भी जेलके अन्दर सविनय अवज्ञा की जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-१२-१९२१

५२. भेंट : बंगालके प्रतिनिधियोंसे[1]

अहमदाबाद
२९ दिसम्बर, १९२१

महात्माजी : मेरा सुझाव यह है कि आप जो चाहें मुझसे पूछें।

एक प्रतिनिधि : प्रश्न कठिन है। हम जानना चाहते हैं कि हमारे कामका तरीका क्या होगा?

महात्माजी : जो प्रस्ताव हमने पास किये हैं वे वास्तवमें इस तरह संक्षेपमें कहे जा सकते हैं कि सरकार द्वारा स्वयंसेवक दलोंको भंग करने और आम सभाओंपर रोक लगानेके सम्बन्धमें निकाली गई दो घोषणाओंके रूपमें जो दमन किया है, हम उसका जवाब देना चाहते हैं। इसलिए हम सभी आदमियों और औरतोंको स्वयंसेवक बनाकर और जब जरूरी हो और जरूरी न हो तब भी आम सभाएँ और समितियोंकी बैठकें करके इन घोषणाओंका प्रतिरोध करते हैं। परन्तु इसके दो तरीके हैं : इनमें एक यह है कि हम जब अनावश्यक हो तब भी आम सभाएँ करके सरकारको अपने खिलाफ कदम उठानेके लिए उकसाएँ। परन्तु मेरी राय है कि आप ऐसा न करें। यह तो आक्रमणात्मक हो जायेगा। किन्तु जबतक हमारे समस्त रक्षात्मक उपाय समाप्त न हो जायें, तबतक हमें आक्रमणात्मक उपायोंको काममें लानेकी जरूरत नहीं है और उनका काममें लाना उचित नहीं है। इसलिए जबतक आप स्वयंसेवक भरती करते रह सकते हैं और उनसे सामान्य तरीकेसे काम लेते रह सकते हैं, और जबतक आप अपनी आम सभाएँ जो आपके उद्देश्य, आपके प्रचार और लोगोंके प्रशिक्षणके लिए जरूरी हों, करते रह सकते हैं तबतक आप इन दोनों कार्योंको बराबर करते रहें। उसके परिणामस्वरूप खतरे सामने आयेंगे। जबतक आप अपना कर्त्तव्य पूरा कर रहे हैं, तबतक आप चिन्ता

१. साधन-सूत्रमें निम्नलिखित प्रारम्भिक टिप्पणीके साथ प्रकाशित : "पिछली २९ दिसम्बरको बंगालके प्रतिनिधियों और महात्मा गांधीके बीच हुई वार्ताकी रिपोर्टका सम्पूर्ण पाठ।"

न करें। कैदियोंके साथ क्या हो रहा है, आप इसकी चिन्ता न करें। स्थितिका सामना करनेके लिए हमारे पास और उपाय हैं। स्वभावतः कैदियोंको रिहा करानेका एक तरीका यह है कि हम जेल जायें, परन्तु हमारा उद्देश्य कैदियोंको रिहा कराना नहीं है, बल्कि हमारा उद्देश्य है स्वराज्य प्राप्त करना और जेलकी चाबी अपने हाथमें लेना। यह है हमारा उद्देश्य। इसलिए यदि आप यह उद्देश्य उस पूरे राष्ट्रीय कार्यको जिसे आप करते रहे हैं, मात्र ईमानदारीकी भावनासे करते हुए पूरा कर सकते हैं तो मैं आपसे कहता हूँ कि स्वार्थकी दृष्टिसे जेलमें रहना बाहर रहनेसे अधिक सुखकर है। मेरा खयाल है कि आप सभी सच्चे और ईमानदार आदमी हैं और मुझे इसका पूरा विश्वास है। यदि ऐसा नहीं है तो आप सच्चे और ईमानदार बनें। तब आप भरोसा रख सकते हैं कि स्वराज्यके लिए एक भी मनुष्यके जेल जाये बिना हम स्वराज्य पा लेंगे।

और इसलिए आपकी शर्तें अधिक कठिन हैं। आपको आदमियों और औरतोंको स्वयंसेवक बनाना है; हम सबको उन सात या आठ प्रतिज्ञाओंका पालन करना है और उनकी पूर्ति करना ही स्वतः सच्चा पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना है। यदि सभी भारतीय उन प्रतिज्ञाओंपर हस्ताक्षर कर दें और उनका अक्षरशः और उसी भावनासे जिसको लेकर वे लिखी गई हैं, पालन करें तो काम पूरा हो जायेगा। आपको फिर कुछ और करनेकी कतई जरूरत नहीं है।

आपने बंगालमें बहुत हदतक अहिंसाका पालन किया है, किन्तु इसके बावजूद आप मनसे अहिंसक हैं, इसमें मुझे आज भी सन्देह है। और फिर भी मैं चाहता हूँ कि श्री दासने जो कहा है आप उसे याद रखें। उन्होंने आपसे अपने साथ जेल जानेके लिए नहीं कहा है, किन्तु उन्होंने आपसे मनसा, वाचा और कर्मणा अहिंसक रहनेका अनुरोध किया है। हममें से कितने लोग मन, वचन और कर्मसे अहिंसक हैं। वे आज हमसे जेल जानेकी आशा करते हैं — वे ऐसी आशा करते हैं, भले ही ऐसा कहें या न कहें — और इसमें कोई शक नहीं कि वे हम सभीसे जेल जानेकी आशा करते हैं, किन्तु इसकी शर्त यह है कि पहले हम मन, वचन और कर्मसे अहिंसक बन चुके हों। हमारे लिए यह सबसे पहला कर्त्तव्य-कर्म है।

आप आक्रमणात्मक कदम न उठायें बल्कि प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करके, उसमें लिखी बातोंको समझकर और उसका महत्त्व जानकर रक्षात्मक काम करें। या फिर प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर ही न करें। यदि आपने इस प्रतिज्ञापर उसका पूरा महत्त्व जाने बिना हस्ताक्षर कर दिये हैं, तो आप अपना नाम वापस ले लें। यदि इस प्रतिज्ञामें विश्वास करनेमें आपको कोई झिझक है तो मैं आपसे किसी भी अवस्थामें सामूहिक सविनय अवज्ञामें भाग लेनेकी आशा नहीं करता। आपको मेरा इन्तजार करना है। सविनय अवज्ञाकी कल्पना पूर्णतः मेरी है, और मैं आपसे कहता हूँ कि वह कहीं अन्यत्र-से नहीं ली गई है — यह सविनय अवज्ञाकी पूरी कल्पना आपके सामने प्रस्तुत कर दी गई है। ये शब्द मेरे नहीं हैं। मेरी अत्यन्त तीव्र इच्छा है कि यह प्रयोग जो समस्त संसारके लिए महत्त्वपूर्ण है, अनुचित और अवैज्ञानिक ढंगसे न किया जाये ताकि वह असफल न हो। मैं चाहता हूँ कि हम इसे असफल न होने दें; सम्भव है मैं खुद असफल हो जाऊँ, लेकिन वह अलग बात है। किन्तु यदि आप कोई भयंकर भूल कर

बैठेंगे तो आपपर निस्सन्देह दोष लगाया जायेगा और तब शायद आप सविनय अवज्ञाको ही दोष देना शुरू कर देंगे। इसलिए मैं कहता हूँ कि आप सामूहिक सविनय अवज्ञा कतई न करें। आप अपनी कार्रवाई रक्षात्मक ढंगको वैयक्तिक सविनय अवज्ञातक ही सीमित रखें। वैयक्तिक सविनय अवज्ञा तो एक बच्चा भी कर सकता है। हमें जो-कुछ करना है अपने उस कार्यक्रमके एक हिस्सेके बारेमें मुझे इतना ही कहना था।

मैं जानता हूँ कि बंगालमें आज बहुत अधिक अधीरता है और इसलिए असहिष्णुता है और मैं आपको यह भी बता दूं कि मैंने भारतमें इतनी ज्यादा कटुता अन्यत्र कहीं भी नहीं देखी जितनी बंगालमें देखी है और वहाँ इसीलिए इतनी असहिष्णुता दिखाई देती है। मुझे विश्वास है कि आपको मेरी इस बातसे कोई गलतफहमी न होगी। हम मद्रासके दो विचारधाराओंके लोगोंको ही लें। वहाँ एक श्री कस्तूरी रंगा आयंगार हैं जो वस्तुतः असहयोगियोंके नरम वर्गका प्रतिनिधित्व करते हैं और दूसरे डा० राजन्[1] हैं जो दूसरी विचारधाराके लोगोंके नेता हैं। परन्तु दोनोंके बीच सम्बन्ध मधुर हैं। फिर सहयोगियों और असहयोगियोंका मामला लें। उनके सम्बन्ध भी किसी भी तरह उतने वैमनस्यपूर्ण नहीं हैं जितने बंगालमें हैं। मुझे ऐसा कहनेका अवसर बारीसालमें मिला था। मैं नहीं जानता कि मेरा वह कथन कभी प्रकाशित किया गया था या नहीं। किन्तु मैंने उस समय जो कुछ भी कहा था उसका एक-एक शब्द आज भी सच है। हमने अपनी अधीरतामें ऐसा विश्वास कर लिया कि हम पूर्णतः निर्दोष हैं और जो लोग हमसे मतभेद रखते हैं वे देशके हितचिन्तक नहीं हैं, यही नहीं, वरन् उसके शत्रु हैं। और इसीलिए हम अपने अच्छेसे-अच्छे नेताओंके बारेमें भी यही सोचते हैं। श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जीको लें। उनके बारेमें पत्रोंमें जो-कुछ लिखा गया है, वह मैंने देखा है और निजी बातचीतमें जो कहा गया है वह भी सुना है। उससे लगता है कि हम उन्हें देशका शत्रु समझते हैं। मैं नहीं समझता कि वे ऐसे हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि वे देशके शत्रु नहीं हैं। यदि मैं मद्रास जाता और कहता कि श्री कस्तूरी रंगा आयंगार देशके शत्रु हैं, तो मद्रासके लोग मेरे उस कथनपर रोष व्यक्त करते और उसे सहन न करते। किन्तु मैं जानता हूँ कि बंगालके लोग मेरी इस बातको सह लेते कि श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी देशके शत्रु हैं। उग्रतावादी वर्गको लें। मैं यह कहनेके लिए तैयार नहीं हूँ कि श्री थैंगय्या चेट्टी[2] देशके शत्रु हैं — यद्यपि वे अब सार्वजनिक जीवनमें आगे आ गये हैं; किन्तु फिर भी उनका जीवन आशाप्रद कदापि नहीं है।

एक प्रतिनिधि : परन्तु सर सुरेन्द्रनाथका जीवन कभी आशाप्रद नहीं रहा।

महात्माजी : जहाँतक मैं जानता हूँ, आपको तो ऐसा ही कहना है। इसलिए मैं आपको सावधान करना चाहता हूँ कि यदि आपको अपने असहयोग और अहिंसाके प्रति सच्चा रहना है तो आप इतने अनुदार न हों और अपने ही देशवासियोंको इतना बुरा न समझें। और आखिरकार, क्या इससे अपनी ही निन्दा नहीं होती? किसीने

१. डा० टी० एस० एस० राजन्, प्रमुख कांग्रेसी कार्यकर्ता और बादमें मद्रास मन्त्रिमण्डलके सदस्य।
२. मद्रासमें जस्टिस पार्टीके संस्थापक।

मुझसे यह कहा था, अंग्रेजोंके लिए यह गर्वकी बात है कि वे यह कह सकते हैं कि पिछले महायुद्धमें एक भी अंग्रेजने जासूसी नहीं की। किन्तु इसके विपरीत हम समझते हैं कि हमारे अलावा दूसरे सब भारतीय देशके शत्रु हैं। निस्सन्देह यह निराशा-वादी विचारके लोगोंका दृष्टिकोण है। अपने बारेमें इतनी ओछी राय रखकर हम राष्ट्रकी हत्या कर रहे हैं।

मैं हर बंगाली मित्रको जो यहाँ आया है सावधान करना चाहता हूँ कि यदि वह यह चाहता है कि ये आशावान् कैदी रिहा कराये जायें और अपनी ताकतसे रिहा कराये जायें तो रिहा करानेके कई तरीके हैं। उन्हें मियादसे पहले रिहा करानेका सबसे स्वाभाविक तरीका है उनकी अपनी ताकतसे रिहाई। दूसरा तरीका है, वे सजा खत्म होनेपर रिहा किये जायें और तीसरा तरीका जो बहुत अधिक कमजोर बनानेवाला है, यह है कि वे अपनी मियादके बाद रिहा किये जायें। परन्तु जब वे जेलसे बाहर जायेंगे तब वे एक नये भारतको देखेंगे जो उनकी आशाका भारत न होगा, वरन् ऐसा भारत होगा जिसमें वे सम्भवतः लगातार दो दिन भी नहीं रह सकते। परन्तु मैं अन्तिम स्थितिकी सम्भावना नहीं कर सकता। लेकिन अगर हममें असहिष्णुताकी भावना बनी रहती है तो इस स्थितिकी सम्भावना बहुत बढ़ जायेगी। इस तरह यह असहयोगकी भावनाके ही विपरीत है। असहयोग निराशाका सिद्धान्त नहीं है। असहयोग घृणा और बेबसीका सिद्धान्त नहीं है। यह तो प्रेमका सिद्धान्त है। किन्तु मैं नहीं चाहता कि आप अभी उस सरकारके बारेमें सोचें जिससे हम असहयोग कर रहे हैं। मैं तो केवल यह चाहता हूँ कि आप अपने देशभाइयोंके प्रति अपनी उदारता बरतें, फिर चाहे वे उदारदलीय हों, पुलिसमें हों, खुफिया पुलिसमें हों, वे कुछ भी हों, आपसे कहता हूँ कि आप उनके प्रति उदार बनें। और यदि आप ऐसा कर सकते हैं, तो हममें जितनी ताकत आज है, उससे बहुत अधिक हो जायेगी। और मैं इस बारेमें आपसे अत्यन्त हार्दिक अनुरोध करता हूँ।

मैं चाहता हूँ कि मोतीबाबूसे हुई बातचीतको मैं ज्योंका त्यों दे सकूँ तो दूँ। जब मैं पिछली बार कलकत्तामें उनसे वकीलोंके बारेमें मिला था तब उनसे बातचीत हुई है। उसमें उन्होंने मुझसे आग्रह किया कि मैं वकीलोंके प्रति कठोर न बनूँ। अवश्य ही मैं उस बातचीतको आपको विस्तारसे नहीं बता सकता।[1] मैं जानता हूँ कि मैंने कई अरुचिकर बातें कही थीं जो सच साबित की जा सकती हैं और जो उचित थीं। फिर भी मैंने वे किसी अनुदार भावनासे और निश्चय ही उनके और अपने बीच अलगाव पैदा करनेके लिए नहीं कही थीं। मैं चाहता था कि वे नेतृत्वसे या उस पूर्ण नेतृत्वसे जो उनके हाथमें है हटा दिये जायें।

परन्तु मेरा ऐसा जरा भी इरादा कभी नहीं था कि वे जनताकी सेवासे विलग कर दिये जायें। इसके विपरीत मैंने सभी वकीलोंको, वकालत करनेवाले वकीलोंको भी, राष्ट्र-सेवामें लगानेका प्रयत्न किया है क्योंकि यदि वे शर्तें पूरी नहीं कर सकते तो वे असहयोग समिति आदिमें अधिकारीके रूपमें अच्छी तरहसे काम नहीं कर सकते।

१. देखिए खण्ड १८, पृष्ठ २७८-२८१।

परन्तु निस्सन्देह यह प्रश्न उठता है कि यदि वकील ऐसा नहीं कर सकते तो जो अन्य लोग — जैसे व्यापारी — शर्तें पूरी नहीं करते उनका क्या हो। इसी प्रश्नपर नागपुरमें गर्मागर्म बहस हुई थी। इसपर श्री केलकरने बहुत जोर दिया था और उन्होंने एक बार सार्वजनिक सभामें मुझे चुनौती दी थी और कहा था कि मैं व्यापारियोंके प्रति पक्षपात करता हूँ; किन्तु उनका यह कथन वास्तवमें गलत था। परन्तु जैसा कि मैंने अपने भाषणमें कहा था हम वकीलोंसे अधिक आशा करते हैं, क्योंकि वे नेता हैं। हम व्यापारियोंसे कम आशा रखते हैं क्योंकि वे कभी नेता बननेकी महत्त्वाकांक्षा नहीं रखते। हमने उनका पैसा लिया है और कुछ नहीं। इसीलिए व्यापारियोंसे इतनी अधिक आशा करना सम्भव नहीं है। वकीलों और व्यापारियोंमें झगड़ेका सवाल नहीं है। लेकिन यह एक अलग बात है और यह कहना कि हमें वकीलोंको अपने क्षेत्रसे बिलकुल निकाल बाहर करना चाहिए बिलकुल दूसरी बात है — फिर भले ही हम अपने बीचसे शर्त पूरी न करनेवाले व्यापारियोंको न भी हटायें। यदि हमारे बीच ऐसे लोग हैं जो शर्त पूरी नहीं करते तो कमसे-कम वकीलोंके प्रति हमें उदार होना चाहिए और एक शोभनीय तथा प्रतिष्ठापूर्ण ढंगसे उनके ज्ञान और उनकी सेवाओंका लाभ उठाना चाहिए। इसलिए मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आप प्रयत्न कर देखें कि आपको मेरे बताये सीमित ढंगसे हर वकीलकी सहायता मिल सकती है। मैं नहीं चाहता कि आप वकीलोंको अपनी समितियोंमें अध्यक्ष-रूपमें लें। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह खतरनाक होगा क्योंकि आज सबसे अधिक महत्त्व ऐसी निर्भीकताका है जिसमें मनुष्य नुकसानकी बिलकुल परवाह न करे, और जबतक हम अहिंसाकी प्रतिज्ञाके अनुसार बड़ेसे-बड़ा खतरा मोल लेनेको तैयार न हों, हम अपना कार्यक्रम अपने पास जो सीमित समय है उसीके भीतर पूरा नहीं कर सकते। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि आप वकीलोंसे नेतृत्वके अलावा अन्य सभी विभागोंमें मदद लें, और नेतृत्वके लिए किसी अछूतको ले लें। किन्तु शर्त यह है कि उसमें दृढ़ साहस हो और बहादुरका दिल हो। यदि वह इतना अभय हो कि संसारकी अधिकसे-अधिक प्यारी सभी चीजोंको, अपने करीबी रिश्तेदारों और अपने बच्चों तकको त्यागनेके लिए तैयार हो, यदि वह इन सबको छोड़कर इस पथपर चलनेके लिए तैयार हो तो मैं कहूँगा कि ऐसा अछूत एक वकीलसे सदा ही कहीं अधिक अच्छा अध्यक्ष होगा। इसके विपरीत वकील पूर्ण सज्जन हो, और उसने अपने धन्धेमें कीर्ति और अनुपम सफलता प्राप्त की हो; किन्तु फिर भी वह हमारे लिए किसी कामका नहीं है। इसलिए मैं आपसे अवश्य ही यह कहना चाहता हूँ कि अपना अध्यक्ष ईमानदार और बहादुर व्यक्तिके सिवा किसी औरको न बनायें। किन्तु इसके अलावा मैं आपसे अनुरोध करना चाहता हूँ कि आप उनका सहयोग लें। आप पूरी कोशिश करें, और वकीलोंका सहयोग प्राप्त करें। किन्तु यह बात भी उससे छोटी है जिसका उल्लेख मैंने आपके सम्मुख किया है। आप सबके प्रति उदार रहें। आप याद रखें कि स्वराज्यके कार्यक्रममें हम उन्हें अपने साथ रखना चाहते हैं। हम अपने देशवासियोंको उससे अलग नहीं करना चाहते। और यदि हम उनकी सहानुभूति और सहयोग नहीं पा सकते तो हममें कुछ दोष हैं।

हमने निश्चय ही अपनी अहिंसाकी प्रतिज्ञाका पालन अक्षरशः और भावनाके अनुसार नहीं किया है। इसलिए मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आप वास्तविक रूपमें इन बातोंपर विचार करें और इनको याद रखें। मैं नहीं समझता कि मुझे इससे अधिक कुछ कहना है।

यह पूछे जानेपर कि एक वकालत करनेवाला वकील प्रस्तावके अनुसार किस तरह देशकी सेवा कर सकता है, महात्माजीने कहा :

वकालत करनेवाला वकील निश्चय ही खादी पहन सकता है, किन्तु वह स्वयंसेवक नहीं बन सकता।

प्रश्न : जैसे कोई वकील, मात्र जरूरतके कारण वकालत करते रहनेको बाध्य है—वह स्वयंसेवक नहीं बन सकता—उसे एक बड़े परिवारका पालन-पोषण करना होता है, वह जेल जानेकी जोखिम नहीं उठा सकता।

महात्माजी : मैं ऐसे वकीलोंको जानता हूँ और ऐसे लोगोंको आज अवश्य ही जेलोंसे बाहर रहना चाहिए, क्योंकि हमारे लिए हजारों लोगोंके पालन-पोषणके साधन जुटाना सम्भव नहीं है और मौजूदा प्रस्ताव इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर नहीं बनाया गया है कि स्वयंसेवक अधिकसे-अधिक संख्यामें भरती हों, चाहे वे अयोग्य ही क्यों न हों, वरन् इस उद्देश्यसे बनाया गया है कि योग्यताके साथ-साथ उनकी संख्या भी अधिकसे-अधिक हो। दूसरे शब्दोंमें हमें संख्या बढ़ानेके लिए अयोग्य लोगोंको भरती नहीं करना चाहिए। यदि हम संख्या बढ़ानेके प्रयत्नमें स्वयंसेवकोंकी योग्यताका खयाल छोड़ देंगे तो हमें सचमुच स्वराज्य देरसे मिलेगा और मैं भविष्यवाणी कर सकता हूँ कि अन्तमें हम लड़ाईमें हार जायेंगे। मैं आपको बताऊँ कि मैं अहमदाबादके कारखानोंके सभी मजदूरोंसे जिनकी संख्या आज पचास हजार है, प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करा सकता हूँ; परन्तु मैं नहीं चाहता कि उनमें से एक भी मजदूर उस प्रतिज्ञाको समझे बिना उसपर हस्ताक्षर करे। मैं केवल उन्हींको लेना चाहता हूँ जो वर्षोंसे संघर्षमें रहे हैं और जो उस प्रतिज्ञाका मूल्य समझते हों, जिसे वे लेते हैं। मैं इस तरहके कमसे-कम लोगोंसे स्वराज्य ले सकता हूँ। मैं ऐसे एक करोड़ स्वयंसेवक भी नहीं चाहता कि जो यह न जानते हों कि अहिंसा क्या है और जो हिंसा करनेमें अशक्त होनेके कारण कांग्रेसके कार्यक्रमका अनुसरण करें या करनेका दिखावा करें। मैं इसकी अपेक्षा यह अधिक चाहता हूँ कि वे सहयोगी बन जायें, खुल्लमखुल्ला सरकारके पक्षमें चले जायें और जो-कुछ करना चाहें सो करें।

प्रश्न : इस दशामें आदमियोंकी कमीसे कुछ स्थानोंमें काम रुक जायेगा।

महात्माजी : यदि आपके आसपास भी बहुत-सी संस्थाएँ और ऐसे बहुत-से लोग हों जो आपका काम करें किन्तु जेल न जाना चाहें तो इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आप उनसे निश्चय ही अछूतोंसे सम्बन्धित अपने काममें या नशाबन्दीके काममें, या स्वदेशीके प्रचारके काममें मदद लें, किन्तु वे स्वयंसेवक दलके सदस्य नहीं बन सकते।[1]

१. गांधीजीने बादमें अपने इस कथनका खण्डन किया था; देखिए "वकालत करनेवाले वकील और स्वयंसेवकोंका कार्य", २-२-१९२२।

स्वयंसेवक दल सरकारी घोषणाओंकी अवहेलना करके संगठित किया जा रहा है, और केवल वही लोग जेल जाने योग्य हैं जिनके विचार शुद्ध हैं।

श्रीयुत अनंगमोहन घोष: मैं यह मानता हूँ; किन्तु क्या नेतृत्वके लिए बुद्धिके बिना केवल त्याग पर्याप्त हो सकता है?

महात्माजी : दो बातें जरूरी हैं—त्याग और सचाई। मैं कह चुका हूँ कि यदि आपके पास सच्चा और बहादुर आदमी है तो वह आज नेतृत्व कर सकता है।

अनंगबाबू : उसमें बुद्धि भी होनी चाहिए।

महात्माजी : मैं ऐसे मनुष्यकी कल्पना शायद नहीं कर सकता जो ज्ञानपूर्वक त्याग कर रहा है लेकिन उसमें वस्तुतः बुद्धिमत्तापूर्वक नेतृत्व करनेके योग्य ज्ञान न हो। सचमुच मैं महसूस करता हूँ कि मैं आपको ऐसे बीसियों लोगोंके दृष्टान्त दे सकता हूँ जो आज नेतृत्व कर रहे हैं।

अनंगबाबू : जहाँतक हमारा अनुभव है, हमें ऐसे लोग नहीं मिलते।

महात्माजी : इसका कारण यह है कि हमने अभीतक अपने अन्य देशवासियोंको मौका नहीं दिया है। हमने असलमें उन्हें अलग कर दिया है और अबतक हमने उन्हीं लोगोंके देशभक्त बननेपर जोर दिया है जो अंग्रेजी जानते हैं। हमारी मुसीबतका कारण यही है। हमें ऐसे आदमियोंकी सचमुच जरूरत है।

अनंगबाबू : हमें आवश्यक गुणोंसे युक्त ऐसे असहयोगी नहीं मिलते जो समितियोंकी जिम्मेदारी ले सकें या उनके अध्यक्ष आदि बन सकें।

महात्माजी : कठिनाई है, इससे मैं इनकार नहीं करता; किन्तु हमारे पास आज जैसे लोग हैं हम उन्हींसे अपना सब काम चला सकते हैं। शर्त एक ही है कि हम उन लोगोंको कुशल बना सकें, पर्याप्त गतिशील बना सकें और वे हमारा नेतृत्व कर सकें, इतना बहादुर बना सकें।

अनंगबाबू : स्वयंसेवकोंके सम्बन्धमें एक और प्रश्न है। एक धारा है कि स्वयंसेवक लोग जेल जानेकी दशामें पारिश्रमिककी आशा नहीं कर सकते, किन्तु जबतक वे स्वयंसेवककी तरह काम करते हैं, क्या उन्हें कुछ मिलेगा?

महात्माजी : यदि वे काम कर रहे हैं तो उन्हें मिल सकता है; परन्तु मैं स्वयं यह चाहता हूँ कि स्वयंसेवक दलमें ऐसे लोग लिये जायें जिन्हें पैसेकी कतई जरूरत न हो। जो कार्यक्रम हमने सोचा है वह यह है कि कोई भी मनुष्य अपना नाम स्वयंसेवकोंमें दर्ज करानेके बाद उचित समय आनेपर थोड़े दिनोंमें गिरफ्तार कर लिया जायेगा; किन्तु यदि सरकार बिलकुल कुछ न करे और घोषणाको वापस भी न ले, तो पैसा देनेका प्रश्न उठता है और तब उन लोगोंको पैसा देना होगा जिनकी सेवाओंकी जरूरत है, किन्तु उन लोगोंको नहीं जो सिर्फ अपने नाम दर्ज कराते हैं और जिनके नाम सक्रिय स्वयंसेवकोंकी सूचीमें या सहायता पानेवाले लोगोंकी सूचीमें नहीं हैं। मैं वास्तवमें उन स्वयंसेवकोंकी परवाह नहीं करना चाहता जो गाँव-गाँवमें जाकर भाषण दें। वह समय बीत गया, किन्तु हमें ऐसे स्वयंसेवक चाहिए जो स्वदेशीका काम या ऐसा ही कोई दूसरा काम संगठित कर सकते हैं, और हमें अर्थलाभ करा

सकते हैं और भारतमें ऐसी व्यवस्था कर सकते हैं कि हम अपनी भयंकर दरिद्रतासे छुटकारा पा सकें।

श्रीयुत गुणदाचन्द्र सेन : कांग्रेसके प्रस्तावमें अन्य सभी गति-विधियोंको बन्द करनेकी बात कही गई है -- तब क्या हम अपने स्वदेशीके कार्यको, राष्ट्रीय स्कूलों आदिके कार्यको जारी न रखें?

महात्माजी : जिस हदतक जरूरी हो उस हदतक हम नये केन्द्र न खोलें जिनके लिए बहुतसे स्वयंसेवकोंकी सेवाओंकी जरूरत होती है। हम उनमें इतने स्वयंसेवक नहीं लगा सकते, क्योंकि हम चाहते हैं कि सभी कार्यकर्त्ता जेल जानेके लिए अपने नाम दें और यदि सरकार उन्हें ले तो हमें हर उपलब्ध कार्यकर्त्ताको उसे दे देना चाहिए। इसलिए मैंने यहाँ 'जिस हदतक जरूरी हो उस हदतक' इन शब्दोंका प्रयोग किया है। यदि हम यह देखें कि जो लोग स्वदेशीके कार्यमें लगे हैं उनकी सूची समाप्त हो गई है तो हमें राष्ट्रीय स्कूलोंके कार्यकर्त्ताओंमें से -- जो काफी बड़ी संख्यामें हैं -- लोग लेने होंगे। उन कार्यकर्त्ताओंको मुक्त कर दिया जाना चाहिए। जब अन्य सभी राष्ट्रीय कार्य बन्द हो जायेंगे; तो इसका अर्थ यह होगा कि उनके कर्मचारी उनमें से निकल आये हैं।

श्रीयुत सुरेशचन्द्र मजुमदार : आपने सार्वजनिक सभाओंके बारेमें कहा है। कृपया हमें निर्देश दें कि क्या हमें स्वयंसेवकोंको जेल जानेके उद्देश्यसे ही गिरफ्तार होनेके लिए सड़कोंपर भेजना है जैसा कि हम अबतक करते रहे हैं।

महात्माजी : जबतक सरकार उन्हें गिरफ्तार करती रहे तबतक आप ऐसा कर सकते हैं; परन्तु वह उनको गिरफ्तार न करे तो मुझे इसकी चिन्ता नहीं होगी। परन्तु जबतक वह उन्हें गिरफ्तार करती रहती है तबतक उनके सम्मुख कोई दूसरा काम नहीं है; तबतक उन्हें बस बाहर जाना है और गिरफ्तार होना है।

एक प्रतिनिधि : क्या हम चौकीदारी-कर देना बन्द कर सकते हैं?

महात्माजी : अभी नहीं। वह तो आक्रमणात्मक सविनय अवज्ञा होगी।

अछूतोंसे क्या तात्पर्य है यह पूछे जानेपर महात्माजीने कहा :

अछूत वे सब हैं जिनका स्पर्श हम अभिमानवश अपनेको दूषित करनेवाला समझते हैं। इसलिए हमें उनको न केवल छूना ही चाहिए बल्कि उनकी सेवा करनी चाहिए। उनके लिए भोजन सुलभ करने अर्थात् यदि वे भूखे रह रहे हैं तो उनकी जीविकाका साधन जुटानेके बाद ही हमें भोजन करना चाहिए। यदि वे प्यासे हैं तो उन्हें पीनेके लिए पानी देनेके बाद ही हमें पानी पीना चाहिए। यदि कोई अछूत बुखारसे परेशान है तो मैं उनकी सेवा करूँगा या उसे साँपने काट लिया है तो मैं उसके घावमें से विषको उसी तरह चूसूँगा जैसे कि यदि मेरे बच्चेको साँप काटे तो मैं उसके घावसे विषको चूसूँगा। साथ-साथ खाने-पीने या विवाह-सम्बन्ध करनेका कोई प्रश्न नहीं। इसका अर्थ यह है कि ये निषिद्ध नहीं हैं; परन्तु इनका आग्रह नहीं है।

यह पूछे जानेपर कि क्या कोई मनुष्य विदेशी कपड़े पहने हुए स्वयंसेवक बन सकता है और सीधा जेल जा सकता है, महात्माजीने कहा :

यह न केवल धूर्तताकी बात है, वरन् इस पुनीत कार्यके लिए हानिकर भी है। जो लोग इसमें आयें उन सभीको खादी अवश्य पहननी चाहिए। जेल जाना गौरवकी बात है। कोई भी जेल जाकर हमपर एहसान नहीं करता। वह स्वयं ही कृतार्थ होता है।

एक प्रतिनिधिने कहा कि इस स्थितिमें तो काफी स्वयंसेवक नहीं होंगे क्योंकि बंगालमें हाथकी कती और बुनी शुद्ध खादी पर्याप्त मात्रामें नहीं मिल पाती।

महात्माजी : तब यदि बंगालमें काफी स्वयंसेवक नहीं हैं तो मैं समझता हूँ कि आप बंगालकी खाड़ीमें वह जायें और अधिक उपयोगी स्त्री-पुरुषोंके लिए जगह खाली कर दें।

मिदनापुरके एक प्रतिनिधिके यह पूछनेपर कि यदि राष्ट्रीय स्कूलोंके अध्यापक जेल जायेंगे तो उनका काम कौन करेगा, महात्माजीने कहा कि मिदनापुरकी महिलाएँ जो कुशल सूत कातनेवाली हैं, उनका काम कर सकती हैं।

प्रश्न : जब जनतासे मारपीट की जाये तो स्वयंसेवकोंका क्या कर्त्तव्य है?

महात्माजी : उन्हें बीचमें जाकर उसे रोकना चाहिए और चोटें स्वयं झेलनी चाहिए।

बड़ाबाजारका एक प्रतिनिधि : हमें उन व्यापारियोंसे कैसा व्यवहार करना चाहिए, जिन्होंने हस्ताक्षर किये थे और वादा किया था कि वे फरवरी और मार्च तक विदेशी कपड़ा नहीं मँगायेंगे।

महात्माजी : हमें उनसे फिरसे हस्ताक्षर करनेके लिए कहना है।

प्रतिनिधियोंके साथ दो घंटे बिताकर महात्माजी चले गये।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १४-१-१९२२

५३. पत्र : देवदास गांधीको

शुक्रवार [३० दिसम्बर, १९२१][1]

चि० देवदास,

श्रीमती जोजेफका पत्र इसके साथ है। मैंने उन्हें लिखा है कि तुम उन्हें वहाँसे पैसा भेजोगे। 'इंडिपेंडेंट' के संचालकोंसे मिलकर आवश्यक प्रबन्ध कर लेना या जैसा तुम्हें सूझे, वैसा करना। ध्यान रखना कि तुम्हारे जेल जानेके बाद भी उन्हें कोई तकलीफ न हो।

गोविन्दके[2] चले जानेसे मुझे तो बड़ा सन्तोष हुआ है। उन्होंने तुम्हें अभीतक गिरफ्तार नहीं किया है, सो तो जान-बूझकर ही नहीं किया। इसकी चिन्ता नहीं

१. इस पत्रके आखिरी हिस्सेमें पॉल रिचर्डका उल्लेख है और वे दिसम्बरके अन्तिम सप्ताहमें अहमदाबादमें थे। श्री रिचर्ड शनिवार, ३१ दिसम्बर, १९२१ को गांधीजीके साथ गुजरात महाविद्यालय देखने गये थे

२. पं० मदनमोहन मालवीयके पुत्र। उन्हें धरना देनेके आरोपमें २० दिसम्बर, १९२१ को गिरफ्तार किया गया था किन्तु बादमें छोड़ दिया गया था।

करनी चाहिए। यदि वे तुम्हें गिरफ्तार नहीं करते, तो नया काम सम्पन्न किया जा सकेगा। अगर पकड़ लें, तो लोगोंका जोश बढ़ेगा।

इस समय पॉल रिचर्ड[1] यहाँ हैं। मैंने किशोरलालसे[2] उन्हें मिलाया। किशोरलाल अभी-अभी उनसे मिलकर गया है, इसलिए मुझसे भी मिल गया। कुमारी पीटर्सन[3] आज यहाँ हैं। कल आई थीं, आज चली जायेंगी। श्री रिचर्ड रविवारको जायेंगे। श्रीमती सन्तानम् अभीतक यहाँ हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ७६८३) की फोटो-नकलसे।

५४. भेंट: संयुक्त-प्रान्तके कांग्रेस नेताओंसे

अहमदाबाद
३० दिसम्बर, १९२१

महात्माजीने कहा:

अभी सविनय अवज्ञा करनेकी जरूरत नहीं है। अभी इतना ही काफी है कि स्वयंसेवकोंमें नाम लिखाकर, फिर चाहे गिरफ्तार हों अथवा नहीं, अपने जिम्मे सौंपे कामको जारी रखें।

स्वराज्य प्राप्त करनेके मेरे तरीके मौलाना हसरत मोहानीके तरीकोंसे बिलकुल भिन्न हैं। अगर मैं अपनेको इस लायक समझता तो फौरन पूर्ण स्वाधीनताकी घोषणा कर देता। क्योंकि ऐसी घोषणाके बाद फिर रेलों, डाकघरों एवं तारों तथा ऐसी ही अन्यान्य वस्तुओंका व्यवहार करना पाप होगा। अगर अधिकांश लोग हम लोगोंके पक्षमें आ जायें तो केवल तीन ही महीनेमें पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त की जा सकती है।

अगर सब देशभाई मेरा साथ छोड़ दें यहाँ तक कि मेरी पत्नी भी मुझसे अलग हो जाये तो भी मैं अकेला ही काम करनेको तैयार हूँ।

संयुक्त-प्रान्तके गवर्नर श्री हरकोर्ट बटलर चाहते हैं कि फिर सन् १८५७ की तरह विद्रोह मचे और लोग सरकारकी दुहाई देकर पुकार मचायें।

अच्छा होता कि इलाहाबादमें राष्ट्रीय कोतवाली कायम करनेका काम अभी बन्द कर दिया जाता। पर जब यह काम शुरू हो गया है तो इसे जारी रखना ही उचित है।

मुझे खेद है कि अबतक संयुक्त-प्रान्तमें स्वदेशीका प्रचार जितना चाहिए था उतना नहीं हुआ है। इससे मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ।

१. एक फ्रांसिसी लेखक।

२. मशरूवाला।

३. एन मेरी पीटर्सन, जिन्होंने एक डेनिश मिशनरी एस्थर फैरिंगके साथ दक्षिण आफ्रिकामें कार्य किया और कुछ समयके लिए साबरमतीमें भी रहीं।

कांग्रेसके दफ्तरोंमें स्वयंसेवकोंकी भरतीका काम जारी रहना चाहिए।

पण्डित मोतीलाल नेहरू चाहते हैं कि 'इंडिपेंडेंट' की प्रतियाँ हिन्दी और उर्दू भाषामें प्रकाशित की जायें, अतः स्वयंसेवकोंको इसके प्रकाशनमें पूरी मदद करनी चाहिए।

हम लोगोंको चोरों एवं डाकुओंके प्रति भी कदापि हिंसाका भाव मनमें न लाना चाहिए। अहिंसा ही हम लोगोंका एकमात्र व्रत होना चाहिए।

जबतक हम लोग जेल जानेको तैयार न होंगे, जबतक हम मरने तकके लिए कमर न कसेंगे और क्रोधको वशमें नहीं कर लेंगे, तबतक पंजाबपर किये गये अत्याचार तथा खिलाफतके प्रश्न कदापि हल न हो सकेंगे।

स्वराज्यका अर्थ यह है कि सेनापर हमारा पूरा अधिकार हो।

स्वयंसेवकोंकी सूची समाचारपत्रोंमें प्रकाशित की जाये और कोतवाली भेजी जाये।

स्वयंसेवक घूम-फिरकर खादी बेचें। उनकी वर्दी केवल एक मामूली चपरासीकी होनी चाहिए। विदेशी कपड़ोंकी दुकानोंपर धरना देनेकी जरूरत नहीं। शराबकी दुकानोंपर धरना जारी रहे।

राष्ट्रीय स्कूलोंको सूत कातने और कपड़े बुननेके कारखानोंमें परिणत करना चाहिए। इनमें अठारह सालके नीचेकी उम्रके लड़के काम करें और स्त्रियाँ इनकी देखभाल करें।

अठारह वर्षसे अधिक उम्रवाले जो छात्र एवं शिक्षक स्वयंसेवक बननेसे इनकार करें उन्हें स्कूलोंसे निकाल दिया जाये।

इलाहाबादसे प्रकाशित होनेवाला 'स्वराज्य' नामक हिन्दी पत्र हाथसे लिखकर प्रकाशित किया जाये।

जिनकी जायदाद जब्त हो जाये वे प्रसन्नतापूर्वक उसका त्याग करें, क्योंकि ऐसी अत्याचारी सरकारके राज्यमें जायदाद रखना ही पाप है। स्वराज्य मिलते ही फिरसे जायदाद लौटा दी जायेगी।

आज, १-१-१९२२

५५. सन्देश : उत्कलको[1]

३० दिसम्बर, १९२१

महात्माजीन ३० दिसम्बर (१९२१)को श्रीयुत भागीरथी महापात्र, गोपबन्धु चौधरी, निरंजन पटनायक और नवकृष्ण चौधरी द्वारा भेंट किये जानेपर निम्नलिखित सन्देश दिया था :

मुझे उत्कलका ध्यान बार-बार आता रहता है। जो दृश्य मैंने देखा है, वह बिलकुल दिल दहला देनेवाला है। प्रान्तसे गरीबी दूर करें। घर-घरमें चरखेका सन्देश दें। उत्कलको शेष भारतके लिए खद्दरका भण्डारगृह बनायें। भूखे आदमियों और औरतोंको भोजन दें। यही वह सबसे अच्छी राजनैतिक शिक्षा है जिसे आप अपने लोगोंको दे सकते हैं; आप आक्रामक सविनय अवज्ञाके प्रश्नको लेकर परेशान न हों। यदि सरकार कोई चुनौती दे तो आप स्वयंसेवक भरती करते जायें और मुझे आशा है कि कमसे-कम पचास हजार उत्कलवासी जेलोंमें भर जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-१-१९२२

५६. भाषण : गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादमें

३१ दिसम्बर, १९२१

शनिवारको सुबह गुजरात विद्यापीठमें श्री पॉल रिचर्डने "भारतका सन्देश"पर एक भाषण दिया। महात्मा गांधी सभाके अध्यक्ष थे। श्री रिचर्ड फ्रांसीसी भाषामें बोले और श्रीमती सरोजिनी नायडूने भाषणका अनुवाद पढ़कर सुनाया।

महात्मा गांधीने कहा, मैं इस भाषणमें उपस्थित होना बहुत सम्मानकी बात समझता हूँ। मुझे कांग्रेसके प्रतिनिधियोंसे भेंट करनी थी, इस वजहसे मैं पिछले दो दिन समय नहीं निकाल सका; किन्तु मैं आज श्री रिचर्डका भाषण सुननेके लिए आया हूँ। उन्होंने श्रोताओंसे अनुरोध किया कि वे श्री रिचर्डकी बातमें जो भी अच्छाई हो उसे ग्रहण करें और उसका अनुसरण करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-१-१९२२

१. उड़ीसाका पुराना नाम। साधन-सूत्रमें यह सन्देश सर्वेन्टसे लिया गया है।

५७. तार: मौलाना अब्दुल बारीको[1]

१ जनवरी, १९२२

जबतक कार्य-समितिकी बैठक बुलाई जा सकती हो तबतक डिक्टेटरका प्रश्न नहीं उठता। कार्य-समितिकी बैठक बुलाना सम्भव होनेपर डिक्टेटरके अधिकार कार्य-समिति जैसे होंगे। जेल जाना, मार खाना, प्राण देना अपने-आपमें उद्देश्य नहीं हैं; इन कष्टोंको धर्म या देशके लिए ही सहना है।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७७९) की फोटो-नकलसे।

५८. निर्देश: कृष्णदासको[2]

[मौनवार, सोमवार, २ जनवरी, १९२२][3]

कृष्टोदासको निर्देश

खादीनगरमें प्राप्त सारे पत्र जो छाँटे नहीं गये, कहाँ हैं?

आप सजाओं और खबरोंके दिलचस्प अनुच्छेदोंका एक सार तैयार कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
सेवेन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१. यह तार मौलाना अब्दुल बारी द्वारा बम्बईसे ३१ दिसम्बर, १९२१ को प्रेषित उस तारके उत्तरमें था जिसमें कहा गया था: "...कृपया निम्न प्रश्नोंका उत्तर तारसे भेजें ताकि मैं धार्मिक दृष्टिसे उठनेवाले सन्देह दूर कर सकूँ। क्या डिक्टेटरकी हैसियतसे आपके अधिकार वही हैं जो कार्य-समितिके या उससे अधिक हैं? क्या कार्य-समिति डिक्टेटरके अधिकार छीन सकती है? स्वयंसेवक दलोंका मुख्य उद्देश्य क्या होगा; देशके लिए काम करते हुए जेल जाना, मार खाना और प्राण तक दे देना या ये अपने-आपमें उद्देश्य माने जायें?"

२. एक प्रतिलिपिसे।

३. साधन-सूत्रसे।

५९. पत्र : देवदास गांधीको

बुधवार [४ जनवरी, १९२२][1]

चि० देवदास,

तुम्हारा समाचारपत्र[2] मुझे मिलता ही रहता है, किन्तु तुम्हारा कोई पत्र नहीं आया है। इस समस्त परिश्रमके बीच तुम अपनी लिखावट सुधारनेकी बात मत भूलना। इस बारके 'यंग इंडिया'में तुम्हें 'इंडिपेंडेंट' की बहुत-सी सामग्री मिलेगी। हमने तुम्हारे सब अंकोंका सार देनेका निश्चय किया है, इसलिए वह सप्ताहमें एक बार तो तुम्हें आसानीसे मिल जायेगा। तुमने 'गूँगा मौन' (म्यूट साइलेंस) शब्दोंका प्रयोग किया है। यह 'गूँगा मौन' क्या होता है?

अभी तुम्हारे अक्षर इतने स्पष्ट नहीं होते कि वे पढ़े जा सकें। तुम टाइप कराना बिलकुल छोड़ दो, यह बात मुझे अधिक ठीक जान पड़ती है। जिस व्यक्तिसे समाचार-पत्रकी सामग्री लिखवाते हो उसकी लिखावट तो अच्छी है।

तुम्हारा तीसरा पृष्ठ अच्छा नहीं है। टाइप करनेवाले ने बहुत-सी जगह खाली छोड़ दी है। बंगालके गवर्नरके सम्बन्धमें खबर कौन देगा? मालवीयजी कानून भंग करते हैं, यह लिखनेवाले को सूलीपर चढ़ा देना चाहिए। वे तो मद्रास गये भी नहीं।

दूसरे पृष्ठपर 'गोलमेज सम्मेलन' शीर्षक दो बार आया है।

आज नेहरू-परिवारके लोग लखनऊके लिए रवाना हो गये। वे सब तीसरे दर्जेमें गये हैं; यह टिप्पणी तुम दे सकते हो। उर्मिलादेवी भी उसी वर्गमें यात्रा कर रही हैं।

१४ तारीखको मैं बम्बईमें होऊँगा। वहाँ उसी दिन नरमदलीय सम्मेलन है। मुझे १५ तारीखको भी वहाँ रहना पड़ेगा। सुन्दरम् फिलहाल यहीं रहेगा।

तुम्हें अपने पत्रकी प्रत्येक पंक्ति पढ़ लेनी चाहिए। सामग्री अभी और कम कर सकते हो, लेकिन जितनी दो उतनी ठोस हो; और उसे सुन्दर भी बनाओ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

स्वदेशीकी खबर तो देनी ही चाहिए। जिन्हें अवकाश हो उन्हें स्वदेशीका प्रचार करना चाहिए। उन्हें सूत कातना, रुई पींजना, कपड़ा बुनना और बेचना चाहिए।

१. नेहरू-परिवारके सदस्य २८ दिसम्बरको कांग्रेसका अधिवेशन समाप्त होनेके बाद अहमदाबादसे रवाना हुए थे और गोविन्द मालवीयको ८ जनवरी, १९२२ से पहले सजा दे दी गई थी।

२. हस्तलिखित **इंडिपेंडेंट**, जिसे महादेव देसाईकी गिरफ्तारी और सजाके बाद देवदास निकाल रहे थे।

गोविन्दके फिर गिरफ्तार होनेका तार मिला है। इस वार किसलिए पकड़ा गया है, इस वातका पता नहीं चलता। इसके वादकी खवर तुमसे मिलेगी।

गुजराती पत्र (एस० एन० ७७२०)की फोटो-नकलसे।

६०. भेंट : 'स्वराज्य' के संवाददातासे[1]

[५ जनवरी, १९२२ के पूर्व]

'स्वराज्य' का विशेष संवाददाता अहमदावादसे लिखता है :

मैंने प्रस्तावित समझौतेके[2] सम्वन्धमें वर्तमान स्थिति जाननेके लिए महात्माजीसे मुलाकात की।

प्रश्न : इस विषयमें लाला लाजपतराय और पण्डित मोतीलाल नेहरूकी क्या राय है?

उत्तर : जहाँतक मोतीलालजीका सम्वन्ध है, उनका मत तो 'यंग इंडिया' के गत अंकमें[3] वता दिया गया है। लालाजीने मुझसे जेलमें पड़े लोगोंके लिए फिक्र न करनेको कहा है।

मान लीजिए, स्वयंसेवक-संगठनोंको दूसरे प्रान्तोंमें गैर-कानूनी नहीं घोषित किया जाता और सार्वजनिक सभाओंपर भी कोई प्रतिवन्ध नहीं लगाया जाता, उस हालतमें स्वयंसेवक और कांग्रेस-कार्यकर्त्ता जेल जानेके लिए क्या करेंगे?

उसके लिए तो उन्हें आक्रामक ढंगकी सविनय अवज्ञा करनी होगी। इसके लिए उन्हें तवतक इन्तजार करना पड़ेगा जवतक मैं उसे शुरू न करूँ। इस वीच उन्हें स्वयंसेवकोंका संगठन करना चाहिए, प्रति दिन कमसे-कम चार घंटे चरखा चलाना, प्रति घंटा कमसे-कम एक तोला १० या १२ नम्वरका वढ़िया वटा हुआ और एक-सार सूत कातना चाहिए।

क्या स्वयंसेवकोंको विदेशी कपड़ों और शरावकी दुकानोंपर धरना देना चाहिए?

जो लोग अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, और शान्तिपूर्वक काम कर सकते हैं, वे धरना दे सकते हैं।

आप नये वर्षमें कवतक संघर्षके चलनेकी आशा रखते हैं?

कह नहीं सकता। वर्तमान स्थितिमें तो यह शायद दो महीनेसे अधिक न चले। हमें भारतके हर हिस्सेमें सरकार द्वारा कोड़ों और गोलियोंकी अन्धाधुन्ध मारके लिए

१. यह भेंट-वार्त्ता **स्वराज्यसे** उद्धृत की गई थी।

२. इस समझौतेके लिए मालवीयजी वातचीत चला रहे थे।

३. २९ दिसम्बर, १९२१ के अंकमें "जेलसे एक दूसरा पत्र" (एनअदर जेल लैटर) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। मोतीलाल नेहरूने लिखा था : "... वातचीतका एक ही आधार हो सकता है वह यह कि तीनों मांगोंमें किसी तरहकी कमी नहीं की जायेगी...।"

तैयार रहना चाहिए। हमें तब भी विचलित नहीं होना चाहिए। मौजूदा लड़ाई पंजाब और खिलाफत-सम्बन्धी अन्यायोंके परिशोधनके लिए उतनी नहीं है, और स्वराज्यके लिए तो और भी नहीं। हम अभी वाणीकी स्वतन्त्रता और संगठन आदि बनानेकी आजादी-जैसे बुनियादी अधिकारोंके लिए लड़ रहे हैं, और इस सवालपर हम नरम दलवालों और अन्य लोगोंसे भी सहयोगकी अपेक्षा करते हैं। बीचमें जो यह छोटी-सी भिड़न्त हो गई है, वह खतम होनेके बाद हमारा रास्ता साफ हो जायेगा।

महात्माजीने यह भी कहा कि स्वराज्यकी किसी भी योजनामें सेना और पुलिसपर जनताके नियन्त्रणकी बात अवश्य होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-१-१९२२

६१. टिप्पणियाँ

जेल-जीवनकी झाँकी

> भूख या फिर ऐसा खाना जो कुत्तोंके खाने लायक होता है, ओढ़नेको कुछ नहीं और ऐसा तो बिलकुल ही नहीं जो दिल्लीकी कड़ाकेकी सर्दीसे बचा सके; कपड़ोंके नामपर जघन्य अपराधोंके अपराधी मामूली कैदियोंकी फटी-पुरानी उतारन; उसमें भी जुओं और पिस्सुओंकी भरमार और खूनके दाग; और सबसे भयंकर बात तो यह है कि अगर कभी एकाध असहयोगी सरकारी प्रलोभनोंमें फँसकर नैतिक दृष्टिसे कुछ कमजोर हो जाता है तो उसके साथ अच्छा व्यवहार किया जाता है या उसे छोड़ दिया जाता है और इस बातकी ओर हमेशा इशारा किया जाता है तथा जोर डालकर ऐसी परिस्थिति लानेकी कोशिश भी की जाती है।

जब दिल्लीके लाला शंकरलाल दिल्ली जेलसे मियाँवाली जेल ले जाये जा रहे थे तब उन्होंने उक्त शब्दोंमें अपने जेल-जीवनका विवरण दिया। मुझे जिस मित्रने यह विवरण भेजा है, वे लिखते हैं:

> हमने मोपलोंकी बन्द मौतगाड़ीका[1] नाम सुना है लेकिन यह दिल्ली जेल, जहाँ हमारे बेहतरीन और श्रेष्ठ असहयोगी कार्यकर्त्ता ठूँसे गये हैं, खुली होते हुए भी एक ऐसी जगह बना दी गई है जहाँ मौत और शैतानका मिलाजुला साम्राज्य है। ये पंक्तियाँ लिखते समय भावावेशके कारण मेरे विचारोंकी गति अवरुद्ध हो रही है। शायद इस कारण हमारे इस सुन्दर और प्रिय देशमें

१. रेलगाड़ीके एक बन्द डिब्बेमें मोपला कैदियोंको भरकर ले जाया जा रहा था; दम घुट जानेसे कुछ कैदियोंकी मृत्यु हो गई थी।

वह ताकत जो शंकरलाल-सरीखे अनेक व्यक्तियोंको खामोश कर रही है मेरी इस कमजोर आवाजको भी दबा रही है। असहयोग आन्दोलनके कार्यकर्त्ताको बड़ी बेदर्दीसे पीटा जाता है और तबतक मार पड़ती रहती है जबतक कि पीटनेवाले के हाथ थक नहीं जाते। सत्याग्रहियोंके कपड़े उतार लिये जाते हैं सो भी इस हदतक कि अपनी लाज ढकनेके लिए भी उनके पास कुछ नहीं रह जाता; उन्हें दूषित भोजन दिया जाता है और गन्दगीमें रखा जाता है जिसमें वे संक्रामक रोगोंके कीटाणुओंके शिकार बनते हैं; इस तरह उन्हें बरबस धीरे-धीरे मौतके मुँहमें ले जाया जाता है। ऐसी दर्दनाक कहानियाँ मैं बराबर सुन रहा हूँ।

इन पंक्तियोंके लेखक एक बहुत सुसंस्कृत और संवेदनशील युवक हैं। मैंने उनके पत्रमें से कुछ विवरणात्मक अंश निकाल दिये हैं। वे ऐसे कष्टोंके आदी नहीं हैं, इसलिए दिल्ली जेलमें असहयोगियोंके साथ जो दुर्व्यवहार हुआ उससे वे बहुत अधिक प्रभावित हुए। परन्तु इस अभियोगके सारमें सचाई है। कारण, उसकी सत्यताका प्रमाण और भी कई ऐसे सूत्रोंसे मिला है जिनका आपसमें एक दूसरेसे सम्बन्ध नहीं है। इस बातमें कोई सन्देह मालूम नहीं होता कि जब सरकार असहयोगियोंको झुकानेमें असमर्थ रही और जेलमें ठूँसकर भी उनसे माफी न मँगवा सकी तो अब इस तरहके हुक्म जारी किये गये हैं कि इन लोगोंको शारीरिक यातनाएँ पहुँचाई जायें। ऐसा समय जरूर आता है जब अपनी सम्पूर्ण इच्छाशक्तिके बावजूद मनुष्यका शरीर यातना सहनेसे इनकार कर देता है और उसकी आत्माको भी अपनी अनिच्छाके बावजूद शरीरकी बात स्वीकार करनी पड़ती है। शासक अपनी इसी जानकारीका नाजायज फायदा उठाकर सत्याग्रहियोंकी स्वाभिमानी आत्माको दबाना चाह रहे हैं। और मुझे इस बातपर आश्चर्य नहीं होगा अगर उन सत्याग्रहियोंमें से कुछ लोग इस अमानवीय व्यवहारको, जिसे स्पष्टतः एक नियमित प्रणालीका रूप दिया जा रहा है, सहनेमें असमर्थ हो जायें और अपने शरीरको असह्य वेदनासे बचानेके लिए क्षमा-याचना कर लें।

लेकिन जहाँ इस बातके उदाहरण हैं कि आत्मा शरीरकी भयंकर यातनाओंको किसी निश्चित सीमासे आगे सहनेमें असमर्थ रहती है वहाँ ऐसे उदाहरणोंकी भी कमी नहीं है कि आत्माने भयंकर यातनाओंको सहनेमें विजय पाई है। यदि पहलेसे पर्याप्त मानसिक तैयारी हो तो कष्टकी अतिशयता स्वयं एक औषध बन जाती है जो कष्टका अनुभव ही नहीं होने देती; अलबत्ता उसमें सब-कुछ सहनेके लिए आत्माका संकल्प जरूरी है। आत्माके इस प्रबल संकल्पसे उत्पन्न आनन्दका आवेश पीड़ाकी अनुभूतिपर हावी हो जाता है। अपने देश या धर्मकी सेवा करनेमें जो आनन्द मिलता है वह आनन्द इतना अधिक होता है कि सेवाके दौरान होनेवाला कष्ट उस आनन्दमें खो जाता है।

इसलिए प्रत्येक सत्याग्रहीका यह कर्त्तव्य है कि वह सभी शारीरिक यातनाओंको सहे। लेकिन इसी तरह उसका यह भी कर्त्तव्य है कि वह अस्वच्छता और अपमान दोनोंका विरोध करे। वह खुशी-खुशी कोड़े सहेगा। लेकिन उसे रेंगकर चलनेको कहा जाये तो

वह इनकार करेगा। वह खुशी-खुशी नंगे बदन रहेगा और ठंडमें ठिठुर-ठिठुरकर मौतका आलिंगन करेगा। लेकिन उसे कीटाणुवाले गन्दे कम्वलों और कमीजोंको लेनेसे दृढ़तापूर्वक इनकार करना होगा। भले ही वह बगैर खानेके रहे लेकिन उसे कंकरीले आटेकी रोटियाँ और दाल खानेसे इनकार करना चाहिए। भले ही वह बगैर स्नान किये रहे लेकिन उसे गन्दे पानीमें नहानेसे इनकार करना चाहिए। जहाँ झुकना अमानवीय हो वहाँ सत्याग्रह कर्त्तव्य हो जाता है।

सत्याग्रहियोंको स्वेच्छापूर्वक कष्ट सहनेका जो अवसर मिला है, उसे उन्हें अपना सौभाग्य ही समझना चाहिए। यह सबसे श्रेष्ठ सेवा है। वे लोग दरअसल जेलको पवित्र कर रहे हैं। सामान्य अपराधी भी मानवीय व्यवहारके अधिकारी हैं। भले ही सरकार वहुत सादा खाना और कपड़ा दे लेकिन दोनों ही चीजें होनी चाहिए स्वच्छ और पर्याप्त।

मेरे लिए इस प्रकारके अमानवीय व्यवहारके विवरण प्रकाशित करना कोई खुशीकी बात नहीं है चाहे ऐसा व्यवहार कहीं भी और किसी ने भी किया हो। मैं यह विश्वास नहीं करना चाहता कि मनुष्य ऐसा पाशविक आचरण भी कर सकते हैं जैसा कि उन वहुत-सी घटनाओंसे सिद्ध होता है जो कि उनके वारेमें वताई जाती हैं। मेरी यह ख्वाहिश है कि यह लड़ाई खिलाड़ियोंकी भावनाके साथ लड़ी जाये। जव मैं यह देखता हूँ कि औचित्यकी मर्यादाओंका पालन नहीं हो रहा है तो मुझे यह वात बहुत कचोटती है।

लेकिन अगर दूसरे लोग यानी शासक-वर्ग गन्दा खेल खेलता है, तो वैसा ही सही। सत्याग्रहियोंके सामने और कोई चारा नहीं है उन्हें तो स्थितियोंका मुकावला करना है और सामने आनेवाली कठिनाइयोंके वीचसे होकर गुजरना है। जापानियोंकी वीरताकी एक कहानी है कि जव उन्होंने एक खाईको पार करनेमें अपनेको असमर्थ पाया तो उन्होंने उस खाईको अपनी लाशोंसे पाट दिया। हमारा प्रण मारना नहीं है वल्कि केवल मारे जाना है, लेकिन क्या इसलिए हमें उन लोगोंके मुकावले कम त्याग करना चाहिए? हमारा प्रण तो हमसे जापानी सिपाहियोंसे भी ज्यादा वीरताकी माँग करता है क्योंकि हमें तो लड़ाईके ढोल-वाजोंके विना ही आगके वीचसे होकर गुजरना है।

पत्र-लेखकने जो अभियोग लगाया है, वह गम्भीर है। मैं इसके समर्थनमें और प्रमाण देना चाहूँगा। मुझे 'इंडिपेंडेंट' पत्रके सम्पादक महादेव देसाईके साथ किये जा रहे व्यवहारका विस्तृत विवरण प्राप्त हुआ है; जिसे मैं उद्धृत करता हूँ। 'यंग इंडिया' के पाठक जानते हैं कि इस पत्रसे उनका क्या सम्वन्ध है।[1] वे सबसे ज्यादा संजीदा कार्यकर्त्ताओंमें हैं और वहुत संवेदनशील हैं। श्री देसाईके एक मित्र श्रीमती देसाईके साथ उनसे मिलने गये। लेखक इस सम्वन्धमें कहते हैं:

> **हमें जबरदस्त दमन सहना होगा; हम उसके लिए तैयार हो रहे हैं। मैंने आपको महादेवभाईके कारावासके वारेमें तार भेजा है। उन्हें अदालतमें**

१. महादेव देसाई **यंग इंडियाके** प्रकाशक थे।

पेश होनेके लिए सम्मन मिला था। वे जेल जाते समय बिलकुल खुश थे। हम कल उनसे मिलने गये मगर हमें मिलने नहीं दिया गया। मैं खाना, कपड़े और कुछ किताबें ले गया था लेकिन जेलरने लेनेसे इनकार कर दिया। आज सवेरे हम उनसे मिल सके। उन्हें साधारण अपराधियोंके साथ रखा गया था और जेलके सभी नियम उनपर लागू किये गये हैं। वे जेलके कपड़े पहने हुए थे। वे एक काली कमीज जिसकी बाहें कोहनीतक थीं और एक हाफ पैन्ट पहने हुए थे। उनके कपड़े गन्दे और बदबूदार थे और उनमें जुएँ भी थीं। उनके पास दो कम्बल थे जो शायद महीनोंसे नहीं धोये गये थे और जिनमें जरूर ही जुओंकी भरमार रही होगी। पानी पीनेके लिए एक जंग लगा लोहेका बर्तन था। जंग इतना ज्यादा था कि अगर उसमें पानी थोड़ी देर भी रखा रह जाये तो वह पीने योग्य न रहे। इसलिए रातको उसमें से पानी नहीं पिया जा सकता था। सवेरे उस पानीका रंग बिलकुल पीला हो जाता था। वहाँ एक गन्दी टंकी है जहाँसे पीनेका पानी लिया जाता है और यही पानी नहाने-धोनेके लिए भी इस्तेमाल किया जाता है। मुझे यह नहीं मालूम कि उन्हें बाल्टियाँ भी दी जाती हैं या नहीं। नहानेके लिए एक लंगोट दिया जाता है। लेकिन बदन पोंछनेके लिए कोई तौलिया नहीं दिया जाता। जब धूपमें बदन सूख जाये तो वही गन्दे कपड़े फिर पहनने पड़ते हैं। इस जगह की ठंडी जलवायुमें महादेवभाई-जैसे कमजोर आदमीके लिए कपड़े धोना असम्भव है। क्योंकि जबतक धोये हुए कपड़े सूख न जायें तबतक उन्हें नंगे बदन रहना पड़ता है। उन्हें सिर्फ जेलका ही खाना दिया जाता है। कल रात तो उन्होंने कुछ खाया ही नहीं, आज सुबह उन्होंने दलिया जैसी कोई चीज ली। इस खानेमें कंकड़ और धूल थी। शौचके लिए कैदियोंको बाहर जाना पड़ता है और शौचके लिए पानी उसी बर्तनमें ले जाना पड़ता है जो उन्हें पानी पीनेके लिए दिया जाता है। रातके लिए उन्हें बगैर ढक्कनका बर्तन दिया जाता है। हाँ, अभी सिर्फ एक कसर बाकी है और वह यह कि उनके हथ-कड़ियाँ नहीं डाली गईं।

मुझे एक दूसरे सूत्रसे मालूम हुआ कि उनके साथ दुर्व्यवहार करनेके लिए विशेष आदेश जारी किये गये हैं और उसका कारण यह बताया जाता है कि महादेव देसाईने जान-बूझकर शासनकी आज्ञाका उल्लंघन किया है। अधिकारियोंको यह बात बहुत खटकी है कि 'इंडिपेंडेंट' छपाई और छपाईके लिए आवश्यक 'डिक्लेरेशन' दाखिल किये बिना ही निकाल पाना सम्भव हो गया है।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जेलके सीखचोंमें बन्द रहकर भी महादेव देसाई अपनी सम्पादकीय दक्षताको सिद्ध करेंगे और शारीरिक यातनाओंके बावजूद अपनी स्वतन्त्रता बरकरार रखेंगे। मैं यह सूचना देकर पाठकोंको सान्त्वना देना चाहता हूँ कि महादेव देसाईके पास प्रेमसे ओतप्रोत ऐसा हृदय है जिसमें यातना पहुँचानेवाले के लिए

भी स्थान है। पवित्र भजनोंके रूपमें उनके पास एक ऐसी आत्मशक्ति भी है जिसपर यातनाओंका असर नहीं होता। वे भजन गाकर अपने इन सारे कष्टोंकी पीड़ाको दूर कर सकेंगे। मेरा पूरा विश्वास है कि मीराबाईपर उनके पति द्वारा दी गई यातनाओंका कोई असर नहीं हुआ था। ईश्वरके प्रति प्रेम और उसके अमूल्य नामका निरन्तर स्मरण उन्हें नित्य प्रसन्न बनाये रखता था। जब मैं उन राजपूत वीरांगनाओंकी याद करता हूँ जो ईश्वरका नाम लेकर जलती हुई चितामें कूद जाती थीं तब मेरे मनमें उनका जो चित्र उभरता है मैं उसमें उनके चेहरेपर आनन्दका ही भाव देखता हूँ। लेटीमरने[1] जब शानके साथ अपना हाथ फैलाकर आगमें डाल दिया तो उन्हें तनिक भी कष्ट नहीं हुआ। उन्हें अगर किसी चीजने बचाया तो वह थी ईश्वरमें उनका विश्वास और उनकी सत्यनिष्ठा। चमत्कारोंका युग आज भी गुजरा नहीं है। यदि हम ईश्वरकी सत्ता और उसकी रक्षा करनेकी क्षमतामें थोड़ा भी विश्वास करें तो हमें ऐसा कवच मिल जाता है जिसके बलपर हम उन सब पीड़ाओंको सह सकते हैं जिन्हें असह्य कहा जाता है। किसी भी सत्याग्रहीको जिसे अपने उद्देश्यमें विश्वास है, इस सत्यमें तनिक भी सन्देह नहीं करना चाहिए कि संकटके समय ईश्वर उसकी रक्षा करेगा।

मुझे पूरा विश्वास है महादेव देसाई अपने विनम्र किन्तु गरिमापूर्ण व्यक्तित्वसे दुर्व्यवहार करनेवाले पाषाण-हृदय व्यक्तियोंका भी दिल पिघला सकेंगे।

लेकिन हम सरकारके दुर्व्यवहारके उदाहरणोंकी अपनी चर्चापर वापिस आयें: लखनऊका उदाहरण लीजिये। वहाँ सब ठीक चल रहा था। पण्डित नेहरू और उनके साथियोंको आवश्यक सुविधाएँ दी गई थीं। मैं तो यह सोचने लगा था कि यद्यपि संयुक्त-प्रान्तकी सरकार अपनी आज्ञाका उल्लंघन करनेवालों को बराबर जेलमें डाल रही है फिर भी वह राजनीतिक बन्दियोंके साथ शालीनता और नम्रताका व्यवहार कर रही है। लेकिन अब ऐसा मालूम होता है कि लखनऊमें भी कुछ परिवर्तन आ गया है। मुझे अभी-अभी खबर मिली कि शेख खलीकुज्जमाँ और उनके दस साथियों-को जिला जेलसे केन्द्रीय जेलमें भेज दिया गया है और उन्हें जो सुविधाएँ दी गई थीं उनसे उन्हें वंचित किया जायेगा और शायद उनसे किसीको मिलनेकी इजाजत भी नहीं मिलेगी। पण्डित नेहरू और बाकी कैदियोंने इस प्रकारके भेदभावके विरुद्ध एक कड़ा विरोध-पत्र भेजा है और इस बातकी माँग की है कि उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए जैसा कि दूसरे राजनीतिक कैदियोंके साथ किया जाता है। हर भारतवासीके लिए यह गर्वकी बात होनी चाहिए कि भारतके कुछ बेहतरीन आदमी आज अपना सारा बड़प्पन भूलकर आम आदमीके साथ कन्धेसे-कन्धा भिड़ाकर काम कर रहे हैं और अपने लिए किन्हीं विशेष अधिकारोंकी माँग नहीं कर रहे हैं।[2]

१. ह्यू लेटीमर (१४८५-१५५५); अंग्रेज समाज-सुधारक जिनपर धर्म-विरोधी होनेका आरोप लगाकर जीवित जला दिया गया था।

२. इस अनुच्छेदके अन्तमें लेखन-तिथि, १ जनवरीका उल्लेख है।

उपर्युक्त टिप्पणियाँ लिखनेके बाद मुझे एक तार मिला। इस तारमें कहा गया है कि श्री देसाईसे दुबारा मिलने दिया गया और वे बिलकुल स्वस्थ हैं और उनके साथ अब अच्छा व्यवहार किया जा रहा है। अधिकारियोंकी खातिर, मुझे इस बातकी खुशी है कि श्री देसाईके साथ किये जा रहे व्यवहारमें सुधार किया गया है। खैर, यह तो ठीक है लेकिन ऊपर जिस अस्वच्छताका वर्णन हुआ है वह तो शुरूसे ही नहीं होनी चाहिए थी। महादेव देसाई-सरीखे किसी एक व्यक्तिके साथ मजबूरन अच्छा व्यवहार किया गया — यह बात खास महत्त्व नहीं रखती। सवाल एकका नहीं बल्कि बहुतसे लोगोंका है। सामान्य कैदियोंकी क्या हालत होगी? क्या उन्हें कोई अधिकार है? सुसंस्कृत लोगोंका कैदमें डाला जाना उस दृष्टिसे एक अनायास प्राप्त सौभाग्य है। जेलमें राजनीतिक कैदियोंकी उपस्थितिका एक आनुषंगिक लाभ यह होगा कि मानव-अधिकारोंका यह सवाल हल हो जायेगा।

'इंडिपेंडेंट' का नया रूप

श्री महादेव देसाईने दो हजार रुपयेकी जमानत जब्त हो जानेपर 'इंडिपेंडेंट' का जो हस्तलिखित संस्करण निकाला था वह कठिनाइयोंके बावजूद अब भी निकल रहा है। वह अपने नये रूपमें नियमित रूपसे प्रकाशित हो रहा है। अगर वर्तमान सम्पादक गिरफ्तार कर लिया गया तो उसके बाद क्रमशः यह पद कौन-कौन लोग सँभालेंगे, इसकी व्यवस्था कर ली गई है। पत्रके मुखपृष्ठपर उन सम्पादकों और सहायक सम्पादकोंके नाम हैं जो कि इस थोड़ी-सी अवधिमें गिरफ्तार कर लिये गये हैं। वे हैं: — रंगा अय्यर,[१] जॉर्ज जोजेफ, कबाड़ी और महादेव देसाई। मेरा खयाल है कि लाहौरके 'जमींदार' पत्रको छोड़कर कोई ऐसा दूसरा पत्र नहीं है, जिसका ऐसा गौरवपूर्ण रेकार्ड हो। मैं एक दूसरे कालममें पिछले सात अंकोंसे कुछ चुनी हुई सामग्री प्रकाशित कर रहा हूँ। पहला अंक तो मैं पूरा प्रकाशित कर ही चुका हूँ। पत्रकी यह विशेषता पाठकोंके ध्यानमें अवश्य आयेगी कि समाचार कितनी सावधानीसे संकलित किये गये हैं, कैसे एक-दूसरेसे उनका ताल-मेल बैठाया गया है और उन्हें संक्षिप्त रूपमें पेश किया गया है। पाठक यह भी देखेंगे कि सम्पादकीयमें कैसे ठोस विचार हैं। मैं पूरी आशा करता हूँ कि इलाहाबादकी जनता इस प्रयोगके प्रति सहानुभूति जतायेगी और उसके युवा सम्पादक द्वारा की गई अपीलका समर्थन करेगी। यह एक साहसपूर्ण प्रयोग है और उसमें महत्त्वपूर्ण सम्भावनाएँ निहित हैं। मुमकिन है कि सरकार पत्रके खिलाफ अपनी कार्रवाई की कोई हद ही न बांधे और प्रत्येक नये सम्पादकको गिरफ्तार करती चली जाये। इस नये प्रयोगका उद्देश्य यह दिखाना है कि जब सजा भुगतनेके लिए काफी आदमी मौजूद हों तो कोई भी सरकार जनताकी मर्जीके खिलाफ जबरदस्ती अपनी इच्छा नहीं लाद सकती। अपनेको स्वतन्त्र अनुभव करने और स्वतन्त्र होनेसे पहले यह जरूरी है कि हम सभी सरकारी रियायतोंको ठुकरा सकें। हमें यह मानना पड़ेगा कि हमारे असहयोग आन्दोलनके बावजूद बहुत सी ऐसी चीजें

१. सी० एस० रंगा अय्यर।

हैं जिनका लाभ हम सरकारकी कृपासे उठाते हैं। अगर सरकार चाहे तो हम सबको बिलकुल अलग-अलग कर सकती है और रेलगाड़ी, डाक-तार आदिकी सुविधाओंसे हमें वंचित कर सकती है। हाँ, एक चीज ऐसी है जिसे सरकार हमारी मर्जीके बगैर नहीं दबा सकती और वह है हमारी आत्मा। इसलिए यदि हम भारतकी आत्माको स्वतन्त्र बनाये रखना चाहते हैं तो सरकार हमारे रास्तेमें जो भी रुकावटें डाले उनका मुकाबला करने और उनपर विजय पानेके लिए हमें तैयार रहना चाहिए।

यदि सम्पादकको अच्छे प्रतिलिपिक मिल जायें तो वह आसानीसे एक हजार प्रतिलिपियाँ तैयार करा सकता है। मेरी सलाह है कि सम्पादक अपनी बात और भी कम शब्दोंमें कहना सीखे। अगर वह थोड़ा-सा अभ्यास करे तो अपनी पूरी बात सिर्फ एक फुलस्केप कागजके दोनों तरफ लिखकर कह सकता है। रोजाना जनता जिन छपे हुए पत्रोंको पढ़ती है और जिन्हें पढ़नेमें उन्हें इतनी तकलीफ उठानी पड़ती है उनकी अपेक्षा यह संक्षिप्त समाचारपत्र कहीं ज्यादा पढ़ने योग्य होगा। अगर समाचार-पत्रमें से भरतीकी सामग्री, सुर्खियाँ और विज्ञापन हटा दिये जायें तो बाकी सामग्री एक फुलस्केप कागजमें आ सकती है। सम्पादकको चाहिए कि वह ऐसे समाचार और विचार प्रकाशित करे जिन्हें पाठक और कहीं नहीं पा सकता। ऐसा करनेसे उसके पत्रकी प्रचार-संख्या बिना प्रयत्नके हजार गुनी हो जायेगी। सम्पादकको साथ ही यह याद रखना चाहिए कि लिखित दैनिक पत्रके लिए एक और तरहके संगठनकी जरूरत है। इसके एजेण्टोंको वितरकोंका कार्य कम और प्रतिलिपियोंका कार्य ज्यादा करना होगा। लिखित दैनिक पत्रके प्रबन्धकको एजेण्टोंकी और उन ग्राहकोंकी सूची रखनी होगी जो इन एजेण्टोंसे पत्र खरीदते हैं। इन एजेण्टोंको अपने-अपने क्षेत्रोंके लिए स्थानीय प्रतिलिपिक रखने होंगे जो अपने क्षेत्रोंके लिए काफी प्रतिलिपियाँ तैयार करेंगे। इस प्रकार लिखित दैनिक पत्रके कर्मचारियों और पाठकोंके बीच निकटतर और सजीव सम्पर्क स्थापित हो जायेगा। इसके अलावा, जब यह योजना ठीक तरह चल पड़ेगी तो आप देखेंगे कि परेशानी कम हो जायेगी; समय, शक्ति और पैसा भी कम खर्च होगा और इसके परिणाम अधिक टिकाऊ और शीघ्र फलदायी होंगे।

एक बैरिस्टरको नोटिस

अलीगढ़में दंगोंके तुरन्त बाद जब श्री टी० ए० के० शेरवानीको गिरफ्तार किया गया, उस समय वे राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालयके व्यवस्थापक थे। इस समय श्री शेरवानी, इलाहाबादकी नैनी केन्द्रीय जेलमें सजा काट रहे हैं। अभी उन्हें उच्च न्याया-लयसे यह नोटिस दिया गया है कि उन्हें भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १५३–ए के अन्तर्गत सजा हुई है। अतः वे बतायें कि उनका नाम एडवोकेटोंकी सूचीसे क्यों न हटा दिया जाये या उन्हें वकालत करनेसे मुअत्तल क्यों न कर दिया जाये क्योंकि उन्हें अपनी सफाई इसी माहकी २३ तारीखको देनी है। दो साल पहले बड़ेसे-बड़ा वकील ऐसा नोटिस पाकर सिहर उठता! उस समय इस तरहकी कार्रवाईको भावी बर्बादीका सूचक समझा जाता। लेकिन खुश किस्मतीसे स्थिति बदल गई है। मुझे पता है कि इस नोटिससे श्री शेरवानीकी एक रात भी बेचैनीसे नहीं कटी। उन्होंने असहयोगीकी

हैसियतसे वकालत पहले ही छोड़ दी है। उन्हें अपने ऊपर और देशपर इतना विश्वास तो है ही कि वे यह विश्वास रखें कि जब स्वराज्य मिलेगा और वह निकट भविष्यमें मिलनेवाला ही है, तब उनका नाम सूचीमें सम्मानके साथ पुनः शामिल कर लिया जायेगा, भले ही २३ तारीखको उच्च न्यायालय उसे हटाना चाहे तो हटा दे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२२

६२. कांग्रेसका अधिवेशन और उसके बाद

सारांश

कांग्रेस अधिवेशनका सप्ताह बड़े हर्ष और उत्सवका सप्ताह था। किसीको ऐसा नहीं लगता था कि स्वराज्य अभी प्राप्त नहीं हुआ है। प्रत्येक मनुष्य इस बातको जानता मालूम होता था कि हमारा राष्ट्रीय बल लगातार बढ़ रहा है। जिसे देखिए उसीके चेहरेपर विश्वास और आशाके भाव झलकते हुए दिखाई देते थे। स्वागत-समितिने अधिवेशनके लिए एक लाख मनुष्योंके बैठने योग्य मण्डप बनाया था; परन्तु आगत सज्जनोंकी संख्याका अनुमान कमसे-कम दो लाखका है। भीड़ इतनी अधिक थी कि 'सीजन' टिकट या प्रवेश टिकट तक देना असम्भव हो गया। और यदि लोगोंको डरानेके लिए कुछ झूठी अफवाहें न उड़ाई गई होतीं तो दर्शकोंकी यह आश्चर्य-जनक संख्या और अधिक होती। नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओंके कारावास और उनके साहसने लोगोंके हृदयोंमें एक नई आशा और नई उमंग पैदा कर दी है। ऐसा लगता था कि लोगोंको यह मालूम हो गया है कि आजादी प्राप्त करनेकी तथा अपनी आजादीमें रुकावट डालनेवाली बड़ीसे-बड़ी ताकतके टुकड़े-टुकड़े कर डालनेकी रामबाण दवा बस कष्ट सहन ही है।

कांग्रेसके नये विधानके अनुसार एक सालतक काम हुआ है और मेरी विनम्र सम्मतिमें विधानने अपनी उपयोगिता पूरी तरह सिद्ध कर दी है। विषय-समितिमें चारों ओर गम्भीरता और 'कामसे-काम रखने'की प्रवृत्ति दिखाई देती थी। उसमें प्रत्येक बातकी खूब छानबीन की जाती थी। फिर उसके सदस्योंका चुनाव तत्काल ही, जैसा बन पड़ा, वैसा नहीं किया गया था; बल्कि वे अपने मतदाताओं द्वारा बहुत सोच-विचारके उपरान्त निर्वाचित किये गये थे। मतदाता भी ऐसे जो यह जानते थे कि हम क्या कर रहे हैं। खुद कांग्रेसके अधिवेशनका दृश्य भी प्रभावशाली था। देशबन्धु चित्तरंजन दासकी जगह सभापतिके आसनको हकीमजीने[1] सुशोभित किया। उन्होंने अपना काम जिस धीरजसे निबाहा उससे यह सिद्ध हो गया है कि वे एक आदर्श सभापति हैं। प्रतिनिधियोंने मत देनेसे पहले अपनी शंकाओंके निवारणका आग्रह किया। प्रत्येक बातकी और पूरी कार्रवाईको जाननेका वे बार-बार प्रयत्न करते थे।

१. हकीम अजमल खाँ।

स्वागत-समितिके सभापति श्री वल्लभभाई पटेलने अपना भाषण हिन्दीमें पढ़ा। वह इतना छोटा था कि कोई १५ मिनटमें खतम हो गया। सभापति महोदयका परिचय करानेके लिए एक भी भाषण नहीं हुआ। यह पूरी कार्रवाई कांग्रेस कमेटीने ही कर डाली। इससे बारह हजार प्रतिनिधियों और प्रेक्षकोंके कमसे-कम दो घण्टे बच गये। सभापति महोदयका भाषण भी करीब बीस मिनटमें पूरा हो गया था। प्रत्येक वक्ताने अपने प्रतिपाद्य विषयपर ही भाषण किया। वे अपने विषयसे इधर-उधर नहीं भटके। एक भी मिनट व्यर्थकी बातमें नहीं लगाया गया।

स्थिति ही ऐसी थी कि इसके सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता था। तमाम प्रस्तावोंमें जो-कुछ कहा गया था वह राष्ट्रको ही लक्ष्य करके कहा गया था। उनके द्वारा जनताके सामने ऐसा कार्यक्रम रखा गया जिसके अनुसार, यदि देश यह चाहता हो कि संसारमें उसे अपना उचित स्थान प्राप्त हो तो, उसे बड़े उत्साह और जोशके साथ काम करना होगा।

इसलिए विषय-समिति तथा खुले अधिवेशनमें इस बातपर असाधारण रूपसे ध्यान दिया गया कि प्रत्येक प्रस्तावको लोग खूब अच्छी तरह समझ लें और फिर उसपर मतदान करें।

यह तो हुआ कांग्रेसके इस अधिवेशनके काम-काजके सम्बन्धमें। अब प्रदर्शनीकी बात करें।

प्रदर्शनी

महासभाका प्रदर्शन-विभाग भी कम प्रभावशाली नहीं था। खुद मण्डप ही बड़ा भव्य और शानदार था। वह चारों ओरसे खादीसे आच्छादित था। मेहराबें भी खादीकी थीं और विषय-समितिका मण्डप भी खादीका ही था। मण्डपके सामने ही एक सुन्दर फुहारा था, जिसके आसपास हरे-हरे मैदान बड़े सुहावने मालूम होते थे। कांग्रेसके मण्डपके पीछे एक बड़ा भारी मण्डप और था जिसमें कांग्रेसके वक्ता आ-आकर कांग्रेसकी कार्रवाईका हाल उन हजारों नर-नारियोंको सुनाया करते थे, जो कांग्रेसके प्रति अपने प्रेम और प्रवेश-शुल्क देनेकी अपनी तैयारीके बावजूद कांग्रेसके मण्डपमें न जा पाये थे।

रातके समय वह सारा मैदान बिजलीकी रोशनीसे जगमगा उठता था। और चूंकि यह स्थान साबरमतीके किनारे एलिस पुलके छोरपर ही है इसलिए नदीके दूसरे किनारेसे देखनेवाले हजारों तमाशबीनोंके लिए वह बड़ा भव्य दृश्य था।

प्रदर्शनीका स्थान बस पुलके पास ही था। झुंडके-झुंड लोग प्रदर्शनीमें टूटे पड़ते थे। प्रदर्शनी बड़ी सफल रही। लोगोंकी आमद-रफ्त तो अनुमानसे भी बाहर निकली। कोई ४० हजारसे कम प्रेक्षक हररोज वहाँ नहीं गये। भारतमें क्या चीजें तैयार हो सकती हैं इसका यह अद्वितीय प्रदर्शन था। चिकाकोल (आन्ध्र प्रदेश) के कुछ कारीगर आये थे। वे कपासकी समस्त क्रियायें खुद करके बताते थे। १०० नम्बर तकका सूत हाथसे कातकर दिखाते थे। यह दृश्य प्रदर्शनीका मुख्य आकर्षण था। किसी भी तरहके यंत्रकी सहायताके बिना शायद ऐसी बर्फ-जैसी सफेद पूनी नहीं बनाई जा

सकती जैसी कि उन आन्ध्रकी महिलाओंने केवल अपने हाथोंसे बनाकर दिखाई। जितना बारीक धागा उन आन्ध्र-महिलाओंकी कोमल अँगुलियोंसे निकलता था उतना किसी यन्त्रसे नहीं निकल सकता। तकुआ चक्कर खाता हुआ अपने संगीतका जैसा सुर छेड़ता था वैसा अन्य किसी प्रकारसे नहीं निकल सकता। एक कमरेमें हर तरहकी खादीके नमूने रखे थे। उनसे यह बात जानी जा सकती थी कि इस एक वर्षमें खादीके जीवनमें कितना विकास हुआ है। कविवर रवीन्द्रनाथके शान्तिनिकेतन तथा दूसरी जगहोंसे चित्रकलाके कुछ नमूने आये थे और नक्काशीकी कारीगरीके भी कुछ सुन्दर नमूने रखे गये थे। उन्हें देखकर सामान्य दर्शक तथा उस विषयके ज्ञाताको भी कुछ नई बातें मालूम हो सकती थीं। संगीत समारोह भी हुए थे जिनमें भारतके समस्त प्रान्तोंके अच्छे-अच्छे गवैये एकत्र हुए थे। उन्हें देखनेके लिए हजारों लोग बेतरह उमड़ते थे। समारोहके अन्तमें अखिल भारतीय संगीत-परिषद्का पहला अधिवेशन हुआ। उसके संयोजक थे पण्डित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर[१]। परिषद्का उद्देश्य था राष्ट्रीय सभा-समितियोंमें संगीतका प्रवेश और प्रचार करना तथा भजन-मंडलियोंका संगठन करना।

खादीकी लोकप्रियता

खादीनगर, उसके पासका मुस्लिमनगर और उसके पड़ोसमें ही खिलाफत मण्डप, ये हिन्दू-मुस्लिम एकताके सबसे बड़े उदाहरण थे तथा खादीकी लोकप्रियताके प्रत्यक्ष प्रमाण थे। स्वागत-समितिने सिर्फ गुजरातमें ही बनी खादीसे काम लिया है। कुल साढ़े तीन लाख रुपयेकी खादी मँगाई गई और उसके उपयोगके लिए पचास हजार रुपया खर्च किया गया। प्रतिनिधियों और दर्शकोंके तमाम डेरोंपर तथा एक बड़े भारी रसोई-घर और भण्डारगृहपर खादी-ही-खादी लगी हुई थी। कोई दो हजार हिन्दू-मुसलमान स्वयंसेवकोंने जिनमें कुछ पारसी और ईसाई भी थे, खादीनगर तथा मुस्लिमनगरमें ठहरनेवाले तमाम मेहमानोंके सत्कार और प्रबन्धका भार सँभाला।

शौचादिके लिए विशेष रूपसे प्रबन्ध किया गया था। इसके लिए छोटी-छोटी खाइयाँ खुदवाई गई थीं और हर शौचालयके चारों ओर खादीके पर्दे लगाये गये थे। हर एक सज्जनके टट्टीसे बाहर निकलते ही मैलेपर साफ मिट्टी डाली जाती थी। इससे जब भी कोई टट्टी जाता तो वह उसे साफ ही नजर आती थी। खाइयोंकी सफाईके कामपर दाम देकर मेहतर नहीं रखे गये थे; पर हर जाति और हर मजहबके स्वयं-सेवकगण तैनात थे। इस कामके लिए उन्हीं स्वयंसेवकोंकी योजना की गई थी जिन्हें इस आवश्यक कामसे अरुचि नहीं थी। पाठक शायद इस बातको न जानते होंगे कि यह विधि कितनी अच्छी है। इससे सफाई खूब रहती है। इससे मैला साफ करनेवाले-को न तो मैलेको छूना पड़ता है और न उसपर पड़ी हुई मिट्टीको ही। उसे बस बेलचे-भर साफ मिट्टी उसपर डाल देनेकी और एहतियातके साथ मैलेको ढक देनेकी जरूरत रहती है। इस जरा-सी और मामूली एहतियातका फल यह हुआ कि आसपासकी जगह बड़ी साफ और सुहावनी बनी रही और मक्खियोंकी भिनभिनाहटसे और उनके दोषसे बची रही। सभी जगहोंपर बिजलीकी रोशनीकी तजवीज की गई थी।

१. पण्डित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर, शास्त्रीय संगीतके विख्यात गायक। गांधर्व महाविद्यालयके संस्थापक।

महिला-परिषद्

मैं महिला-परिषद्का उल्लेख किये विना नहीं रह सकता, जिसकी कि सभानेत्री अली भाइयोंकी वीर माता वी-अम्मा थीं। वह दृश्य हृदयस्पर्शी था। पूरे विशाल पण्डाल-में पन्द्रह हजारसे कम औरतें न थीं। मैं यह नहीं कहता कि वहाँ जो-कुछ हो रहा था उसका रहस्य सभीकी समझमें आ गया। लेकिन मैं यह जरूर कहता हूँ कि वे अपने दिलसे इतना जानती थीं कि वहाँ क्या वात हो रही है। वे जानती थीं कि उनकी इस सभाने भारतकी उद्देश्य-पूर्तिमें वड़ी सहायता पहुँचाई है और उन्हें मालूम था कि हमें भी अव पुरुषोंके साथ-ही-साथ अपने हिस्सेका काम करना है।

इस तमाम भीड़-भाड़में, जहाँतक मुझे पता है, किसी तरहकी कोई दुर्घटना नहीं हुई। पुलिसने किसीके काममें दखल नहीं दिया, किसीसे छेड़-छाड़ नहीं की। यह उसके लिए नेकनामीकी वात है। पुलसे कांग्रेस अधिवेशनकी ओरका सारा प्रवन्ध कांग्रेस तथा खिलाफतके स्वयंसेवकोंके सुपुर्द था।

इस चित्रका कृष्ण पक्ष

यहाँ तक तो मैंने चित्रका उज्ज्वल पक्ष दिखाया। परन्तु अन्य सभी चित्रोंकी तरह इस चित्रका कृष्ण पक्ष भी था। लोगोंमें उत्साह तो खूव प्रवल था; पर प्रेक्षक कभी-कभी नियमोंको भंग कर देते थे। अधीर हो उठनेपर वे एक-दो वार तो मण्डपमें जानेके लिए जवरदस्ती फाटकमें घुस पड़े। उस समय तो कुशल रही; परन्तु उससे वात वढ़कर भयंकर हो सकती थी। हममें इतनी योग्यता अवश्य होनी चाहिए जिससे हम ऐसे कार्योंको पूर्ण शान्तिके साथ निर्विघ्न पूरा कर सकें। और यह उसी दशामें सम्भव है जवकि जन-समूह कुदरती तौरपर और अपने-आप अपने ही भाई-विरादरोंकी हिदायतोंके मुताविक वरते। आत्मसंयम स्वराज्य अर्थात् स्वशासनकी कुंजी है। प्रति-निधिभाई भी नियमोंका पालन करनेमें शिष्टाचारका ध्यान नहीं रखते थे। कुछ लोग तो अपने लिए नियत स्थानको छोड़कर दूसरी जगह वैठ गये। कुछ भाइयोंने तो विना हिचकिचाहटके यहाँतक कह डाला कि हम तो सविनय अवज्ञाके लिए कमर कस चुके हैं, अतएव जहाँ हमारा जी चाहेगा वहीं वैठेंगे। कांग्रेस कमेटीके कुछ सदस्य भी ऐसे अभद्र दण्डनीय कानून-भंगसे वरी नहीं थे। कुछ प्रतिनिधियोंने अपने स्थानका किराया और भोजनके दाम भी देने नहीं चाहे। और मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि एक गुजराती भाई, यह जानते हुए भी कि प्रेक्षकोंके टिकट दूसरेके काम नहीं आ सकते, जालसाजी करके अपने एक मित्रका टिकट लेकर आते रहे। इस वातसे मेरा दुःख और भी वढ़ जाता है कि वे प्रान्तीय कमेटीके एक प्रसिद्ध सदस्य हैं।

अव आगे!

जव मैं तस्वीरके इस वुरे पहलूका ध्यान करता हूँ तो मेरा दिल वैठ जाता है। हमें अपने ध्येयकी प्राप्तिमें क्यों देर हो रही है, यह मैं जानता हूँ। परन्तु जव मैं उसके अच्छे पहलूकी ओर देखता हूँ तो चित्र इतना मनोहर मालूम होता है कि इन छायाओंसे उसकी सुन्दरता कुछ खास कम नहीं हो सकती। पर साथ ही हमें इन

बातोंको भूल जाना तथा सतर्कतामें गफलत करना ठीक नहीं है। इस आन्दोलनकी सफलता हमारे नैतिक बलके विकासपर ही निर्भर है। जिस प्रकार संगीतमें एक सुरके बिगड़ जानेसे सारा मजा किरकिरा हो जाता है उसी प्रकार हमारे इस महान् आन्दोलनको नष्ट-भ्रष्ट करनेके लिए एक ही आदमी काफी है। हमें याद रखना चाहिए कि हमारी सब बातोंका आधार सत्य और अहिंसा है। दूसरे लोग जिन्होंने ऐसी प्रतिज्ञा नहीं की है चाहे जो करें; पर यदि हम विचारपूर्वक की गई अपनी ही प्रतिज्ञाओंको तोड़ने लगें तो इससे सर्वनाश हुए बिना न रहेगा। इसलिए जैसा कि मैंने अक्सर इन पृष्ठोंमें लिखा है, कांग्रेसके विधानके अनुसार कामिल तौरपर काम करनेसे ही स्वराज्यकी स्थापना अपने-आप हो जायेगी। देखें, क्या होता है?

कांग्रेसका कोष

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके पास अभी एक अच्छी रकम शेष है; परन्तु प्रान्तीय कमेटियाँ अवश्य ही अपने पासका सब रुपया खर्च चुकी होंगी। उनके पास आमदनीका एक ऐसा साधन है जिसके लिए उन्हें विशेष प्रयत्न करनेकी जरूरत ही नहीं रहती। कांग्रेसके हर एक सदस्यको चार आने प्रतिवर्ष चन्दा देना आवश्यक है। तभी उसका मत देनेका अधिकार कायम रह सकता है। अतएव यदि प्रत्येक प्रान्तमें यथेष्ट सदस्य हों और सदस्यता-पत्र भरनेवाले सदस्योंकी संख्या कमसे-कम दो लाख मानें तो उसके पास पचास हजार रुपये जमा हो सकते हैं। मुझसे कहा गया है कि यह तो केवल मृगतृष्णा है; क्योंकि इतने रुपये वसूल करनेमें मूलसे भी अधिक खर्च हो जाता है। जो सरकार अपनी आयसे अधिक खर्च करती है वह स्वेच्छाचारिणी या भ्रष्ट सरकार होती है। कांग्रेसके लिए तो यह दावा किया जाता है कि उसका संचालन स्वेच्छापूर्वक होता है। और यदि हम नाम-मात्रके खर्चपर चन्दा वसूल नहीं कर सकते तो हमें जीवित रहनेका कोई अधिकार नहीं। स्वराज्य हो जानेपर हम ऐसी उम्मीद करते हैं कि अपनी आय वसूल करनेमें सरकारको २½ प्रतिशतसे अधिक खर्च नहीं आयेगा और यह सारी वसूली बल-प्रयोगसे नहीं, बल्कि लोगोंकी स्वेच्छासे होगी। अतएव प्रत्येक प्रान्तसे हमें कमसे-कम इतनी आशा करनी चाहिए कि वह अब अपने खर्चका प्रबन्ध खुद करेगा। फिर कमसे-कम एक करोड़ सदस्य अर्थात् २५ लाख रुपये सारे भारतसे सदस्यताके चन्देके रूपमें प्राप्त करना कौन कठिन बात है? यदि हमारा संगठन या यों कहें कि सरकार दिनपर-दिन अधिकाधिक लोकप्रिय होती जायेगी तो हमारे सदस्योंकी संख्या दूनी हो जानी चाहिए। हमारे पास ऐसे सुयोग्य और ईमानदार अवैतनिक स्वयंसेवक काफी तादादमें होने चाहिए जो सिर्फ चन्दा वसूल करनेका ही काम करें। यदि ऐसा न हो तो हमें अपनेको दिवालिया कहना चाहिए। यदि कांग्रेस देशके उत्तम और स्वाभाविक संवर्धनका लक्षण हो तो किसी भी प्रकारकी कोशिशके बिना यह नाम-मात्रका सालाना व्यक्तिगत कर वसूल हो जाना चाहिए। और जो बात स्वयं कांग्रेसके विषयमें चरितार्थ होती है वही उसकी दूसरी संस्थाओं जैसे महाविद्यालयों, पाठशालाओं, बुनाईके कारखानों आदि पर भी घटती है। जो संस्था स्वयं अपने नैतिक बलपर स्थानीय जनताकी सहायता नहीं प्राप्त कर

सकती, वह जीवित रहने योग्य नहीं है। जो संस्था अपने ही जिलेकी सहायतासे चलती है वही उस जिलेके लिए आवश्यक हो सकती है। पादरियोंकी कई बड़ी-बड़ी संस्थाएँ हैं। उनको इंग्लैंड या अमेरिकासे रुपया मिलता है। पर हैं वे लोगोंपर भार रूप ही। जनताका तन-मन उनके साथ नहीं है। यदि पादरी लोग आरम्भसे ही लोगोंकी सद्भावना और सहायताको अपना आधार बनाते तो उन्होंने आज भारतकी अपरिमित सेवा की होती। इसी प्रकार यदि कांग्रेस कमेटियों तथा कांग्रेससे सम्बन्ध रखनेवाली दूसरी संस्थाओंको उसके केन्द्रीय मंडलकी ओरसे सहायता मिलने लगे तो बहुत सम्भव है कि वे उन चीजोंकी तरह हो जायें जो बाहरसे लाकर कहीं लगाई जाती हैं और उनसे शायद ही जनताका हित हो। अतएव यह एक सामान्य नियम बनाया जा सकता है कि जिस संस्थाको स्थानीय लोगोंकी ओरसे सहायता नहीं मिलती उसे जीवित न रहना चाहिए। आत्मावलम्बन स्व-शासनकी क्षमताकी अचूक कसौटी है। हाँ, यह हो सकता है कि ऐसे स्थान और प्रान्त अभी होंगे जिन्हें अपनी स्थितिका ज्ञान न हुआ हो। आरम्भिक अवस्थामें उन्हें उनके विकासमें सहायता देनेकी आवश्यकता होगी। सरकारके साथ संग्रामकी जो भी योजना हम बनायें उसमें उनकी गिनती नहीं की जा सकती। वायुवेगसे चलनेवाले इस युद्धमें हमें केवल उन्हीं स्थानोंपर भरोसा रखना होगा जिनके राजनैतिक चैतन्यका विकास हो चुका हो। अतएव केन्द्रीय मंडलसे स्थानीय संस्थाओंको बहुत ही कम आर्थिक सहायताकी आशा रखनी चाहिए।

छुआछूत

इसी तरह हमको छुआछूतके विषयमें भी भगीरथ प्रयत्न करना चाहिए। जब-तक कि खुद अछूत लोग ही हिन्दू धर्मके इस सुधारकी तसदीक न करें तबतक क्या हम उनके लिए कुछ करनेका दावा कर सकते हैं? इस विषयमें मुझे आन्ध्र जैसे अत्यन्त प्रगतिशील और खूब जाग्रत प्रान्तमें भी गलतफहमी पाकर निराशा हुई। छुआ-छूतको दूर करनेका अर्थ है पंचम जातिकी समाप्ति। अतएव यदि कोई पंचम जातिका लड़का किसी सार्वजनिक कुएँसे पानी खींचे या सार्वजनिक मदरसेमें पढ़े तो लोगोंको उसपर कोई आपत्ति न होनी चाहिए। एक अब्राह्मण जितने काम कर सकता है उतने सब काम करनेका अधिकार उसे होना चाहिए। धर्मके नामपर हम हिन्दुओंने बाहरी बातोंका खूब आडम्बर रच रखा है और धर्मको केवल खानपानका विषय बनाकर उसकी प्रतिष्ठा कम कर दी है। ब्राह्मणत्वको जो अद्वितीय स्थान प्राप्त हुआ है उसका कारण है ज्ञानसे प्रदीप्त निःस्पृहता, अन्तःकरणकी शुद्धि और घोर तपस्या। हिन्दू लोग यदि खान-पान और छूतछातके आध्यात्मिक प्रभावको अनुचित महत्त्व देंगे तो इसका कुफल उन्हें मिले बिना नहीं रह सकता। हमें आन्तरिक पवित्रताका अधिक विचार करना चाहिए; हम अनेक आन्तरिक प्रलोभनोंसे घिरे हुए हैं; घोरसे-घोर अस्पृश्य और पापपूर्ण विचारोंका प्रवाह हमें स्पर्श कर रहा है और अपवित्र बना रहा है। ऐसी दशामें हम अपनी पवित्रताके घमण्डमें मस्त होकर अपने उन भाइयोंके स्पर्शके प्रभावको तिलका ताड़ न बनायें, जिन्हें हम अज्ञानवश और उससे भी अधिक अपने बड़प्पनकी ठसकमें अपनेसे नीचा समझते हैं। उस सर्वशक्तिमान् परमात्माके दरबारमें

हमारी पहचान इस बातसे नहीं होगी कि हमने क्या-क्या खाया-पिया है और किस-किसका स्पर्श किया है; बल्कि इस बातसे होगी कि हमने किस-किसकी सेवा की है और किस-किस तरहसे की है। यदि हमने किसी भी विपत्तिग्रस्त और दुःखी मनुष्यकी सेवा की होगी तो वह अवश्य हमपर कृपा-दृष्टि डालेगा। जिस प्रकार हमें बुरे लोगों और बुरी बातोंके संसर्गसे बचना चाहिए उसी प्रकार खराब, उत्तेजक और गन्दे खान-पानसे भी दूर रहना चाहिए। परन्तु हमें इन नियमोंकी महिमाको आवश्यकता-से अधिक महत्त्व नहीं देना चाहिए। हम भोजनके रूपमें अमुक वस्तुओंके त्यागका उपयोग अपने कपट-जाल, धूर्तता और पापाचरणको छिपानेके लिए नहीं कर सकते। और इस आशंकासे कि कहीं उनका स्पर्श हमारी आध्यात्मिक उन्नतिमें बाधक न हो, हमें किसी पतित या गन्दे भाई-बहनकी सेवासे हरगिज मुँह न मोड़ना चाहिए।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमें भी अभी बहुत-कुछ होना बाकी है। इस एकताको अभी लोग सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं। उन्हें डर है कि इससे छोटी जातियोंके स्वतन्त्र अस्तित्व तथा उन्नतिमें बाधा पहुँचेगी। हम सावधान रहें। हमें अपनी पिछली भूलोंको फिर न दोहराना चाहिए। हमें अपने नरमदलीय अथवा निर्दलीय भाइयोंके साथ भाईचारेका बरताव रखना चाहिए। उन्हें ऐसा नहीं लगना चाहिए कि इन लोगों-के साथ रहनेमें हमारी खैर नहीं है। अपनी सहिष्णुताके द्वारा हमें उनके मनसे अपने सम्बन्धमें उनकी सारी शंकाएँ और विरोधका भाव दूर कर देना चाहिए; हाँ, हमारे आदर्शोंसे उनका जो विरोध है वह भले रहे।

सविनय अवज्ञा

हमें सारा विश्वास केवल सविनय अवज्ञापर ही केन्द्रित नहीं कर देना चाहिए। उसका उपयोग तो हमें चाकूके समान बहुत ही सोच-समझकर करना चाहिए। जब मनुष्य बराबर बे-रोक काटता ही चला जाता है तो वह जड़-बुनियादको भी काट डालता है और जिस चीजको प्राप्त करने के लिए वह ऊपरके फिजूल अंशको काटना चाहता था वह भी उसके साथ कट जाती है। सविनय अवज्ञाका प्रयोग केवल उसी दशामें अच्छा, आवश्यक और अक्सीर होगा जब हम मनुष्यकी उन्नतिके दूसरे तमाम नियमों-पर अटल और दृढ़ रहें। अतएव हमें अवज्ञाकी बनिस्वत उसके 'सविनय' विशेषण-पर पूरा-पूरा जोर देना चाहिए। विनय, अनुशासन, विवेक और अहिंसाके बिना अवज्ञा करनेसे सिवा सर्वनाशके और कुछ नहीं हो सकता। प्रेमके साथ की गई अवज्ञा प्राणदायी और जीवनवर्द्धक है। सविनय अवज्ञा तो उन्नतिका बड़ा बढ़िया लक्षण है; वह ऐसा विसंवादी विरोध नहीं जो नाशकारी होता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२२

६३. कानूनी लूट

हजारों असहयोगियोंको दिये जा रहे कारावासके दण्ड और कारावासके अनिवार्य कष्टोंकी बातसे मुझे खुशी होती है किन्तु यहाँ अब मैं जिन घटनाओंका उल्लेख कर रहा हूँ उनसे मुझे दुःख होता है, यद्यपि मैं जानता हूँ कि उनसे स्वराज्य पास आ रहा है। सरकारके बारेमें मैं इतना बुरा खयाल कभी नहीं बनाना चाहता था जितना उसके इन कार्योंके कारण मुझे बनाना पड़ रहा है।

कलकत्तेकी हड़ताल[1] इलाहाबादकी हड़तालकी तरह ही सम्पूर्ण थी। बम्बईमें १७ नवम्बरको कुछ लोगोंने अपना होश खोकर जैसे पागलपनके कृत्य किये कलकत्तेके नागरिकोंने वैसा कुछ भी नहीं किया, यद्यपि लोगों द्वारा शान्ति भंग किये जानेका खतरा वहाँ सबसे ज्यादा था। उनकी शान्ति अनुकरणीय थी। उनके मन्त्री बाबू सातकौड़ीपति राय तथा सरदार लछमनसिंह और स्वामी विश्वानन्दको गिरफ्तार कर लिया गया था और जैसा कि मालूम होता है गिरफ्तारीका कारण सिर्फ यह था कि वे शान्ति बनाये रखनेकी कोशिश कर रहे थे। फिर भी लोग शान्त रहे। इसे देखकर तो ऐसा लगता है कि शीघ्र ही हम अपने देशवासियोंके विषयमें यह कह सकेंगे कि उन्होंने नेताओंके बिना ही अपना काम सुयोग्य रीतिसे करना सीख लिया है, या दूसरे शब्दोंमें, वे खुद ही अपने नेता बन गये हैं।

हड़तालको तोड़नेकी जी-तोड़ कोशिशोंके बावजूद लोगोंने अपनी इच्छासे हड़ताल रखी और भड़कानेकी कोशिशोंके बावजूद उन्होंने शान्ति कायम रखी, यह बात 'सिविल' गार्डके सदस्यों और यूरोपीयोंको बहुत खल गई है। स्पष्ट है कि इसका सारा दोष वाइसराय साहबपर है। उन्होंने युवराज महोदयको ऐसे समयपर बुलाया है जब कि उन्हें नहीं बुलाना चाहिए था। और जब उन्हें बुला लिया गया तो जहाँ-कहीं वे जा रहे हैं वाइसराय जनताको उनका स्वागत करनेके लिए मजबूर कर रहे हैं और इसमें असफल होनेपर वे ब्रिटिश नागरिकोंकी भावनाओंको यह कहकर भड़का रहे हैं कि यह बहिष्कार युवराज और ब्रिटिश जातिका खुल्लमखुल्ला अपमान है। जिस बातकी आशंका थी वही हुआ। पुलिस और सिविल गार्डने विभिन्न सरकारी ऐलानोंका यही मतलब निकाला कि अब उन्हें छूट मिल गई है और वे जो चाहें सो कर सकते हैं। उन्होंने दुकानें लूटीं। अगर 'सर्वेन्ट' में छपी खबरें सच हों तो ये लोग जूते पहने हुए मस्जिदोंमें घुसे और उन्होंने चोरियाँ भी की हैं। बेकसूर आदमियोंके चोटें लगीं और कुछने तो जानसे भी हाथ धोये। कलकत्तावासियोंने यह कानूनी अराजकता अत्यन्त सहनशीलताके साथ बरदाश्त की है। उन्होंने ठीक काम किया है। मेरी रायमें तो धर्मका अपमान करनेवालों के जूतोंसे मस्जिदकी पवित्रता भंग नहीं हुई।

१. २४ दिसम्बर, १९२१ को।

मस्जिद जानेवालों की आश्चर्यजनक सहनशीलताने मस्जिदको और भी अधिक पवित्र बना दिया है और यह सिद्ध कर दिया है कि हमारा संघर्ष धार्मिक है।

बिहारके कुछ भागोंमें भी अधिकारियोंने कोई बेहतर सलूक नहीं किया। सोनपुर थानाकी कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीने लिखा है :

> २१ दिसम्बर, १९२१को दोपहर बाद लगभग ३ बजे १० स्वयंसेवक कुछ कार्यकर्त्ताओंके साथ सड़कपर गश्त लगा रहे थे और दुकानदारोंसे २२ तारीखको युवराजके आगमनपर मुकम्मिल हड़ताल करनेके लिए कह रहे थे। जब ये लोग सोनपुर पुलिस स्टेशनके पास पहुँचे तो पुलिस सुपरिंटेंडेंट (श्री पार्किन) जिनकी यहाँ युवराजके आगमनके लिए नियुक्ति की गयी है, करीब १०० सिपाहियोंके साथ थानेके बाहर निकले और स्वयंसेवकोंसे उनके झंडे, बैज और उनके खादीके कपड़े तक छीन लिये और सारी चीजोंको फाड़कर चीर-चीर कर दिया।
>
> इसके तत्काल बाद सुपरिंटेंडेंट साहब कांग्रेसके दफ्तरमें पहुँचे। उनके पीछे-पीछे सादे कपड़ोंमें हाथोंमें लाठी लिये कुछ सिपाही थे। कांग्रेस दफ्तर पहुँचनेपर उन्होंने सिपाहियोंको दफ्तर लूट लेनेका हुक्म दिया; (उनके शब्द थे — "मारो और लूटो"।) यह हुक्म मिलते ही सिपाहियोंने दफ्तरका दरवाजा तोड़ दिया, और स्वयंसेवकोंको हटाकर दफ्तरके कमरेमें घुस गये। इसके बाद श्री पार्किन-ने दफ्तरकी पूरी तलाशी ली और एक सन्दूकका ताला तोड़ा जिसमें कुछ नकदी थी और रिकार्डवाली अलमारी भी तोड़ डाली। उसके बाद उन्होंने सब रिकार्ड, खादीके कपड़े, राष्ट्रीय कैलेंडर, तस्वीरें, बैज, खादीकी टोपियाँ और धार्मिक पुस्तकें जैसे 'रामायण' और 'गीता' वहांसे हटाकर दफ्तरके सामने जला डालीं। वे करीब १२० रुपये भी उठा ले गये। यह रुपया जिला कांग्रेस कमेटीने बाढ़ग्रस्त लोगोंमें बाँटनेके लिए और राष्ट्रीय स्कूलके चन्देके लिए भेजा था।

बनारससे निम्नलिखित समाचार मिला है। इस समाचारसे कानून और व्यवस्थाके अनुसार चलनेका दम भरनेवाली इस सरकार द्वारा दिन दहाड़े की जा रही लूटका यह दुःखमय चित्र पूरा हो जाता है :

> पिछले तीन दिनोंमें स्वयंसेवकोंने अपनेको गिरफ्तार करानेके लिए सड़कों-पर परेड नहीं की। सब मिलाकर करीब ५०० स्वयंसेवक गिरफ्तार किये गये। उनमें से अधिकांश २४ घंटे बाद छोड़ दिये गये या उनपर दस रुपये जुर्माना किया गया। जुर्माना अदा न करनेपर पुलिसने उनसे कम्बल, कोट, टोपी, जूते, घड़ियाँ आदि उतरवा लीं।

इस तरहके काम गुण्डों द्वारा किये जानेकी बात तो सुनी है। कानूनकी निगाहमें तो नागरिकोंकी सम्पत्ति और उनके शरीरको इतना पवित्र समझा जाता है कि उन्हें बिना कानूनी कार्रवाईके छुआ भी नहीं जा सकता। मैंने अदालतोंमें ऐसे लोग भी देखे हैं जिन्हें कर्जा चुकाना होता है और जिनके खिलाफ अदालत रकम अदायगीका

हुक्म भी जारी कर देती है पर वे आरामसे वहाँसे निकल आते हैं हालाँकि उनकी वास्कटोंपर सोनेकी जंजीरें लटकी होती हैं। मैंने ऐसे अपराधी भी देखे हैं जिनपर जुर्माना किया गया था और जिनकी अँगुलियोंमें हीरेकी ऐसी कीमती अँगूठियाँ थीं जिनसे उनका जुर्माना पूरा वसूला जा सकता था, लेकिन अदालतसे जुर्माना दिये बिना बेरोक-टोक चले गये। इन सभी मामलोंमें वसूली तभी की गई जब कि उनके खिलाफ उनकी जायदाद की जब्ती या उसे बेचनेके वारंट जारी किये गये। लेकिन इस समय असहयोग आन्दोलनकारियोंके खिलाफ जो कानून लागू किया जा रहा है उसमें कोई बन्धन नहीं है। उससे तो ऐसा लगता है कि भारतमें किसी एक अफसरकी मर्जी ही सारा कानून हो गई है। मेरा तो खयाल है कि सरकारकी ओरसे जो-कुछ हुआ बताया जाता है उसमें कुछ बातें तो ऐसी हैं जो मार्शल लॉके अन्तर्गत भी इस तरह बेहिचक नहीं की जा सकती थीं। अफसोस है कि भारत सरकारको ऐसे आदमी मिल जाते हैं जिन्हें वह इतने गिरे हुए काम करा लेनेके लिए इस्तेमाल करती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२२

६४. स्वतन्त्रताकी पुकार

मौलाना हसरत मोहानीने कांग्रेसके मंचसे तथा मुस्लिम लीगके सभापतिकी हैसियतसे बड़ी हिम्मतके साथ आजादीके लिए लड़ाई ठानी।[1] लेकिन दोनों बार उन्होंने बड़े मजेमें मुँहकी खाई। मौलाना साहब क्या चाहते थे, इसके विषयमें किसीको गलत खयाल नहीं हो सकता। बराबर की और हिस्सेदारकी हैसियतसे भी तथा खिलाफतका निपटारा अच्छी तरह हो जानेपर भी, वे अंग्रेज लोगोंके साथ किसी किस्मका ताल्लुक नहीं रखना चाहते। यह कहना ठीक नहीं होगा कि पूर्ण आजादीके बिना खिलाफतके मसलेका निपटारा कभी हो ही नहीं सकता। हम यहाँ सिद्धान्तकी चर्चा कर रहे हैं। इस बातपर तो सभी एकमत हैं कि यदि पूर्ण आजादीके बिना खिलाफतका सवाल हल नहीं हो सकता अर्थात् यदि अंग्रेज लोग मुसलमानी दुनियाकी उच्च आकांक्षाओंके प्रति विरोधभाव ही रखते रहे, तो हमारे लिए पूर्ण स्वतन्त्रताका आग्रह करनेके सिवाय दूसरा उपाय ही नहीं है। यदि ब्रिटेनको मुसलमानोंके साथ दोस्तीका बरताव करनेके लिए राजी नहीं किया जा सकता तो भारत ब्रिटेनको अपनी नैतिक सहायता भी नहीं दे सकता और खुद उसे भी ब्रिटेनकी नैतिक और भौतिक सहायताके बिना अपना काम चलाना होगा।

परन्तु फर्ज कीजिए कि ग्रेट ब्रिटेन अपना रुख बदल दे — जैसा कि मैं जानता हूँ, हिन्दुस्तानको बलवान पाकर वह बदलेगा — तब भी पूरी आजादीके लिए जोर देते

१. दिसम्बर १९२१ में कांग्रेस और मुस्लिम लीगके अहमदाबादमें हुए अधिवेशनोंमें पूर्ण स्वतंत्रताका लक्ष्य स्वीकार करानेके लिए ।

रहना धार्मिक दृष्टिसे नाजायज होगा। क्योंकि वह हमारी प्रतिहिंसा और झल्लाहटका सूचक होगा। ऐसा करना खुदाको न मानना होगा; क्योंकि उस अवस्थामें उनसे किनाराकशी करनेका आधार इस धारणापर होगा कि अंग्रेज लोग मनुष्यके देव-भावको पहचानने और उसे अपनानेकी क्षमता नहीं रखते। ऐसी स्थितिको न तो श्रद्धावान् हिन्दू और न श्रद्धावान् मुसलमान ही कबूल कर सकता है।

भारतका सबसे बड़ा गौरव इस बातमें नहीं है कि वह अंग्रेज भाइयोंको अपने खूनका प्यासा दुश्मन माने, जिन्हें मौका मिलते ही हमें हिन्दुस्तानसे निकाल बाहर करना है; बल्कि इस बातमें है कि उस साम्राज्यकी जगह — जिसकी भित्ति पृथ्वीके कमजोर और अनुन्नत राष्ट्रों तथा जातियोंकी आर्थिक लूटपर, और इसलिए आखिर-कार पशुबलपर आधारित है — एक ऐसे राष्ट्रमण्डलका निर्माण करनेमें है जिसमें वे और हम मित्र और हिस्सेदारकी हैसियतसे रहें।

जरा हम इस बातपर विचार करें कि ऐसे स्वराज्यका जिसमें अंग्रेजोंके साथ सम्बन्ध रहे, अर्थ क्या है? इसका निःसन्देह यही अर्थ है कि भारत यदि चाहे तो स्वतन्त्रताकी घोषणा कर सके। अतएव स्वराज्य कोई ब्रिटिश पार्लियामेंटसे मिलने-वाला मुफ्तका दान नहीं होगा। वह भारतकी पूर्ण आत्माभिव्यक्तिकी घोषणा ही होगी। हाँ, यह सच है कि वह पार्लियामेंटके एक कानून द्वारा ही घोषित किया जायेगा। लेकिन वह तो भारतीय प्रजाके प्रकाशित मतकी शिष्ट स्वीकृति मात्र होगी। दक्षिण आफ्रिका-की यूनियनके विषयमें भी ऐसा ही हुआ था। हाउस ऑफ कॉमन्स द्वारा यूनियनकी योजनाका एक अक्षर इधरसे उधर न हो सका। हमारे मतकी स्वीकृति तो सन्धिके रूपमें होगी और ब्रिटेन सन्धिमें सम्मिलित दो पक्षोंमें से एक होगा।

ऐसा स्वराज्य चाहे इस वर्ष न आये, हमारी इस पीढ़ीमें भी न आये। लेकिन मैंने इससे कमका विचार नहीं किया है। जब कभी निपटारा होगा तब ब्रिटिश पार्लियामेंट नौकरशाही द्वारा व्यक्त भारतीय प्रजाके मतको नहीं बल्कि भारतके स्वतन्त्रतापूर्वक चुने गये प्रतिनिधियों द्वारा व्यक्त मतको स्वीकार करेगी।

कोई राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्रको बतौर दानके स्वराज्य नहीं दे सकता। यह तो ऐसी निधि है जो देशके अच्छे-अच्छे पुरुषोंके रक्तसे ही खरीदी जा सकती है। और जब हम उसकी बहुत बड़ी कीमत दे चुकें तब वह हमारे लिए दान-रूप न रहेगी। वाइसरायने यह कहा है कि स्वराज्य यदि तलवारके द्वारा नहीं मिला तो पार्लियामेंटके द्वारा ही मिल सकता है। यहाँ वे गड़बड़ा गये हैं। ऐसा कहकर श्रोताओं-को यह अनुमान करनेका मौका देना कि इंग्लैंडमें कष्टसहनके नैतिक दबावको माननेकी क्षमता नहीं है, उन्होंने अपने देशकी बड़ाई नहीं की है और यदि उन्होंने उपस्थित जनोंको यह समझाना चाहा हो कि ब्रिटिश पार्लियामेंट तो जब उसकी इच्छा होगी तभी स्वराज्य देगी, उसे हिन्दुस्तानकी उच्चाकांक्षा और अभिलाषासे कोई गरज नहीं, तो उन्होंने श्रोताओंकी बुद्धिमत्ताका अपमान किया है। सच बात तो यह है कि स्वराज्य लगातार परिश्रम और कल्पनातीत कष्टसहनके बलपर ही प्राप्त होगा।

परन्तु वाइसरायको यह पता नहीं है कि तलवारकी स्थान-पूर्तिके लिए कोई दूसरा साधन भी है और इसलिए शायद वे यह खयाल करते हैं कि धारा सभाओंमें

अपनी वाद-विवाद कुशलताका प्रयोग करते-करते किसी-न-किसी दिन हम ब्रिटिश पार्लियामेंटको यहाँतक प्रभावित कर सकेंगे कि भारतको स्वराज्य प्रदान करना कितना वांछनीय है। लेकिन उन्हें जल्द ही मालूम हो जायेगा कि तलवारकी स्थान-पूर्तिका एक उससे भी बढ़िया और अक्सीर साधन है और वह है — सविनय अवज्ञा। अब यह दिनपर-दिन अधिकाधिक स्पष्ट होता जाता है कि कानूनकी सविनय अवज्ञासे कष्ट-सहनका वह मार्ग तैयार होगा जिससे होकर भारतको अपने लक्ष्यतक पहुँचनेके पहले अवश्य गुजरना होगा।

हमने अभी अपनी पूरी शक्ति प्रकट नहीं की है। मुसलमानों और हिन्दुओंमें अब भी अविश्वास कायम है। अछूत-लोगोंको अभी हिन्दुओंके स्पर्शकी आब नहीं पहुँची है। भारतके पारसी और ईसाइयोंको अभी यह निश्चय नहीं है कि स्वराज्य मिलने-पर उनका भविष्य क्या होगा। अभी हम अपने ही बनाये कानून-कायदोंकी पाबन्दी करना नहीं सीखे हैं और न उसकी जरूरत ही महसूस करते हैं। चरखेने अभी हमारे घरोंमें स्थायी रूपसे स्थान नहीं पाया है। खादी अभीतक राष्ट्रीय पोशाक नहीं हो पाई है। दूसरे शब्दोंमें यों कहें कि अभी हम आत्म-रक्षाकी कला और उसकी शर्तें नहीं समझ पाये हैं।

अभीतक भारतमें एक ऐसा जन-समाज मौजूद है जिसकी संख्या तो कम हो रही है पर जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। जो यह मानता है कि हिंसाके ही द्वारा स्वराज्य प्राप्त हो सकता है और इसलिए कहता है कि अहिंसाके साथ-साथ हिंसाको भी जारी रहने देना चाहिए अर्थात् हमारी यह अहिंसा या शान्ति, हिंसाकी पूर्वपीठिका और तैयारी समझी जानी चाहिए। जो लोग इन विचारोंके कायल हैं वे शायद यह न जानते हों कि ऐसा करना सारे संसारको धोखा देना है। हमारी प्रतिज्ञा तो हमसे यह अपेक्षा करती है कि जबतक हम उससे बँधे हुए हैं तबतक हम इस बातपर विश्वास करें कि अहिंसा ही सबसे शीघ्र स्वराज्य प्राप्त करानेका साधन है। ज्यों ही हमें यह विश्वास हो जाये कि स्वराज्य तो अहिंसाके द्वारा नहीं प्राप्त हो सकता या केवल हिंसासे ही प्राप्त हो सकता है, त्यों ही हमें अपनी प्रतिज्ञा रद कर देनी चाहिए — ऐसा करनेके लिए हम बाध्य हैं। जबतक हमने अहिंसाकी प्रतिज्ञा ले रखी है तबतक वह हमारे लिए धर्म है। अभी अहिंसाका परीक्षण चल रहा है, इसलिए वह कार्योपयोगी भी है। परन्तु जबतक हम अपनी प्रतिज्ञासे बँधे हैं तब-तक हम केवल अपने ही लिए अहिंसाको मानने और उसका पालन करनेके लिए बाध्य नहीं हैं; बल्कि हम दूसरोंको अहिंसाके पालनके लिए तैयार करने और हिंसाका निषेध करनेके लिए भी उतने ही बाध्य हैं। मुझे तो अब और भी अधिक विश्वास हो गया है कि हम अभी अपने लक्ष्यतक नहीं पहुँच पाये हैं, इसका कारण यह है कि खुद हम सब लोगोंने ही, जिन्होंने कि कांग्रेसके सिद्धान्तोंको स्वीकार किया है, हमेशा न तो वचन और कर्मके द्वारा शान्तिका पालन किया है और न विचारों और इरादोंमें शान्ति धारण करनेका प्रयत्न किया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२२

६५. जिस समस्याके तत्काल हलकी जरूरत है

सरकारने इस समय जो समस्या हमारे सामने पैदा की है उसके सामने स्वराज्य, खिलाफत या पंजावकी समस्याका स्थान गौण है। हमें पहले भाषणकी और मिल-बैठकर विचार करनेकी स्वतन्त्रता हासिल करनी ही चाहिए। उसके बाद ही हम अपने लक्ष्यकी ओर आगे बढ़ सकेंगे। बगलसे किये गये इस हमलेसे अगर सरकारका बस चले तो वह हमें मार सकती है। भाषण और गोष्ठीकी स्वतन्त्रताके मामलेमें हार माननेका मतलब यह होगा कि हमारा सारा प्रयत्न धूलमें मिल जायेगा। अगर सरकारको हमारी अहिंसात्मक गति-विधियोंको, भले ही वे गति-विधियाँ सरकारके अस्तित्वके लिए खतरनाक हों, विनष्ट करने दिया जाता है तो नरम दलके लोगों तकको अपना सारा काम बन्द कर देना पड़ेगा। इसलिए सबके हितोंको ध्यानमें रखते हुए हमें इन मौलिक अधिकारोंकी रक्षा प्राणपणसे करनी चाहिए। हमें युवराजका स्वागत करनेके लिए मजबूर नहीं किया जा सकता और न हमें अपने स्वयंसेवक संगठनोंको तोड़नेके लिए या अपने उन कामोंको छोड़नेके लिए मजबूर किया जा सकता है जिन कामोंको हम अपने विकासके लिए उपयुक्त समझते हैं।

इन अधिकारोंकी रक्षाका सबसे शीघ्र फलदायी और सुरक्षित तरीका यह है कि हम इन प्रतिबन्धोंकी उपेक्षा करें। भले ही गोलियोंकी बौछारका सामना करना पड़े, हम सच बोलना नहीं छोड़ सकते, इसी तरह चाहे हमें बन्दूकोंकी संगीनोंका मुकाबला क्यों न करना पड़े हम अपना संगठनका अधिकार नहीं खो सकते। इन मौलिक अधिकारोंको प्राप्त करनेके लिए कोई भी कीमत चुकाना बड़ी बात नहीं है। और इस मामलेमें कोई समझौता, बातचीत या सम्मेलन नहीं हो सकता। या सम्मेलन बुलाने और समझौता होनेसे पहले यह जरूरी है कि पाबन्दीके आदेश और संगठनोंको तोड़नेके हुक्म रद कर दिये जायें और जिन लोगोंको अहिंसात्मक गति-विधियोंके लिए गिरफ्तार किया गया है उन सबको छोड़ दिया जाये। अगर हम स्वतन्त्र व्यक्तियोंकी तरह नहीं रह सकते तो निस्सन्देह हमें सहर्ष मरनेके लिए तैयार रहना चाहिए।

काश, मैं हर आदमीको समझा सकता कि सविनय अवज्ञा प्रत्येक नागरिकका जन्मसिद्ध अधिकार है। अगर वह यह अधिकार छोड़ देगा तो मनुष्य ही नहीं रह जायेगा। सविनय अवज्ञासे कभी अराजकता नहीं पैदा हो सकती। हाँ, अपराधमूलक अवज्ञासे अराजकता पैदा हो सकती है। प्रत्येक राज्य ऐसी अपराधमूलक अवज्ञाको बलात् खतम करता है और अगर वह ऐसा नहीं करता तो वह स्वयं खतम हो जाता है। लेकिन सविनय अवज्ञाको दबाना तो मनुष्यकी अन्तरात्माको कैद करनेकी कोशिश करने जैसा है। सविनय अवज्ञासे तो शक्ति और पवित्रता बढ़ती है। सत्याग्रही शस्त्रोंका कभी इस्तेमाल नहीं करता और इसीलिए वह उस राज्यके लिए सर्वथा हानिरहित होता है जो लोकमतकी आवाज सुननेके लिए थोड़ा भी तैयार हो। हाँ, वह स्वेच्छाचारी राज्यके लिए खतरनाक होता है क्योंकि वह जिस उद्देश्यके लिए राज्यकी

अवज्ञा करता है उस ओर जनताका ध्यान आकर्षित करता है और इस तरह उस राज्यके विनाशका कारण बनता है। इसलिए उस राज्यमें जहाँ कोई कानून नहीं है या दूसरे शब्दोंमें जो राज्य भ्रष्ट है वहाँ सविनय अवज्ञा एक पवित्र कर्त्तव्य बन जाती है और जो नागरिक इस प्रकारके राज्यसे लेन-देनका व्यवहार रखता है वह उस राज्यके भ्रष्टाचार और गैर-कानूनी हरकतोंमें साझीदार है।

इसलिए किसी विशेष अधिनियम या कानूनकी सविनय अवज्ञा करना उचित होगा या नहीं, यह सवाल जरूर उठाया जा सकता है और रुकने तथा सावधानी बरतनेकी सलाह भी दी जा सकती है। लेकिन सविनय अवज्ञा करनेके अधिकारके बारेमें शंकाको कोई स्थान नहीं हो सकता। वह तो हर एकका जन्मसिद्ध अधिकार है; उसे अपना आत्मसम्मान खोये बिना नहीं छोड़ा जा सकता।

हाँ, यह जरूरी है कि जब सविनय अवज्ञाके अधिकारपर जोर दिया जाये तो उसके साथ ही सभी सम्भव प्रतिबन्ध लगाकर इस बातकी व्यवस्था कर दी जानी चाहिए कि उसका समुचित उपयोग हो। इस बातकी पूरी सावधानी रखी जानी चाहिए कि कहीं भी हिंसा न भड़क उठे और अराजकता न फैल जाये। प्रसंगकी आवश्यकताके अनुसार उसकी व्याप्ति और प्रसारका क्षेत्र अच्छी तरह सीमित कर दिया जाना चाहिए। इसलिए आज जो सवाल हमारे सामने है उसे ध्यानमें रखते हुए हमें यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि आक्रामक सविनय अवज्ञाकी हमारी मौजूदा प्रवृत्ति भाषण और गोष्ठीकी स्वतन्त्रताके अधिकार सिद्ध करनेतक ही सीमित है। दूसरे शब्दोंमें असहयोग जबतक अहिंसात्मक रहता है तबतक उसे बिना किसी रुकावटके चलने देना चाहिए। जब ऐसी स्थिति आ जाये तभी खिलाफत, पंजाब या स्वराज्यकी समस्याओंपर समझौतेके लिए प्रतिनिधियोंका सम्मेलन बुलाया जा सकता है, उससे पहले नहीं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-१-१९२२

६६. तार : देवदास गांधीको

अहमदाबाद
६ जनवरी, १९२२

देवदास गांधी
आनन्द भवन
इलाहाबाद

कृष्णकान्त[1], रामा, सैयद मुहीउद्दीन और गोविन्दको उनके सौभाग्यपर बधाई।[2] आशा है स्वयंसेवकोंका तांता बराबर बँधा रहेगा।

बापू

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७९०)की फोटो-नकलसे।

६७. खूब किया, लेकिन क्या यह जारी रहेगा ?

हम कह सकते हैं कि गुजरातने अच्छा काम करके दिखाया है।[3] उसने साढ़े तीन लाख रुपयेकी खादीके तम्बू ताने और पंडाल बनाये, बिजलीकी रोशनी की, सुन्दर प्रदर्शनीका आयोजन किया, भजन गाये, कीर्तन किये और हिन्दुस्तानके संगीतका गौरव प्रदर्शित किया। हिन्दू और मुसलमान साथ-साथ रहे और किसीने भी एक-दूसरेको कोई ऊँचा-नीचा शब्द नहीं कहा। गुजरातकी बालिकाएँ स्वयंसेविकाएँ बनीं। गुजरातके नौजवानोंने भंगियोंका काम किया और प्रतिनिधियोंकी सेवा की। स्त्रियोंकी विशाल सभा हुई, व्याख्यान हुए, कांग्रेसके पंडालमें अर्थशास्त्रके नियमोंका पालन करते हुए सभीने आवश्यकतानुसार ही भाषण दिये, किसीने भी लम्बा भाषण नहीं दिया और सरकारको चौंका देनेवाला और सरकार द्वारा आरम्भ की गई दमन-नीतिका जवाब देनेवाला प्रभावपूर्ण परन्तु मर्यादायुक्त प्रस्ताव पास किया।

यह सब करके गुजरातने अपना और हिन्दुस्तानका नाम उजागर किया है, इसमें तो किसीको कोई सन्देह नहीं हो सकता। लेकिन क्या आगे भी ऐसा ही होगा ?

वीरताका दिखावा करनेमें तो कोई कसर नहीं रखी गई। वीरताकी बातें कहनेमें कोई कंजूसी नहीं दिखाई गई, लेकिन क्या लोग वीरताके कार्य भी करेंगे ? क्या गुजरातके लोग बंगाल, संयुक्त-प्रान्त और पंजाबके लोगोंसे होड़ कर सकेंगे ? क्या वे

१. पण्डित कृष्णकान्त मालवीय; पण्डित मदनमोहन मालवीयके भतीजे और अभ्युदयके सम्पादक।
२. देखिए "टिप्पणियाँ", ८-१-१९२२ का उप-शीर्षक "मालवीयजीका पुत्र"।
३. दिसम्बर १९२१ में अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें।

कैदियोंको छुड़ाने और स्वराज्य प्राप्त करनेका यश लेंगे अथवा जेल जायेंगे? क्या वे गुस्सा किये बिना मार खायेंगे और मरेंगे? यदि हम सब बातें समझें तो यह कार्य बच्चोंका खेल है; किन्तु यदि न समझें तो पहाड़ काटनेके समान कठिन है।

हम मन, वचन और कायासे शान्त रहें, भंगीको भी सगे भाईके समान मानें; पारसियों, यहूदियों, ईसाइयों अथवा सहयोगियोंके साथ भी शिष्टताका व्यवहार करें, अंग्रेज पड़ोसीके प्रति भी क्रोध न करें, शुद्ध स्वदेशीका पालन करें। खादीके ही कपड़े पहनें, सत्यके लिए और सत्यका पालन करते हुए जेल जायें, मार खायें और मरें — यह हमारा कर्त्तव्य है।

इस कठिन प्रतिज्ञाका पालन करते हुए जो मरेगा वस्तुतः वही जीवित रहेगा और देशको जीवित रखेगा। अन्य बहुतसे लोग मृत्युको प्राप्त हुए हैं, अनेकने अपने सिर फुड़वाये हैं और अनेक जेल गये हैं। उन्होंने हिन्दुस्तानकी श्री-वृद्धि नहीं की है, उसे तारा नहीं है, बल्कि उसको बदनाम किया है। गुनहगारोंके कष्टों, और आँसुओंसे हिन्दुस्तानका रोग मिटनेवाला नहीं। उसके रोगका उपचार तो निर्दोषोंका बलिदान है।

रावण सती सीताको पकड़कर ले गया और उससे राक्षस-राज्यका नाश हो गया। यदि वह किसी वेश्याको पकड़कर ले गया होता तो आज जगत् उसे वेश्याकी पूजा करनेके लिए याद न करता। अगर दुष्टको जरूरतसे ज्यादा दण्ड मिले तो जगत् उसकी चर्चातक नहीं करता। लेकिन यदि निर्दोषका बाल भी बाँका हो तो उसे वह एक क्षण भी सहन नहीं करता।

लेकिन मैंने क्या देखा?

गुजरातके एक प्रतिष्ठित प्रतिनिधिने कांग्रेस अधिवेशनमें सम्मिलित होनेके लिए दूसरेके टिकटकी चोरी की। वे भाई पकड़ लिये गये और स्वयंसेवक उन्हें मेरे पास लाये। मैं लज्जित हुआ। मुझे गुजरातसे भाग जाना ही श्रेयस्कर प्रतीत हुआ। स्वराज्यके लिए प्रयत्न करनेसे क्या लाभ — पल-भरके लिए ऐसा दुर्बल विचार मेरे मनमें आ गया। अगर यही भाई जेल जायें तो उससे जनताको क्या लाभ होगा? मैंने इस घटनाको उस समय भी तुच्छ नहीं माना था और आज भी नहीं मानता हूँ। शरीरमें एक छोटी-सी फुन्सी भी जानलेवा बन सकती है। पचास मन दूध संखियेकी एक छोटीसी डली पड़ जानेसे व्यर्थ हो जाता है। अगर तुरन्त दुहा दूध मलसे छू जाता है तो हम उसे फेंक देते हैं।

गुजरातियो, आप स्त्री हों अथवा पुरुष, आप चेतें। कमाये हुए धनको पल-भरमें खो न बैठें। यह लड़ाई असत्यकी नहीं है। इसमें पाखण्ड नहीं चलता। इसमें दगा नहीं चलती। आपकी जिम्मेदारी बहुत बड़ी है। नम्रता, सभ्यता, शौर्य, उदारता, सद्विचार, सद्भाव और सद्व्यवहारसे ही यह लड़ाई जीती जा सकती है।

जो अपवित्र हैं वे भले ही उससे दूर रहें। अपवित्रता तो संसार-भरमें है, इसलिए वह गुजरातमें भी रहेगी ही। लेकिन पवित्रतामें अपवित्रताकी मिलावट नहीं चल सकती। जिनसे सत्यका पालन नहीं होता वे भले ही अलग रहें। उन्हें तो अलग रहना ही चाहिए। जिनसे सच नहीं बोला जाता वे भले ही मौन रहें। उन्हें अगर बुरा सोचनेकी आदत होगी तो वह भी समय आनेपर चली जायेगी क्योंकि बादमें

उसका कुछ प्रयोजन ही नहीं रह जायेगा। दूसरेका टिकट लेकर कांग्रेसमें आनेकी क्या जरूरत थी? वहाँ देखने योग्य क्या था?

मेरे कानोंमें यह बात आई है कि ये शर्तें कठिन हैं। ऐसा होते हुए भी इनमें से एक भी बात नई नहीं है।

जो बात हमने नागपुरमें और कलकत्तामें निश्चित की, प्रस्तावके रूपमें स्वीकृत की और जो हजारों सभाओंमें दुहराई वही बात प्रतिज्ञामें दी गई है। अब जब कि प्रत्येक व्यक्तिके लिए अपना निश्चय प्रकट करनेका समय आया है तब क्या हम भड़क उठेंगे? क्या इतने दिनोंतक हम यह कहकर दम्भ ही करते थे कि हमें मैत्रीसे, अस्पृश्यताके मैलको दूर करके तथा आत्मत्याग करके स्वराज्य प्राप्त करना है; अथवा हम यह मानते थे कि ये शर्तें दूसरोंके पालन करनेके लिए हैं, हमारे पालन करनेके लिए नहीं हैं?

मुझे उम्मीद है कि एक भी समझदार गुजराती स्त्री या पुरुष इस धर्म-यज्ञमें अपना नाम दर्ज कराये बिना न रहेगा। बारडोली अथवा आनन्द तैयार न हुए हों तो भले ही न हों। तैयार हुए बिना रह ही नहीं सकेंगे। लेकिन व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा तो हम आज ही कर सकते हैं। ऐसे व्यक्ति तो हर गाँव और हर शहरमें मिलने चाहिए। ऐसे व्यक्तियोंको अब जेलें भरनी ही चाहिए।

मेरी अपनी इच्छा तो यह है कि जबतक गुजराती जेल न जायें तबतक न तो कोई समझौता हो और न कोई असहयोगी कैदी ही छूटे। लेकिन ऐसी निर्दय उम्मीद-के साथ-साथ मेरी यह मान्यता भी है कि स्वेच्छया जेल जानेवाले कैदी कार्य सिद्ध हुए बिना छूटनेकी कामना ही नहीं करेंगे और कार्य-सिद्धिके लिए अभी हमें काफी दुःख उठाना है। इस दुःखको अगर गुजरात नहीं उठायेगा तो और कौन उठायेगा? कमसे-कम दुःख उठानेका रास्ता एक ही है और वह यह कि अच्छेसे-अच्छे लोग अधिकसे-अधिक दुःख उठायें। इसलिए गुजरातके सभी स्त्री-पुरुषोंसे मेरी विनती है कि वे स्वयंसेवक बननेके लिए जो प्रतिज्ञा करनी पड़ती है उसे समझें और उसपर हस्ताक्षर करें एवं उनके सम्मुख हस्ताक्षर करके जेल जानेके जो अनेक शुद्ध अवसर खुले हैं उनका उपयोग करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-१-१९२२

६८. खिलाफत परिषद्

कांग्रेस अधिवेशनके साथ-साथ ही खिलाफत परिषद् और मुस्लिम लीगकी बैठक होती है। इससे हिन्दुओं और मुसलमानोंको बहुत-कुछ सीखने और परस्पर मित्रता बढ़ानेका अवसर मिलता है। संयोगसे खिलाफत परिषद्के अध्यक्ष कांग्रेसके इस अधिवेशनके अध्यक्ष भी हैं — इस बातमें मुझ जैसे श्रद्धालुको तो ईश्वरका हाथ ही दिखाई देता है। देशबन्धुने गिरफ्तार होकर, वे कांग्रेस अधिवेशनमें शामिल होनेपर जितनी सेवा करते उससे कहीं अधिक सेवा की है और हकीमजीने जेलसे बाहर होने तथा खिलाफत परिषद्का भार सिरपर होनेपर भी कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्षके पदका भार भी सँभाल लिया है और इस तरह हिन्दू-मुस्लिम एकतामें वृद्धि की है। खिलाफतके शिविर और कांग्रेसके शिविरका सम्बन्ध इतना निकटका हो गया है कि किसीको ऐसा आभास नहीं हो सकता कि दोनों अलग-अलग हैं।

इन्हीं कारणोंको ध्यानमें रखकर मौलाना अब्बास तैयबजीने सुझाव दिया कि मुस्लिम लीगको अलग संस्थाके रूपमें कायम रखनेका अब कोई कारण नहीं है। आज जब कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके दिल एक हो रहे हैं तब दो अलग-अलग राजनैतिक संस्थाओंकी क्या जरूरत है? जबतक वे अपने-अपने अधिकारोंके लिए परस्पर एक-दूसरेसे लड़ रहे थे तबतक दो अलग-अलग राजनैतिक संस्थाओंकी जरूरत थी। अब तो खिलाफत समिति ही पर्याप्त है। खिलाफत समिति तो रहेगी ही क्योंकि उसका सम्बन्ध धर्मसे है।

इस तरह मुस्लिम लीगको खत्म कर देनेके कारण अत्यन्त सबल और शुद्ध हैं, तथापि जबतक मुसलमानोंका मत इस बारेमें अच्छी तरहसे दृढ़ नहीं हो जाता तबतक मुस्लिम लीगको खत्म कर देनेका विचार न करना ही ठीक होगा।

खिलाफत परिषद् और मुस्लिम लीगकी बैठकमें हर स्थितिमें अंग्रेजोंसे सम्बन्ध तोड़नेकी जो चर्चा हुई थी उसके विषयमें मैं पहले ही लिख चुका हूँ।[1] इसलिए यहाँ और अधिक विचार करनेकी कोई जरूरत नहीं है। मुझे तो खिलाफत परिषद् और मुस्लिम लीगकी बैठकमें दोनों कौमोंके बीच दिन-प्रतिदिन बढ़नेवाले प्रेमका जो अनुभव हुआ उसके सम्बन्धमें लिखनेकी इच्छा होती है। कांग्रेसके मंचपर इतने मुसलमान और खिलाफत परिषद् तथा मुस्लिम लीगके मंचोंपर इतने हिन्दू कार्रवाईमें मुक्त भावसे भाग लेते थे कि सभीको यह भव्य दृश्य अपने मनोंमें सँजोकर रखना चाहिए।

हालाँकि हिन्दुओं और मुसलमानोंके दिल साफ होते जाते हैं तथापि हम अभीतक भयरहित नहीं हुए हैं। हमारा मार्ग अभी रेगिस्तानों, जंगलों, घाटियों और पहाड़ियोंसे भरा हुआ है; उसे हमें अभी साफ करना है। उसपर अभी कंकड़ बिछाने

१. गांधीजीने २७ दिसम्बर, १९२१ को खिलाफत परिषद्में और ३० दिसम्बर, १९२१ को मुस्लिम लीगके अधिवेशनमें भाग लिया था।

और रोलर घुमाना बाकी है। अब भी इस एकताको मजबूत करनेके लिए जितने उपाय काममें लाये जाने चाहिए उन्हें काममें लानेकी बहुत जरूरत है। और इन उपायोंको हम अच्छी तरहसे जान गये हैं। ये निम्नलिखित हैं:

१. परस्पर एक-दूसरेके सुख-दुःखमें भाग लेना।
२. एक-दूसरेकी भावनाओंका पूरा-पूरा ध्यान रखना।
३. परस्पर एक-दूसरेके प्रति भयको त्यागना।
४. जिनमें एक-दूसरेके हित जुड़े हुए दिखाई दें, ऐसे कार्योंको हाथमें लेना।

खिलाफतने हमें पहली शर्तका पालन करनेका मार्ग दिखाया है।

हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेके धार्मिक कार्योंमें हस्तक्षेप किये बिना एक-दूसरेके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट कर सकते हैं।

हिन्दू ज्यादा हैं और मुसलमान कम, इस बातसे मुसलमानोंको नहीं डरना चाहिए। और मुसलमान मुस्लिम राज्योंसे सहायता प्राप्त करके हिन्दुओंको दबायेंगे, यह भय हिन्दुओंको त्याग देना चाहिए।

स्वदेशी और चरखा सबके लिए समान हितकी वस्तुएँ हैं। अगर हिन्दू और मुसलमान समान रूपसे उनके महत्त्व और लाभको समझ जायें तो दोनोंकी एकतामें बहुत अधिक वृद्धि हो जायेगी।

लेकिन दोनोंकी एकतामें वृद्धि करनेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों छोटी-छोटी कौमोंकी रक्षा करने लगें। दोनों पारसियों, यहूदियों और ईसाइयोंसे प्रेम करें, उनका सम्मान करें, उनकी रक्षा करें और स्वप्नमें भी उन्हें सताने अथवा उनके साथ जोर-जबरदस्ती करनेका विचार न करें। ऐसा करते हुए दोनोंको एक-दूसरेकी रक्षा करने और सेवा करनेकी आदत पड़ जायेगी। जिस हदतक हममें सेवाभाव बढ़ेगा उस हदतक हम एकदिल होंगे।

मनुष्य जिस हदतक अपना कर्त्तव्य निभाता है उस हदतक वह प्रेमपात्र बनता है। अधिकारोंकी ही खोजमें घूमनेवाला अपने कर्त्तव्यसे चूक जाता है और अन्ततः वही अत्याचारी कहा जाता है। हम सरकारका विरोध करते हैं क्योंकि सरकार केवल अपने अधिकारोंसे परिचित है। वह हमारे प्रति अपने कर्त्तव्यका तो विचारतक नहीं करती।

यदि हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेके सरपरस्त अथवा शुभचिन्तक बननेकी कोशिश करेंगे तो वे अन्ततः अवश्यमेव एक-दूसरेके शत्रु बन जायेंगे। लेकिन यदि वे एक-दूसरेके सेवक बनेंगे तो उनकी स्नेहकी गांठ दिन-प्रतिदिन मजबूत होती जायेगी और वह अन्तमें न तो तोड़े टूटेगी, न जलाये जलेगी और न गलाये गलेगी। हिन्दू और मुसलमान जब ऐसे विलक्षण बन्धनमें बँध जायेंगे तभी स्वराज्य-कुसुम पूरी तरहसे खिलेगा। और तब हमें इन सब बातोंपर विचार करनेकी भी कोई जरूरत न रहेगी कि हमें पूर्ण स्वतन्त्रता चाहिए अथवा हमें अंग्रेजोंसे मैत्रीकी भी आकांक्षा है अथवा हम तलवारके बलपर स्वराज्य प्राप्त करेंगे या शान्तिपूर्ण ढंगसे। जब ऐसा शुभ अवसर आयेगा तब हमें मनचाही वस्तु उपलब्ध हो जायेगी। इसलिए हम सबका —

हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों और यहूदियोंका — यह धर्म है कि हम भविष्यका विचार छोड़कर वर्तमानका सुधार करनेमें ही लग जायें। उस धर्मका पालन करनेमें प्रभु हम सबका सहायक हो!

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-१-१९२२

६९. टिप्पणियाँ

ईसाइयोंमें जागृति

देखता हूँ कि ईसाई भाइयोंमें भी असहयोगने बड़ी जागृति उत्पन्न कर दी है। समस्त भारतके ईसाइयोंका एक सम्मेलन कुछ दिन पहले लाहौरमें हुआ था। उसके अध्यक्ष थे, श्री मुकर्जी। उसमें स्वदेशी तथा मद्यनिषेधके सम्बन्धमें अच्छे-अच्छे प्रस्ताव पास किये गये। उनकी प्रत्येक बातमें स्वराज्यकी ध्वनि सुनाई दे रही थी। वक्ताओंने खादी पहननेपर बहुत जोर दिया। इस बातको अब सब लोग समझ गये हैं कि खादी गरीबोंके लिए जीवन-रूप है और चरखा गरीबोंके घरकी बरकत है। अतएव अब ईसाई भाइयोंने भी उसको अपना लिया है। इस सम्मेलनके सभापतिने यद्यपि असहयोगके विरुद्ध विचार प्रकट किये तथापि स्वराज्य तो वे भी चाहते हैं। उन्होंने अपने भाषणमें सरकारकी दमन नीतिकी तीव्र निन्दा की।

देशी राज्योंमें युवराज

यह सवाल पूछा गया है कि जब युवराज देशी राज्योंमें जायें तब वहाँके लोगोंको क्या करना चाहिए? मैं समझता हूँ कि देशी राज्योंके लोग अपने राजाओंसे असहयोग नहीं कर रहे हैं। ऐसी अवस्थामें वे ऐसा व्यवहार नहीं कर सकते जिससे देशी राज्यों-की स्थिति विषम हो जाये। हाँ, वे राज्यके अतिथिका स्वागत-सत्कार करनेके लिए बाध्य नहीं हैं, परन्तु इससे उन्हें उनके स्वागतके विरुद्ध आन्दोलन खड़ा करनेका अधिकार प्राप्त नहीं होता। अतएव जब युवराज देशी राज्योंमें जायें तब वहाँके लोगोंको हड़ताल नहीं करनी चाहिए और न विरोध सभाएँ। परन्तु वहाँके समझदार लोगोंका भारतके दूसरे भागोंसे तो निकट सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए। अतः वे, जहाँतक हो सके, युवराजके स्वागत-सत्कारमें शरीक न हों। देशी राज्योंमें लोकसत्ता जैसी चीज तो बहुत ही कम है, या है ही नहीं। [इसलिए] वहाँ राजाके प्रत्येक कार्यमें लोगोंका शामिल होना जरूरी नहीं होता। वहाँ तो लोग उन्हीं कामोंमें शामिल होते हैं जिन्हें या तो वे खुद अच्छा समझते हैं या जिनमें उन्हें जबरदस्ती किये जानेका डर रहता है। इन सब बातोंमें यदि विनयपूर्वक व्यक्तिगत स्वातन्त्र्यका उपयोग किया जाये तो वह उचित है। देशी राज्योंमें राजा और प्रजाका सम्बन्ध स्वार्थमूलक है। राजा यदि अच्छा हो तो वह प्रजाका हितसाधन करता है। यदि बुरा हो तो फिर प्रजाके पास शस्त्र अथवा सत्याग्रहके सिवा तीसरा साधन नहीं है। ब्रिटिश भारतमें सरकार

और प्रजाका ऐसा ही सम्बन्ध बन गया दिखता है; और सरकार ऐसे काम कर रही है जिनका लोककल्याणसे विरोध है। इसीसे यहाँ सत्याग्रह शुरू किया गया। देशी राज्योंकी स्थिति आज इतनी विषम है कि उनकी प्रजाके लिए राजाओंके विरुद्ध सत्याग्रह आरम्भ करना बड़ा गम्भीर कदम सिद्ध हो सकता है। सत्याग्रह केवल उन्हीं राज्योंमें आरम्भ किया जा सकता है, जिनमें असह्य अत्याचार हो रहे हों और साथ ही लोगोंमें सामाजिक आत्मबल उत्पन्न हो चुका हो।

कुछ प्रश्न

मुझसे अनेक तरहके सवाल पूछे जाते हैं। यदि मैं उन सबका जवाब देता रहूँ तो मुझे दूसरे कामोंके लिए फुर्सत ही न मिले। अतः जहाँ जवाब दिये बिना काम ही नहीं चलता वहाँ मैं जवाब देता हूँ। एक गुमनाम पत्रमें कुछ प्रश्न पूछे गये हैं। उनका जवाब मैं यहाँ इसलिए नहीं दे रहा हूँ कि वे आवश्यक हैं; बल्कि यह दिखानेके लिए दे रहा हूँ कि अभी लोगोंमें कितना अज्ञान है और दूसरे मेरा हेतु यह भी है कि ऐसे लोगोंको भी जानकारी हो जाये।

प्र० : आप स्वराज्य लेकर क्या करेंगे?

उ० : जो मुझे प्राप्त करना है उसको प्राप्त करनेका प्रयत्न तो मैं पृथक रूपसे कर रहा हूँ। परन्तु जो समाजको प्राप्त करना है उसको तो समाज ही प्राप्त कर सकता है।

आपने जो इतने रुपये जमा किये हैं आप इनका क्या करेंगे?

प्रत्येक प्रान्तकी कांग्रेस कमेटी उनका उपयोग कर रही है। मुझे उसमें से एक पाई भी खर्च करनेका अधिकार नहीं है। उसका हिसाब भी प्रकाशित कर दिया गया है।

स्वराज्य मिल जानेपर आपके मरनेके बाद कौन राज्य करेगा?

स्वराज्यका अर्थ है अपना राज्य। सब अपना-अपना राज्य करेंगे। जब सब लोग अपने-अपने ऊपर राज्य करने लगेंगे तब सबका — जनताका — राज्य होगा। उससे मेरे जीवन-मरणका कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं तो सिर्फ हकीम हूँ।

आप अंग्रेजी भाषामें लेख क्यों लिखते हैं?

इसलिए कि मैं अपनी संचित पूँजी देशके लिए खर्च करना चाहता हूँ।

आप रेलगाड़ीमें क्यों बैठते हैं?

सरकारकी इतनी मेहरबानी हो रही है। मैं उससे लाभ उठाकर अपना काम चलाता हूँ।

आप सबको खादी पहनाना चाहते हैं, परन्तु वह तो महँगी मिलती है।

विदेशी कपड़ा अगर मुफ्त मिलता हो तो भी महँगा है। खादी महँगी मिलनेपर भी सस्ती है, क्योंकि खादी खरीदनेमें खर्च किया गया सारा रुपया भारतके गरीबोंके घर जाता है। फिर खादी अधिक दिनोंतक चलती है और उससे जो सादगी आती है वह हमारे जीवनके दूसरे भागोंमें व्याप्त होकर अपनी सुगन्धसे राष्ट्रके जीवनको सरल और शुद्ध बनाती है।

आप लोगोंको किसलिए मरवाते हैं?

मैं नहीं मरवाता। लोगोंको मरनेमें आनन्द आता है; इसलिए वे अपने देश अथवा धर्मके निमित्त मरनेको तैयार हो जाते हैं।

आपके साथी बूट और अंग्रेजी पहनावा क्यों पहनते हैं?

इससे मेरी सहिष्णुता प्रकट होती है। और उन सज्जनोंके साथ रहते हुए भी मैं उन्हें प्रेमपूर्वक यह बताना चाहता हूँ कि भारतमें न तो बूटोंकी जरूरत है और न अंग्रेजी पहनावे की।

आप लोगोंके धर्ममें दखल क्यों देते हैं?

मैं किसीके धर्ममें दखल नहीं देता। लोग इतने भोले-भाले भी नहीं हैं कि मुझे दखल देने दें। हाँ, सब धर्मोंके जो सामान्य सिद्धान्त हैं उन्हें मैं जरूर लोगोंके सामने उपस्थित करता हूँ और करते रहना चाहता हूँ।

हवामें न उड़ जाये!

सविनय अवज्ञाकी तेज हवा मालूम तो बहुत अच्छी और पुष्टिकर होती है; परन्तु हमें यह न भूल जाना चाहिए कि कहीं इस हवामें खादी बह न जाये, सूत उड़ न जाये। जो लोग खादी-प्रचारका काम कर रहे हैं वे स्वयंसेवकोंमें अपना नाम अवश्य लिखायें; परन्तु चरखे और खादीको न भूलें। उन्हें खुद आगे बढ़कर गिरफ्तार हो जानेकी आवश्यकता नहीं है। उन्हें सन्तरीकी तरह काम करना है। वे जब रक्षा करनेका समय आये तब बाहर आयें अन्यथा अपने जिम्मे किये गये काममें लगे रहें। जो लोग स्वदेशीके प्रचारमें दत्तचित्त हैं वे तो खादी बेचते हुए अथवा चरखा चलाते हुए ही गिरफ्तार हों। यदि स्वदेशीसे भिन्न कामोंमें लगे हुए जेल जानेवाले लोग कम पड़ जायें तो स्वदेशीके प्रचारका काम करनेवाले लोगोंका मददके लिए आगे आना दूसरी बात है। सच्चा सिपाही तो वही है जो अपनी जगहपर ही लड़ता हुआ मरता है। अपने कर्त्तव्यका पालन करते हुए मर जाना ही श्रेयस्कर है; दूसरेका काम हाथमें लेना खतरनाक है।[1]

खादीकी प्रतिज्ञा

आश्चर्यकी बात है कि कांग्रेसने स्वयंसेवकोंके लिए जो प्रतिज्ञा निश्चित की है, उसकी खादी पहननेकी शर्त बहुतोंको कठिन मालूम होती है। असलमें तो विचारमें भी शान्ति धारण किये रहने और पीटे जानेपर भी मनमें क्रोध न लानेकी शर्त कठिन लगनी चाहिए। तथापि खादी पहननेकी बात विषम जान पड़ती है, इसका कारण तो यही हो सकता है कि हम इस शर्तको न निभायें तो सब लोगोंको साफ दिखाई दे जायेगा और हम किसी दूसरेको अथवा स्वयं अपनेको धोखा नहीं दे पायेंगे। मेरी सलाह तो यह है कि हमारा खादीके विषयमें जितना सावधान रहना आवश्यक है हमें उतना ही सावधान अन्य विषयोंमें भी रहना चाहिए। खादीकी शर्तका अर्थ कुछ अनिश्चित रह गया है। परन्तु इसका अर्थ तो एक ही हो सकता है। यह शर्त हमारे

१. स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः। **भगवद्गीता**, ३-३५।

पहननेके कपड़ोंपर ही लागू हो सकती है। यदि हमारे घरोंमें गादी-गदेले आदि विदेशी या मिलके कपड़ेके हों तो हमें उन्हें भी त्याग देना चाहिए; परन्तु यह बन्धन इस प्रतिज्ञामें नहीं आता, क्योंकि इस हदतक तत्काल शुद्धि करनेमें कठिनाइयाँ हैं। कितने ही मनुष्योंको यह खर्च भी असह्य हो सकता है। परन्तु पहननेके कपड़ोंमें इतने परिवर्तनके बाद घरमें दूसरे कामोंके लिए भी कोई खादीको छोड़कर मिल या किसी दूसरे देशका बना कपड़ा इस्तेमाल न करेगा। पहननेके कपड़ोंके लिए खादीका व्यवहार करनेमें तो अब जरा भी कठिनाई नहीं रह गई है। यदि कोई बहुत ही गरीब हो तो वह खादीकी लँगोटी लगाकर काम चला सकता है; परन्तु पहने खादी ही।

इस विषयमें एक और सवाल किया गया है। खादी सिर्फ स्वयंसेवकका काम करते समय ही पहनें या हर वक्त? जबतक स्वयंसेवक दलमें किसीका नाम है तबतक तो प्रतिज्ञा करनेवाले को घर-बाहर सर्वत्र खादी ही पहननी चाहिए।

वीर माता

कांग्रेस सप्ताहमें मुझे बम्बईके श्री गोविन्दजी बसनजी मिठाईवालाकी माताका पत्र मिला था। परन्तु मैं उसका उपयोग 'नवजीवन' में तभी नहीं कर सका। इस मुकदमेका विवरण बम्बईके कई अखबारोंमें छप चुका है, अतः मैं उसपर यहाँ विचार करना नहीं चाहता। श्री गोविन्दजीकी माताजीने अदालतमें एक बयान दिया था जिसका उत्तर एक सज्जनने दिया है। मैं इसके सम्बन्धमें भी कुछ कहना नहीं चाहता। इस मुकदमेमें श्री गोविन्दजीकी माता श्रीमती साकरबाईने जो वीरता दिखाई है मैं उसीकी ओर पाठकोंका ध्यान खींचना चाहता हूँ। साकरबाई हिम्मत करके पुलिसके पास गईं। वे अदालतमें भी कठघरेके सामने अपने बेटेके पास खड़ी रहीं और उन्होंने अपने बेटेके मनमें किसी तरहकी कमजोरी नहीं आने दी। श्री गोविन्दजीका लालन-पालन बहुत ऐशो-आराममें हुआ है। बम्बईके दंगेके समय उन्हें जो घाव लगा था वह अभीतक भरा नहीं था। उन्होंने जेलके कष्ट कभी भोगे नहीं थे। मित्र उनको जमानतपर छुड़वानेका प्रयत्न कर सकते थे। वे उन्हें यह कहकर सफाई देनेकी प्रेरणा दे सकते थे कि यह तो व्यक्तिगत मुकदमा है, राजनैतिक नहीं। उन्हें इन सब भयोंसे बचानेके लिए तथा सत्यकी रक्षा करनेके लिए साकरबाई अपने बेटेके कठघरेके सामने खड़ी रहीं और उन्होंने स्वयं उपस्थित रहकर मानो उनकी रक्षा की। उन्होंने श्री गोविन्दजीको जमानतपर छुड़ानेसे खुद इनकार किया। ये बहन जानती थीं कि असहयोगकी प्रतिज्ञा करनेवाला मनुष्य अदालतमें अपनी सफाई दे ही नहीं सकता; फिर उसका मुकदमा चाहे व्यक्तिगत हो चाहे सार्वजनिक, सच्चा हो या झूठा। इस कारण उन्होंने इस प्रतिज्ञाकी रक्षा करनेके लिए अदालतमें जानेका साहस किया। ऐसी मिसालें दूसरी जगहोंमें भी देखनेमें आ रही हैं। माता पुत्रकी, बहन भाईकी और पत्नी पतिकी तरह-तरहसे मदद कर रही है, और उन्हें हिम्मत बँधा रही है। मैं ऐसी दृढ़ता और हिम्मतमें स्वराज्यकी झाँकी देख रहा हूँ। स्त्री और पुरुष सभी आज तो अपनी शिक्षासे नहीं, बल्कि अपने सत्य और अभयसे भारतके मस्तकको ऊँचा कर रहे हैं।

२२-११

दूसरी मिसाल

श्री महादेव देसाईकी धर्मपत्नी प्रयागमें हैं। वे स्वयं भी स्वयंसेविका बन गई हैं, वे सेवा करनेके लिए जगह-जगह जाती हैं, दूसरे स्वयंसेवकोंको खाना पकाकर खिलाती हैं और अन्य प्रकारसे सहायता करती हैं एवं नित्य चरखा चलाती हैं। श्री महादेव-भाईके गिरफ्तार होते ही उन्होंने मुझे एक पत्र भेजा, जिसे पढ़कर पाठक प्रसन्न होंगे। मैं इसी खयालसे उसे यहाँ दे रहा हूँ:[1]

उन्हें मेरा आशीर्वाद तो प्राप्त है ही। परन्तु मैं आशीर्वाद देनेवाला हूँ कौन? भारतकी स्त्रियोंको तो अपने ही तपोबलसे साहस मिल रहा है। कोई एक-दो मनुष्य जेल नहीं गये हैं, कितने ही गये हैं और कितनों ही की धर्मपत्नियाँ साहस दिखा रही हैं। वे खुशी-खुशी अपने पतियोंको और दूसरे रिश्तेदारोंको जेल भेज रही हैं और खुद भी जेल जानेके लिए तैयार हो रही हैं। मुझे तारसे यह खबर मिल गई है कि श्री देसाईके साथ जो निष्ठुर व्यवहार किया जा रहा था वह अब बन्द कर दिया गया है। जेलमें कष्ट तो होते ही हैं। किन्तु धीरज और अपने विनययुक्त बरतावसे अनुचित कष्टोंका निवारण अवश्य ही होता है। ऐसा हो चाहे न हो; जेलके भयानकसे-भयानक कष्ट तो हमें सहन करने ही होंगे। इसके अतिरिक्त कोई दूसरी गति ही नहीं है।

मालवीयजीका पुत्र

पण्डित मदनमोहन मालवीयके सबसे छोटे पुत्र गोविन्द तथा उनके भतीजे कृष्ण-कान्त मालवीय पहले एक बार पकड़े जाकर सजा भोगकर रिहा हो चुके हैं। उन्हें व्याख्यान देनेके कारण अब दुबारा गिरफ्तार किया गया है और डेढ़-डेढ़ वर्षकी कड़ी कैदकी सजा देकर जेल भेज दिया गया है। इसे मैं भारतवर्षका सौभाग्य मानता हूँ। श्री मालवीयजीके पुत्रका असहयोगके कारण जेल जाना तो हमें अपनी प्राचीन धर्म-कथाओंकी याद दिलाता है। भाई गोविन्दने मालवीयजीसे अनुमति प्राप्त करनेकी पूरी कोशिश की। उन्होंने जहाँतक बना अपने पूज्य पिताकी इच्छाका मान रखा। पिताने भी पुत्रको पूरी स्वतन्त्रता दी। जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू और अन्य लोगोंके पकड़े जानेपर श्री गोविन्दसे न रहा गया तब उन्होंने अपने पिताको एक बहुत ही विनययुक्त पत्र लिखा और रणांगणमें कूद पड़े। मैं जानता हूँ कि इससे श्री गोविन्दकी पितृभक्तिमें रत्ती-भर भी कमी नहीं हुई है। मुझे दृढ़ विश्वास है कि पण्डितजीके मनमें भी श्री गोविन्दके प्रति इस कामके कारण तनिक भी रोष नहीं है। इन पिता और पुत्रका सम्बन्ध ऐसा ही मीठा रहा है और रहेगा। इस प्रकार इस स्वराज्य-यज्ञमें सब लोग अपनी-अपनी अन्तरात्माके आह्वानको मानने लग गये हैं और हम पिता और पुत्रको जुदा-जुदा मैदानोंमें देख रहे हैं। ये सब धर्मजागृति — स्वराज्य — के ही चिह्न हैं।

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें दुर्गाबहनने गांधीजीसे आशीर्वाद भी माँगा था।

जेलमें भक्त लोग

श्री गोविन्दकी जो कहानी अभी हमने सुनी उससे प्रकारमें भिन्न परन्तु वैसी ही कल्याणकारी सीख काशीकी जेलसे आचार्य कृपलानी हमें दे रहे हैं। उनके भतीजे लिखते हैं :[१]

गुजरातके लिए स्वर्ण अवसर

ऐसा लगता है कि नडियाद, सूरत और अहमदाबादकी शालाओंसे सम्बन्धित विवाद जेल जानेका अवसर देगा और गोधराको तो मानो घर बैठे गंगा ही मिल जायेगी। गोधराके लोगोंको दो मासतक जुलूस न निकालनेकी आज्ञा दी गई है। इस निषेध आज्ञाकी अवधि इस मासकी १७ तारीखको समाप्त होगी। इसलिए इस बीच गोधराके लोग शान्ति कायम रखनेकी शर्तके साथ-साथ दूसरी शर्तोंका पालन करते हुए जेलें भर सकते हैं। वहाँके मजिस्ट्रेटने नीचे लिखा नोटिस जारी किया है।[२]

इस प्रकार भजनों और निर्दोष राष्ट्र-गीतोंपर रोक लगाना सहन करने योग्य नहीं है। मुझे आशा है कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी इन शहरों अथवा ताल्लुकोंमें व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाकी अनुमति दे देगी और गुजरात भी अपनी बलिदान देनेकी क्षमताका परिचय देना आरम्भ कर देगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-१-१९२२

७०. तार : एस्थर मेननको[३]

साबरमती
११ जनवरी, १९२२

ईश्वर तुम दोनोंका कल्याण करे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडियामें सुरक्षित मूल अंग्रेजी प्रतिसे।

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। आचार्य कृपलानीने इस पत्रमें अपने भतीजेको सूचित किया था कि वे जेलमें सत्याग्रह आश्रमकी दिनचर्याका ही अनुसरण कर रहे हैं।

२. यहाँ नहीं दिया गया है।

३. पहले एस्थर फैरिंग, एक डेनिश धर्म-प्रचारिका जिन्हें गांधीजी अपनी पुत्रीके समान मानते थे; १९१६ में भारत आईं तथा बादमें साबरमती आश्रममें रहने लगीं। स्पष्टतः यह तार डा० मेननके साथ उनके विवाहके बाद भेजा गया था।

७१. टिप्पणियाँ

बेहद आशावादी

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी सत्याग्रहका सही-सही ज्ञान रखनेवाले अध्येता हैं। दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह शुरू किये जानेके समयसे ही उन्होंने इसे समझना शुरू कर दिया था। मेरी रायमें वे सत्याग्रह-विज्ञानको जितनी अच्छी तरह समझते-बूझते हैं शायद उतनी अच्छी तरह दूसरा कोई नहीं समझता। वे इसपर बरसोंसे अमल करनेकी कोशिश करते चले आ रहे हैं। इसलिए जब उनके सामने जेल जानेका मौका आया तो वे एक क्षणके लिए भी आगा-पीछा किये बिना जेल चले गये। यद्यपि वे मद्रासमें आन्दोलनका नेतृत्व अपने निराले और निरभिमान ढंगसे कर रहे थे, पर उन्होंने यह अनुभव किया कि [सम्भवतः] जेलमें रहकर वे मद्रासके आन्दोलनका नेतृत्व ज्यादा अच्छी तरह कर सकेंगे। ज्यों ही उन्हें तीन महीनेकी सादी कैदकी सजा सुनाई गई त्यों ही उन्होंने एक पत्र लिखा और उसमें उन्होंने जिस आशावादिताका परिचय दिया, आशा है वह पाठकोंको रुचेगी। पत्र इस प्रकार है:

> तीन महीनेकी सादी सजा तो बहुत ही कम है। और कहीं यदि इससे भी पहले आप स्वराज्य प्राप्त कर लें तब तो यह कोई बात ही नहीं है। मुझे आशा है कि जब मैं वापस लौटूँगा, आप स्वराज्यका काम पूरा कर चुके होंगे और अपने आहार-शास्त्रके अनुसन्धानके सामान्य काममें जुट जायेंगे।

यद्यपि मैं अनुभव करता हूँ कि स्वराज्य एक तरहसे तो आ ही गया है (और मेरा आशय जिस तरहसे है वह भी महत्त्वपूर्ण है) किन्तु इस समय जो असाधारण परिस्थिति पैदा हो गई है उसके कारण मैं इतनी जल्दी अपने आहार-शास्त्रके अनु-सन्धानके सामान्य काममें नहीं जुट पाऊँगा। जैसा कि मैंने कहा है यह पत्र गत मासकी २१ तारीखको सजा सुनाये जानेके तुरन्त बाद लिखा गया था। उसी दिन सजा मिलनेसे पहले यह नीचे दिया हुआ लम्बा पत्र लिखा गया था:

> मुझे आपका पत्र और संलग्न प्रस्तावोंका मसविदा मिला।
>
> मैं इस दावेको प्रस्तावमें डाले जानेके पक्षमें नहीं हूँ कि हमने स्वराज्य बाह्य रूपमें तो नहीं पर सार रूपमें प्राप्त कर लिया है। मैं इस दावेका मतलब तो समझता हूँ लेकिन यह भी अनुभव करता हूँ कि यह बात आपके लेखोंमें बताई जानी चाहिए, इसे कांग्रेसके प्रस्तावोंका अंश न बनाया जाये।
>
> मुझे किसी ऐसे प्रस्ताव विशेषका पता नहीं है जिसके द्वारा सामूहिक या व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलनकी स्वीकृति साफ शब्दोंमें दी गई हो। मैं सोचता हूँ कि इस विषयपर स्पष्ट प्रस्तावका होना आवश्यक और वांछनीय है। प्रस्तावोंके वर्तमान स्वरूपमें सिर्फ एक ही तरहकी सविनय अवज्ञाकी स्वीकृति

दी गई है अर्थात् स्वयंसेवी संगठनोंके सम्बन्धमें जारी की गई निषेधाज्ञाका उल्लंघन। सम्भव है इस तरहकी पाबन्दियाँ हटा दी जायें या कदाचित् इनमें कुछ ढील कर दी जाये। दूसरी तरहकी आज्ञाएँ भी हैं जिनका उल्लंघन किया जा सकता है, जैसे १४४ धाराके अन्तर्गत जारी किये गये हुक्म। इसलिए मेरा सुझाव है कि स्वयंसेवी संगठनोंके प्रस्तावके बाद, हमें एक प्रस्ताव ऐसा स्वीकार करना चाहिए जिसमें कि सविनय अवज्ञा आन्दोलनकी स्वीकृति दी जाये परन्तु इस आन्दोलनका स्वरूप क्या हो और यह किन-किन सीमाओंसे प्रतिबन्धित हो यह बात समय-समयपर कार्य-समिति या आप स्वयं ही निर्धारित करें।

मैं नहीं जानता, अधिक संख्यामें 'संविधानवादी' सज्जनोंके आनेका कांग्रेसके कार्य-संचालनपर क्या प्रभाव पड़ेगा। पर मैं अपना यह विचार आपपर आग्रहपूर्वक व्यक्त करना चाहता हूँ कि इस समय कोई बातचीत नहीं की जानी चाहिए; बल्कि तबतक नहीं जबतक हम सविनय अवज्ञा संघर्षमें थोड़ा और आगे न बढ़ जायें। सरकारके साथ होनेवाली बातचीतमें अली बन्धु, दास, लालाजी और पण्डितजी शरीक किये जायें इतना ही काफी नहीं है बल्कि इस बातमें उनकी राय भी जानी चाहिए कि सन्धि या सुलह करनेके लिए कौन-सा समय निर्धारित किया जाये। इसके अतिरिक्त सुलहकी बातचीतके लिए कांग्रेस और सरकारके बीच सम्मेलन ही एकमात्र माध्यम होना चाहिए। कांग्रेसको चाहिए कि वह सब दलोंके गैर-पदाधिकारी नेताओंको नामजद करे। नरम दलके नेताओंको कांग्रेस नामजद करे न कि सरकार। सरकार नेताओंको नामजद करके हमारे बीच हमेशा खराबी पैदा कर देती है। मेरा यह निश्चित मत है कि इस अधिवेशनमें कांग्रेसका कोई प्रस्ताव ऐसा नहीं होना चाहिए जिसमें सरकारके साथ बातचीतका कोई उल्लेख हो या जिसमें इसके लिए सम्भावना व्यक्त की जाये। जरूरी समझा जानेपर आगे चलकर एक विशेष अधिवेशन बुलाया जा सकता है।

कुछ लोगोंका यह खयाल है कि अब हमें यह बात जोरोंसे उठाकर देशकी शक्ति और ध्यानको इन सवालोंपर ले जाना चाहिए कि हम हिन्दुस्तानके लिए किस तरहकी सरकार और कैसा संविधान चाहते हैं। मुझे यह खयाल पसन्द नहीं है। यह सवाल तो उस वक्त उठाया जाना चाहिए जब हमारा संघर्ष अपने अन्तिम चरणमें हो।

कुछ लोग समानान्तर सरकार बनानेकी बात कर रहे हैं। मैंने इस सम्बन्धमें आपसे कभी बातचीत नहीं की है; इसलिए मैं अपनी राय सामने रखनेकी हिम्मत तो कर रहा हूँ परन्तु बिना काफी सोच-विचारके। मैं समझता हूँ कि समानान्तर सरकार बनाना सम्भव ही नहीं है। जबतक कोई सरकार हिंसाके आधारपर चल रही है, हम समानान्तर सरकार बिना प्रतिहिंसाके नहीं बना

सकते। अहिंसाके आधारपर तो हम केवल असहयोग अथवा सविनय अवज्ञा आन्दोलन ही चला सकते हैं, समानान्तर सरकार और सुनिश्चित संस्थाओंको एक बहुत ही संकुचित सीमासे आगे चलाना सम्भव नहीं है। संसारकी वर्तमान परिस्थितिमें अहिंसाके तरीकेसे केवल एक नकारात्मक और विनाशात्मक रवैया अख्तियार किया जा सकता है और इसके बाद नई सरकारके साथ इस तरीकेको चलाया जा सकता है लेकिन वैसी समकालीन समानान्तर सरकार नहीं चलाई जा सकती जैसी कि आयरलैंडवासियों द्वारा चलाई गई मानी जाती है। अगर मैं अपने विचार स्पष्ट रूपसे जाहिर नहीं कर पाया हूँ तो भी चिन्ताकी बात नहीं है। मैं इस विषयपर थोड़ा-सा इसलिए कह गया कि कहीं कोई सदस्य इस विषयका प्रस्ताव रखनेपर जोर न दे बैठे।

मुझे नहीं मालूम कि अब हम कब या किन परिस्थितियोंमें मिलेंगे। लेकिन मैं अनुभव करता हूँ कि ज्यों-ज्यों जेल जानेका समय नजदीक आ रहा है मैं अपने जीवनका उद्देश्य अनुभव करने लगा हूँ।

२० तारीखको निम्नलिखित पंक्तियाँ लिखी गई थीं:

मैं दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक यह अनुभव कर रहा हूँ कि हमपर सुलह और बातचीतका दौर समयसे बहुत पहले लादा जा रहा है। यदि आप कोई ऐसा तरीका निकाल पाते कि इस बातचीतको अपने संघर्षमें कुछ और सफलताएँ पानेतक स्थगित किया जा सकता तो बड़ा अच्छा होता। सरकार तो तत्काल बातचीत करना पसन्द करेगी क्योंकि निश्चित ही इस समय हमारी शर्तें एक महीने बाद रखी जानेवाली शर्तोंकी अपेक्षा हलकी होंगी। हमारे नरमदलीय मित्र बातचीतके लिए बेहद उत्सुक हो रहे हैं। वे देख रहे हैं कि हम भयग्रस्त नहीं हैं और अवश्य जीतेंगे; इसलिए वे लोग अपनी असाध्य दुर्बलताओंके कारण संघर्षको तीव्र रूप धारण करनेसे पहले ही समाप्त देखना चाहते हैं। आपसमें बहुत स्पर्धा होनेके कारण वे अधकचरे विचार ही उगल देते हैं। सरकार चतुर है। उसने अपनी गलती समझ ली है और यह भी अनुभव कर लिया है कि हम लोग जोर-जुल्मके आगे झुकनेवाले व्यक्ति नहीं हैं। इसलिए वे लोग चुपचाप पीछे हट रहे हैं। मद्रास सरकारने निश्चित रूपसे यह घोषणा कर दी है कि वे संगठनोंको गैर-कानूनी घोषित नहीं करेंगे और यही काम बिहार और उड़ीसाकी सरकारोंने भी किया है।

सरकार अब समझ रही है कि नरमदलीय लोगोंने उसका साथ छोड़ दिया है। लेकिन हमें अपने पक्षको थोड़ा और मजबूत कर लेनेतक रुके रहना चाहिए। युवराजको वापस चले जाने दीजिए और उसके बाद फरवरीमें हम समझौतेके बारेमें सोचें। तबतक हमें यह भी मालूम हो जायेगा कि गुजरातने क्या कुछ कर दिखाया है। इस अवसरपर जब कि नेहरूजी, दास और लालाजी

झेलते हैं, सम्मेलनकी बातचीत उठाना बिलकुल गलत है। केवल सन्धिके लिए समय निश्चित किया जाना चाहिए और कुछ नहीं।

मोपला लोग अब तीसरे दर्जेके डिब्बोंमें ले जाये जा रहे हैं। उनके डिब्बों-की खिड़कियोंमें सिर्फ सींकचे लगे होते हैं। अब हम देखते हैं कि सिपाही उन्हें पानी देते हैं और किसी-किसी स्टेशनपर तो सिपाही पानीके लिए दौड़-भाग भी करते हैं। सत्तर आदमियोंका बलि चढ़ना बेकार नहीं गया। अब हजारों मोपलाओंके साथ आदमियों जैसा बरताव किया जाता है।

मैं कैदियोंसे प्राप्त होनेवाले पत्र यहां दे रहा हूं क्योंकि हमारा संघर्ष कितना जोरदार है और लोगोंका संकल्प कितना दृढ़ है, उसे साबित करनेवाली इनसे बढ़कर और कोई चीज नहीं है। पाठक यह देखेंगे कि प्रस्तावोंके सम्बन्धमें दिये गये राज-गिरफ्तारोंके विचार प्रायः पूर्वानुमानित हैं। उनकी इस सलाहके पक्षमें कि मुख्य प्रस्तावमें समझौतेका कोई जिक्र न हो बहुत-कुछ कहा जा सकता है। यद्यपि हम कमजोर थे और शायद अब भी हैं तथापि जरूरत इस बातकी है कि हम अपना ध्यान कष्ट सहनेके मार्गसे न हटायें। फिर भी मैं अनुभव करता हूं कि जिस तरीकेसे प्रस्तावका उल्लेख किया गया है वह अपरिहार्य था। हमें अपनी कमजोरी जाननी और स्वीकार करनी चाहिए और हमें मजबूत बननेकी आशा रखकर काम भी करना चाहिए। मुझे आश्चर्य नहीं होगा अगर संघर्षकी समाप्तिपर पहुंचने तक हमें बहुत-से समझौते और सन्धियां करनी पड़ें और बहुत-सी असफलताएं मिलें। सच्चा सैनिक वह है जो जीवन और परिस्थितियोंको एक दार्शनिक ढंगसे देखता है। वह परिणामके प्रति तटस्थ भाव रखता है। उसका कर्त्तव्य तो पूरी शक्तिसे काम करते रहना है; उसके लिए विश्राम और कष्ट एक जैसे ही होते हैं। वह विश्राम इसलिए करता है कि जरूरत पड़नेपर और भी अधिक कष्ट झेल सके। हमें बिना उत्तेजित हुए सहिष्णुता बढ़ानी चाहिए। चूंकि अपनी इच्छासे कष्ट सहना एक नया अनुभव है, इसलिए लोग समझते हैं कि यदि क्षणिक आवेश दब जाये तो शायद हम नये दमनके विरुद्ध खड़े होनेकी इच्छा ही न करें, लेकिन स्वराज्य-प्राप्तिके लिए सबसे आवश्यक शर्त यह है कि हम कष्ट सहनेके लिए हमेशा तैयार रहें। क्या इंग्लैंड अपनेको आक्र-मणके भयसे मुक्त रखनेके लिए अपने शस्त्रागारमें स्थायी रूपसे शस्त्रास्त्र नहीं रखता? इसमें सन्देह नहीं कि यह पागलपन है, आत्मघातक है और इसका अर्थ ईश्वरकी सत्तामें और उसके न्यायमें अविश्वास करना भी है। लेकिन जबतक इंग्लैंड यह आवश्यक समझता है कि वह दूसरे देशोंपर अपना व्यापार लादे, उनको लूटे-खसोटे तबतक वह अन्यथा कर ही नहीं सकता। वह चाहता है कि दुनियाके राष्ट्र उससे डरें और इसके लिए उसे बड़ी भारी कीमत चुकानी पड़ती है। लेकिन मेरी समझमें भारत तो यह चाहता है कि सब राष्ट्र उससे प्यार करें; इसीलिए भारतको चाहिए कि वह आजादीके लिए हमेशा कष्ट उठानेको तैयार रहे। हम अपनी इच्छाके विरुद्ध इतने लम्बे समयसे कष्ट उठाते आये हैं कि अब हमारे लिए यह सोचना तक कठिन है कि हम बिना कष्ट उठाये भी रह सकते हैं। आइए, अब हम कष्ट सहनेकी अनिच्छाको

स्वेच्छामें परिवर्तित करें। जब हम लोगोंमें कष्ट सहनेकी 'स्वेच्छा' पैदा हो जायेगी तो समझिए कि संसारके सारे राष्ट्र मिलकर भी हमारा कुछ न बिगाड़ सकेंगे। कुछ भी हो, भारतने यही मार्ग चुना है और ज्यों ही यह बात निश्चित रूपसे सिद्ध हो जायेगी कि कष्ट सहनेकी क्षमता हमारे लिए मामूली बात है तो समझिए कि हम पूर्णतः स्वतन्त्र हो गये। हमारी अवस्था तब ऐसी हो चुकेगी कि हम समझौतों और सम्मेलनोंमें बिना किसी प्रकारकी आशंका और पूर्णतः स्थिरचित्त होकर भाग ले सकेंगे।

मोपला कैदियोंके साथ किये जानेवाले सभ्यतापूर्ण व्यवहारका जो उल्लेख राजगोपालाचारीने किया है उसमें हमारे लिए एक शिक्षा निहित है। हममें से बहुतसे लोगोंको अपनी लम्बी राजनीतिक दासताकी घुटनसे मुक्त होनेके पहले ही शरीर त्यागना पड़ेगा। यह राजनीतिक घुटन मोपला लोगोंकी यातनासे भी अधिक कष्टकर है, यद्यपि मोपला लोगोंको जो यातनाएँ भुगतनी पड़ी हैं, उसने हमारे मानवीय दयाभावको बहुत ठेस पहुँचाई है। जो मोपले मौतकी उस गाड़ीमें मरे, यदि वे लोग निरपराध थे, उनमें बहुतसे निश्चय ही निरपराध होंगे, तो वे ईश्वरके सामने पौरुषहीनताके अपराधी नहीं ठहरेंगे। हमारे साथ ऐसी बात नहीं है। हम लोग जान-बूझकर अपनी कमजोरीके कारण राजनीतिक अपमान सह रहे हैं। मेरा विश्वास है कि नरम दलके जो लोग राजगोपालाचारीके पत्र पढ़ेंगे, वे उनके सद्भावसे किये गये कटाक्षोंका बुरा न मानेंगे। ये पत्र प्रकाशित किये जानेके लिए नहीं थे। ये पत्र स्वभावतः उन्मुक्त भावसे लिखे गये थे। इन पत्रोंमें कोई दुराव-छिपाव नहीं रखा गया। प्रकाशनके लिए जो-कुछ लिखा जाता है उसमें तो इस बातका ध्यान रखा जाता है। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि वे लोग राजगोपालाचारीको गलत भी नहीं समझेंगे। इस तथ्यसे इनकार नहीं किया जा सकता कि आजकल सहयोग करनेवाले नरमदलीय लोगों और असहयोगी उग्रतावादियोंमें प्रकृतिगत अन्तर है। उग्र दलवाले लोग नरम दलके लोगोंपर कायरताका दोषारोपण करते हैं। वे उनकी देशभक्तिपर सन्देह नहीं करते। दोनों ही देशके हितचिन्तक और सेवक हैं। नरम दलके लोगोंको इस बातकी छूट है कि वे उग्र दलके लोगोंके बारेमें यह धारणा बनायें कि वे जल्दबाज हैं, और भविष्यके बारेमें कुछ नहीं सोचते। हमें इस प्रकारकी निष्कपट आलोचना बिना क्रुद्ध या सन्तप्त हुए बरदाश्त करनी चाहिए।

पहले ही स्वतन्त्र

'यंग इंडिया'के पाठक श्री डब्ल्यू० डब्ल्यू० पियर्सनके[1] नामसे अपरिचित नहीं हैं। शान्तिनिकेतनमें श्री रवीन्द्रनाथके कार्यकलापसे कई वर्षोंतक उनका सम्बन्ध रहा है। उन्हें भारतमें राष्ट्रीय विचारोंको पोषण देनेवाली एक पुस्तक लिखनेके कारण देश-निकाला दिया गया था। हाल ही में उन्हें शान्तिनिकेतन लौटनेकी इजाजत मिली है। वहाँसे उन्होंने कांग्रेस सप्ताहके दौरान श्री एन्ड्रयूज द्वारा निम्नलिखित सन्देश भिजवाया है। व्यक्तिगत बातें लिखनेके बाद उन्होंने लिखा :[2]

१. ईसाई धर्म-प्रचारक तथा भारतके सक्रिय सहायक।
२. यहाँ उस पत्रके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

मैं एक और चीज भी जोड़ना चाहता हूँ जिसका रूप अधिक सार्वजनिक है। इसको कांग्रेस अधिवेशनमें सार्वजनिक रूपसे कहने न कहनेकी बात आपपर छोड़ता हूँ . . . वह यह है:

आपके कामको सफलता मिली है, और इसलिए भारतको स्वतन्त्र हुआ ही मानिए . . .

यद्यपि यह निश्चित है कि आपको बिना शर्तके पूर्ण स्वराज्य मिले बिना नहीं रहेगा; फिर भी मैं समाज-सुधारका कुछ व्यावहारिक और रचनात्मक कार्यक्रम अपनाये जानेपर जोर दूँगा . . .

मुझे यकीन है कि आयरलैंडका कृषि संगठन एक ऐसी संस्था है जिसके नमूनेपर भारतकी स्वतन्त्रताकी इमारत खड़ी की जा सकती है। भारतको भी ऐसे किसी आधारकी जरूरत पड़ेगी जिसपर वह एक स्वतन्त्र और आत्मनिर्भर राज्यकी तरह खड़ा हो सके और इसके लिए आवश्यक है कि व्यावहारिक स्वराज्यका कोई कार्यक्रम अविलम्ब तैयार किया जाये।

मैं पियर्सनके इस विचारसे सहमत हूँ कि भारत पहलेसे ही स्वतन्त्र हुआ बैठा है। भारत तभी स्वतन्त्र हो गया था जब लालाजी, पण्डित नेहरू, चित्तरंजन दास और मौलाना अबुल कलाम आजाद गिरफ्तार किये गये। वह तभी आजाद हो गया था ज्यों ही यह स्पष्ट हो गया कि दमन निष्फल साबित हुआ है और लोग, भले ही उनपर हमला किया जाये या उनपर कोड़ोंकी वर्षा हो, सभाएँ करनेसे नहीं डरेंगे। हमें आजादी तभी मिल गई थी जब हम इसकी कीमत चुकानेके लिए तैयार हो गये। शासकों और हमारे बीच जो मतभेद है उसे मिटानेमें समय लगेगा। हम तबतक स्वतन्त्र नहीं कहला सकते जबतक कि हमें 'आजाद होनेके प्रमाणपत्र' की आवश्यकता बनी रहती है। वह आदमी जिसे अपनी तन्दुरुस्ती सिद्ध करनेके लिए तन्दुरुस्तीका प्रमाणपत्र पेश करनेकी जरूरत पड़े, तन्दुरुस्त नहीं माना जा सकता? कांग्रेस पण्डालमें दाखिल होनेवाले प्रत्येक स्त्री और पुरुषको खुद अपने व्यक्तित्वमें ही आजादीका आभास मिला होगा।

श्री पियर्सनने भारतीय वायुमण्डलमें आजादीकी बिजलीका चमकना तो देख लिया, पर वे आन्दोलनका रचनात्मक पहलू देखना चूक गये। स्वतन्त्रताकी भावना तो सर्वत्र व्याप्त हो गई है। रचनात्मक कार्य आन्दोलनको स्थायित्व प्रदान करता है परन्तु उसकी प्रक्रिया दिखाई नहीं पड़ती। उसका अनुभव तभी हो सकता है जब उस कामको देखा जाये जो हजारों घरोंमें चुपचाप किन्तु निश्चित रूपसे किया जा रहा है। वे उसे स्वदेशीमें और चरखेमें देख सकते हैं। जिस हदतक हाथकी कताई संगठित होगी उसी हदतक भारत स्थायी रूपसे सुसंगठित होगा। इस समय भारतमें तत्काल कृषिका संगठन होना असम्भव है क्योंकि यहाँ भारतकी संयुक्त परिवार प्रणाली, जिसका प्रभाव मुसलमानोंपर भी है तथा भारतकी दूसरी विशेष बातें इस कार्यको असम्भव बना देती हैं। लोगोंके छोटे-छोटे खेत, बँटवारेके कारण और भी छोटे होते जा रहे हैं। इसलिए केवल खेतीबारी देशकी गरीबी दूर करनेके लिए एक कमजोर साधन

है। यद्यपि उसके तरीकोंमें सुधार किये जा रहे हैं। लेकिन अगर चरखा अपना पुराना स्थान ग्रहण कर ले तो यह अविलम्ब [कपड़ेकी] अखरनेवाली कमीको पूरी करेगा, साथ ही बढ़ते हुए परिवारोंके लिए भी साधन जुटायेगा। यह अतिवृष्टि आदिका भी डटकर मुकाबला कर सकता है और कई खतरोंसे बीमेकी तरह हमारी रक्षा करता है। इससे देशको औद्योगिक प्रयत्नके लिए प्रेरणा मिलती है। चरखा सफलता प्राप्त करनेके लिए राष्ट्रीय पैमानेपर किये जानेवाले सहयोगको सर्वथा अनिवार्य बना देता है। खादीका आन्दोलन गाँवके जीवनमें क्रान्ति ला रहा है और लाखों लोगोंके दिलोंमें आशाका संचार कर रहा है। इसमें कोई अचरज नहीं, जैसा कि कलकत्ताके अखबारोंसे पता चलता है, कि शायद डा० राय[1] चरखा आन्दोलनको बढ़ावा देनेके लिए अपने गाँव काटिपाड़ा गये हैं और वहाँ उन्होंने हर व्यक्तिसे अपने अवकाशके समयमें चरखा कातनेके लिए कहा है, क्योंकि उनके मतानुसार चरखा राष्ट्रकी मुक्तिका साधन सिद्ध होगा। उन्होंने बड़े जोरदार शब्दोंमें कहा कि अगर गाँवके लोग छः महीनेके अन्दर-अन्दर खुदके कते और बुने कपड़ेसे अपनी जरूरतें पूरी कर लें तो उनकी [स्वराज्य-की] हार्दिक इच्छा पूरी हो जायेगी।

कांग्रेसियो सावधान!

जबतक मैं खादी आन्दोलनके प्रचारमें लगा हुआ हूँ मैं कांग्रेस कमेटियों और खिलाफत समितियोंको चेतावनी देना चाहता हूँ कि स्वदेशीके सम्बन्धमें जो प्रयत्न किया जा रहा है वे उसमें ढिलाई न आने दें। सविनय अवज्ञापर अपनी शक्ति केन्द्रित करनेका अर्थ है स्वदेशीके लिए दूना उत्साह। स्वदेशीके बिना सविनय अवज्ञा एक ऐसा मरण है जिसमें से पुनर्जीवनकी आशा नहीं की जा सकती या यों कहें कि यह किसी ऐसे बंजर खेतको जोतना है जिसमें नई फसल बोनेकी गुंजाइश ही नहीं है। सविनय अवज्ञाका अभिप्राय यह भी होना चाहिए कि खादी आन्दोलनको अधिक प्रोत्साहन मिले। सभी स्त्रियों, पुरुषों और बच्चोंको, जो जेलमें नहीं हैं, चाहिए कि वे अपनी फाजिल शक्ति, हर उपलब्ध क्षण सूत कातनेमें लगायें और खादी तैयार करें और दूसरोंमें भी इसका प्रचार करें। स्वदेशीके बारेमें मेरी अब भी यह प्रबल धारणा है कि पूर्ण स्वदेशी स्वयंमेव हमें स्वराज्यकी ओर ले जायेगी। राष्ट्रके लिए स्वराज्य ऐसा ही है जैसा कि किसी व्यक्तिके लिए शारीरिक स्वच्छता।

'टाइम्स'का साक्ष्य

'टाइम्स' में व्यापारपर टिप्पणियाँ लिखनेवाले व्यक्तिने १० दिसम्बरके व्यापार परिशिष्टमें रुईके व्यापारमें आई हुई मन्दीके बारेमें लिखा है:[2]

> रुईके व्यापारमें जो मन्दी आई है वह बदस्तूर जारी है। . . . लंकाशायरके धीरज, साहस और विश्वासकी कठिन परीक्षा हो रही है।

१. डा० प्रफुल्लचन्द्र राय।

२. यहाँ केवल कुछ अंश दिये जा रहे हैं।

> रुईके व्यापारके सम्बन्धमें अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कलकत्ताके व्यापारियोंने विदेशी कपड़ा न खरीदनेका आपसमें जो निश्चय किया था वह खत्म हो रहा है। यह बात जोरोंसे सुननेमें आ रही है कि वहिष्कार फरवरीतक और बादमें भी चलता रहेगा लेकिन वह अवधि जिसके बारेमें वस्तुतः निश्चय किया गया था, सालके खत्म होते-होते खत्म हो जायेगी और उस समयके बाद विदेशी कपड़ोंकी खरीदपर प्रतिबन्ध बने रहनेकी सम्भावना नहीं है। . . . कुछ भी हो, जहाँतक मालूम हो पाया है कलकत्ताके व्यापारियोंके सामने इस बहिष्कारको दुबारा चालू करनेकी कोई बात पेश नहीं है। गांधी-आन्दोलनकी इस विशेष प्रवृत्तिके रास्तेसे हट जानेके बाद यह बात करीब-करीब निश्चित-सी मालूम होती है कि भारतके साथ व्यापारमें पुरानी स्थिति पुनः आ जायेगी। . . . अगर भारत थोड़ा-बहुत माल भी मँगानेके लिए आगे बढ़े तो दूसरी मण्डियोंमें हमारा माल बिकेगा, ऐसी सम्भावना है।

काश! इस लेखकने जिस सम्भावनाका उल्लेख किया है उसके क्रियान्वित होनेकी आशा होती। स्वदेशी कोई अस्थायी योजना नहीं है। वह स्वराज्यकी संगिनी है। हाथकी कती और बुनी हुई खादी ही पहनी जानी चाहिए और सो भी निष्ठाके साथ। विदेशी कपड़ेका वहिष्कार कोई दण्ड नहीं है; बल्कि यह पवित्रीकरण और स्थायी राहत पहुँचानेका साधन है। स्वराज्यके साथ इसकी अदला-बदली नहीं की जा सकती। या यों कहें कि स्वराज्य खादीपर अवलम्बित है। स्वदेशीके फलस्वरूप इंग्लैंडपर दबाव तो पड़ ही रहा है। लेकिन अगर इंग्लैंड खादी आन्दोलनकी सर्वथा अवहेलना कर दे, तो भी उसके लिए आन्दोलन चलता ही रहेगा। जहाँतक लंकाशायरका अपने कपड़ेके लिए भारतीय मंडियोंपर आश्रित रहनेका सवाल है, उसे अपना बाजार अन्यत्र खोजना पड़ेगा। बड़ेसे-बड़ा लोभ भी भारतको निठल्ला बैठे रहने और लंकाशायर या किसी दूसरेकी खातिर पराश्रयी बने रहनेके लिए प्रेरित नहीं कर सकता। अगर सब कुछ ठीक रहता है और अगर भारत और इंग्लैंडको दोस्त और स्वेच्छासे साझीदार बने रहना है, जैसा कि मैं आशा करता हूँ और चाहता हूँ, तो ऐसी बहुत-सी अन्य चीजें हैं जो इंग्लैंड भारतको बेच सकता है और भारत भी उन चीजोंको लेकर फायदा उठा सकता है। कपड़ा तो भारत किसीसे भी नहीं लेगा, चाहे वह दोस्त हो या दुश्मन। जो भारत इंग्लैंड और दूसरे शोषकोंकी एड़ियोंके नीचे दबा कराह रहा है उसकी अपेक्षा पुनरुत्थित, समृद्धिशाली और स्वतन्त्र भारत इंग्लैंड तथा संसारके मालकी खपतके लिए ज्यादा अच्छी मंडी बनेगा।

भगवान्‌के हाथोंमें

हालाँकि बड़ो दादाके[1] पत्र और इंग्लैंडके एक ईसाई धर्म-प्रचारकके पत्रमें व्यक्तिगत बातें हैं फिर भी वे इतनी महत्त्वपूर्ण हैं कि मैं उन्हें जनताके सामने रखनेका

१. द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर, रवीन्द्रनाथ ठाकुरके सबसे बड़े भाई। जिन्हें लोग बड़ो दादा कहा करते थे।

लोभ संवरण नहीं कर सकता। मेरे लिए बड़ो दादाके पत्र तो हमेशा आशीर्वादके रूपमें होते हैं। यह मेरे लिए बड़े सन्तोषकी बात है कि इस अवस्थामें भी वे संघर्षमें इतनी सजीव रुचि रखते हैं। इस अंकमें प्रकाशित उनका यह पत्र[1] आन्दोलनको आशीर्वाद देता है सो तो है ही, साथ ही उन लोगोंके लिए, जो इस संघर्षके आध्यात्मिक पहलूके कारण सच्चे दिलसे परेशान-से हैं, एक आध्यात्मिक हल भी पेश करता है। साधनों और व्यक्तियों दोनोंसे ही -- वे जैसे भी हों -- सुधारकका पाला पड़ा करता है और इसलिए उसे खतरा मोल लेना ही पड़ता है, सिद्धान्तहीनतासे किये गये कामोंको भी स्वीकार करना पड़ता है इसलिए हमेशा ऐसे काम करनेकी जरूरत है जो नैतिक दृष्टिसे ठीक हों। ईमानदारी नीतिके रूपमें भी वैसी ही स्वीकार्य है जैसी कि स्वयं एक गुणके रूपमें परन्तु बेईमानी, भले ही उसका उद्देश्य कितना ही महान् हो, स्वीकार नहीं की जानी चाहिए। अगर उद्देश्य अच्छा है तो उससे कामकी महत्ता भी बढ़ती है। और अच्छा काम बुरे उद्देश्यसे किये जानेपर भी अच्छे कामकी महत्ता सर्वथा खत्म नहीं हो जाती। कमसे-कम दुनियाके लिए तो वह काम अच्छा रहेगा ही। नुकसान उसके करनेवाले को ही उठाना पड़ता है क्योंकि उसका उद्देश्य बुरा होनेपर उसे अपने ही कामके यशका पूरा हिस्सा नहीं मिलता। अतएव अहिंसामें हमें इस बातकी जरूरत है कि हम हिंसाके काम करके उन्हें ढकनेके लिए अहिंसाका बहाना न बनायें।

"एक अंग्रेज ईसाई धर्म-प्रचारिका" अपने धर्म-प्रचारके क्षेत्रमें बहुत प्रसिद्ध हैं। उन्होंने अपना नाम और पता भेजनेकी कृपा की है। लेखिकाके स्वभावकी निष्कपटता और उनकी स्वीकारोक्ति भारतमें अंग्रेज निवासियोंको सुलहका मार्गदर्शन कराती है।[2] मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अगर असहयोग आन्दोलनमें भाग लेनेवाले लोग अहिंसाके व्रतपर अन्ततक अडिग रहें, भले ही उन्हें कितना ही उकसाया-भड़काया जाये, तो भारतमें रहनेवाला प्रत्येक अंग्रेज नर-नारी पूर्ण रूपसे राष्ट्रवादी बन जायेगा। अंग्रेजोंके हाथों हमारा जो अपमान हो रहा है यदि हम स्वयं उसमें हाथ न बँटायें, उससे असहयोग करें तो अन्ततोगत्वा हमारे साथ उनका मैत्रीभाव हो जायेगा। जो घटनाएँ घट रही हैं उनसे साफ मालूम होता है कि वर्तमान अवस्था कितनी असह्य है।

लेकिन महिलाके तथा दूसरे सज्जन, दोनों के ही पत्रोंकी खूबी यह है कि वे यह मानते हैं कि इस आन्दोलनमें ईश्वरका हाथ है। मुझे इस बातका अहसास है और इस अहसाससे पीड़ा भी पहुँच रही है कि पिछली लड़ाईमें अंग्रेज और जर्मन दोनों ही इस बातका दावा करते थे कि ईश्वर उनके साथ है। मैं यह नहीं कह सकता कि जर्मनीकी हार एक ऐसी परीक्षा है जिसमें ईश्वरने उन्हें अपनी कृपासे वंचित कर

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया।

२. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें उन्होंने गांधीजीकी प्रशंसा की थी और आन्दोलनके प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए अपनी जातिवालोंमें से बहुतोंकी अक्षम्य मूर्खता और भ्रांतिपर खेद प्रकट किया था।

दिया है या अंग्रेजोंकी विजय ईश्वरकी अनुकम्पाकी द्योतक है। ईश्वरके तौर-तरीके रहस्यमय हैं। वह प्रायः अपने भक्तोंकी परीक्षा पराजय द्वारा और उन्हें अनेक कष्ट पहुँचाकर लेता है। इसलिए मैं उनके अनुमानको स्वीकार करता हूँ, क्योंकि ये संघर्ष निश्चित रूपसे एक सही उद्देश्यके लिए और ऐसे साधनोंसे लड़ा जा रहा है — जो कमसे-कम जाहिरा तौरपर अहिंसात्मक हैं, लेकिन बहुतसे सत्याग्रही तो निस्सन्देह अहिंसाप्रिय हैं। अहिंसामें ईश्वरपर पूरे तौरपर भरोसा करना निहित है। जिस अद्भुत साहस, पवित्रता और सत्यका परिचय दिया गया है अगर मैं इनका मिथ्या श्रेय लूं तो मेरा सिर ही फिर जाये। लेकिन हम अगर यह मानें कि ईश्वरकी प्रेरणासे आन्दोलन चल रहा है और ईश्वर मुझ जैसे साधारण व्यक्तिको अपने हाथोंमें एक उपकरणके तौरपर इस्तेमाल कर रहा है तो श्रेय किसको जाता है यह बात सहज ही समझमें आ सकती है।

मणिलाल डाक्टर

श्री बनारसीदास चतुर्वेदीने[1] इसी अंकमें श्री मणिलाल डाक्टरके[2] बारेमें ध्यान आकर्षित किया है। यह मामला इस बातका एक अद्भुत उदाहरण है कि 'महान्' ब्रिटिश साम्राज्यमें किस तरह किसी आदमीका पीछा किया जा सकता है और वह भी सिर्फ इसलिए कि वह किसी खास तरहकी राय रखता है। केवल इस आधारपर कि फीजी सरकारने उनके खिलाफ रिपोर्ट की है — हालाँकि अदालतमें उनके खिलाफ कोई बात साबित नहीं हुई — न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, सिंगापुर और अब श्रीलंकामें उनके बसने तथा वकालत करनेपर पाबन्दी लगा दी गई है। जहाँतक जनताको मालूम है श्री मणिलालका कसूर यही है कि उन्होंने अपने देशवासियोंकी सेवा की है और उनपर उनका बहुत ज्यादा प्रभाव है। श्री मणिलालने फीजी सरकारको चुनौती दी है कि वह उनके खिलाफ लगाये गये अभियोगोंको सत्य सिद्ध करे, लेकिन सरकार इतनी कायर है कि वह ऐसा न कर सकी। और यह तो नीचताकी हद है कि उनकी आजीविकाके साधन उनसे छीन लिये जानेपर भी उन्हें गुजारेके लिए कुछ नहीं दिया जा रहा है। व्यक्तियोंका गुप्त रूपसे इस तरह सताया जाना साम्राज्यवादके बड़े दुर्गुणों-में से है। यह साम्राज्यवादकी शक्ति नहीं है; कमजोरी है। जिस साम्राज्यमें व्यक्तिका इस तरह क्रूरतापूर्ण अपमान किया जाता है और फिर उसे अपने विरुद्ध लगाये गये

१. (ज० १८९२); पत्रकार और हिन्दी लेखक। संसद-सदस्य, १९२० में चीफ्स कालेज इन्दौरसे त्यागपत्र देकर शान्तिनिकेतनमें श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजके साथ काम करने लगे।

२. गांधीजीके पुराने साथी डा० प्राणजीवन मेहताके दामाद; बैरिस्टर। डा० मणिलाल मारीशसमें कई वर्षोंतक भारतीयोंके हितमें संघर्ष करते रहे। वे १९१८ में फीजी गये थे और १९२० में सरकारने बिना मुकदमा चलाये देशनिकाला दे दिया था। कुछ दिनों बाद उन्हें न्यूजीलैंड व आस्ट्रेलियामें वकालत न करनेका हुक्म दिया गया था, सिंगापुरमें उन्हें ठहरने तक नहीं दिया गया था। जब वे न्यूजीलैंडसे लौटे तब उन्हें लंकाके सर्वोच्च न्यायालयमें वकालत करनेकी अनुमति नहीं दी गई। लंकाके गवर्नर द्वारा उन्हें ९ जनवरी, १९२१ तक लंकासे चले जानेका आदेश मिला था।

अभियोगोंको निर्मूल सावित करनेका भी मौका नहीं दिया जाता, ऐसा साम्राज्य खत्म होनेके ही काबिल है। स्मरण रहे कि श्री मणिलाल डाक्टर कई सालसे बैरिस्टरी करते आ रहे हैं। आम आदमीको यह सोचनेकी आदत पड़ गई है कि वकील लोग कमसे-कम अपनेको सताये जानेसे बचा सकते हैं। खैर, जहाँ-जहाँ श्री मणिलालने अपना धन्धा जमानेकी कोशिश की, वहाँके किसी भी वकीलने अपने ही व्यवसायवाले को बचानेका प्रयत्न तक नहीं किया। वास्तवमें न्यूजीलैंडकी लॉ सोसाइटी और अदालतने ही श्री मणिलालको वकालतके पेशेसे अलग रखनेका षड्यन्त्र रचा है।

मालवीय परिवार

इस निराले असहयोग संग्रामकी एक अत्यन्त निराली बात यह है कि इसके कारण कितने ही परिवारोंमें मतभेद उत्पन्न हो गया है। और उनमें भी मालवीय परिवारमें जो मतभेद उत्पन्न हुआ है वह तो विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। मेरी रायमें तो यह घटना भारतवासियोंके लिए सहिष्णुता और सविनय अवज्ञाका अच्छा-खासा पाठ प्रस्तुत करती है। श्री मालवीयजीकी सहिष्णुता तो अनुपम है ही। मुझे यह मालूम है कि वे जेल जानेके खिलाफ हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि यदि वे उसके कायल होते तो वे ऐसे आदमी नहीं हैं जो उससे बचनेकी कोशिश करते। और जब उनका सन्ताप हद दर्जेतक पहुँच जायेगा और जब मेरी ही तरह उनका भी विश्वास ब्रिटिश न्यायपर से पूरी तरह उठ जायेगा तब यदि वे जेल जानेके लिए सबसे आगे बढ़ जायें तो मुझे जरा भी आश्चर्य न होगा। परन्तु यद्यपि वे आज स्वयं सविनय कानून-भंगके खिलाफ हैं तथापि उन्होंने कभी उन लोगों तकके किये गये निश्चयोंमें हस्तक्षेप नहीं किया जो उनके निकट सम्बन्धी हैं और जिनपर अपने प्रेम अथवा बुजुर्ग होनेके नाते उनकी निर्विवाद सत्ता है। बल्कि इसके विपरीत उन्होंने अपने पुत्रोंको अपनी-अपनी इच्छाके अनुसार बरतनेकी पूरी आजादी दे दी है। गोविन्दकी सविनय अवज्ञाका उदाहरण मेरी दृष्टिमें सँजोकर रखने लायक है। पण्डितजीने अपने मृदुल और सौजन्यपूर्ण ढंगसे उस वीर नवयुवकको इस मार्गसे दूर रखनेका भरसक प्रयत्न किया। गोविन्दने भी अन्ततक अपने पूज्य पिताकी इच्छाके अनुसार चलनेका भरसक प्रयत्न किया। उसने ईश्वरसे प्रार्थनाकी कि मुझे मार्ग दिखा। वह परस्पर विपरीत कर्त्तव्यको सामने देखकर गहरे असमंजसमें पड़ गया। गोविन्दपर नेहरुओंकी गिरफ्तारीका बड़ा असर हुआ, और उसने अपने विशाल हृदय पिताका आशीष प्राप्त करके संघर्षमें कूद पड़नेका निश्चय कर लिया। जेलोंको भी गोविन्दसे बढ़कर उल्लासपूर्ण हृदयवाला युवक शायद ही मिला होगा। यह साहसके साथ कहा जा सकता है कि सविनय अवज्ञा करके गोविन्दने अपने देश और पूज्य पिताके प्रति अपनी कर्त्तव्यपरायणता प्रमाणित की है। बालकों द्वारा कर्त्तव्य-भावसे सविनय अवज्ञा करनेके मामलेमें गोविन्दका यह कार्य हमारे जमानेके सामने एक नमूना पेश करता है। मुझे विश्वास है कि इसके कारण पिता और पुत्रके बीच कोई दरार पैदा नहीं हुई है। शायद मालवीयजीको आज गोविन्दपर पहलेकी अपेक्षा अधिक गर्व होगा। ऐसे ही सत्य-युक्त कार्य इस युद्धके धार्मिक स्वरूपको प्रमाणित करते हैं। गोविन्दने अदालतमें जो

साहसपूर्ण बयान[1] पेश किया है उसे पाठकोंके सामने उपस्थित करनेके मोहको मैं नहीं रोक सकता।

मैं पिता-पुत्र दोनोंको बधाई देता हूँ। मैं पाठकोंको भी आमन्त्रित करता हूँ कि वे इसमें मेरा साथ दें। देशको दोनोंपर गर्व करना चाहिए। जहाँके युवकगण गोविन्दकी तरह साहस दिखाते हैं वहाँ युद्धका वांछित फल मिले विना रह ही नहीं सकता।

लालाजीका पत्र

आखिरकार लाला लाजपतराय, पण्डित सन्तानम्, मलिक लालखाँ और डाक्टर गोपीचन्दके मुकदमेका फैसला सुना दिया गया। लालाजी तथा पण्डित सन्तानम्को अठारह-अठारह महीने और मलिक लालखाँ और डाक्टर गोपीचन्दको सोलह-सोलह महीनेकी कैदकी सजा दी गई है।[2] इन विशिष्ट मुलजिमोंके बहुतेरा विरोध करनेपर भी सरकारने उनके बचावके लिए एक वकील जबरदस्ती नियुक्त कर दिया था। इस तमाशेके बावजूद उनको सजा दिया जाना निश्चित था। सजाका हुक्म सुनाये जानेके जरा पहले ही लालाजीने मुझे एक पत्र[3] लिखा। उससे उनके मनका उत्साह साफ झलक रहा है। वह इस प्रकार है:

> **आपने जो स्नेहपूर्ण पत्र और सन्देश भेजा है उनके लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। . . . मैंने भूख-हड़ताल नहीं की है क्योंकि मैं अपने आरामके लिए शोरगुल मचानेके खिलाफ हूँ। . . . मैं राष्ट्रीय पाठशालाओं तथा महाविद्यालयोंके लिए भारतवर्षका, हिन्दू-कालका इतिहास लिखनेमें लगा हुआ हूँ। सन्तानम् संस्कृतके तथा धार्मिक ग्रन्थोंके अध्ययनमें अपने समयका बहुत अच्छा उपयोग कर रहे हैं। गोलमेज सम्मेलनका तथा अहमदाबादमें जो-कुछ हुआ उसका समाचार मुझे मिल चुका था। सिद्धान्तोंसे सम्बन्धित निर्णय लेनेमें आप हमारी 'तकलीफों' का विचार बिलकुल न करें। आप यकीन मानिए, हम लोग अपने अभीष्टको प्राप्त करनेके लिए जबतक चाहिए तबतक और जितनी चाहिए उतनी तकलीफें बरदाश्त करनेको हर तरहसे तैयार हैं। और अब जब संघर्ष छिड़ ही गया है तो हमें अन्ततक डटे रहना चाहिए।**

हमें आशा करनी चाहिए कि लालाजी और पण्डित सन्तानम्को उनका अध्ययन जारी रखने दिया जायेगा। मैं उन्हें तथा उनके साथियोंको यह सुझाव अवश्य देना चाहूँगा कि वे मौलाना शौकत अली और श्री राजगोपालाचारी तथा उनके साथियोंका

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है।

२. लाला लाजपतराय और पण्डित सन्तानम्को ७ जनवरी, १९२२ को सजा सुनाई गई थी।

३. यहाँ कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

अनुकरण करें अर्थात् वे साहित्यिक कार्यके साथ-ही-साथ चरखा भी चलायें। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि बीच-बीचमें चरखा कातते रहनेसे लालाजीके इतिहास-लेखन तथा पण्डित सन्तानम्‌के संस्कृत-अध्ययनमें बाधा न पहुँचेगी।

प्रस्तावित गोलमेज परिषद्‌के सम्बन्धमें लालाजीने जो-कुछ कहा है उसकी ओर मैं उन देशसेवकोंका ध्यान दिलाता हूँ जो मनुष्यकी सर्वोत्कृष्ट भावनासे प्रेरित होकर, अपने देशसे प्रेम करने तथा अपनी अन्तरात्माकी पुकारके अनुसार आचरण करनेके अपराधके कारण जेल चले जानेवाले कैदियोंको छुड़ानेके उद्देश्यसे जल्दी ही कोई निपटारा करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। हमारी प्रतिष्ठाके अनुकूल कोई निपटारा होता हो तो उसके रास्तेमें हमें रोड़े न अटकाने चाहिए; पर यदि हम अपने जेल जाने-वाले देशभक्तोंके शरीर-सुखके खयालसे कोई असन्तोषजनक सन्धि कर बैठेंगे तो वह उनके प्रति अन्याय करनेके समान होगा। यदि हम अपनी इच्छासे निमन्त्रित कष्टोंको कम करनेके लिए अनुचित रीतिसे जरा भी झुक गये तो कहना होगा कि हम देशकी मौजूदा मनःस्थितिको ठीक-ठीक नहीं समझे।

सुधार

कलकत्तासे श्रीमती उर्मिलादेवीने नीचे लिखा भूल-सुधार भेजा है जिसे मैं सहर्ष प्रकाशित करता हूँ:

> मेरे साथ हुई भेंटका जो विवरण 'यंग इंडिया' में छपा है उसमें मैंने कुछ भूलें पाई हैं और ये भूलें इसलिए हुई हैं कि प्रश्नोत्तर जल्दीमें हुए थे और इसलिए आपके प्रतिनिधिसे कुछ बातें छूट गयी हैं। प्रार्थना है कि आप 'यंग इंडिया' में निम्नलिखित संशोधन छाप दें:
>
> १. इस प्रश्नके उत्तरमें कि बंगालकी वर्तमान स्थितिके बारेमें मेरा क्या विचार है, मैंने कहा था:
>
> स्थिति अद्‌भुत है। बंगाल अब अपने रंगमें है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके दिल्लीमें हुए पिछले अधिवेशनके दौरान मैं दुःखी थी क्योंकि मैंने यह महसूस किया था कि बंगाल स्वदेशीके सम्बन्धमें पूरा प्रयत्न नहीं कर रहा है और इसीलिए वह इस आन्दोलनका नेतृत्व करनेमें असमर्थ है। मेरी सदैव यह इच्छा रहती है कि बंगाल हरएक आन्दोलनमें सबसे आगे रहे। अब मुझे इसके बारेमें तनिक भी शंका नहीं रह गई है क्योंकि मैं अनुभव करती हूँ कि बंगाल अब आगे है।
>
> २. इस प्रश्नके उत्तरमें कि बंगालमें आन्दोलनके एकाएक जोर पकड़नेका क्या कारण है, मैंने कहा था:
>
> सरकारका गैर-कानूनी हुक्म इसका सामान्य कारण है। महिलाओं और नेताओंकी गिरफ्तारीसे बंगालमें बहुत जोश फैला है।

एक रोचक ब्योरा

स्वागत-समितिके मन्त्रीकी कृपासे मैं निम्नलिखित आँकड़े प्रकाशित कर पा रहा हूँ। इससे प्रकट होगा कि किस प्रान्तके कितने प्रतिनिधि अधिवेशनमें आये थे। आये हुए प्रतिनिधियोंका वर्गवार विवरण भी दिया जा रहा है:

प्रतिनिधियोंकी संख्या

क्र० सं०	प्रान्तका नाम	विधानके अनुसार प्रतिनिधियोंकी संख्या	आये कितने
१.	आन्ध्र	३६०	३८३[1]
२.	केरल	१६०	३३
३.	महाराष्ट्र	२९२	२६३
४.	कर्नाटक	३२०	३०४
५.	गुजरात	१८५	१८५
६.	बम्बई	१८	१७
७.	ब्रह्मदेश	१००	५६
८.	पंजाब और सीमा-प्रान्त	५४०	५१८
९.	सिन्ध	७१	६३
१०.	दिल्ली	१००	९२
११.	राजपूताना	४००	३९९
१२.	उत्कल	३००	१०८
१३.	मध्य-प्रान्त (मराठी)	५०	४४
१४.	असम	६३	१७
१५.	बरार	६१	५८
१६.	मद्रास	४१०	१६२
१७.	बंगाल	९८६	३७३
१८.	संयुक्त-प्रान्त	९६०	८८८
१९.	मध्य-प्रान्त (हिन्दुस्तानी)	२०९	२०५
२०.	बिहार	५८८	५५८
		६,१७३	४,७२६

१. मूलमें यही संख्या दी गई है।

उपस्थित प्रतिनिधियोंका विवरण

क्र० सं०	महिलाएँ	मुसलमान	पारसी	सिख	अन्त्यज	शेष
१.	८	१०				३६५
२.		१				३२
३.	१	९				२५३
४.	९	२९				२६६
५.	११	२२	५		२	१४५
६.	३	२				१५
७.		२				५१
८.	१७	६७		५४		३८०
९.	१	११				५१
१०.	७	१३		४		६८
११.	११	१३				३७५
१२.		३				१०५
१३.	१	५				३८
१४.		२				१५
१५.	२	५				५
१६.	२	१३				१४७
१७.	१०	३६		४		३२३
१८.	१०	११४		३		७६१
१९.	६	२९				१७०
२०.	७	८३				४६८
	१०६	४६९	५	६५	२	४,०७९[1]

इससे यह मालूम होता है कि कुल आने योग्य ६,१७३में से ४,७२६ प्रतिनिधि अधिवेशनमें आये। अवतक ऐसा होता था कि प्रतिनिधियोंकी संख्या स्थानीय प्रतिनिधियों-से वहुत वढ़ जाती थी क्योंकि कांग्रेसके पुराने विधानके अनुसार वे सिर्फ १०) देकर अनायास ही प्रतिनिधि हो जाते थे। इस बार श्री मालवीयजी तक प्रतिनिधि नहीं माने गये; क्योंकि वे प्रतिनिधि निर्वाचित नहीं हुए थे। अतएव यह वास्तविक संख्या ४,७२६ अच्छी संख्या थी। संयुक्त-प्रान्त और बंगालमें हजारोंकी संख्यामें गिरफ्तारियाँ हुईं। तिसपर भी उन प्रान्तोंसे क्रमशः ८८८ और ३७२ प्रतिनिधि आये थे और सुदूर असम और उत्कल प्रान्तोंसे क्रमशः १७ और १०८। इससे यह प्रकट होता है कि लोग राष्ट्रीय कांग्रेसमें कितनी दिलचस्पी ले रहे हैं। प्रायः सभी प्रान्तोंसे कुल मिलाकर १०६ महिला-प्रतिनिधि भी उपस्थित थीं। यह भी कोई कम महत्त्वकी वात नहीं है। ६५ सिख प्रतिनिधियोंकी उपस्थिति भी वहुत ही सराहनीय है। दो वर्ष पहले मुश्किलसे

१. मूलमें यही संख्या दी गई है। इसका योग ४०३३ होता है।

कुछ ही सिख भाई कांग्रेसके अधिवेशनमें आते थे। परन्तु अब सिख जाति राष्ट्रीय आन्दोलनमें चारों ओर हाथ मार रही है। ४६९ मुसलमानोंकी संख्या भी अच्छी-खासी है; परन्तु जबतक पूरी तादादमें जो १२०० से भी अधिक होगी, वे लोग न आयें तबतक हमें सन्तोष नहीं हो सकता। मुझे यकीन है कि 'अन्त्यज' प्रतिनिधि २ से अधिक आये होंगे। पंजाब और आन्ध्र प्रान्तोंसे ऐसे प्रतिनिधि न आयें, ऐसा मैं खयाल नहीं कर सकता। पारसियोंके प्रतिनिधियोंकी निश्चित संख्या उनकी संख्याके हिसाबसे २ है, अतएव ५ प्रतिनिधियोंका उपस्थित होना उनकी संख्यासे बहुत अधिक है। जैसा कि मैंने कई बार कहा है कि पारसी भाई अपनी संख्याके लिहाजसे क्या त्याग, क्या उपस्थिति, क्या योग्यता और क्या उदारता, सभीमें बहुत ऊँचा स्थान रखते हैं। मुझे मालूम हुआ है कि कमसे-कम २ ईसाई प्रतिनिधि भी आये हुए थे। और यदि श्रीयुत स्टोक्स और श्रीयुत जॉर्ज जोजेफ आज जेलके बाहर होते तो वे अवश्य मौजूद होते। परन्तु यह हिन्दुओं और मुसलमानोंका काम है कि वे ईसाई जातिके हृदयमें इस आन्दोलनके प्रति अधिक प्रेम पैदा करनेकी दिलोजानसे कोशिश करें।

प्रेक्षकगण

प्रतिनिधियोंकी उपस्थिति तो बहुत सन्तोषजनक थी ही; परन्तु प्रेक्षकोंकी संख्या भी उससे कम नहीं थी। देशकी स्थिति विक्षुब्ध होनेके कारण बड़े-बड़े धनाढ्य व्यक्ति तो अधिवेशनसे दूर ही रहे, इसलिए पाँच हजार रुपयेवाला एक भी टिकट न बिक सका। तो भी एक-एक हजार रुपयेवाले २१ टिकट बिके, २० आदमियोंने पाँच-पाँच सौके खरीदे, १६२ ने सौ-सौके, ८१ ने पचास-पचासके और १,६८६ ने पच्चीस-पच्चीसके टिकट खरीदे। इस तरह कुल ९३,४००) रुपया आया। स्वागत-समितिकी ओरसे निश्चितसे अधिक रकम आई—जो कि ७८,६२५) रुपये थी। तीन-तीन रुपयेके ११,२६१ सीजन टिकट बिके। इन टिकटोंके आधारपर कांग्रेसकी बैठकोंको छोड़कर सब जगह जाया जा सकता था। ६४,४६९ टिकट चार-चार आनेवाले बिके। जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ, भीड़के कारण सीजन तथा प्रवेश टिकट बेचना बन्द कर देना पड़ा था। विभिन्न फीसोंके रूपमें स्वागत-समितिको २,४९,५२७ रुपये प्राप्त हुए।

अखिल भारतीय ईसाई सम्मेलन

श्री मुखर्जीकी अध्यक्षतामें होनेवाले इस सम्मेलनको हम इसलिए महत्त्वपूर्ण कह सकते हैं कि उसने देशके राजनीतिक जीवनमें काफी दिलचस्पी दिखाई है। अध्यक्ष महोदयसे लेकर साधारण प्रतिनिधितक सभी इस बातका आग्रह प्रदर्शित कर रहे थे कि वर्तमान राष्ट्रीय जागृतिमें भारतीय ईसाइयोंको अवश्य भाग लेना चाहिए। प्रोफेसर एस० सी० मुखर्जीका कथन है कि

> हमें अपनी वाणी और अपने कार्यों द्वारा यह प्रमाणित करके दिखा देना चाहिए कि ईसाई धर्मने हमें अभारतीय और अराष्ट्रीय नहीं बना डाला है। हमारे मजहबी खयालातमें फर्क भले ही हो, लेकिन हम एक जमातके रूपमें

अपने भाइयों -- हिन्दुओं और मुसलमानों -- से अलग-अलग रहेंगे, यह बात तो सोची भी नहीं जा सकती?

इस सम्मेलनमें १६ प्रस्ताव पास किये गये। इन प्रस्तावोंमें राष्ट्रीय जीवनका प्रत्येक पहलू आ गया था। उसने सरकारकी दमन-नीतिकी निन्दा की। विज्ञप्तियोंके रूपमें जारी किये गये सरकारी हुक्मोंको वापस लिये जाने तथा कैदियोंकी रिहाईका अनुरोध किया, सम्मेलनने असहयोगियोंको यह सलाह दी कि असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया जाये, उसने गोलमेज सम्मेलन बुलाये जानेपर जोर दिया, पूर्ण नशाबन्दीके कार्यक्रमके साथ सहमति प्रकट की और विदेशोंमें बसे हुए भारतीयोंके साथ सहानुभूति प्रकट की। उक्त प्रस्तावोंमें से मैं स्वदेशीसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रस्तावोंका मूल पाठ यहाँ यह दिखानेकी गरजसे दे रहा हूँ कि लोग यह जान लें कि ईसाइयों-के दिलोंमें स्वदेशीकी भावना कहाँतक जाग्रत् हुई है।

> इस सम्मेलनकी यह दृढ़ धारणा है कि ईसाई लोगोंके जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें स्वदेशीकी भावनाका प्राधान्य रहना चाहिए और उसके परिणामस्वरूप देशके सभी देशी उद्योग-धन्धोंको प्रोत्साहन मिलेगा। हम लोगोंको चाहिए कि हम अपनी स्वदेशी भावनाको कार्यान्वित करनेके लिए अविलम्ब ही भारतमें बने वस्त्र पहनना शुरू कर दें। इस बातको मद्दे नजर रखते हुए कि भारतीय ईसाई समाजपर अनेक बार और कड़े शब्दोंमें यह लांछन लगाया गया है कि वह स्वदेशी भावनाके प्रति उदासीनताका भाव रखता है, यह सम्मेलन सिफारिश करता है कि सभी प्रान्तीय लोगोंको चाहिए कि वे स्थानीय लोगोंकी सहायतासे समाजके लोगोंमें स्वदेशी भावना भरनेके लिए साधन खोज निकालनेकी दिलो-जानसे कोशिश करें और इस कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेमें तनिक भी विलम्ब न करें।

यह-सब बहुत उत्साहवर्द्धक है। आशा है कि प्रस्तावपर अमल किया जायेगा, और जिस प्रकार हिन्दुओं और मुसलमानोंमें चरखा और खादी लोकप्रिय हो गई है उसी प्रकार ईसाई लोगोंमें भी हो जायेगी। अब यह काम हिन्दुओं और मुसलमानोंका है कि वे इस सम्मेलनके इस प्रयासकी कद्र करते हुए अपने ईसाई देशवासियोंके प्रति प्रगाढ़ मैत्री भावका परिचय दें और उसका पोषण करें।

कुछ और उल्लेखनीय गिरफ्तारियाँ

सभी तरफसे गिरफ्तारियोंकी खबरोंका आना जारी है। अब श्यामबाबूकी[1] लेखनी 'सर्वेन्ट' के स्तम्भोंको सुशोभित न करेगी। उन्हें इसलिए कैद किया गया है कि वे अदालतके इस अधिकारको माननेको तैयार नहीं हैं कि वह उन्हें गवाहके रूपमें पेश करके उनसे गवाही दिलाये। कांग्रेसके प्रस्तावमें न तो किसीको उस हदतक जानेको कहा गया है और न किसीको वैसा करनेसे मना किया गया। श्यामबाबूने अधिक सख्त

१. बाबू श्यामसुन्दर चक्रवर्ती।

रवैया अपनाया है। उन्हें कलकत्ता जेलमें साथियोंसे जा मिलनेका मौका मिला और वे इस मौकेको चूकनेवाले नहीं थे। 'सर्वेन्ट'ने अपनी स्थापनाके दो सालमें ही बहुत बड़ी मुश्किलोंके बावजूद अच्छी-खासी कीर्त्ति अर्जित कर ली है। उसकी इस प्रगतिमें श्यामबाबूके योग्य निर्देशनका बहुत बड़ा हाथ था। पत्रके पाठकोंको अब इस लाभसे वंचित होना पड़ेगा। लेकिन मुझे सन्देह नहीं कि श्यामबाबू जेलमें रहकर देशकी उससे भी अच्छी सेवा कर रहे हैं। कष्ट सहनेका जो उदाहरण उन्होंने पेश किया है वह किसी भी उस सम्पादकीयसे ज्यादा प्रभावशाली है जो कि वे अपनी सशक्त लेखनीसे लिखते।

बेलगांवमें श्री देशपाण्डेका स्थान श्री माजलीने लिया था। अब श्री माजली गिरफ्तार कर लिये गये हैं। उनकी गिरफ्तारीने कर्नाटकको प्रतिष्ठा प्रदान की है। विदाईके सन्देशमें उन्होंने स्वर्गीय श्री ह्यूमके शब्दोंको दोहराया है: "आपकी सम्पदा, पांडित्य, कोरी उपाधियों और निकृष्ट व्यापारका क्या मूल्य है? वास्तविक स्वायत्त-शासन इन सबके समन्वित मूल्यके बराबर है। राष्ट्र अपने प्रयत्नसे ही बनते हैं।" श्री माजलीसे कहा गया था कि वे 'अच्छे चाल-चलनके' लिए मुचलका दें। चूंकि उन्हें इसका पता ही नहीं था कि उन्होंने बुरे चाल-चलनके अभियोगके लायक कोई काम किया है, इसलिए उन्होंने जमानत देनेसे इनकार कर दिया और वहाँ जाना बेहतर समझा जहाँ कि अच्छे चाल-चलनवाले आदमी आजकल जानेमें सुखका अनुभव करते हैं। श्री माजली चाहते हैं कि केवल स्वतन्त्र भारतकी सरकार ही उन्हें जेलसे छोड़े और वे सबसे शुद्ध खादी पहननेकी प्रार्थना करते हैं जो कि पवित्र और स्वतन्त्र भारतका प्रतीक है और विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करनेके लिए कहते हैं, क्योंकि ये कपड़े विदेशी जुएके प्रतीक हैं।

श्री माजलीकी ही तरहका कसूर आन्ध्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री डा० वी० सुब्रह्मण्यमका था। उन्हें कोकोनाडामें एक सालकी कड़ी सजा दी गई है।

गुरुद्वारा आन्दोलन

सिख गुरुद्वारा प्रबन्धक समितिसे जो ताजे समाचार मिले हैं उनसे प्रकट होता है कि कमिश्नरने अमृतसरके स्वर्ण-मन्दिरकी चाबियाँ लौटा देनेकी बात कुछ शर्तोंके साथ सामने रखी है। सरदार भगत जसवन्तसिंहने देरीसे प्राप्त होनेवाले इस प्रस्तावका जोरदार जवाब भेजा है। सरकारी विज्ञप्तिकी पहुँच स्वीकार करते हुए सरदारजीने ये पंक्तियाँ लिख भेजी हैं:

> ६ दिसम्बर, १९२१को शि० गु० प्र० समितिने जो प्रस्ताव पास किया है में उसकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ:
>
> निश्चय किया जाता है कि जबतक स्वर्ण-मन्दिरकी चाबियोंके सिलसिलेमें गिरफ्तार किये गये सब सिखोंको बिना किसी शर्तके रिहा नहीं कर दिया जाता तबतक कोई भी सिख चाबियोंको वापस लेनेके सम्बन्धमें की गई किसी भी व्यवस्थामें अपनी रजामन्दी जाहिर न करेगा।

इसलिए समितिके आदेशसे मैं आपको सूचित कर रहा हूँ कि हमारी समिति चाबियोंकी अस्थायी रूपसे तथा शर्तोंके साथ की जानेवाली वापसीके सरकारी सुझावको, जिसमें चाबियोंके मामलेमें गिरफ्तार किये गये सभी सिखोंकी बिना शर्त रिहाईकी बात शामिल नहीं की गई है, स्वीकार नहीं कर सकती।

सिख-समाजकी विज्ञप्तिमें निम्नलिखित आवश्यक बातें और जोड़ी गई हैं :

उपर्युक्त पत्र-व्यवहारसे यह स्पष्ट है कि दरबार साहबकी कुंजियाँ शिरोमणि समितिको वापस करनेमें सरकारको कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु यह तभी तकके लिए जबतक कि स्वर्ण-मन्दिरके मुकदमेका फैसला नहीं सुना दिया जाता। क्या सरकार शुरूसे यही रवैया अख्तियार नहीं कर सकती थी? कुंजियाँ गुरुद्वारा समितिके पास रखी रहने देते हुए भी वह मुकदमा चलाती रह सकती थी। कहनेकी जरूरत नहीं कि जिस तरह समिति इस समय उस मुकदमेमें कोई भाग नहीं ले रही है, उसी तरह उस हालतमें भी वह उसमें कोई भाग नहीं लेती। जोर-जबरदस्ती करके चाबियाँ ले जाकर और इस जोर-जबरदस्तीके खिलाफ, जिसकी व्यर्थता सरकार अब प्रच्छन्न रूपसे स्वयं मान रही है, आवाज उठानेवाले सिखोंको गिरफ्तार करके सरकारको इतनी कटुता पैदा करनेकी जरूरत ही क्या थी?

क्षमा-याचना

इलाहाबादसे खबर मिली है कि "क्रिमिनल लॉ एमेन्डमेंट ऐक्ट (फौजदारी कानून संशोधन अधिनियम) के अन्तर्गत गिरफ्तार आठ अभियुक्तोंको छोड़ दिया गया क्योंकि उन्होंने माफी माँग ली और गैर-कानूनी सभाओं, तथा मूर्खतापूर्ण एवं अशोभनीय आन्दोलनोंमें भाग लेनेपर अफसोस जाहिर किया है।" चूँकि मथुरामें कुछ ही महीनों पहले जो-कुछ हुआ था उसे मैं भूला नहीं हूँ इसलिए मुझे इस खबरपर विश्वास नहीं होता। मथुरामें कुछ नामधारी असहयोगी सत्याग्रही गिरफ्तार किये गये थे और फिर उनसे माफी मँगवाई गई थी। बादमें अधिकारियोंकी तरफसे यह दावा किया गया कि असहयोगियोंने माफी माँगी है। मैं इस समाचारको सत्य तो नहीं मानता लेकिन मैं यह जरूर चाहता हूँ कि कार्यकर्त्ता इससे फायदा उठायें। अगर उन बहुतसे नौजवानोंमें से जो कि रोजाना गिरफ्तार किये जा रहे हैं कुछ लोग कमजोर पड़ जाते हैं और पीछे कदम हटाते हैं, खासतौरसे उस हालतमें जब कि लोगोंके साथ भले ही कुछ समयके लिए ही, ऐसा बरताव किया जाता है जैसा कि महादेव देसाईके साथ किया गया है,[१] तो हमें आश्चर्य नहीं करना चाहिए। हम लोगोंको थोड़े-से ही आदमियोंके गिरफ्तार होनेपर सन्तोष मानना चाहिए, बजाय इसके कि हममें कुछ लोग दिलके कमजोर हों और किसी खास मौकेपर आवेशमें आकर गिरफ्तार तो हो जायें पर बादमें घुटने टेक दें।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ५-१-१९२२ का उप-शीर्षक "जेल-जीवनकी झांकी"।

वकीलोंकी कठिनाई

सेठ जमनालाल बजाजने[1] नागपुर कांग्रेसके प्रस्तावके[2] अनुसार जो वकील अपनी वकालत स्थगित करें उनकी सहायताके लिए एक लाख रुपयेका दान दिया था। साल-भरके बाद अब यह फण्ड, जैसा कि सोचा भी गया था, प्रायः समाप्त हो चुका है। लेकिन वकील लोग, अगर उन्हें अपनी आबरूका खयाल है, अदालतोंमें वापस नहीं जा सकते। और मुझे विश्वास है कि इनमें से अधिकांश देशके आश्चर्यजनक त्यागको देखते हुए फिरसे वकालत शुरू करनेका विचार तक मनमें नहीं लायेंगे। पर वकीलोंको उनके ही साधनोंपर छोड़ देना उचित नहीं होगा। इसलिए प्रान्तीय कमेटियोंको मैं यह सलाह अवश्य दूँगा कि वे इस बोझको अपने ऊपर उठा लें। अलबत्ता, अगर आवश्यक हो तो वे इस काममें केन्द्रीय निधिसे भी सहायता ले सकती हैं। यह नई व्यवस्था शीघ्र करनी चाहिए ताकि राष्ट्रीय कार्यकी सुस्थिर गतिमें किसी तरहकी बाधा न आये और वकीलोंके दिलोंमें दुविधा पैदा न होने पाये।

किन्तु इस समय वकीलोंके मार्गमें जो कठिनाइयाँ उपस्थित हैं उनमें यह सबसे छोटी है। राष्ट्रीय जागृतिमें हाथ बँटानेके लिए वे उत्सुक हैं। उनकी आत्मा तो तैयार है, पर उनके मनका दौर्बल्य उन्हें आगे बढ़नेसे रोकता है। मैं अब भी यही महसूस करता हूँ कि वकालत करनेवाले वकील नेतृत्वका भार वहन नहीं कर सकते। इस आन्दोलनके लिए पूर्ण, बल्कि उससे भी कुछ ज्यादा, परिणामोंकी ओरसे बिलकुल ही लापरवाह आत्मत्याग तथा बलिदानकी आवश्यकता है। अतः यदि आन्दोलनका नेतृत्व उनके हाथमें आयेगा तो वह कमजोर पड़े बिना नहीं रह सकता। यदि ऊपरके लोग कठोर परीक्षाकी घड़ीमें कमजोरी दिखा गये तो पूराका-पूरा उद्देश्य विफल हो जायेगा। इसलिए कांग्रेसने जान-बूझकर ही उनके लिए एक सम्मानपूर्ण मार्ग खोल रखा है। प्रस्तावके मूल पाठमें केवल वही लोग स्वयंसेवक हो सकते थे जो असहयोग कार्यक्रमको पूरी तरहसे निबाहनेकी क्षमता रखते थे। पर अब स्वयंसेवक-दलके लिए सहज नियम बना दिये गये हैं। उनमें से अधिकांश तो विश्वासोंसे ही सम्बन्धित हैं। खादीका प्रयोग आरम्भमें कुछ असुविधा उपस्थित कर सकता है, पर यदि प्रतिज्ञा-पत्रमें जिन आवश्यकताओंका उल्लेख है उनमें उन्हें विश्वास है तो वे उसकी असुविधाकी परवाह नहीं करेंगे। यदि कोई व्यक्ति असहयोगके कारण जेल हो आता है तो उसके बहुत-से अवगुणोंपर पर्दा पड़ जाता है। इसी तरह यदि कोई वकील जेल हो आये तो वह कारावास भोग आनेके फलस्वरूप ही अपने पूर्व गौरवको पुनः प्राप्त कर सकता है। इसके अलावा एक प्रस्ताव इस विषयका भी पास हुआ है जिसके द्वारा सभीको, यहाँ तक कि सरकारके साथ पूर्ण रूपसे सहयोग करनेवाले व्यक्तियोंको भी, ऐसे कामोंमें भाग लेनेके लिए जिनमें न तो त्याग करना पड़ता है और न मतभेदकी गुंजाइश है, कांग्रेसकी सहायता करनेके लिए आमन्त्रित किया गया है। इसलिए मुझे आशा है कि

१. १८८९-१९४२; गांधीवादी उद्योगपति, समाज-सेवक और दानी; कई वर्षोंतक भारतीय कांग्रेसके कोषाध्यक्ष रहे; गांधीजीके अनन्य भक्त।

२. सन् १९२० में नागपुरमें अखिल भारतीय कांग्रेसके अधिवेशनमें पारित असहयोग-सम्बन्धी प्रस्ताव।

वकील लोग अपनी योग्यता और अवसरके अनुसार देशकी पुकारका समुचित उत्तर देंगे और उन अनेक तरहके कामोंमें सोत्साह भाग लेंगे जो उनके लिए खुले हुए हैं। जहाँ सभीसे सहायक होनेकी अपेक्षा की जाती है, वहाँ किसीको उदासीनता दिखलाना उचित नहीं। असहयोगियोंको उचित है कि वे अपनी सफलताओंपर गर्व न करें बल्कि राष्ट्रकी उन्नतिके लिए जहाँ-कहींसे जिस किसी तरहकी सहायता मिले उसे नम्रताके साथ स्वीकार करते रहें। असहिष्णुता और लोगोंसे अलग रहनेकी वृत्तिकी जगह उनके दिलोंमें सहिष्णुताकी भावना आनी चाहिए। यदि कोई मनुष्य जिसके पास त्याग करनेके लिए कुछ है ही नहीं केवल खादी धारण करके वकालत करनेवाले उन वकीलों तथा अन्य लोगोंका उपहास करता है जो अपनी समझके मुताबिक ईमानदारीके साथ देशकी अन्य कई तरहसे सेवा कर रहे हैं तो वह व्यक्ति आन्दोलनकी शोभा नहीं बढ़ाता, और न उसको लाभ ही पहुँचाता है। मातृभूमिकी सेवामें जो-कुछ सहर्ष अर्पण किया जाये वह सहर्ष स्वीकृत होना चाहिए।

कुर्कीका वारंट

कई जगहोंसे इस बातकी पूछताछ की जा रही है कि जुर्माने ठोके जानेपर और जुर्मानेकी वसूलीके लिए कुर्कीका वारंट जारी किये जानेपर क्या किया जाना चाहिए। गिरफ्तार होने और मारपीट बरदाश्त करनेके लिए तो व्यक्ति तैयार हो जाता है लेकिन माल-असबाबकी हानि बरदाश्त करनेके लिए नहीं। इस असंगतिको पहली नजरमें समझ सकना मुश्किल मालूम होता है लेकिन असलमें है वह आसान। हम अपने माल-असबाबसे, अपनी सम्पत्तिसे इतना मोह करते हैं कि जब गिरफ्तारीमें बदनामीकी कोई बात नहीं होती तो हम अपनी सम्पत्तिके नुकसानके बजाय गिरफ्तार होनेकी असुविधाको बेहतर समझते हैं। लेकिन हमें यह चीज समझ लेनी चाहिए कि यदि हम अपनी शारीरिक सुख-सुविधाके साथ-साथ भौतिक सम्पत्तिका भी त्याग करनेके लिए तैयार नहीं हैं तो हम जीती हुई बाजी हार जायेंगे। अव्यवस्थित राज्यमें जिस व्यक्तिकी अन्तरात्मा प्रबल होती है वह अपना सामान, सम्पूर्ण सम्पत्ति और शरीर तक दाँवपर लगा देता है और अपनी आत्माको स्वतन्त्र करता है। इसलिए इस संघर्षमें हमें विजय तभी प्राप्त हो सकती है जब हम ऐसी प्रत्येक वस्तुके प्रति उदासीन हो जायें जिनके द्वारा राज्य हमपर अपनी इच्छा थोप सकता हो। अतः हमें इस बातके लिए तैयार रहना चाहिए कि हमारा सामान जब्त कर लिया जाये और हमारी जमीन छीन ली जाये फिर भी हम उसी तरह प्रसन्न रहें जैसे कि आज गिरफ्तार होनेपर रहते हैं। हमें पूर्ण आश्वस्त होना चाहिए कि जिस तरह सरकार आज हमें गिरफ्तार करके जेल भेज-भेजकर परेशान हो चुकी है उसी तरह वह हमारा माल-असबाब बेच-बेचकर उससे भी जल्दी परेशान हो जायेगी। अगर हमें शीघ्र ही स्वराज्य प्राप्त कर लेनेका पूरा विश्वास है, जैसा कि होना भी चाहिए, तो हमें यह भरोसा भी होना चाहिए कि जितनी भी जमीन हड़प ली गई है वह सब ज्योंकी-त्यों हमारे पास लौट आयेगी और वसूल की गई रकमका भी अधिकांश हमें फिर मिल जायेगा। जब जर्मनोंने बेल्जियमको रौंद डाला था तब बेल्जियमवासियोंको

यह विश्वास था कि यदि अपनी सम्पत्ति पुनः प्राप्त करनेका उनका संकल्प बना रहा और वे उसके लिए कष्ट सहनेको तैयार रहे तो वे फिर अपनी जमीनपर लौट आयेंगे। स्वर्गीय जनरल बोथाके[1] पास सैकड़ों एकड़ जमीन और बेहतरीन मवेशी थे। उन्हें अपनी यह सारी सम्पत्ति छोड़कर भागना पड़ा था। उन्होंने कीमतकी परवाह किये बिना संघर्ष किया और अन्तमें दक्षिण आफ्रिकाके मानो बादशाह ही हो गये और अपनी सम्पत्ति उन्हें ससम्मान वापस मिली। हमें भी बोअर लोगों और बेल्जियमवासियोंके मुकाबले कम करतब नहीं करना चाहिए। खासतौरसे उस हालतमें जब कि हमारा संघर्ष ऐसा है जिसमें हम सभी कुछ त्यागनेके लिए और प्रतिपक्षीको किसी भी तरह क्षति न पहुँचानेके लिए कृतसंकल्प हैं। अगर हम अपने देशसे गरीबी-को समाप्त करना और ऐसी स्थिति उत्पन्न करना चाहते हों जिसमें समाजका कोई भी सदस्य नीचा न माना जाये तो हमें स्वेच्छासे, यद्यपि अस्थायी तौरपर ही, गरीबीका जीवन स्वीकार करना होगा। हममें से कुछ लोगोंको अपनी सुख-सुविधाका यह जो त्याग करना होगा वह उस पुरस्कारके मुकाबले कुछ भी नहीं है जो इसके फलस्वरूप भविष्यमें हमें प्राप्त होनेवाला है। इसके द्वारा हम अपनी पुनीत मातृभूमिके विगत वैभव और सम्मानको पुनः प्राप्त करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-१-१९२२

७२. अब गोलियोंकी बारी है

दमनका जो नया रूप तेजीसे सामने आ रहा है, के० ने उसका संक्षिप्त विवरण[2] तैयार किया है। इससे बहुत-सी बातोंका पता चलता है; आशा है पाठक इसे बहुत ध्यानसे पढ़ेंगे। हो सकता है कि इस विवरणमें कुछ अतिशयोक्ति हो, परन्तु असहयोगके क्षेत्रोंसे अबतक प्राप्त प्रायः सबकी-सब रिपोर्टें इतनी सच निकली हैं और उनका प्रतिवाद इतना निराधार सिद्ध हुआ है कि के०ने मेरे पास आये पत्रों और अखबारोंमें से जो तथ्य इकट्ठे किये हैं, वे इतनी हूबहू तसवीर पेश करते हैं कि उनमें किसी प्रकारकी काट-छाँट करनेकी मेरी इच्छा नहीं होती।

पुलिसमें ज्यादातर हमारे अपने देशवासी ही हैं। परन्तु यह स्पष्ट है कि अपने बड़े अधिकारियोंके उदाहरण और आदेशसे उन्हें कानूनके खिलाफ कार्रवाई करनेको उकसाया जा रहा है। भीड़ जब निरंकुश होती है तब उसके सामने कोई और बेहतर रास्ता होता ही नहीं। लेकिन जब पुलिस निरंकुश होती है तो उसका वह कार्य जान-बूझकर किया हुआ और इसलिए अक्षम्य होता है। भीड़के पागलपनपर तो काबू पाया जा सकता है, लेकिन पुलिसके पागलपनसे यदि लोग पहलेसे ही उसके लिए

१. १८६२-१९१९; बोअर जनरल तथा राजनीतिज्ञ; ट्रान्सवालके प्रधान मन्त्री १९०७, दक्षिण आफ्रिका संघके प्रधान मन्त्री १९१०-१९१९।

२. यहाँ नहीं दिया गया है।

तैयार न हों तो उन्हें बहुत तबाहीका सामना करना पड़ता है। यह तकलीफ हम लोग एक लम्बे अरसेसे भोगते आ रहे हैं। ईश्वरको धन्यवाद है कि भारत आज सरकारके इस योजनाबद्ध उन्मादका सामना करनेको तैयार है।

तथाकथित दहशत फैलानेवालों के खिलाफ तथाकथित साधारण कानून लागू करनेके इस ढोंगका हमें पर्दाफाश कर देना चाहिए और विशुद्ध मार्शल लॉको आमन्त्रित करना तथा उसका स्वागत करना चाहिए। ओ'डायरशाही[1] और डायरशाहीकी[2] चाहे हिमायत न की जा सके, पर जहाँतक आदर्शका सवाल है उनके पीछे विश्वासकी ईमानदारी है। किन्तु भारतमें आज जो-कुछ हो रहा है, वह अकथनीय पाखण्ड है।

अगर यह सच है कि कुर्कीके वारंटोंकी आड़में पुलिस बनारसमें हमारे घरोंमें घुसी और वह घरके लोगोंके जेवर तक ले गई; अगर यह सच है कि बुलन्दशहरमें पुलिस, व्यवस्था कायम करनेके बहाने, लोगोंको मारने-पीटनेकी गरजसे उनके घरोंके भीतर घुस गई; अगर यह सच है कि उसने कुर्कीके वारंट तामील करनेके लिए कैदियों-को करीब-करीब बिलकुल निर्वस्त्र कर दिया तो यह मामला बिलकुल इस लायक है कि अपनी ओरसे अहिंसा कायम रखते हुए अत्यन्त उग्र ढंगका सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू कर दिया जाये। हमें निःसहाय लोगोंपर गोली चलाई जानेके अवसरकी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। और न हमें, सिर्फ बचावकी कार्यवाहीतक सीमित रहते हुए, लोगोंकी सहन-शक्तिपर बेजा दबाव डालना चाहिए। सरकारके कारकुनोंको हमें इस बातकी छूट नहीं देनी चाहिए कि वे हमारे घरोंको लूटते-पाटते रहें। हमें खुद आगे बढ़कर अपने सीनोंपर गोलियाँ खानी चाहिए, और वह भी जल्दीसे-जल्दी। यद्यपि ये लोग स्वयंसेवक हैं और इन्होंने कष्ट सहनेका व्रत लिया है, फिर भी हम, मुख्य कार्यकर्त्ता, शान्त और निरपराध लोगोंकी सन्तापजनक मारपीटको एक दार्शनिककी तरह तटस्थ भावसे कैसे देख सकते हैं?

एक मुसलमान नौजवानपर खादीकी टोपी पहनने या बेचनेके (जो भी बात रही हो) अपराधके लिए एक यूरोपीय 'नौजवान' का गोली चलाना (क्या यूरोपीय नौजवान हथियार रखते हैं?) चुपचाप सहन नहीं किया जा सकता। हमें इस अन्यायका बदला, यदि आवश्यक हो तो, खुद अपने सीनोंपर गोलियाँ खाकर लेना चाहिए।

सरकार हमें हिंसा या घृणित अपमानजनक आत्मसमर्पणकी ओर धकेलना चाह रही है। पर हमें इन दोनोंमें से एक भी काम नहीं करना है। हमें इसका जवाब ऐसी सविनय अवज्ञासे देना है जिससे उन्हें गोली चलानी ही पड़े।

वे तो हमारे बीच गृह-युद्ध चाहते हैं। पर हमें उनके हाथोंमें नहीं खेलना है। यहाँ एक ऐसा उदाहरण है जिसे मैं गृह-युद्धका खुला प्रचार कह सकता हूँ। अलीगढ़ जिलेके मजिस्ट्रेटने उस जिलेके रईसोंको निम्नलिखित गश्ती चिट्ठी[3] भेजी है:

१ व २. सर माइकेल ओ'डायर पंजाबके लेफ्टिनेंट गवर्नर (१९१३-१९१९) द्वारा किया गया दमन-पूर्ण शासन। जनरल डायर, जो पंजाबके उपद्रवोंके दिनों (१९१९) में पंजाबके सैनिक अधिकारी थे, द्वारा किये गये जुल्म।

३. यहाँ उसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

जैसा कि आपको निःसन्देह ज्ञात होगा, खिलाफत और कांग्रेसके स्वयंसेवक प्रान्तीय सरकार द्वारा गैरकानूनी संघ घोषित कर दिये गये हैं और हमें उनको दबा देनेके आदेश मिल चुके हैं। . . .

मेरे पास पुलिसके जो सिपाही हैं उनकी संख्या सीमित है। और मैं फौजकी मदद लेना नहीं चाहता। . . .

इसलिए मैं जिलेके कुछ बड़े-बड़े रईसों और इज्जतदार लोगोंको मददके लिए लिख रहा हूँ। . . . आप कृपया अपने नौकरों-चाकरों, कारिन्दों और पट्टेदारोंमें से हट्टे-कट्टे और मजबूत ऐसे पचास आदमी छाँटकर तैयार रखें जिन्हें आप मेरा यह सन्देश मिलनेपर कि उनकी स्पेशल पुलिसमें भरतीके लिए जरूरत है, भेज सकें।

फिलहाल सिर्फ इतना ही किया जाये कि आदमी छाँट लिये जायें और उनके नामों व ठिकानोंकी एक सूची तैयार कर ली जाये। . . .

हमें सरकारके चकमेमें न आकर, इस जालमें फँसनेवाले रईसोंको जो कुछ भी वे करना चाहें, उन्हें वैसा करने देना चाहिए। हमें सविनय अवज्ञाके सिर्फ ऐसे रूपोंको अपनाना चाहिए जिनसे हमारे अपने लोगोंके साथ, चाहे वे सिविल गार्डकी हैसियतसे आये हों या अभी जनसाधारणके ही आदमी हों, कोई टक्कर न हो। यह लड़ाई अडिग साहस और अहिंसाके पूर्णतया पालनसे एक महीनेके अन्दर-अन्दर जीती जा सकती है। भगवान् भारतको प्रकाश और साहस दे।

मैंने यह आशा की थी कि मौतका सामना करनेकी शपथ अभी दूरकी चीज है। परन्तु ईश्वरकी इच्छा स्पष्ट रूपसे यही है कि हमारी परीक्षा अच्छी तरह और पूरी-पूरी हो। यह लड़ाई ईश्वरके नामपर शुरू की गई थी। वही हमें इसमें पूरा उतरनेकी शक्ति देगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-१-१९२२

७३. देशबन्धुका भाषण[1]

देशबन्धु दासके अध्यक्षीय भाषणके प्रकाशनमें देर हो गई, इसके लिए क्षमा चाहता हूँ। मुझे यह भाषण टुकड़ोंमें मिला और उसपर निर्देश था कि मैं उसे सुधार-सँवारकर अच्छे रूपमें छापूं। पाठकोंको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इसमें मैंने सिर्फ इतना ही किया है कि एक वाक्य, जो निकाल दिया गया था, फिरसे दे दिया है, एक विचारको पूरा करनेके लिए एक वाक्य अपनी ओरसे जोड़ा है और यत्र-तत्र कुछ शाब्दिक परिवर्तन किये हैं, जिनका कोई खास महत्त्व नहीं है; बाकी

१. गिरफ्तार हो जानेके कारण देशबन्धु चित्तरंजन दास १९२१ की अहमदाबाद कांग्रेसमें अपना अध्यक्षीय भाषण नहीं दे पाये थे। बादमें वह भाषण **यंग इंडिया**में गांधीजी द्वारा लिखी इस प्रस्तावनाके साथ छपा था।

तो यह जिस रूपमें मुझे मिला था, उसी रूपमें छापा जा रहा है। मूलमें जो वाक्य छोड़ दिये गये हैं उन्हें पढ़नेसे पता चलता है कि देशबन्धु उन वाक्योंमें एक सालके कामका लेखा-जोखा और असहयोगपर अपने सुविचारित मतको विस्तारसे प्रस्तुत करना चाहते थे। लेकिन प्रकाशित पाठमें उनके मतके बारेमें जानकारी पानेकी दृष्टिसे काफी सामग्री मिल जाती है। इसके अलावा उसकी जानकारी हमें देशके नाम उनके उन जोरदार और मनको आन्दोलित कर देनेवाले सन्देशोंसे भी मिल जाती है, जो उन्होंने अपनी गिरफ्तारीसे थोड़ी ही देर पहले दिये थे। पाठकोंको इस जानकारीसे भाषणको समझनेमें सहायता मिलेगी कि इसे श्री दासने अपनी गिरफ्तारीसे ठीक पहले ही तैयार किया था। भाषण लिखनेमें जिस आत्म-संयमसे काम लिया गया है, उसे पाठकगण आसानीसे देख सकते हैं, और इस तथ्यको भी वे अवश्य लक्ष्य करेंगे कि देशबन्धु अहिंसाको अपना धर्म मानते हैं। लेकिन इस सरकारको तो ऐसे व्यक्तिके लिए भी जेल ही उपयुक्त स्थान जान पड़ा। इससे अधिक अपकीर्तिकी बात इस सरकारके लिए और क्या हो सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-१-१९२२

७४. अखबारोंकी स्वतन्त्रता

दिन-व-दिन परिस्थितियोंके दबावसे सरकारके ये दावे झूठे सिद्ध होते जा रहे हैं कि नये सुधारोंसे जनताको और अधिक स्वतन्त्रता दे दी गई है और उसके अधिकार बढ़ा दिये गये हैं। ये दावे तो तभी ठीक हो सकते हैं जब वे कठिनसे-कठिन परीक्षामें भी उत्तीर्ण हो जायें। भाषण स्वातन्त्र्यका मतलब तो यही है कि हमारे वचन कितने ही कठोर और चोट पहुँचानेवाले क्यों न हों, फिर भी उस स्वतन्त्रतापर आक्रमण न किया जाये। और अखबारोंकी स्वतन्त्रताका सच्चा सम्मान तभी है जब वे कड़ीसे-कड़ी टीका-टिप्पणी कर सकें, तथा सचाईको तोड़-मरोड़कर गलत ढंगसे भी पेश कर सकें। इन बातोंसे रक्षा तो अवश्य होनी चाहिए, किन्तु वह इस तरह नहीं कि ऐसे लेखोंका छापना कानून द्वारा बन्द कर दिया जाये, या छापेखानेपर ही वार करके उसे बन्द कर दिया जाये। वह तो अखबारोंको स्वतन्त्र रखते हुए सच्चे अपराधीको सजा देकर ही होनी चाहिए। इसी प्रकार सभा-सम्मेलनकी स्वतन्त्रताका सच्चा सम्मान तो उसीको कहा जा सकता है जब लोग आम तौरपर सम्मिलित होकर बड़ी-बड़ी क्रान्तिकारी योजनाओंपर भी विचार कर सकें; और यदि वास्तवमें कोई ऐसी क्रान्ति हो जाये जिसका उद्देश्य जनमतको और जनमतका प्रतिनिधित्व करनेवाली सरकारको भ्रमित करके अव्यवस्था फैलाना हो, तो उस क्रान्तिको कुचलनेके लिए सरकार सेनाकी बर्बर शक्तिका प्रयोग न करे बल्कि जनमत और नागरिक पुलिसका ही सहारा ले।

भारत सरकार अब लोकमतको जाग्रत करनेवाले और व्यक्त करनेवाले इन तीन शक्तिशाली और महत्त्वके साधनोंको नष्ट करनेका प्रयत्न कर रही है और इस

प्रकार एक बार फिर, परन्तु खुश-किस्मतीसे आखिरी बार, अपने स्वेच्छाचारी और निरंकुश स्वरूपका परिचय दे रही है। स्वराज्य, खिलाफत तथा पंजाबके सम्बन्धमें किये गये अन्यायके निवारणके लिए लड़नेका अर्थ सबसे पहले इस त्रिविध स्वतन्त्रताके लिए लड़ना ही है।

'इंडिपेंडेंट' अब छपकर नहीं निकलता। 'डेमोक्रेट' तो बन्द हो ही गया और अब तलवार लाहौरके 'केसरी' और 'प्रताप' पर उठी है। लालाजी द्वारा शुरू किये गये पत्र, 'वन्देमातरम्' ने तो दो हजारकी जमानत जमा करके फिलहाल वारको टाल दिया है। पहले दो पत्रोंकी एक बार दी हुई जमानत जब्त कर ली गई है और अब उन्हें १०-१० हजारकी जमानतें दाखिल करनेके लिए या पत्र बन्द करनेके लिए दस दिनका नोटिस दिया गया है। मुझे आशा है कि दस-दस हजारकी जमानतें दाखिल करनेसे वे इनकार कर देंगे।

मेरा अनुमान है कि यदि जनता कोई आन्दोलन उठाकर इस रोगके कीटाणुओंको बढ़नेसे न रोकेगी तो जो संयुक्त-प्रान्त और पंजाबमें हो रहा है वही धीरे-धीरे और जगह भी होगा।

पहले तो पूर्वोक्त पत्रोंके सम्पादकोंसे मैं यही आग्रह करूँगा कि वे 'इंडिपेंडेंट' की तरह अपने विचार हाथसे लिखकर ही प्रकाशित करते रहें। मुझे विश्वास है कि जिस सम्पादकके पास कुछ बातें कहने लायक हैं तथा जिसके लेखोंको लोग चावसे पढ़ते हों वह जबतक जेलखानेके बाहर है तबतक उसका मुँह आसानीसे बन्द नहीं रखा जा सकता। और जहाँ वह जेलमें गया कि मानो उसने अपना पूरा सन्देश दे दिया। मंडाले जेलमें बन्दी लोकमान्यका मौन 'केसरी' के स्तम्भोंमें प्रकाशित उनके शब्दोंसे कहीं ज्यादा प्रभावशाली था। और जब वे छूटकर आये तब उनके भाषणों और लेखनीका प्रभाव पहलेकी अपेक्षा, जब कि वे जेल नहीं गये थे, हजार गुना बढ़ गया। उनके जेल जानेके पूर्व उनकी लेखनी और वाणीमें जो प्रभाव था उससे कई गुना उस दिन हो गया था जब वे रिहा हुए थे और अब उनकी मृत्यु हो जानेपर तो लोगोंने उनके जीवन-भरके स्वप्नको साकार करनेका जो पवित्र संकल्प किया है उसके द्वारा बिना भाषण और लेखनीके ही वे अपने पत्रका सम्पादन कर रहे हैं। आज अगर वे जीवित होते और स्वयं ही अपने मन्त्रका प्रचार करते तो भी वे इससे अधिक और कुछ नहीं कर सकते थे। मुझ जैसे आलोचक तो आज भी उनके किसी-न-किसी कथनमें दोष निकालते ही रहते। किन्तु आज सब टीकाएँ बन्द हैं और केवल उनका मन्त्र ही करोड़ों भारतीयोंके हृदयोंमें बैठकर उनपर शासन कर रहा है। इन करोड़ों लोगोंने लोकमान्यके मन्त्रको अपने जीवनमें सिद्ध करने और इस प्रकार उनका स्थायी और जीवन्त स्मारक बनानेका निश्चय कर लिया है।

इसलिए पहले तो सीसेके टाइप और यन्त्र-रूपी मूर्तिको हमें तोड़-फोड़ डालना चाहिए। हमारी कलम ही टाइप बनानेवाली फाउण्डरीका काम देगी और खुशी-खुशी नकल करके प्रतियाँ तैयार करनेवालों के हाथ छापनेके यन्त्रका काम देंगे। हिन्दू धर्म मूर्तिपूजाको वहींतक उचित मानता है जहाँतक कि वह किसी आदर्शकी प्राप्तिमें सहायक हो। परन्तु जब वह मूर्ति ही हमारा आदर्श बन बैठती है तब मूर्तिपूजा एक पापमय

आडम्बर हो जाती है। इसलिए जबतक हम अपने विचारोंका प्रकाशन स्वतन्त्रता-पूर्वक कर सकें तबतक अवश्य यन्त्र और टाइपका उपयोग करें। किन्तु जब एक 'प्रजावत्सल' सरकार, जो बड़ी चिन्ताकुल होकर मुद्रण-यन्त्र और टाइपोंकी अक्षर-योजनापर बड़े गौरसे निगाह गड़ाये बैठी हो और उसपर अंकुश रखे हुए हो, हमारे हाथसे मुद्रण-यन्त्र छीन ले, तो हमें लाचार और दीन नहीं हो जाना चाहिए।

तथापि मैं मानता हूँ कि हस्तलिखित समाचारपत्र एक असाधारण समयके लिए एक असाधारण वीरोचित उपाय ही है। आज यदि हम मुद्रणालय और कम्पोजीटरकी स्टिकके प्रति उदासीन बन जायें तो ऐसा करके हम मुद्रणालयोंके स्वतन्त्र अस्तित्व या उनकी पुनः स्थापनाको ही सुनिश्चित करते हैं।

इसके अतिरिक्त हमें कुछ और भी करना चाहिए। हमें बड़ी-बड़ी समस्याओंको हल करनेका विचार करनेके पहले इसी अधिकारकी पुनः प्राप्तिके लिए सविनय अवज्ञाका उपयोग करना चाहिए। भाषण स्वातन्त्र्य, सभा-सम्मेलनकी स्वतन्त्रता और मुद्रणस्वातन्त्र्य, इन तीनों अधिकारोंकी पुनःस्थापना लगभग पूर्ण स्वराज्यके समान है। इसलिए बम्बईमें पण्डित मालवीयजी आदि प्रमुख देशपुत्रोंके उद्योगसे होनेवाले सम्मेलनसे[1] मैं तो आदरपूर्वक यही आग्रह करूँगा कि वह खिलाफत, पंजाब और स्वराज्यकी बातको एक ओर रखकर इन्हीं बाधाओंको दूर करनेके उपाय सोचनेमें अपनी सारी शक्ति लगाये। इन बातोंमें हम सबका हार्दिक सहयोग सम्भव है। हमें इन छोटी-छोटी परन्तु महत्त्वपूर्ण बातोंका निबटारा पहले कर लेना चाहिए। इनके हल हो जानेपर बड़ी व जटिल समस्याएँ अपने आप हल हो जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-१-१९२२

७५. भेंट: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे

[१४ जनवरी, १९२२के पूर्व]

. . . महात्मा गांधी, जिन्होंने परिषद्में[2] जानेकी अपनी तत्परता व्यक्त की है, ने हमारे प्रतिनिधिको एक भेंटमें बताया कि गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें कांग्रेसने जो स्थिति अपनाई है उससे हटनेका कोई सवाल ही नहीं उठता। उन्होंने यह भी कहा कि ऐसे किसी सम्मेलनकी उपयुक्त पूर्व पीठिका तैयार करनेके लिए कांग्रेस कार्य-समितिमें मैंने जो शर्तें[3] निर्धारित की थीं उन्हें सरकारको पूरा करना होगा; तभी कांग्रेससे इस योजनासे सहमत होनेकी आशा की जा सकती है। जहाँतक मेरा

१. १४ जनवरीको बम्बईमें।

२. सभी दलोंके नेताओंकी परिषद्, जो १४ जनवरी, १९२२ को बम्बईमें होनेवाली थी।

३. देखिए "भाषण: विषय-समितिकी बैठकमें", २८-१२-१९२१।

सम्बन्ध है, यह निमन्त्रण स्वीकार करनेके पीछे मेरा मंशा यह देखना है कि पिछले हफ्ते मैंने 'यंग इंडिया'के पाठकोंके सामने जो एक छोटा-सा सवाल[1] पेश किया था उसपर अपने नरमदलीय मित्रोंका सहयोग मुझे प्राप्त हो सकता है या नहीं — मेरा मतलब भाषण और संगठन आदि बनानेकी स्वतन्त्रताके सवालसे है। मैं तो आशा करता हूँ कि इस सवालपर अपने नरमदलीय मित्रोंको कांग्रेसके विचारोंसे सहमत कर सकना मेरे लिए सम्भव हो सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-१-१९२२

७६. भाषण : नेताओंकी परिषद्में[2]

१४ जनवरी, १९२२

परिषद्की कार्यवाहीका समारम्भ करते हुए पण्डित मदनमोहन मालवीयने उन परिस्थितियोंपर प्रकाश डाला जिनमें परिषद् बुलाई गई थी और उसका उद्देश्य भी बताया। इसके बाद उन्होंने सर शंकरन् नायरसे[3] अध्यक्षका आसन ग्रहण करनेका अनुरोध किया। सर शंकरन् नायरने आसन ग्रहण करते हुए श्री मुहम्मद अली जिन्नासे[4] सम्मेलनके विचारार्थ आयोजकोंकी ओरसे प्रस्तावोंका मसविदा पेश करनेको कहा। श्री जिन्नाने प्रस्ताव पेश किये। उसके बाद अध्यक्षने श्री गांधीसे प्रस्तावोंपर बहस शुरू करनेको कहा।

श्री गांधीने सभी दलोंके नेताओंको विचार-विमर्शके लिए एक मंचपर बुलानेके लिए परिषद्के आयोजकोंको धन्यवाद देते हुए कहा कि मैं तो अपने नरमदलीय भाइयों-के सामने अपना हृदय खोलकर रख देनेको आकुल हो रहा हूँ। जहाँतक खुद मेरा सवाल है, मैं तो बिना किसी शर्तके किसी भी परिषद्में शामिल होनेको तैयार हूँ; लेकिन कांग्रेस और असहयोगियोंकी बात और है। इसके बाद श्री गांधीने किसी भी गोलमेज परिषद्में असहयोगियोंके शामिल होनेकी शर्तोंका उल्लेख किया, जिनमें एक यह भी थी कि दण्डविधि संशोधन अधिनियम तथा राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमके अन्त-र्गत जेल भेजे गये लोगोंके अतिरिक्त अन्य राजनीतिक कैदियोंको भी रिहा किया जाये। उन्होंने कहा कि सरकार द्वारा यह शर्त पूरी किये जानेपर ही असहयोगी ऐसे किसी सम्मेलनमें शामिल हो सकते हैं। किसीको, यहाँ तक कि जनरल डायरको भी, नीचा

१. देखिए "जिस समस्याके तत्काल हलकी जरूरत है", ५-१-१९२२।

२. यह परिषद् बम्बईमें हुई थी।

३. १८५७-१९३४; कांग्रेसके अध्यक्ष, १८९७; मद्रास उच्च न्यायालयके न्यायाधीश; १९१५ में वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य।

४. १८७६-१९४८; मुसलमान नेता; पाकिस्तानके संस्थापक और उसके प्रथम गवर्नर जनरल।

दिखाया जाये या अपमानित किया जाये मैं इसका आग्रह नहीं करता। मैं जो चाहता हूँ वह सिर्फ यह है कि सरकार परिषद्में सच्ची भावनासे शामिल हो, पश्चात्तापकी इस भावनाके साथ कि उसने जो-कुछ बुरा किया है, उसका निराकरण करेगी।[1] उन्होंने बहुत सारी वारदातोंका उल्लेख किया, जिनके कारण देशमें असन्तोष फैला है; और फिर कहा कि जबतक इन कारणोंको दूर नहीं किया जाता और जो-कुछ बुरा किया गया है उसका निराकरण नहीं होता तबतक गोलमेज परिषद् शान्ति और मेलजोलके वांछनीय वातावरणमें नहीं हो सकती। परिषद्का निमन्त्रण स्वीकार करनेमें मेरा और मेरे साथी असहयोगियोंका मंशा परिषद्के उद्देश्यके प्रति अपनी सहानुभूति जता देना-भर था। उससे आगे तो मैं यह समझता हूँ कि अगर असहयोगी लोग परिषद्के प्रस्तावोंमें शरीक न हों तो यह यहाँ उपस्थित सभी दलोंके लोगोंके प्रति न्याय ही होगा, हालाँकि मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि परिषद्की कार्यवाहीमें मैं पूरा

१. यहाँ १६-१-१९२२ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में इस प्रकार कहा गया है: "महात्माजीने सरकारके अपराधोंकी लम्बी सूची बताई। उन्होंने कहा कि इन अपराधोंके कारण स्थिति ऐसी हो गई है जो मार्शल लॉसे भी बदतर है। उदाहरणस्वरूप उन्होंने दाण्डिक पुलिस (प्यूनिटिव पुलिस) का उल्लेख किया जो सीतामढ़ीपर थोप दी गई है। उन्होंने सम्मेलनमें उपस्थित लोगोंसे पूछा कि क्या आप जानते हैं कि दाण्डिक पुलिस तैनात करनेका मतलब क्या होता है। जबतक सरकारकी स्पष्ट सहमतिसे ऐसी घटनाएँ होती रहेंगी तबतक किसी सम्मेलनकी बात करना व्यर्थ है। उन्होंने आगे खेदपूर्वक यह स्वीकार किया कि कुछ असहयोगियों-ने हिंसासे काम लिया है, और उन्होंने उन सबके ऐसे आचरणके लिए क्षमा माँगी। लेकिन साथ ही उनका खयाल था कि ऐसी घटनाएँ बहुत कम और यदा-कदा ही हुई हैं, और इन घटनाओंको छोड़कर असहयोगकी प्रगति काफी सन्तोषजनक है, तथा इसके जो परिणाम सामने आये हैं उनसे निराश होनेका कोई कारण नहीं दिखाई देता। अपने साथी कार्यकर्त्ताओं द्वारा स्वेच्छापूर्वक और खुशी-खुशी उठाये गये कष्टोंके सम्बन्धमें महात्माजीने बताया कि इस तरह कष्ट उठानेवालों में से किसी भी व्यक्तिने कोई शिकायत नहीं की है। मौलाना शौकत अलीका वजन कारावासके दौरान ३० पौंड कम हो गया है, लेकिन वे तो अपना वजन घटाना ही चाहते थे। डा० किचलू वजन बढ़ाना चाहते थे और उनका वजन बढ़ा है। पर पण्डित मोतीलाल नेहरूको जेलमें वह विश्राम मिला है जिसकी इच्छा वे जेलसे बाहर रहकर कर तो रहे थे लेकिन मिल नहीं पा रहा था। लाला लाजपतराय अपने समयका सदुपयोग राष्ट्रीय स्कूलोंके लिए एक पाठ्य-पुस्तक तैयार करनेमें कर रहे हैं। यहाँ महात्माजीने अपने भाषणमें विनोदका पुट देते हुए कहा कि इस प्रकार उनके लिए तो जेल-जीवनसे दुःखी होनेका कोई कारण ही नहीं है।

"महात्माजीने आगे बताया कि असहयोगियोंने जो सम्मेलनका निमंत्रण स्वीकार किया उसमें उनकी इच्छा मात्र यह थी कि संयोजकोंके प्रति वे अपनी सहानुभूति सिद्ध कर दें, लेकिन वे इससे आगे नहीं जाना चाहते। इस सम्मेलन द्वारा पास किये जानेवाले किसी भी प्रस्तावमें शरीक नहीं होना चाहते। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि वे उपयुक्त वातावरणमें एक सम्मानजनक समझौता करानेके प्रयत्नोंमें भी शामिल होना नहीं चाहते। असहयोगियों और अन्य दलोंके बीच एक दीवार है। यह दीवार तबतक नहीं टूट सकती जबतक कि असहयोगी लोग अपना एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त न छोड़ दें या दूसरे दलवाले असहयोगियोंमें शामिल न हो जायें। उनका लक्ष्य कोई सम्मेलन वगैरह नहीं बल्कि यह है कि सरकार यह घोषित करे कि उसे सचमुच अपने कियेपर पश्चात्ताप है, और जबतक सरकार सही रास्तेपर नहीं आती तबतक कोई अनुकूल वातावरण तैयार नहीं हो सकता।..."

सहयोग करूँगा और उचित निष्कर्षोंपर पहुँचनेमें अपने दल तथा खासकर कांग्रेस कार्य-समितिकी ओरसे पूरी मदद करूँगा।

इसके बाद अध्यक्षने लोगोंसे आम बहस-मुबाहसेके लिए अनुरोध किया, जिसमें सर्वश्री एस० आर० बोमनजी, जे० ए० वाडिया, जे० बी० पेटिट, एस० श्रीनिवास आयंगार, शेषगिरि अय्यर, सत्यमूर्ति, गोकरननाथ मिश्र तथा कुँजरूने भाग लिया।

उत्तरमें श्री गांधीने बताया कि परिषद्के प्रस्तावोंमें असहयोगी लोग क्यों नहीं शरीक हुए और उनका ऐसा करना किस तरह वांछनीय था। उन्होंने नरम दलवालों और इंडिपेंडेंटोंसे अनुरोध किया कि वे सरकार और असहयोगियोंके बीच मध्यस्थका काम करें, और कहा कि परिषद्के कामको सफल बनानेके लिए असहयोगी लोग हर तरहकी सहायता देनेको तैयार हैं।

बहसके दौरान श्री गांधी असहयोगियोंकी ओरसे एक बार और बोले। उन्होंने असहयोगियोंके नेताकी हैसियतसे परिषद् द्वारा पास किये गये प्रस्तावोंके सम्बन्धमें अपनी स्थिति स्पष्ट की।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-१-१९२२

७७. गुजरातकी बहनें

जब श्रीमती बासन्तीदेवी दास, उर्मिलादेवी सेन और सुनीतिदेवी पकड़ी गईं[2] तब अहमदाबादकी कुछ-एक बहनोंने निश्चय किया कि स्त्रियोंके एक स्वयंसेवक दलकी स्थापना की जाये और जेलयात्रा करनेका मार्ग ढूँढ़ा जाये। इस निश्चयके फलस्वरूप बहनोंके सम्मुख प्रतिज्ञापत्र रखे गये। पहले विचार यह था कि पचास नाम दर्ज होनेके बाद सूची प्रकाशित की जाये। यह बात कांग्रेस अधिवेशन होनेसे पहलेकी है।

इस बीच बंगाली बहनें तो छोड़ दी गईं। सरकारमें उन्हें रोक रखनेकी ताकत न थी। इसलिए अहमदाबादकी सूचीको प्रकाशित करनेकी बात मुल्तवी कर दी गई। तथापि स्त्रियोंका हस्ताक्षर करना तो जारी ही रहा। फलस्वरूप लगभग १४० स्त्रियों-ने हस्ताक्षर किये हैं। वे अब भी हस्ताक्षर कर रही हैं। इनमें से तीन बहनोंको जेल-यात्राका कुछ अनुभव है।

परन्तु हस्ताक्षर करनेसे क्या होगा? इन हस्ताक्षरोंके पीछे जो निश्चय है वह अमूल्य है। फिर जहाँ हस्ताक्षर करनेकी कीमत है वहाँ हस्ताक्षर करानेवालोंकी जवाबदेही बढ़ जाती है और इस विचारके प्रस्तोताके रूपमें मेरी जवाबदेही सबसे अधिक है।

१. १६-१-१९२२ के बॉम्बे क्रॉनिकलके अनुसार "परिषद्के समाप्त होनेके पहले [१५ जनवरीको] परिषद्के सम्मुख पेश किये जानेवाले प्रस्तावोंकी शर्तें तय करनेके लिए एक समिति नियुक्त की गई।"

२. देखिए "महिलाओंका योग", १५-१२-१९२२।

यदि एक सरकारको हटाकर दूसरी सरकारको प्रतिष्ठापित करनेकी बात होती तो मैं स्त्रीवर्गको आगे आनेकी सलाह कभी न देता। वैसे काममें बहुत गन्दगी है, यह मैं पहले ही देख चुका हूँ। लेकिन इस लड़ाईके अन्तमें तो रामराज्य स्थापित होनेकी आशा है। इस लड़ाईके अन्तमें गरीबोंको आश्रय मिलनेकी आशा है। इस लड़ाईके अन्तमें स्त्रियोंके सुरक्षित होनेकी उम्मीद है। इस लड़ाईके अन्तमें हिन्दुस्तानमें भूखसे पीड़ितोंकी भूख दूर किये जानेकी उम्मीद है। इस लड़ाईके अन्तमें चरखेका पुनरुद्धार होनेकी आशा है। इस लड़ाईके अन्तमें कौमोंके बीच व्याप्त पारस्परिक द्वेषरूपी विषके कम होनेकी आशा है। इस लड़ाईके अन्तमें अस्पृश्य मानी जानेवाली जातियोंकी अस्पृश्यताके मिटनेपर उन्हें भी भाईके समान माने जानेकी उम्मीद है। इस लड़ाईके अन्तमें शराबखानों और शराब पीनेकी आदतके समाप्त होनेकी आशा है। इसके अन्तमें खिलाफतकी और गायकी रक्षा होनेकी उम्मीद है। इस लड़ाईके अन्तमें पंजाबके घाव भरनेकी उम्मीद है। इसके अन्तमें प्राचीन सभ्यताको अपना स्थान मिलनेकी तथा प्रत्येक घरमें चूल्हेके समान ही कामधेनु-रूप चरखेके दाखिल किये जानेकी उम्मीद है।

जिस प्रवृत्तिमें इतनी शुभ आशाएँ समाहित हैं उस प्रवृत्तिसे स्त्रियाँ भला कैसे विमुख रह सकती हैं। इसलिए मैं स्त्रियोंसे आगे आकर अपना भाग अदा करनेकी विनती कर रहा हूँ। इन्हीं आशाओंके फलस्वरूप मैं हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंमें उत्साह जगा देखता हूँ।

तथापि इस उत्साहसे भ्रमित होकर क्या मुझे स्त्रियोंको जेल जानेकी भी सलाह देनी चाहिए। मुझे लगता है कि मैं इसके अलावा कुछ और कर ही नहीं सकता। यदि मैं इसे उत्तेजन न दूँ तो हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंके प्रति मेरे मनमें जो श्रद्धाभाव है उसपर लांछन लगता है। स्त्रियोंके बिना यज्ञ अधूरा रहता है। निर्भयताकी जितनी जरूरत पुरुषोंको है उतनी ही जरूरत स्त्रियोंको भी है। इसलिए मैंने सोचा कि स्त्रियाँ भले ही अपना नाम दर्ज करवाकर जेल जानेकी बातकी और जेल जानेके खयालकी आदत डालें। इसके अतिरिक्त मैंने यह भी सोचा कि यदि स्त्रियोंको जेलके विचारसे अकुलाहट न हो तो पुरुषोंके जेल जानेका मार्ग सुगम हो जायेगा।

लेकिन इस बारेमें जैसे मेरी जवाबदेही है वैसे ही उन बहनोंकी भी जवाबदेही है जिन्होंने इस मामलेमें पहल की है। नाम दर्ज करवा लिया है इसलिए अब उन बहनोंको काम करनेमें जुट जाना होगा। ये बहनें शराबकी दूकानोंपर धरना दे सकती हैं। उनके धरना देनेसे शराब पीनेवाले अवश्य शर्मिन्दा होंगे। बहनें वैसा काम करना चाहे तो उन्हें अब्बास साहबकी तरह गलेमें तख्तियाँ लटकानी पड़ेंगी।[1] उन्हें शराब पीनेवालों के घरोंको ढूँढ़कर वहाँ उनसे प्रार्थना करनेके लिए जाना पड़ेगा। बहनोंको मेरी सबसे पहली सलाह तो यह है कि वे फिलहाल शराबकी दूकानोंपर धरना देनेके विचारको स्थगित रखें और खादी बेचनेके लिए निकल पड़ें। शुद्ध खादी सब खादीकी दूकानोंमें नहीं मिलती। इसके अतिरिक्त जिन्होंने स्वदेशीका विचार नहीं

१. देखिए अगले पृष्ठपर उप-शीर्षक "नडियादका प्रयत्न"।

लिखा है वे शुद्ध खादी लेनेके लिए दूकानोंपर नहीं जाते। उन्हें तो खादी उनके घर जाकर दी जायेगी तभी वे उसे पहनेंगे। यदि बहनोंने अपने साथ खादी रखी तो वे जिन्होंने विदेशी अथवा मिलके बने कपड़े पहने हों उन्हें खादी दिखाकर ललचा सकती हैं। उन्हें घर-घर घूमकर खादी बेचनी चाहिए। वे खादीकी टोपियाँ भी अपने साथ रखें और बेचें। ऐसा करनेसे वे निर्भय बनेंगी तथा सरकार उन्हें पकड़नेके लिए ललचायेगी। जबतक स्त्रियोंके कामका असर सरकारके महसूलपर नहीं पड़ता अथवा वे दूसरी तरहसे लोगोंके धन्धे वृद्धि करनेमें सहायक नहीं होतीं तबतक सरकार उनको पकड़नेवाली नहीं है। और जब स्त्रियोंमें संगठन-शक्ति आदि आ जायेगी तभी उनका जेलमें जानेका विचार अधिक उचित होगा।

मुझे यह भी उम्मीद है कि बहनोंने जो प्रतिज्ञा ली है वे उसका पालन पूरी तरह करेंगी। मेरा खयाल है कि वे शान्ति रखेंगी तथा हिन्दु और मुसलमान, दोनोंसे प्रेम करेंगी। लेकिन क्या वे घरोंमें भी शुद्ध खादी ही पहनेंगी? क्या वे भंगियों, ढेढों और अन्य अस्पृश्योंको भाईके समान ही मानेंगी? क्या उन्हें जूठा अथवा गन्दा भोजन देना बन्द करेंगी? वे उनके स्पर्शसे अपनेको अपवित्र तो नहीं मानेंगी? जिन बहनोंने इस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर किये हैं उनमें सभी वर्णोंकी बहनें हैं। उतनी बहनें अगर विवेकपूर्वक अपनी प्रतिज्ञाका पालन करेंगी तो उनकी संख्या १४० से १,४०० और १,४०० से १४,००,००० होनेमें देर नहीं लगेगी।

मैं तो ऐसी आशा और ऐसी श्रद्धासे ही इन बहनोंको पवित्र नाम देता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-१-१९२२

७८. टिप्पणियाँ

नडियादका प्रयत्न

नडियादमें अब्बास साहब और उनकी टुकड़ीने जेल जानेका जो प्रयत्न किया था वह व्यर्थ हो गया लगता है। उन्होंने गलेमें सूचना-पट्ट डाले और प्रदर्शन बढ़िया रहा सही लेकिन वे जेल तो नहीं जा सके। इससे उन्हें निराशा हुई है। किन्तु सत्याग्रही तो कभी निराश होता नहीं। वह तो सदा प्रयत्न करता जाता है और ईश्वरमें आस्था बनाये रखता है। देनेवाला तो ईश्वर ही है। वह अपनी इच्छाके अनुसार देता है। उसकी इच्छामें मनमानी नहीं होती। वह कभी भूल नहीं करता। उसकी इच्छामें तो शुद्ध न्याय ही होता है। इसका अर्थ यह है कि हमारे प्रयत्नको देखते हुए जो-कुछ उचित होता है वह न्यायाधीश हमें उतना ही देता रहता है।

इसका एक फल तो हुआ है। अब्बास साहब गलेमें सूचना-पट्ट डालकर घूमे; यह फल कोई छोटा फल नहीं है। कहाँ वह जज जो दूसरोंको डाँटता-डपटता था और कहाँ आज यह अवकाश-प्राप्त जज और उसके साथी जो गलेमें सूचना-पट्ट

बाँधकर यह निश्चय करके निकले हैं कि कोई सिपाही उनको धक्का मारे तो उसका धक्का चुपचाप खा लें।

इसका विद्यार्थियोंपर जो प्रभाव पड़ेगा वह इसका अतिरिक्त फल है। जो विद्यार्थी इतनेपर भी नहीं समझ पायेंगे वे बादमें लज्जित होंगे। उनके माँ-बाप भी विचार करेंगे। जो सरकार अदालतका हुक्म लिये बिना दिन-दहाड़े हमारे घरोंके ताले तोड़ती है उसकी शालाओंमें हमारे बच्चे जा ही कैसे सकते हैं? इसका अर्थ तो यही हुआ कि वे पढ़ेंगे तो सही, किन्तु गुनेंगे नहीं। पढ़नेकी यह फीस तो बहुत कड़ी रही। हमारा सम्मान जाये और हमारे स्वाभिमानका हनन हो, इतनी बड़ी कीमत देकर कौन पढ़ेगा?

हम जो धरना देनेके लिए निकले हैं वह शिष्टतापूर्वक ही। ऐसे शिष्टतापूर्ण धरनेसे कुछ-न-कुछ लाभ तो होगा ही। जो वस्तु आज या सदाके लिए त्याज्य है हम उसीके विरुद्ध धरना देते हैं। इसलिए यह धरना नीतिसंगत और उचित है। जबतक हम धरनेमें जोर-जबरदस्ती नहीं करते तबतक हमें यह अधिकार है कि हम किसी भी निन्दनीय वस्तुके विरुद्ध धरना दें। किन्तु हम ऐसी सभी वस्तुओंके विरुद्ध धरना देनेके इस अधिकारका उपयोग एक साथ नहीं कर सकते। जिस वस्तुके विषयमें कोई बड़ा मतभेद होता है वहाँ धरना देना एक प्रकारकी जबरदस्ती है। कोई चीज हमें पसन्द है किन्तु दूसरेको पसन्द नहीं, ऐसी चीजके विरुद्ध कोई दूसरा मनुष्य धरना दे दे तो क्या हमें वह बुरा नहीं लगेगा? इसलिए सामान्य दृष्टिसे देखें तो धरना तो उसी वस्तुके विरुद्ध दिया जाना चाहिए जिसके विरुद्ध पूरा लोकमत बन गया हो। मैं यह तो मानता हूँ कि नडियादका लोकमत सरकारी शालाओंके विरुद्ध है। लेकिन जहाँ सरकारी शालाएँ खाली नहीं होतीं वहाँ यही मानना पड़ता है कि माँ-बाप इसके अनुकूल नहीं हैं और जहाँ माँ-बाप अनुकूल न हों वहाँ यह कैसे माना जा सकता है कि लोग असहयोगके सम्बन्धमें एकमत हैं?

शिक्षणकी जरूरत तो है ही। अक्षर-ज्ञानकी जरूरत है; किन्तु अक्षर-ज्ञान ही तो सब-कुछ नहीं है। वह साध्य नहीं है; वह तो साधन-मात्र है। जिसमें समझ है उसे अक्षर-ज्ञान न हो तो भी क्या हुआ? दुनियाके महान् धर्म-शिक्षक और सुधारक सभी पढ़े-लिखे न थे। पैगम्बर ईसामसीह और मुहम्मद क्या पढ़े-लिखे थे? फिर भी उन्होंने जो ज्ञान दिया है और मानव-जातिकी जो सेवा की है, महान् तत्त्ववेत्ताओं और अर्थशास्त्रियोंमें उतना ज्ञान नहीं है और उन्होंने उतनी सेवा नहीं की है एवं उनके लिए यह भविष्यमें भी सम्भव नहीं है। बोअर लोगोंके राष्ट्रपति क्रूगरको, मुश्किलसे हस्ताक्षर करने लायक ही पढ़ना-लिखना आता था। अफगानिस्तानके भूतपूर्व अमीर इतने ही पढ़े-लिखे थे; किन्तु इन दोनोंकी समझ-शक्ति अपार थी।

कोई यह शंका कर सकता है कि मेरी यह बात तो असाधारण पुरुषोंपर लागू होती है। यह बात ठीक है; किन्तु मैंने इससे यह बताया है कि पढ़े-लिखे बिना काम नहीं चल सकता, ऐसी बात नहीं है। दुनियामें अधिकांश लोग आज भी पढ़े-लिखे नहीं हैं, किन्तु वे मूर्ख नहीं हैं। हम उनकी शक्तिसे जीवन-निर्वाह करते हैं। उनके सामान्य ज्ञानसे ही यह संसार चल सकता है। यह सब कहनेका तात्पर्य इतना

ही है कि हमारे बच्चे इस संघर्ष-कालमें पढ़े बिना रहें इसमें उनका और राष्ट्रका लाभ है। जिस मकानमें विषैली हवा उत्पन्न हो गई हो उसे हम, जबतक वह हवा साफ न हो जाये तबतक के लिए छोड़ देते हैं। जैसे हमारे उस काममें बुद्धिमानी है वैसे ही इन सरकारी शालाओंको छोड़नेमें बुद्धिमानी है और लाभ भी है। जो माँ-बाप इतना भी नहीं समझ सकते, यह मानना चाहिए कि उनमें स्वराज्य लेनेकी लगन पैदा नहीं हुई है। सरकारने नडियादकी नगरपालिकाओंकी शालाओंपर जबरदस्ती कब्जा कर लिया है। यदि हम इतनेपर भी अपने बच्चोंको सरकारी शालाओंमें भेजते रहेंगे तो माना जायेगा कि हम ऐसे ही बरतावके योग्य हैं। इसलिए अब्बास साहब और उनके साथियोंने अपने गलेमें सूचना-पट्ट डालकर घूमना शुरू किया है यह ठीक ही किया है।

लोगोंका तेज

सूरत, अहमदाबाद और नडियाद इन तीनों शहरोंके लोगोंका तेज देखा जा रहा है। इन तीनों शहरोंकी नगरपालिकाओंने शिक्षाके[1] सम्बन्धमें सरकारसे असहयोग कर दिया है। तीनोंमें लोक निर्वाचित प्रतिनिधियोंने बहुमतसे नगरपालिकाओंकी मार्फत दी जानेवाली शिक्षाका राष्ट्रीयकरण कर दिया है। इन शालाओंके मकानोंको सरकारने जब्त कर लिया है। यह बात सहन करने लायक नहीं है।

सरकारकी इस लूटपाटको व्यर्थ करना लोगोंके ही हाथमें है। यदि माँ-बाप अपने बच्चोंको सरकारके नामपर चलाये जानेवाले स्कूलोंमें न भेजें और शिक्षक उनमें काम करनेके लिए न जायें तो सरकारने ताले तोड़कर जिन मकानोंपर कब्जा कर लिया है वे मकान खाली पड़े रहेंगे। और उसने गैर-कानूनी तौरपर उनका जो रुपया जब्त कर लिया है वह हमको वापिस मिल जायेगा। हमें सरकारकी इस लूटपाटसे डरना नहीं चाहिए और निर्भय रहते हुए यह मानना चाहिए कि हमें ये मकान अवश्य वापिस मिलेंगे और यह रुपया भी वापिस मिलेगा।

किन्तु तबतक बच्चे क्या करें? यदि लोगोंमें समझ हो तो हम उनके पंचायती स्थानोंका उपयोग बच्चोंको शिक्षा देनेके लिए कर सकते हैं; किन्तु यदि ये स्थान न मिल सकें तो हमें बच्चोंको खुलेमें ही पढ़ाना-लिखाना चाहिए। हमें उनसे सूत कतवाना चाहिए, उनसे भजन गवाने चाहिए और शारीरिक व्यायाम करवाना चाहिए। कांग्रेसने जो प्रस्ताव[2] पास किया है उसके अनुसार हमारे शिक्षकोंको तो जेल जानेकी तैयारी करनी है; इसलिए फिलहाल हमारी शिक्षाका रूप ऐसा होना चाहिए कि कमसे-कम शिक्षकोंसे हमारा काम चल सके। मुझे तो प्रौढ़ स्त्रियोंके हाथमें अपने बच्चोंको सौंपनेमें भी कोई संकोच नहीं होगा। वे चरखे तो चलायेंगी ही। साथ ही वे

१. देखिए "नगरपालिकाओंपर विपत्ति", १५-१२-१९२१ और "टिप्पणियाँ", ८-१-१९२२ का उप-शीर्षक "गुजरातके लिए स्वर्ण अवसर"।

२. दिसम्बर १९२१ में अहमदाबादमें स्वीकृत। देखिए "भाषण: अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें –१", २८-१२-१९२१।

बच्चोंकी देखरेख भी करेंगी। यदि हमारे बच्चोंने विनय और शिष्टता सीखी होगी तो वे इन स्त्रियोंका बहुत सम्मान करेंगे और अधिक विनयशील बनेंगे। इससे इन स्त्रियोंको भी सेवा करनेका अवसर मिलेगा।

स्त्रियोंका भाग

इस संघर्षमें स्त्रियोंको भी पूरा भाग लेना चाहिए। स्त्रियोंने स्वयंसेविका बनकर कांग्रेस अधिवेशनको सफल बनाया था। कांग्रेसके जीवनमें यह पहला ही प्रयोग था। गुजरातकी बहनोंको यह सौभाग्य प्राप्त हुआ, यह गुजरातके लिए बहुत प्रसन्नताकी बात है। यह प्रयोग पूर्ण सफल रहा और सब लोगोंपर इसका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। यदि स्त्रियाँ सभी निरापद सेवा-कार्योंमें भाग लेने लगें तो हमारी कार्यशक्ति दूनी हो जाये।

हम यह भी जानते हैं कि सरकार स्त्रियोंको यकायक पकड़ेगी नहीं। पुरुषोंको तो अपनेको गिरफ्तार कराना ही है। इसलिए स्त्रियोंको पुरुषोंके बहुत सारे काम संभाल लेने होंगे।

निर्भयताकी आवश्यकता

इसके लिए केवल निर्भयताकी आवश्यकता है। जहाँ पवित्रता है वहीं निर्भयता हो सकती है। हमारे मन इतने मलिन हो गये हैं कि हमें स्त्रियोंकी पवित्रताके विषयमें सदा भय ही बना रहता है। ऐसा करके हम गोया सारी दुनियाको बुरा बताते हैं। हम स्त्रीको इतना कमजोर समझते हैं मानो वह अपनी पवित्रताकी रक्षा करनेके योग्य ही न हो और पुरुषोंको इतना पतित मानते हैं मानो वे परस्त्रीको सदा केवल निर्लज्ज दृष्टिसे ही देखते हों। ये दोनों खयाल हमें शर्मिन्दा करनेवाले हैं। और यदि हम स्त्री-पुरुष सभी ऐसे ही हों तो हमें मानना होगा कि हम स्वराज्यके लिए बिलकुल अयोग्य हैं। हमें यह मान लेनेका कोई कारण नहीं है कि अंग्रेज स्त्री-पुरुष मर्यादाकी रक्षा करते ही नहीं। अंग्रेज महिलाएँ अनेक सेवा-कार्य करती हैं। इसके विपरीत यदि हमें दो-एक नर्सोंकी जरूरत होती है तो हमारे लिए उनको प्राप्त करना भी कठिन हो जाता है।

यदि स्वराज्य सचमुच ही नजदीक आ रहा हो तो स्त्रियाँ अपनी पवित्रताकी रक्षा करनेके लिए दिनपर-दिन अधिकाधिक तैयार होती जायेंगी। उनके मनसे डर दूर होना चाहिए। यह खयाल गलत है कि स्त्रियाँ अपनी पवित्रताकी रक्षा करनेके योग्य नहीं हैं। यह अनुभवके भी विरुद्ध है और स्त्री-पुरुष दोनोंके लिए लज्जास्पद है। हाँ, ऐसे नरपशु संसारमें अवश्य हैं जो बलात्कार करते हैं। परन्तु जिस स्त्रीको अपनी पवित्रताका खयाल है उसपर बलात्कार करनेवाला पुरुष आजतक न तो पैदा हुआ है और न होगा ही। हाँ, यह बात सच है कि प्रत्येक स्त्रीमें इतना योगबल, इतनी पवित्रता नहीं है। किन्तु इस स्थितिके कारण भी हम लोग ही हैं। हम आरम्भसे ही लड़कियोंको ऐसी तालीम देते हैं जिससे वे अपने सतीत्वकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं होतीं। और अन्तमें जब लड़की बड़ी होकर नारी बनती है तब उसके

मनपर इस शिक्षाका अथवा कुशिक्षाका असर इतना गहरा होता है कि वह यही मानती है कि स्त्री तो हर पुरुषके सम्मुख अपंग ही है। परन्तु यदि सत्य और पवित्रता जैसी कोई वस्तु दुनियामें हो तो मैं निःशंक होकर कहना चाहता हूँ कि स्त्रीमें अपनी रक्षा करनेकी पर्याप्त शक्ति मौजूद है। जो स्त्री दुःखके समय भगवान्को याद करेगी उसकी रक्षा वह अवश्य करेगा। जो स्त्री मरनेके लिए तैयार है, उसे कोई दुष्ट एक शब्द भी कह सकता है? उसकी आँखोंमें ही इतना तेज होगा कि उसको देखकर सामने खड़े व्यभिचारी पुरुषके होश गुम हो जायेंगे।

मरनेकी शक्ति तो सबमें है; परन्तु उसके प्रयोगकी इच्छा सबको नहीं होती। जब कोई पुरुष किसी स्त्रीको अपवित्र करनेका प्रयत्न करता है और पशु बनकर विषयासक्त होने लगता है तब पुरुष और स्त्री दोनोंको ही आत्मघात कर लेनेका हक है—इतना ही नहीं, तब आत्मघात करना दोनोंका कर्त्तव्य है। जिसकी आत्मामें बल होता है वह आत्महत्या आसानीसे कर सकता है। कोई भी, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, चाहे कितने ही बलवानके पंजेमें क्यों न फँसा हो, अपनी जीभको काटकर अथवा हाथ खुले हों तो अपना गला दबाकर प्राण त्याग कर सकता है। वह मरनेके लिए तैयार हो तो चाहे कितना ही जकड़ दिया जाये और चाहे पेड़से बाँध दिया जाये, फिर भी यदि हड्डियाँ टूट जानेकी परवाह न करे तो उस बन्धनसे छूट सकता है। बलवान दुर्बलको अपने वशमें इसलिए कर लेता है कि दुर्बलको अपने प्राण प्यारे होते हैं। इससे वह मरनेके लिए आवश्यक बल नहीं दिखाता। हम गुड़पर चिपके हुए चींटेको जब उससे अलग करते हैं तब उसकी टाँगें टूट जाती हैं; परन्तु वह हमारे बलके वशमें नहीं होता। बालक अपने माँ-बापसे अपना हाथ छुड़ानेके लिए जब बहुत जोर लगाता है तब माँ-बाप उसका हाथ छोड़ देते हैं, क्योंकि यदि वे हाथ न छोड़ें तो उसका हाथ टूटनेका डर रहता है। प्रत्येक मनुष्यमें अपने किसी भी अंगको तोड़ लेनेकी शक्ति होती है; किन्तु वह उससे उत्पन्न कष्ट अर्थात् मृत्युके कष्टको सहन करनेके लिए तैयार नहीं होता। परन्तु ऐसी तैयारी करना तो प्रत्येक स्वराज्य-वादीका, प्रत्येक स्त्री-पुरुषका धर्म है। यदि हम ऐसी शक्तिके लिए परमात्मासे रोज प्रार्थना करें तो वह अवश्य मिलती है। प्रत्येक बहनसे मेरी प्रार्थना है कि वह प्रति दिन प्रातःकाल उठकर यह निश्चय करे—"ईश्वर तू मुझे पवित्र बनाये रख। तू मुझे अपनी पवित्रताकी रक्षाके लिए आवश्यक बल दे और मुझे ऐसी शक्ति दे जिससे मैं प्राण-त्याग करके भी अपनी पवित्रताकी रक्षा कर सकूँ। तेरे समान रक्षकके होते हुए मुझे भय किसका है?" सद्भावसे की गई ऐसी प्रार्थना प्रत्येक स्त्रीकी रक्षा करेगी।

किन्तु पुरुषके बारेमें क्या?

उक्त विचारोंकी चर्चा करते हुए पुरुष होनेके कारण मुझे लज्जाका अनुभव होता है। पुरुष जो अपनी माताके पेटसे जन्मा है, जिसे उसने नौ महीनेतक अपनी कोखमें रखा है, जिसके लिए उसने इतना कष्ट पाया है, जिसे सुलाकर वह स्वयं सोई है और जिसे खिलाकर उसने खाना खाया है, क्या वह पुरुष उसी स्त्री जातिका इतना द्रोही बनकर पैदा हुआ है कि उससे स्त्री जाति सदा डरती रहे? स्त्री

वाघ-जैसे हिंस्र पशुओंसे नहीं डरती और उनसे डरकर नहीं भागती किन्तु वह पुरुषके व्यभिचारसे डरती है और भागती है। मैं स्त्रियोंसे तो इस बारेमें प्रयत्नशील रहनेका निवेदन कर चुका हूँ। अब मैं पुरुषोंसे भी निवेदन करना चाहता हूँ। क्या इस मातृजातिको निर्भय करना पुरुषका कर्त्तव्य नहीं है? क्या वह सदा यह प्रार्थना न करेगा: "हे प्रभु, यदि मैं पर-स्त्रीपर कुदृष्टि डालूँ तो उससे पहले मेरे प्राण ले लेना। जब मैं व्यभिचारके मार्गपर पग रखूँ, तू मुझे प्राण त्यागनेकी शक्ति देना। तू मेरे मनसे सब विकारोंको दूर करना जिससे कोई भी स्त्री मुझसे न डरे और मुझे अपना भाई मानकर अपनेको सुरक्षित समझे।" मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि जबतक भारतके पुरुष स्त्री-जातिकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हैं तबतक हे प्रभु, तू हमें गुलाम ही रखना। जिस देशके पुरुष स्वयं स्त्रीकी रक्षा नहीं करते वे पुरुष, पुरुष नहीं हैं, और उनका तो गुलाम रहना ही ठीक है।

मेरी आशा

किन्तु मुझे पूरी आशा है कि भारतके स्त्री-पुरुष दोनों ही, उन्हें जिस मर्यादाका पालन करना है उसे समझ गये हैं। दोनोंने पवित्रताका स्वाद चख लिया है। वह स्वयं-सेविका निर्भय थी। मैंने एक लड़कीको एलिस ब्रिजके पास निर्भय खड़े होकर टोपियाँ बेचते देखा। इससे मेरा खून एक सेर बढ़ गया। उसे किसका भय था? वह जानती थी कि सभी पुरुष उसके भाईके समान हैं। आप भला तो जग भला। कांग्रेसके पण्डालमें आई हुई हजारों स्त्रियाँ बिलकुल निर्भय थीं। इसलिए यदि स्त्रियाँ समस्त निरापद प्रवृत्तियोंमें भाग न लेंगी तो उसका कारण पुरुषोंका स्वार्थ अथवा स्त्रियोंका आलस और अज्ञान ही होगा। पुरुष स्त्रीको घरके कामसे निवृत्त न होने दे अथवा स्वयं स्त्री ही अपने साज-शृंगारसे अथवा बतरससे मुक्ति न पा सके तो वह देश-सेवा क्या करेगी?

मरनेकी तैयारी

नडियादमें अब्बास साहब गिरफ्तार नहीं किये गये, इसमें ईश्वरकी यह इच्छा हो सकती है कि जो मनुष्य पंजाबके कष्टोंको जानता है और जो उन कष्टोंका विचार करके अनेक बार रोया है उसका छुटकारा जेल जानेसे ही नहीं हो सकता। उसको तो अपने प्राण देकर ही परीक्षामें उत्तीर्ण होना है। असहयोगका प्रस्ताव सबसे पहले गुजरातियोंने ही किया था; इसलिए उनके लिए अकेली जेल कैसे काफी हो सकती है? उन्हें तो मरनेका अनुभव चाहिए। क्या अब्बास साहबको ईश्वर इसी-लिए जेलमें नहीं भेजता?

सच कहें तो अब जेलका भय रहा ही कहाँ है? जेल जानेको कौन कष्ट मानता है? मुझे कैदियोंकी सम्मतियाँ मिलती रहती हैं। सभी अपने पत्रोंमें यही लिखते हैं: "हमारे कारण आप हल्का समझौता न कर लें। हमें कोई जल्दी नहीं है।" जिन भयोंको हमने छोड़ दिया है उनको निमन्त्रित करनेका दिखावा करके हमें यश नहीं लेना है। हमारा छुटकारा तो इससे आगे बढ़नेसे ही होगा। बीचका रास्ता, मारपीट सहन करनेका रास्ता, पंजाबी साफ कर रहे हैं। कौन जानता है जगताने

हमारे हिस्सेमें मौत ही रखी हो? मैं तो यही चाहता हूँ कि यदि भारतको मृत्युके भयको भी जीतना हो तो उसका भार उठाना गुजरातके हिस्सेमें आये। गुजरातको बहुत नामवरी मिली है। उसने अपने आँगनमें कांग्रेस अधिवेशन करनेका सम्मान प्राप्त किया है। उसकी कीमत वह मृत्युसे चुकाये तो वह कोई बड़ी कीमत नहीं होगी। और जो स्वेच्छासे मृत्युसे भेंट करता है वह तो अमृत निद्रा भोगता है। मृत्यु दीर्घ निद्रा है। मुसलमान और ईसाई भाई कहते हैं कि सब कयामतके दिन कब्रोंमें से उठेंगे। हिन्दू भाई कहते हैं कि मृत्यु एक चोलेको छोड़कर दूसरे चोलेमें जाना है और ऐसा करते हुए, एक दिन ऐसे धाममें पहुँचना है कि जहाँ मनुष्य एक दिन भी नहीं सोता। तीनों मानते हैं कि मृत्युका अर्थ सर्वथा नाश ही नहीं है। धर्मकी परीक्षा तो मृत्युके समय ही होती है। जो रोता-बिलखता मरता है, जो मरना नहीं चाहता, वह मरनेपर अवगतिको प्राप्त होता है। हम ऐसी मृत्युको प्राप्त हों इसकी अपेक्षा हम मृत्यु रूपी परम मित्रसे स्वयं भेंट करनेके लिए क्यों न निकल पड़ें। यह बात बिल्कुल सच है कि यदि गुजराती — भारतीय — भाई मृत्युका भय छोड़ दें तो बहुत कम लोगोंको मरना पड़ेगा। हम डरते हैं इसीलिए गुलाम हैं। यदि हम कैद, मारपीट, मृत्यु और अपने मालकी लूटका भय छोड़ दें तो हम किसी भी मनुष्यको मारनेका न विचार करें और न किसी मनुष्यको मारें। इसका अर्थ यह है कि दूसरोंको मारनेका विचार छोड़नेके साथ मरनेकी तैयारी जुड़ी होती है और ज्यों ही मरनेकी तैयारी हुई कि फिर उसको मारनेकी उत्सुकता किसीको नहीं होगी। इसीलिए इस संसारको मनुष्यके मनकी तरंग कहा गया है। हम दूसरोंको डरायेंगे तो स्वयं डरेंगे, दूसरोंको मारेंगे तो स्वयं मरेंगे। सर्प भी जब डरता है तभी हमें डसता है।

मृत्युका भय छोड़ देना चाहिए यह लिखना आसान है किन्तु ऐसा करना आसान नहीं है, यह तो मैं जानता ही हूँ। इसलिए मैं यह नहीं मानता कि सब गुजराती स्त्री-पुरुष मृत्यु-भयको एक क्षणमें छोड़ देंगे। फिर भी मैं यह आशा जरूर करता हूँ कि गुजरातमें ऐसे स्वराज्य-प्रेमी लोग मौजूद हैं जो मृत्युका भय छोड़ चुके हैं और देश और धर्मकी खातिर मृत्युसे भेंट करनेके लिए बिलकुल तैयार और उत्सुक हैं। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि देशमें ऐसे लोगोंकी संख्या बढ़े और हमारी परीक्षाका काल शीघ्र आये।

जान जाये पर माल न जाये

"जेल जायेंगे, मार खायेंगे, मर जायेंगे परन्तु अपना माल न देंगे। कांग्रेसने माल देनेके लिए थोड़े ही कहा है?" ऐसा कहनेवाले कुछ शूरवीर भी हैं जो मरनेको तैयार हैं; किन्तु अपनी जमीन अथवा अपने ढोर-डंगर नीलाम होने देनेके लिए तैयार नहीं। कांग्रेसपर लगाया गया आरोप तो व्यर्थ ही है। कांग्रेसने मालका उल्लेख यह समझकर नहीं किया है कि जो शरीर उत्सर्ग करनेके लिए तैयार है वह अपना सब-कुछ देनेके लिए भी तैयार होता है। लेकिन हममें स्थावर और जंगम सम्पत्तिकी तृष्णा इतनी अधिक होती है कि हम शरीर देते हुए भी सम्पत्तिका त्याग करनेके लिए तैयार नहीं होते। इसलिए हमें इस सम्बन्धमें विचार करनेकी जरूरत है।

सरकार तो जिस-जिस भयसे हमें वशमें कर सकती है उस-उस भयको दिखाकर हमें वशमें करनेका प्रयत्न करेगी। यदि वह यह देखेगी कि हमें जेल जानेसे जुर्माना देना कठिन लगता है तो हमपर जरूर जुर्माना करेगी। कुछ स्थानोंमें तो इस समय भी जेल और जुर्माने दोनों ही चल रहे हैं।

हमें अपनी स्थावर और जंगम सम्पत्तिकी जब्तीका भय बिलकुल छोड़ना पड़ेगा। अन्यायी राज्यमें धनवानोंको अन्यायमें भाग लेना पड़ता है। इसलिए अन्यायी राज्यमें गरीबी ही पुण्यका मार्ग है। अतः हमें यह बात जाननी ही चाहिए कि यदि हम असहयोगी रहना चाहते हैं तो हमें धनका लोभ अवश्य छोड़ना पड़ेगा। हमारा असहयोग तभी पूरा माना जायेगा जब हम यह निश्चय कर लेंगे कि भले ही हम भूखे मर जायें, किन्तु हम अन्यायके आगे सिर नहीं झुकायेंगे।

यह बात भी समझ लेने योग्य है कि मनुष्य जब जुर्मानेका भय छोड़ देता है तब सरकारको जुर्मानेका रुपया वसूल करना कठिन हो जाता है। हजार लोगोंको जेल भेजनेको बजाय, हजार लोगोंकी सम्पत्ति नीलाम करना अधिक कठिन है। किन्तु कैदकी सजा थोड़े-से लोगोंको ही दी जा सकती है। बहुतसे लोग कोई काम करें तो उनको रोकना लगभग असम्भव हो जाता है। सम्पत्ति जब्तकी जा सकती है किन्तु वह बेची किसको जाये? जमीनका कब्जा तो लिया जा सकता है, किन्तु वह उठाकर दूसरी जगह तो नहीं ले जाई जा सकती? एक मनुष्यकी जमीनको नीलाममें खरीदनेका इच्छुक दूसरा मनुष्य कौन होगा?

फिर जो स्वराजवादी हैं उन्हें अपनी मान्यतापर विश्वास तो होना ही चाहिए इसलिए स्वराजवादियोंको यह विश्वास रखना चाहिए कि यदि उनकी सम्पत्तिपर सरकार आज अधिकार कर लेती है तो स्वराज्य मिलनेपर वह उन्हें वापिस मिलेगी ही। जनरल बोथाके पास हजारों बीघे जमीन थी। उनके पास जितने पशु थे उतने अन्य किसी मनुष्यके पास न थे। उन सबपर अंग्रेजोंकी सेनाने अधिकार कर लिया था। किन्तु क्या इससे श्री बोथाने हार मानी? वे खुद लड़े और अन्तमें अपनी सम्पत्तिपर फिर अधिकार प्राप्त कर लिया, इतना ही नहीं; बल्कि उनका स्थान दक्षिण आफ्रिकामें एक राजाके समान हो गया। उनका यह विश्वास था कि यदि वे जीवित रहेंगे तो अपनी सम्पत्ति वापिस ले लेंगे, और यदि मर जायेंगे तो उन्हें स्वर्ग मिलेगा। हमारी लड़ाई तो दूसरोंको मारनेकी लड़ाई नहीं है; अतः हमें तो सम्पत्तिके सम्बन्धमें बेफिक्र ही रहना चाहिए। सवाल यह उठता है कि यदि सरकार हमारी सम्पत्ति ले ले तो हम खायेंगे क्या? किन्तु जहाँ हमने यह प्रतिज्ञा की है कि हम भूखे मरेंगे तो भी झुकेंगे नहीं, वहाँ हमें अपने बारेमें या भूखों मरनेके सम्बन्धमें क्या विचार करना है? भारत-जैसे विशाल देशमें कोई-न-कोई तो हमें खानेके लिए देगा ही, और अब तो हमारे पास अपना प्रिय चरखा है। तब हमें क्या चिन्ता हो सकती है? जहाँ पूरा परिवार भली भाँति पींजना और कातना जानता है वहाँ हमें अपने पेटकी तनिक भी चिन्ता नहीं होनी चाहिए।

हमारे मनमें जितना भी भय पैदा होता है वह सब हमारे अविश्वाससे पैदा होता है। यदि हम ईश्वरपर विश्वास रखें अर्थात् वह जैसा चाहेगा वैसा होगा, यह

मानें तो हम कभी चिन्ता ही न करें। किन्तु जो होना होगा सो होगा, यह बात हम तभी कह सकते हैं, जब हम अपनी ओरसे पूरा प्रयत्न कर लें। मनुष्यके प्रयत्नके पीछे ईश्वरकी सम्पूर्ण कृपा होती ही है — उसे ईश्वरकी कृपाका सहारा अवश्य मिलता है। ईश्वरपर विश्वास रखनेका अर्थ यह है कि जब हमारी सम्पत्ति लूटी जाये तब भी हम ईश्वरको धन्यवाद दें। यदि हम अपनी सम्पत्ति न लूटनेकी शर्तपर धन्यवाद देते हैं तो यह तो सौदा करना हुआ। ईश्वर सौदा नहीं चाहता। उसे तो भक्ति चाहिए और वह अपने भक्तकी भक्तिकी कड़ी परीक्षा लेता है। वह जितना दयालु है उतना ही निर्दयी भी है। न्यायका विचार करते समय वह किसीकी परवाह नहीं करता और किसीके प्रति पक्षपात नहीं करता। वह भक्तको और जो भक्त नहीं हैं, सभीको उनके कर्मोंके अनुसार फल देता है। भक्त सत्कर्म करनेसे अच्छा फल और अभक्त कुकर्म करनेसे बुरा फल पाते हैं।

इस लड़ाईमें दम्भ, द्वेष और अधीरताके लिए स्थान नहीं है। इसीसे तो इसको धर्मयुद्ध कहा गया है। ईश्वर करे, गुजरात धर्म-भावनाका परिचय दे। और वह धर्मभावनाका परिचय देगा ऐसी आशासे तो मैं जीवित हूँ।

खरीदार तो मरेगा ही!

मैं सुनता हूँ कि खेड़ा जिलेकी शुद्धता तो नाममात्रकी ही है। खेड़ाके लोग किसी सरकारी आदमीको न मारेंगे, किन्तु यदि पाटीदारका माल नीलाम होगा और उसको खरीदनेवाला कोई मिल जायेगा तो वह तो जीवित बचकर न जायेगा। उससे तो अवसर आनेपर पाटीदार 'बच्चा' वैर चुकाये बिना न छोड़ेगा। यह अहिंसा कैसी है? यदि कोई हमारी सम्पत्ति खरीदे तो वह सरकारी आदमी ही हुआ। हमने प्रस्ताव पास किया है कि हम सरकारी आदमीको नहीं मारेंगे। तब उस खरीदारको कैसे मारा जा सकता है? फिर हमारी प्रतिज्ञामें ऐसा कोई अपवाद तो है नहीं और यदि पाटीदार अथवा अन्य कोई इस प्रकार विचारमें भी अपनी प्रतिज्ञाका त्याग करेगा तो स्वराज्य निश्चय ही नहीं मिलेगा। चाहे जैसे भले-बुरे मार्गसे स्वराज्य प्राप्त करना हमारी प्रतिज्ञा नहीं है। हमें स्वराज्य अहिंसा और सत्यके द्वारा प्राप्त करना है। यह कांग्रेसका सामान्य धर्म है और असहयोगियोंका विशिष्ट धर्म है। हमें यह न भूल जाना चाहिए कि जो भी लोग कांग्रेसमें सम्मिलित होते हैं उन सबके लिए अहिंसा और सत्यका पालन लाजिमी है। असहयोगमें क्रोध और हिंसाके लिए बहुत अवकाश रहता है। इसीलिए अधिक सावधानीके रूपमें असहयोगके साथ शान्तिमय शब्द जोड़ दिया गया है। अतः मुझे आशा है कि गुजरातकी लाज रखनेके लिए उत्सुक पाटीदार अथवा अन्य लोग अपने मनमें से हर प्रकारके मलिन विचार और भयको तुरन्त ही बिलकुल निकाल देंगे।

बारडोली और आनन्द

इन दोनों ताल्लुकोंका एक विशेष कर्त्तव्य है। यदि वे अब जल्दी तैयार न होंगे तो उनकी और गुजरातकी लाज जानेवाली है। निर्भयतामें, जेल जानेमें और मारपीट

सहन करनेमें संयुक्त-प्रान्तके हिन्दू-मुसलमान, वंगालके हिन्दू और मुसलमान और पंजावके हिन्दू, पठान और सिख उत्तीर्ण हो चुके हैं। अव वारडोली और आनन्द, जिन्होंने वहुत यश पाया है, जल्दी तैयार न होंगे तो हमारी लाज अवश्य जायेगी। हमें जेल तो जाना ही है, किन्तु हमें मरनेकी योग्यता और शक्ति प्राप्त करनी है। जव योग्यता आती है तो शक्ति भी आती ही है। सव लोग खादी पहनने लग जायें। कमेटीके पास खादीनगरमें काममें लाई हुई पवित्र खादी है। सव उसका उपयोग कर लें और उसके वाद अपने ताल्लुकेमें तैयार की हुई खादी ही पहनें। स्त्रियाँ भी, आज सवका जो सामान्य धर्म है उसका पालन करने लग जायें। लोग उद्योगी वन-कर घर-घरमें चरखे चलाने लग जायें, अच्छा मजवूत सूत कातें, गाँव-गाँवमें सुन्दर पिंजाई हो, ढेढ़ और भंगीको सव भाई समझें और उनकी सेवा करें, उनके वच्चोंको राष्ट्रीय शालाओंमें दाखिल करें और उनको स्वयं जाकर लायें, उनसे प्रेमपूर्ण वरताव करें और जो लोग सरकारके सहयोगी हों उनको निर्भय वनायें। हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई सव आपसमें मेलसे रहें। इसमें कठिनाई क्या है? इसमें खर्च भी क्या लगता है? चरखा और खादी तो हमें पैसा देते हैं। दूसरी वातें भी विचार-दोषको दूर करनेवाली हैं। इसमें कठिनाई तो कुछ नहीं होनी चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि वारडोली-निवासी रात-दिन सतत श्रम करें और ऐसी योग्यता प्राप्त करें। वे अधिकसे-अधिक २० तारीखतक मन्त्री या प्रमुखसे अपनी योग्यता और तैयारीके सम्वन्धमें प्रमाणपत्र लेकर भेज दें। इसी प्रकार आनन्द-निवासी भी अव्वास साहवका प्रमाणपत्र लेकर उसी तारीखको या उससे पहले भेजें।

यदि सच्चे हों तो

यदि ये भाई सच्चे और साहसी हों तो सरकारी लगान देना आजसे ही वन्द कर दें। जिसने यह निश्चय कर लिया हो कि लड़ाई तो लड़नी ही है, कमसे-कम वह तो लगान देना वन्द कर ही दे। ताल्लुकेके सभी लोग लगान देनेके वाद यह न कहें कि हमें अव लड़ना है।

दूसरोंके वारेमें क्या?

मुझसे कुछ लोगोंने कहा है कि लगानवन्दीके लिए तो सारा गुजरात तैयार है। तो क्या मैं सवको लगानवन्दी करनेकी सलाह न दूँगा? यह सलाह मैं नहीं दे सकता। जो व्यक्ति अपनी इच्छासे लगान न देना चाहे उसे मैं लगान देनेके लिए वाध्य नहीं करूँगा। इस तरह वाध्य करनेवाला मैं कौन हूँ? किन्तु सव लोगोंसे लगानवन्दीके लिए कहनेकी जोखिम मैं न लूँगा।

लगानवन्दी करनेमें हमारा निजी स्वार्थ नहीं है; हमें तो लगानवन्दीमें अपनी विनय दिखानी है। और यदि हम सविनय लगानवन्दी करना चाहते हों तो हमें शुद्ध वनना चाहिए। इसलिए जो हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों और पारसियोंके वीच एकता स्थापित करना अपना धर्म मानते हैं, जिन्होंने शान्ति-रक्षाकी वात समझ ली है, जो ढेढ़ों और भंगियोंको अपने भाईके समान मानकर उनका स्पर्श करते हैं और उनसे

अपने-आपको अशुद्ध हुआ नहीं मानते, जो पहनने और ओढ़नेमें खादीके वस्त्रोंका ही प्रयोग करते हैं और जिनमें मरने और अपनी सम्पत्ति जब्त करानेकी हिम्मत है ऐसे लोग मेरी सलाह लिये विना ही भले लगानवन्दी कर दें।

किन्तु यह तो व्यक्तिगत वात हुई। जिसको जरा भी समझानेकी जरूरत होती हो ऐसे सव लोगोंको मैं लगानवन्दी करनेकी सलाह नहीं दे सकता। इसका मुख्य कारण तो यह है कि मुझे अभी यह विश्वास नहीं हुआ है कि गुजरातके सभी ताल्लुकोंके लोग लगानबन्दी करके अपनी सम्पत्ति नीलाम होने देने और फिर भी रोष न करनेके लिए तैयार हो गये हैं। इसलिए सामान्य लोगोंके लिए वुद्धिमानीका मार्ग यही है कि उनको लगान दे देनेकी सलाह दी जाये। यदि वे इसपर भी लगान न दें तो वे इसके लिए स्वतन्त्र हैं। जो लोग लगान दें वे आन्दोलनमें दूसरी जो भी सहायता दे सकें अवश्य दें। वाकी सारा भारत लगान देगा इसका अर्थ यह तो नहीं है कि वह हार गया। मैं ऐसे लोगोंसे अनेक प्रकारकी सहायता लूँगा। इस प्रकार मेरी दो सलाहें हुईं:

१. वारडोली और आनन्दके लोगोंको सामुदायिक सविनय अवज्ञा भंग करनी हो तो वे लगान न दें, फिर चाहे उनकी इनामी जमीनें भी जब्त क्यों न कर ली जायें।

२. इनके अतिरिक्त दूसरे ताल्लुकेके लोगोंको मेरी यह सलाह है कि वे लगान दे दें, किन्तु असहयोगमें दूसरी तरहकी सहायता दें।

मेरी इन सलाहोंके वावजूद जिन लोगोंको यह निश्चय हो कि वे सव शर्तोंका पालन कर सकेंगे और अपनी जिम्मेदारीपर लगान न दें वे अवश्य ही धन्यवादके पात्र होंगे। किन्तु उन्हें यह गर्व न करना चाहिए कि वे स्वयं वहुत साहसी हैं और दूसरे लोग कायर हैं। अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार सभी लोग काम करते हैं। ऐसा मानकर भारी त्याग करनेवाला व्यक्ति भी नम्र रहे और अधिक त्याग करनेके लिए तैयार हो।

श्री महादेवका पत्र

नीचे मैं श्री महादेव देसाईका पत्र[1] सम्वोधन और हस्ताक्षर छोड़कर अक्षरशः दे रहा हूँ। मैं इसे जेलके नियमोंके विरुद्ध भेजा हुआ मानता हूँ। मैंने दक्षिण आफ्रिकामें ऐसे पत्रोंका उपयोग करनेसे भी इंकार कर दिया था, किन्तु यहाँ मैं देखता हूँ कि महादेव देसाईने जो निर्दोष नियमभंग किया है वह क्षम्य माना जाना चाहिए। जेलमें जो डायरशाही चल रही है उसको समयपर प्रकट करनेका दूसरा कोई उपाय नहीं है। इस नियमभंगके फलस्वरूप कोई कष्ट भोगना पड़ेगा तो महादेवको ही भोगना पड़ेगा। यदि उन्हें भी लक्ष्मीनारायणकी तरह वेंत लगें और उनकी रीढ़में घाव हो जायें तो भी कोई परवाह नहीं। ऐसा जोखिम उठाकर भी महादेवके लिए पत्र लिखना

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें राजनैतिक कैदियोंसे दुर्व्यवहार किये जाने और दो स्वयंसेवकों, कैलाशनाथ और लक्ष्मीनारायणको वेंत लगाये जानेकी वात कही गई थी।

जरूरी था। यदि सरकार कैदियोंको कुछ भी छूट देना चाहती हो तो उसे उसका ऐसा सदुपयोग अवश्य होने देना चाहिए जैसा कि महादेवने यह पत्र लिखनेमें किया है। इस पत्रमें जो बातें लिखी गई हैं उनके सम्बन्धमें इस समय मैं अधिक लिखना नहीं चाहता। मैं तो भारतकी धीरता और शान्तिको देखकर आनन्द और आश्चर्यके समुद्रमें डूबा जा रहा हूँ। अवश्य ही मुझे इतनी आत्मशुद्धिकी आशा नहीं थी। कैदियोंने जो जयघोष किया वह उनकी उद्धतता नहीं है, बल्कि वह तो उनका अधिकार है, ऐसी उनकी मान्यता थी। और जब महादेवने लक्ष्मीनारायणका ध्यान इस भूलकी ओर खींचा तब उन्होंने कितनी सरलतासे तत्क्षण अपनी भूल स्वीकार कर ली। अवश्य ही इस लड़ाईमें ईश्वरका हाथ है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-१-१९२२

७९. मु० रा० जयकरको[1] लिखे पत्रका अंश

रविवारकी सुबह [१५ जनवरी, १९२२][2]

मैं बैठकमें व्यस्त था, तभी आपका पत्र मिला। आपके पत्रका जवाब देने और १० बजेकी बैठकके[3] लिए प्रस्ताव तैयार करनेके लिए जल्दी उठ गया हूँ।

मैंने श्री पटेल[4] द्वारा किये गये आपके अपमानको उसी भावसे ग्रहण किया जिस भावसे उनके हाथों एक नहीं, अनेक अवसरोंपर होनेवाले अपने अपमानोंको ग्रहण किया है। यह लगभग उनका स्वभाव ही बन गया है। मैं तो यह मानने लगा था कि आप दोनों किसी तरह एक-दूसरेके बड़े अच्छे मित्र बन गये हैं। अब अगर आप इजाजत दें तो मैं आपका पत्र श्री पटेलको दिखाना चाहूँगा — उन्हींके लाभके लिए। आप जानते ही हैं कि मैंने मान लिया है कि मेरे और उनके बीच खुल्लमखुल्ला मतभेद है। उनकी राह अलग है, मेरी अलग। वे भी जानते हैं कि हम दोनों दो अलग दिशाओंमें चल रहे हैं। श्री पटेलके बारेमें तो बस इतना ही।

सत्यके अलावा और मेरा कोई दल-बल नहीं है। मैं केवल सत्यके लिए ही जीना चाहता हूँ। आप चाहें असहयोगियोंके शिविरमें बने रहें या उससे अलग हो जायें;

१. मुकुन्दराव रामराव जयकर (१८७३-१९५९); वकील और उदारदलीय नेता; उप-कुलपति, पूना विश्वविद्यालय।

यह पत्र जयकरके १४ जनवरी, १९२२ के पत्रके उत्तरमें भेजा गया था। उस पत्रमें उन्होंने बम्बईमें आयोजित नेताओंके सम्मेलनमें पहले दिनकी बैठकमें विट्ठलभाई पटेल द्वारा कही गई बातोंके बारेमें शिकायत की थी।

२. साधन-सूत्रसे।

३. देखिए अगला शीर्षक।

४. विट्ठलभाई झवेरभाई पटेल (१८७३-१९३३); वल्लभभाई पटेलके बड़े भाई; बम्बई विधान परिषद्के सदस्य; भारतीय विधान सभाके प्रथम निर्वाचित अध्यक्ष, १९२५-३०।

लेकिन मैं आपको नहीं छोड़ सकता — वैसे ही जैसे मालवीयजीको नहीं छोड़ सकता, भले ही फिलहाल वे मेरे पक्षमें नहीं हैं। मैं आपको एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति मानता हूँ। आपने मेरे मनपर यह छाप छोड़ी है कि आप अत्यन्त सुसंस्कृत व्यक्ति हैं और जान-बूझकर कोई गलत काम कर ही नहीं सकते।

[अंग्रेजीसे]

स्टोरी ऑफ माई लाइफ

८०. भाषण: नेताओंकी परिषद्में[1]

१५ जनवरी, १९२२

अध्यक्ष महोदय और भाइयो,

श्री एन० वी० गोखलेने जो तीन-चार सवाल पूछे हैं, वे उचित ही हैं। उन्होंने सवाल पूछे हैं और मैं समझता हूँ, इस समितिको ये प्रस्ताव तैयार करनेमें मैंने जो सहायता दी है, उसका पूरा स्पष्टीकरण दे दूं। आप देखेंगे कि प्रस्ताव जिस रूपमें आपको कल पढ़कर सुनाये गये थे, उनमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन कम ही किये गये हैं। सम्मेलनको ध्यान रहे कि मैं सम्मेलनके प्रस्तावोंमें शरीक होना नहीं चाहता, और जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं तो कहूँगा कि उनमें अन्य असहयोगी लोग भी शामिल नहीं होंगे। (हर्षध्वनि) वे बहसमें भी भाग नहीं लेंगे। तो मेरी नम्र सम्मतिमें इन प्रस्तावोंके आशय-अभिप्रायपर विचार करके अपनी इच्छानुसार इन्हें स्वीकार अथवा अस्वीकार करनेका विशेष अधिकार या कर्त्तव्य उन लोगोंका है जो असहयोगी नहीं हैं। मैंने कल बताया था कि असहयोगियोंका काम क्या है, और मैं कलकी एक-एक बातपर आज भी कायम हूँ। मैंने कहा था कि असहयोगियोंका काम सलाहकारका काम है; लेकिन वे इन प्रस्तावोंमें शरीक नहीं हैं। इसका मतलब यह नहीं कि इन प्रस्तावोंपर वे कोई मत ही नहीं रखते। बेशक, इनपर उनका एक अपना मत है। कुछ ऐसी चीजें हैं जिन्हें चन्द विशेष परिस्थितियोंमें करना असहयोगियोंके लिए जरूरी हो जाता है। व्यक्तिशः मैं आपको यह बता दूं कि असहयोगियोंका रवैया इस बातपर निर्भर करेगा कि ये प्रस्ताव उनपर किस ढंगकी जिम्मेदारी डालते हैं। पहले प्रस्तावके सम्बन्धमें तो मैंने जो-कुछ कल कहा, उससे अधिक मुझे कुछ भी नहीं कहना है। मेरा कहना है कि वह ज्योंका-त्यों है।

१. यह परिषद् बम्बईमें हुई थी। १७-१-१९२२ के *हिन्दू*के अनुसार इस परिषद्ने १४ जनवरीको जो समिति नियुक्त की थी, उसकी बैठक १५ जनवरीको परिषद्की दुबारा बैठक होनेसे पहले ही हुई थी और उसमें एक सलाहकारके तौरपर अनौपचारिक रूपसे गांधीजी भी शामिल हुए थे। परिषद्की कार्रवाई ६ बजे शामको शुरू हुई, जिसमें गांधीजीने भाषण दिया था। १८-१-१९२२ के *हिन्दू*में उसे "महात्मा गांधीके भाषणका पूरा पाठ" शीर्षकसे छापा गया था।

दूसरा प्रस्ताव भी ज्योंका-त्यों रहता है। उसके सम्बन्धमें मैं सम्मेलनसे वे बातें कहूँगा जो मैंने कमेटीके सामने कही थीं; अर्थात् यह कि अगर सम्मेलन यह प्रस्ताव आधिकारिक रूपसे भेजता है तो वह कार्य-समितिके[1] सामने रखा जायेगा और कार्य-समिति उसपर विचार करेगी। और मैंने इस सम्मेलनकी कमेटीको जो आश्वासन दिया है उसे फिर दुहराता हूँ कि अहमदाबाद कांग्रेसके प्रस्तावमें जो आम सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेका निश्चय किया गया है उसे मैं कार्य-समितिको तबतक रोके रहनेकी सलाह दूँगा जबतक इस सम्मेलन द्वारा नियुक्त की जानेवाली कमेटी इस आशासे सरकारसे बातचीत करती रहेगी कि वह एक गोलमेज सम्मेलनकी बात मंजूर कर लेगी। लेकिन देशको इस महीनेकी ३१ तारीखके बाद आम सविनय अवज्ञा रोके रखनेकी सलाह देना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा। मैं आपको यह भी बता दूँ कि यह समय-सीमा बढ़ानेके लिए मुझपर काफी जोर डाला गया, किन्तु दुःखके साथ बताना पड़ता है कि मैं उसके लिए राजी नहीं हो सका। क्यों नहीं राजी हो सका, इसका कारण मैं बहुत संक्षेपमें बता देना चाहता हूँ। मेरे लिए १५ दिनका समय भी बहुत महत्त्व रखता है। दूसरा कारण तो मैंने आपके सामने कल ही पेश कर दिया था, जिसका सम्बन्ध आज देशमें जो-कुछ हो रहा है, उससे है। जहाँतक देशमें चल रही दमनकी कार्रवाइयोंका सम्बन्ध है, असहयोगियोंने जो भी गलतियाँ या अपराध किये हों, उन सबके बावजूद मेरा विचार है कि इन कार्रवाइयोंका कतई कोई औचित्य सिद्ध नहीं किया जा सकता और असहयोगी लोग इनका एकमात्र उत्तर यही दे सकते हैं कि वे आम सविनय अवज्ञा प्रारम्भ कर दें। लेकिन मेरे जो देशभाई असहयोगी नहीं हैं, उनका समर्थन प्राप्त करनेके लिए, उनकी सहानुभूति पानेके लिए मैंने इच्छा न होते हुए भी कहा है कि हम पन्द्रह दिनतक आम सविनय अवज्ञा रोके रहेंगे। (हर्षध्वनि) मुझे आशा है, मैं कार्य-समितिको इस बातपर सहमत कर लूँगा। पिछली रात हम असहयोगियोंने इस विषयपर आपसमें अनौपचारिक तौरपर विचार-विमर्श किया, और उन्होंने मुझे यह कहनेका अधिकार दे दिया कि इस सम्मेलन द्वारा नियुक्त कमेटी वाइसरायसे बातचीत कर सके, इसलिए उन्होंने पन्द्रह दिनतक प्रतीक्षा करनेका निश्चय किया है। इस तरह वाइसराय महोदयकी हमारे प्रति जो गलत धारणा है वह दूर होगी और यह साफ हो जायेगा कि हम लोग दुराग्रही नहीं हैं। अगर गोलमेज सम्मेलनके सफल होनेकी कोई सम्भावना हो तो हम ऐसे सम्मेलनके आयोजनके मार्गमें बाधक नहीं होना चाहते। और जो बात सबसे महत्त्वपूर्ण है वह यह है कि हम अपने उन देशभाइयोंके साथ अपना सम्बन्ध ठीक करना चाहते हैं जिनका दृष्टिकोण हमसे नहीं मिलता। फतवा कैदियोंको रिहा कीजिए, उन राजनैतिक कैदियोंको रिहा कीजिए जो या तो सजा भोग रहे हैं या जिनपर सामान्य कानून अथवा दण्डविधि संशोधन अधिनियम और राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमके अन्तर्गत मुकदमे चल रहे हैं। यही माँग हमने कल पेश की थी और यही वे शर्तें हैं जिन्हें मंजूर करनेका मैं आग्रह कर रहा हूँ। मेरे असहयोगी मित्र इस बातसे मुझपर शायद नाराज होंगे कि मैं अपने

१. कांग्रेसकी कार्य-समितिके सामने।

नरमदलीय भाइयोंकी चिकनी-चुपड़ी बातोंमें आता जा रहा हूँ। अगर वे मुझपर ऐसा आरोप लगाते हैं तो मैं कहूँगा कि मैं सचमुच दोषी हूँ। (हँसी) सजायाफ्ता राजनीतिक कैदियों या जिन राजनीतिक कैदियोंपर सामान्य कानूनके अन्तर्गत मुकदमे चल रहे हैं, उनके सम्बन्धमें मैंने आपसे कल ही कहा कि इस सम्मेलनकी सिफारिशोंमें ऐसे सभी कैदी आयेंगे या नहीं, इसका निर्णय सम्मेलन द्वारा नियुक्त की जानेवाली कमेटी ही करेगी, लेकिन तथ्योंको ध्यानमें रखते हुए और मित्रोंके दबावके कारण मुझे तो झुकना ही पड़ा। इसलिए मैंने कहा कि "अगर आप एक व्यक्तिको अपनेमें से नामजद करनेको तैयार हों और दूसरेको सरकारी अधिकारियोंमें से, और दोनोंको एक पंच चुननेका अधिकार दें तो मैं इस प्रस्तावको स्वीकार कर लूँगा।" मुझे आशा है कि यह प्रस्ताव स्वीकार कर लेनेके कारण मेरे असहयोगी मित्र मुझसे नाराज नहीं होंगे। जहाँतक देशके आम कानूनका दुरुपयोग करके या उसे गलत ढंगसे लागू करके कैद किये गये लोगोंका सम्बन्ध है, यह छोटी-सी कमेटी ही उनके मामलोंपर विचार करके उनकी रिहाईकी सिफारिश करेगी। मैं बेहिचक ऐसा मानता हूँ कि उस कमेटीके हाथोंमें हमारे इन कैद किये गये देशभाइयोंका हित बिलकुल सुरक्षित रहेगा। आप देखेंगे कि कलके प्रस्तावमें एक शर्त यह थी कि सभी सरकार विरोधी गति-विधियाँ आजसे बन्द हो जायेंगी। इस सम्बन्धमें मैंने कमेटीके सामने एक वाक्य रखा, लेकिन देखा इससे तो मैं मुसीबतमें फँस गया हूँ। (हँसी) आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि पण्डित कुँजरूकी तीक्ष्ण बुद्धिने तत्काल इसमें एक नुक्स निकाल दिया, और उस नुक्सकी जानकारी मुझे सही रास्तेपर ले आई। मैंने कहा, "नहीं, मैं क्षण-भरको भी आम ढंगका कोई वाक्य यहाँ प्रयुक्त नहीं करना चाहता। हमारा संघर्ष अत्यन्त शुद्ध है। हमें देशसे या वाइसराय महोदयसे कुछ भी छिपानेकी जरूरत नहीं है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, उन सबको यह जान लेना चाहिए कि हमारे मनमें ठीक-ठीक कौनसी बात चल रही है। तो सवाल यह है कि उक्त गोलमेज सम्मेलन होनेतक सभी गति-विधियाँ बन्द रखी जायें। मैं तो सिर्फ कोई निश्चित चीज ही स्वीकार कर सकता हूँ, और इसलिए मैंने समझौता करनेके खयालसे इरोड (मद्रास)की बहुतसी स्त्रियों तथा पूनाके श्री लैवेटके हितोंका बलिदान कर दिया है। मैंने कह दिया है कि जबतक सम्मेलन चलेगा, हम शराबकी दुकानोंपर धरना देना बन्द रखेंगे। ऐसा मैंने इसलिए किया है ताकि दूसरा उद्देश्य सिद्ध कर सकूँ, अर्थात् यह कि वाइसराय महोदय अथवा कोई भी हमपर वादाखिलाफीका आरोप न लगा सके। सरकारको जो शर्तें पूरी करनी हैं, उन्हें अगर उसने पूरा कर दिया तो हम सम्मेलनकी अवधितक हड़ताल करना बन्द रखेंगे, धरना देना बन्द रखेंगे और तबतक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ नहीं करेंगे। बेशक, यह कहते हुए मुझे दुःख होता है कि हमें शराबकी दुकानोंपर कानूनी तौरपर तथा शान्तिपूर्ण और सदाशयतापूर्ण ढंगसे धरना देना भी बन्द करना पड़ेगा, लेकिन मुझे आशा है कि मेरे असहयोगी भाई इस बातको लेकर नाराज नहीं होंगे। जो मुख्य बात मैं कहना चाहता हूँ, वह यह है कि असहयोग-सम्बन्धी और कोई गति-विधि बन्द नहीं की जायेगी। श्री कुँजरूने मुझसे पूछा कि अगर इन कैदियोंको छोड़ दिया जाता है और

यह नोटिस वापिस ले लिया जाता है तो क्या आप स्वयंसेवक भरती करना बन्द नहीं करेंगे। मैंने जोर देकर कहा, "नहीं"। स्वयंसेवक भरती करना तो मैं क्षण-भरको भी बन्द नहीं करूँगा। इस आधारपर कि. . .[1] हमारे लिए ऐसा वचन देना सम्भव नहीं है। . . .[2] सविनय अवज्ञाकी तैयारी . . .।[3] यह तैयारी आक्रामक अथवा वैर-विरोधपूर्ण ढंगकी नहीं होगी। यह बात उन लोगोंके हकमें है जो अब आम सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेको तैयार बैठे हैं। उन्हें एक निर्धारित समयपर सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनी होगी। इसलिए उन्हें तैयारी करते रहना चाहिए। मैं नहीं समझता कि इसमें मैं कोई सरकार विरोधी काम कर रहा हूँ। लेकिन मैं चाहता हूँ यह सम्मेलन इस बातको समझे कि इस सम्मेलनकी कार्रवाई समाप्त होनेपर कल कार्य-समितिकी बैठकमें उससे सलाह-मशविरा करनेके बाद मैंने जो वचन देनेकी बात कही है उसका पूरा अर्थ क्या है। मैंने अपना सारा काम पूरा कर लिया है। मैंने विषय-समितिसे भी कहा कि ये बातें बिलकुल ठीक हैं। सरकार आज चाहे ये बातें मंजूर करे या न करे, मेरे लिए तो मुख्य बात इतनी ही है कि वाइसराय यह न कह पायें कि हमने खिलाफत सम्बन्धी माँग छोड़ दी है। खिलाफतके प्रश्नपर हमारे रवैयेमें रद्दो-बदलकी गुंजाइश नहीं है, पंजाबके सवालपर हम कोई समझौता नहीं कर सकते। कमसे-कम जो माँगें हो सकती हैं, वे एक लम्बे अरसेसे देशके सामने हैं। इनमें कमी करनेकी गुंजाइश नहीं है। अब बातचीत तो सिर्फ इस विषयपर हो सकती है कि खिलाफतके सम्बन्धमें जो माँगें रखी गई हैं, उन्हें पूरा कैसे किया जाये, पंजाबके सम्बन्धमें जो-कुछ माँगा जा रहा है, वह कैसे दिया जाये। (हर्षध्वनि) सरकारके सामने जो समस्याएँ हैं, उन सभीको मैं सहानुभूतिपूर्वक समझना चाहता हूँ, लेकिन इन माँगोंका परम महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है भारतको पूर्ण अधिराजत्वका दर्जा देना। अब सवाल है कि वह कैसे हो? गोलमेज सम्मेलनमें भी मैं वाइसराय महोदयसे इसी बातके लिए साग्रह निवेदन करूँगा कि पूर्ण अधिराजत्वकी इस माँगको ध्यानमें रखते हुए एक योजना बनाई जाये, और यह योजना इस देशकी जनताके समुचित रूपसे निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की जाये। "समुचित रूपसे निर्वाचित प्रतिनिधियों"से मेरा तात्पर्य है कांग्रेस संविधानके अन्तर्गत निर्वाचित प्रतिनिधि, अर्थात् चवन्निया-सदस्यों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि। मतलब यह कि जो लोग चार-चार आने चन्देके रूपमें देते हैं उनके नाम मतदाता सूचीमें दर्ज किये जायेंगे और वही इन प्रतिनिधियोंका चुनाव करेंगे। ये प्रतिनिधि भारतके लिए पूर्ण अधिराजत्वकी एक योजना तैयार करेंगे। मैं जानता हूँ यह सवाल बहुत बड़ा है। यह बात मैं न आपसे छिपाना चाहता हूँ, न देशसे और न अपने-आपसे। मैं यह भी जानता हूँ कि स्वयं मैं हृदयसे ऐसा अनुभव करता हूँ कि यह देश अभी वैसी माँग करनेकी दृष्टिसे सचमुच तैयार नहीं है। गोलमेज सम्मेलनके सफल होनेमें मुझे अनेक शंकाएँ हैं। लेकिन जो-कुछ मैंने कहा है, वह अगर न कहता तो वह अपने सिद्धान्तके प्रति धोखेबाजी होती, जिन मित्रोंका संग-साथ मुझे प्राप्त है, उनके प्रति धोखेबाजी होती

१, २ और ३. यहाँ मूलमें कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।

और वाइसराय महोदयके प्रति धोखेबाजी होती। मैं वाइसराय महोदयको किसी धोखेमें नहीं रखना चाहता। अगर मैं ये बातें आपसे या देशसे न कहूँ तो मैं अपने आपके प्रति धोखेबाजी करूँगा। जहाँतक असहयोगी लोग या हमारा देश मेरी सलाह माननेको तैयार होगा, मैं तो यही कहूँगा कि आपको इससे कम कुछ भी स्वीकार नहीं करना चाहिए। जबतक हमें ये चीजें प्राप्त नहीं होतीं, देश आज जिन कष्टोंके भारसे पिस रहा है उन कष्टोंसे हमें छुटकारा नहीं मिल सकता। हम ये कष्ट उठाकर सन्तुष्ट हैं, इन कष्टोंमें ही हम गौरव मानते हैं। लेकिन हम नहीं चाहते कि हर प्रकारके कष्टोंके लिए हम पहले ही से तैयार न रहें। जैसा कि लाला लाजपतरायने कहा, यह देश सब-कुछ झेलनेको तैयार है। अपने देशभाइयोंके हितोंमें मेरा विश्वास कुछ कम ही है, क्योंकि उन्होंने पर्याप्त कष्ट नहीं उठाया है। इसलिए मेरी कुछ अपनी दुःशंकाएँ हैं। मुझे विश्वास है कि जो समिति नियुक्त की जायेगी वह असहयोगियोंके नामपर मेरा यह सन्देश वाइसराय महोदयतक पहुँचा देगी कि अगर वे गोलमेज सम्मेलन बुलाना चाहते हैं तो उन्हें यह समझकर ही उसे बुलाना चाहिए कि असहयोगी लोग, मैंने जो-कुछ कहा है, उससे कम किसी भी बातसे सन्तुष्ट नहीं होंगे। मैं अभी यहाँ आपको यह भी बता देता हूँ कि हममें इस देशकी समस्त सेनाओंका नियन्त्रण-भार सँभालनेकी सामर्थ्य है और हम विदेशी मामलोंकी तमाम उलझनोंसे निबट सकते हैं। बुरेसे-बुरा यही तो हो सकता है कि धरतीसे हमारा नामोनिशान मिट जाये। किन्तु भारतके स्वतन्त्र वातावरणमें साँस ले सकूँ तो फिर भले ही मेरी हस्ती मिटनेका खतरा क्यों न हो, मैं उसके लिए भी तैयार हूँ। (हर्षध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-१-१९२२

८१. तारका सारांश

[१६ जनवरी, १९२२के पूर्व]

[मद्रास] नगर कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री एम० सिंगारावेलू लिखते हैं:

महात्माजीने इस आशयका तार भेजा है कि यद्यपि पूर्ण हड़ताल होनेके कारण उन्हें खुशी हुई, फिर भी कुछ लोगोंने सजावट वगैरहको नुकसान पहुँचाया इसलिए हमें उपद्रवी तत्त्वोंका पता लगानेकी हर चन्द कोशिश करनी चाहिए ताकि आगे उनपर नियन्त्रण रखा जा सके।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-१-१९२२

८२. मित्रताका नियम

मोपलोंके उपद्रवोंके सम्बन्धमें मौलाना हसरत मोहानीके भाषणसे बहुत-से हिन्दुओं-को क्षोभ हुआ है।[1] मद्राससे कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंने मौलाना हसरत मोहानीके विरुद्ध पत्र[2] भी लिखे हैं। वांछनीय यह है कि पाठक इन दोनोंमें से किसी भी पक्षकी बातका खयाल न करें। मौलानाकी दृष्टि दूसरी है, मलाबारी हिन्दुओंकी दूसरी है। मौलाना-ने यह मान लिया कि वह एक खास तरहकी स्थिति थी और ऐसा मानकर उसपर लड़ाईका नियम लागू किया है। मलाबारी हिन्दुओंने स्थितिकी अपनी जानकारीके आधारपर मौलानाके कथनपर आपत्ति की है। मौलानाने यह माना है कि मोपलाओं-ने वहाँ जिहाद किया है। जिहादका नियम यह है कि जो दुश्मनको मदद दे वह भी दुश्मन होता है। हिन्दुओंने सरकारी अधिकारियोंको खबर दी इसलिए वे दुश्मन हुए और इस स्थितिमें हिन्दू तो क्या कोई मुसलमान भी हो तो वे उससे भी लड़ेंगे। मलाबारी हिन्दू कहते हैं, "मोपलोंके उपद्रवको लड़ाईका नाम नहीं दिया जा सकता। यदि वह लड़ाई हो तो भी हिन्दू दुश्मन नहीं माने जा सकते क्योंकि वे तो स्वयं गुलाम हैं; हिन्दुओंने अपनी जान बचानेकी खातिर मोपलोंके छिपनेकी जगह बता दी हो तो भी वे दुश्मन नहीं माने जा सकते; मोपला उन्हें दुश्मन मानें तो भी उनके बाल-बच्चोंको और उनके मन्दिरोंको उन्हें सुरक्षित रहने देना था; यदि एक हिन्दू कोई काम करे तो उससे सब हिन्दू दुश्मन नहीं माने जा सकते; मोपलोंने जो-कुछ किया उससे उन्होंने पड़ोसीके धर्मकी रक्षा कदापि नहीं की और लड़ाईके नियमका भी पालन नहीं किया। मोपलोंका समर्थन करना ठीक नहीं है और उससे हिन्दुओंके मनमें सन्देह पैदा हो सकता है।" मैं इन तर्कोंको उचित मानता हूँ, किन्तु मैं मौलानाको दोष नहीं देता। मौलाना अंग्रेजी सत्ताको दुश्मन-जैसा ही मानते हैं। उनके विरुद्ध कोई कुछ भी करे वे उसका बचाव करते हैं। वे यह मानते हैं कि मोपलोंके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा जाता है उसमें बहुत-कुछ झूठ होता है इसलिए वे मोपलोंका दोष मानने-के लिए तैयार नहीं हैं। मैं यह मानता हूँ कि यह सब दृष्टिकी संकीर्णता है, किन्तु इसमें हिन्दुओंको दुःख माननेका कारण नहीं है। मौलाना अपने मनमें जैसा समझते हैं वैसा कहते हैं। वे सच्चे आदमी हैं और साहसी हैं। सभी लोग जानते हैं कि उनके मनमें हिन्दुओंके प्रति द्वेष नहीं है। वे जो-कुछ कहते हैं वह हिन्दुओंके प्रति द्वेषसे प्रेरित होकर नहीं, बल्कि अंग्रेजी राज्यके प्रति रोषके कारण कहते हैं।

१. मोपलोंने अगस्त १९२१ में अपने उपद्रवोंमें हिन्दुओंपर बहुत अत्याचार किये थे और मौलाना हसरत मोहानीने मुस्लिम लीगके अहमदाबादमें हुए अधिवेशनमें अध्यक्ष-पदसे भाषण देते हुए उनके आचरणको उचित अतिशोध कहकर उसका समर्थन किया था।

२. इनमें से दो पत्रोंके उद्धरणोंके लिए देखिए "हिन्दू और मोपला", २६-१-१९२२ शीर्षकको पाद-टिप्पणी १।

इन स्थितियोंमें हिन्दू क्या करें? उन्हें मलाबारी हिन्दुओंका बचाव करना चाहिए और अपना पक्ष मुसलमानोंके सम्मुख रखना चाहिए; किन्तु उन्हें मौलानापर अथवा दूसरे मुसलमानोंपर रोष न करना चाहिए। हिन्दू ऐसा मानते हैं कि कुछ मोपलोंने अत्याचार किये; इसलिए उन्हें आलोचना करनेका अधिकार है। जो मुसलमान इससे इनकार करते हैं वे मोपलोंका समर्थन भले ही करें; किन्तु दोनोंमें से एक भी पक्ष आँखों-देखी बात नहीं कहता।

फिर यह भी याद रखना चाहिए कि सब मुसलमान जैसा मौलाना कहते हैं वैसा नहीं कहते। बहुतसे मुसलमानोंने मोपलोंकी निन्दा की है। सरकारने तो मोपलोंके पागलपनका पूरा फायदा उठाया है। कुछ मोपलोंने पागलपन किया इससे उन्होंने पूरी जातिको दण्ड दिया है और अतिशयोक्ति करके हिन्दुओंको भड़काया है। मलाबारके हिन्दू भी मोपलोंकी तरह उपद्रवी हैं और उनको उसने मोपलोंसे लड़ा दिया है। सरकारने जो-कुछ किया है वह हिन्दुओंके बचावके लिए नहीं किया है। सरकारने तो केवल अपनी सत्ताका बचाव किया है।

हिन्दू और मुसलमान दोनों ही कमजोर हैं। जो कमजोर होता है वही सदा रोष करता है और द्वेष भी करता है। हाथी चींटीसे द्वेष नहीं करता। चींटी-चींटीसे द्वेष करती है। जो हिन्दू मोपलोंके अपकृत्योंसे अथवा मौलानाके समर्थनसे डरते हैं और जो मुसलमान बिना देखे और पूछताछ किये मोपलोंका बचाव करते हैं वे दोनों ही हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताकी शर्तको नहीं समझते। कुछ मुसलमानोंके दुर्व्यहार और मौलाना-जैसे लोगोंकी नासमझीसे हिन्दुओंको हताश नहीं होना चाहिए। मुसलमानोंको मौलानाकी तरह अनुचित बातका समर्थन करनेकी आदत छोड़नी चाहिए। किन्तु यदि दोनों पक्ष समझदारीसे काम लेनेवाले हों तो तकरार या कड़वाहट हो ही किसलिए? तकरारके लिए हमेशा दो पक्षोंकी जरूरत होती है। जब एक पक्ष भूल करे तब दूसरे पक्षको शान्त रहना चाहिए। तभी हिन्दू-मुस्लिम एकता टिक सकती है। जब एक भला हो, तभी दूसरा भलाई करे यह मित्रताका नियम नहीं है। यह तो न मित्रताका नियम है न शत्रुताका। यह तो व्यापार हुआ, लेन-देन हुआ। मित्रतामें व्यापार या लेन-देनके लिए अवकाश नहीं होता। मित्रता बहादुरोंमें ही हो सकती है। लेन-देन कमजोरोंके बीच होता है। हम तो कमजोर भी हैं और ताकतवर भी; इसलिए हिन्दुओं और मुसलमानोंका सम्बन्ध मित्रताका भी है और लेन-देनका भी। हम मानते हैं कि दिनपर-दिन यह लेन-देनकी भावना कम होती जा रही है और मित्रताकी भावना बढ़ती जा रही है, यदि एक पक्ष दिन-प्रतिदिन शुद्ध होता जाये और बहादुर बनता जाये तो यह मित्रता स्थायी हो सकती है।

बहादुरीका अर्थ उद्दण्डता नहीं है। जो अपनी शक्तिसे दूसरेको कुचलता है वह बहादुर नहीं है। बहादुर वह है जो शक्ति होनेपर भी किसीको नहीं डराता और निर्बलकी रक्षा करता है। बहादुर किससे डर सकता है? मुसलमान शरीरसे बली हैं। यदि उनको सारी दुनियाकी मदद भी मिल जाये तब भी हिन्दुओंको उनसे न डरना चाहिए; बल्कि ईश्वरपर विश्वास रखकर न्यायके मार्गपर चलना चाहिए और न्यायका मार्ग तनिक भी नहीं छोड़ना चाहिए। मुसलमानोंको मानना चाहिए कि

हिन्दुओंकी संख्या चाहे ज्यादा हो फिर भी वे उनका विश्वास रखेंगे और हिन्दुओंके विरुद्ध बाहरके मुसलमानोंकी सहायता लेनेमें लज्जित होंगे। किन्तु यदि दोनों पक्ष इस तरहका सभ्यतापूर्ण बरताव न भी करें और एक ही पक्ष सभ्यतापूर्ण व्यवहार करे तो भी हिन्दुओं और मुसलमानोंकी मित्रताको कभी आँच न आयेगी। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि एक पक्ष भी अपने धर्मपर दृढ़ रहेगा तो उनमें वैर कभी नहीं होगा। अपने धर्मपर दृढ़ रहना तो यही माना जायेगा कि हम अपनी सुरक्षा केवल ईश्वर-पर ही छोड़ दें और फिर निश्चिन्त होकर केवल नीतिके मार्गपर ही चलें। यदि हिन्दू मोपलोंके उपद्रवपर इस नियमको लागू करें तो हम मोपलोंका दोष देखकर भी मुसलमानोंको दोष न दें। जिन हिन्दुओंको उपद्रवमें नुकसान पहुँचा हो हम उनको सहायता दें और उनको अपने पैरोंपर खड़ा करनेकी व्यवस्था करें।

स्वराज्यका अर्थ यह है कि अकेला आदमी भी आवश्यकता होनेपर अनेकोंसे लड़े और उनसे डरे नहीं। हिन्दू मुसलमानोंकी सद्भावनापर ही निर्भर न रहें। मुसलमान हिन्दुओंके ओछेपनसे भयभीत न हों। दोनों अपनी-अपनी शक्तिपर भरोसा करें और एक-दूसरेका पोषण करें। मोपलोंके अत्याचारसे भयभीत होकर कोई भी हिन्दू भागा क्यों? अंग्रेजोंकी सेनासे डरकर किसी भी हिन्दूने मोपलोंके विरुद्ध खबर क्यों दी? मोपले कहाँ छिपे हैं, यह बतानेके लिए हिन्दू बँधे नहीं थे। किसी भी हिन्दूने मोपलोंके डरसे इस्लाम धर्मकी प्रक्रियाएँ करनेका ढोंग क्यों किया? हम आज जिस नियमको अंग्रेज सरकारके विरुद्ध लागू कर रहे हैं हमें उसी मर जानेके नियमको अत्याचारके सभी अवसरोंपर लागू करना चाहिए। यदि हम अत्याचारीके हाथों मारे जानेका भय होनेपर भी उसका कहना न करें तो हम सिंहकी तरह बली हुए। जो अत्याचारीको मारकर हटायेगा उसको स्वयं भी किसी दिन अत्याचार करनेका लालच होगा, क्योंकि उस अवस्थामें वह ईश्वरपर निर्भर रहनेकी अपेक्षा अपने बाहुबलपर निर्भर रहने लगेगा। जो अपने-आपको ईश्वर मानता है उसका तो नाश ही हो सकता है। वह कभी स्वतन्त्र नहीं हो सकता, क्योंकि उसने तो अनधि-कारपूर्वक ईश्वरका स्थान लेना चाहा है और वह स्थानभ्रष्ट हुआ है। ऐसे मनुष्यको तो पहले अपनी स्थिति पहचाननी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६-१-१९२२

८३. टिप्पणियाँ

एक गुजरातीका पश्चात्ताप

अगर गुजरातियोंको मैं सावधान न करूँ तो कौन करेगा? मैंने सुना है कि जिस गुजरातीने दूसरेका टिकट लेकर कांग्रेस अधिवेशनमें प्रवेश करनेका प्रयत्न किया था[1] उसे अब भारी पश्चात्ताप हुआ है। इस बातसे मुझे बहुत खुशी हुई है। मुझे इस घटनासे बहुत दुःख हुआ था क्योंकि मुझे सबपर विश्वास था। पश्चात्ताप करनेके बाद शर्मिन्दा होनेकी तनिक भी जरूरत नहीं है। अब्बास साहबने मुझे अपने बारेमें एक बात बताई और वह भी अत्यन्त अभिमानपूर्वक। हालाँकि वे स्वयं राजाके समान वैभव सम्पन्न थे तथापि एक बार विनोदके रूपमें घड़ी-भरके लिए उनका मन रेलवेकी चोरी करनेका हुआ। कुछ भी हो, चोरी तो हो ही गई। उन्होंने दूसरे दर्जेका टिकट खरीदा और अपने परिवारकी एक महिलाको पहले दर्जेके डिब्बेमें बिठा दिया। तैयब परिवारके बच्चे अब जवान हो गये हैं, इसलिए वे तीसरे दर्जेमें यात्रा करनेमें सुख मानते हैं। पहले तो वे सभी पहले दर्जेमें ही बैठते थे। तैयबजीको घर पहुँचनेपर शर्म महसूस हुई। उन्होंने सोचा, "मैं बदरुद्दीनका भतीजा हूँ। मैंने ऐसी चोरी की, जब संसार यह बात सुनेगा तब क्या कहेगा? और अगर संसार न भी सुने तो भी बदरुद्दीन क्या कहेंगे? मैं स्वयं अपने-आपको कैसे माफ कर सकता हूँ?" इस तरह पश्चात्ताप करते हुए अब्बास साहब वापस स्टेशनपर गये। बाकीके पैसे चुकानेकी व्यवस्था की। उस महिलाको तार दिया कि वे दूसरे स्टेशनपर पैसे चुकाकर टिकट बदलवा लें। जितने पैसोंकी चोरी की थी उससे दूना खर्च करके उन्होंने उसी क्षण सारे स्टेशनके सामने अपने अपराधको प्रकट करके पश्चात्ताप किया और अब वे इस घटनाका वर्णन करके यह बता सकते हैं कि उनका परिवार कितना प्रतिष्ठित और सम्मानित परिवार है। इसी तरह यदि उक्त भाईको शुद्ध पश्चात्ताप हुआ हो और हुआ भी है, ऐसा मुझे सब मित्र बताते हैं, तो वे एक बड़े भारी भयसे मुक्त हो गये हैं। उन्हें लज्जित होनेका कोई कारण नहीं रहा और अब वे अत्यन्त सावधानीसे देशसेवा और आत्म-सेवा कर रहे हैं। शुद्धताके भिन्न-भिन्न माप नहीं होते। जिस तरह सभी समकोण बराबर होते हैं, शुद्धता भी उसी तरह एक समान होती है। जबतक किसी वस्तुमें तनिक भी अशुद्धता होती है तबतक उसकी गिनती शुद्ध वस्तुमें नहीं होती। इसलिए हम अपने प्रति न्याय करते समय अपने-आपको कतई माफ न करें। अपने प्रति निर्दय बनने और क्रोध करनेका हमें पूर्ण अधिकार है। और यदि हम यह कला सीख लें तो हमारे अन्तरमें विद्यमान बेचारे रागद्वेषादि दुर्गुणोंको भी कुछ मुक्ति मिलेगी और हमें उनको यह मुक्ति देनी ही चाहिए।

१. देखिए "कांग्रेसका अधिवेशन और उसके बाद", ५-१-१९२२।

लालाजीका पत्र

लालाजीको १८ मासकी सजा हुई और उतनी ही उनके साथी सन्तानम्को भी। अन्य दो व्यक्तियों, मलिक लालखाँ और डा० गोपीचन्दको १६-१६ मासकी सजा हुई है। लालाजीने यह सजा होनेसे पहले एक पत्र लिखा था। इसमें वे लिखते है: "हमारी चिन्ता न करें। हमारी कठिनाइयोंको ध्यानमें रखकर लोककार्यको धक्का न पहुँचने दें। जब हमने यह कार्य शुरू किया है तब उसे पूरा ही कर लें। मैंने उपवास कभी शुरू ही नहीं किया और विशेष सुविधाएँ प्राप्त करनेके लिए कभी उपवास करूँगा भी नहीं। मैं तो राष्ट्रीय स्कूलोंके लिए हिन्दुस्तानका इतिहास लिखनेमें लगा रहता हूँ। सन्तानम् संस्कृतका अध्ययन करनेमें तल्लीन रहते हैं।" इस तरह जेलोंमें अब सच्चे अपराधियोंके स्थानपर निर्दोष विद्वानोंने वास करना शुरू कर दिया है। यह भारतके इतिहासमें कोई साधारण बात नहीं है। भारतका आधुनिक इतिहास तो वस्तुतः अबसे ही शुरू होता है।

काव्य-रस

एक बार मैं महाकविसे[1] जलियाँवाला बाग हत्याकांडके स्मारकके सम्बन्धमें बात कर रहा था और उन्हें उसमें रस लेनेके लिए प्रलोभित कर रहा था। उस समय उन्होंने कहा: "इसमें काव्य क्या है, मैं जिसमें रस लूँ? मुझ कविको तो जिसमें काव्य हो उसीमें रस आ सकता है। जलियाँवालामें तो अनजानमें फँसे लोगोंको गोलियोंका शिकार होना पड़ा था। ऐसी घटनासे जनतामें नवजीवनका संचार नहीं होता। जलियाँवाला तो जनताकी असहायावस्थाका परिचायक है। फिर इसका क्या स्मारक हो सकता है?" यह टीका बहुत सारगर्भित है। किन्तु मैंने उन्हें स्पष्ट रूपसे बताया कि स्मारककी स्थापनाका सुझाव कविके दृष्टिकोणको ध्यानमें रखकर नहीं दिया गया है। मैंने कहा कि यदि जनता जलियाँवाला बागको भूल जायेगी तो वह काव्य-रसकी उद्भावना ही न कर सकेगी। जब वे मेरी बातके मर्मको समझ गये तब उन्होंने बम्बईकी सभाके लिए पत्र लिखना स्वीकार कर लिया और उन्होंने वह पत्र भेजा भी। लेकिन चूँकि उन्हें सभामें काव्यका अभाव दिखाई दिया, इसलिए उनको सभामें उपस्थित होनेकी हिम्मत ही नहीं हुई।

किन्तु अब कविको काव्यका विषय मिल गया है। लालाजी-जैसे सिंहको कोई जबरदस्ती जेलमें नहीं ले जा सकता। वे तो स्वतः और जान-बूझकर जेल जाते हैं। वे वहाँ जाकर अपने लिए कोई विशेष सुविधाएँ नहीं माँग रहे, अपितु असुविधाको ही सुविधा मान रहे हैं। सत्याग्रही जगह-जगहपर विवश होकर नहीं बल्कि यज्ञके निमित्त मार खा रहे हैं और अपने मालको लूटने दे रहे हैं। इतना काव्य-रस इकट्ठा हो रहा है कि उसे हिन्दुस्तानके कवि जितना चाहें उतना लूट सकते हैं।

एक अंग्रेज निबन्धकार-कविने कहा है कि लोक-कलाएँ लड़ाइयोंके अन्तमें विकसित होती हैं। यह सर्वं सत्य है। जिस हदतक एक राष्ट्रकी जनता दूसरे राष्ट्रकी जनताका

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

हनन करती है उस हदतक कलाका विकास नहीं होता, वल्कि पाखण्डका विकास होता है। जिस हदतक जनता दुःख सहन करती है और मरती है उसी हदतक कलाका विकास होता है। आज विश्व-युद्धके वाद इंग्लैंड और जर्मनीका विकास नहीं हो रहा, वल्कि दोनों देशोंमें द्वेषके रूपमें विष फैला हुआ है। यह सच है कि दोनोंने दुःख सहन किया है, लेकिन उनका उद्देश्य दुःख सहन करनेकी अपेक्षा दुःख देना कहीं अधिक था। दोनोंमें से एकका भी मन शुद्ध नहीं हुआ है। फलतः वे दोनों अव फिर लड़नेकी तैयारी कर रहे हैं।

ऐसे स्वार्थपूर्ण युद्धमें पराजित पक्षके सुधरनेकी अधिक सम्भावना रहती है, इसलिए जर्मनी कदाचित उन्नति कर सकता है; लेकिन इंग्लैंडके लिए तो मुझे कहीं कोई आश्रय दिखाई नहीं देता। इंग्लैंडके लिए सम्भवतः एक ही आश्रय है और वह है हमारा असहयोग। यदि हमारा असहयोग सचमुच ही आत्मशुद्धिका आन्दोलन है तो भारत और इंग्लैंड दोनों ही उन्नति कर सकेंगे। जहाँ एक भी व्यक्ति तपश्चर्या करता है वहाँ वातावरण शुद्ध होता है। जिस तरह मैले कपड़ेमें क्षार देनेसे मैल कटता है उसी तरह आत्मशुद्धि भी क्षार है। असहयोगमें यह सम्भव है कि हम तो उन्नति करें और इंग्लैंडका पतन हो। हमारे असहयोगने इंग्लैंडको नम्र वनाने और पश्चात्ताप करनेका अवसर दिया है। यदि इंग्लैंड इस अवसरका उपयोग करेगा तो वह भव्य वनेगा, अगर नहीं करेगा और अगर हमारा असहयोग असहयोग नहीं हुआ तो इंग्लैंड तो पतनोन्मुख है ही, हम भी आज जितने दवे हुए हैं उससे कहीं अधिक दव जायेंगे। हम तो नपुंसक हैं। इंग्लैंडकी एड़ी तले कुचले हुए हम लोगोंको इस वातका अहसास ही नहीं है कि वस्तुतः हम लोग ही कुचले हुए हैं, इसलिए हम उन्हें कुचलनेके कार्यमें सहायता देते हैं। लेकिन जो अत्याचारी लोगोंको कुचलता है वह स्वयं भी गिरता है। जिस तरह मनुष्यका पैर कीचड़में पड़नेपर सने विना नहीं रहता उसी तरह जो हमें दवाकर, पतित वनाकर रखता है वह भी पतित हुए विना न रहेगा।

इसलिए मुझे विश्वास है कि यदि हमारी लड़ाईके दौरान और उसके अन्तमें हिन्दुस्तानके कवि रस-समुद्रको मुक्त भावसे उलीचें तो भी वे उसे समाप्त न कर सकेंगे।

देशवन्धुकी गर्जना

जिस तरह एक आदर्श कैदीका उदाहरण पंजावमें लालाजी प्रस्तुत कर रहे हैं, उसी तरह वंगालमें देशवन्धु चित्तरंजन दास कर रहे हैं। जिस समय अदालतमें उनका मामला चला उस समय उनके खादीके पहनावे और उनकी सादगीसे आकर्षित होकर एक भी वकील खड़े हुए विना नहीं रह सका। कुछ ही महीने पहले वे वंगालके वकीलोंके शिरोमणि थे। वकील उनके सम्मानमें कैसे खड़े न होते? वकीलोंने उन्हें वैठनेके लिए कुर्सी दी। किन्तु उन्होंने कुर्सीपर वैठनेसे विनयपूर्वक यह कहकर इनकार कर दिया: "मुझे कुर्सी नहीं चाहिए।" वे सारा समय कटघरेमें खड़े रहे। कुर्सी उनके सामने रखी भी गई लेकिन उन्होंने उसका उपयोग नहीं किया।

इस तरह चारों ओरसे शौर्य और सहनशीलताका ही अमृत वरस रहा है।

पूनाकी बहादुरी

मैं पूनापर मोहित हूँ, 'नवजीवन' के पाठक कदाचित् यह बात नहीं जानते। १९१५ में[1] जब मैं इंग्लैंडसे लौटा था तभी मैंने ये उद्‌गार प्रगट किये थे। पूनाका बलिदान ज्ञानमय है। पूनामें जितनी विद्वत्ता है उतनी किसी अन्य शहरमें नहीं है। पूनामें जितनी सादगी और स्वभावकी नरमी है उतनी अन्यत्र नहीं। पूनासे संस्कृतके अध्ययनका प्रसार हुआ है। पूनामें लोकमान्य और गोखले रहे। पूनाने कष्ट-सहन करनेमें कोई कसर नहीं उठा रखी है। पूना तो बहुत-कुछ कर सकता है। अब भी मेरी यह मान्यता है कि पूना बलिदानमें कदाचित् सबसे आगे जायेगा। श्री नरसोपन्त चिन्तामण केलकर अपना कार्य दक्षतापूर्वक चला रहे हैं। सरकार भी चालाकीसे उन्हें आजमा रही है। शराबकी दूकानोंपर जो धरना दिया जाता है वह अत्यन्त सुन्दर रूप धारण कर रहा है। वहाँ अच्छेसे-अच्छे असहयोगी धरना देनेके लिए निकल पड़े हैं। उसमें श्री केलकरने अपने समस्त परिवारको होम दिया है। सरकार केवल जुर्माना करती है। जब सरकार किसीको पकड़ती ही नहीं, तब पूनाके असहयोगी क्या करें? स्त्रियाँ भी अब बाहर निकल आई हैं। यह सच है कि इससे मुझे ईर्ष्या होती है। मुझे उम्मीद थी कि गुजरातकी स्त्रियाँ ही वस्तुतः पहल करेंगी। बंगालने कार्य शुरू किया; लेकिन सरकारने चुनौतीको स्वीकार ही नहीं किया। पूनाकी स्त्रियोंने तो ऐसा कार्य आरम्भ किया जान पड़ता है जिससे यह स्थिति उत्पन्न हो गई है कि या तो सरकारको उन्हें गिरफ्तार करना पड़ेगा या उसे अपने कानूनको वापस लेना होगा। श्रीमती केलकर, श्रीमती गोखले, श्रीयुत गोखलेकी बहन श्रीमती इन्दुमती नायक, श्रीमती यशोदाबाई फड़के और अन्य चार बहनें शराबकी दुकानोंपर धरना देनेके लिए निकली थीं। उन्हें थानेपर ले जाया गया और वहाँ ले जाकर छोड़ दिया गया। इस धरनेमें कभी जोर-जबरदस्तीकी गन्ध भी नहीं हो सकती और इसमें सन्देह नहीं कि इससे शराबकी दुकानें अवश्यमेव बन्द हो जायेंगी। पूनाकी स्त्रियाँ चतुर और दृढ़ संकल्प हैं। उनके द्वारा आरम्भ किये गये युद्धके सम्बन्धमें मुझे तनिक भी शंका नहीं है। यह युद्ध अब अच्छी तरहसे जमे बिना नहीं रह सकता और इसमें सरकारको मुँहकी खानी ही पड़ेगी। महाराष्ट्रके योद्धाओंने व्यावहारिक नीतिके रूपमें शान्तिके मार्गको अंगीकार किया है, इसलिए इसमें सन्देह नहीं कि वे शान्तिका पालन करते हुए अपना कार्य सम्पन्न करेंगे। और जहाँ शान्ति, बलिदान और ज्ञानकी त्रिवेणी बहती हो वहाँ विजयके अतिरिक्त कोई और परिणाम हो ही नहीं सकता।

अब गुजरातकी स्त्रियोंको पूनाकी स्त्रियोंसे होड़ करनी होगी। गुजरातके पुरुष पूनाके बलिदानकी बराबरी कब करेंगे? अगर वे उसके पीछे-पीछे भी चलें तो यह भी सन्तोषकी बात होगी। गुजरातने आजतक नम्रता, सादगी, शौर्य, धैर्य और देश-सेवाका मूल्य नहीं जाना है। अब गुजरातने उत्साहका परिचय दिया है; लेकिन अभी उसकी परीक्षा कष्ट-सहनकी कसौटीपर की जानी है। ईश्वर गुजरातकी लाज रखे।

१. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ २३-२४।

वलिदानका फल

वलिदानका अर्थ यह है कि वलिदान करनेवाला दूसरेकी खातिर मरता है अथवा अन्य प्रकारसे दुःख भोगता है। जो अपनी खातिर दुःख भोगता है वह वलिदान नहीं करता। जो वलिदान नहीं करता वह मनुष्य नहीं कहा जा सकता। स्वार्थके लिए जीनेवाले व्यक्तिको तो शास्त्रमें चोर कहा गया है।[1] श्री राजगोपालाचारीके पत्रसे पता चलता है कि अव मोपला कैदियोंसे किसी तरहका दुर्व्यवहार नहीं किया जाता। उन्हें अव हवादार गाड़ियोंमें ले जाया जाता है और उन्हें रास्तेमें पानी आदि भी मिल जाता है। इस तरह सत्तर मोपला कैदियोंके वलिदानसे औरोंको कुछ सुख मिला है। जो मोपला कैदी मरे उन्होंने कोई मौतकी आकांक्षा नहीं की थी। वे वेचारे तो अनचाही मौतके शिकार हुए। फिर जब असंख्य भारतीय देशकी खातिर जान-बूझकर कष्ट सहन करनेके लिए तैयार हो जायें और तव हिन्दुस्तान सुखी हो, इसमें आश्चर्यकी क्या वात है? जो पुरुष पवित्र हो जगत्की खातिर सर्वस्व अर्पित करता है वह तो चक्रवर्तीकी अपेक्षा कहीं अधिक सत्ता भोगता है। हे ईश्वर! क्या तू हममें से किसीको भी ऐसी पवित्रता और दुःख सहन करनेकी शक्ति नहीं देगा? हम तेरे दास वनकर रहेंगे, लेकिन हमें तो यही शक्ति चाहिए। हमें राजपाट नहीं चाहिए, हमें तो संसारके दुःखका निवारण चाहिए। जिस तरह मोपला कैदी अनिच्छासे घुटकर मर गये, उसी तरह क्या तू हमें देशकी — जगत्की — खातिर स्वेच्छासे मरनेकी शक्ति प्रदान नहीं करेगा? हम तुझसे प्रार्थना करते हैं कि तू हमें ऐसी शक्ति अवश्य प्रदान कर। हम तेरा आभार मानेंगे।

हम निस्सन्देह स्वतन्त्र हो गये हैं

पियर्सन, जो शान्तिनिकेतनमें महाकविके साथ रहते हैं, पाँच वर्ष हिन्दुस्तानसे वाहर रहनेके वाद अभी-अभी वापस लौटे हैं। उन्होंने हिन्दुस्तानके लोगोंमें देशकी खातिर कष्ट सहन करनेकी शक्ति देखकर एन्ड्रयूजकी मार्फत निम्नलिखित सन्देशा भेजा है:

> स्वतन्त्रताके लिए आप जो भव्य लड़ाई लड़ रहे हैं उसमें मैं आपके साथ ही हूँ। आपकी प्रवृत्तिका फल मिल चुका है क्योंकि हिन्दुस्तान स्वतन्त्र हो गया है। हिन्दुस्तानकी आत्मा अव पराधीन नहीं है। एक कविने कहा है:
>
> "रे वन्दी! अपनी आँख उघाड़कर देख। तेरी वेड़ियाँ कहाँ हैं? तेरी वेड़ियाँ कोई तेरे मनसे जुदा नहीं है। तेरा मन अगर स्वतन्त्र है तो तू अपने पाँवोंको भी स्वतन्त्र समझ।"
>
> यह वात आज हिन्दुस्तानपर लागू होती है क्योंकि हम देख सकते हैं कि हिन्दुस्तानकी आँखें खुल गई हैं और हिन्दुस्तान स्वतन्त्र हो गया है। इस सम्वन्धमें मुझे तो रंचमात्र भी शंका नहीं है। और मैं तो पाँच वर्षतक वाहर रहकर आया हूँ इसलिए यह वात स्पष्ट रूपसे देख सकता हूँ।

१. भगवद्गीता, ३-१२।

इस बातके साक्षी आज सैकड़ों कैदी हैं। स्वेच्छासे स्वीकार की गई जेलोंने हिन्दुस्तानको स्वतन्त्रताकी देवीकी झाँकी करवा दी है। शौकत अली, मोतीलाल नेहरू, लालाजी, चित्तरंजन दास और अबुल कलाम आजाद जबसे जेलोंमें पहुँचे हैं तभीसे हिन्दुस्तानकी बेडियाँ टूट गईं। अब भले ही कोई भी समझौता होता रहे। समझौतेमें सुख है अथवा खूब संघर्ष करनेमें, या दुःख भोगनेमें सुख है, कौन जानता है? समझौता तो एक प्रमाणपत्र है। बुद्धू विद्यार्थीको प्रमाणपत्रकी जरूरत होती है। जिसे अपने ज्ञानपर भरोसा है वह क्या उसे प्रमाणपत्रसे सिद्ध करनेकी कोशिश करेगा? स्वस्थ व्यक्तिके लिए डाक्टरका प्रमाणपत्र किस कामका? कांग्रेस अधिवेशनमें शामिल होनेवाले हजारों लोगोंने स्वतन्त्रताकी लहरका अनुभव किया है। यदि उन्होंने ऐसा अनुभव नहीं किया तो पियर्सनका पत्र व्यर्थ है।

लेकिन जैसे पॉल रिचर्डने नये युगके आरम्भका अनुभव किया है उसी तरह हजारों स्त्री-पुरुषोंने भी अनुभव किया है। यदि हमें इस सम्बन्धमें विश्वास हो तो हम समझौतेके बारेमें निश्चिन्त रहें।

एक ऋषिका आशीर्वाद

महाकविके पिता महर्षिके नामसे प्रसिद्ध थे और मैंने देखा है कि उनके बड़े भाई भी जिनकी आयु ७० वर्षकी है महर्षिकी पदवी पानेके योग्य हैं। उनमें आज भी अद्भुत शक्ति है। उन्हें हिन्दुस्तानकी उन्नतिमें जगत्‌की उन्नतिका आभास होता है और वे असहयोगको धर्मयुद्धके रूपमें देखते हैं। मुझे जब-जब उनका पत्र मिलता है मैं तब-तब उसका स्वागत आशीर्वादके रूपमें करता हूँ। मैं उनमें से कुछ पत्रोंको, जो पाठकोंके पढ़ने योग्य होते हैं उनके सामने प्रस्तुत करता हूँ। कांग्रेस अधिवेशनके समय उन्होंने तार भेजा था। उससे सन्तुष्ट न होकर अब उन्होंने एक पत्र लिखा है। उसका सारांश निम्नलिखित है:[1]

सिखोंकी बहादुरी

सिखोंकी बहादुरीका पारा दिन-प्रतिदिन चढ़ता ही जाता है। जिस तरह उनकी वीरतामें दिन दूनी और रात चौगुनी वृद्धि हो रही है उसी तरह उनकी सहन-शक्ति अर्थात् शान्ति बढ़ती जाती है। सरकारने अमृतसरके स्वर्ण-मन्दिरकी जो चाबी छीन ली थी उसे अब वह गुरुद्वारा प्रबन्धक समितिको वापस देनेके लिए तैयार हो गई है। लेकिन जबतक सरकार गिरफ्तार किये गये प्रत्येक नेताको छोड़नेके लिए तैयार नहीं होती तबतक गुरुद्वारा प्रबन्धक समितिने उस चाबीको वापस लेनेसे इनकार कर दिया है। फलतः सरकारकी गति सांप-छछूंदर-जैसी हो गई है। यदि वह सिख नेताओंको छोड़ देती है तो उसकी हँसी होती है तथा सिखोंकी शक्ति दूनी होती है और यदि नहीं छोड़ती तो सिखोंकी शक्ति दस गुनी बढ़ती है। अब सरकारको यह सोचना है कि सिखोंके बलको दस गुना बढ़ने देनेमें समझदारी है अथवा सिग

१. इसके बाद पत्रका गुजराती अनुवाद दिया गया है। मूल पत्रके लिए देखिए **यंग इंडिया**, १२-१-१९२२।

नेताओंको छोड़कर उपहासका पात्र बनने और सिखोंके बलको दूना होने देकर सन्तोष माननेमें।

एक अंग्रेज महिलाकी स्वीकारोक्ति

इसमें सन्देह नही कि असहयोगका मधुर प्रभाव अंग्रेजोंपर भी बढ़ता जाता है। मेरे पास इस आशयके तीन पत्र हैं; मैंने इनमें से दो को प्रकाशित किये जाने योग्य न होनेके कारण प्रकाशित नहीं किया है। लेकिन एक अंग्रेज महिलाने जो पत्र लिखा है वह निस्सन्देह प्रकाशित करने योग्य है। उनके पत्रका सारांश निम्नलिखित है:[1]

इस पत्रकी प्रत्येक पंक्तिमें हृदयकी शुद्धताकी झलक है। यह महिला मेरे समस्त कार्योमें ईसा मसीहका हाथ देखती है। मेरी कामना है कि भावुक हिन्दुओंको मेरे कार्योमें राम-कृष्णका तथा मुसलमानोंको खुदा और पैगम्बरका हाथ दिखाई दे। जहाँ-तक मेरा सवाल है मेरे कार्योमें सत्यका हाथ होना ही काफी है। सत्यमें ईश्वर अपने सहस्र नामों सहित समाया है और मुझे विश्वास है कि यदि हम अन्ततक सत्य तथा शान्तिका पालन करते रहेंगे एवं असत्य और अशान्तिका त्याग करते जायेंगे तो हम दिन-प्रतिदिन प्रगति करते जायेंगे तथा जो अंग्रेज हमें आज शत्रु-समान दीख पड़ते हैं वे ही अन्ततः हमारे मित्र और हमारे राष्ट्रवादके समर्थक बनेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६-१-१९२२

८४. पत्र : 'बॉम्बे क्रॉनिकलको'

[१६ जनवरी, १९२२]

महोदय,

'क्रॉनिकल' के आजके अंकमें[2] एक चीज छपी है, जिसे मेरे साथ आपके संवाद-दाताकी भेंट-वार्त्ता बताया गया है। मैंने आपके संवाददाता अथवा अन्य किसीको ऐसी कोई भेंट नहीं दी। जिस बातचीतकी रिपोर्ट छापी गई है, वह प्रकाशनार्थ नहीं थी। जिस हास्य-विनोद और भाव-भंगिमाओंके साथ यह बातचीत हुई, यदि उसका सजीव विवरण छापा जाये तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। लेकिन जिस रूपमें यह विवरण छपा है वह तो एक अनौपचारिक रूपसे हुई वार्त्ताका मजाक-जैसा लगता है। इस विवरणमें आवश्यक परिवर्तन किये बिना मेरे लिए पाठकके मनपर पड़ने-वाली छापको सुधार सकना कठिन है। अतः मैं पाठकोंसे कहूँगा कि वे इस पूरी "भेंट-वार्त्ता"को अपने दिमागसे निकाल दें। मुझे आशा है कि सर शंकरन् नायर वह

१. इसके बाद पत्रका गुजराती अनुवाद दिया गया है। मूल पत्रके लिए देखिए **यंग इंडिया**, १२-१-१९२२।

२. १६ जनवरी, १९२२ के अंकमें।

"भेंट-वार्त्ता" नहीं देख पायेंगे, लेकिन अगर वे उसे देखें तो 'यंग इंडिया'का अगला अंक[1] देखनेकी कृपा अवश्य करें।[2]

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-१-१९२२

८५. कार्य-समितिका प्रस्ताव

१७ जनवरी, १९२२

१७ जनवरीको बम्बईमें[3] कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक हुई। बैठकका उद्देश्य अन्य विषयोंके अलावा 'मालवीय परिषद्'की सिफारिशोंपर भी विचार करना था। इस विषयमें समिति द्वारा पास किया गया प्रस्ताव नीचे दिया जा रहा है:

वतमान तनावपर विचार करनेके लिए पण्डित मालवीयजी और उनके साथी आयोजकोंने देशके विभिन्न राजनीतिक दलोंके लोगोंकी जो परिषद् आयोजित की थी उसके लिए कार्य-समिति उन्हें धन्यवाद देती है, और परिषद्के प्रस्तावपर विचार करनेके बाद तय करती है कि अहमदाबाद कांग्रेसमें जो आक्रामक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेका निश्चय किया गया था वह आन्दोलन ३१ जनवरी, १९२२ तक या 'मालवीय परिषद्' द्वारा नियुक्त समिति गोलमेज परिषद्के लिए सरकारसे जो बातचीत चलाने जा रही है, उसका परिणाम अगर ३१ जनवरी, १९२२ से पहले प्रकट हो जाये तो उस परिणामके प्रकट होने तक, प्रारम्भ न किया जाये।

एक सफल गोलमेज परिषद्के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करनेके उद्देश्यसे कार्य-समिति यह आवश्यक समझती है कि:

(क) ऐसी सभी विज्ञप्तियाँ और सूचनाएँ, जिनके द्वारा स्वयंसेवक दलोंके संगठनको और सार्वजनिक सभाओं, धरनेदारों और कांग्रेस तथा खिलाफत समितियोंकी सामान्य गति-विधियोंको गैर-कानूनी घोषित किया गया है

१. देखिए "मालवीय परिषद्", १९-१-१९२२।

२. यह पत्र क्रॉनिकलमें इस टिप्पणीके साथ छपा था: "परिषद् तथा उसकी उपलब्धियोंपर महात्माजीसे मेरी बातचीतके बारेमें उन्होंने जो वक्तव्य भेजा है, उसके सम्बन्धमें मैं कहना चाहता हूँ कि मेरी गलत-फहमीके कारण पाठकोंके मनपर एक बुरी छाप पड़ी। इसका मुझे बहुत दुःख है। इन परिस्थितियोंमें मैं खुशी-खुशी गलतीकी सारी जिम्मेदारी अपने सिर लेता हूँ। यहाँ मैं इतना बता देना चाहता हूँ कि महात्माजीने मुझे उदारतापूर्वक आश्वस्त किया है कि वे ऐसा नहीं मानते कि मैंने जान-बूझकर यह भ्रम पैदा किया और महात्माजीने इस भूलके लिए उन्होंने मुझे क्षमा भी कर दिया है — आपका विशेष संवाददाता।"

३. न्यू इंडिया, १८-१-१९२२ के अनुसार यह बैठक गांधीजीके निवास-स्थानपर हुई थी।

या उनपर प्रतिबन्ध लगाया गया है, वापस ले ली जायें, और ऐसी सूचनाओंकी रू से जिन कैदियोंपर मुकदमे चल रहे हों या जो सजा काट रहे हों उन्हें, प्रसंगानुसार, रिहा कर दिया जाये या छोड़ दिया जाये।

(ख) अलीबन्धुओं तथा उनके साथियोंके साथ ही अन्य फतवा कैदियोंको भी छोड़ दिया जाये।

(ग) जिन अन्य कैदियोंको अहिंसक तथा अन्य निर्दोष गति-विधियोंके लिए सजा दी गई है या जिनपर इसके लिए मुकदमे चल रहे हैं, उनके मामलोंपर 'मालवीय परिषद्'के तीसरे प्रस्तावमें निर्धारित तरीकेसे विचार किया जाये और उन्हें रिहा किया जाये; और

(घ) सम्बन्धित सरकारों द्वारा उपर्युक्त काम करनेके साथ-साथ तथा यदि गोलमेज परिषद् बुलायी जाये तो उसकी कार्यवाही चलनेतक कोई हड़ताल न हो, धरना न दिया जाये और सविनय अवज्ञा न प्रारम्भ की जाये।

कांग्रेसकी माँगोंके बारेमें किसी तरहकी गलतफहमी न हो इसलिए कार्य-समिति 'मालवीय परिषद्' द्वारा नियुक्त समितिका ध्यान खिलाफत, पंजाब तथा स्वराज्य-सम्बन्धी दावे कांग्रेसके मंचोंसे सार्वजनिक तौरसे समय-समयपर जिस रूपमें पेश किये गये हैं उसी रूपमें उन तीनों दावोंकी ओर आकृष्ट करती है, और कहना चाहती है कि इसलिए कांग्रेस और खिलाफतके प्रतिनिधि इन तीनों दावोंके पूरे निपटारेकी माँग करनेको कर्त्तव्यबद्ध होंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

८६. पत्र : कोण्डा वेंकटप्पैयाको[1]

बम्बई

१७ जनवरी, १९२२

प्रिय वेंकटप्पैया[2],

वहाँ[3] जो "कर देना बन्द करो" अभियान चल रहा है, उसके बारेमें मैंने बहुत सोचा है। अगर गोलमेज परिषद् हुई तो उस स्थितिमें यह सम्भावना तो है ही कि आम सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित कर दिया जाये। लेकिन इसके अलावा मेरे खयालसे, कर-बन्दी अभियानके लिए भी आप लोग अभी तैयार नहीं हैं। मुझे ऐसी आशंका है कि प्रयोगाधीन क्षेत्रके पचास प्रतिशत लोग अब भी अस्पृश्यतासे मुक्त नहीं हो पाये हैं। वे पचास प्रतिशत लोग अहिंसाके रास्तोंपर चलनेके आदी

१. यह पत्र **हिन्दूमें जन्मभूमिसे** उद्धृत किया गया था।

२. आन्ध्र प्रादेशिक कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष।

३. आन्ध्रमें।

भी नहीं हो पाये हैं, और न उन्हें अपने-अपने क्षेत्रमें तैयार किये जानेवाले खद्दरके उपयोगका ही अभ्यास हो पाया है। विभिन्न जातियों तथा धर्मोंके लोगोंके बीच एकता-जैसी और शर्तोंका उल्लेख मैं छोड़ देता हूँ। इन परिस्थितियोंमें मेरी रायमें हम सबका यह कर्त्तव्य है कि जबतक जनसाधारणमें आवश्यक अनुशासन और आत्म-शुद्धि न आ जाये तबतक हम आम सविनय अवज्ञा प्रारम्भ न करें। अगर हम ऐसा नहीं करते तो अवज्ञा सविनय न रहकर, अपराधमूलक हो जायेगी, और इस तरह हम एक सभ्य और अनुशासित राष्ट्रकी तरह अपने मामलोंका संचालन करनेके लायक नहीं रह जायेंगे। इसलिए मेरा प्रबल अनुरोध है कि आप सभी जिलोंकी रैयतको कमसे-कम पहली किस्त चुका देनेकी सलाह दें और कार्यकर्त्ताओंको अपना सारा समय आवश्यक योग्यता प्राप्त करनेमें लगानेको कहें। मैं जानता हूँ कि मेरे इस विचारसे बहुतसे उत्साही लोगोंको निराशा होगी, लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी सफलता इस निराशामें ही निहित है, क्योंकि अगर लोग सचमुच स्वराज्यके लिए उत्सुक हैं और सविनय अवज्ञा करना चाहते हैं तो उस तीव्र इच्छाके वशीभूत होकर वे अपनी मनोवृत्तिमें आवश्यक परिवर्तन भी जरूर लायेंगे। आन्ध्रकी स्त्रियोंमें जो कलापूर्ण ढंगसे सूत कातनेकी प्रवृत्ति है और वहाँके बुनकरोंमें कलात्मक बुनाई करनेकी जो प्रवृत्ति है उसके कारण अलग-अलग क्षेत्रोंमें खद्दरका उत्पादन बहुत आसान हो जाना चाहिए। लेकिन इन योग्यताओंको प्राप्त करना कठिन हो या आसान यदि हम उससे बचनेकी कोशिश करेंगे तो हमारा प्रिय उद्देश्य ही खतरेमें पड़ जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१-१९२२

८७. भेंट: 'बॉम्बे क्रॉनिकलके' प्रतिनिधिसे

१७ जनवरी, १९२२

कल हमारे प्रतिनिधिने महात्मा गांधीसे मुलाकात की। मुलाकातमें उसने अभी हालमें बम्बईमें हुई गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें 'टाइम्स ऑफ इंडिया'में प्रकाशित सर शंकरन् नायरके पत्रके' सम्बन्धमें सवाल पूछे। स्मरण होगा कि सर शंकरन् कुछ मतभेद हो जानेके कारण समिति छोड़कर चले गये थे।

महात्माजीने कहा:

'टाइम्स ऑफ इंडिया'को लिखा गया सर शंकरन् नायरका पत्र पढ़कर मुझे

मेरे और सम्मेलनके बीच मतभेद होते हुए भी पूरा तालमेल था। मैं यह स्पष्ट कहना चाहता हूँ कि जो सवाल बहुत महत्त्व नहीं रखते थे, उनपर मैंने जरा भी हिचकिचाये बिना सम्मेलनका दृष्टिकोण स्वीकार कर लिया। जो प्रस्ताव पास किये गये वे आपसमें बहस-मुबाहिसा और विचार-विमर्श करके ही पास किये गये। यह निस्सन्देह सच है कि मैं चाहता हूँ सरकार पश्चात्ताप करे, लेकिन इसका कारण यह नहीं है कि मैं उसे अपमानित करना चाहता हूँ। इसके पीछे मेरा उद्देश्य यह है कि वह जनतासे अपना सम्बन्ध ठीक करे, और यह तो निश्चित है कि जबतक सरकार अपनी गलती स्वीकार करके अपने कदम वापस नहीं लेती, देशमें शान्ति नहीं हो सकती; और कोई समझौता या निपटारा भी नहीं हो सकता। सम्मेलनके प्रस्तावोंसे सरकारको सहायता मिलती है कि वह शोभन ढंगसे वैसा कर सके। सरकारको हिंसात्मक कार्रवाइयोंका दमन करनेका अधिकार है और उसके उस अधिकारपर कोई आपत्ति नहीं करता। श्री जहाँगीर बी० पेटिटके प्रश्नके उत्तरमें मैंने जो कहा था, वह सर शंकरन् भूल गये हैं। मैंने कहा था कि अगर जनताकी सुरक्षाके लिए और जनमतके समर्थनसे मार्शल लॉ लागू किया जाये तो ऐसा उचित मार्शल लॉ लागू करनेकी बात भी मैं मान सकता हूँ। अभी सरकारने जो तरीका अपना रखा है उसमें मार्शल लॉकी सभी खूबियाँ हैं, सिर्फ उसे यह बदनाम नाम नहीं दिया गया है। उसका उद्देश्य न तो जनताको सुरक्षा देना है और न उसे जनमतका कोई समर्थन प्राप्त है। उसका उद्देश्य एक सर्वथा गैरजिम्मेदार नौकरशाहीकी सत्ताको मजबूत बनाना है। खिलाफत सम्बन्धी माँगमें सीरियासे फ्रांसका हटना, निस्सन्देह, शामिल है, इसलिए इस सम्बन्धमें मैंने क्या कहा था, वह सर शंकरन्को भूलना नहीं चाहिए। मैंने अत्यन्त स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया था कि अगर ग्रेट ब्रिटेन सीरियाके बारेमें मुसलमानोंके दावेका ईमानदारीसे समर्थन करे तो मैं उतनेसे ही सन्तुष्ट हो जाऊँगा। मैंने कहा कि मुसलमानोंको और साथ ही मुझे भी टर्कीके राष्ट्रवादियोंकी आकांक्षाओं और भारतीय मुसलमानोंकी न्यायसम्मत माँगोंके बारेमें ग्रेट ब्रिटेनके इरादोंमें तनिक भी विश्वास नहीं है। अब अगर सरकार करा सके तो गोलमेज सम्मेलनमें असहयोगियोंको यह प्रतीति कराये कि ग्रेट ब्रिटेन मुसलमानोंकी माँग पूरी करनेके लिए अपनी शक्ति-भर सब-कुछ करनेको तैयार है। सर शंकरन्ने यह कहकर कि मैं चाहता हूँ, शान्तिकी शर्तके रूपमें मिस्रको खाली कर दिया जाये, न अपने प्रति न्याय किया है और न मेरे प्रति। बात यों हुई कि एकाएक किसीने मिस्रकी चर्चा कर दी थी। उसीके उत्तरमें मैंने कहा था कि यद्यपि खिलाफत सम्बन्धी माँगमें मिस्रका खाली किया जाना शामिल नहीं है और न हो सकता है, फिर भी जब भारतको पूर्ण स्वराज्य मिल जायेगा तब वह निश्चय ही बहादुर मिस्रियोंसे विदेशी अधीनता स्वीकार करानेके लिए उनको दबानेके उद्देश्यसे अपना एक भी सिपाही देशसे बाहर नहीं जाने देगा।

सर शंकरन्का अली-बन्धुओंपर आक्षेप करना उन्हें शोभा नहीं देता। यह सत्य है कि अली-बन्धु धार्मिक या राष्ट्रीय अधिकारोंकी प्रतिष्ठाके लिए हिंसाके प्रयोगमें विश्वास करते हैं, लेकिन मैं जानता हूँ कि कांग्रेस कार्यक्रमको उन्होंने पूरी तरह स्वीकार

किया है और आज वे इस बातके जितने कायल हैं उतने कायल कभी नहीं थे कि भारतकी परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि उसकी मुक्तिका एकमात्र मार्ग अहिंसा ही है।

सर शंकरन्ने मुझपर आरोप लगाया है कि मैंने एक वर्षमें स्वराज्य दिलानेका वादा किया था। उनसे ऐसे अज्ञानकी तो अपेक्षा नहीं थी। अगर मैंने ऐसा कोई वादा किया होता तो आज अपना सिर अपने धड़पर लिये घूमता न फिरता। मैंने जो-कुछ कहा था वह सिर्फ यह था कि अगर भारत १९२० में कलकत्तामें[1] स्पष्ट रूपसे पेश की गई और फिर नागपुरमें दुहराई गई[2] शर्तोंको पूरा कर दे तो वह एक सालमें बल्कि इससे भी कम समयमें स्वराज्य प्राप्त कर सकता है।

अन्तमें सर शंकरन्की एक और भूल सुधार दूं। अली-बन्धुओंका मामला पंच फैसलेके सुपुर्द किये जानेवाले मामलोंमें नहीं आता, लेकिन अली-बन्धु भी फतवा कैदियोंमें शामिल हैं, इसलिए उनका मामला भी उसी श्रेणीमें आ जाता है जिस श्रेणीमें अभी हालकी विज्ञप्तियोंके अनुसार पकड़े गये लोगोंके मामले आते हैं। मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि सर शंकरन् सोचते हैं कि अली-बन्धुओंकी उपस्थितिके बिना भी गोलमेज सम्मेलन हो सकता है। लेकिन मैं यह समझ सकता हूँ कि सरकारसे अपने इतने जबरदस्त विरोधियोंको जेलसे रिहा करते न बन रहा हो और वह उन्हें तभी छोड़ेगी जब उसकी इच्छा भारतीयोंको तुष्ट करनेकी हो और उसका इरादा बाहुबलके स्थानपर जनमतके बलको प्रतिष्ठित करनेका हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-१-१९२२

८८. मालवीय परिषद्

बम्बईमें श्री मालवीयजी आदिने जिस मध्यस्थ परिषद्का आयोजन किया था वह हो चुकी है। उसे सफल और असफल दोनों कहा जा सकता है। जहाँतक उसका सम्बन्ध उपस्थित सज्जनोंकी इस उत्कट अभिलाषासे था कि वर्तमान झगड़ेका निपटारा शान्तिके साथ किया जाये, तथा जहाँतक उसके द्वारा परस्पर भिन्न मत रखनेवाले लोगोंको एक ही मंचपर लाये जा सकनेका सवाल था, वहाँतक तो उसके काममें सफलता प्राप्त हुई है। परन्तु उसमें कुछ प्रस्ताव स्वीकृत कर लिये जानेके बावजूद वह मेरे चित्तपर यह प्रभाव अंकित न कर सकी कि जो लोग वहाँ एकत्र हुए वे समष्टि रूपसे वास्तविक प्रश्नकी गम्भीरता और गुरुताको अनुभव करते हैं। इस दृष्टिसे वह असफल हुई। भाषण स्वातन्त्र्य, सम्मेलन स्वातन्त्र्य तथा मुद्रण स्वातन्त्र्यके हकों-पर जोर देनेकी अपेक्षा, जो कि प्रजाके अधिकार हैं और जो कि गोलमेज परिषद्से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, परिषद्का मन गोलमेज परिषद्के आयोजनकी ओर अधिक ही

१. सितम्बरके कांग्रेस अधिवेशनमें।

२. दिसम्बरके कांग्रेस अधिवेशनमें।

खिंचा हुआ जान पड़ा। निष्पक्ष लोगोंसे मैंने यह अपेक्षा की थी कि वे अपना यह मत दृढ़ताके साथ प्रकट करेंगे कि असहयोगकी कार्यविधिके सम्बन्धमें हमारा चाहे कितना ही मतभेद क्यों न हो, प्रजाकी स्वतन्त्रता तो हम सभीकी समान विरासत है और स्वत्वकी माँगपर दृढ़ रहना भी तीन-चौथाई स्वराज्यके बराबर है; और इसलिए यदि आवश्यकता पड़ी तो हम कानूनकी सविनय अवज्ञा करके भी उसकी रक्षा करना चाहेंगे।

चूंकि मालवीय परिषद्का ध्यान इस विषयकी ओर नहीं खींचा जा सका और उसमें गोलमेज परिषद्की ही चर्चा होती रही इसलिए विचार-विनिमय इसी बातपर चल पड़ा कि उक्त परिषद्के लिए कौन-कौन-सी बातें परमावश्यक होंगी।

स्वयं मेरी स्थिति तो वहाँ स्पष्ट थी। मैं एक व्यक्तिकी हैसियतसे, बिना किसी शर्तके, किसी भी परिषद्में जा सकता हूँ। मैं तो एक सुधारक हूँ; और सुधारककी हैसियतसे मेरा यह काम ही है कि जो लोग मेरा कथन सुननेके लिए तैयार हों उनके पास मैं जाऊँ और जिन विचारोंको मैं ठीक समझता हूँ, उन्हें भी उनका कायल करूँ। पर जब मुझसे यह कहा गया कि गोलमेज परिषद् तभी सफल हो सकती है जब देशका वातावरण उसके अनुकूल हो; अतएव ऐसी अनुकूलताके लिए जिन शर्तोंकी आवश्यकता है उन्हें पेश कीजिए, तब मुझे कुछ शर्तें लिखानी पड़ीं। और मैं मंजूर करता हूँ कि प्रस्ताव-समितिने मेरी बातोंको अधिकसे-अधिक सहानुभूतिके साथ सुना और समझा तथा उन्हें मान सकनेकी हर तरह कोशिश की। परन्तु इसके साथ ही मैंने देखा कि उसने सरकारकी कठिनाइयोंपर भी खूब ध्यान दिया। उसकी यह प्रवृत्ति स्तुत्य ही थी। यदि परिषद्में सरकारकी ओरसे भेजे गये राज्य-प्रतिनिधि उपस्थित होते तो इसमें कोई शक नहीं कि उस अवस्थामें भी सरकारके पक्षकी बातें इससे अधिक अच्छी तरह पेश नहीं की जा सकती थीं।

इसका परिणाम समझौतेके रूपमें सामने आया। सरकार नये हुक्मोंको वापस ले और उनके अनुसार जिन-जिन लोगोंको सजाएँ दी गई हैं उनको तथा फतवा कैदियोंको अर्थात् अलीभाइयों तथा दूसरे सज्जनोंको जिन्हें फौजी नौकरी-सम्बन्धी फतवेके मामलेमें सजा दी गई है, छोड़ दे यह तो हम दोनोंको मंजूर था। परन्तु समितिसे यह भी कहा गया था कि कुर्कीके वारंट मन्सूख कर दिये जायें, जो जुर्माना छापेखानों इत्यादिसे वसूल कर लिया गया है वह लौटा दिया जाये, तथा मामूली कानूनकी ओटमें जिन लोगोंको अहिंसात्मक तथा दूसरे सीधे-सादे काम करनेके कारण सजाएँ दी गई हैं वे भी, उनके कार्योंके अहिंसात्मक होनेके प्रमाण मिलनेपर, छोड़ दिये जायें। समितिने देखा कि इन माँगोंमें भी बहुत-कुछ सार है। मैंने यह सुझाव पेश किया कि इसके लिए परिषद् एक समिति नियुक्त कर दे। परन्तु प्रस्ताव-समितिने जब यह प्रकट किया कि सरकारके लिए ऐसी मनमानी सिफारिशोंको मंजूर करना कठिन होगा, तब मैं पंचायत सिद्धान्तके लिए राजी हो गया और वह उस प्रस्तावमें जोड़ दिया गया। दूसरा समझौता धरना देनेके सम्बन्धमें है। मेरा कहना यह था कि यदि गोलमेज परिषद् बुलानेका निश्चय किया जाये तो असहयोगकी सारी विरोधात्मक हलचल बन्द

रखी जाये तथा शान्तिमय सद्हेतुपूर्ण धरनेको छोड़कर अन्य सभी तरहके धरने भी परिषद्का फल प्रकट न होने तक मुल्तवी रखे जायें। परन्तु विरोधात्मक हलचलोंसे जो अभिप्राय है वह मुझे इतना भयावह मालूम हुआ कि मेरे लिए उसे मान लेना सम्भव नहीं लगा; अतएव मैंने खुद अपनी ही तजवीज वापस ले ली और सद्हेतुपूर्ण शान्तिमय धरनेकी बात भी छोड़ दी, यद्यपि ऐसा करते हुए मुझे बहुत अफसोस हुआ। पर मैंने मनमें कहा कि शराबखोरीको मिटानेके उद्देश्यसे जो सज्जन शराबकी दुकानोंपर धरना देनेके काममें लगे हुए हैं वे थोड़े दिनोंके स्थगनसे होनेवाली इस हानिपर ध्यान न देंगे।

मैंने अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी कार्य-समितिको यह सलाह देना भी मंजूर कर लिया है कि कांग्रेस द्वारा स्वीकृत सामान्य सामूहिक सविनय अवज्ञा ३१ जनवरी तक स्थगित रखी जाये जिससे समिति और परिषद् सरकारके साथ सुलहकी बातचीत कर सके। हमारे उद्देश्यकी सचाई सिद्ध करनेके लिए मुझे यह परम आवश्यक मालूम हुआ। जबतक परिषद्की बातचीत जिम्मेदार लोगों द्वारा हो रही है तबतक हम कोई नया आक्रामक काम शुरू नहीं कर सकते। मैंने कार्य-समितिको यह सलाह देना भी कबूल कर लिया कि यदि गोलमेज परिषद् होने जा रही है तो जबतक वह होती रहे तबतक तमाम हड़तालें बन्द रखी जायें। इसे मैं अनिवार्य मानता हूँ। हड़तालें नौकरशाहीके प्रति अपना विरोध प्रकट करनेका साधन हैं। पर जब हम उसके साथ सुलह सम्बन्धी बातचीतमें लगे हुए हैं तो हम हड़तालें जारी नहीं रख सकते। कार्यकर्त्ता इसे याद रखें कि सामान्य सामूहिक सविनय अवज्ञाको छोड़कर अभीतक कांग्रेसकी और कोई भी हलचल बन्द नहीं की गई है। प्रत्युत स्वयंसेवकोंके नाम दर्ज करना तथा स्वदेशी-प्रचारका कार्य ये दोनों वैसे ही जारी रहने चाहिए। जहाँ-जहाँ पूर्ण शान्तिमय ढंगसे काम किया जाता हो वहाँ शराबकी दुकानोंपर धरना जारी रखा जा सकता है। जहाँ-जहाँ अकारण ही धरना देनेकी मनाही कर दी गई है वहाँ भी वह अवश्य जारी रहे। इसी प्रकार पाठशालाओं और विदेशी कपड़ोंकी दुकानोंपर भी धरना जारी रखा जा सकता है। परन्तु एक ओर जहाँ हम यह कहते हैं कि हमारा सब कार्य उत्साहपूर्वक जारी रखा जाये वहाँ दूसरी ओर हमें अधिकसे-अधिक संयमसे काम लेना चाहिए और हिंसा अथवा अशिष्टताको अपने पास तनिक भी नहीं फटकने देना चाहिए। जब शक्तिके साथ संयम और शिष्टताका योग हो जाता है तब वह अजेय हो जाती है। सविनय अवज्ञा तो हमारा अनिवार्य स्वत्व है। अतएव उसकी तैयारी तो गोलमेज परिषद्के बुलाये जानेकी अवस्थामें भी जारी ही रहेगी। और सविनय अवज्ञाकी तैयारीमें इतनी बातें शामिल हैं :

१. स्वयंसेवकोंके नाम दर्ज करना,
२. स्वदेशीका प्रचार करना,
३. छुआछूतको दूर करना,
४. वचन, कार्य और विचारतक में अहिंसाका पालन करनेकी तालीम देना,
५. भिन्न-भिन्न जातियों और सम्प्रदायोंमें एकता स्थापित करना।

मुझे मालूम हुआ है कि भारतके विभिन्न भागोंमें ऐसे भी कितने ही लोग स्वयं-सेवक सेनामें भरती कर लिये गये हैं जो न तो खादी ही पहनते हैं और न पूर्ण 'अहिंसा' के कायल हैं; अथवा यदि वे हिन्दू हैं तो यह नहीं मानते कि छुआछूतका कायल होना मनुष्य जातिके प्रति अपराध करना है। मैं यह जरूरी बात लोगोंको कहाँतक समझाऊँ कि अपने ही बनाये नियमोंका पालन न करना अपनी प्रगतिकी गाड़ीको पीछे ढकेलना है। परमेश्वर हमारे कार्यकी उत्कृष्टतासे खुश होगा उसकी मिकदारसे नहीं। जो लोग केवल वाणीसे अपनेको मुसलमान और हिन्दू कहते हैं उन्हें ईश्वरके दरबारमें स्थान नहीं मिल सकता। सच्चे और अच्छेसे-अच्छे मुसलमानसे बढ़कर इस्लाममें और क्या शक्ति है? हिन्दू धर्मके नाममात्रके हजारों अनुयायी अपने विश्वास और श्रद्धाके अनुसार व्यवहार नहीं करते बल्कि उसको कलंकित करते हैं। यदि हिन्दू धर्मका एक भी सच्चा और पूरा अनुयायी हो तो वह अकेला ही हमेशाके लिए और सारी दुनियाके मुकाबलेमें उसकी रक्षाके निमित्त काफी है। उसी प्रकार एक सच्चा और पूरा असहयोगी निस्सन्देह लाखों नाममात्रके असहयोगियोंकी अपेक्षा अच्छा है। सविनय अवज्ञाकी अच्छीसे-अच्छी तैयारी है विनयशीलता अर्थात् सत्यपरायणता और अहिंसा-वृत्तिको स्वयं अपने तथा अपने सहवासियोंके भीतर जाग्रत करना।

हमारी माँगें

इस खयालसे कि कांग्रेसकी माँगें क्या-क्या हैं इसे अच्छी तरह जानते हुए ही सब लोग गोलमेज परिषद्में शरीक हो सकें, मैंने अपनी तरफकी सब बातें साफ-साफ पेश कीं और खिलाफत, पंजाब तथा स्वराज्य-सम्बन्धी अपना दावा उपस्थित किया। उन्हें मैं यहाँ भी देता हूँ:

(१) जहाँतक मैं अपनी याददाश्तके आधारपर लिख सकता हूँ, कुस्तुन्तुनिया, एड्रियानोपल, एनेटोलिया तथा स्मर्ना और थ्रेस तुर्क लोगोंको पूर्णतः वापस दे दिये जायें। अरब, मेसोपोटामिया, फिलस्तीन और सीरियासे तमाम गैर-मुस्लिम सत्ता हटा ली जाये और इसलिए इन प्रदेशोंसे पूरी तरह तमाम ब्रिटिश सेना, फिर वह चाहे अंग्रेजी हो या हिन्दुस्तानी, वापस बुला ली जाये।

(२) कांग्रेसकी उप-समितिकी[1] रिपोर्टमें सूचित बातोंपर पूरा-पूरा अमल किया जाये और इसलिए सर माइकेल ओ'डायर, जनरल डायर तथा दूसरे अफसरोंकी, जिनकी बरखास्तगीकी राय समितिने दी है, पेंशनें बन्द कर दी जायें।

(३) पूर्वोक्त माँगें मंजूर कर ली जानेकी अवस्थामें, स्वराज्यसे हमारा अभिप्राय पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य होगा। ऐसे स्वराज्यकी योजना उन प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की जानी चाहिए जो कांग्रेसके संविधानके अनुसार निर्वाचित किये गये हों। इसका अर्थ है -- ४ आने देनेपर कांग्रेसकी सदस्यता और तब मत देनेका अधिकार। हरएक बालिग हिन्दुस्तानी, स्त्री हो या पुरुष, जो चार आने देता है और जिसने

१. अप्रैल १९१९ में पंजाबमें हुए उपद्रवोंकी जाँचके लिए नियुक्त की गई उप-समिति। देखिए खण्ड १७, पृष्ठ १२८-३२२।

कांग्रेसके ध्येयको लिखित रूपमें स्वीकार किया है, मतदाता होनेका अधिकार रखता है। स्वराज्य-संविधानके लिए प्रतिनिधि चुनना इन्हीं मतदाताओंका काम होगा। इसको कार्य रूपमें परिणत करना होगा। ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा इसमें कुछ भी रद्दोबदल नहीं किया जायेगा और यह जैसेका-तैसा कार्यान्वित किया जायेगा।

इसपर टीका-टिप्पणी करनेवाले लोग पूछते हैं कि "यदि कांग्रेसका कार्यक्रम ऐसा रूखा-सूखा और कठोर है, तो फिर परिषद्की आवश्यकता ही कहाँ रह जाती है?" मेरा मत यह है कि आवश्यकता है और सदा रहेगी।

अब इस बातपर विचार करें कि इन माँगोंकी पूर्ति किस रीतिसे की जाये। हो सकता है कि सरकारके पास इन दावोंके लिए कोई युक्तिसंगत उत्तर हो और सम्भव है वह सबके गले भी उतर जाये। कांग्रेसने अपनी न्यूनतम माँगें पेश कर दी हैं; लेकिन कमसे-कम माँगें स्थिर करनेका अर्थ यही है कि उसे अपने ध्येयके न्याय-मूलक होनेमें विश्वास है। इसका यह भी अर्थ है कि इसमें सौदा करनेकी गुंजाइश नहीं है। अतएव, इसमें किसीकी कमजोरी या असमर्थतासे फ़ायदा उठानेकी कोई बात नहीं है। सिर्फ युक्ति और तर्कका ही सहारा लेना होगा। यदि वाइसराय परिषद्का आयोजन करते हैं तो इसका मतलब यही है कि या तो वे इन दावोंके न्यायपूर्ण होनेके कायल हैं, या कांग्रेसके लोगोंके तथा दूसरोंके सामने उनकी अन्यायमूलकता सिद्ध करनेकी आशा करते हैं। इन दावोंको रद या कम करनेका प्रस्ताव सामने लानेका अर्थ है उनका तत्सम्बन्धी न्याय्यतामें विश्वास होना। यह है मेरा उस परिषद्का अर्थ जिसे मैं 'बराबरीवालोंकी परिषद्' कहता हूँ। उसमें बलप्रयोगका कहीं नामतक न हो और ज्यों ही एकको अपने पक्षमें अन्याय दीख पड़े त्यों ही वह उसको छोड़ दे। मैं वाइसराय महोदय तथा सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्तिको यकीन दिलाता हूँ कि कांग्रेसी अथवा असहयोगीगण उतने ही न्यायप्रिय हैं जितने दुनिया या इस देशके अन्य लोग हो सकते हैं। न्यायकी दिशामें प्रेरित करनेवाले तत्त्व उनमें व्याप्त हैं; क्योंकि आखिर मुनासिब प्रस्तावोंको नामंजूर कर देनेके फलस्वरूप जो मुसीबतें आयेंगी वे उन्हींको झेलनी पड़ेंगी।

मैंने लोगोंको विश्वासके साथ कहते हुए सुना है कि खिलाफतके बारेमें तो साम्राज्य सरकार लाचार है। मैं चाहता हूँ कि मुझे भी ऐसा विश्वास हो जाता। और फिर अगर साम्राज्य सरकार इस मामलेको अपना ही काम समझकर भारतके मुसलमानोंका साथ देनेको तैयार हो जाये तो मुझे बड़ा सन्तोष हो। और मैं साम्राज्य सरकारकी हार्दिक सहायताका सहारा लेकर दूसरी शक्तियोंको भी खिलाफतके दावेकी न्यायपूर्णता जँचानेका प्रयत्न करूँगा। दावेकी न्यायपूर्णताके स्वीकृत हो जानेपर भी उसको कार्यान्वित करनेके विषयमें बहुत-कुछ विचार करना बाकी ही रहेगा।

उसी प्रकार पंजाबके विषयमें सिद्धान्तको मान लेनेपर भी तफसील सम्बन्धी बातें तय करनी बच रही हैं। बरखास्त किये गये मुलाजिमोंकी पेंशनें बन्द करनेके विषयमें भी तो अनेक कानूनी कठिनाइयाँ पेश की गई हैं। पाठक शायद यह न जानते होंगे कि मौलाना शौकत अलीकी पेंशन (मेरा खयाल है कि उनका रुतबा भी वैसा ही था जैसा कि सर माइकेल ओ'डायरका) तो बगैर किसी प्रकारकी जाँचके या

वगैर उनको पहले नोटिस दिये ही बन्द कर दी गई थी। मुझे विश्वास है कि सेवा विधान (सर्विस रेग्युलेशन्स) में यह अवश्य लिखा है कि किसी भी पदाधिकारीका नाम, फिर वह चाहे कितना ही उच्च क्यों न हो, यह पाये जानेपर कि उसने अपने कर्त्तव्यकी घोर अवहेलना की है अथवा किसी प्रकारका अराजभक्तिपूर्ण काम किया है, पेंशन-सूचीमें से एकदम निकाल दिया जायेगा। कुछ भी हो सरकारको चाहिए कि वह इन अफसरोंकी पिछली सेवाओंके गीत गाये विना पंजाबकी माँगोंको नामंजूर करनेकी न्याय्यता सिद्ध करे। यदि यह भी मान लिया जाये कि भारतके प्रति कर्त्तव्यकी अवहेलना और साम्राज्यकी सेवा साथ-साथ चल सकती हैं तो भी उन्होंने भारतको जो हानि पहुँचाई है उसे देखते हुए मैं यह नहीं मान सकता कि उन्होंने साम्राज्यकी कुछ सेवा की है। मैं इन दोनोंको एक ही तराजूपर तोलनेके लिए तैयार नहीं हूँ।

स्वराज्य योजना निःसन्देह एक ऐसी चीज है जिसपर भिन्न-भिन्न मत होंगे — जितने व्यक्ति उतने ही मत। यह तो मुख्यतः एक ऐसी बात है जिसपर एक सभामें विचार किया जाना आवश्यक है। और वहाँ भी सबको अपने-अपने विचार साफ तौरपर प्रकट करने चाहिए। किसीको कोई बात अपने दिलमें दबाकर नहीं रखनी चाहिए। सबके दिलोंमें 'भारतकी स्वतन्त्रता' ही सर्वोच्च हेतु होना चाहिए। भले ही ब्रिटिश जनताको चाहे इस तरफ ध्यान देनेकी फुरसत न हो, कॉमन्स सभा इस विपयमें उदासीन हो, और लॉर्ड्स सभा इसके प्रति विरोध-भाव रखती हो, पर ये बातें इसमें बाधा बनकर उपस्थित नहीं हो सकतीं। भारतका कोई भी प्रेमी इन अवान्तर बातोंको विचारमें नहीं लायेगा। उसका ध्यान तो सिर्फ एक ही बातपर रहेगा; वह तो सिर्फ यही सोचेगा कि क्या भारत जो-कुछ चाहता है वह उसके लिए तैयार है? या वह एक बालककी तरह कोई ऐसी वस्तु माँग रहा है जिसे पचाना उसकी शक्तिके बाहर है? इस बातका निश्चय तो केवल भारतीय ही कर सकेंगे, बाहरी लोग नहीं।

इस दृष्टिसे सोचनेपर पूर्ण स्वराज्यकी योजना तैयार करनेके लिए किसी ऐसी सभा करनेका विचार मैं अवश्य ही इस समय अनुपयुक्त मानता हूँ। भारत अपनी शक्तिका कोई अकाट्य प्रमाण अभीतक नहीं दे पाया है। माना कि उसने भारी कष्ट उठाया है; किन्तु अभी अपने ध्येयके गौरवकी दृष्टिसे उसे और भी कष्ट सहन करना बाकी है। अभी उसे और भी अधिक अनुशासित बननेकी आवश्यकता है। परिषद्के प्रस्तावोंमें असहयोगियोंको एक पक्षकी तरह न रखे जानेके प्रति मैं खास तौर-पर सजग था; क्योंकि अभी हममें बहुत कमजोरियाँ बाकी हैं। जब भारतमें आत्म-नियन्त्रणके साथ बल-संचार हो जायेगा तब मैं खुद ही वाइसरायका दरवाजा खट-खटाऊँगा और कहूँगा कि परिषद् बुलाइये। और मुझे मालूम है कि वाइसराय, फिर वे चाहे कोई प्रसिद्ध कानूनदाँ हों या बड़े नामी फौजी पुरुष, प्रसन्नताके साथ उस अव-सरका लाभ उठायेंगे। मुझे अपनी कमजोरीका भान है, इसलिए मैं सीधा उनके पास नहीं जाता। परन्तु चूँकि मैं विनयशील हूँ, इसलिए मैं नरम दलवाले अथवा अन्य मित्रोंके माध्यमसे यह साफ-साफ प्रकट किये दे रहा हूँ कि मैं प्रामाणिक परिषद् या परामर्शके

किसी भी अवसरको हाथसे जाने देना नहीं चाहूँगा। और इसलिए मैंने असहयोगियोंको यह सलाह देनेमें आगा-पीछा नहीं किया कि निष्पक्ष दलके भाइयोंके पास हमें कृतज्ञ-भावसे जाना चाहिए और यह कहकर अपनी सेवाएँ अर्पित करनी चाहिए कि जिस तरह वे उचित समझें, हमसे काम लें। यदि वाइसराय अथवा अन्य कोई परिषद् बुलाना चाहें तो उसमें जानेसे इनकार करना असहयोगियोंके लिए बेवकूफीकी बात होगी। असहयोगियोंके पक्षकी सफलता लोकमतके निर्माण और जनताके समर्थनपर अवलम्बित है। उनके लिए तो दूसरा कोई बल ही नहीं है। जनताका समर्थन खो देना कुछ नहीं तो फिलहाल ईश्वरीय वाणीसे वंचित हो जाना है।

स्वराज्यकी योजना तैयार करनेके विषयमें भी मैंने सिर्फ वही उपाय सुझाये हैं जो मुझे बहुत ही व्यवहार्य मालूम हुए हैं। न तो अ० भा० कांग्रेस कमेटीने और न कार्य-समितिने ही उनपर विचार किया है। कांग्रेसके मताधिकारको ही आधार मान लेनेका सुझाव भी मेरा ही है। परन्तु इसमें मैंने जिस मूलभूत सिद्धान्तका आधार लिया है वह वास्तवमें ऐसा है जिसपर कोई आक्षेप नहीं किया जा सकता। स्वराज्य योजना तो वही हो सकती है जो लोक-प्रतिनिधियों द्वारा तैयार हुई हो। तब शासन-शास्त्रके उन विशेषज्ञों तथा दूसरे लोगोंके विषयमें क्या करना चाहिए, जो लोगों द्वारा निर्वाचित न हो सकें? मेरी रायमें तो वे भी उसमें शामिल हों और उन्हें मत देनेका भी अधिकार रहे। अवश्य ही वे अल्पसंख्यामें रहेंगे परन्तु निरन्तर अपने युक्ति-संगत तथ्यों और सुझावोंके द्वारा सभाको लाभ पहुँचाते हुए बहुमत-पर अपना असर डालनेकी आशा तो वे कर ही सकते हैं। यदि गोलमेज परिषद्में परस्पर विश्वास और आदरसे काम लिया गया तो उसके द्वारा सन्तोषजनक और सम्मानास्पद सन्धि हुए बिना न रहेगी।

अप्रिय घटना

बड़े दुःखकी बात है कि मालवीय परिषद्में से सर शंकरन् नायर एकाएक उठकर चल दिये। मेरी समझमें उन्हें मेरे अथवा बादमें श्री जिन्ना द्वारा व्यक्त विचारोंसे कुछ लेना-देना नहीं था। विशेषतया स्पीकरकी हैसियतसे उनका किसीके विचारोंसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें सहमत होना जरूरी नहीं था। मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि सर शंकरन्ने अपने अध्यक्षीय कर्त्तव्यको समझनेमें भूल की। फिर भी प्रजातन्त्रकी प्रगति-के साथ-साथ हमें स्वतन्त्रताके ऐसे गलत उपयोगतक के लिए तैयार रहना चाहिए। उन्होंने अपनी स्वतन्त्रताका जो साहसपूर्ण उपयोग किया, मैं उसके लिए उन्हें बधाई देता हूँ; यों निजी बातचीतमें मैं इसे कट्टरता कहनेमें नहीं हिचकिचाया हूँ। पर लोग लाचारीमें निराश होकर नहीं रह गये। उनके जाते ही बिना शोर-गुलके सर विश्वेश्वरय्या[1] स्पीकर चुन लिये गये, और सभाने पुराने स्पीकरकी सेवाओंके लिए धन्यवादका प्रस्ताव पास कर दिया। एक वर्ष पहले सर शंकरन्-जैसे मनुष्यके यह पद छोड़ देनेपर भारी खलबली मच जाती और लोग उन्हें मनानेके लिए दौड़ पड़ते।

१. प्रख्यात इन्जीनियर; मैसूरके दीवान।

पर अब तो राष्ट्र स्वतन्त्रता-प्रिय हो गया है। अब वह अपने हकोंको और मर्यादाको समझता है, अतएव ऐसे मौकोंको धैर्यके साथ निबाह लेता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

८९. मार्शल लॉसे भी बदतर

जबतक यह बर्बर दमन जारी है तबतक मुझे उसकी प्रामाणिक कहानियाँ पाठकोंको सुनानी ही होंगी। हाँ, जब भारतवर्ष अपने सर्वोपरि बलिदान द्वारा उसकी 'इतिश्री' कर डालेगा, तब यह क्रम अपने-आप बन्द हो जायेगा। मैं इस दमनको बर्बर इसलिए कहता हूँ क्योंकि यह जड़, जंगली, असंस्कृत और क्रूरतासे भरा हुआ है। मान लीजिए कि कुछ असहयोगियोंने हड़तालके मौकेपर अथवा दूसरे कामोंके सिलसिलेमें लोगोंको डराया-धमकाया और हिंसा-काण्ड भी मचाया, तो क्या उन अपराधियोंका पता लगाना और उनको सजा देना कोई कठिन बात है? यदि सरकारको गवाह नहीं मिल रहे हैं तो क्या इससे यह नहीं सिद्ध होता कि तमाम जनता इस सबसे सहानुभूति रखती है? कोई काम कितना ही निन्दनीय क्यों न हो, जब सारा राष्ट्र उसे करने लगता है तब वह अपराध नहीं रह जाता और उस देशके कानूनके अन्तर्गत उसपर कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती। अतएव एक गैर-जवाबदेह सरकार द्वारा किया जा रहा दमन हरगिज़ लोकप्रिय काम नहीं कहा जा सकता और न वह 'लोगोंकी रक्षाके लिए किया गया काम' ही माना जा सकता है। परन्तु आज यहाँ तो दमन इसलिए किया जा रहा है कि लोगोंका बढ़ता हुआ एक ऐसा आन्दोलन ही दबा दिया जाये जो कि इस सरकारकी काली करतूतोंके खिलाफ खड़ा किया गया है। इस दृष्टिसे यह दमन और भी ज्यादा अक्षम्य हो जाता है।

परन्तु इस लेखका हेतु यह नहीं है कि लोगोंके सामने इस दमनको अन्यायपूर्ण सिद्ध किया जाये; बल्कि उसका उद्देश्य उसकी पाशविकताको स्पष्ट करना और यह दिखाना है कि वह मार्शल लॉसे भी बदतर है।

इसके मुकाबलेमें पंजाबका फौजी कानून तो एक तरहसे सभ्यतापूर्ण चीज ही थी। और उसका नाम चूँकि मार्शल लॉ था इसलिए लोगोंके दिल थर्रा देनेका अपना उद्देश्य तो उसे पूरा करना ही था और उसने वह किया। परन्तु अब प्रचलित कानूनके नामपर, परन्तु वास्तवमें बिना किसी कानून-कायदेके, जो-जो काम हो रहे हैं उनको रोकनेवाली तो कोई चीज है ही नहीं, मार्शल लॉमें सभ्यताका कुछ-न-कुछ तो खयाल रखा ही जाता है पर इस निरंकुशतामें तो उसका नामोनिशान भी नहीं है।

फरीदपुरमें कोड़ोंकी सजाको ही लीजिए। डाक्टर मैत्र कलकत्तेके एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक हैं। उनका सम्बन्ध किसी दलसे नहीं है। उन्होंने फरीदपुर जेलका मुलाहिजा करनेके बाद वहाँका सजीव वर्णन भेजा है। दो भद्र पुरुष, जिनमें एक हेडमास्टर थे, एक साथ कोड़े लगानेकी एक चौखटसे बँधे हुए थे और उन्हें अन्धाधुन्ध कोड़े लगाये

जा रहे थे। अपराध? जेलके अफसरोंको सलाम न करना। डाक्टर मैत्रने अपने मुलाहिजेमें देखा कि जेलके रजिस्टरमें इस सजाका उल्लेखतक नहीं किया गया है। उन्हें मालूम हुआ कि कितने ही मुलजिमोंको, जिनमें कुछ हवालाती थे, रातभर हथकड़ी पहनाकर रखा जा रहा था। एक कैदीको बराबर तीन दिनतक डण्डा-बेड़ी डालकर खड़ा रखा गया था। "कारावासकी कुछ कोठरियोंमें जितने कैदियोंके लिए जगह निश्चित थी उससे लगभग दूने कैदी उनमें ठूँस दिये गये थे। जाड़ेका मौसम था। पर उनके खाने-पीने और ओढ़ने-बिछानेकी ओर किसीने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया।" बंगालकी सरकार इसका क्या जवाब देगी? वह इन घटनाओंको तो हजम नहीं कर सकती। बस, नियन्त्रण अथवा 'जेलकी मर्यादाकी रक्षा' ही उसके समर्थनका आधार हो सकता है। सरकारी सूचनापत्रमें कहा गया है कि "इन सजाओंका अभीष्ट प्रभाव हुआ है और तबसे अनुशासनका पालन हो रहा है।"

अच्छा, अब प्रयागराज आइए। संयुक्त-प्रान्तकी सरकारने अपने बरतावके विषयमें श्री महादेव देसाईका एक प्रमाणपत्र पेश किया है। महादेवभाईका सचाईके नाते कहना यह है कि अब उनके साथ सरकार मनुष्यके जैसा व्यवहार कर रही है। पर पाठक जरा महादेवभाई द्वारा वर्णित नैनी जेलके कैदियोंके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहारकी रोमांचकारी कहानी और उनकी यातनाका हाल भी, जिसमें कोड़ोंकी मार भी शामिल है, पढ़ें।

सीतामढ़ीसे समाचार आये हैं कि वहाँके लोगोंपर २५,०००) जुर्माना ठोका गया है और वहाँ दाण्डिक (प्युनिटिव) पुलिस बैठा दी गई है। सीतामढ़ी बिहारका एक सब-डिवीजन है। इस जुर्माने और दाण्डिक पुलिसका अर्थ यह है कि सीतामढ़ीके लोगोंका माल-असबाब जबरन् उठा लिया जायेगा। 'मदरलैंड'में[1] सिहुलिया, चन्दरपुर और भरतवा नामके गाँवोंमें हुई लूट-पाटका वर्णन[2] प्रकाशित हुआ है।

सिन्धका भी यही हाल है जैसा कि सिन्ध कांग्रेस कमेटीके निम्नलिखित पत्रसे[3] मालूम होता है।

> 'हिन्दू'ने रहमत रसूल नामक मार्शल लॉके एक पंजाबी कैदीका पत्र प्रकाशित किया है। इस समय वह और उसके दो साथी हैदराबाद सेन्ट्रल जेलमें हैं। वे गत नवम्बर मासमें अंडमान जेलसे लाये जाकर वहाँ एक ऐसी कोठरीमें रखे गये थे जो मौतकी सजा पानेवाले कैदियोंके लिए हुआ करती है। उन्हें तीन दिनतक भोजन नहीं दिया गया। तीन दिन बीत जानेपर डाक्टर आया और उसने उन्हें खाना दिलवाया। जब सुपरिन्टेंडेंट वहाँ आता तब-तब उनसे कहा जाता कि अदबके साथ हाथ उठाकर (जैसा कि मुसलमान लोग नमाज पढ़ते वक्त करते हैं) कहो -- "सरकार एक।" रहमत रसूलने इस अनीतिपूर्ण

१. मजहरुल हक द्वारा सम्पादित अंग्रेजी साप्ताहिक।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

३. यहाँ पत्रके कुछ अंश ही दिये हैं।

> तथा इस्लामके मूल सिद्धान्तोंमें दखल देनेवाले आदेशका पालन करनेसे इनकार करते हुए अधीक्षकसे कहा कि मेरे नजदीक खुदा ही एक है और मैं उसीकी इबादतके वक्त हाथ उठा सकता हूँ। . . . उसकी इस धार्मिकताका इनाम उसे पाँच तरहकी सजाओंके रूपमें दिया गया — ३० कोड़े, छः महीनेकी काल कोठरी, छः महीनेतक टाटके कपड़े पहनना, छः महीनेतक डंडा-बेड़ियाँ और छः महीनेतक सादी बेड़ियाँ . . . राजनैतिक कैदियोंके प्रति यहाँ के अधिकारियों-की मनोवृत्तिका यह केवल एक नमूना है। राजनैतिक बन्दियोंके साथ ऐसा बरताव किया जाता है मानो वे चोर-डाकुओंसे भी खराब हों।
>
> पाठक भूले न होंगे कि पिछली जुलाईमें पुलिसने मटियारीमें निर्दोष व्यक्तियोंपर गोलियाँ चलाई थीं। उस समय एक आदमी मरा और कितने ही घायल हुए। इस सम्बन्धमें सरकार द्वारा नियुक्त किये गये आयोगने जो रिपोर्ट पेश की है वह दबा दी गई है और बम्बई सरकारके सचिवालयमें पड़ी है। . . .
>
> हाल ही में वह [सब-इन्स्पेक्टर] जुर्मानेकी रकम वसूल करनेके लिए एक असहयोगीके घरमें, जो इस समय जेलमें है, घुस गया और उसने जो पर्दा-नशीन औरतें घरमें थीं, उनसे घरका माल-मता जबरदस्ती छीन लिया। उसने मुजरिमके भाईकी औरतकी नाकसे सोनेकी नथ तक नोंच ली।

शरीर हो चाहे सम्पत्ति, पुरुष हो चाहे स्त्री — बाहर सरकारकी वक्र दृष्टिसे कोई नहीं बचा और न कारावासमें ही जीवन सुविधामय है। केवल लोगोंके शरीरको बन्धनमें डालने-भरसे सरकारकी तृप्ति नहीं हो रही है। लोगोंको तरह-तरहकी यातनाएँ दिये बिना और उनका मान-भंग किये बिना उसका काम नहीं चलता।

इस प्रकार हम जिस कानूनके अन्तर्गत रह रहे हैं वह जलियाँवाला बाग-काण्ड रहित मार्शल लॉ ही है; बल्कि यह उससे भी गया-बीता है। जलियाँवाला बाग-काण्ड अत्याचारपूर्ण काण्ड था, तथापि वह सरकारके इरादेका स्पष्टतम प्रदर्शन था और उससे हमें अभीष्ट धक्का भी पहुँचा था। जो-कुछ था खुल्लमखुल्ला था। अब जो-कुछ हो रहा है वह कैदखानोंकी निष्ठुर दीवारोंके घेरेमें अथवा सुदूर देहातोंमें हो रहा है और इस कारण उसका स्वरूप किसीकी आँखोंके सामने नहीं आ पाता। ऐसी हालतमें हमारा साफ तौरपर यही कर्त्तव्य है कि हम मार्शल लॉको आमन्त्रित करें, और कोई बेहूदापन बरदाश्त न करें। हम अपने भीतर बन्दूककी गोलियोंका स्वागत कर सकने योग्य साहसका विकास कर सकें और १९१९ की तरह इन्हें अपनी पीठपर नहीं बल्कि बिना किसी रोषके, खुशी-खुशी अपने सीनोंपर झेलें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

९०. भूल-सुधार

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

आगा सफदरकी गिरफ्तारीपर मैंने आपकी टिप्पणी[1] अभी-अभी देखी। आपके सम्वाददाताने कुछ बिलकुल ही गलत बातें कही हैं। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि (१) भीड़ने मजिस्ट्रेटका अपमान नहीं किया था, (२) भीड़ जेलमें नहीं घुसी थी, (३) पुलिसके अधिकारीका व्यवहार शिष्ट नहीं था। इन तीन अहम मुद्दोंपर आपकी रिपोर्ट बिलकुल गलत है। . . . भविष्यमें आप किसी संवाददाताका बयान छापनेसे पहले उसकी प्रामाणिकताकी जाँच अवश्य कर लें।

सियालकोट, २०-१२-१९२१

भवदीय,
मंत्री,
नगर कांग्रेस कमेटी

मैं इस भूल-सुधारको सहर्ष प्रकाशित करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १९-१-१९२२

९१. मद्रासमें गुण्डागर्दी

डा० राजनने १३ तारीखको, मद्रासमें हड़तालवाले[2] दिन, एक पत्र[3] लिखा है जिसमें वे लिखते हैं:

> मद्रासकी हड़ताल पूर्णतया सफल रही। ऐसा लगता है जैसे पूरा शहर दिन-भरके लिए मर गया हो . . . लेकिन एक बड़े शहरकी हड़तालमें जो खतरे छिपे पड़े हैं, उनकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। हम इस बातपर गर्वका अनुभव कर रहे थे कि नगरके विस्फोटक भागोंपर नियन्त्रण कायम कर लिया गया है। . . . मैं, रामनाथन और आदिनारायण चेट्टियर खतरेके तीन-चार

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १५-१२-१९२१ का उप-शीर्षक "आगा सफदरकी ओरसे"।
२. यह हड़ताल मद्रास-आगमनपर युवराजका बहिष्कार करनेके लिए की गई थी।
३. पत्रके केवल कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं।

स्थानोंपर थे और हमने दंगा होते-होते रोका। दोष किसी खास पक्षको नहीं दिया जा सकता। जो लोग जनमतकी अवज्ञा करते हैं बस भीड़ उनके खिलाफ क्रोधसे भर उठती है। परन्तु फिर भी गांधी-पार्टीके प्रतिनिधियोंका एक मीठा शब्द, एक विनम्र उलाहना उन्हें शान्त कर देता है। हथियारबन्द सैनिकोंकी उपस्थिति उन्हें उत्तेजित करती है। शहरमें एक छोटे लड़केकी जाँघमें संगीन घोंप दी गई थी। कोई और दुर्घटना अभीतक हमारे सुननेमें नहीं आई है। अभी-अभी, यह सब लिखते हुए, मैं सुन रहा हूँ कि माउंट रोडके पास दो आदमियोंपर गोली चलाई गई है . . .

गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डन और मन्त्रि-पद स्वीकार करनेवाले पक्षके प्रमुख सर पी० त्यागराज चेट्टी खुद नगरके केन्द्रीय भाग, कोतवाल बाजारमें गये। उन्होंने सैनिक सहायताका वचन दिया। . . .

बादमें, मैं पैदल माउंट रोड गया। दुर्घटनास्थल 'वेलिंग्टन' नामका एक पारसी सिनेमाघर था। सिनेमाके सामने एक क्रुद्ध भीड़ इकट्ठी हो गई और कुछ पत्थर फेंके गये। एक पारसीने ऊपरकी मंजिलसे भीड़पर गोली चला दी। भीड़में से एक आदमी वहीं मर गया और जैसा कि मुझे बताया गया, दो जख्मी हो गये। इसपर भीड़ उत्तेजित होकर सिनेमापर टूट पड़ी और अन्दर घुसकर उसने खिड़कियाँ और फर्नीचर वगैरा तोड़ डाला। कुछ देर बाद उसपर काबू पा लिया गया और अब पूरे इलाकेमें फौज तैनात है। घुड़सवार सेना और बख्तरबन्द गाड़ियाँ गश्त कर रही हैं। यह सड़क ऐसी है जिससे युवराजको आना-जाना है। लेकिन अब युवराजका मार्ग बदलकर समुद्र-तटके साथ-साथ कर दिया गया है।

मुझे अभी-अभी सूचना मिली है कि भीड़ने सर त्यागराज चेट्टीको उनके मकानमें घेर लिया है। आज युवराजके आगमनके समय वे कौंसिलमें भी भाग नहीं ले सके। . . . पर मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि कोई ज्यादा खराब बात नहीं हुई। मैं समझता हूँ कि उन्हें शारीरिक रूपसे कोई नुकसान नहीं पहुँचा है और न ऐसी आशंका ही है।

डा० राजनका यह पत्र मैंने मद्रासको हड़तालकी सफलतापर बधाई देनेके लिए उद्धृत नहीं किया है, बल्कि हड़तालके दिन हुई गुण्डागर्दीपर शोक प्रकट करनेके लिए उद्धृत किया है। यदि हड़ताल न होती और गुण्डागर्दी न होती तो ज्यादा अच्छा होता। यह कहनेसे कि यह निरंकुश बरबादी गुण्डोंकी करतूत थी, कोई बचाव नहीं होता। क्योंकि यह इस बातका पूरा प्रमाण है कि असहयोगी मद्रासमें स्वराज्यके योग्य नहीं हैं। जो उसकी योग्यताका दावा करते हैं उन्हें हिंसाकी सभी शक्तियोंको काबूमें रखने योग्य होना चाहिए। हड़ताल शान्तिपूर्ण नहीं थी, क्योंकि जो-कुछ बेचारे सिनेमा-वालेके साथ हुआ वही दूसरोंके साथ भी होता यदि उन्होंने अपनी दूकानें खोलनेकी हिम्मत की होती। सिनेमावाले का गोली चलाना मैं इसलिए उचित समझता हूँ कि

यदि वह गोली न चलाता तो उसका सिनेमाघर बरबाद हो जाता। भीड़का प्रचण्ड रोष उचित दण्डपर उद्धत क्रोधका प्रदर्शन था। सर त्यागराज चेट्टियरके घरको घेर लेना वैयक्तिक स्वतन्त्रतामें एक कायरतापूर्ण हस्तक्षेप था। भीड़ने सर त्यागराजको युवराजका सम्मान करनेसे रोककर अपनेको अपमानित किया है और सर त्यागराज चेट्टियर जो सम्मान नहीं कर सके उससे महत्त्वको और बढ़ा दिया है। यह भीड़का तरीका हो सकता है, पर यह असहयोगियोंके 'काम करनेका' तरीका नहीं है।

डा० राजन और उनके साथियोंने हड़तालको शान्तिपूर्ण रखनेमें कोई कसर बाकी नहीं रखी। उनका हम आदर करते हैं। परन्तु मद्राससे हमें एक शिक्षा मिलती है, जैसी कि बम्बईसे मिली है। हमें अभी बहुत काम करना है, तभी हम स्वराज्यका सच्चा वातावरण पैदा कर सकेंगे। या तो हम एक सफल शान्तिपूर्ण क्रान्तिमें विश्वास रखते हैं, या फिर इस चीजमें विश्वास रखते हैं कि अहिंसा केवल हिंसाकी तैयारी मात्र है। यदि यह दूसरी बात ही सच है तो हमें अपने सिद्धान्तमें संशोधन कर लेना चाहिए। परन्तु मैं इतना आशावादी हूँ और मेरा यह विश्वास है कि भारतने अहिंसाकी भावनाको बहुत ही विलक्षण रूपसे हृदयगंम कर लिया है। अमृतसर, लाहौर, अलीगढ़, इलाहाबाद, कलकत्ता, बारीसाल और अन्य असंख्य स्थानोंपर जिस आदर्श आत्म-संयमका परिचय दिया गया है, वह यह बताता है कि जहाँ केवल प्रतिज्ञाबद्ध असहयोगी ही काम करते हैं वहाँ हम यह भरोसा कर सकते हैं कि अहिंसाका पालन होगा, लेकिन जहाँ मद्रासकी तरह अनुशासनहीन भीड़ जमा हो जाती है वहाँ असहयोगियोंका कोई नियन्त्रण नहीं रहता। हमें निराश न होकर कोई ऐसा इलाज ढूँढ़ना चाहिए जिससे मद्रास-जैसी गुण्डागर्दीकी पुनरावृत्ति न हो। हरदोईमें श्री वेंकरपर हुआ हमला भी उतना ही दुर्भाग्यपूर्ण है। सौभाग्यसे वे बच गये हैं। गिने-चुने सिरफिरे लोगोंका पता लगाना या उन्हें सँभालना बहुत ही मुश्किल है। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि यह काम किसी ऐसे अज्ञात व्यक्तिका है जिसका असहयोगसे कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन हमें इस तरहके मामलोंसे भी निपटना है। अहिंसात्मक वातावरणमें इस तरहकी घटनाएँ प्रायः असम्भव हो जानी चाहिए। परन्तु यह मानना होगा कि ऐसा अपेक्षित वातावरण अभी बना नहीं है। वह तभी बनेगा जब हम हिंसाको अपने विचारोंमें से बिलकुल निकाल देंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

९२. टिप्पणियाँ

कर-बन्दी

कुछ स्थानोंमें मैं करोंकी अदायगी बन्द करके सामूहिक सविनय अवज्ञा शीघ्र आरम्भ करनेकी इच्छा देखता हूँ। किन्तु मैं इस खतरनाक साहसिक कार्यको शुरू करनेसे पहले बहुत ही ज्यादा सावधानीका आग्रह करूँगा। हमें हिंसाकी सम्भावनाके प्रति उदासीन नहीं होना चाहिए, और इस बातकी तरफसे अपना पूरा इत्मीनान कर लेना चाहिए कि जनता अपनी फसल और पशु या अपनी सम्पत्ति जब्त होते देखकर भी आत्म-संयमसे काम लेगी। मैं जानता हूँ कि करोंकी अदायगी बन्द करना सरकारको सबसे जल्दी उलटनेका एक तरीका है। लेकिन उसी तरह मैं यह भी निश्चित रूपसे जानता हूँ कि कर-बन्दीका सफल आन्दोलन चलाने योग्य पर्याप्त शक्ति और अनुशासन अभी हमने नहीं हासिल किया है। शायद बारडोली या उससे कुछ कम हदतक आनन्दके अलावा भारतमें एक भी तहसील इसके लिए अभी तैयार नहीं है। ऐसी तहसीलोंकी पचास प्रतिशतसे अधिक आबादीको अस्पृश्यताके दोषसे मुक्त होना चाहिए और तहसीलमें तैयार की गई खादी पहननी चाहिए। मन, वचन, कर्ममें अहिंसात्मक होना चाहिए और उतना ही जरूरी यह है कि वहाँकी जनता, वे चाहे सहयोगी हों या असहयोगी, सबके साथ मित्रताका व्यवहार रखती हो। आवश्यक अनुशासनके बिना कर-बन्दी करना अक्षम्य पागलपन होगा। इससे स्वराज्यके बजाय अराजकता फैलनेकी सम्भावना है। इसलिए मैं उस चेतावनीको फिर दुहरा दूं जो मैं बार-बार दे चुका हूँ कि पहले तो सामूहिक सविनय अवज्ञा मेरी व्यक्तिगत निगरानीके सिवा नहीं की जानी चाहिए, और निश्चय ही दिल्लीमें[1] उसके लिए रखी गई शर्तें पूरी किये बिना तो कभी नहीं की जानी चाहिए।

'सरकार सलाम'

सिन्धसे आया वह पत्र मैं उद्धृत कर चुका हूँ जिसमें बताया गया है कि हैदराबादमें बन्दियोंसे किस बातकी अपेक्षा की जाती है।[2] एक तार नोआखालीसे मिला है जिसमें यह पूछा गया है कि असहयोगी बन्दियोंको "सरकार सलाम", यह वाक्य बोलना चाहिए या नहीं। मेरे विचारमें यह वाक्य तथा "सरकार एक है", ये दोनों ही वाक्य अपमानजनक हैं, और इनमें से दूसरा तो धर्मकी दृष्टिसे भी अनुचित है। धार्मिक प्रवृत्तिका कोई भी व्यक्ति न तो यह कह सकता है और न विश्वास ही कर सकता है कि सरकार केवल एक है। यह बात केवल ईश्वरके लिए और अकेले उसीके लिए कही जा सकती है। इसलिए जहाँ मैं राजनीतिक बन्दियोंको यह सलाह दूँगा कि

१. देखिए खण्ड २१ पृष्ठ. ४३२-३५।
२. देखिए "मार्शल लॉसे भी बदतर", १९-१-१९२२।

वे जेलके नियमोंका, जहाँतक कि वे अनुशासन कायम रखनेके लिए हों, पालन करें, वहाँ उन्हें अनुशासनके नामपर थोपी जानेवाली तमाम अपमानजनक प्रथाओंका, जानका खतरा उठाकर भी विरोध करना चाहिए। "सरकार सलाम", इस वाक्यकी तरह ही अधिकारियोंके आगे अपने हाथोंकी हथेली फैलाने या झुककर बैठनेकी प्रथा है। ये बातें खतरनाक अपराधियोंके लिए आवश्यक हो सकती हैं, पर एक असहयोगीसे इस प्रकारके अपुरुषोचित प्रदर्शनोंकी आशा नहीं रखनी चाहिए।

नया चरखा

अहमदाबादकी प्रदर्शनीमें एक उन्नत चरखा दिखाया गया था जिसमें अनेक तकुए थे। यह शायद अबतक का सबसे सफल प्रयास है। परन्तु मैं जनताको इस बातकी ओरसे सचेत करता हूँ कि वह क्रान्तिकारी आविष्कारोंकी प्रतीक्षामें न रहे। प्रचलित चरखा अपने ढंगकी एक मुकम्मिल चीज है। मानसिक श्रम और राष्ट्रके समयको बचानेकी दृष्टिसे, मेरा स्वदेशी-प्रेमियोंसे यह आग्रह है कि वे उन्नत चरखोंको, जिनसे पुराने चरखेकी अपेक्षा बहुत सूतके उत्पादनकी आशा की जा रही है, भूल जायें। हमें सारी शक्ति पुराने नमूनेको ही ज्यादा टिकाऊ, सस्ता और सफरी बनानेमें लगा देनी चाहिए।

ईसाइयोंमें जागृति

श्री एन्ड्रयूज लिखते हैं:[1]

> कुछ समय पहले जब मैं श्री स्टोक्ससे सेन्ट्रल जेलमें मिलनेके लिए लाहौर गया था तो कोई पन्द्रह-बीस भारतीय ईसाई छात्रोंका एक दल वहाँ मुझसे मिलने आया। . . . उन्होंने मुझसे खासतौरपर पूर्वी आफ्रिका और उगाण्डाकी मेरी हालकी यात्राके बारेमें पूछा। मैंने उन्हें यह बतानेकी कोशिश की कि यदि उनमें से कुछ लोग, रुपया कमानेके लिए नहीं बल्कि आफ्रिकियोंकी प्रेमसे सहायता करनेके लिए, मध्य आफ्रिका जा सकें तो यह बहुत ही सुन्दर रहेगा। . . . उनमें से दो वापस आये और मुझसे बोले, "अपने सब साथियोंकी ओरसे हम आपको यह बतानेके लिए आये हैं कि आपके पाससे जानेके बाद हमने बाहर अपनी एक संक्षिप्त अनौपचारिक सभा की थी और सर्वसम्मतिसे यह प्रस्ताव पास किया था कि आपसे यह प्रार्थना की जाये कि आप महात्मा गांधीको हमारा प्रेम-सन्देश दें और यह बता दें कि हमारे हृदय उनके साथ हैं।

नवयुवकोंका त्याग

नवयुवक श्री बरुआने, जो जेल चले गये हैं, मुझे नीचे लिखा लम्बा तार[2] भेजना उचित समझा है। मैं इसे सही ढंगसे काम करनेकी लगन और इच्छाके एक उदाहरणके तौरपर प्रस्तुत करता हूँ।

१. पत्रके केवल कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये गये हैं।

२. तार यहाँ नहीं दिया गया है। प्रेषकने लिखा था कि उसने अपने जन्मस्थान गोलाघाटमें एक असहयोग संगठन बनाया है और चूँकि वह जेल जा रहा है, उसका अधूरा काम उसका भाई पूरा करेगा।

अमेरिकासे

राष्ट्रीय आन्दोलनका हिन्दुस्तानसे बाहरके हमारे लोगोंपर गहरा असर पड़ रहा है। प्रोफेसर कोसाम्बी, कैम्ब्रिज (मेसेचुसेट्स)से लिखते हैं:[1]

> पत्रके साथ टी० एस० एफ०के[2] लिए जो अपील है वह यहाँ कोई सात हफ्ते पहले जारी की गई थी। आजतक इकट्ठा हुआ चन्दा १५६ डालर या ५७० रुपये हैं, जिसका एक चैक मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। . . .ज्यादातर चन्दा गरीब भारतीय छात्रोंसे इकट्ठा हुआ है जो इस देशमें गुजारेके लिए अपने श्रम या छात्रवृत्तियोंपर निर्भर हैं। यह रकम किस तरह खर्च की जाये, इसका फैसला हम पूरी तरह आपपर छोड़ते हैं।
>
> बोस्टन टी पार्टी और बंकर हिलकी लड़ाईके समयसे लेकर आयरलैंडके सिन फेन आन्दोलनतक, पृथ्वीकी सभी जातियोंने देशी या विदेशी तानाशाहीसे मुक्त होनेके लिए शक्तिके ही हथियारका प्रयोग किया था। किन्तु भारतने आपके नेतृत्वमें स्वाधीनताके लिए एक नया साधन खोज निकाला है। और यह, जैसा कि 'नेशन' (न्यूयार्क)ने लिखा है, "एक ऐसा रहस्य है जो सदियोंतक लड़कर भी खोला नहीं गया था।" इस देशके अखबार, घोर रेडिकल और घोर कंजर्वेटिवतक, एक स्वरसे आपकी और भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलनकी सराहना कर रहे हैं। यह निश्चय ही हमारे लिए एक बड़ा लाभ है। . . .

अपील मैंने छोड़ दी है, क्योंकि उसका आशय इस पत्रमें आ गया है। यह रकम दलित वर्गोके कार्यके लिए निर्धारित कर दी गई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

९३. जेलमें कोड़े लगानेका मामला

आगरा जेल जाते समय श्री महादेव देसाई द्वारा लिखे गये पत्रका[3] अनुवाद नीचे दिया जा रहा है। हो सकता है, यह पत्र डाकमें डालकर उन्होंने जेलका नियम तोड़ा हो। मैं किसी तरहका नियम-भंग पसन्द नहीं करता, लेकिन इस मामलेमें तो मेरे सामने कोई रास्ता ही नहीं है। जैसे कर्त्तव्य-भावसे प्रेरित होकर श्री देसाईको यह पत्र डाकमें डालना पड़ा, वैसे ही कर्त्तव्य-भावसे मजबूर होकर मैं इसे छाप रहा हूँ। इस नियम-भंगके लिए अगर महादेव देसाईको भी कोड़े लगाये जायें तो मुझे उसकी

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

२. तिलक स्वराज्य-कोष।

३. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। तथापि देखिए "टिप्पणियाँ", १५-१-१९२२ का उप-शीर्षक "श्री महादेवका पत्र"।

परवाह नहीं है। कारण, यह नियम-भंग आखिरकार चीलरोंसे भरे हुए कपड़े पहननेसे इनकार करने और निर्दोष-भावसे जयजयकार करनेसे तो ज्यादा ही बुरा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-१-१९२२

९४. तार: कोण्डा वेंकटप्पैया तथा अन्य लोगोंको[1]

[२० जनवरी, १९२२ के पूर्व][2]

वहाँकी स्थितिके बारेमें तो सबसे अच्छी तरह आप ही निर्णय कर सकते हैं। अगर दिल्लीवाली शर्तें पूरी हो गई हों और आपको भरोसा हो तो मुझे हस्तक्षेप करनेका कोई अधिकार नहीं है। ईश्वर आपको सफलता दे। आपके सभी विनम्रतापूर्ण सत्प्रयत्नोंमें वह सहायक होगा। हररोज मुझे स्थितिसे अवगत कराते रहिये।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-१-१९२२

९५. पत्र: एक मित्रको[3]

२१ जनवरी, १९२२

प्रिय . . .,

मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जल्दबाजीमें मैं कोई कदम नहीं उठाऊँगा। मैं ईश्वरसे निरन्तर प्रार्थना करता रहता हूँ कि वह मुझे प्रकाश दे, रास्ता दिखाये।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१. यह तार श्री वेंकटप्पैया तथा अन्य लोगों द्वारा भेजे गये उस तारके उत्तरमें भेजा गया था जो उन्होंने गांधीजीके [१७ जनवरी, १९२२ के] पत्रपर विचार करनेके बाद गुण्टूरकी स्थितिका हवाला देते हुए भेजा था।

२. वेंकटप्पैयाने यह तार २० जनवरी, १९२२को **हिन्दूमें** प्रकाशनार्थ भेजा था।

३. यह पत्र किसको भेजा गया था यह मालूम नहीं है। साधन-सूत्रमें बताया गया है कि उन दिनों गांधीजीको "जल्दबाजीमें कोई अविवेकपूर्ण कदम न उठानेके लिए आगाह करते हुए" बहुतसे लोग पत्र लिखा करते थे। और यह पत्र बारडोलीके लिए प्रस्थान करनेसे ठीक पहले उन्होंने "किसी बहुत ही खास मित्रको" लिखा था।

९६. स्वराज्य कहाँ है?

भगवान् जाने क्या हुआ, जबसे लालाजी, दास, नेहरू और मौलाना अबुल कलाम गिरफ्तार हुए तबसे लोगोंने मुझसे यह बात पूछना ही बन्द कर दिया है कि स्वराज्य कहाँ है? मेरे मनमें जो चिन्ता रहा करती थी वह दूर हो गई है और मुझे यही लगता है कि अब मुझसे यह पूछनेवाला कोई रहा ही नहीं। लोग तो मुझे तार तक भेजने लगे हैं कि "स्वराज्य-प्राप्तिपर आपको बधाई।" पॉल रिचर्डने यहाँ आनेपर ३१ दिसम्बरको अपने भाषणमें कहा कि नवयुगका आरम्भ हो गया है। पियर्सनने शान्तिनिकेतनसे पत्र भेजा है कि "मैं पाँच वर्ष बाद आकर देखता हूँ कि भारत तो स्वतन्त्र हो गया है।"

स्वराज्य तो एक मनोदशा है। जब इस मनोदशाकी प्रतिष्ठा हो जायेगी तभी उसकी प्रतिमा बनेगी। जबसे हमारी मनोदशा बदली बस, तभीसे स्वराज्यको मिला हुआ मानिये।

यद्यपि मैं समझौतेके किसी भी अवसरको खोनेवाला आदमी नहीं हूँ, परन्तु मैं भारतकी शक्तिको पहचान चुका हूँ; इसलिए समझौता करते हुए डरता हूँ। यदि हमारा विकास पूरा होनेसे पहले ही समझौता हो जाये तो फिर हमारी दशा कैसी हो? हमारी दशा नौ मास गर्भमें रहनेके पहले ही पैदा होने और थोड़े ही दिनोंमें मर जानेवाले बालककी तरह हो जा सकती है। पुर्तगालमें अल्प समयमें विप्लव हुआ तथा राज्य-क्रान्ति हो गई। इससे अब वहाँ विप्लव ही हुआ करते हैं। वहाँ किसी भी सत्ताकी जड़ जम ही नहीं पाती। टर्कीमें जब १९०६ में अचानक राज्य-क्रान्ति हुई तब उसे सब लोगोंने बधाइयाँ दीं; परन्तु वह तो चार दिनकी ही चाँदनी थी। वह परिवर्तन स्वप्नवत् विलीन हो गया। उसके बाद टर्कीको बहुत दुःख भोगने पड़े हैं और कौन कह सकता है, उस वीर राष्ट्रको अभी कितने दुःख और भोगने पड़ेंगे।

इन घटनाओंको देखते हुए मैं कई बार असमंजसमें पड़ जाता हूँ और समझ नहीं पाता कि कौन-सी बात ठीक है। इस समय तो निस्सन्देह मेरे मनमें यह डर समाया हुआ है कि यदि समझौता हो जायेगा तो हम न जाने कहाँ जा पहुँचेंगे।

अभी लोगोंकी समझमें यह बात साफ-साफ नहीं आई है कि स्वराज्य प्राप्ति ऐसे यन्त्रके द्वारा हो सकती है जिसे एक अनपढ़ देहाती बढ़ई भी बना सकता है और जिसे एक निर्दोष कोमलांगी कुमारी आसानीसे चला सकती है। तथापि मुझे दिनपर-दिन यह विश्वास होता जाता है कि भारतको उसी यन्त्रकी बदौलत स्वराज्य प्राप्त होगा, उसके बिना हरगिज नहीं।

क्या हमें इस बातका यकीन हो चुका है कि सच्ची सार्वजनिक शिक्षा अक्षर-ज्ञानमें नहीं बल्कि शीलमें, हाथों और पैरोंके उद्योगमें और शारीरिक श्रममें है। गुजराती बच्चोंके माँ-बापोंके मनोंसे अभी अक्षर-ज्ञानका मोह दूर नहीं हुआ है। वे भी अभी अक्षर-ज्ञानके स्थानको नहीं पहचान पाये हैं। वे भी अभी इस बातको स्वीकार नहीं

करते कि बालकोंको पहले नीतिकी शिक्षा देनी चाहिए, फिर उनके शरीरको सुगठित बनाना चाहिए और फिर आजीविकाके साधनके रूपमें कोई उद्योग-धन्धा या कला सिखानी चाहिए। इसके बाद उनकी मानसिक शक्तिका विकास करके अलंकारके रूपमें उन्हें अक्षर-ज्ञान देकर विभूषित करना चाहिए। मुझे अब्बास साहबने बताया कि बहुतसे माता-पिता अपने बच्चोंको नडियादके सरकारी हाईस्कूलसे निकाल लेनेके लिए तैयार ही नहीं हैं। गुजरातमें माँ-बाप अपने बच्चोंको उन राष्ट्रीय पाठशालाओंमें भेजने और उनमें मिलनेवाली स्वतन्त्रताकी शिक्षाके मूल्यको समझनेके लिए अभीतक तैयार नहीं हैं जिनमें विद्यार्थियोंका नैतिक बल बढ़ता है।

वकीलोंका तो पूछना ही क्या? क्या अभी उनसे अदालतोंका मोह छूट पाया है? क्या हम अपने लड़ाई-झगड़ोंका निपटारा अपने घरमें ही करने लगे हैं? क्या अभी हमने यह जान लिया है कि न्याय महँगा न होना चाहिए। अभी तो बड़े-बड़े धर्म-स्तम्भ माने जानेवाले साम्प्रदायिक नेतागण धार्मिक झगड़ोंका फैसला करानेके लिए प्रीवी कौंसिलमें जानेकी बात सोचते हैं। अभी वकीलोंने बड़े-बड़े मेहनतानोंका मोह नहीं छोड़ा है। इसी कारण न्याय अभी सोने और अशर्फियोंसे तोला जाता है। ऐसी अवस्थामें यदि आज समझौता हो जाये तो हमारे लिए कष्ट-सहनसे आत्मशोधन करना तो बाकी ही रह जायेगा और समझौता हो जानेके बाद कौन किसकी बात पूछने लगा? अदालतें जैसी आज चलती हैं वैसी ही चलती रहेंगी। फिर रामराज्य क्या हुआ? रामराज्यमें निश्चय ही न्यायकी बिक्री नहीं हो सकती।

क्या हिन्दुओं और मुसलमानोंमें पूरी एकता हो गई है? क्या उनके मनमें से एक-दूसरेके प्रति शक दूर हो गया है? क्या देशके भविष्यके विषयमें उनकी कल्पनाएँ भी एक हो गई हैं? दोनोंको परस्पर मित्रता करनेकी आवश्यकता तो मालूम होती है; परन्तु दोनोंके दिल अभी एक नहीं हो पाये हैं। हाँ, वे एक होते जरूर जा रहे हैं। समझौता हो जानेपर यह प्रक्रिया बन्द हो जायेगी। अतः जबतक दोनोंमें एकता स्थापित नहीं हो जाती तबतक स्वराज्यकी बात करना भी व्यर्थ है।

> ज्यां लगी आतमा तत्त्व चीन्यो नहि
> त्यां लगी साधना सर्व जूठी।

यह कथन स्वराज्यके सम्बन्धमें बिलकुल ठीक है। आत्माकी जगह स्वराज्य शब्द रख दें, बस अर्थ ठीक-ठीक व्यक्त हो जायेगा। अभी हमें स्वराज्यका तत्त्व जानना बाकी है। हिन्दुओं और मुसलमानोंकी मित्रताका अर्थ यदि पारसियों, ईसाइयों और यहूदियोंके प्रति शत्रुता हो तो वह सारे संसारके लिए विनाशकारी बात होगी। इसलिए जबतक हम हिन्दुओं और मुसलमानोंकी मित्रताका अर्थ अच्छी तरह नहीं समझ पाते तबतक समझौतेकी इच्छा करना ही भूल है।

और इस साध्यका साधन है शान्ति। क्या हमने उसे प्राप्त कर लिया है? क्या हमें प्रतीति हो गई है कि हमारा असहयोग शान्तिमय है और वह हमारे बलका द्योतक है? हम तो शान्तिको दुर्बल मनुष्यका ही शस्त्र मानते हैं और उसकी महिमाको नहीं पहचानते और उससे लजाते हैं। यह तो अशर्फीको अठन्नी समझकर चलानेके बराबर मूर्खता है। शान्ति बलिष्ठ मनुष्यका शस्त्र है और उसीके हाथमें उसकी शोभा

होती है। शान्तिका अर्थ है क्षमा और क्षमा वीरका भूषण है। जिस मनुष्यको भूख न हो यदि वह भोजन न करे तो उसे उपवासका पुण्य नहीं मिल सकता? जिसमें मारनेकी शक्ति नहीं है वह यदि किसीको नहीं मारता तो कोई पुण्य नहीं करता। अनिच्छासे जो काम किया जाता है उससे पुण्य मिल ही नहीं सकता। बारडोली और आनन्दके जो योद्धा संग्रामकी तैयारी कर रहे हैं वे जब एक भी पारसी, एक भी अंग्रेज और एक भी सहयोगी भाईको न सतायें और उनके प्रति वैर-भाव न रखें, तब वे शान्तिपूर्ण युद्धकी सेनामें शामिल होने योग्य माने जा सकेंगे। जो लोग शान्तिके नामपर अशान्तिके काम करते हैं वे देशद्रोह करते हैं, इतना ही नहीं बल्कि वे जगत्द्रोह भी करते हैं, क्योंकि आज जगत् हमारे शान्ति-शस्त्रके प्रयोगको तृषातुरकी तरह टकटकी लगाकर देख रहा है। जबतक भारत शान्तिका उपयोग बलवान्के शस्त्रकी तरह करना नहीं सीखता तबतक समझौतेको अस्पृश्य समझकर उससे सौ कोस दूर रहना चाहिए।

और हिन्दू पाठकोंसे मैं क्या कहूँ? हिन्दू लोग जबतक ढेढों और भंगियोंको अपने सगे भाईकी तरह न मानेंगे तबतक, मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि वे हिन्दू ही नहीं हैं; और यह बात मैं अपनेको एक कट्टर हिन्दू समझकर कहता हूँ। जिस दिन हिन्दू भंगियोंको प्रेमसे गले लगायेंगे उस दिन आकाशसे सुमन-वृष्टि होगी और उसी दिन सच्ची गोरक्षा होगी। मनुष्यका तिरस्कार और दया ये दोनों बातें एक साथ नहीं चल सकतीं। हम ढेढों, भंगियोंके दोष प्रेमसे दूर कर सकते हैं। आनन्दशंकर ध्रुवके शब्द मेरे कानोंमें हमेशा गूंजते रहते हैं। हमारे हृदयमें स्थित ढेढ-भंगी भावना ही हमारी शत्रु है और वही अस्पृश्य है। जिन देहधारियोंको अस्पृश्य माननेका पाप हम कर रहे हैं वे तो हमारे प्रिय जन हैं। उनके स्पर्शसे, उनकी सेवासे तो हमें पुण्य प्राप्त होगा। यदि वैष्णव किसी ढेढ अथवा भंगीके शरीरसे सांपके काटेका जहर चूसकर, बिना नहाये मन्दिरमें चला जाये तो उसके प्रवेशसे मन्दिर भी पवित्र हो जायेगा। यह तो मानो कृष्णके घर सुदामा या विदुर ही पहुँच गये। जबतक छुआछूत-रूपी अश्वत्थको हम जड़मूलसे न उखाड़ डालेंगे या आनन्दशंकर ध्रुवकी तरह अस्पृश्यता-का सच्चा अर्थ न समझेंगे तबतक हमें समझौतेका खयाल भी न करना चाहिए।

ऐसे महान् कार्य और ऐसी आत्म-शुद्धि तो हम कष्ट-सहनके द्वारा ही कर सकेंगे। जो अपने मोक्षके लिए मरना जानता है, वही मोक्ष प्राप्त करता है। बिना इच्छाके मरनेवाले मनुष्योंको अवगति प्राप्त होती है। इस प्रकार इच्छापूर्वक मरनेवाला मनुष्य ही मोक्षके योग्य होता है। ऐसे ही हम भी जब पूर्वोक्त साधनोंपर दृढ़ रहते हुए मरनेतक का भय छोड़ देंगे तभी स्वतन्त्रता अथवा स्वराज्य प्राप्त करेंगे। देशबन्धु दास, लालाजी, मोतीलालजी, मौलाना अबुल कलाम और अन्य नेता हमें मरनेका मन्त्र सिखा रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि हम उस मन्त्रको सीख भी गये हैं। इसीसे कोई यह नहीं पूछता कि स्वराज्य कहाँ है? सब यही कहते हैं कि जब हममें स्वेच्छापूर्वक मरनेका बल आ गया तब स्वराज्य प्राप्त ही है। और शेष तो मृगजल ही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-१-१९२२

९७. सर्वदलीय सम्मेलन

भारतभूषण पण्डित मदनमोहन मालवीयने जो सर्वदलीय सम्मेलन बुलाया था, वह समाप्त हो गया। अब हम उसके निष्कर्षोंकी जाँच करते हैं।

जो लोग यह मानते हैं कि असहयोगी ऐसे सम्मेलनमें जाकर क्या करेंगे, कहा जा सकता है कि वे असहयोगके तत्त्वको नहीं समझते। असहयोगी सहयोगका कोई भी अवसर हाथसे नहीं जाने देता। हाँ, वह यह विचार अवश्य करता है कि ऐसे हर अवसरसे उसके कार्यको बल मिलता है या नहीं। जितनी शान्तिपूर्ण प्रवृत्तियाँ होती हैं उन सबका अस्तित्व लोकमतपर अवलम्बित है। जो अपने मतका प्रचार शान्तिसे ही करना चाहता है उसके लिए न्यायके अतिरिक्त अन्य कोई बल नहीं होता, इसलिए वह जिसे सत्य मानता है उसे हरएक मनुष्यको बतानेको तत्पर रहता है। इस स्थितिमें जब असहयोगियोंको सम्मेलनमें आनेका निमन्त्रण दिया गया तब उस निमन्त्रणको स्वीकार करना उनका कर्त्तव्य था।

किन्तु सम्मेलनमें जानेपर भी वे उससे अलग रहे। उन्होंने उसमें अपना कोई मत नहीं दिया। असहयोगी तटस्थ लोगोंको दोनों पक्षोंके बीच दूत अथवा बिचौलियोंके रूपमें प्रयुक्त करनेके लिए तैयार थे, और मेरे खयालसे यही ठीक भी था। असहयोगियोंने नियमपूर्वक कार्रवाई करके सम्मेलनमें बोलनेके लिए एक मुझको ही भेजनेका निश्चय किया। इससे उन्होंने कांग्रेसकी कीर्ति बढ़ाई और लोगोंका समय बचाया। ऐसे सम्मेलनमें असहयोगियोंको अपनी बात कहनेकी बजाय दूसरोंकी बात अधिक सुननी थी। इस तरीकेपर अमल करनेसे नम्रताकी रक्षा हुई, और एक-दूसरेसे कोई कहा-सुनी नहीं हुई और कार्रवाई अच्छी तरह निपट गई।

सर शंकरन् नायर अकारण ही नाराज हो गये। इसमें पहला कारण मेरा रुख था।[1] मैंने एकके-बाद-एक जो शर्तें सामने रखीं वे उन्हें अच्छी नहीं लगीं। उन्होंने इसी बातपर सम्मेलनसे चले जानेकी इच्छा प्रकट की। किन्तु उन्होंने जब यह देखा कि उनकी बात मालवीयजी, श्री जिन्ना और दूसरे लोगोंको पसन्द नहीं आई तो वे चुप हो गये। किन्तु जब खिलाफती फतवेके कैदियोंको छोड़नेकी बात आई तब उनसे नहीं रहा गया और वे वहाँसे उठकर चले गये।

वे स्पीकर नियुक्त किये गये थे। सभाका अध्यक्ष तो कोई पक्ष ग्रहण कर सकता है, किन्तु स्पीकरको ऐसा करनेका अधिकार नहीं होता। स्पीकर तो केवल सभाकी कार्रवाईको नियमपूर्वक चलानेके लिए ही नियुक्त किया जाता है। स्पीकरको अपनी राय देनेका हक ही नहीं है। इसलिए सर शंकरन् नायरको तो चुप ही रहना उचित था। इसकी बजाय वे स्वयं बीचमें पड़े और अन्तमें स्पीकरकी कुर्सी छोड़कर चले गये। इस बातसे सभी लोगोंको दुःख हुआ, किन्तु इससे न तो किसीको निराशा हुई

१. देखिए परिशिष्ट १।

और न सम्मेलनका कार्य रुका। वे ज्यों ही गये त्यों ही पण्डितजीने उनकी जगह सर विश्वेश्वरय्याको स्पीकर बनानेका प्रस्ताव किया और वे स्पीकरकी कुर्सीपर बैठे। एक वर्ष पहले सर शंकरन् नायर-जैसे व्यक्तिके इस तरह स्पीकरकी कुर्सी छोड़कर चले जानेसे भारी खलबली मची होती और उनकी बहुत मनौती की गई होती। किन्तु अब तो लोग स्वतन्त्र हो गये हैं; वे अपने अधिकार और अपनी मर्यादा समझते हैं, और इसलिए वे ऐसे अवसरोंपर धीरजसे स्थितिको सँभाल सकते हैं।

कहा जा सकता है कि जो प्रस्ताव स्वीकृत किये गये हैं, वे उचित हैं। उनसे अधिक विस्तृत और तीखे प्रस्ताव पास किये जा सकते थे। किन्तु जो प्रस्ताव स्वीकृत हुए हैं यदि सरकार उनपर अमल करे तो अन्तमें समझौतेकी नींव अवश्य ही पड़ सकती है।

किन्तु सरकार सम्मेलनकी सलाहपर अमल करेगी इसका भरोसा बहुत कम है। सरकारको अली-बन्धुओंको छोड़ना कठिन मालूम होगा। स्वयंसेवकोंकी भरती होने दे, *सभाएँ होने दे, जो सैकड़ों लोग गिरफ्तार किये गये हैं उनको छोड़ दे* और जिन अखबारोंसे जमानतें ली हैं उनकी जमानतें भी लौटा दे — इतना करनेके बाद फिर उसे खिलाफतके सम्बन्धमें और पंजाबके अत्याचारोंके सम्बन्धमें हमारी माँगें स्वीकार करनी ही पड़ेंगी। यदि वह स्वीकार न करेगी तो स्वतन्त्र लोकमत इतना प्रबल होगा कि उसके सम्मुख कोई भी राज्य नहीं टिक सकेगा।

ऊपर बताई हुई शर्तोंके अनुसार सरकार सम्मेलन बुलाये तो उसका परिणाम अवश्य ही शुभ हो सकता है। किन्तु सरकार ऐसा सम्मेलन बुलायेगी ही नहीं इस बातको हम समझ सकते हैं। तो फिर मालवीयजीके बुलाये सम्मेलनमें जानेसे क्या फायदा हुआ? फायदा इतना ही हुआ कि हमारी माँगके सम्बन्धमें कुछ अधिक प्रचार हो गया और नरमदलीय लोगोंको यह कहनेका अवसर न रहा कि हम किसीसे मिलना या किसीकी बात सुनना नहीं चाहते। इस सम्मेलनमें जाकर हमने अपनी नम्रता बताई। जो लोग दृढ़ और शक्तिशाली हैं वे अपने शत्रुओं और आलोचकोंसे सैकड़ों बार मिलनेपर भी जबतक अपने पक्षको ठीक मानते हैं तबतक उसीपर मजबूतीसे कायम रहते हैं।

मैं जिस समय यह लिख रहा हूँ तभी दिल्लीकी बड़ी धारा-सभामें इस सम्बन्धमें की गई चर्चा मेरी नजरमें आई। वहाँ जो चर्चा हुई है उससे लगता है मानो धारा-सभाके अधिकांश सदस्योंको देशकी हालतकी कोई खबर ही नहीं है। हमसे ऐसी धारा-सभामें ही जानेका आग्रह किया गया था। यह सभा लोकमतके अधीन रहकर नहीं चलती, बल्कि सरकारके मतके अनुसार चलती है, यह बात हम देख सकते हैं। किसीको यह न मानना चाहिए कि धारा-सभामें आज जो सदस्य हैं उनकी जगह असहयोगी सदस्य होते तो इससे अधिक अच्छा परिणाम निकलता। उनकी भी निश्चय ही यही हालत होती। थोड़ी देरके लिए मान लें कि इस धारा-सभाके अन्य सब सदस्य एकमत हो जाते तो भी सरकार अपने निश्चयके अनुसार ही कार्य करती। जबतक सत्ताका मद चला नहीं जाता तबतक धारा-सभामें बैठा हुआ एक भी सदस्य कुछ

भी नहीं कर सकता। जबतक सरकार धारा-सभासे स्वतन्त्र, बिलकुल अलग चीज है तबतक दूसरा परिणाम हो ही नहीं सकता।

जबतक सेना और पुलिसपर अपना नियन्त्रण नहीं होता तबतक हम पराधीन ही रहेंगे। हममें से कुछ भोले लोग यह मानते हैं कि सेना और पुलिसपर नियन्त्रण प्राप्त करनेके लिए हमें सैनिक शिक्षण प्राप्त करना चाहिए और उसके द्वारा उपद्रव करनेवाले लोगोंपर नियन्त्रण स्थापित करना चाहिए। असहयोगकी लड़ाईसे यह स्पष्ट होता है कि यदि हम सेनाका डर छोड़ दें तो हमें बन्दूक चलाना सीखे बिना नियन्त्रण मिल जायेगा। ऐसा नियन्त्रण प्राप्त करनेके लिए हमें शान्तिसे चलना सीखना चाहिए और हिन्दुओं और मुसलमानोंके दिल साफ होने चाहिए। हममें नीतिका पालन बढ़ना चाहिए और हमारा आत्म-विश्वास भी बढ़ना चाहिए।

हममें अभी यह विश्वास पर्याप्त रूपमें नहीं आया है। अपनी इस कमजोरीके कारण ही मैंने सम्मेलनमें मालवीयजीसे यह कहा था कि वाइसराय सम्मेलन बुलायेंगे तो मैं जाऊँगा अवश्य, किन्तु हमारे पास वह सामग्री नहीं है जो हमारे संकल्पकी पूर्तिके लिए आवश्यक है; हमें अभी उपद्रवी लोगोंपर और उपद्रवकी वृत्तिपर नियन्त्रण प्राप्त नहीं हुआ है। मद्रासमें हड़ताल तो हुई, किन्तु उपद्रवी लोगोंने तुरन्त अपने स्वभावका परिचय दिया।[1] उपद्रवी लोगोंने एक गरीब सिनेमा-मालिकको सताया और सर त्यागराज चेट्टियारके घरको घेर लिया। ये लोग भी असहयोगी समझे जाते हैं। ये भी हड़तालमें शामिल थे। स्वयंसेवक उनको समझानेमें असमर्थ रहे। इस घटनाका अर्थ यह हुआ कि जब सरकार सत्ता छोड़ देगी तब हमारी सत्ता न चलेगी, बल्कि उपद्रवी लोगोंकी सत्ता चलेगी। इस प्रकार यदि संकटके समयमें उपद्रवियोंकी सत्ता ही चले तो असहयोगियोंकी जीत कैसे होगी? इस कारण जबतक उपद्रवियोंपर हमारा पूरा प्रभाव नहीं जमता तबतक हमें स्वराज्य पानेकी आशा छोड़ ही देनी चाहिए।

किन्तु हम यह आशा कैसे छोड़ सकते हैं? जहाँ लोग बेंत खानेकी शक्ति प्राप्त कर रहे हैं, जहाँ लोग जेलमें कष्ट सहनेकी शक्ति प्राप्त कर रहे हैं वहाँ लोगोंको पूरी सत्ता अवश्य ही मिलेगी। जरूरत केवल इतनी है कि हम अपनी कष्ट-सहनकी सामर्थ्य और बढ़ा लें। हमें अपने मन अभी और साफ करनेकी जरूरत है। हमें सविनय अवज्ञाके 'सविनय' और 'अवज्ञा' इन दोनों पक्षोंपर पूरा जोर देना है। हमें अवज्ञा करनी है और विनय कायम रखनी है। विनयके बिना अवज्ञा करनेसे हमारा नाश हो जायेगा। सविनय अवज्ञा करनेसे हमारी रक्षा होगी।

जो-कुछ हुआ उसके फलस्वरूप हमें इतना ही करना है कि हम ज्यादासे-ज्यादा ३१ जनवरी तक अपनी सामुदायिक सविनय अवज्ञा बन्द रखें। हमें उसके अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रवृत्तिको बन्द नहीं रखना है। हमें स्वयंसेवकोंकी भरती जारी रखनी है। हमारी स्वदेशीकी प्रवृत्ति एक क्षण भी बन्द नहीं होनी चाहिए। हमें अस्पृश्यता-के मैलको धोना जारी रखना है। हम शराब बन्द करनेकी प्रार्थना करते ही रहें।

१. देखिए "मद्रासमें गुण्डागर्दी", १९-१-१९२२।

हम इन सब कामोंमें अपना उत्साह जितना कम करेंगे स्वराज्य मिलनेमें उतनी ही देर होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-१-१९२२

९८. सुखमें दुःख

जिसमें विवेक और विचार है उसे आसानीसे शरीर-सुख नहीं मिल सकता। वह दूसरोंके दुःखसे दुःखी होता और सूखता रहता है। उसके समीप किसीको दुःख होता है तो उसको वह नहीं देख सकता। ऐसी ही करुण स्थिति महादेव देसाईकी हो गई है, क्योंकि वे अपने हरएक कार्यकी बहुत बारीकीसे जाँच करते हैं। जबतक उनको शारीरिक दुःख था तबतक वे सुखी थे, क्योंकि दुःख भोगनेकी खातिर जेल जानेके लिए वे तड़प रहे थे। किन्तु अब जब वे जेलमें सुखी रह सकते हैं और जब जेलर उनके अनुकूल है तब उनके सम्मुख यह मानसिक दुःख आ खड़ा हुआ। जैसी स्थिति महादेव देसाईकी है कुछ कम-ज्यादा वैसी ही स्थिति दूसरोंकी भी है। आगरा जिला जेलमें, जहाँ सब असहयोगी कैदी इकट्ठे किये गये हैं, जो चर्चा[1] आरम्भ हुई है, वह चर्चा वहाँ उस समय नहीं हो सकती थी जिस समय ये कैदी स्वयं कष्ट सह रहे थे और बेंत खा रहे थे। तब तो उन्हें दुःखके पहाड़के पीछेसे स्वराज्यका सूर्य निकलता हुआ दिखता था और उसकी गरमीसे वे अपना दुःख भूल जाते थे। किन्तु अब जब उन्हें जेलमें स्वराज्य मिला, स्वतन्त्रता मिली, तब जैसे लुटेरे लोग लूटके मालके लिए आपसमें लड़ते हैं वैसे ही ये स्वराज्यके लुटेरे आपसमें लड़ रहे हैं। पाठक इस लड़ाईका वर्णन तो महादेव देसाईकी भाषामें ही पढ़ सकते हैं। यह पत्र उनके पहले पत्रकी तरह मैंने यहाँ शब्दशः नहीं दिया है। किन्तु कुछ वाक्योंको निकालकर जितना भाग जरूरी समझा है उतना दिया है। यह पत्र १५ तारीखको लिखा गया था।[2]

महादेवभाईके इस पत्रसे हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। उससे यह स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि हम जिस शिष्टता और मर्यादाका पालन इस लड़ाईके समय कर रहे हैं उसका पालन हम सत्ता प्राप्त होनेपर न कर सकेंगे।

सत्ता और स्वराज्यमें बहुत भेद है, यह हम समझ लें। इस समय हममें से बहुतसे लोग यह सारी खटपट केवल इस सत्ताके लिए ही कर रहे हैं। इस सत्ताकी लूटमें मुझे विघ्न और विक्षेप होते दिखते हैं। उसमें मुझे हिंसाके लक्षण दिखाई देते हैं। स्वराज्यकी लूटमें तो शुद्ध स्पर्द्धा ही हो सकती है। स्वराज्यका अर्थ है हरएकका अपने ऊपर राज्य। इस लड़ाईमें जो झुकता है और सहन करता है वह प्रथम आता है।

१. चर्चाका विषय था असहयोग आन्दोलनके सम्बन्धमें गिरफ्तार किये गये राजनैतिक कैदियोंमें वर्गभेदके विरुद्ध आन्दोलन किया जाना चाहिए या नहीं।

२. यहाँ इस पत्रका अनुवाद नहीं दिया गया है।

इसमें मर्यादाके पालनकी बहुत जरूरत है। सत्ताकी लूटमें तो सभी प्रथम रहना चाहते हैं, इसलिए सभी लड़ते हैं। सत्तामूलक राज्यमें जो प्रथम आ गया वही प्रथम रहता है। स्वराज्यमें जो पीछे आता है वह प्रथम रहता है। इस प्रकार इन दोनोंमें उतना ही अन्तर है जितना हाथी और घोड़ेमें अथवा पूर्व और पश्चिममें। यदि हम इतना याद रखें कि हम स्वराज्यकी लड़ाई लड़ रहे हैं तो हम सब मुश्किलोंको पार कर जायेंगे।

यदि महादेव देसाईके साथी इस भेदको ध्यानमें रखकर चलेंगे तो सब बातें सरल हो जायेंगी और असहयोगी कैदियोंको जेलमें शुद्ध स्वराज्य मिल जायेगा एवं उसकी सुगन्ध समस्त देशमें फैल जायेगी। यद्यपि महादेव देसाई घबरा रहे हैं, फिर भी मुझे विश्वास है कि वे और उनके साथी अन्य असहयोगी कैदी कोई अच्छा निर्णय[1] करके जेलमें प्रातः चार बजे उठेंगे और अल्लाह और कृष्णका नाम जपकर जेलको पवित्र करेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-१-१९२२

९९. टिप्पणियाँ

"सरकार एक है!"

सिन्धसे एक चिट्ठी आई है जिसमें यह खबर दी गई है कि सिन्धकी जेलोंमें कैदियोंसे कहलाया जाता है, "सरकार एक है" अथवा जब कोई अधिकारी आता है तब "सरकार एक है" की आवाज लगाई जाती है जिसे सुनकर सब कैदियोंको खड़े होना पड़ता है। दूसरी जगहसे खबर आई है कि वहाँ कैदियोंसे "सरकार सलाम" की आवाज लगवाई जाती है। सिन्धके नेता जयरामदासको, जो इस समय साबरमती जेलमें हैं, यह हुक्म दिया गया था कि जब कोई अधिकारी आये तो वे अपने पाँव मिलाकर खड़े हो जायें और हाथोंको इस तरह नीचे रखें कि उनके हाथोंकी हथेलियाँ दिखती रहें। उन्होंने इस हुक्मको नहीं माना, इसलिए उनको अखबार पढ़नेकी जो अनुमति दी गई थी वह वापस ले ली गई। कहीं-कहीं जेलोंमें जब कोई अधिकारी आता है तब कैदियोंको सिर झुकाकर और हाथ नीचे रखकर उकड़ूँ बैठनेके लिए कहा जाता है।

यह पूछा गया है कि असहयोगी कैदियोंको ऐसे हुक्मोंको मानना चाहिए या नहीं। 'यंग इंडिया' में आदर्श कैदीके सम्बन्धमें जो लेख[2] लिखा गया है उससे लोगोंके मनमें यह शंका उत्पन्न हुई है। इसका समाधान तो सीधा है। जिस हुक्मको माननेमें

१. महादेव देसाईने जेलमें सत्याग्रह आश्रम, अहमदाबादकी तरह सामूहिक प्रार्थना आरम्भ की थी, इसपर कुछ कैदियोंने उसमें संस्कृतके श्लोक रखनेपर आपत्ति की थी।

२. देखिए "आदर्श कैदी", २९-१२-१९२१।

तनिक भी अपमान अनुभव हो, जो नियम हमारे मनुष्यत्वका अपमान करनेके विचारसे ही वनाया गया हो उसको न मानना हमारा मूल सिद्धान्त है। जेलमें कई वातोंकी स्वतन्त्रता नहीं होती। सामान्यतः अनैतिक अपराध करनेवाले असभ्य लोग जेलोंमें जाते हैं। जेलोंको स्वतन्त्रताका द्वार तो अभी वनाया गया है। इसलिए उनके कुछ नियमोंको स्वतन्त्रताके पुजारी निश्चय ही नहीं मान सकते।

'एक ही है' इन शब्दोंका प्रयोग खुदा या ईश्वरके लिए ही किया जा सकता है, सरकारके लिए नहीं। जो कैदी धर्मको समझता है या जिसमें आत्मसम्मानकी भावना है, उसे "सरकार एक है" कहनेका हुक्म दिया जाये तो वह उस हुक्मको नहीं मान सकता। अतः उसे इस प्रकारके कानूनको निडर होकर तोड़ना ही चाहिए, चाहे ऐसा करनेपर उससे जेलमें सख्तीकी जाये, उसे कालकोठरीमें वन्द किया जाये, उसे चाहे जितना कष्ट सहना पड़े, भले ही वेंत खाने पड़ें और भूखों मरना पड़े। इन सव कष्टोंको सहन करनेपर भी उसे इस प्रकारके नियमका सविनय अनादर करना ही चाहिए।

मैं तो इस अवसरका स्वागत करता हूँ। जेलकी वहुत-सी खरावियाँ इससे अपने-आप दूर हो जायेंगी। जेलमें भी जोर-जवरदस्तीसे काम करानेकी नीति किस हदतक चलती है इसका अनुभव हमें हो रहा है। इस राज्यका आधार उत्पीड़न है। जहाँ कुछ लोगोंकी खुशामद की जाती है और वहुत-से लोगोंको तकलीफ दी जाती है वहाँ राक्षसी नीतिका व्यवहार होता है ऐसी हमारी मान्यता है।

किन्तु जो वात जेलके वाहर लागू होती है वही जेलके भीतर भी लागू होती है। हमें जेलके भीतर भी विनययुक्त वलकी आवश्यकता है। एक ओर विनय चाहिए और दूसरी ओर पूरा वल। हर कार्यमें हम विवेकसे काम लें तभी हमारा कार्य आगे वढ़ सकता है। हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि जेलके अधिकारियोंकी स्थिति भी वहुत विषम है। उन्हें अपराधियोंके साथ रहना पड़ता है, इसलिए उनकी रीति-नीतिमें अशिष्टता होती है। उनमें कठोरता आ जाती है। सभ्य कैदियोंसे सावका पड़ने-पर जेलके दरोगा और दूसरे अधिकारी अपना व्यवहार एकदम नहीं वदल सकते। जवतक जेलके नियम लागू हैं तवतक उन्हें उन नियमोंका पालन भी अवश्य करना है। इन कारणोंसे कुछ असुविधाओंको तो सहन ही कर लेना होगा। इसलिए हमें विरोध करते समय सदा विवेक और विचारसे काम लेना चाहिए। जैसे यदि हम "सरकार सलाम" शब्दोंका उच्चारण न करें तो भी हमें दरोगाको तो सलाम करना ही चाहिए। हमें उसका अदव करना चाहिए और जव वह आये तव खड़े हो जाना चाहिए। कैदी तो कैदी ही है। जेलमें जैसा व्यवहार किया जाना चाहिए और जिस मर्यादाका पालन किया जाना चाहिए उसे उस व्यवहार या मर्यादाको न भूलना चाहिए। अन्तमें हमें जेलके अधिकारियोंको अपने व्यवहारसे नरम वनाकर सरल स्वभावका और दयालु वनाना है।

काठियावाड़

एक भाई पूछते हैं, "क्या हम काठियावाड़में स्वयंसेवक भरती कर सकते हैं?" उनको मेरी सलाह है, "नहीं।" काठियावाड़के जो लोग स्वयंसेवकोंमें अपना नाम

लिखानेके लिए तैयार हों वे अंग्रेजी राज्यकी सीमामें आ जायें और प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करके अपना नाम-धाम लिखा दें। काठियावाड़में तो स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण, मद्यनिषेध, राष्ट्रीय शिक्षा और ऐसी अन्य पोषक प्रवृत्तियाँ ही चलाई जानी चाहिए। यही भाई लिखते हैं, "हम अनेक जगह खादी तो तैयार करने लगे हैं, किन्तु हम इतने नाजुक हो गये हैं कि खादी पहनना हममें से बहुतोंको पसन्द नहीं है। इसका परिणाम यह हुआ है कि अनेक स्थानोंमें खादी काफी मात्रामें इकट्ठी हो गई है, फिर भी आसपासके लोग मिलका बना अथवा विदेशी कपड़ा ही पहनते हैं।" यह समाचार दुःखजनक है। यह तो जैसे अपने यहाँ बाजरा होता हो किन्तु उसे त्यागकर दूसरी जगहसे चावल मँगाने-जैसी बात हुई। हम अपनी इस कुटेवके कारण ही भिखारी और पराधीन होते आये हैं और यदि हमारी इस कुटेवमें सुधार न होगा तो हम और भी दरिद्र होते जायेंगे। जिस काठियावाड़में कपास होती है, लाल गेहूँ होता है और बाजरा होता है, उस काठियावाड़को कपड़ा या अनाज बाहरसे मँगाना पड़े तो वह कैसे समृद्ध बना रह सकता है?

'स्वराज्य आश्रम'

असमकी सिलचर जेलसे श्री फूकनने एक पत्र भेजा है। उसमें उन्होंने जेलका नाम रखा है — 'स्वराज्य आश्रम।' वे कहते हैं कि जो लोग स्वराज्य चाहते हों उन्हें जेल-रूपी स्वराज्य आश्रममें दाखिल किया जायेगा। वे लिखते हैं, "जबतक मानपूर्वक सुलह न हो तबतक हम जेल-निवासी लोग सुलह चाहते ही नहीं। स्वतन्त्रता क्या चीज है, उसकी कल्पना जेलमें बहुत ही सुन्दर होती है।"

कर देनेसे इनकार

करबन्दीके सम्बन्धमें गुजरातमें और शेष सारे भारतमें चर्चा चल रही है। परन्तु मैं ज्यों-ज्यों सोचता हूँ, मुझे त्यों-त्यों स्पष्ट होता जाता है कि हम अभी करबन्दी करनेके योग्य नहीं हुए हैं। जो व्यक्ति रुपये बचानेके लिए कर न देना चाहता हो वह तो चोर है, और हम चोरोंकी मार्फत स्वराज्य नहीं लेंगे, क्योंकि वह तो चोर-राज्य होगा। हम जैसे लोगोंकी मार्फत स्वराज्य लेंगे, हमारा स्वराज्य वैसा ही होगा और वह उन्हींका राज्य होगा। इसीलिए मैं लोगोंसे कहता हूँ कि वे मेरी मार्फत भी स्वराज्य प्राप्त न करें। गांधीराज्य भी स्वराज्य नहीं होगा। अतः मेरी लालसा तो यही रहती है कि सब लोग मुझ-जैसे अर्थात् कमसे-कम जितना संयमी मैं हूँ उतने संयमी, सत्यवादी, दृढ़, आग्रही, उद्योगी, शान्त और निर्भय बनें। इससे हम जान सकते हैं कि हमें सहायता लेनेमें भी विचार करना चाहिए। मैं कई बार अपने साथियोंको चेताया करता हूँ कि उन्हें आतुर होकर चाहे जिस मनुष्यकी मदद नहीं लेनी चाहिए। उन्हें अपने साधन अधिकसे-अधिक शुद्ध रखने चाहिए। जो शल्य-चिकित्सक अपने औजारोंको ठीक नहीं रखता, उनकी धार तेज नहीं बनाये रखता वह कभी-कभी रोगीके प्राण ही ले बैठता है और उसे हमेशा व्यर्थका कष्ट पहुँचाता है। इससे हमें समझना चाहिए कि जबतक किसान शान्तिपूर्वक त्याग करना और देश-कार्यमें रस लेना नहीं

सीख लेते तबतक उन्हें करबन्दीका रास्ता दिखाना महापाप है और उसका फल हमें ही भोगना पड़ेगा।

अतः मेरी सलाह यह है कि व्यक्तिगत रूपसे लोग विचारपूर्वक जो चाहें सो करें; परन्तु बारडोली और आनन्दके सिवा दूसरी सब जगहोंके लोग लगान अदा करें। इसीमें देशका हित है। हमारे पास कानूनका सविनय भंग करनेके दूसरे कितने ही आसान साधन हैं। कर न देना तभी उचित है जब कर न देनेवाला असहयोगकी दूसरी तमाम शर्तोंका पूरा-पूरा पालन करता हो।

धरनेके बारेमें क्या?

३१ जनवरी तक सामुदायिक कानून भंगको छोड़कर हमारी अन्य सब प्रवृत्तियाँ जारी रहती हैं, इसलिए जिन जगहोंमें हम शराबकी दूकानोंपर अथवा शालाओंपर धरना दे रहे हों वहाँ हमें धरना जारी रखना है। अपनी सुविधाकी दृष्टिसे हम उसे बन्द कर दें यह अलग बात है। धरना, हड़ताल और सविनय अवज्ञा बिलकुल बन्द तो तभी रहेंगे जब गोलमेज परिषद् होगी। वह तो होगी तब होगी। इन प्रवृत्तियोंको बन्द रखनेसे पहले तो हमारे सब स्वराज्यवादी कैदी मुक्त हो जाने चाहिए।

अमेरिकासे सहायता

हमारे कुछ नेता अब मानते हैं कि हमें इंग्लैंड, अमेरिका और अन्य देशोंमें अपनी प्रवृत्तिका प्रचार करनेके लिए समाचार समिति नियुक्त करनी चाहिए। मेरा विश्वास तो यह है कि इससे हमारा धन व्यर्थ ही खर्च होगा, इतना ही नहीं बल्कि हमारा और भी नुकसान होगा। हमें इसके लिए कुछ लोगोंको नियुक्त करना होगा और इससे हमें आज जो स्वावलम्बन प्राप्त है, वह नहीं रहेगा। आज तो हम मानते हैं कि हमें अपने बल-बूतेपर जूझना है, विदेशोंसे मदद लेकर उसके बलपर नहीं।

इसके अतिरिक्त मैं तो यह मानता हूँ कि हमारा यहाँका कार्य जितना दृढ़ और वास्तविक होगा उतना अपने-आप प्रकाशमें आ जायेगा। प्रचार करनेकी जरूरत उसको होती है जो कम कार्यको अधिक दिखाना चाहता है। किन्तु जो नम्र है अर्थात् जिसका ईश्वरमें विश्वास है वह तो अपने अधिक कार्यको कम बताता है। वह अपने कार्यका मूल्य सदा कम आँकता है। इसलिए प्रचारकी शक्ति स्वतः कार्यमें ही निहित होती है। इसीलिए यह कहा जाता है कि सत्य प्रकाशमें आये बिना नहीं रहता। यह बात पाप और पुण्य दोनोंपर लागू होती है। अपराध कितना ही छिपाया जाये प्रकट हुए बिना नहीं रहता। सूर्य छाबड़ेसे नहीं ढका जा सकता और हजारों सूर्योंको इकट्ठा करके दूना कर देनेसे उनका जितना प्रकाश हो सकता है उससे अधिक तीव्र प्रकाश तो सत्यका होता है। तब हम अपने स्वयं प्रकाशित सत्यके संघर्षका प्रचार करनेके लिए समिति क्यों नियुक्त करें?

इस सिद्धान्तकी सचाईका नया प्रमाण अभी हालमें अमेरिकासे मिला है। अमेरिकामें बसे एक भारतीयने हमें ५७० रुपये इकट्ठे करके भेजे हैं। इतना ही नहीं

उसने यह भी लिखा है कि हमारे संघर्षमें अमेरिकाके लोगोंकी दिलचस्पी बहुत बढ़ गई है। प्राध्यापक कोसाम्बी जिन्होंने यह प्रयत्न किया है, लिखते हैं:[1]

हस्तलिखित पत्र

'इंडिपेंडेंट' पत्र तो हाथका लिखा प्रकाशित हो ही रहा है। प्रयागका 'स्वराज्य' नामक पत्र भी बन्द हो गया है, क्योंकि उसकी जमानत जब्त कर ली गई है। इस कारण अब 'स्वराज्य' भी हस्तलिखित निकाला जाने लगा है। इसका पहला अंक मेरे सामने है। यह हिन्दीमें लिखा हुआ है। इसमें चार पृष्ठ हैं। इसमें सम्पादकको जितना लिखना हो वह उतना सब लिख सकता है और उसे जितने निर्दोष अपराध करने हों उतने कर सकता है। मुझे नौकरशाहीकी दृष्टिसे उसमें अपराध ही दिखाई देते हैं। फिर भी जबतक सब लेखकोंको न पकड़ा जाये तबतक यह अखबार तो प्रकाशित होता ही रहेगा। इसे ज्यों-ज्यों नकल करनेवालों की मदद मिलेगी त्यों-त्यों उसका प्रचार बढ़ेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-१-१९२२

१००. पत्र: देवदास गांधीको

रविवार [२२ जनवरी, १९२२][2]

चि० देवदास,

आखिर आज मुझे तुम्हारा पत्र मिल ही गया। 'इंडिपेंडेंट' की प्रति साफ नहीं होती। प्रति ऐसी होनी चाहिए जिससे पढ़नेमें तनिक भी कठिनाई न हो। भले ही उसकी संख्या कम हो। तुम्हारे लेख भी तो साफ होने चाहिए न? इस तरहसे समाचारपत्र निकालना भी एक कला है। लीथोग्राफिंग कैसे होती है, यह तुम्हें समझ लेना चाहिए।

मॉर्डन हाईस्कूलके सम्बन्धमें जोजेफसे तुम्हारी जो बातचीत हुई है उसका पूरा ब्यौरा भेजो।

बापूके आशीर्वाद

मास्टर देवदास गांधी
आनन्द भवन,
इलाहाबाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ७८०९) की फोटो-नकलसे।

१. पत्रके कुछ अंशोंके लिए देखिए "टिप्पणियाँ", १९-१-२२ का उप-शीर्षक "अमेरिकासे"।
२. डाककी मुहरसे।

१०१. पत्र : जोजेफ जे० घोषको

[मंगलवार, २४ जनवरी, १९२२][1]

प्रिय श्री घोष[2],

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आपका पत्र मिलते ही मैंने उसे अपने पुत्रके पास भेज दिया था। उसका यह तार अभी-अभी आया है:

> घोषका पत्र विस्मयकारी आरोप झूठे इलाहाबादके स्वयंसेवकोंका सबसे अच्छा आचरण।

क्या ऐसी कोई सम्भावना है कि आपको गलत सूचना दी गई हो? सम्भव है मेरे पुत्रको ही गुमराह किया गया हो। ऐसी तो कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह मुझसे छल करेगा। मैं चाहता हूँ कि आपके सहयोगसे मैं मतभेदकी असलियतका पता लगाऊँ। इतना और कह दूं कि मेरा पुत्र बड़ा सावधान रहता है और उसकी राय हमेशा ठीक उतरती है। मैं यह भी मानता हूँ कि वह संघर्षकी भावनाको बड़ी अच्छी तरह समझता है। अच्छा हो कि आप उससे मिलकर इस मामलेपर बात कर लें। मैं उसे आपसे मिलनेके लिए लिख रहा हूँ।

मैं सभी प्रकारके धरनोंको बन्द करनेकी बात नहीं सोचता। मैं समझता हूँ कि धरने यदि पूर्णतया शान्तिपूर्ण हों तो उनका एक नैतिक महत्त्व होता है।

आज्ञापालन न करनेवाले लड़कोंको दण्ड देनेका आपको अवश्य पूर्ण अधिकार था। अवज्ञा करनेवाले लड़कोंको निकाले जानेका खतरा उठानेके लिए भी तैयार रहना ही चाहिए।

मुझे दुःख है कि आपको यह तमाम परेशानी उठानी पड़ रही है।

आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७६५६) की फोटो-नकलसे।

१. घोषके ३१ जनवरी, १९२२ के उत्तर (एस० एन० ७८१०) से।

२. जोजेफ जे० घोष; इलाहाबादके मॉडर्न हाईस्कूलके तत्कालीन प्रधानाध्यापक।

१०२. पत्र: देवदास गांधीको

मंगलवार [२४ जनवरी, १९२२][1]

चि० देवदास,

तुम्हारे तार मिले। शेरवानीको [वकीलोंकी सूचीसे] खारिज कर दिया गया, यह ठीक ही हुआ। जबतक देशका कार्य-भार हमारे हाथमें नहीं आ जाता तबतक क्या वे वकालत करनेवाले हैं?

मैंने श्री घोषको तुम्हारे तारकी नकल भेज दी है। तुम उन्हें पहलेसे लिखकर [और समय लेकर ही] उनके पास जाना और सब-कुछ स्पष्ट रूपसे कह देना। मैंने उन्हें पत्र लिखा है; उसकी नकल तुम्हें भेज रहा हूँ।

हममें यदि मलिनता है तो उसका छिपाया जाना बिलकुल उचित नहीं है।

गुरुवारकी रातको बारडोलीके लिये रवाना हो रहा हूँ। बादमें तो अधिकतर वहीं रहना होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ७६५६)की फोटो-नकलसे।

१०३. टिप्पणियाँ

एक अंग्रेज महिलाका आशीर्वाद

"एक अंग्रेज महिला" ने कलकत्तेसे एक पत्र भेजा है। उसम उन्होंने अपना नाम और पता भी दिया है। वे लिखती हैं:

> श्री गांधी जिस अनोखे ढंगसे हमें सत्यका दर्शन करा रहे हैं और हमारी आँखें खोलकर हमें अपनी उदार कहलानेवाली सरकारके वे काले कारनामे देखनेका अवसर दे रहे हैं जो वह रोज कर रही है, उसे देखकर मन मुग्ध हो जाता है। एक "अंग्रेज धर्म-प्रचारक" ने जो पत्र उन्हें भेजा है वह भी प्रशंसनीय है।[2] मेरा खयाल है कि ऐसे और भी कितने ही लोग होंगे; पर अभिमान-वश वे गांधीजीके उच्च कार्यको माननेके लिए तैयार नहीं हैं। उनका धैर्य और कार्य भूतलमें छिपे हुए झरनेकी तरह है। दुनिया उन्हें चाहे जो उपदेश देती

१. श्री शेरवानीको सूचीसे खारिज किये जानेका समाचार देवदासने गांधीजीको तार द्वारा २३ जनवरी, १९२२ को दिया था। मंगलवार २४ तारीखको पड़ता था।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-१-१९२२ का उप-शीर्षक "भगवान्के हाथोंमें"।

रहे, परन्तु ईश्वर उन्हें उनकी आशासे भी बढ़कर सफलता देगा। जो लोग शान्तिपूर्वक चुपचाप कार्य करते हैं वही सफलताके अधिकारी होते हैं। लाखों आदमी आज उनपर दृष्टि जमाये हुए हैं और वे उनके विषयमें विचार कर रहे हैं। परन्तु इन सबसे बढ़कर एक शक्ति है जो उनके दैनिक जीवनके प्रत्येक संघर्षको बड़े गौरसे देख और विचार रही है और जब उनके दीर्घ परिश्रम और संघर्षके ये दिन समाप्त हो जायेंगे तब उनका काम और नाम संसारमें अमर हो जायेगा। उनके कठोर परिश्रमके द्वारा जिन लाखों लोगोंको आजादी मिलेगी वे उनके नामकी पूजा करेंगे। परमात्मा उन्हें तथा उनकी प्रिय धर्मपत्नीको आशीर्वाद दें, उन्हें चिरायु करें और आरोग्य तथा बल प्रदान करें जिससे वे इस संघर्षमें शीघ्र ही जय लाभ करें। मेरा विश्वास है कि संघर्ष ज्यादा लम्बा नहीं चलेगा और जल्दी ही सफलतापूर्वक समाप्त हो जायेगा।

पाठकोंके सम्मुख इस पत्रको उपस्थित करते हुए मुझे संकोच हो रहा है। व्यक्ति-विषयक न होते हुए भी यह कितना व्यक्ति-विषयक है। परन्तु मेरा खयाल है कि मैं अहंकारकी भावनासे मुक्त हूँ। मैं समझता हूँ कि मैं अपनी दुर्बलताओंको खूब जानता हूँ। परन्तु मेरे हृदयमें ईश्वरके, उसकी शक्तिके और उसके प्रेमके प्रति जो श्रद्धा है वह अटल है, अविचल है। मैं तो उसके हाथमें कुम्हारके हाथमें मिट्टीकी तरह हूँ। इसलिए अगर 'भगवद्गीता' की भाषामें कहूँ तो ये सब स्तुति-स्तोत्र उसीके चरणोंमें सर्मापत करता हूँ। हाँ, मैं मानता हूँ कि ऐसे आशीर्वचनोंसे शक्ति मिलती है। परन्तु इस पत्रको प्रकाशित करनेमें मेरा उद्देश्य यह है कि इससे प्रत्येक सच्चे असहयोगीको अपने अहिंसाके पथपर बढ़ते हुए उत्साह मिले और बनावटी लोग अपनी गलतियोंसे बाज आयें। यह एक बहुत ही सच्ची लड़ाई है। यद्यपि इसमें द्वेष करनेवाले लोग शामिल हैं तथापि यह द्वेषपर आधारित नहीं है। इस संग्रामकी भित्ति तो शुद्ध और निर्मल प्रेम है। यदि अंग्रेज भाइयोंके प्रति या उन लोगोंके प्रति जो "अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः' की तरह नौकरशाहीके पिट्ठू बने हुए है, मेरे मनमें जरा भी द्वेष-भाव होता तो मुझमें इतना साहस अवश्य है कि मैं इस संग्रामसे अलग हो जाऊँ। जिस मनुष्यके मनमें ईश्वर अथवा उसकी दयालुता अर्थात् न्यायपरायणताके प्रति जरा भी श्रद्धा है, वह मनुष्योंके प्रति द्वेष-भाव रख ही नहीं सकता —— हाँ, उनके कुकर्मोका तिरस्कार तो उसे अवश्य करना चाहिए। परन्तु वह मनुष्य खुद भी तो बुराइयोंसे बरी नहीं है। उसे हमेशा दूसरेकी दयाकी आवश्यकता रहती है। अतएव उसे उन लोगोंसे द्वेष कभी न करना चाहिए जिनमें वह बुराई पाता हो। सो इस युद्धका तो उद्देश्य ही यह है कि अंग्रेजोंके साथ और सारे संसारके साथ, भारतकी मैत्री हो। यह हेतु झूठी खुशामदसे सिद्ध नहीं हो सकता; बल्कि तभी सिद्ध होगा जब हम भारतके अंग्रेजोंसे साफ-साफ कहेंगे कि भाइयो, आप कुमार्गपर जा रहे हैं और जबतक आप उसे न छोड़ेंगे तबतक हम आपके साथ सहयोग नहीं कर सकते। यदि हमारा यह खयाल गलत हो तो ईश्वर हमें क्षमा कर देगा; क्योंकि हम उनका बुरा नहीं चाह रहे हैं और उसके लिए हम उनके हाथों कष्ट भोगनेको भी प्रस्तुत हैं। यदि हम

सचाईपर हैं, मेरा यह टिप्पणी लिखना जितना निश्चित है उतने ही निश्चयके साथ यदि हम सच्चे हैं, तो हमारे कष्ट-सहनसे उनकी आँखें खुल जायेंगी — ठीक उसी तरह जिस तरह कि इस "अंग्रेज महिला" की आँखें खुल गई हैं। यह एक ही उदाहरण ऐसा नहीं है। सफरमें अक्सर बीसियों अंग्रेज भाइयोंसे मेरी मुलाकात होती है। मैं उन्हें नहीं पहचानता; पर वे बड़े शौकसे मुझसे हाथ मिलाते हैं, मेरी सफलता चाहते ह और चले जाते हैं। हाँ, यह सच है कि जहाँ बीसियों अंग्रेज मुझे आशीर्वाद देते हैं वहाँ सैकड़ों ऐसे भी हैं जो मुझे शाप देते हैं। इन शापोंको भी हमारे यहाँ उसीके चरणोंमें अर्पित कर देनेकी आज्ञा दी गई है। वे हमें शाप देते हैं इसका कारण उनका अज्ञान ही तो है। कितने ही अंग्रेज भाई तथा कुछ हिन्दुस्तानी भी मुझे तथा मेरी हलचलोंको दुष्ट और कुटिल समझते हैं। ऐसे लोगोंके साथ भी असहयोगियोंको सहिष्णुता बरतनी चाहिए। यदि उन्होंने क्रोध और वैर-भावको अपनाया तो उनकी हार निश्चित है; पर यदि वे उन्हें सहन करते रहे तो उनकी जय निश्चित है; उसमें विलम्ब नहीं। "मुझे निश्चय हो चुका है कि इस सारे विलम्बका कारण हमारी अपनी त्रुटियाँ हैं।"

हम हमेशा ही शान्तिमय नहीं बने रहे हैं। हमने, अपनी प्रतिज्ञाके खिलाफ, दुर्भावको अपने हृदयमें स्थान दिया है। हमारे प्रतिपक्षी, अंग्रेज शासकवर्ग, उनके साथ सहयोग करनेवाले, ताल्लुकेदार तथा राजा लोग हमपर अविश्वास रखते आये हैं और हमसे भय खाते आये हैं। अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार हम उनको हर तरहसे सुरक्षित रखनेके लिए बाध्य हैं। हाँ, दीन-दुर्बल लोगोंकी आर्थिक लूटमें तो हमें उनको किसी तरह सहायता न देनी चाहिए; परन्तु हमें उन्हें किसी तरह नुकसान भी न पहुँचाना चाहिए। यद्यपि उनकी संख्या बहुत ही कम है तथापि उन्हें ऐसा लगना चाहिए कि सरकारकी संगीनें उन्हें जितनी सुरक्षा देती हैं उससे कहीं अधिक सुरक्षा उन्हें हमारे बीच मिलेगी। यदि हमारी संख्या कम होती तो हमारी स्थिति अधिक आसान रही होती — बहुत पहले ही हम अपने धर्मकी सचाई सिद्ध कर चुके होते। परन्तु हमारी संख्या तो बहुत ज्यादा है और इसीसे हमें परेशानी होती है। वर्तमान राज्यसे तो हम सभी असन्तुष्ट हैं, परन्तु अहिंसामें हमारी श्रद्धा एक-सी ज्वलन्त नहीं है। हमें तबतक दम नहीं लेना चाहिए जबतक हम मद्रासकी जैसी शर्मनाक दुर्घटनाओंको असम्भव न बना दें। हम बात तो हमेशा अहिंसाकी करते हैं तो फिर हमें अदालतोंकी कार्रवाईमें बाधा न डालनी चाहिए। या तो हम जेलोंका आह्वान करें या उससे दूर ही रहें। यदि हम ऐसा चाहते हैं तो सरकार हमें जितनी जल्दी जेल ले जाना चाहे उतनी जल्दी उसे ले जाने देना चाहिए। जिस हदतक हम अहिंसाके फलितार्थको नहीं समझते उसी हदतक इस संघर्षकी अवधि बढ़ती जाती है।

सरकारी मेहमान

यदि किसीके मनमें इस संघर्षकी सच्ची आध्यात्मिकताके बारेमें कोई सन्देह है तो मुझे आशा है कि बाबू प्रसन्नकुमार सेनके निम्नलिखित पत्रसे[1] उसके दूर होनेमें

१. पत्रके केवल कुछ अंश ही यहाँ दिये जा रहे हैं।

मदद मिलेगी। उन्हें जब सजा सुनाई गई तब वे चटगांव जिला कांग्रेस कमेटीके मन्त्री थे।

> सम्राट्के होटलमें मुझे ढाई सालके लिए मेहमानकी हैसियतसे दाखिल कर लिया गया है। पिछले चार-पांच सालोंमें मैं वकालतके अपने पेशेको छोड़नेकी बात बराबर सोचता रहा हूँ। और यह चाहता रहा हूँ कि हिमालयमें ऋषिकेशमें जाकर अपने बाकी दिन वहाँ विरक्तकी तरह धर्मानुशीलमें विताऊँ। अभीतक मैं ऐसा नहीं कर सका...।
>
> अब अति कृपालु परमपिताने मुझे सहसा संसारके कोलाहलसे हटाकर और जेलकी दीवारोंके भीतर पूर्ण विश्राम प्रदान कर मुझपर महान् अनुकम्पा की है।
>
> प्रिय महात्माजी, मुझे अब पूर्ण विश्वास हो गया है कि यह अस्थायी विश्राम मुझे मानव जीवनके चरम ध्येय — अक्षय निर्वाणकी प्राप्तिके योग्य बना देगा।

मैं पाठकको यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि प्रसन्नबाबूकी जेलके अन्दर परमानन्द-प्राप्तिकी जो इच्छा है, वह कोई निराधार स्वप्न नहीं है। ऋषिकेशको मैं जानता हूँ। वहाँ जिस तरह सन्त रहते हैं उसी तरह पृथ्वीके लुच्चे और बदमाश भी रहते हैं। जेल-जीवनको मैं जानता हूँ। दक्षिण आफ्रिकामें मेरे और वहाँके एक सबसे बड़े हत्यारेके बीच बस एक काली दीवार ही थी। हम दोनोंको जान-बूझकर अकेली कोठरियोंमें रखा गया था, क्योंकि हम दोनों ही समाजके लिए खतरनाक माने गये थे। उस कोठरीमें कोई दो महीने मुझे अत्यन्त कष्ट भोगना पड़ा। लेकिन ज्यादासे-ज्यादा कष्ट भोगते हुए ही मैंने ज्यादासे-ज्यादा सीखा। यह वह वक्त था जब सबसे ज्यादा अच्छा फल मिला। कष्ट जबतक कायम रहा उसे सहना कठिन था। परन्तु अब वह मेरे जीवनकी एक अमूल्य निधि है। स्वाधीनता-प्रेमी लोगोंके लिए हमने जेलोंको आज अलौकिक शरणालयोंमें बदल दिया है। वे आसानीसे निर्वाण-प्राप्तिके स्थलोंमें बदले जा सकते हैं। जेलकी कोठरी, जिसमें सुकरातने जहरका प्याला पिया था, निःसन्देह परमानन्दका मार्ग थी। हम आज भी उस अमर दृश्यको याद करते हैं और हमारी उस यादमें वे आज भी जीवित हैं।

"स्वराज्य आश्रम"

प्रसन्नबाबू जेलको परम पदकी प्राप्तिके एक साधनके रूपमें चित्रित करते हैं। बाबू तरुणराम फ़ूकन उसे 'स्वराज्य आश्रम' कहते हैं। श्रीयुत फूकन असमके एक नेता हैं। पाठकको यह मालूम होना चाहिए कि वे एक नम्बरके निशानेबाज और बढ़िया खिलाड़ी हैं। परन्तु उन्होंने कष्टका रहस्य जान लिया है। सिलचर जेलसे वे लिखते हैं:

> मेरा खयाल है कि मैं सरकारके दृष्टिकोणसे काफी शरारत कर रहा था, सो उसने मुझे गिरफ्तार करना और जेलमें बन्द करना उचित समझा। यहाँ मेरे लिए जो शान्ति और सुरक्षाकी व्यवस्था की गई है उसके लिए मैं

आपका और सम्बन्धित अधिकारियोंका भी आभारी हूँ। मुझे विश्वास है कि जो लोग जेलसे बाहर हैं उनके लिए आप शीघ्र ही शान्ति और सुरक्षाकी व्यवस्था कर सकेंगे। वे जब यहाँ आयेंगे तो, आशा है, हम उन्हें विनम्रतापूर्वक, परन्तु बिना-किसी हीन भावके, ग्रहण करेंगे। हमें क्षणिक शान्तिके लिए नहीं, बल्कि ऐसी स्थायी शान्तिके लिए प्रयत्न करना चाहिए जो समानता और सभी लोगोंके सामान्य लाभके सिद्धान्तपर आधारित हो, क्योंकि मेरे विचारमें उसी प्रकारकी शान्ति टिकाऊ हो सकती है। किसी और शर्तपर प्राप्त हुई शान्ति निश्चय ही एक कसक छोड़ जायेगी, जो शासित या शासक किसीके लिए भी लाभदायक नहीं होगी।

यदि हम इस खेलको पुरुषोचित और सम्मानित ढंगसे तथा बिना द्वेष या कड़वाहटके खेलते हैं, तो मेरी तुच्छ रायमें इस बातका कोई विशेष महत्त्व नहीं कि हमारी जीत होती है या हार; क्योंकि निःस्वार्थ भावसे भोगे गए कष्ट सदैवके लिए बेकार नहीं होंगे, बेकार हो नहीं सकते।

इस पत्रपर जेल सुपरिटेंडेंटके प्रति-हस्ताक्षर हैं। मोतीलालजीने लखनऊके अपने 'होटल' से मुझे यह चेतावनी दी है कि मैं किसी अधकचरी और पैवन्द लगी शान्तिको स्वीकार न करूँ। वे अनिश्चित कालतक जेलमें रहनेको तैयार हैं। हमारे बीच आज बहुत-से स्वराज्य आश्रम उभर रहे हैं। पर उनमें से कोई भी इतना सच्चा नहीं है जितनी कि जेलें। उनका निर्माण धनसे नहीं, बल्कि मजबूत दिलोंसे हुआ है।

बर्मामें

राष्ट्रीयताकी लहर फैल रही है। बर्मापर मैंने इस बार दो लेख दिये हैं। स्वामी श्रद्धानन्दजी[1] और श्री अब्बास तैयबजीने मुझे हाथियों और आश्चर्योंके उस देशमें हो रही राष्ट्रीय जागृतिका शानदार ब्योरा दिया है। अंग्रेज शासकों द्वारा बर्माकी लूट उनके इतिहासका एक दुःखद अध्याय है। मेरे लिए उससे भी अधिक दुःखकी बात यह है कि हिन्दुस्तानी भी उस लूटमें भाग लेनेसे झिझके नहीं हैं। मैं कभी इस बात-पर गर्व अनुभव नहीं कर सका हूँ कि बर्मा ब्रिटिश भारतका अंग बना दिया गया है। वह भारतका अंग कभी नहीं था और न कभी होना चाहिए। बर्मी लोगोंकी एक अपनी सभ्यता है। बर्माका बौद्ध धर्म भारतके बौद्ध धर्मसे बिलकुल भिन्न है, जैसे कि यूरोपका ईसाई धर्म ईसाके ईसाई धर्मसे सर्वथा भिन्न है। मैं इनमें से किसीकी भी निन्दामें कुछ कहना नहीं चाहता। ईसाका सन्देश यूरोपीय मानस जितना हजम कर सकता है उससे कहीं ज्यादा भारी था। बुद्धका सन्देश बर्मी मानसके लिए ज्यादा भारी था। दोनों राष्ट्रोंको इन सन्देशोंसे अपनी-अपनी ग्रहण-शक्तिके अनुसार लाभ हुआ है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यूरोपको ईसाके सन्देशके गूढ़ार्थ और रहस्योंको अभी

१. महात्मा मुंशीराम (१८५६-१९२६); बादमें श्रद्धानन्दके नामसे सुविख्यात, आर्यसमाजी राष्ट्रीय नेता; दिल्ली और पंजाबमें सार्वजनिक कार्योंमें प्रमुख भाग लिया।

समझना है, जैसे कि वर्मियोंको बुद्धके ध्येयके गूढ़ार्थ और रहस्योंको अभी समझना है। वर्मी ऐसा तभी कर सकते हैं जब उन्हें उनके ढंगसे प्रगति करने दी जाये। इसलिए वर्मामें आश्चर्यजनक जागृतिकी वातसे मुझे अत्यधिक प्रसन्नता होती है। इसमें सन्देह नहीं कि यदि वर्मी अपना प्रयत्न जारी रखें तो वे अपनी सीधी-सादी समस्याको हमारी अपेक्षा कहीं अधिक शीघ्र सुलझा सकते हैं, क्योंकि हमारे साथ तो अनेक प्रकारकी ऐसी जटिलताएँ हैं जिनसे वुद्धि चकरा जाती है।

अम्वालामें

पंजाव सचमुच गजव कर रहा है। अहिंसात्मक वातावरण पैदा करनेका श्रेय सिखोंको मिलना चाहिए और वे इसके पूर्णतया अधिकारी हैं। उनकी दृढ़ता, ननकाना साहवमें[1] उनका आश्चर्यजनक त्याग, उनके सर्वश्रेष्ठ नेताओंकी गिरफ्तारी और सरकारका पूरी तरह घुटने टेक देना — इन सवसे पंजाव आज गर्व, आशा और त्याग व अहिंसाकी भावनासे भरा है। इसलिए पाठकको अम्वालाके लाला दुनीचन्दके निम्नलिखित पत्रको[2] पढ़कर आश्चर्य नहीं होना चाहिए :

लाला दुनीचन्द अम्वालाकी वर्षोंसे सेवा कर रहे हैं। असहयोगसे पहले उन्हें अपनी प्रेक्टिससे वहुत आय थी, जिसका वहुत वड़ा भाग वे उन अनेक सार्वजनिक कार्योंमें लगा देते थे जिनका सूत्रपात उन्हींके द्वारा हुआ था। इसलिए उन्हें अपने गिर्द काम करनेवाले त्यागी नवयुवकोंका एक दल इकट्ठा करनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। वे उन्हें अव विना किसी कठिनाईके जेल जानेके लिए प्रेरित कर रहे हैं। स्वराज्य त्यागका ही तुरन्त प्रगट होनेवाला और प्रत्यक्ष फल है। इसलिए अम्वालाके नागरिकोंको स्वराज्यके आगमनका अहसास हो रहा है। पंजाव तथा अन्य स्थानोंमें महिलाओंमें जो जागृति आई है वह एक ऐसी चीज है जिसका सही मूल्यांकन हम अभी नहीं कर सकेंगे। सच वात तो यह है कि लाला दुनीचन्दके लिए त्यागका मार्ग प्रशस्त करनेवाली श्रीमती दुनीचन्द हैं। उन्होंने ही उन्हें इसके लिए तैयार किया है और श्रीमती दुनीचन्दका कोई अकेला उदाहरण नहीं है। मुझे ऐसी अनेक वहनोंसे परिचयका सौभाग्य प्राप्त है जो अपने पतियोंकी महानताके लिए उत्तरदायी हैं।

रोहतकमें

जैसा अम्वालामें है वैसा ही रोहतकमें है। 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंके द्वारा जनता लाला शामलालके त्यागसे परिचित हो चुकी है। फर्क सिर्फ यह है कि उन्होंने वह अपनी पत्नी और माँ-वापके विरोधके वावजूद किया है। उन्हें जवरदस्त कठिनाइयोंसे टक्कर· लेनी पड़ी। परन्तु उन्होंने उन सवको परास्त कर दिया। उन्हें अव अन्य मित्रोंके साथ गिरफ्तार होनेका सम्मान प्राप्त हुआ है। ये व्यक्ति अपने देशके लिए

१. फरवरी १९२१ में; देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४२८-३२।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है; उसमें असहयोगकी स्थानिक गति-विधियों और अम्बाला जिलेमें स्वयंसेवकोंकी गिरफ्तारीका वर्णन था।

गौरव हैं। ये कोई दीवाने लोग नहीं हैं। ये कर्मठ व्यवसायी हैं जिन्होंने देश और धर्मकी पुकारपर अपना व्यवसाय छोड़ दिया है। ये शान्तिको भंग करनेवाले लोग नहीं हैं। ये तो उसके रक्षक हैं। जो सरकार इस तरहके नागरिकोंको वन्द करनेकी जरूरत महसूस करती है, वह निश्चय ही दिवालियेपनकी स्थितिपर पहुँच गई है।

अमृतसरमें

जिला कांग्रेस कमेटीके प्रधान लाला गिरधारीलाल, खिलाफत समितिके प्रधान मौलाना मुहम्मद दाऊद गजनवी, नगर कांग्रेस कमेटीके प्रधान मास्टर सुनामराय और जिला सिख लीग के प्रधान सरदार रावलसिंहको गिरफ्तार कर लिया गया था और अब उन्हें सजा सुना दी गई है। उनका अपराध यह था कि उन्होंने, राजद्रोहात्मक सभाओं सम्वन्धी घोषणाके वावजूद, एक सार्वजनिक सभा करनेकी धृष्टता की थी। अमृतसर एक अच्छी खासी संख्यामें लोगोंको जेल भेज चुका है। अव तो उससे उसके सारे प्रधान छीन लिये गये हैं? उनमें से हर एकको दो सालकी कड़ी कैद और ५०० रुपये जुर्माना, या जुर्माना अदा न करनेपर तीन महीनेकी और कैदकी सजा मिली है। सवको मियाँवाली जेलमें भेज दिया गया है। मजेकी बात यह है कि चाहे जिधर भी नजर दौड़ाओ, कोई भी कांग्रेस कमेटी आज अपने पदाधिकारियोंसे खाली नहीं है। लोग यह वात जान गये हैं कि एक सुव्यवस्थित संगठनमें पदोंपर काम करनेवाले व्यक्ति चाहे मर जायें, जेल चले जायें या धोखा दे जायें पर पदाधिकारी सदा रहते हैं। यह विचार सचमुच खुद वहुत शानदार है, क्योंकि इससे मनुष्य और उसकी मानवीय स्थितिकी एकता व्यक्त होती है।

लाहौरमें

पंजावकी राजधानी किसीसे पीछे नहीं है। लाहौरके लाला दुनीचन्द १४ तारीखके अपने पत्रमें लिखते हैं:[1]

इस प्रकारके कार्यसे राष्ट्रको निश्चय ही नया रूप मिलेगा। इसीलिए यह कोई आश्चर्यकी वात नहीं है कि पंजाब सरकारने सविनय अवज्ञा आन्दोलनसे निपटनेके लिए "अबतक अपनाये गये उपायोंसे कहीं अधिक व्यवस्थित और कठोर" उपाय काममें लानेकी धमकी दी है। सम्बद्ध नोटिसमें कहा गया है:

> **लोगोंको भड़कानेके किसी भी प्रयत्नको नजरअन्दाज करना, या इस तरहकी शरारतमें सरकारी कर्मचारियों अथवा पेंशनयाफ्ता लोगोंके सहयोगको सहन करना सम्भव नहीं होगा। हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि व्यवस्था कायम रखनेके लिए जितने भी आवश्यक होंगे उतने पुलिसके आदमी और कार्यकारी कर्मचारी और लेने होंगे, और इस प्रकार प्रान्तके भारको काफी बढ़ाना आवश्यक हो जायेगा।**

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें एक सार्वजनिक सभा और खद्दरके प्रचारार्थ स्त्रियोंके कार्योंका वर्णन था।

नोटिसमें यह दलील दी गई है :

> **यदि यह (सविनय अवज्ञा आन्दोलन) सफल हो गया तो इससे अपराधी प्रवृत्तिके लोगोंको ऐसी पद्धतियोंकी शिक्षा मिलेगी जिन्हें वे स्वभावतः वर्तमान या भावी प्रत्येक सरकारके विरुद्ध प्रयुक्त करनेको तैयार रहेंगे। और यदि वह असफल हो गया तो प्रगतिके क्रमको केवल पीछे ले जायेगा, और जिन लोगोंने अपनी मातृभूमिकी शिराओंमें जान-बूझकर इतना खतरनाक जहर भरा है उनकी राजनीतिक परिपक्वताके बारेमें गहरे सन्देह पैदा हो जायेंगे।**

इस नोटिसके लेखकने सरकारी पक्षके समर्थनमें आवश्यकतासे अधिक दलील दे डाली है और इस प्रकार वह अपने उद्देश्यमें विफल हो गया है। नोटिसका फल सिर्फ यह निकला कि लोग और अधिक दृढ़ हो गये हैं। पहली बात तो यह कि सविनय अवज्ञा अपराधी प्रवृत्तिके लोगोंके मनोंमें न तो बिठाई जा रही है और न बिठाई जा सकती है। शिक्षित-वर्ग, महिलाएँ और छात्र अपराधी प्रवृत्तिके नहीं हुआ करते। किसानोंको भी 'अपराधी प्रवृत्तिके लोगों'में शामिल नहीं किया जा सकता। यदि लोगोंने शान्त रहनेकी शिक्षा न ली होती तो वे उन हमलों और अपमानोंके सामने डटे नहीं रह सकते थे जिनका ब्योरा डा० गोकुलचन्द नारंग और उनके साथी सदस्योंने १३ दिसम्बर, १९२१ को लाहौरमें पुलिस द्वारा किये गये हमलोंके[1] सम्बन्धमें अपनी योग्यतापूर्ण और युक्तियुक्त रिपोर्टमें इतनी सजीवतासे दिया है। दूसरे, सविनय अवज्ञा हर तरहकी, वर्तमान या भावी, सरकारके विरुद्ध नहीं है। वह केवल वर्तमान सरकारके विरुद्ध है जिसने समूची जनताकी इच्छाकी अपराधपूर्ण अवज्ञा की है। तीसरे, जिस सरकारने जनताको सुनियोजित ढंगसे शक्तिहीन कर दिया हो, जनतासे उसकी आज्ञा न माननेके लिए कहना, शरारत या जहर फैलाना कैसे हो सकता है? क्या लोग उन अपमानोंमें सहायक होते रहें जो एक गैर-जिम्मेदार नौकरशाहीने उनपर लादे हैं?

परन्तु हमें डा० गोकुलचन्द नारंगकी रिपोर्टको देखना चाहिए। मेरे विचारमें यदि लोगोंको स्वतन्त्र मनुष्योंकी तरह रहना है तो इससे अनुशासनयुक्त सविनय अवज्ञाका पूर्ण औचित्य सिद्ध हो जाता है। कमेटीकी ये स्थापनाएँ हैं कि

१. स्वयंसेवक शान्तिपूर्वक कार्य कर रहे थे;

२. पुलिस अचानक 'पीतल-मढ़ी लम्बी लाठियाँ लिये' स्वयंसेवकों और लोगोंपर टूट पड़ी और उन्हें बिना चेतावनी दिये पीटने लगी;

३. स्वयंसेवकोंने चोटें खानेके बावजूद जब तितर-बितर होनेसे इनकार कर दिया तो वे गिरफ्तार कर लिये गये, छोड़ दिये गये और फिर गिरफ्तार कर लिये गये, और कुछ घंटोंकी हिरासतके बाद रातके कोई एक बजे अपने घरोंसे बहुत दूर अलग-अलग जगहोंपर जान-बूझकर छोड़ दिये गये।

४. कैद करनेवालोंने स्वयंसेवकोंको गन्दी गालियाँ दीं।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २२-१२-१९२१ का उप-शीर्षक "मार्केका प्रमाण"।

इस प्रकारकी अपराधितासे, जिसें कानूनका रूप दे दिया गया हो, लोगोंको कैसे निपटना चाहिए? क्या वे दीनतासे उसे सहन करते रहें या स्वाभिमानी मनुष्योंकी तरह आज्ञाओंका उल्लंघन कर सत्ताकी उपेक्षा करें? यदि इस तरहकी बातें, जैसी कि डा० गोकुलचन्द नारंगने बताई हैं, लाहौर-जैसे शहरमें हो सकती हैं तो बेचारे गाँववालों की क्या दुर्दशा होती होगी। यदि अखबार पढ़नेवाले लोग ग्राम-जीवनसे बिलकुल अनभिज्ञ न होते और गाँववालों की कठिनाइयोंके प्रति तटस्थ न होते, तो कानून और व्यवस्थाकी यह जड़पूजा जिसके नामपर अकथनीय आतंक पैदा किया जा रहा है, बहुत पहले खत्म हो गई होती। सविनय अवज्ञा आन्दोलनका उद्देश्य सच्चा कानून और सच्ची व्यवस्था विकसित करना है, जिसके पालनको लोग अपना विशेषाधिकार और कर्त्तव्य समझेंगे।

बंगालमें

बंगालमें भी हालत कुछ बेहतर नहीं है। 'कानून और व्यवस्था' के नामपर सभाएँ जबरदस्ती भंग की जा रही हैं। 'स्वतन्त्र' के सम्पादक पं० अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी और 'भारतमित्र' के सम्पादक पं० लक्ष्मण नारायण गर्देको भी गिरफ्तारीका सम्मान प्राप्त हो गया है। देशबन्धु चित्तरंजन दास और मौलाना अबुल कलाम आजादका मुकदमा खत्म होनेमें ही नहीं आ रहा। खबर मिली है कि बारीसाल जेलमें छः राजनीतिक कैदियोंको, अनुशासन भंग करनेके तथाकथित अपराधमें अकेली कोठरियोंमें बन्द कर दिया गया है। कहा जाता है कि उन्हें बेड़ियाँ पहनानेका हुक्म दिया गया है। फीरोजपुर सब-डिवीजनल कमेटीके प्रधान नरेन बाबूने शिकायत की है कि कैदियोंके 'कान खींचे' गये थे। 'पत्रिका' की रिपोर्ट है कि खान बहादुर मौलवी नेमायतउद्दीनने, जो कैदियोंसे मिले थे, कहा है कि अकेली कोठरियोंमें बन्द कैदियोंको अगर उन कोठरियोंसे निकाला नहीं गया तो उनके पागल हो जानेका डर है। निस्सन्देह, इस तरहकी अमानुषिकताका भी 'कानून और व्यवस्था' के हितमें समर्थन किया जायेगा। सर होर्मसजी वाडिया तक ऐसे 'कानून और व्यवस्था' का विरोध कर सकते हैं।

ईश्वरको धन्यवाद है कि इन सब परीक्षाओंके बावजूद, जिनसे बंगाल आज गुजर रहा है, बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके प्रधान और खिलाफत समितिके उपप्रधान, बाबू हरदयाल नाग निम्नलिखित घोषणा-पत्र जारी कर सके हैं:

> कलकत्तेके नागरिकोंका कलकी सार्वजनिक सभाओंमें जो शान्त और धीर व्यवहार रहा उसके लिए मैं उन्हें फिर बधाई देता हूँ। सविनय अवज्ञा अभी अपनी प्रयोगात्मक स्थितिमें है। इसकी सफलता पूर्णतया अहिंसाकी सफलतापर निर्भर है। जैसा कि स्वाभाविक था, कुछ भीड़ इकट्ठी हो गई। परन्तु यह देखकर बहुत ही सन्तोष हुआ कि पुलिसके डंडे चलानेपर भी भीड़ने जरा-भर बदलेका कोई रुख नहीं दिखलाया। पुलिसके हस्तक्षेपके बावजूद हमारे राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंने सभाओंकी कार्रवाई शान्ति और निर्भीकतासे जारी रखी। वस्तुतः

किसी भी तरहकी कोई गड़बड़ नहीं हुई और कलकत्तेके सार्वजनिक मैदानोंमें अहिंसा एक बार फिर विजयी रही। . . .

एक बंगाली मित्र पूछते हैं कि बंगाल, जिसने अराजकतावादियोंके उग्र सम्प्रदाय-को जन्म दिया है, क्या अन्ततक अहिंसक रह सकेगा। जैसा ऊपर दिया गया है इस तरहके घोषणा-पत्रोंसे और इसमें जनताके जिस आत्मसंयमकी चर्चा है उससे मुझे सच-मुच आशा बँधती है। अराजकतावादी भी आखिर अपने देशसे प्रेम करते थे। अभी कुछ दिन पहलेतक हम हर तरहके अन्याय और अपमानको जिस पुरुषार्थ-हीनतासे सह रहे थे, उससे उन्हें मार्मिक पीड़ा होती थी। 'भिखारीपनकी नीति' से वे बुरी तरह उकता गये थे। परन्तु आज अपने चारों ओर पुरुषों और स्त्रियों, बच्चों और बूढ़ोंको अपूर्व साहसके आश्चर्यजनक उदाहरण प्रस्तुत करते देखकर भयानकसे-भयानक अराजकता-वादीका भी सीना गर्वसे फूल जाना चाहिए। 'भिखारीपन' का स्थान अब अपने हकके दावेने ले लिया है और उस सत्ताके सविनय विरोधने ले लिया है जो उद्धत दमनकी आड़ लेकर जमी हुई है। किसी भी अन्य प्रणालीसे देश इससे तनिक भी ज्यादा या शीघ्र प्रगति नहीं कर सकता था। इस संघर्षको समाप्त करनेके लिए हमें अहिंसाकी भावनाकी कम नहीं, बल्कि और ज्यादा जरूरत है। और मुझे विश्वास है कि यदि अब भी कोई व्यक्ति ऐसा है जो भारतकी मुक्तिके लिए हिंसाको आवश्यक मानता है, तो वह इस शान्त साहससे, जो बंगाल आज दिखा रहा है, गद्‌गद हुए बिना नहीं रह सकता।

उलझनमें डालनेवाली रिहाई

बाबू भगवानदासको अचानक और बिना शर्त कैदके समयसे बहुत पहले छोड़ दिया गया है। उनके साथ मेरी हार्दिक सहानुभूति है। मैं जन-साधारणको यह सूचित करना चाह रहा था कि बाबू भगवानदास साहित्यिक शोधमें लगे हैं और अपने एकान्त-वासमें परम प्रसन्न हैं। जाहिरा उनके पक्षमें लेकिन असलमें उनके विरुद्ध जो भेदभाव बरता गया है, वह उन्हें स्वभावतः बहुत अखर रहा है। जैसा कि उन्होंने अपने एक खुले पत्रमें कहा है, यदि वे रिहाईके अधिकारी थे तो उसी तरह बहुत-से अन्य लोग भी थे। बनारसमें जो लोग पकड़े गये थे उनमें वे निश्चय ही मुख्य अपराधी थे। हड़ताल सम्बन्धी नोटिसका मसविदा उन्होंने ही तैयार किया था और उन्होंने ही उसे छपवाया था। प्रोफेसर कृपलानीको नोटिस बाँटनेके लिए उन्होंने ही उकसाया था। इस तमाम शरारतके सरगनाकी रिहाई कैदके समयसे पहले भला क्यों होनी चाहिए? बाबू भगवानदासने इस तरहके अकाट्य तर्क दिये हैं। परन्तु मुझे इसमें सन्देह नहीं कि उन्हें अधिकारियोंका ध्यान आकर्षित करनेके बहुतसे मौके मिलेंगे। बंगाल, पंजाब और अन्य स्थानोंपर सार्वजनिक सभाओंका जबरदस्ती भंग किया जाना यदि अधिकारियोंके मनका सूचक है, तो हमें उससे कहीं अधिक ताप सहना होगा जितना हमने अबतक सहा है। हमारे साथ जो बरताव हो रहा है वह तुर्की हमामके ढंगका है। हम उसे सह सकें इसलिए सरकार हमें उत्तरोत्तर अधिक गरम कमरोंमें ले जा रही है।

पुलिस कान्फ्रेंस

डिप्टी सुपरिन्टेंडेंट पुलिस, बाबू पूर्णचन्द्र विश्वासने कुछ दिन पहले, कलकत्तेमें हुई अखिल भारतीय पुलिस कान्फ्रेंसके अध्यक्षकी हैसियतसे, जो भाषण दिया था उसपर लोगोंने उतना ध्यान नहीं दिया जितना कि उसके महत्त्वको देखते हुए देना चाहिए था। पूर्णबाबूने पुलिसकी पूरी स्थितिको विशद रूपमें रखा है। इसमें सन्देह नहीं कि भारतमें पुलिस बदनाम है। दमनकी आजकलकी क्रूर कार्यवाहियोंसे यह बदनामी शायद और बढ़ी है। परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पुलिस सरकारके हाथका महज एक हथियार है। अध्यक्ष कहते हैं:

> यहाँ भारतमें कानून सरकार द्वारा बनाये गये हैं और लोगोंका यह विचार है कि कानून उनपर शासन करनेके लिए, उनकी स्वाभाविक महत्त्वाकांक्षाओंको नियन्त्रित करनेके लिए बनाये गये हैं, उनकी भलाईके लिए नहीं बनाये गये हैं। हम इन कानूनोंका सम्मान कायम रखते हैं और इन्हें लागू करते हैं। हमारी इतनी बदनामीका एक कारण यह है। और सुधार योजनाके शुरू होनेसे लोग अब यह महसूस करने लगे हैं कि अप्रिय तो कानून हैं, पुलिस नहीं। हमारा कसूर सिर्फ यह है कि हमें इन अप्रिय कानूनोंको अमलमें लाना होता है।

जैसा कि अध्यक्ष कहते हैं, लोगोंपर शासन करने, उनपर आधिपत्य जमाने, उनकी स्वाभाविक महत्त्वाकांक्षाओंको नियन्त्रित करनेका विचार, भारतकी पूरी नौकर-शाही-व्यवस्थामें व्याप्त है। और क्योंकि यह कार्य प्रत्यक्ष रूपसे पुलिसके हाथों सम्पन्न होता है, इसलिए इस विषयमें उसके एक प्रतिष्ठित सदस्यकी स्वीकारोक्तिको पढ़ना दिलचस्प लगता है:

> अपनी बदनामीकी चर्चा करते हुए मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता, चाहे यह नागवार ही क्यों न लगे, कि हमारे आचरण-नियम और हमारे अफसरोंका रवैया जनतासे हमारे अलगावको और बढ़ाता है। लोगोंके साथ हम आजादीसे मिल-जुल नहीं सकते, उनका हार्दिक सहयोग और सहानुभूति माँग नहीं सकते, जो कि हमारे कर्त्तव्योंके लिए सबसे अधिक आवश्यक है। यदि हम ऐसा करते हैं तो हमारे अफसर, जरा-सा भी बहाना मिलनेपर, हमें शकको नजरोंसे देखते हैं, सजातक दे देते हैं और हमारी तरक्की रोक दी जाती है। साथियो, मैं पूछता हूँ कि इसके लिए जिम्मेदार कौन है? मैं एकदम कह सकता हूँ कि हमारा कसूर सिवाय इसके और कुछ नहीं है कि हम इस बदनाम विभागसे सम्बन्ध रखते हैं, और हमारे अफसर और हमारे आचरण-नियम इस खाईको और चौड़ा करते हैं।

लेकिन सरकार जहाँ भारतीय पुलिसको इस ढंगसे इस्तेमाल करती है, वहाँ उसका बरताव उसके साथ इस कारण क्या कुछ बेहतर है? जातीय हीनताका कष्ट, जैसा कि उसकी शिकायतोंकी लम्बी सूचीसे जाहिर हो जाता है, उन्हें भी उतना ही

भोगना पड़ता है जितना कि सामान्य जनताको। इससे पुलिसमें बेचैनी पैदा हो रही है जिसके चिह्न आसानीसे देखे जा सकते हैं। अध्यक्ष सावधानीसे इसे इस तरह व्यक्त करते हैं:

> मातहत सिपाही यदि किसी उपद्रवकारी भीड़को तितर-वितर करने या उसपर गोली चलानेके अपने अफसरके हुक्मको माननेसे इनकार कर दें, तो इसका असर क्या होगा? आप इस विचारपर हँस सकते हैं। मैं भी जानता हूँ कि इस तरहकी चीज असम्भव या कमसे-कम अवांछनीय है। लेकिन कोई नहीं जानता कि हालात किस तरह बदलते हैं। आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि देशके लोग अब जेलसे डरते नहीं हैं, और यह भावना मातहत सिपाहियोंमें भी आ गई है।

पूर्णबाबूको इस सब स्पष्टवादिताका मूल्य चुकाना पड़ा। उन्हें सर हेनरी व्हीलर-के आगे पेश होना पड़ा जहाँ उन्हें फौरन अपनी ड्यूटीपर जानेका हुक्म मिला। परन्तु प्रतिनिधियोंने इस हुक्मके खिलाफ हलका-सा प्रदर्शन किया और पूर्णबाबूको विजयीकी तरह उनकी रेलगाड़ीसे एक जुलूसके साथ कान्फ्रेंसमें वापस लाया गया ताकि वे उसकी कार्रवाई पूरी करा सकें।

प्रतिवाद

दिल्लीके माननीय चीफ कमिश्नरने उन आरोपोंके[1] खण्डनका कष्ट उठाया है जो जेलोंमें होनेवाले व्यवहारके सम्बन्धमें ५ तारीखके 'यंग इंडिया'में लगाये गये थे। जहाँतक उनके जवाबके उस अंशका सम्बन्ध है जो दिल्ली जेल सम्बन्धी विशिष्ट आरोपों-का प्रतिवाद करता है, मेरी उससे तसल्ली नहीं हुई। जहाँतक उस अंशका सम्बन्ध है जो सामान्य आरोपोंके बारेमें है, उसमें कोई तुक नहीं है। कोई भी बेखटके यह कल्पना कर सकता है कि दिल्ली जेलमें खाने और कपड़ेकी व्यवस्था और जेलोंसे बेहतर नहीं है। सर्वश्री सन्तानम् और देसाईके बयानसे वहाँ दिये जानेवाले भोजनके सम्बन्धमें लाला शंकरलालकी बातका समर्थन होता है। पहननेवाला ही जानता है कि जूता कहाँ काटता है। लाला शंकरलालने कोड़े लगानेका कोई आरोप नहीं लगाया है। जिस व्यक्तिने आरोपोंकी सूचना दी है उसने दिल्ली जेलमें कोड़े लगानेकी बात नहीं कही है। उसने केवल यह सुना है कि कुछ जलोंमें कोड़े लगाये गये हैं। और यह बात पंजाब और बंगालके बारेमें सरकारी तौरपर स्वीकार कर ली गई है। जहाँतक इलाहाबादका सम्बन्ध है, श्री महादेव देसाईके गम्भीर आरोपोंका अभीतक खण्डन नहीं हुआ है। बनारसमें कैदियोंको करीब-करीब नंगी हालतमें छोड़नेकी बातका भी प्रतिवाद नहीं किया गया है। डा० गोकुलचन्दने दिलको दहलानेवाली जिन बातोंका पर्दाफाश किया है, वे अपनी कहानी आप कहती हैं। इन सब परिस्थितियोंमें, दिल्लीके चीफ कमिश्नरकी रिपोर्टका भारतमें कोई प्रभाव नहीं हो सकता। यदि मैं यह स्वीकार

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ५-१-१९२२ का उप-शीर्षक "जेल-जीवनकी झाँकी"।

कर सकूँ कि मुझे सूचनाएँ देनेवाले सब लोग गलत थे और भारतीय जेलोंमें कैदियोंके साथ कोई अमानुषिक व्यवहार नहीं किया गया, तो इससे अधिक खुशीकी बात मेरे लिए और कोई नहीं होगी। जहाँतक माफीनामोंका सवाल है, हस्तलिखित 'इंडिपेंडेंट' उन तथ्योंको उजागर कर रहा है जो यह बताते हैं कि वे किस तरह बलात् लिखवाये गये हैं। बंगालसे इसकी आश्चर्यजनक पुष्टि आई है। दिल्लीके बारेमें लाला शंकरलालने जो आरोप लगाया है, मैं उसपर शक करनेको तैयार नहीं हूँ। क्या सरकारने यह नहीं कहा कि यदि कैदी माफी माँग लेते हैं तो उन्हें छोड़ दिया जायेगा? काफी छानबीनके बाद और जिम्मेदारीके साथ लगाये गये आरोपोंको चटपट रद कर देनेके दिन अब लद गये हैं। चीफ कमिश्नरने जिस तरहकी भाषाका प्रयोग ठीक समझा है उससे भारतमें कोई भी बौखलाने या धोखेमें आनेवाला नहीं है। वे कहते हैं: "लेखमें जो आरोप हैं वे ऐसी असन्तुलित भाषामें हैं कि बुद्धिमान पाठक उनपर विश्वास नहीं कर सकता।" यह ऐसी बात है जिसे मैं अकड़ दिखाना कह सकता हूँ। अधिकारियोंको, यदि वे जनसाधारणके सेवक और मित्र बनना चाहते हैं तो, अकेलेपन और अलगावके अपने बुर्जसे नीचे उतरना होगा, उन्हें जन-साधारणसे मिलना-जुलना होगा और उन्हींकी तरह सोचना होगा। चीफ कमिश्नर यदि यह कहते कि प्रारम्भिक स्थितियोंमें कठिनाइयाँ अनिवार्य थीं परन्तु सरकार राजनीतिक बन्दियोंको पृथक करने और उनके साथ अच्छा बरताव करनेकी भरसक कोशिश कर रही है, तो वह कहीं ज्यादा अच्छा रहता। वह एक उपयुक्त और सच्चा वक्तव्य होता। क्योंकि चाहे यह बात दिल्ली जेलके बारेमें ठीक हो या नहीं, पर मैं धन्यवादपूर्वक यह स्वीकार करता हूँ कि, मिसालके लिए, आगरेमें हालात काफी सुधरे हैं। विभिन्न स्थानोंके बहुत-सारे राजनीतिक कैदी वहाँ एक जगह रखे गये हैं और उनके साथ मनुष्योंका-सा व्यवहार हो रहा है। सभी कैदियोंसे अच्छा व्यवहार करनेका सवाल तो अब भी बना हुआ है। साधारण अपराधी भी स्वच्छ और पर्याप्त वस्त्रों, स्वच्छ और पर्याप्त भोजन तथा समुचित शौचालयका, जहाँ पर्देकी व्यवस्था हो, समान अधिकार रखते हैं। महादेव देसाईके साथ जब साधारण कैदीका-सा बरताव किया गया तब इन सब चीजोंका अभाव था। यह जानकर कि उनके और उनके साथियोंके साथ अब अच्छा बरताव हो रहा है, कोई बहुत सुख नहीं होता। उनके साथ जब खास तौरपर अच्छा बरताव होने लगा तो उन्होंने अच्छे बरतावका एक प्रमाणपत्र दे दिया। परन्तु संयुक्त-प्रान्तकी सरकारने उसे प्रकाशित कर उनके उदार स्वभावका दुरुपयोग किया है। नैनी जेलमें उनके दाखिल होनेपर उनके साथ बरती गई अमानुषिकताके बारेमें मैंने 'यंग इंडिया' (५ जनवरी) में जो-कुछ छापा है, उसके एक-एक शब्दपर मैं दृढ़तासे कायम हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

१०४. खतरेसे भरपूर

झज्जर, रोहतक जिलेमें इसी नामकी तहसीलका सदरमुकाम है। उसकी आबादी करीब ११,००० की है। यहाँ एक नगरपालिका है जिसके चार मनोनीत और आठ निर्वाचित सदस्य हैं। अध्यक्ष निर्वाचित होता है। फिर भी यह नगरपालिका लोकप्रिय कार्योंसे कोई सहानुभूति नहीं रखती थी। इसलिए स्थानीय कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंने, चाहे इसे गलत कहिए या सही, जिला कांग्रेस कमेटीकी अनुमति बिना ही, नगरपालिकाको यह नोटिस दे दिया कि यदि उसने १५ से २२ जनवरीके अन्दर-अन्दर अपने आपको लोकप्रिय नहीं बनाया तो कांग्रेस कमेटी टाउन हालपर कब्जा कर लेगी। नगरपालिकाने इस नोटिसपर कोई ध्यान नहीं दिया। दूसरी ओर, निर्धारित अवधिके पहले ही दिन १५ जनवरीको, डिप्टी कमिश्नरने स्थानीय प्रमुख कार्यकर्त्ता पण्डित श्रीरामपर धारा १०७ लगाकर उन्हें एक सालके लिए जेल भेज दिया। उस दिन पण्डित श्रीरामने टाउन हालमें लोकमान्य तिलकके एक चित्रका उद्घाटन किया था, जिसके लिए नगरपालिकाकी प्रार्थनापर डिप्टी कमिश्नरकी पहले ही अनुमति मिल चुकी थी। पण्डित श्रीरामको जेल हो जानेपर स्थानीय कांग्रेस कमेटीके प्रधान और स्वयंसेवकोंने १६ तारीखको टाउन हालपर कब्जा कर लिया। वहाँ स्वयंसेवकोंका बाकायदा पहरा बैठा दिया गया। स्वयंसेवकोंने कस्बेके चारों दरवाजोंपर भी कब्जा कर लिया और चुंगीके इन्तजाममें बाधा डाली। जैसे ही यह खबर रोहतक पहुँची, मैं झज्जरके लिए रवाना हो गया, क्योंकि लाला श्यामलाल वहाँ मौजूद नहीं थे। वे कांग्रेस कमेटीकी एक मीटिंगमें भाग लेनेके लिए फीरोजपुर-झिरका गये हुए थे। लोग हिंसातक पर तुले हुए हैं। रातको मैंने उन्हें अहिंसापर कायम रहनेकी सलाह दी, जिसका कुछ असर हुआ। लेकिन उनमें परिवर्तन लानेके लिए अहिंसाके एक प्रभावशाली प्रचारककी आवश्यकता है। १८ तारीखको रातके आठ बजे कस्बेके कुछ प्रतिष्ठित लोगोंने कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं और नगरपालिकाके सदस्योंको इकट्ठा किया और इस मामलेको मैत्रीपूर्ण ढंगसे सुलझानेकी कोशिश की। नगरपालिकाके सभी निर्वाचित सदस्य — एक अध्यक्षको छोड़कर जो कि उपस्थित नहीं थे — और दो मनोनीत सदस्य इस्तीफे देनेको तैयार हो गये। यह भी निश्चय हुआ कि टाउन हाल कांग्रेसी स्वयंसेवकोंके कब्जेमें रहेगा। फिर भी, इस मामलेका आखिरी फैसला आज दोपहरको होना है। स्वयंसेवक अब भी उस जगहपर पहरा दे रहे हैं। लोगोंने पंचायत करके पण्डित श्रीरामके खिलाफ गवाही देनेवाले छः व्यक्तियों — तहसीलदार, थानेदार, लम्बरदार और नगरपालिकाके अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और मन्त्रीके सामाजिक बहिष्कारकी घोषणा की है।

टाउन हाल स्वर्गीय महारानी विक्टोरियाकी स्मृतिमें सार्वजनिक चन्देसे बनवाया गया था। कोई पाँच-छः सालतक इसकी कोई देखभाल नहीं की गई। पर पिछले दसेक सालसे यह इमारत नगरपालिकाकी देख-रेखमें है। १८ तारीखकी रातकी मीटिंगमें हुए समझौतेपर यदि अमल नहीं हुआ तो लोगोंमें उत्तेजना बढ़ जायेगी और मुझे डर है कि उससे अन्तमें हिंसा हो सकती है। स्थानीय नेता और स्वयंसेवक झुकनेको तैयार नहीं हैं। मैं यह पत्र १९ तारीखको सुबह १० बजे लिख रहा हूँ। रोहतकके पतेपर तार या पत्र भेजकर कृपया हमारा पथ-प्रदर्शन कीजिए कि क्या करना चाहिए।

यह पत्र (मूल हिन्दीमें है) रोहतक जिला कांग्रेस कमेटीके कार्यवाहक प्रधान लाला दौलतराम गुप्तने लिखा है। झज्जरके कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंका कार्य बड़े जीवटका और प्रेरणादायी है। पर इसमें बहुत ज्यादा खतरा भी है। यह हिंसा और अराजकताकी सीमातक पहुँच गया है। अपनी खुदकी सम्पत्तिको अपने अधिकारमें करनेकी लोगोंकी सदाकांक्षाको मैं पूरी तरह अनुभव कर सकता हूँ। नगरपालिकाएँ भारतके गले मढ़ा गया शायद सबसे बड़ा धोखा है। सरकार अबतक उन्हें अपनी सत्ताको मजबूत करनेके लिए प्रयुक्त करती आई है। लेकिन जहाँ नागरिकोंमें एकता कायम हो गई है वहाँ वे एक क्षणमें नागरिक स्वशासन प्राप्त कर सकते हैं। बम्बई अहाते (प्रेसीडेंसी)की तीन बड़ी नगरपालिकाओं — अहमदाबाद, सूरत और नडियादमें जो शान्त, सुव्यवस्थित और विकासोन्मुख क्रान्ति चल रही है, मैंने अभीतक उसका विवरण नहीं दिया है। उसकी बात कभी फिर होगी। वह चित्र अभी पूर्ण नहीं हुआ है। परन्तु झज्जर, यदि वह दृढ़ और पूर्णतया अहिंसात्मक रहे तो इन तीन नगरपालिकाओंसे भी आगे बढ़ जायेगा। यदि वहाँके नागरिक एकमत हैं तो टाउन हालपर बिना किसी बखेड़ेके कब्जा कायम रह सकता है। यदि कोई वास्तविक विरोध है तो नहीं रह सकता। सार्वजनिक हिंसाका फूट पड़ना पहले दर्जेका अपराध होगा, क्योंकि वह स्वेच्छासे और बिना किसी उत्तेजनाके किया गया कार्य होगा। मौलाना अबुल कलामकी भाषामें हिन्दुस्तान सबसे बड़ा गुरुद्वारा है; सबसे बड़ा टाउन हाल है। और यदि हम अभीतक उसे अपने कब्जेमें करनेमें सफल नहीं हुए हैं, तो हम झज्जरके टाउन हालके लिए भी प्रतीक्षा कर सकते हैं। (१) यदि हिंसाका रत्ती-भर भी डर हो, (२) यदि निर्वाचित सदस्य कब्जा करनेके विरुद्ध हों, (३) यदि रोहतककी कमेटी, या लाहौरकी कमेटी कब्जेके विरुद्ध राय दे, (४) यदि पुलिस संगीनोंके बलपर उसकी माँग करे, और कब्जा करनेवाले बिना प्रतिशोध या रोपके अपनी जगहपर मरनेको तैयार न हों, और यदि यह विश्वास न हो कि अन्य नागरिक उत्तेजित, अधीर और हिंसापर उतारू नहीं होंगे, तो कांग्रेस अधिकारियोंको टाउन हाल अवश्य वापस कर देना चाहिए।

कब्जा करनेकी कार्रवाई मुझे जल्दबाजीकी लगती है। लेकिन यदि अहिंसात्मक ढंगसे उसकी प्रतिरक्षा की जा सके तो यह दोप दूर भी हो सकता है।

कब्जा वापस दे देनेमें कोई नुकसान नहीं है। गलत या जल्दबाजीके हर कदमको वापस लेनेसे हमारी शक्ति बढ़ेगी। जो-कुछ गलत तरीकेसे लिया गया है, उसे अवश्य

दे देना चाहिए। वह व्यवस्थित रीतिसे काम करके फिर लिया जा सकता है। झज्जर-के मामलेमें, यदि टाउन हाल दे देना पड़े, तो निर्वाचित सदस्य, जिनकी बहुसंख्या है, इस आशयका एक प्रस्ताव पास करके कि कांग्रेस कमेटी इसे इस्तेमाल करे, उसे फिर ले सकते हैं। यदि निर्वाचित सदस्य ऐसा न करें, तो निर्वाचक एक लिखित प्रार्थना द्वारा, निर्वाचित सदस्योंसे यह माँग कर सकते हैं कि वे उनकी इस रायके मुताबिक काम करें।

पण्डित श्रीरामके विरुद्ध गवाही देनेवालोंका सामाजिक बहिष्कार साफ तौरपर एक गलती है जो अपने ही उद्देश्यको हानि पहुँचायेगी। हमें अपने विरोधियोंके सामाजिक बहिष्कारका सहारा नहीं लेना चाहिए। इसका अर्थ दबाव होता है। हम जब स्वतन्त्र विचार और स्वतन्त्र कार्यके अधिकारका दावा करते हैं, तो हमें वही अधिकार दूसरोंको भी देना चाहिए। बहुसंख्यकोंका शासन जब दबाव डालनेवाला हो जाता है तो वह उतना ही असह्य होता है जितना कि अल्पसंख्यक नौकरशाहीका शासन। हमें अल्प-संख्यकोंको नरमीके साथ समझा-बुझाकर और तर्क द्वारा अपने विचारपर लानेकी धैर्यके साथ चेष्टा करनी चाहिए। हमें, क्योंकि हुक्मपर और सजाके डरसे ही काम करनेका प्रशिक्षण मिला है, इसलिए इस बातकी काफी सम्भावना है कि हम, दिन-प्रतिदिन प्राप्त हो रही शक्तिके एहसाससे, अपनेसे कमजोर लोगोंके साथके अपने सम्बन्धोंमें शासकोंकी गलतियोंको और भी बड़े पैमानेपर दोहरायें। वह स्थिति पहली स्थितिसे ज्यादा बुरी होगी।

मैं यह जानता हूँ कि लाला दौलतराम गुप्तके पत्रपर खुली बहस करनेसे झज्जर-के लघु नाटकके पात्रोंको गलत समझा जा सकता है और उनके लिए खतरा पैदा हो सकता है। अधिकारी सम्बन्धित तथ्योंको आसानीसे तोड़-मरोड़ सकते हैं और उन्हें बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर सकते ह, जैसा कि वे प्रायः करनेको तैयार रहते हैं। लेकिन क्योंकि यह मामला बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और मेरे द्वारा खुली चर्चासे शायद जो खतरा हो सकता है उससे भी बड़ा खतरा कार्यकर्त्ताओंने अपने लिए पहले ही पैदा कर लिया है, इसलिए मैंने कब्जेकी इस कार्यवाहीके पक्ष और विपक्षपर खुली चर्चा करना अपना कर्त्तव्य समझा है। कार्य यद्यपि खतरेसे भरा है, पर फिर भी इसकी बहादुरीकी सराहना करनी पड़ती है। असहयोगी अपनी जानकी बाजी लगा चुके हैं। उनका कुछ भी छिपा नहीं है। परन्तु जो व्यक्ति गुप्त पत्र लिखना चाहते हैं वे खुशीसे ऐसा कर सकते हैं। मैं उनके रहस्यकी रक्षा करूँगा। लेकिन मेरा सारा काम क्योंकि खुले खजाने होता है और मेरी डाक बहुतसे सहायकोंके हाथोंमें से गुजरती है, इसलिए मैं गुप्त पत्र-व्यवहारको जहाँतक सम्भव है प्रोत्साहन नहीं देना चाहूँगा। यद्यपि सरकारने आम तौरपर मेरे पत्रोंमें हस्तक्षेप नहीं किया है — इसके लिए उसकी प्रशंसा करनी चाहिए — पर पत्र लिखनेवालोंको यह भी समझना चाहिए कि सभी पत्रोंकी तरह मेरे पत्र भी उसकी दयापर निर्भर हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६–१–१९२२

१०५. अपने आपसे होशियार!

मद्रासके एक पत्र-लेखकने अपने शहरकी हालकी घटनाओंके बारेमें मुझे एक पत्र[1] लिखा है। मैं इस पत्रको खुशीके साथ, जिसमें कुछ दुःख भी मिला हुआ है, प्रकाशित कर रहा हूँ। यह तो स्पष्ट मालूम होता है कि वहाँकी हुल्लड़बाजीने आगे चलकर बड़ा शोचनीय रूप धारण कर लिया। डा० राजन्ने तो आरम्भकी घटनाओं-का ही वर्णन किया था।[2] श्री राजगोपालनका असहयोगियोंपर दोषारोपण करना बिलकुल ठीक है।

जब सैकड़ों-हजारों लोग गाड़ियोंकी तोड़-फोड़में, निरपराध मुसाफिरोंके खिलाफ बुरी तरह गाली-गलौज करनेमें तथा एक सिनेमावाले को धमकानेमें लगे हुए हों, तब उनमें कितने असहयोगी थे और कितने हुल्लड़बाज, यह पहचानना बड़ा कठिन हो जाता है। असहयोगी एक साथ दोनों लाभ नहीं उठा सकते, 'मीठा-मीठा गप और कड़वा-कड़वा थू' नहीं कर सकते। वे तो दावा करते हैं कि हम लाखों, करोड़ों हैं। वे यह भी दावा करते हैं कि लगभग सारा भारत हमारे पीछे है। अगर ऐसा है, तो या तो हमें अपनी कार्य-विधिको अपने स्वीकृत सिद्धान्तके अनुसार नियमित कर लेना चाहिए, या फिर सार्वजनिक कार्योंसे कतई नाता तोड़ लेना चाहिए, फिर चाहे उसकी बदौलत हमें उस समाजसे अलग ही क्यों न हो जाना पड़े। अभी तो हमें और भी कई जगह हड़तालें करनी हैं। दिल्ली, नागपुर और अन्य शहरोंको अब इन घटनाओंसे सबक लेना चाहिए। मेरा तो उनसे यही कहना है कि अगर उन्हें पूरी तरहसे यह विश्वास न हो कि हम ऐसा प्रबन्ध कर सकते हैं जिससे बम्बई और मद्रासके जैसी अशोभनीय घटनाएँ हमारे यहाँ न हो सकेंगी, तो वे हड़तालोंके झगड़ेमें बिलकुल ही न पड़ें। मुझे विश्वास है कि मद्रासकी कांग्रेस कमेटी इस बातकी अच्छी तरह तहकीकात करेगी और जहाँ अपनी गलती देखेगी, उसे स्वीकार करेगी। बम्बईके भयंकर अनुभवोंके बाद तो मद्रासमें इस बातका पूरा प्रबन्ध होना चाहिए था जिससे वहाँ ऐसी सार्वजनिक हिंसा बिलकुल न होने पाती। श्री राजगोपालनके पत्रकी पुष्टि एक सक्रिय असहयोगीके पत्रसे भी होती है। चूँकि उन्होंने अपने पत्रमें कुछ व्यक्तियोंके

१. प्रेसीडेंसी कालेज, मद्रासके बी० आर० राजगोपालनका पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं "...मद्रासके असहयोगियोंका आचरण देखकर सभी लोगोंको सदमा पहुँचा। उन्होंने युवराजको देखनेके इच्छुक लोगोंको तंग किया। ट्राम-गाड़ियाँ रोक दी गईं और यात्रियोंपर पथराव किया गया। ...जहाँ भी ट्राममें चालू रखनेकी धृष्टता की गई...उनको रोका गया, उनके शीशे तोड़ डाले गये, पायदान चकनाचूर कर दिये गये और एक ट्राममें आग लगानेकी कोशिश की गई। ...कुछ यात्री महिला-गाइडों और विद्यार्थियोंपर थूका गया, बहुत ही भद्दी-भद्दी गालियाँ दी गईं और उनसे छेड़छाड़ की गई।...स्काउटोंकी पगड़ियाँ छीन ली गईं और उनपर पथराव किया गया।..."

२. देखिए "मद्रासमें गुण्डागर्दी", १९-१-१९२२।

नाम देकर उनपर आरोप लगाये हैं; इसलिए मैं यहाँ उनके पत्रके कुछ-एक अंश ही उद्धृत कर रहा हूँ। उनका कहना है:

> मैंने उस दिन भीड़का पागलपन अपनी आँखोंसे देखा है। यदि मैं हड़ताल-को एक शर्मनाक असफलता न कहूँ तो मैं अहिंसाकी अपनी आस्थाके प्रति सच्चा नहीं रहूँगा। पुलियनथोपके दिनोंकी जातीय कटुताने फिरसे सिर उठा लिया है। आपने शायद अब्राह्मणों द्वारा उनके नेताओंके सम्मेलनमें दिये गये कटुतापूर्ण भाषण पढ़े होंगे। आप तो इन दिनों नरमदलीय लोगोंको अपना समर्थक बनानेके लिए जी-तोड़ कोशिशमें लगे हुए हैं, लेकिन मद्रासमें हम लोगोंने एक ओर तो ब्राह्मणों और अब्राह्मणों और दूसरी ओर आदि द्रविड़ों और अन्य लोगोंके बीचकी खाई और भी चौड़ी कर दी है। इस सबका निराकरण करनेके लिए कमसे-कम इतना तो करना ही चाहिए कि हम अपनी कमजोरियाँ स्वीकार करें और सभी सम्प्रदायों, विशेषकर पंचम वर्ण और अन्य वर्णोंके लोगोंके बीच अन्तर्जातीय एकता स्थापित करनेका प्रयास पूरी निष्ठासे करें।

क्या पुरुष, क्या स्त्री और क्या बालक, सरकारने किसीको भी नहीं छोड़ा; इसलिए मैं उसकी आलोचना करते जरा भी नहीं हिचकता। किन्तु उसने अहिंसा-व्रत थोड़े ही धारण किया है, जिससे वह अपना हाथ रोके। आखिरकार पशुबल तो उसका धर्म ही बना हुआ है। किन्तु असहयोगियोंके विषयमें किसीके भी दिलमें सन्देह-के लिए जगह न रहनी चाहिए। अगर इन दोनों पत्रोंमें लिखा हाल कुछ भी ठीक हो तो अभी मद्रासको बहुत-कुछ करना बाकी है। मुझे तो मुख्य-मुख्य बातोंकी सत्यतामें जरा भी सन्देह नहीं। तब तो असहयोगियोंने तथा उनके साथियोंने अपने दुष्कृत्योंसे क्या स्त्री, क्या पुरुष और क्या बालक किसीको भी नहीं छोड़ा। युवराजके स्वागतमें लोगोंका भाग लेना चाहे कितना ही उत्तेजक क्यों न हो, पर स्त्रियोंके कामोंमें बाधा डालना, उन बेचारे स्काउटोंको इस तरह सताना तथा जनताकी स्वतन्त्रताका इतनी बुरी तरहसे अपहरण करना, यह तो स्वराज्यका बड़ा बुरा शकुन हुआ।

हमें तो सरकारके अत्याचार तथा उसकी गलतियोंकी बनिस्बत खुद अपनी ही गलतियों तथा हिंसावृत्तिसे अधिक डरना चाहिए। सरकारकी भूलोंसे तो, यदि हम उनका अच्छा उपयोग करें तो, हमें फायदा ही होता है जैसा कि अभीतक हुआ है। किन्तु अगर खुद हमारे अन्दर हिंसा या असत्यका अंश हुआ तो वह हमारे लिए घातक होगा। यदि खुद अपने ही घरका बन्दोबस्त हम न कर सके, तो हम अपने ही हाथों अपना सत्यानाश कर लेंगे, और असहयोगका नाम लेते ही लोग थू-थू करने लगेंगे।

इस सिलसिलेमें मुझे किसीने 'रंगून डेली न्यूज' समाचारपत्रकी एक कतरन भेजी है। मैं यहाँ उसका उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता। समाचार इस तरह है:

> हमें विश्वस्त सूचना मिली है कि पूर्वी रंगूनके एक बग्घीवाले, निजामुद्दीन-को उसकी पत्नीने पिछले बृहस्पतिवारको इसलिए तलाक दे दिया है कि उसने

युवराजकी यात्राके दिन फतवेका उल्लंघन करते हुए केवल अपनी गाड़ी ही नहीं चलाई बल्कि दूसरोंको भी गाड़ी चलानेके लिए उकसाया था।

मैं इसपर यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि (अगर यह खबर सच है तो) जिसने भी तलाककी इजाजत दी हो उसने इस्लामके कानून और सभ्यताके खिलाफ काम किया है — उसने भारी भूल की है। इस्लाममें ऐसी छोटी-छोटी बातोंपर कहीं तलाक नहीं दिया जाता। अगर हड़तालें ऊपर लिखे तरीकोंसे मनाई जा रही हों तो वे किसी कामकी नहीं। ऐसी हड़तालें जनताके विचारोंको स्वतन्त्रतापूर्वक जाहिर नहीं कर सकतीं। और मुझे हड़ताल-जैसे थोड़े समयके लिए अपनाये गये उपायका उतना खयाल नहीं जितना कि इस्लाम धर्म और असहयोग-जैसे उच्च सिद्धान्तकी नेकनामी-का है। असहयोगका कानून तो विरोधी विचारों और कार्योंके प्रति पूरी सहन-शीलता रखने तथा उनका आदर करनेकी आज्ञा देता है। और इस्लामी कानून भी जहाँतक कि एक गैर-मुस्लिम अपनी राय दे सकता है, इतनी ही कड़ी सहनशीलताकी आज्ञा देता है। पैगम्बर साहबको किसी बातसे इतना दुःख न हुआ होता जितना कि उन्हें अपने नये धर्मके प्रचारके आरम्भिक कालमें मक्काके लोगोंकी असहिष्णुतासे होता। इसलिए वे कभी असहिष्णुताका समर्थन नहीं कर सकते थे। "धार्मिक बातोंमें जबरदस्ती से काम न लिया जाये" यह उन्हें तभी कहना पड़ा होगा जब उनके नये-नये शिष्य नये धर्म-प्रचारके समय समझदारीके बजाय जोशसे ही ज्यादा काम लेने लगे होंगे।

हम चाहे हिन्दू हों या मुसलमान अथवा और कोई हों, उसकी कोई बात नहीं। लोकतान्त्रिकताकी भावना, जिसका कि हमें भारतमें प्रचार करना है, हिंसाके बलपर नहीं फैलाई जा सकती, फिर वह वचनकी हिंसा हो या शरीरकी, प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

१०६. उत्तर-दक्षिण

विधान-सभा और राज्य-परिषद् (कौंसिल ऑफ स्टेट) में हुई बहससे यह बखूबी सिद्ध हो जाता है कि सरकारकी नीयतमें और इसलिए इस समय गोलमेज परिषद्की उपयोगितामें मेरा अविश्वास बिलकुल उचित है।[1] सरकारके समर्थक कांग्रेसकी माँगोंको

१. **इंडिया इन १९२१-२२** में प्राप्त इस बहसकी रिपोर्टके कुछ अंश इस प्रकार हैं: ". . .भारतीय विधान-मण्डलका दिल्ली अधिवेशन जनवरीके मध्यमें आरम्भ हुआ। . . .इस अधिवेशनकी एक सबसे ज्यादा नाटकीय बहस श्री ईश्वरशरणके इस प्रस्तावपर हुई कि सरकार अपनी "दमन-नीति" का तत्काल परित्याग करे। . . .सरकारकी ओरसे सर विलियम विन्सेंट और डा० सप्रूने अपने पक्षको बहुत प्रभावशाली ढंगसे पेश करते हुए जोरदार भाषण दिये. . . प्रस्ताव और तत्सम्बन्धी संशोधन निश्चित रूपसे नामंजूर कर दिये गये। राज्य-परिषद्ने भी उस प्रस्तावको नामंजूर करके जिसमें गोलमेज परिषद्की रूपरेखा तय करनेके लिए दोनों सदनोंके एक संयुक्त अधिवेशनकी बात कही गई थी सरकारकी कार्यकारिणीकी नीतिकी विधान-सभा द्वारा की गई स्वीकृतिकी पुष्टि कर दी।

असम्भव और असहयोगको न चलने देनेके लिए दमनको एकमात्र उपाय मानते हैं। अगर मैं कांग्रेसकी माँगोंको असम्भव और असम्भव आदर्शोंकी प्राप्तिके लिए किये जा रहे प्रयासको निष्फल करनेके लिए बलके प्रयोगको उचित मानता तो मैं भी अपना मत सरकारके ही पक्षमें देता। इसलिए सरकार और सरकारके समर्थकोंका रवैया समझनेमें, बल्कि उसकी कद्र करनेमें भी मुझे कोई कठिनाई नहीं है।

लेकिन मैं इस सरकारको बहुत अच्छी तरह पहचानता हूँ और इसीलिए मेरा उसपर कोई भरोसा नहीं है और मैं उसका विरोध करता हूँ। सरकार भारतको जिस रास्ते ले जाना चाहती है उस रास्तेपर चलनेसे हमें आजादी कभी मिल ही नहीं सकती।

आइए, हम इस मामलेपर जरा विस्तारसे विचार करें।

खिलाफत-सम्बन्धी माँगको भला असम्भव माँग क्यों कहा जाता है? कांग्रेस जो चाहती है वह सिर्फ यही तो है कि यदि भारत सरकार और साम्राज्य सरकार यह चाहती हों कि लोगोंका सहयोग उनके साथ कायम रहे तो उन्हें इन माँगोंकी पूर्तिके लिए लोगोंके साथ मिलकर काम करना चाहिए। उन्हें अपने उतने कर्त्तव्यका अवश्य पालन करना चाहिए जितना स्वयं उन्हींसे सम्बन्ध रखता है, तथा इसके बाद माँगका जो हिस्सा बच रहता है उसके लिए जोरोंके साथ इस तरह प्रयत्न करना चाहिए मानो वह उन्हींकी अपनी शिकायत है, उनकी अपनी माँग है। यदि फ्रांस इंग्लैंडसे डोवर छीन लेनेका प्रयत्न करे और यदि भारत गुप्त रूपसे फ्रांसको मदद करे, या डोवरपर अपना अधिकार कायम रखनेके इंग्लैंडके प्रयत्नके प्रति स्पष्ट रूपसे उदासीनता अथवा विरोध-भाव दिखाये तो उस समय साम्राज्य सरकार क्या करेगी? यदि उस हालतमें साम्राज्य सरकार खामोश नहीं बैठेगी तो जब ख़िलाफतको छिन्न-भिन्न किया जा रहा हो तब क्या भारतसे खामोश बैठे रहनेकी आशा की जा सकती है?

अच्छा, पंजाबकी माँगोंमें भी कौनसी बात असम्भव है? इस प्रकरणके कानूनी नुकतोंपर वे क्यों जोर दे रहे हैं? यदि वे उसके नैतिक बलाबलपर ध्यान देंगे तो कानूनी बलाबल अपना निपटारा आप कर लेगा। लड़कपनमें मैंने एक कानूनी सिद्धान्त पढ़ा था कि जब कानून और न्यायमें विरोध उत्पन्न हो तब न्यायको प्रधानता दी जानी चाहिए। मेरे लिए वह सिद्धान्त महज किताबी चीज नहीं है। पर मुझसे कहा गया है कि पेन्शन बन्द करनेकी माँग करना अनीतियुक्त है; क्योंकि वह तो मुल्तवी किया हुआ वेतन है। यदि यही बात है तो सरदार गौहरसिंह क्यों 'मुल्तवी किये हुए वेतन' से वंचित रखे गये और क्यों दूसरे पेन्शनरोंको धमकियाँ दी गई कि यदि वे इस आन्दोलनमें शरीक होंगे तो उनकी पेन्शनें बन्द कर दी जायेंगी। जो नौकर अपने मालिकको कलंकित करता है क्या उसे कहीं वेतन या पेन्शन मिलती है? क्या सर माइकेल ओ'डायर या जनरल डायरने अपनी 'निर्णयकी भूल' को कभी मंजूर किया है? जलियाँवाला बागमें जिन लोगोंका खून किया गया, या जिन निरपराध लोगोंको पशुओंकी तरह पीटा गया, या पेटके बल रेंगाया गया, उनकी सन्तान क्यों उन लोगोंके वेतनके लिए रुपया दे जो इन तमाम क्रूर कार्योंके लिए जिम्मेदार हैं? जो

नौकर अपने दुष्कृत्योंपर पश्चात्ताप नहीं करते उनकी पेन्शन जारी रखनेके पक्षमें मुझे एक भी नैतिक सिद्धान्त नहीं दिखाई देता। हाँ, 'जिसकी लाठी, उसकी भैंस' के सिद्धान्तकी बात दूसरी है। सो दोनों दलोंके दृष्टिकोणमें उत्तर और दक्षिण ध्रुवका भेद है। जो बात एकको न्याय्य और नीतियुक्त दिखाई देती है वही दूसरेको अन्यायपूर्ण और अनीतियुक्त मालूम होती है। मैं यह दावेके साथ कहता हूँ कि पेन्शन बन्द कर देनेकी कांग्रेसकी माँग बिलकुल न्याय्य है; इतना ही नहीं उसमें बदला लेनेकी भी कोई बात नहीं है। वह उनपर मुकदमा चलानेके अपने हकका उपयोग करना नहीं चाहती, वह उन्हें सजा भी दिलाना नहीं चाहती। वह इतना ही कहती है कि उन्हें पेन्शन देते रहना अन्याय है और उसमें अब आगे शामिल रहना नहीं चाहती। सच बात तो यह है कि सरकार अब भी उन दोनों अपराधियोंको साम्राज्यका ऐसा सेवक मानती है जिन्होंने उसकी विशिष्ट सेवा की है। यह प्रवृत्ति बदलनी होगी; तभी पंजाब-काण्डकी पुनरावृत्ति असम्भव हो सकती है, उसके पहले नहीं।

और जो बात पंजाबके विषयमें है वही स्वराज्यके विषयमें भी है। जो चीज भारतकी है वह उसे लौटा देना सरकारको असम्भव मालूम हो रहा है। उसका तो सिद्धान्त-वचन है कि सुधार बहुत छोटी किस्तोंमें दिये जायें। इसके मूलमें जो भाव है वह यह कि जबतक अत्यन्त आवश्यक न हो जाये तबतक कुछ भी न दिया जाये। यह मतभेद इतना अधिक है कि खिलाफत और पंजाबके दुःखोंके दूर होनेके पहले स्वराज्यका खयालतक करते हुए मेरा कलेजा काँपता है। ये दोनों प्रश्न यों तो सीधे-सादे जान पड़ते हैं परन्तु वे स्वराज्यसे कम मुश्किल नहीं हैं; क्योंकि इन शिकायतोंके निराकरणका मतलब सरकारके लिए भारतीय लोकमतके आगे सिर झुकाना है।

मेरी यह मीमांसा शुद्ध तर्कपर आधारित है और उससे यह प्रगट है कि इन माँगोंमें कोई बात ऐसी नहीं जो असम्भव हो। असम्भवता और कहीं नहीं, बस, सत्ताधारियों द्वारा अपनी सत्ता — वह सत्ता जो उनके हाथोंमें हरगिज न होनी चाहिए थी — न देनेकी इच्छामें है।

यदि सरकार सिर्फ अपने कर्त्तव्योंका पालन करती रहे तो दमनकी आवश्यकता ही क्यों रहे? अच्छा, मान लीजिए कि यदि कानूनकी सामुदायिक सविनय अवज्ञा जल्दीमें शुरू की गई तो हिंसा हुए बिना न रहेगी। तो क्या हिंसाके डरसे लोगोंको अपने हकोंसे दूर रखना चाहिए? जब हमारे सहयोगी भाई सत्याग्रहियोंके मत्थे यह दोष मढ़ते हैं कि वे जल्दी मचाकर बड़ी कठिन और नाजुक स्थिति पैदा कर रहे हैं, तब यह बात उनके ध्यानमें नहीं आती कि ऐसा कहकर वे सत्याग्रहियोंके प्रति अन्यायका समर्थन कर रहे हैं; और इतना ही नहीं बल्कि उसमें अपमान भी जोड़ रहे हैं। सत्याग्रही नहीं, सरकार ही जान-बूझकर कठिन स्थितिको न्यौता दे रही है। जिन लोगोंका जनतापर कुछ भी प्रभाव है, जो जनताको अहिंसात्मक बनाये रख सकते हैं ऐसे हरएक पुरुषको जेल भेजकर सरकार तो खुद ही हिंसा-काण्डके लिए जल्दी मचा रही है। सहयोगी भाई यह नहीं देखते कि सरकारका यह कार्य उस आदमीकी तरह है जो भूखेको भोजन देनेसे इनकार करता है और जब वह खुद

ही अपनी भूख मिटानेकी कोशिश करता है तो बन्दूक लेकर उसके प्राण ले लेनेकी धमकी देता है।

भारतका वर्तमान वातावरण मनुष्यको योद्धा बना देनेवाला है। इसमें असहयोगियोंका कर्त्तव्य उनके सामने स्पष्ट है। उन्हें आदर्श धैर्य रखना चाहिए। किसीके भड़कानेसे उन्हें जल्दीमें कोई काम न कर बैठना चाहिए। जिस जगह वे सामना करनेके लिए तैयार न हों, वहां उन्हें संग्राम न छेड़ना चाहिए। हमें अहिंसक बनाना अथवा अहिंसक बने रहनेमें मदद देना सरकारका काम नहीं है। हिंसा-काण्डको रोकनेके उसके उपाय भी इतने हिंसात्मक हैं कि उनपर क्रोध आये बिना नहीं रह सकता। पर, हां, एक बातमें हमें अवश्य उसका कृतज्ञ होना चाहिए। सरकार जो-कुछ प्रतिवाद करती है अथवा टीका-टिप्पणी करती है उसका सार यही है कि हम, अर्थात् असहयोगी लोग, अपने ध्येयके अनुसार काम करना नहीं जानते तथा यदि हम चाहें भी तो सफलताके साथ हिंसा-काण्डकी अर्थात् शस्त्रास्त्रके प्रयोगकी योग्यता नहीं रखते। हमें ये दोनों दलीलें मान लेनी चाहिए। हमें अपने ध्येय अर्थात् अहिंसा-पर अटल रहना चाहिए। तब सरकारको भी अपने शस्त्रास्त्र एक ओर रख देने होंगे। क्योंकि शान्ति तो दोनोंको अभीष्ट है। और तब जो लोग अहिंसाके कायल नहीं हैं वे कमसे-कम यह समझ लेंगे कि "भारतवर्ष न तो पशुबलका मुकाबला पशुबलके द्वारा करनेको तैयार है और न वह ऐसा चाहता ही है।" क्या ही अच्छा हो, यदि वे लोग जो यह मानते हैं कि हथियार उठाये बिना भारतको आजादी मिल ही नहीं सकती, जरा मेरे कथनकी सत्यताको अनुभव करें। वे यह कदापि न सोचें कि वे शस्त्र ग्रहण करनेके लिए तैयार और उत्सुक हैं इसलिए भारतवर्ष भी उसी तरह तैयार या उत्सुक है। मैं दावेके साथ कहता हूं कि भारत इसके लिए तैयार नहीं है--इसलिए नहीं कि वह दीन और असहाय है; बल्कि इसलिए कि वह चाहता ही नहीं। यही कारण है कि अहिंसाको अनपेक्षित सफलता मिल रही है, जबकि यदि उसकी जगह हिंसाका प्रयोग किया जा रहा होता तो हिंसाके पक्षमें जिस मानव-स्वभावकी दुहाई दी जाती है उसके बावजूद वह असफल हो जाती। भारतके जन-समाजको प्राचीन कालसे पशुबलके खिलाफ शिक्षा मिलती चली आ रही है। भारतवर्षके मनुष्योंमें मानवोचित प्रवृत्तिकी इतनी अधिक प्रगति हो चुकी है कि यहांके अधिकांश जन-समूहके लिए पशुबलकी अपेक्षा अहिंसा-धर्म ही अधिक स्वाभाविक हो गया है। हां, हमें यह भी याद रखना चाहिए कि बम्बई और मद्रासके अनुभवोंसे मेरा ही कथन सिद्ध होता है। यदि भारतके लोग स्वभावसे हिंसक होते तो बम्बई और मद्रासमें इतनी सामग्री मौजूद थी जिससे ऐसी आग धधक उठती कि किसीके बुझाये न बुझती। जिस तरह जरा-सी गन्दगी भी स्वच्छ स्थानको गन्दा करनेके लिए काफी होती है उसी तरह थोड़ी-सी हिंसासे ही शान्तिमय वातावरण विक्षुब्ध हो जाता है। पर दोनों विजातीय वस्तुएं हैं, अतएव शीघ्र ही दूर कर दी जाती हैं। भारतको पशुबलकी शिक्षा देकर फिर शस्त्रास्त्र द्वारा बलपूर्वक स्वराज्य लेना तो युगोंका कार्यक्रम हो जायेगा। मैं सचमुच मानता हूं कि आज भारतमें जो आश्चर्यजनक कार्य-शक्ति और राष्ट्रीय चैतन्य प्रकट हो रहे हैं वह केवल अहिंसा-धर्मके अवतरणका ही फल है। लोगोंने अपनी

शक्ति पहचान ली है। अब हमें जल्दीमें ऐसा कोई काम नहीं कर बैठना चाहिए जिससे हमारी प्रगति ही रुक जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

१०७. करबन्दी

कर न देनेका विचार भारतके वायुमण्डलमें छा रहा है। भारतके दूसरे भागोंकी अपेक्षा आन्ध्र-देशने हमें उसके घोषसे अधिक परिचित कराया है। कांग्रेसने जब प्रत्येक प्रान्तको प्रान्तिक स्वतन्त्रता प्रदान की है, मैंने यह चेतावनी देनेकी धृष्टता की है कि जबतक मैं स्वयं अपनी देख-रेखमें किसी क्षेत्रमें कर न देनेका प्रयोग करके न देखूँ, तबतक दूसरा कोई भी प्रान्त यह आन्दोलन न छेड़े।[1] मैं उस चेतावनीपर अब भी कायम हूँ। मैं इस बातकी ओर भी लोगोंका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि ३१ जनवरीतक अथवा मालवीय परिषद् समितिकी सुलहकी बातचीतका फल यदि ३१ जनवरीसे पहले ही मालूम हो जाये तो उसके मालूम होनेतक और यह जान लेनेतक कि अब प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलन नहीं होगा, हमें आक्रामक सविनय अवज्ञा शुरू नहीं करनी है। अतएव फिलहाल कर देना बन्द रखनेका मतलब यही समझा जा सकता है कि वह समिति सुलहकी जो बातचीत चला रही है, उसका परिणाम प्रकट होनेतक अस्थायी रूपसे ही कर देना बन्द किया गया है। लेकिन ३१ जनवरी अब नजदीक आ रही है। अतएव यह आवश्यक है कि कर न देनेके प्रश्नपर सांगोपांग विचार कर लिया जाये।

इस विषयपर एक मित्र, जो कि राष्ट्रीय आन्दोलनके साथ गहरी सहानुभूति रखते हैं और जिन्होंने उसपर अच्छी तरह चिन्तन-मनन किया है, इस प्रकार अपनी आशंका प्रकट करते हैं :

> मैंने अकसर इस विषयपर विचार किया कि जब अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन सविनय अवज्ञाके सिलसिलेमें करबन्दीका रूप लेगा तो क्या धर्मकी सीमाका उल्लंघन होगा और यदि होगा तो किस मात्रामें होगा। मैं अहिंसात्मक असहयोगको तत्त्वतः आध्यात्मिक आन्दोलनकी दृष्टिसे देखता हूँ। मुझे यह भी मालूम है कि श्री गांधी भी इसे ऐसा ही समझते हैं। कर न देनेका कार्यक्रम क्या धार्मिक मर्यादाको तोड़ नहीं देगा? क्या इससे हिंसाकाण्ड नहीं मच जायेगा? क्या इस आन्दोलनमें ऐसे-ऐसे लोग भी शरीक नहीं हो जायेंगे जो अहिंसाके सिद्धान्तमें संसिक्त नहीं हैं? श्री गांधी अपने आध्यात्मिक आन्दोलनके जरिये सरकारपर विजय प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन कर न देनेके अभियानका

1. देखिए "पत्र : कोण्डा वेंकटप्पैयाको", १७-१-१९२२।

मतलब क्या यही नहीं होगा कि वे इस आध्यात्मिक आन्दोलनमें लोगोंके सामने एक भौतिक प्रलोभन रख रहे हैं -- चाहे वे बिलकुल अनजानमें ही ऐसा क्यों न कर रहे हों? हालकी घटनाओंने यह दिखला दिया है कि सर्वसाधारणके बीच हिंसावृत्ति और हिंसामें विश्वास अब भी शेष है। इस दशामें कर न देनेके रूपमें सविनय अवज्ञा शुरू करनेका मतलब अँधेरी खाईमें कूदना होगा, जिसके फल बड़े भयंकर और विनाशकारी हो सकते हैं। अतः मैं इस बातके लिए बहुत उत्सुक हूँ कि श्री गांधी इस रूपमें सविनय अवज्ञाको अभी शुरू न करें।

इस आक्षेपका औचित्य इस बातमें है कि कर न देनेके अभियानकी बदौलत इस संघर्षमें ऐसे लोग सम्मिलित हो जायेंगे जो अभी अहिंसाके सिद्धान्तमें पूरी तरह संसिक्त नहीं हैं। यह बात बहुत सच है, और चूँकि यह सच है, इसलिए बेशक, कर न देनेके अभियानका मतलब लोगोंके सामने भौतिक प्रलोभन रखना ही है। इससे हम इस नतीजेपर पहुँचते हैं कि इस खयाल और आशासे कि इसमें लोग तुरन्त शामिल हो जायेंगे, हमें कर न देनेका अभियान शुरू नहीं करना चाहिए। लोगोंकी तत्परताका प्रलोभन बहुत घातक होता है। इस प्रकारसे कर न देना, न तो विनयपूर्ण ही होगा और न अहिंसात्मक ही; इसके विपरीत वह एक अपराधपूर्ण काम होगा और उससे हिंसाके उद्रेककी भी पूर्ण सम्भावना रहेगी। हमें पण्डित जवाहरलाल नेहरूके अनुभवको याद रखना चाहिए। किसान लोग अहिंसाका व्रत धारण कर चुके थे। पर फिर भी एक मौकेपर उन्होंने पण्डित नेहरूसे कह दिया कि यदि आप हुक्म दें तो हम हिंसाके लिए भी बखूबी तैयार हैं। किसान लोग जबतक यह न समझ लें कि कर देनेसे सविनय इनकार करनेका कारण क्या है और उसकी खूबी क्या है, और शान्त चित्त रहकर निर्विकार भावसे अपने खेतोंसे अपनी बेदखली (जो कि चन्द रोजके ही लिए होगी) तथा जानवरोंका और दूसरी चीजोंका छीनकर नीलाम किया जाना आदि दृश्योंको देखनेके लिए तैयार न हों तबतक उन्हें कर देना बन्द करनेकी सलाह न दी जानी चाहिए। पवित्र फिलिस्तीनके लोगोंपर जो-कुछ बीती उसका हाल किसानोंको अवश्य बताना चाहिए। वहाँ जिन अरबोंपर जुर्माना किया गया था, उन्हें चारों ओरसे सिपाहियोंने घेर लिया था। हवाई जहाज सरपर मँडरा रहे थे। उन हट्टे-कट्टे लोगोंके पशु छीन लिये गये थे, और एक जगह घेरकर बन्द कर दिये गये थे, उन्हें न चारा दिया गया था न पानी। बेचारे अरब लोग किंकर्त्तव्यविमूढ़ और असहाय हो गये। फिर जब उन्होंने जुर्माना और दण्डके रूपमें ठोंकी गई अतिरिक्त रकम लाकर दी, तब मानो उनका उपहास करनेके लिए उनके मृत और मृतप्राय पशु उन्हें लौटाये गये। यहाँ भारतमें, इससे भी अधिक भयंकर बातें हो सकती हैं; और होंगी। क्या हिन्दुस्तानके किसान अहिंसापर आरूढ़ रहकर अपने पशुओंको अपनी आँखोंके सामने ले जाते हुए और बिना दाना-पानीके उन्हें मरते हुए देखनेको तैयार हैं? मैं जानता हूँ कि आन्ध्र-देशमें ऐसी घटनाएँ पहले ही हो चुकी हैं। यदि आम किसान-समाज ऐसे कठिन समयमें भी जान-बूझकर और सोच-समझकर अहिंसापर आरूढ़ रह सकता हो तो समझना चाहिए कि वे सही मानीमें कर न देनेके अभियानके लिए लगभग तैयार हैं।

मैं कहता हूँ "लगभग तैयार", क्योंकि कर न देनेका हेतु तो यह है कि नौकरशाहीके हाथोंसे निकलकर सत्ता हमारे हाथोंमें आ जाये। अतएव केवल इतना ही काफी नहीं है कि किसान लोग अहिंसापर आरूढ़ रहें। अहिंसाका पालन करना बेशक इस संघर्षमें ९० प्रतिशत सफलताके समान है, परन्तु यही सब-कुछ नहीं है। हो सकता है, किसान लोग अहिंसापर तो आरूढ़ रहें पर शायद अछूत लोगोंको अपने भाईके बराबर न मानें; हो सकता है, वे हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, यहूदियों और पारसियोंको, जैसा कि मौका हो, अपना भाई न समझें; हो सकता है, वे चरखे और खादीकी आर्थिक और नैतिक महिमा न सीख पाये हों। यदि उन्होंने यह-सब न किया हो तो वे स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। यदि इन बातोंको वे आज नहीं कर रहे हैं तो स्वराज्य प्राप्त होनेपर नहीं करेंगे। उन्हें यह बताना चाहिए कि इन सब राष्ट्रीय गुणोंको आचरणमें उतारना ही स्वराज्य है।

इस तरह यह सविनय कर न देनेका सौभाग्य उन्हीं लोगोंको प्राप्त हो सकता है जो पूर्वोक्त सब बातोंकी खूब कड़ी शिक्षा पा चुके हैं। और जिस प्रकार उस आदमीके लिए, जो राज्यके कानूनोंको तोड़नेका गुनाह करनेका आदी है, सविनय अवज्ञा करना कठिन बात है, उसी प्रकार सविनय कर न देना भी उन लोगोंके लिए मुश्किल चीज है जिन्हें जरा-जरासी बातपर बार-बार कर रोक रखनेकी आदत है। इस असहयोगकी लड़ाईमें सविनय कर न देना तो दरअसल आखिरी अवस्था है। सो जबतक हम सविनय अवज्ञाके दूसरे तरीकोंको आजमाकर देख न लें तबतक हमें इसका सहारा नहीं लेना चाहिए। इन आरम्भिक अवस्थाओंमें बड़े-बड़े तथा बहुत सारे क्षेत्रोंमें इसका प्रयोग करना बहुत ही बड़ी नादानीकी बात होगी।

जमींदारोंको भी लगान न अदा करनेकी बातें मैं सुन रहा हूँ। हमें यह न भूलना चाहिए कि हम जमींदारोंके साथ, फिर वे चाहे हिन्दुस्तानी हों या विदेशी, असहयोग नहीं कर रहे हैं। हम तो उस एक बड़े जमींदार — नौकरशाही — से लड़ रहे हैं, जिसने न केवल हमें बल्कि स्वयं इन जमींदारोंको भी अपना गुलाम बना रखा है। हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे ये छोटे जमींदार हमारे पक्षमें हो जायें और यह बड़ा जमींदार अकेला एक तरफ रह जाये। लेकिन यदि ये लोग हमारे पक्षमें न आयें तो भी हमें धीरजसे काम लेना चाहिए। हमें उनका सामाजिक बहिष्कार भी नहीं करना चाहिए। मतलब कि हमें उनको धोबी, नाई आदिकी सामाजिक सेवाओंसे वंचित नहीं करना चाहिए। अतः जो क्षेत्र चिरस्थायी प्रबन्धके अन्तर्गत आते हों उन क्षेत्रोंमें कर न देनेका आन्दोलन न शुरू किया जाना चाहिए। हाँ, ऐसे क्षेत्रोंमें भी सीधे सरकारी खजानेमें जानेवाले महसूलोंकी हदतक यह आन्दोलन चलाया जा सकता है। लेकिन जमींदारोंका उल्लेख तो यहाँ उन कठिनाइयोंको दिखानेके लिए ही किया गया है जो कर न देनेके अभियानमें सामने आ सकती हैं। इसलिए सब बातोंपर विचार करते हुए मेरी तो सोची-समझी राय यही है कि कांग्रेसकी उद्देश्य-पूर्तिके लिए कर न देनेके अभियानका दायित्व फिलहाल मुझपर ही छोड़ दिया जाये। इस बीच कार्यकर्ता लोग अपने-अपने जिलोंमें रचनात्मक तैयारी करें। सार्वजनिक सविनय अवज्ञा

करनेके दूसरे अनेक उपाय वे ढूंढ़कर निकाल सकते हैं, और फिर जब लोग शुद्ध और प्रबुद्ध हो जायें, तब कर न देनेके लिए आगे कदम बढ़ायें।

पर आन्ध्र-देशमें तो पहले ही बहुत गम्भीर स्वरूपकी तैयारियाँ हो चुकी हैं। इसलिए मैं वहाँके कार्यकर्त्ताओंके उत्साहको ठण्डा नहीं करना चाहता। यदि उन्हें यह इत्मीनान हो कि चुने हुए क्षेत्रोंके लोग दिल्लीमें निर्धारित शर्तोंकी कसौटीपर खरे उतरते हैं और बिना वैर या बदला लिये असीम कष्ट-सहन करनेकी शक्ति प्राप्त कर चुके हैं, तो फिर मुझे कुछ भी नहीं कहना है। तब तो मैं बस यही कहूँगा कि "परमात्मा आन्ध्रके वीरोंको आशीष दे।" पर वे याद रखें कि यदि किसी किस्मकी दुर्घटना हुई तो उसकी जिम्मेवारी उन्हींपर होगी। हाँ, यदि वे कर न देनेका अभियान शुरू न करें तो उन्हें कोई बुरा न कहेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

१०८. आतंकका नंगा नाच

विविध सूत्रोंसे दमनके जो विवरण[1] इकट्ठे किये गये हैं, नीचे मैं उनका सार दे रहा हूँ। हर मामलेमें विवरण भेजनेवाले ऐसे जिम्मेदार लोग हैं जितने कि हो सकते हैं। फिर भी पत्र-लेखकों द्वारा वर्णित कुछ कुत्सित बर्बरताएँ ऐसी हैं कि उनपर सहसा विश्वास नहीं होता। पर विपदाके मारे इस देशमें सब-कुछ सम्भव है। पाठकोंसे मेरा आग्रह है कि वे मेरी तरह शान्त रहें और इन कष्टोंकी गाथा सुनकर मेरी ही तरह प्रसन्न भी हों। हर पाठक मेरे साथ यह प्रार्थना करे कि ईश्वर अपने इस वचन-का पालन करेगा कि वह हमें हमारी सहन-शक्तिकी सीमासे अधिक नहीं आजमायेगा, और वह जो भी कष्ट हमें देना चाहेगा उन्हें आसानीसे सहन करनेका साहस और धैर्य भी हमें प्रदान करेगा। उसकी इच्छाके बिना कुछ नहीं होता। हमें अहिंसाकी अपनी प्रतिज्ञापर कायम रहना चाहिए और जो हमपर अत्याचार कर रहे हैं उनके प्रति क्रोध या दुर्भावना नहीं रखनी चाहिए। हमें अधिकारियोंके लिए उत्तेजनाके अना-वश्यक कारण भी पैदा नहीं करने चाहिए। लेकिन जहाँतक हमारे उचित और वैध आचरणसे उत्तेजना पैदा होनेका सवाल है, उससे तो हमें जानकी जोखिम होनेपर भी जी नहीं चुराना है। उदाहरणके लिए "सरकार एक है" का नारा लगानेसे इनकार करनेके कारण उत्तेजना पैदा होती है तो हो; जयरामदासका अनुसरण करते हुए बड़ेसे-बड़े अधिकारियोंके सामने भी दीन-हीन ढंगसे अपनी हथेलियाँ फैलानेसे

१. ये विवरण **यंग इंडिया**में निम्नलिखित शीर्षकोंसे छपे थे: "असममें दुष्कृत्य", "बारीसालमें अमानवीयता", "सुलतानपुरमें कोड़ेबाजी", "मेरठका क्रन्दन", "चितोड़में निरंकुशता" और "नरसिंहपुर कान्फ्रेंसमें गंदगी"।

इनकार करनेके कारण शासकोंका मन उत्तेजित होता है तो हो, हमें उसकी परवाह नहीं करनी है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

१०९. हिन्दू और मोपला

यद्यपि मोपला उपद्रव और मुसलमानोंके रुखपर सर्व श्री केशव मेनन तथा अन्य लोगोंके पत्र पहले ही समाचारपत्रोंमें छप चुके हैं, फिर भी अपने नियमके विपरीत मैं दोनों पत्रोंके महत्त्वको देखते हुए उन्हें यहाँ फिर प्रकाशित कर रहा हूँ।[1] 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंमें उनका प्रकाशन हिन्दुओंके दिलोंमें मोपलोंके पागलपनसे जो घाव हो गये हैं, उनपर शायद मरहमका कुछ काम करे। पत्र-लेखकोंको अपनी दमित भावनाएँ व्यक्त करनेका अधिकार था।

मौलाना हसरत मोहानी हम लोगोंमें बड़े जीवटके आदमी हैं। वे प्रबल और दृढ़ व्यक्ति हैं। स्पष्टवादी तो वे इतने हैं कि यह गुण उनका एक दोष-सा बन गया

१. यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं। उनके कुछ अंश इस प्रकार हैं: "मोपलोंके बारेमें अहमदाबादमें खिलाफत सम्मेलन द्वारा पास किये गये प्रस्ताव, और कलकत्तेके **सर्वेंट**के २० दिसम्बरके अंकमें प्रकाशित मौलाना अब्दुल बारीके . . . तार . . . को देखते हुए मानना पड़ता है कि मलाबारसे बाहर मुसलमानोंको ही नहीं बल्कि हिन्दुओंको भी शायद ठीक-ठीक मालूम नहीं है कि मुसीबतके मारे उस जिलेमें क्या-कुछ हुआ. . . आशा तो यही की जाती थी कि मोपलोंकी बर्बरताके शिकार हुए हिन्दुओंके प्रति सहानुभूति प्रकट करनेके लिए हमारे मुसलमान भाई दो शब्द अवश्य कहेंगे . . . किन्तु, खिलाफत सम्मेलनने जहाँ धर्मकी खातिर अपने प्राणोंकी बलि देनेके लिए मोपलोंको बधाई दी है, वहाँ हिन्दुओंके साथ उन्होंने जो बर्बरता की उसकी निन्दामें उससे दो शब्द कहते नहीं बने . . . सच्चे सत्याग्रहीके सामने स्पष्ट शब्दोंमें सच्ची बात कह देनेके अलावा और कोई उपाय नहीं है . . . सत्य, हिन्दू-मुस्लिम एकता या स्वराज्यसे कहीं अधिक महत्त्व-पूर्ण चीज है . . . और दुर्भाग्यसे यह एक निर्विवाद सत्य है कि मोपलोंने हिन्दुओंके साथ बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया . . . यह सच है कि कुछ प्रमुख मुसलमान नेताओंने मोपलोंकी बर्बरताकी निन्दा की है . . . किन्तु आम मुस्लिम समुदायने अपने सहधर्मियों द्वारा मलाबारमें किये गये अन्यायोंके निराकरणके लिए क्या किया है?"

"मौलाना मोहानीके अनुसार मोपलों द्वारा हिन्दुओंका लूटा जाना ठीक था। वे कहते हैं कि मोपलों और सरकारके बीच युद्धकी स्थिति थी, और इसलिए लूट-पाट करना अवैध नहीं था. . . मौलाना साहबको शायद नहीं मालूम कि उस समय मोपलोंका ऐसा कोई प्रतिपक्षी नहीं था जो हिन्दुओंके पक्षसे उनका मुकाबला करता, या कि जिसे हिन्दू लोग सहायतार्थ बुला सकते थे। हिन्दुओंपर उन्होंने मनमाने ढंगसे एकाएक धावा बोल दिया। किसी उत्तेजनाका कोई कारण भी प्रस्तुत नहीं किया गया था . . . मोपलोंकी दूसरी बर्बरताओंका औचित्य ठहराते हुए मौलाना साहब कहते हैं कि वह सब तो उन्होंने मुख्यतः बदला लेनेके लिए किया, क्योंकि उन्हें सन्देह था कि फौजको हिन्दुओंने ही बुलाया है या यह कि वे फौजकी मदद कर रहे हैं . . . क्या मौलानाको महसूस नहीं होता कि उनके मुँहसे ऐसी बातें निकलनेका परिणाम कितना घातक हो सकता है?"

है। ब्रिटिश सरकारके प्रति तथा सामान्य रूपसे शायद समग्र अंग्रेज जातिके प्रति उनके हृदयमें घृणाके जो भाव भरे हैं, उनके कारण उन्हें मोपलोंके आचरणमें कोई दोष दिखाई नहीं देता। मौलाना साहबके खयालसे युद्ध और प्रेममें जो-कुछ होता है, उचित ही होता है। उनका पक्का विश्वास है कि मोपलोंने धर्मके लिए ही संग्राम किया है। इसलिए [उनके विचारसे] मोपलोंके ऊपर किसी तरहका दोषारोपण नहीं किया जा सकता। यह तो निस्सन्देह धर्म और नैतिकताका उपहास है। लेकिन मौलाना हसरत मोहानीका धर्म-सिद्धान्त धर्मके लिए अधर्माचरणकी भी छूट देता है। जहाँतक मैं जानता हूँ, इस्लाममें ऐसा कुछ नहीं है जिसके आधारपर मौलाना साहबकी मान्यताको उचित माना जाये। इस सम्बन्धमें मैंने अनेक सुविज्ञ मुसलमानोंसे बातचीत भी की है। वे भी मौलाना साहबके दृष्टिकोणसे सहमत नहीं हैं।

मैं अपने मलाबारके साथियोंसे यही कहूँगा कि वे मौलानाकी बातका बुरा न मानें। यद्यपि धर्मके बारेमें उनका मत ऐसा अपरिष्कृत मत है, तथापि मैं जानता हूँ कि हिन्दू-मुस्लिम एकता और राष्ट्रीयताका उनसे बढ़कर कट्टर समर्थक दूसरा नहीं है। उनका हृदय उनकी बुद्धिसे बढ़-चढ़ कर है, और मेरी नम्र सम्मतिमें उनकी बुद्धि कुछ भ्रमित हो गई है।

मलाबारी मित्रोंकी यह धारणा गलत है कि भारतके आम मुस्लिम समाजने मोपलोंके अपराधोंकी निन्दा नहीं की है या किसी भी तरहसे उनका समर्थन किया है। इस्लामका आदेश है कि औरतों, बच्चों और बूढ़ोंको युद्ध-कालमें भी मत सताओ। इस्लाम कुछ बहुत सुनिश्चित अवस्थाओंमें ही जिहादको उचित बताता है। इस्लामके नियमकी जहाँतक मुझे जानकारी है, उसके अनुसार तो मैं यही कह सकता हूँ कि इस तरह अपनी मर्जीसे मोपलोंको जिहादकी घोषणा करनेका कोई अधिकार नहीं था। मौलाना अब्दुल बारीने मोपलोंके अत्याचारोंकी कड़ी निन्दा की है।

पर यदि मुसलमान उन अत्याचारोंकी निन्दा न भी करें तो क्या? हिन्दू-मुस्लिम मैत्री कोई सौदेबाजीकी चीज नहीं है। मैत्री शब्द ही ऐसा है जिसमें इस तरहकी किसी चीजके लिए गुंजाइश नहीं है। यदि हम लोगोंमें राष्ट्रीय वृत्ति आई है तो मानना पड़ेगा कि मोपले भी हिन्दुओंकी ही तरह हर मानीमें हमारे देशभाई हैं। हिन्दुओंको मोपलोंकी कट्टरताका हिन्दुओंकी अपनी कट्टरतासे ज्यादा विचार नहीं करना चाहिए। यदि मलाबारमें मोपलोंके बजाय आज हिन्दुओंने हिन्दुओंको लूटा होता तो किसके खिलाफ शिकायत की जाती? इस तरहकी घटनाओंके प्रतिकारको ढूँढ़ निकालनेकी जितनी जिम्मेदारी मुसलमानोंपर है उतनी ही जिम्मेदारी हिन्दुओंपर भी है। यदि कोई मुसलमान हिन्दूके ऊपर या हिन्दू मुसलमानके ऊपर अत्याचार करता है तो वह अत्याचार एक भारतीय द्वारा दूसरे भारतीयपर समझना चाहिए और उसकी जिम्मेदारी हम सबको ओढ़नी चाहिए तथा उस बुराईको दूर करनेके लिए यत्न करना चाहिए। एकताका इसके सिवाय और कोई मतलब नहीं है। जिस राष्ट्रीयतामें कमसे-कम यह भाव नहीं वह राष्ट्रीयता किसी कामकी नहीं। राष्ट्रीयता साम्प्रदायिकतासे बड़ी चीज है। इस मानीमें हम लोग पहले भारतीय हैं और पीछे हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई हैं।

इसलिए मोपलोंके अत्याचारोंके विषयमें मौलाना हसरत मोहानीका जो रुख है, उसके लिए खेद प्रकट करते हुए भी हमें समस्त मुसलमानोंके ऊपर दोषारोपण नहीं करना चाहिए और न मौलानाको मुसलमानके रूपमें कोई दोष देना चाहिए। हमें यह भाव रखकर दुःख प्रकट करना चाहिए कि हमारा एक हिन्दुस्तानी भाई यह नहीं देखता कि हमारे दूसरे हिन्दुस्तानी भाइयोंने कैसा अन्याय किया है। अगर हम लोग इसी तरह सभी चीजोंको साम्प्रदायिक दृष्टिसे देखते रहेंगे तो हममें एकता नहीं स्थापित हो सकती।

आलोचक कह सकते हैं: "ये सब वाहियात बातें हैं, क्योंकि ये वास्तविकतासे दूर हैं। ये केवल खयाली चीजें हैं।" पर मेरा कहना है कि मौजूदा वास्तविकताओंके अनुरूप सिद्धान्तमें परिवर्तन करनेका असम्भव काम करनेकी बजाय हमें सिद्धान्तके अनुरूप, वास्तविकताओंका ही निर्माण करना चाहिए। जबतक हम ऐसा नहीं करते, हममें एकता नहीं आ सकती। मुझे तो इसमें कुछ भी असम्भव नहीं दिखता कि हिन्दू भारतीयोंकी हैसियतसे मोपलोंको भी भारतीय मानकर उन्हें कुमार्गसे विमुख करनेका प्रयत्न करें। मुझे तो यह बात जरा भी अस्वाभाविक नहीं लगती कि हिन्दुओंसे कहा जाये कि आप जोर-जबरदस्तीके आगे लाचार होकर अपना धर्म बदल देनेके बजाय अपने भीतर मर मिटनेका साहस और शक्ति जुटाइए। यह सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि अनेक हिन्दू ऐसे थे जिन्होंने बलप्रयोगके आगे लाचार होकर धर्म-परिवर्तन करनेकी बनिस्बत मोपलोंके कुठारका ग्रास बनना अच्छा समझा। यदि उन लोगोंने बिना किसी द्वेष या क्रोधके मृत्युका वरण किया हो तो मैं कहूँगा कि उन्होंने सच्चे भारतीयों और सच्चे मनुष्योंकी तरह और इस प्रकार सच्चे हिन्दुओंकी तरह अपने प्राण दिये हैं। क्योंकि इस तरह उन्होंने सिद्ध कर दिया कि वे सबसे सच्चे भारतीयों और सबसे सच्चे मानवोंकी कोटिमें थे। यदि इनपर अत्याचार करनेवाले लोग मुसलमान न होकर हिन्दू ही होते तो भी उन्होंने इसी तरह अपने प्राण दे दिये होते। यदि हिन्दू-मुस्लिम एकता पारस्परिक आदान-प्रदानपर ही ठहर सकती है तो वह बहुत सस्ती और निकम्मी चीज होगी। क्या पतिकी वफादारी पत्नीकी वफादारीपर निर्भर है? यदि पति दुराचारी हो तो क्या पत्नीको भी वैसा ही हो जाना चाहिए? यदि पति-पत्नी अपने आचार-व्यवहारको सिर्फ एक विनिमयकी वस्तु मानें, तो विवाह एक बहुत ही घटिया चीज बनकर रह जायेगा। एकता भी विवाह-बन्धनकी तरह है; जब पत्नीका चरण पतनकी ओर बढ़नेको हो, उस समय पतिके लिए और भी आवश्यक हो जाता है कि वह पत्नीसे पहलेकी अपेक्षा अधिक घनिष्ठता स्थापित करे। वही समय है, जब उसे उसपर दूना स्नेह-रस उँडेलना चाहिए। उसी तरह जब हिन्दुओंको मोपलों और मुसलमानोंसे अनिष्टकी आशंका हो, या सचमुच उनका अनिष्ट वे कर चुके हों उस समय हिन्दुओंके लिए यह और भी आवश्यक हो जाता है कि वे पहलेसे भी अधिक प्रेम दिखायें। एकता वास्तविक तो तभी मानी जायेगी जब वह कड़ेसे-कड़े आघातको भी सह ले, लेकिन टूटे नहीं। उसे एक अटूट बन्धन होना चाहिए।

और मेरा विचार है कि ऊपर मैंने देशसे जो-कुछ कहा है, वह हमारे स्वार्थकी दृष्टिसे भी सही है। क्या किसी हिन्दूको जितना मोह अपने-आपसे है, उससे अधिक

मोह अपने धर्म और देशसे है? यदि है, तो स्वाभाविक है कि उसे किसी ऐसे अज्ञानी मुसलमानसे झगड़ना नहीं चाहिए, जो न अपने देशको जानता है और न धर्मको। यह प्रक्रिया उस विश्व-विश्रुत स्त्रीके आचरणके समान है जिसे अपना बच्चा अपनी सौतको दे देना स्वीकार था, किन्तु उसे चीरकर आपसमें बाँट लेना मंजूर नहीं हुआ। वैसे, स्पष्ट है कि उसकी सौतके लिए तो बच्चेको चीरकर बाँट लेना ही अच्छा रहता।

थोड़ी देरके लिए मान लीजिए (यद्यपि यह सब सच नहीं है) कि मोपलोंके अत्याचारोंका सभी मुसलमान समर्थन करते हैं। उस अवस्थामें क्या हिन्दू-मुस्लिम एकता समाप्त हो जानी चाहिए? एकताके समाप्त हो जानेसे क्या हिन्दुओंकी अवस्था किसी भी तरह अच्छी हो जायेगी? क्या वे लोग मोपलोंसे बदला लेनेके खयालसे उनका और उनके सहधर्मियोंका विनाश करनेके लिए विदेशी शक्तियोंकी सहायता लेंगे और सदाके लिए गुलाम बने रहनेमें ही सन्तोष मानेंगे?

असहयोगका सिद्धान्त सार्वभौम है, क्योंकि जिस तरह यह पारिवारिक सम्बन्धों-पर लागू होता है उसी तरह अन्य सम्बन्धोंपर भी लागू होता है। यह अपने अन्दर शक्ति और आत्म-निर्भरताका विकास करनेकी प्रक्रिया है। हिन्दुओं और मुसलमानोंको वास्तविक एकताके सूत्रमें बँध जानेसे पहले संसार-भरके मुकाबलेमें अकेले खड़े होना सीखना चाहिए। यह एकता दो अशक्त पक्षोंके बीच नहीं, बल्कि ऐसे लोगोंके बीचकी एकता होनी चाहिए, जिन्हें अपनी शक्तिका बोध है। मुसलमानोंके लिए वह दिन बहुत बुरा होगा, जब उन स्थानोंमें जहाँ उनका अल्पमत है, अपने धर्म-कर्मका पालन करनेके लिए उन्हें हिन्दुओंकी कृपापर निर्भर करना होगा। यही बात हिन्दुओंपर भी लागू होती है। असहयोग अपनी शक्तिका विकास करनेकी प्रक्रिया है।

पर यदि शक्तिशाली लोग पशुवत् आचरण करने लगें और दुर्बलोंको कुचलकर चलें तो यह प्रक्रिया असम्भव हो जायेगी। उस अवस्थामें तो जो उनसे बलवान् होगा वह उन्हें भी कुचल देगा। इसलिए यदि हिन्दू और मुसलमान सचमुच धार्मिक बनकर रहना चाहते हैं तो उन्हें अपने भीतर शक्तिका विकास करना चाहिए। उन्हें शक्ति-वान् भी होना चाहिए और नम्र भी। हिन्दुओंको चाहिए कि वे मोपलोंके इस पागल-पनके कारणोंका पता लगायें। उस समय उन्हें विदित होगा कि स्वयं वे भी निर्दोष नहीं हैं। आजतक उन्होंने मोपलोंकी फिक्र नहीं की है। आजतक वे उन्हें या तो दास समझते रहे हैं या उनसे भय खाते रहे हैं। उन्होंने उनके साथ ऐसे मित्र अथवा पड़ोसीकी तरह व्यवहार नहीं किया है, जिनका सुधार और सम्मान करना चाहिए। इस समय मोपलोंका आम तौरपर सारे मुसलमानोंसे नाराज होना बेकार है। यद्यपि हिन्दुओंको मुसलमानोंकी सहायता और सहानुभूतिकी आशा करनेका अधिकार है फिर भी यह समस्या ऐसी है जिसका हल अपने अन्दर शक्तिका विकास करना, अपनी सहायता आप करना ही है। यदि खिलाफतकी रक्षाके लिए मुसलमानोंको हिन्दुओंकी मददपर निर्भर रहना पड़े तो वह दिन इस्लामके लिए बहुत बुरा होगा। आज मुसल-मानोंको हिन्दुओंकी सहायता प्राप्त है। इसका कारण यही है कि पड़ोसियोंके नाते ऐसा करना हिन्दुओंका धर्म है। और यद्यपि मुसलमान हिन्दुओं द्वारा इतने मुक्त भावसे दी गई सहायता स्वीकार करते हैं, फिर भी अन्तिम सहारा तो वे ईश्वरका ही मानते

हैं और उन्हें ऐसा ही मानना भी चाहिए। वह निःसहायोंका सतत तत्पर और एक-मात्र सहायक है। मलाबारके हिन्दुओंको भी यही भाव ग्रहण करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

११०. आन्ध्रमें दमन

इन पंक्तियोंके छपते-छपते शायद आन्ध्र देशकी ओर सभी लोगोंका ध्यान आकर्षित हो चुका होगा। वहाँकी साहसी जनता कुछ तहसीलोंमें सार्वजनिक रूपसे सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करनेकी तैयारी कर रही है और इसीलिए उसने अभी फिलहाल करोंकी अदायगी मुल्तवी कर दी है। मैंने आन्ध्र कमेटीको आगाह कर दिया है कि यदि गोलमेज सम्मेलन हो गया तो मुल्तवी करोंकी अदायगी तुरन्त करनेके लिए उनको तैयार रहना चाहिए और कठिन संघर्षकी तैयारी केवल तभी करनी चाहिए जब जनता अहिंसापूर्ण आचरणमें पूरी तरह दीक्षित-अनुशासित हो जाये और दिल्लीकी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा रखी गई शर्तोंको पूरी करने योग्य अपने-आपको बना ले।[1] जो हो, श्री वेंकटप्पैया मुझे सूचित करते हैं कि जनता पूर्णतया अनुशासित और तत्पर है और वह निर्धारित शर्तें पूरी कर सकती है। जाहिर है कि मद्रास सरकार स्पष्ट ही करोंकी अदायगीके स्थगनसे बुरी तरह भयभीत हो गई है। वह गण्टूरमें और अधिक पुलिस भेज रही है और शक्तिका प्रदर्शन कर रही है। सरकार कर-वसूलीके साधारण तरीके छोड़ रही है और तुर्त-फुर्त वसूलीके असाधारण तरीके अपनानेकी धमकी दे रही है। कहा तो यह भी जा रहा है कि सरकार असाधारण शक्तियाँ ग्रहण करके अपनी स्थिति मजबूत बना रही है। ऐसी परिस्थितिमें मुझे प्रान्तीय कमेटीके मन्त्रीसे मिला दमनका यह विवरण[2] 'यंग इंडिया'में प्रकाशित करनेके लिए क्षमा याचना करनेकी कोई जरूरत नहीं। यह विवरण ३ जनवरी से १५ जनवरीतक की घटनाओंका है। इस विवरणसे पाठक आन्दोलनकी आन्तरिक शक्तियोंको समझ सकेंगे और यह भी जान सकेंगे कि आन्ध्रकी जनता किस सीमातक बलिदान करनेके लिए तैयार हो रही है। ईश्वर उसको साहस, सहिष्णुता और ठीक समयपर ठीक काम करनेका विवेक दे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१-१९२२

१. देखिए "पत्र: कोण्डा वेंकटप्पैयाको", १७-१-१९२२ और "तार: कोण्डा वेंकटप्पैया और अन्य लोगोंको", २०-१-१९२२ के पूर्व।

२. विवरण यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

१११. भाषण: सत्याग्रह आश्रम, अहमदाबादमें[1]

२६ जनवरी, १९२२

मैं सविनय अवज्ञा और करोंकी अदायगी बन्द करनेके कार्यक्रमको सफलतापूर्वक चलानेकी तैयारीके लिए आज बारडोली जा रहा हूँ। मैं यहाँ एक हफ्तेमें या हो सकता है एक महीने या साल-भरमें लौटूंगा, या शायद कभी भी न लौटूं। पर एक बात निश्चित है: हम या तो भारतके लिए स्वराज्य हासिल कर लेंगे या फिर संघर्षमें काम आ जायेंगे। भारत धीरे-धीरे एक पवित्र बल्कि कहिए कि एक परमशुद्ध देश बनता जा रहा है। जब सत्य हमारे पक्षमें है तो फिर क्या पराजय कभी हो सकती है? इसमें तो तत्काल मुक्ति या मोक्ष मिलता है। सत्यके लिए प्रसन्नताके साथ अपना जीवन होम कीजिए। यदि कोई मुझसे पूछे कि ब्रह्म कहाँ है, कैसा है, तो मैं उसके प्रश्नको बदल कर पूछूंगा, सत्य कहाँ है, कैसा है? सत्य ही ब्रह्म है। हर व्यक्तिको बड़े सवेरे उठकर कमसे-कम एक मिनट ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि "हे सर्वशक्तिमान् प्रभु! मुझे अपने धर्मके लिए प्राणोत्सर्ग करने, समूचे संसारके लिए प्राणोत्सर्ग करनेकी शक्ति प्रदान कर।" मृत्युमें ही मुक्ति नहीं है, मुक्ति उसी मरणमें है जिसका स्वेच्छासे सहर्ष वरण किया जाये। भगवान् श्रीकृष्णने 'गीता' के दूसरे अध्यायमें स्थित-प्रज्ञके बारेमें अर्जुनसे क्या कहा था? उसे याद कीजिए और उसके अनुसार जीनेकी कोशिश कीजिए। जीनेका सुख और आनन्द तभी है जब ईश्वर हमें अनेकानेक बाधाओं और अत्याचारोंको सहन करते हुए अपनी इच्छासे प्रसन्नता-पूर्वक मृत्युका वरण करनेकी शक्ति दे। ईश्वरने मुझे अपने देश और अपने धर्मके लिए प्राणोत्सर्ग करनेकी शक्ति दी है।

आत्मत्यागमें एक प्रकारका सन्तोष होता है। पिछली रात मैं प्रोफेसर वास्वाणी[2] द्वारा रचित एक पुस्तक पढ़ रहा था। उन्होंने आत्मत्यागके बारेमें लिखते हुए राणा प्रतापसिंहका उदाहरण पेश किया है। उन्होंने बड़े सुन्दर विचार व्यक्त किये हैं। प्रतापका आत्मत्याग महान् था। चित्तौड़के पतनके बाद जब उन्होंने देखा कि उस-पर फिरसे कब्जा करना सम्भव नहीं, तो अपने राजभक्त सैनिकोंसे उन्होंने क्या वचन लिया था? वह आत्मत्यागपूर्ण वचन यह था: "जबतक चित्तौड़की स्वाधीनता नहीं मिलती, तबतक हम कोई ऐशो-आराम नहीं करेंगे, हम धरती-माताकी गोदमें सोयेंगे, कन्द-मूल खाकर बसर करेंगे, हम अपने सभी सांसारिक सुखोंका त्याग कर देंगे और पूर्ण आत्मत्यागका जीवन व्यतीत करेंगे।" यही उनका संकल्प था। मैं राणा

१. इस विवरणके सम्बन्धमें देखिए "टिप्पणियाँ", ९-२-१९२२ का उप-शीर्षक "प्रकाशनकी दृष्टिसे अवांछनीय"।

२. टी० एल० वास्वाणी (१८७९-१९६६); सिन्धके एक सन्त पुरुष; पूनाकी 'मीरा' नामक शैक्षणिक संस्थाओंके संस्थापक और लेखक।

प्रतापसिंहको स्थित-प्रज्ञ मानता हूँ। हममें से प्रत्येकको आत्मत्यागपूर्ण जीवन व्यतीत करना और स्थित-प्रज्ञ बनना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-२-१९२२

११२. उत्तर-दक्षिण

केन्द्रीय विधान-मण्डलके दोनों सदनोंमें समझौतेकी वार्त्ताके सम्बन्धमें जो चर्चा हुई उससे हम देख सकते हैं कि सरकार और हमारे बीच उतना ही अन्तर है जितना उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुवके बीच। इसी कारण मैंने कहा है कि इस समय सरकारसे बातचीत करना व्यर्थ है। अभी सरकारको सत्ताका मद है। अभी उसे यह आशा है कि वह हमें गोला-बारूदकी मददसे दबा सकेगी। अभी उसे हमारे मतकी अथवा हमारे त्यागकी शक्तिपर विश्वास नहीं हुआ है। और जबतक सरकारको यह आशा है कि वह हमें दबा सकती है तबतक यदि वह हमसे समझौतेकी बात करेगी तो वह वैसी ही होगी जैसी मालिक और नौकरके बीच होती है।

सरकारके हिमायती कहते हैं कि हमारी माँग इतनी बेहूदा है कि उसपर अमल करना अशक्य है। अशक्य कह देनेसे किसी बातका अमल अशक्य नहीं हो जाता,[1] अथवा यह कहना चाहिए कि एक अशक्यता इच्छाके अभावमें होती है और दूसरी शक्तिके अभावमें।

खिलाफतकी माँगको माननेमें क्या अशक्यता है यह अभीतक सरकार समझा नहीं सकी है। यह सारी अशक्यता उसकी बदनीयतीकी है और इस सम्बन्धमें हमारी माँग माननेकी उसकी अनिच्छाकी है। अंग्रेज लोग अरबिस्तानको खाली कर दें इसमें अशक्यता क्या है? टर्कीको उसका प्रदेश वापस दे दिया जाये, इसमें अशक्यता अथवा बाधा क्या हो सकती है? यदि अंग्रेज इस बातको सहन नहीं कर सकते तो भारतके सामने यह प्रश्न आता है कि वह ब्रिटिश साम्राज्यसे अपना सम्बन्ध क्यों न तोड़ ले। इसलिए खिलाफतके प्रश्नपर उसकी अनिच्छाका तर्क तो उचित रूपसे दिया ही नहीं जा सकता।

यही बात पंजाबके मामलेमें भी लागू होती है। पंजाबके प्रश्नपर ऐसी कौन-सी माँग है जिसे मानना सरकारके लिए अशक्य है? मौलाना शौकत अली और सर माइकेल ओ'डायर, जहाँतक पेंशनका सम्बन्ध है, दोनों एक ही प्रकारके अधिकारी थे। फिर भी मौलाना शौकत अलीकी पेंशनको रद करते वक्त सरकारने किसीकी सलाह नहीं ली; किन्तु सर माइकेल ओ'डायर और जनरल डायरकी पेंशनोंको बन्द करना आज सरकारको भारी मालूम पड़ता है। कारण सीधा है। जिसे सरकार भला और राज्यका खैरख्वाह मानती है उसे हम अपना दुश्मन मानते हैं। सरकार सर

१. देखिए परिशिष्ट १।

माइकेल और जनरल डायरकी भूतकालीन सेवाओंको भुलाना नहीं चाहती; किन्तु हम अपने मनमें उनकी पिछली सेवाओंका कोई मूल्य नहीं समझते और सन् १९१९में उन्होंने भारतके प्रति जो अभक्ति दिखाई वह हमको आज भी बहुत सालती है।

ऐसी ही बात स्वराज्यके सम्बन्धमें भी है। हमें तो स्वराज्य आज ही चाहिए, जब कि सरकार कहती है कि वह हमें लायक हो जानेपर स्वराज्य देगी।

इस प्रकार हर मामलेमें हम दोनोंमें बहुत बड़ा अन्तर है। यह अन्तर तबतक न मिटेगा जबतक हमारी परीक्षा पूरी-पूरी नहीं हो जाती। और जबतक दोनोंके दृष्टिबिन्दु एक नहीं हो जाते तबतक समझौतेके लिए कोई सम्मेलन होता है तो वह भले ही हो; किन्तु उसका परिणाम अच्छा होनेकी कोई आशा नहीं रखनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२२

११३. स्वयंसेवकोंकी भरती

स्वयंसेवकोंकी भरतीका काम जितने जोरसे चलना चाहिए उतने जोरसे चलता हुआ नहीं दिखाई देता। जैसे राष्ट्रीय सप्ताहमें कांग्रेसके टिकट घरपर भीड़ लग गई थी, स्वयंसेवक बननेके उम्मीदवारोंका वैसा जमघट प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके कार्यालयके सामने नहीं दिखाई देता। विषय-समितिकी बैठकमें प्रवेशके लिए दर्शकोंके टिकटोंकी माँग इतनी अधिक थी कि अध्यक्ष और मन्त्री दोनों पागल-जैसे हो गये थे। वे किसको हाँ कहें और किसको ना, यह प्रश्न था। स्वयंसेवकोंकी भरती भी ऐसे ही जोरसे क्यों नहीं होती?

कुछ लोगोंका कहना है कि खादी पहननेकी शर्त उड़ा दी जाये तो भरती तेजीसे हो सकती है। मैं इस बातको नहीं मानता। जो दिलसे स्वयंसेवक बनना चाहता है वह खादीपर आपत्ति नहीं कर सकता। स्वयंसेवक तो मरनेकी प्रतिज्ञा करना चाहता है। फिर यह नहीं हो सकता कि वह खादी पहननेमें आगा-पीछा करे या पाँच-दस रुपयेकी खादी खरीदनी पड़े तो न खरीदे? स्वयंसेवक तो मनुष्य इतने रुपये उधार लेकर भी बन सकता है। क्या कितने ही लोग अपने व्यसनोंको पूरा करनेके लिए कर्ज नहीं लेते? फिर स्वयंसेवक बनना भी हमें एक व्यसन ही क्यों नहीं लगता?

कुछ लोग कहते हैं कि अस्पृश्यताकी प्रतिज्ञा हटा लें, फिर देखें कि कितने स्वयं-सेवक भरती होते हैं। किन्तु यह बात भी ठीक नहीं है। मैं समझता हूँ कि इसमें न तो खर्चकी बात है और न असुविधाकी। मुख्य बात है हृदयको बदलनेकी। हम अछूतोंको छोड़कर स्वराज्य रूपी स्वर्गमें जा ही नहीं सकते। परन्तु ऐसी आपत्तियाँ करना तो 'नाच न जाने आँगन टेढ़ा' की कहावतको चरितार्थ करता है।

फिर शर्तोंमें छूट देना न तो मेरे अधिकारमें है और न कार्य-समितिके अधिकारमें। यह तो राष्ट्रीय कांग्रेसका प्रस्ताव है और राष्ट्रीय कांग्रेस ही उसमें परिवर्तन कर सकती है। और परिवर्तन करानेकी बातको मैं स्वयं तो कायरता ही मानता हूँ।

फिर इस प्रतिज्ञामें केवल सिद्धान्त ही तो ग्रथित किये गये हैं। कोई सिद्धान्तोंमें परिवर्तन कर ही कैसे सकता है? दिल्लीकी बैठकमें शर्तोंमें छूट देनेकी जो गुंजाइश रखी गई है वह तो सिर्फ उसी जिलेका हाथ-बुना कपड़ा पहननेकी शर्तसे सम्बन्ध रखती है। यदि पंजाबके किसी जिलेमें ऊनी कपड़ा न बन सके तो उसके लिए कार्य-समिति दूसरे जिले या प्रान्तसे हाथकी कती ऊनका हाथ-बुना कपड़ा लानेकी इजाजत दे सकती है। परन्तु क्या कोई अस्पृश्यता या शान्तिकी रक्षा अथवा हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई आदिकी एकताके विषयमें भी छूट दे सकता है? जो सचमुच स्वयंसेवकों-में अपना नाम लिखाना चाहते हैं और जिनमें जेल जानेका उत्साह है, वे तमाम शर्तोंका पालन आसानीसे कर सकते हैं।

इसलिए यदि गुजरातमें थोड़ेसे ही लोग स्वयंसेवकोंमें नाम लिखायें तो मैं यही समझूंगा कि या तो इससे अधिक लोग अपना नाम लिखाना ही नहीं चाहते या जिस तरह यह संघर्ष चल रहा है उस तरह चलाना बहुतोंको पसन्द नहीं है।

परन्तु प्रतिज्ञाकी शर्तोंपर आस्था न रखते हुए नाम लिखानेकी अपेक्षा लोगोंका स्वयंसेवकोंम नाम न लिखाना अधिक अच्छा है। कम लोग ही नाम लिखायें, परन्तु वे अपनी प्रतिज्ञाका पूरा-पूरा पालन करें। ऐसे थोड़े किन्तु सच्चे स्वयंसेवकोंसे तो बहुत हो जानेकी सम्भावना है। परन्तु जैसे-तैसे बनाये गये बहुतसे स्वयंसेवकोंसे भी हमें लाभ होनेवाला नहीं है। कारीगरका काम यह है कि वह मकानकी चिनाईके समय नाप-जोख करे और देखे कि मकान जैसा सोचा है वैसा बन रहा है या नहीं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२२

११४. सरकारकी सभ्यता

शत्रुके भी गुणोंको देखनेमें लाभ है; यह नीतियुक्त तो है ही। पर जो प्रमादवश यह मानता है कि शत्रुमें कोई भी गुण नहीं हो सकता उसे मुँहकी खानी पड़ती है।

सरकार जानती है कि असली लड़ाई बारडोलीमें ही हो सकती है। इसलिए वहाँके कलक्टरने लोगोंके नाम एक 'स्पष्टीकरण' प्रकाशित किया है। वह ध्यान देने योग्य है। इसे 'स्पष्टीकरण'का शिष्ट नाम देनेके बदले सरकार 'जाहिर खबर' भी कह सकती थी। किन्तु ऐसा करनेके बजाय सरकारने जनताके सम्मुख 'स्पष्टीकरण' किया है। इस 'स्पष्टीकरण'में सरकारने जिस विनयसे काम लिया है उससे अधिक विनय तो हम अपनी प्रान्तीय समितिके पर्चोंमें प्रकट नहीं करते। दलीलें भी वैसी ही दी गई ह जैसी असहयोगी देते हैं।

इसके नीचे हस्ताक्षर 'एच० बी० शिवदासानी'के हैं। वे तो हममें से ही एक हैं। यदि उन्होंने ऐसा विनययुक्त स्पष्टीकरण अपने अधिकारसे ही निकाला हो तो इसमें कोई अधिक आश्चर्यकी बात नहीं है। यदि भारतीय अधिकारी सरकारी नौकर होते हुए भी विनययुक्त व्यवहार करें तो यह कोई असाधारण बात नहीं है।

परन्तु यदि इस स्पष्टीकरणकी भाषा किसी अंग्रेज अधिकारीने देखी, विचारी और पसन्द की हो तो इसे मैं एक बड़ा परिवर्तन मानता हूँ और अपने संग्रामका शुभ श्रीगणेश समझता हूँ। दोनों पक्ष अपने-अपने स्थानपर डटे रहकर भी विनयपूर्वक, बिना असभ्यता दिखाये लड़ सकें, यह कोई छोटी बात नहीं है। हम तो यही चाहते हैं कि सदा ऐसा ही युद्ध हुआ करे। राम-रावण-युद्धके वर्णनमें हमारे कवियोंने सभ्यता-की पूरी रक्षा की है। मन्दोदरीका परिचय उन्होंने सतीके रूपमें कराया है। मेघनादकी मृत्युके बाद रामचन्द्रने सुलोचनाको सब तरहकी सुविधाएँ दीं। आदिकवि वाल्मीकि तथा भक्तकवि तुलसीदासने रावण और अन्य राक्षस-वीरोंकी तपश्चर्याकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है।

मेरी महत्त्वाकांक्षा तो यही है कि ऐसा ही सभ्यतापूर्ण युद्ध हम भी करें। असह-योगीको दूसरी बात शोभा ही नहीं देती। असभ्यता एक प्रकारकी हिंसा है। और जबतक हम अहिंसाव्रतके पालन करनेका दावा करनेवाले लोग इस प्रतिज्ञासे बँधे हैं तबतक हम चाहे हिन्दू हों चाहे मुसलमान, सभ्यताका पालन करनेके लिए भी बँधे हुए हैं। और यदि एक पक्ष भी अन्ततक सभ्यताका पालन करता रहे तो उसका असर प्रतिपक्षीपर पड़े बिना नहीं रह सकता। मुझे उस सभ्यताका आरम्भ इस स्पष्टीकरणमें देखनेकी इच्छा हो रही है। सरकार सभ्यतासे बरतती हुई भले ही हमारे खेत छीन ले और हमें गोलियोंसे भून दे।

इस प्रस्तावनाके बाद उक्त 'स्पष्टीकरण' नीचे दिया जा रहा है:[1]

इस स्पष्टीकरणका स्वागत करते हुए मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि बार-डोलीके किसी भी पाटीदारको अज्ञानमें नहीं रखा गया है। सभी स्त्री-पुरुषोंसे यह कह दिया गया है कि सरकार,

१. पूरी फसलको बेच सकती है,

२. लाखोंकी फसलको कौड़ियोंके मोल नीलाम कर सकती है,

३. ढोर-डंगर और बर्तन आदि भी उठा ले जा सकती है,

४. इनामी जमीनोंको भी जब्त कर सकती है,

५. लोगोंको जेल भेज सकती है,

६. लोगोंको रेल, तार और डाककी सुविधाओंसे वंचित करके और बारडोली-का घेरा डालकर उन्हें हैरान करनेका प्रयत्न कर सकती है। जो लोग इन समस्त कष्टोंको सहन कर सकें वे ही सामने आयें।

इसके अतिरिक्त बारडोलीके लोगोंको यह भी बता दिया गया है कि यदि उनमें से अधिकांश अपने निश्चयपर दृढ़ रहेंगे, सत्यपर ही आरूढ़ रहेंगे, अहिंसाका पूर्ण पालन करेंगे, बिलकुल निर्भय हो जायेंगे, एक होकर रहेंगे, पूरा असहयोग करेंगे, ढेढ़ों और भंगियोंसे मित्रभावसे बरतेंगे और उन्हें अस्पृश्य न मानेंगे, स्वदेशीको पूरी तरह अपनायेंगे और केवल हाथ-कते सूतका हाथ-बुना कपड़ा ही पहनेंगे तथा अपनी

१. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

आवश्यकताका पूरा सूत और कपड़ा बारडोलीमें ही तैयार करेंगे तो उन लोगोंका बाल भी बाँका न होगा और इतना ही नहीं कि उनकी जब्त जमीनें उन्हें वापस मिल जायेंगी; बल्कि वे दूसरे लोगोंके कष्टोंको दूर करेंगे और स्वयं मुक्त होकर भारतको स्वतन्त्र करनेमें जबरदस्त हाथ बँटायेंगे।

इस लड़ाईमें ढोंग नहीं चलेगा, दिखावा काम न देगा, झूठ और गोपनीयताकी कोई गुंजाइश नहीं होगी। सभी लोग अपने बल-बूतेपर अथवा ईश्वरके ऊपर निर्भर रहकर लड़ेंगे। इसलिए लोग जो-कुछ करें उसे भली-भाँति विचार करनेके बाद ही करें। बारडोली ताल्लुकेके किसान समझदार हैं। वे देश और धर्मकी खातिर कष्ट सहन करनेके लिए और बिलकुल बर्बाद होनेके लिए तैयार हैं, ऐसा समझकर मैं नित्य ही उनकी प्रशंसा किया करता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२२

११५. हर सालकी एक सामान्य विधि

कांग्रेसका नया वर्ष

कांग्रेसजनोंको समझना चाहिए कि जो लोग कांग्रेसको जीवित रखना चाहते हैं उन्हें कांग्रेसका वार्षिक चन्दा भी अवश्य देना चाहिए। यदि प्रत्येक व्यक्ति चार आने चन्दा न देगा तो इस वर्ष कांग्रेसका अधिवेशन नहीं हो सकता। जितने लोग चार-चार आने चन्दा देंगे उतने ही लोगोंके हाथमें यह संस्था चली जायेगी। कांग्रेसकी शक्ति जैसे उसके स्वयंसेवकोंपर निर्भर है वैसे ही चार आने देनेवाले सदस्योंपर भी निर्भर है। कीमत चार आनेकी नहीं, बल्कि नामकी है।[1] मुझे भय है कि कांग्रेसके दफ्तरमें पिछले साल एक करोड़ सदस्योंके नाम दर्ज नहीं हुए। कुछ भी हो, यदि कांग्रेस जीवित संस्था हो और लोगोंको गत एक वर्षमें उसके सम्बन्धमें दिलचस्पी पैदा हुई हो तो इस वर्ष निश्चय ही पिछले वर्षसे अधिक सदस्य बनने चाहिए। ज्यों-ज्यों सदस्योंकी संख्या बढ़ेगी त्यों-त्यों कांग्रेस की शक्ति भी बढ़ेगी।

फिर, इस वर्ष कांग्रेसमें १८ वर्षके युवक भी सदस्योंमें अपने नाम दर्ज करा सकते हैं। इस बारेमें स्त्री-पुरुष दोनोंको समान अधिकार प्राप्त है। मुझे आशा है कि १८ वर्षकी आयुकी सभी स्त्रियाँ और पुरुष, जिन्हें स्वराज्य प्यारा है और जो उसे शान्ति और सत्यके बलपर प्राप्त करना चाहते हैं, वे बिना बुलाये स्वयं ताल्लुके अथवा गाँवकी कांग्रेस कमेटीके दफ्तरमें अपने नाम सदस्योंमें लिखाये बिना न रहेंगे। यदि लोगोंमें सच्चा उत्साह होगा और कांग्रेसके प्रति सहानुभूति होगी तो इस कार्यके लिए स्वयंसेवकोंको लगानेकी जरूरत नहीं होनी चाहिए। लोगोंका चार आने देना, कांग्रेसमें विश्वास प्रकट करनेके समान है।

१. अर्थात् कांग्रेसके सदस्यके रूपमें अपना नाम दर्ज करानेकी है।

कांग्रेसका कोष

इस तरह लोगोंके सदस्य बननेसे जितना पैसा आता है उसमें से कुछ तो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको मिलता है। परन्तु इस प्रकार मिले हुए पैसेका मुख्य उपयोग तो तालुका कांग्रेस कमेटियाँ ही करती हैं। कांग्रेसको अपने अन्य खर्चोंके लिए पैसेकी जरूरत फिर भी रहती है। हम गुजरातका ही उदाहरण लें। गुजरातमें पिछले वर्ष काफी रकम इकट्ठी हुई थी। हमने जितना रुपया इकट्ठा किया था उतना खर्च कर दिया। ऐसा करना जरूरी था और ऐसा ही सोचा भी गया था। अब नये वर्षके लिए नये सिरेसे चन्दा इकट्ठा किया जाना चाहिए। स्वदेशीके प्रचार, अछूतोद्धार और शिक्षा सम्बन्धी कार्योंके लिए पैसेकी जरूरत तो है ही। इस साल पैसा दुबारा इकट्ठा न करें तो हमारा काम आगे नहीं बढ़ सकता। इसलिए मुझे आशा है कि जो लोग गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके कार्यको प्रोत्साहन देना चाहते हैं वे अपना चन्दा स्वयं ही भेज देंगे। यदि कोई चाहे तो अपना रुपया किसी खास कामके लिए निर्धारित कर सकता है। यानी अपनी इच्छाके अनुसार जिस प्रवृत्तिके लिए चाहे, उस प्रवृत्तिके लिए भेज सकता है। मुझे आशा है कि 'नवजीवन' के जो पाठक पैसा भेजना चाहें वे अधिकसे-अधिक जितना भेज सकते हों उतना भेजेंगे। यदि वे 'नवजीवन' की मार्फत भेजेंगे तो अखबारमें उनकी रकमकी प्राप्ति स्वीकार की जायेगी। मुझे सभी लोगोंको याद दिलानी चाहिए कि गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने एक-एक पाईका हिसाब प्रकाशित किया है। सारा खर्च प्रान्तीय कमेटीके अन्तर्गत बनाई गई समितिकी मंजूरीके अनुसार ही किया गया है। खर्चका अच्छेसे-अच्छा प्रमाण तो गुजरात विद्यापीठ और उससे सम्बन्धित शालाओं एवं स्वदेशी विभाग और उसकी शाखाओंसे मिलता है। सारा पैसा इन्हींमें खर्च किया गया है। वे दिन चले गये जब लोगोंका पैसा विलायती अखबारोंको खरीदने अथवा ऐसे ही अन्य कामोंमें खर्च किया जाता था। यदि हम विद्यापीठ और स्वदेशी इन दो बड़े-बड़े विभागोंके कार्यको पोषण देना चाहते हैं तो हमें पैसा अवश्य इकट्ठा करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२२

११९. टिप्पणियाँ

अहमदाबाद, नडियाद और सूरत

अहमदाबाद, नडियाद और सूरत इन तीनों नगरपालिकाओंकी लड़ाई ठीक तरह से आगे बढ़ रही है। वह जिस तरहसे चल रही है उससे भारत एक अच्छी बात सीखेगा। यदि इन नगरोंके लोग अपने प्रतिनिधियोंको पूरा समर्थन देंगे तो वे स्थानीय स्वराज्यके स्वरूपका उदाहरण प्रस्तुत कर सकेंगे। स्थानीय स्वराज्यसे राष्ट्रीय स्वराज्यका विकास सुगमतासे किया जा सकता है। दोनोंकी प्राप्तिके साधन एक ही हैं। दोनोंका परिणाम भी एक ही है। स्थानीय स्वराज्यमें स्थानीय लोगोंको त्याग करना पड़ता है और राष्ट्रीय स्वराज्यमें समस्त राष्ट्रके लोगोंको। इन तीनों नगरपालिकाओंको पूर्ण स्वतन्त्र होनेसे कौन रोक सकता है? लोग सरकार द्वारा बनाई गई नगरपालिकाओंको कर देनेके बजाय स्वतन्त्र रूपसे चुने हुए अपने प्रतिनिधियोंको कर दें तो इसमें कानूनके खिलाफ कुछ नहीं है। इसलिए उन्हें किसीसे लड़नेकी भी कोई जरूरत नहीं होती। इससे लोगोंके हाथोंमें सत्ता अपने-आप ही आ जायेगी। इसमें प्रतिनिधि, मकान, नौकर-चाकर और कानून-कायदे भी वे ही होंगे (बशर्ते कि हम उन्हींको कायम रखना चाहें); तब जरूरत केवल सत्ताको माननेसे इनकार करनेकी रह जाती है। इसीका नाम अहिंसात्मक विप्लव अथवा नया जन्म है। इसके लिए लोगोंको केवल अपने हृदयों-को टटोलना होता है। अबतक जो नगरपालिकाएँ चली हैं, वास्तवमें देखें तो लोगोंने उनमें कोई रस नहीं लिया है। लोगोंके नामपर चाहे जैसे लोग उनमें नियोजित हो जाते थे और अपनी अथवा सरकारकी स्वार्थसिद्धि करते थे। मेरे कहनेका अर्थ यह नहीं है कि इन नगरपालिकाओंसे लोगोंको कतई कोई फायदा नहीं पहुँचता था। उन्होंने हमारे लिए प्रकाशका प्रबन्ध किया है, पाखानोंको साफ रखनेकी व्यवस्था की है और हमें दवादारू भी दी है। फिर भी लोगोंमें यह भावना उत्पन्न नहीं हुई है कि वे हमारी हैं। अहमदाबादके लोग जैसे अपने व्यावसायिक संघोंकी सम्पत्तिको अपना मानते हैं वैसे नगरपालिकाकी आयको अपना नहीं मानते थे। सदस्य तक नगरपालिकाकी बैठकोंमें शायद ही कभी दिलचस्पी लेते थे। अब तो तीनों नगरोंके सदस्य नगर-पालिकाओंकी बैठकोंमें जाने लगे हैं और बहुत दिलचस्पी लेते हैं। अभी उनमें पूरा आत्मविश्वास उत्पन्न नहीं हुआ है, अन्यथा वे लोग समस्त व्यवस्थाके स्वामी बन सकते हैं। अन्तर इतना ही है कि यदि आज लोग कर न दें तो उनपर दावा दायर किया जा सकता है। किन्तु जब उनपर से सरकारका अंकुश हट जायेगा तब लोग अपनी इच्छासे ही कर देंगे। और उस प्रकार जो कर दिया जायेगा वही सच्चे अर्थोंमें स्वेच्छापूर्वक दिया गया कर होगा।

ऐसी व्यवस्थासे हम सर्वथा अपरिचित नहीं हैं। हम अभीतक अपने जातीय कर प्रसन्नतापूर्वक देते रहे हैं। हम अपने व्यावसायिक संघोंके चन्दे भी देते ही हैं।

केवल अवतक राजनीतिक जागृति नहीं थी; लोग अवतक इन कार्योंमें दिलचस्पी नहीं लेते थे। उनमें सभी जातियोंके कामकाजी लोग भाग नहीं लेते थे। जव सभी जातियोंके लोग उनमें दिलचस्पी लेने लगेंगे तव निश्चय ही हाथ हिलाये विना स्वराज्य मिल जायेगा। जव कम लोग अधिक लोगोंपर अपनी सत्ता चलाना चाहते हैं तभी अत्याचार होता है, यह सामान्य नियम है। कम लोगोंपर अधिक लोगोंको ज्यादती नहीं करनी पड़ती, अथवा यह कहना चाहिए कि वहुमतमें वहुत ही कम ज्यादती होती है, सत्ताकी कमसे-कम शक्ति पर्याप्त हो जाती है। एक भारत ही ऐसा देश है जिसमें वहुसंख्यक लोग चेतना आ जानेपर भी अपने-आपको अपंग मानते हैं।

ऐसा कौन-सा काम है जिसे नगरपालिकाएँ नहीं कर सकतीं? क्या हम अपने नगरोंमें प्रकाशकी व्यवस्था, मार्गोंकी देखरेख और पाखानोंकी सफाईका इन्तजाम नहीं कर सकते? खादीनगरमें पाखानोंकी सफाई किसने की, उसका निर्माण किसने किया, उसमें सड़कें किसने वनाईं, वहाँ खाने-पीनेका इन्तजाम किसने किया और रोगियोंकी चिकित्सा और रातको कुटियोंपर पहरा देनेकी व्यवस्था किसने की? इतनी गाड़ियोंके जाने और आनेका नियन्त्रण किसने किया? आप समय, काम और लोगोंकी संख्याका हिसाव लगायेंगे तो जो आँकड़े मिलेंगे वे स्वराज्यके आँकड़े होंगे। हम स्वयं ही यह मान वैठे हैं कि हममें शक्ति नहीं है। हमें इसका भान कोई दूसरा मनुष्य कैसे करा सकता है?

मुझे आशा है कि सरकारने तीनों नगरपालिकाओंसे जो व्यर्थ झगड़ा चला रखा है उसमें इन तीनों शहरोंके लोग, नगरपालिकाओंके काममें पूरी दिलचस्पी लेकर और अपने प्रतिनिधियोंको पूर्ण प्रोत्साहन देकर, विजयी होंगे और इस प्रकार अपने शहरोंको स्वतन्त्र कर लेंगे।

हमारी रक्षा

हम जव सरकारकी सत्ताके संरक्षणसे मुक्त होना चाहते हैं, तव हमें यह विचार करना ही पड़ता है कि हम अपनी रक्षाका प्रश्न कैसे हल करेंगे? अवतक तो हमारी रक्षा सरकारकी पुलिस, फौज, तोपों और तलवारोंने की है। सरकारके चले जानेपर हमारी रक्षा कौन करेगा? तव हमें चोरों और लुटेरोंसे कौन वचायेगा? जवतक ऐसे प्रश्न पूछे जाते रहेंगे तवतक हम न तो स्वराज्य लेनेके लायक हैं और न मर्द कहे जानेके लायक।

हम तत्काल अपने शहरों और गाँवोंकी रक्षा करनेमें समर्थ क्यों नहीं हो सकते? भारतके साढ़े सात लाख गाँवोंके लोग तो ऐसे प्रश्न नहीं पूछते। सरकार उनकी रक्षा नहीं करती। गाँव अपनी रक्षा अपने-आप ही कर लेते हैं और जो गाँव अपनी रक्षा आप नहीं कर पाते वे तो आज भी लुटते हैं। देशके भीतरी उपद्रवोंसे तो गाँवोंकी रक्षा सरकारने भी नहीं की है और कर भी नहीं सकती। इस प्रकारकी रक्षाके लिए तो गाँवोंको स्वयं तैयार रहना अथवा होना चाहिए।

प्रत्येक गाँव अथवा शहरमें से ऐसे स्वयंसेवक निकलने चाहिए जिनका काम लोगोंकी रक्षा करना हो और जो रातको पहरा दें। हमें कोई इस कार्यसे भी नहीं रोक सकता। इस कामको करनेके लिए लोगोंको स्वयं तैयार रहना चाहिए।

इस कामको करनेके लिए हथियारोंकी जरूरत नहीं, हिम्मतकी जरूरत है। जागते हुए लोगोंको लुटनेका डर कम होता है। किन्तु सब लोग दिन-रात नहीं जाग सकते; इस कारण कुछ लोगोंको रातमें पहरा देनेके लिए तैयार होना चाहिए। शहरोंकी सुरक्षाके लिए प्रकाश और पहरेकी व्यवस्था पर्याप्त है।

इसके अतिरिक्त हमें लोगोंको सुधारनेके उपाय भी करने चाहिए। हम चोरोंका पता लगाकर उन्हें सजा देनेके बजाय समझायें। चोरसे एक बार खुलकर बातचीत कर लेनेके बाद वह चोरी करनेकी हिम्मत नहीं करेगा। उसे बदलना तो अवश्य ही मुश्किल गुज़रेगा, जिसने चोरीको अपना धन्धा ही बना लिया है। किन्तु सार्वजनिक शुद्धिका असर तो उसपर भी होगा ही। इस शुद्धिके कार्यको आगे बढ़ाना साधुओंका काम है। यदि साधुओंमें सच्ची साधुता आ जाये तो वे इस कामको अवश्य ही पूरा महत्त्व देंगे। जो जातियाँ चोरी और लूटपाटको अपना धन्धा मानती हैं, साधुओंको उनमें जाकर उनकी यह आदत छुड़ानी चाहिए और उन्हें दूसरे धन्धोंमें डालना चाहिए। मतलब यह कि हमें उनको अपना शत्रु समझनेके बजाय अपने भाईके समान मानकर उनकी सेवा करनी चाहिए। चोरीकी आदत भी एक तरहका रोग है। किन्तु हमने इस रोगको मानसिक रोग होनेके कारण अधिक कठिन समझ लिया है और उसके निदान और चिकित्साका काम अपने हाथमें ही नहीं लिया। जिस मनुष्यको अपच हो जाता है, ज्वर आता है और वमन होती है, हम उसकी दवा-दारू करते हैं। जो चोरी करता है, झूठ बोलता है और धोखा देता है हमें उसको भी रोगी मानकर उसकी दवा-दारू क्यों न करनी चाहिए? हम उसे जेलमें भेजनेके बजाय उसका कोई दूसरा इलाज क्यों न ढूँढ़ें? शारीरिक रोग होनेपर हम किसी व्यक्तिको दण्ड क्यों नहीं देते? मेरा विश्वास तो यह है कि यदि हैं तो दोनों ही दण्डके पात्र हैं, नहीं तो फिर दोनों ही दयाके योग्य हैं।

किन्तु हमने तो आलस्यके वशीभूत होकर विचार करना भी बन्द कर दिया है। इस कारण हमने 'एकको गुड़की डली, दूसरेको ख़ली' देनेके सिद्धान्तको सनातन मान लिया है। हम जब अहिंसात्मक असहयोगसे भारतमें स्वराज्यकी स्थापना करने निकले हैं तब हमें चोरी आदि भयोंकी चिकित्सा भी अहिंसाके मार्गसे ही खोजनी होगी और यह अवश्य ही सम्भव है।

सरकारसे हमें यह शिक्षा तो मिलती ही है कि वह जहाँ दण्ड देती है वहाँ मुक्ति-सेना-जैसी संस्थाओंकी थोड़ी-बहुत सहायता लूट और ऐसे ही अन्य कुकर्मोंमें फँसी जातियोंका सुधार करनेमें लेती है। हमारे पास तो सरकारकी अपेक्षा ऐसी जातियोंको सुधारनेके अधिक सशक्त साधन हैं, क्योंकि इस कामके लिए हमारे पास साधुओं और फकीरोंका वर्ग मौजूद है। यदि इस वर्गमें सच्ची साधुता अथवा फकीरी आ जाये तो उनसे इस कार्यमें पर्याप्त सहायता मिल सकती है। कोई यह न सोचे कि इसके लिए किसी विशेष संगठनकी आवश्यकता है। लोगोंको हर गाँव या शहरमें अथवा जहाँ राष्ट्रीय जागृति हुई हो वहाँ दूसरोंकी बाट जोहे बिना अपनी रक्षाका और अपने सुधारका प्रबन्ध कर लेना चाहिए। यदि दो-चार जगहोंमें भी यह काम ठीक तरहसे हो सके तो अन्य गाँवों या शहरोंमें इसका चलन अपने-आप आरम्भ हो जायेगा।

एक अंग्रेज महिलाका आशीर्वाद

कलकत्तासे एक अंग्रेज महिलाने लिखा है:[1]

इस पत्रको प्रकाशित करते हुए मुझे संकोच तो हुआ ही है। क्योंकि इसमें मेरी प्रशंसा की गई है। किन्तु मेरा खयाल है कि मुझमें अहंकार नहीं है और मैं अपनी कमजोरीको परख सकता हूँ। किन्तु ईश्वरमें, उसकी सत्तामें और उसकी दयालुतामें मेरी आस्था अडिग है। मैं उस महान् कुम्भकारके हाथमें मिट्टीके लौंदेकी तरह हूँ। इसलिए मेरा अधिकार तो इस स्तुतिको ईश्वरको अर्पित करने-भरका है। इस बहनके आशीर्वादसे मैं तो इतना ही सार निकालता हूँ कि मैं इससे शक्ति लेकर और भी सशक्त बनूं।

किन्तु इस पत्रको प्रकाशित करनेमें मेरा तो इतना ही उद्देश्य है कि सच्चे असहयोगी अपने अहिंसाके पथपर दृढ़ बनें और हिंसाके खोटे मार्गपर भटकनेसे रुकें। हमारी अहिंसाका जो प्रभाव इन अंग्रेज महिलाओंपर[2] पड़ा है वह अन्य सब लोगोंपर भी अवश्य पड़ेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

किन्तु हमारी लड़ाईमें घृणा नहीं होनी चाहिए। हमारी लड़ाईका मूल प्रेम है, द्वेष अथवा रोष नहीं। हम तो शत्रुको भी मित्र बनाना चाहते हैं। और मुझे विश्वास है कि यदि हम अपना कार्य द्वेष-रहित होकर करेंगे तो हमारी सहिष्णुतासे पत्थर-जैसे कठोर हृदयका व्यक्ति भी द्रवित हो जायेगा। विलम्ब होनेका कारण हमारी त्रुटियाँ ही हैं। यदि हम शान्त चित्त होकर कष्टोंको सहन करते रहें तो हमें अत्यल्प कालमें ही पूर्ण विजय मिल जायेगी।

किन्तु हमने मद्रासमें भूलें कीं और बम्बईमें भूलें कीं। हमारे मनसे रोष अभी गया नहीं है। हमारी शान्ति अभी सशक्त मनुष्यकी शान्ति नहीं है। अभीतक हमारी शान्ति हमारी निर्बलताका चिह्न है। यदि हम अपने संख्या-बलको पहचान लें तो हम तुरन्त ही अपनी शक्तिको समझ जायेंगे। मौ० मुहम्मद अली जैसा कहते हैं, तीस करोड़ लोगोंको तो एक लाखका डर नहीं होना चाहिए। यदि हम डरते हैं तो इसमें दोष हमारा ही है। जब हम डर निकाल देंगे तब हमें स्वराज्य अपने हाथमें आ गया समझना चाहिए। और यदि तीस करोड़ लोग एक लाख लोगोंको डराकर अपना कार्य सिद्ध करना चाहें तो उनके जैसा पापी कोई न होगा। इसलिए हमें तो अपनी मर्दानगी कष्ट सहन करके ही बतानी है।

यदि हम केवल मुट्ठी-भर लोग ही जाग्रत हुए हों और अन्य सब भारतीय सो रहे हों तो भी हमें हिंसासे काम न लेना चाहिए। उस अवस्थामें हमें अपने सोये हुए भाइयोंको जगाना अवश्य अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए।

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है; इसके लिए देखिए "टिप्पणियाँ", २६-१-१९२२ का उप-शीर्षक "एक अंग्रेज महिलाका आशीर्वाद"।

२. पत्रकी लेखिका और एक अन्य अंग्रेज महिला जिसका उल्लेख लेखिकाने अपने पत्रमें किया है। इस दूसरी अंग्रेज महिलाने इससे पहले एक ऐसा ही पत्र लिखा था। पत्रके लिए देखिए **यंग इंडिया,** १२-१-१९२२।

इस कारण हम अपनी स्थितिपर चाहे जिस प्रकारसे विचार करें, हमें अपना कार्य शान्ति और प्रेमसे ही करना है। आज हम एक ओर तो जेल जानेकी इच्छा करते हैं और दूसरी ओर अदालतको शोरगुलसे डराना भी चाहते हैं। अब भी मेरे पास ऐसी शिकायतें आ ही रही हैं कि लोग कहीं-कहीं, जहाँ असहयोगी कैदियोंके मुकदमे होते हैं, अदालतोंमें घुस जाते हैं। इस हालतमें यदि अदालतें जेलमें ही बैठकर कार्रवाई करने लगें तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात होगी?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २९-१-१९२२

११७. आन्ध्र देशमें जागृति

२९ जनवरी, १९२२

यह लेख लिखनेकी तारीखतक [आन्ध्र] प्रदेश कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीकी ओरसे 'यंग इंडिया' कार्यालयमें दो तार[1] आये हैं।

> १. कल गुण्टूरमें आन्ध्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक हुई। . . . उसमें जिलेके विभिन्न भागोंसे बहुतसे रैयत भी शामिल हुए थे। पेडारंडीपाडुके आस-पासके पचास गाँवोंके लोग जिस उत्साह और निष्ठासे काम कर रहे हैं, उसका बहुत सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया। हर गाँवमें बहुत-से वयस्क पुरुष स्वयंसेवक सेनामें भरती हुए हैं। इनमें कुछ बड़े-बूढ़े लोग भी शामिल हैं। ये सब सिरसे पैरतक खादीकी पोशाक पहनते हैं। सभी सेवाकार्यमें जुटे हुए हैं। वहाँ तैनात सैनिकोंने कभी-कभी बहुत उत्तेजनात्मक कार्य किये हैं। लोगोंकी चल सम्पत्तिकी कुर्की कर दी गई है, तनिक भी संयम और नरमीका परिचय दिये बिना मन-माने तरीकेसे उनके बैल और गाड़ियाँ छीन ली गई हैं। किन्तु इस सबके बावजूद वे अहिंसा-धर्मका कठोरतासे पालन करते रहे हैं। उन्होंने यह भी बताया कि लगभग सभी गाँवोंमें सभी ग्राम-अधिकारियोंने अपने पद त्याग दिये हैं। दूसरे क्षेत्रोंके ग्राम-अधिकारियों द्वारा भी पद-त्याग किये जानेका विवरण दिया गया। काफी विचार-विमर्शके बाद कार्य-समितिने विशेष एहतियाती कदमके तौरपर निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया: "इस समितिकी राय है कि गण्टूर जिला कांग्रेस कमेटीको अपने पूर्व निश्चयके अनुसार लगानबन्दी अभियानको कई ताल्लुकोंमें एक ही साथ चलानेके बजाय उसका क्षेत्र सीमित कर देना चाहिए और इस बातकी जाँच करनेके लिए कि उस सीमित क्षेत्रमें दिल्लीमें तय की गई शर्तें कहाँतक पूरी की जा रही हैं, और फिर अन्तिम रूपसे लगानबन्दी

१. उक्त तारोंके कुछ अंश ही यहाँ दिये जा रहे हैं।

अभियान प्रारम्भ करनेके प्रश्नका निपटारा उक्त समितिके विचारके अनुसार करना चाहिए।"

२. परसों अन्य प्रश्नोंके साथ-साथ प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी कार्य-समिति द्वारा २५ तारीखको पास किये गये लगानबन्दी विषयक प्रस्तावपर विचार करनेके लिए गुण्टूर कांग्रेस कमेटीकी बैठक हुई।... जिलेके विभिन्न ताल्लुकोंके प्रमुख रैयत लोग और कुछ कांग्रेसी कार्यकर्त्ता भी बैठकमें शामिल हुए। अपने-अपने ताल्लुकों और फिरकोंकी स्थिति बतानेको कहनेपर प्रतिनिधि रैयतोंने जनताके बीच आन्दोलनकी प्रगतिका विवरण प्रस्तुत किया। अधिकांश प्रतिनिधियोंने तमाम कठिनाइयोंके बावजूद अभियानको जारी रखनेका पक्का इरादा जाहिर किया। किन्तु कुछ थोड़े-से सदस्योंने यह विचार भी व्यक्त किया कि उनके फिरकोंमें दिल्लीके प्रस्तावमें निर्धारित शर्तोंका पूरी तरहसे पालन नहीं किया गया, और अस्पृश्यताके मामलेमें और भी तैयारी करनी जरूरी है। एक-दो फिरकोंमें तो अहिंसाकी दृष्टिसे भी जनतामें कुछ और सुधार करनेकी जरूरत बताई गई। श्री प्रकाशम्ने[1] बैठकमें भाषण दिया, जिसमें उस जिलेके लोगों द्वारा उठाये गये कदमके साथ जुड़ी जिम्मेदारीपर कुछ विस्तारसे प्रकाश डाला। उन्होंने २६ तारीखके[2] 'बॉम्बे क्रॉनिकल' में प्रकाशित लगानबन्दीके सम्बन्धमें लिखे महात्माजीके पत्रसे उद्धरण दिये और श्रोताओंको वह पत्र समझाया। श्री वेंकटप्पैयाने बताया कि यह सब कहनेकी जरूरत, उनके नाम लिखे महात्माजी-के पत्र और उस पत्रके बाद दोनोंके बीच हुए आगेके पत्र-व्यवहारके कारण पड़ी। उन्होंने कहा कि दिल्लीके प्रस्तावका सम्बन्ध ऐसे क्षेत्रोंसे है, जहां काफी गहरी तैयारी हो चुकी हो।...

सरकारकी तैयारियोंके बारेमें एसोशिएटेड प्रेसने निम्न समाचार दिया है:

गुण्टूर जिलेमें सविनय अवज्ञा तथा लगानबन्दी और ग्राम-अधिकारियोंके पदत्यागका अभियान चल रहा है। वहांकी वस्तुस्थितिको देखते हुए मद्रास-सरकार (१८६४ का २) मद्रास राजस्व-उगाही-अधिनियममें, संशोधन करनेके लिए आपात् विधानका विचार कर रही है। संशोधनका मुख्य उद्देश्य वर्तमान अधिनियमके अन्तर्गत लगान न देनेवालों की जायदादकी जब्ती और उसकी नीलामीके बीच जो समय दिया जाता है, उसे समाप्त करके लगान न देनेवाले रैयतकी जायदादकी तत्काल नीलामीकी व्यवस्था करना है। सरकार प्रशासनिक तौरपर कुछ और कदम भी उठायेगी। उदाहरणके लिए, वह आज्ञाका

१. टी० प्रकाशम् (१८७६-१९५७); स्वराज्यके सम्पादक; 'आन्ध्र-केसरी' के नामसे विख्यात; मद्रासके मुख्य मन्त्री।

२. स्पष्ट ही भूलसे "२३ तारीख" के स्थानपर "२६ तारीख" लिखा गया है; देखिए "पत्र: कोण्डा वेंकटप्पैयाको", १७-१-१९२२। यह पत्र २३ तारीखके क्रॉनिकलमें छपा था।

उल्लंघन करनेवाला क्षेत्र निर्धारित कर देगी। ऐसे क्षेत्रमें सरकारके आदेशोंके अनुसार लोगोंको छूट भी दी जा सकती है। यह छूट उन लोगोंको दी जायेगी जो समयपर निर्धारित की जानेवाली तिथितक सरकारी खजानेमें या उस उद्देश्यसे नियुक्त अधिकारीके पास करकी रकम जमा करा देंगे। जहाँ सरकार नीलामीको रोकनेके लिए खुद जमीन खरीदेगी वहाँ वह जमीन दलित वर्गोंके लोगोंको दे दी जायेगी। ग्राम-अधिकारियोंके त्यागपत्रोंके बारेमें सरकारका कहना है कि वर्तमान परिस्थितियोंमें उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता, और यदि ये अधिकारी अपना काम करनेसे इनकार करते हैं तो उन्हें बर्खास्त कर दिया जायेगा।

मेरे खयालसे तो सरकारको ये एहतियाती कदम उठानेका पूरा हक है। यदि उसके सामने सामूहिक रूपसे कर देना बन्द कर देनेका खतरा हो तो उसे साधारण कानूनोंको स्थगित कर देनेका अधिकार है। हाँ, यह सत्य है कि कोई भी समझदार सरकार लोकमतको इतना तो कभी क्षुब्ध नहीं करेगी कि जनता कर देनेसे इनकार करने लग जाये। किन्तु हमें ऐसी आशा न करनी चाहिए कि जो सरकार लोकमतको इस तरह कुचलते हुए चलती है वह अपनी रक्षाके लिए प्रयत्न नहीं करेगी और अपना अस्तित्व यों ही मिट जाने देगी। इसलिए वह कमसे-कम ऐसा प्रयत्न अवश्य करेगी जिससे उसका कर उगाहनेका काम न रुके। और कर न देनेवाले लोगोंकी जब्त की गई जमीनको वह जो दलित वर्गोंको दे देनेका विचार कर रही है, उसपर भी कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। ऐसी व्यवस्था तो दोनों पक्षोंके लिए ठीक ही होनी चाहिए। असहयोगियोंने तो अहिंसाका व्रत धारण किया है। उन्होंने तो अपने लक्ष्य-की सिद्धिके लिए अपना सर्वस्व त्याग देनेकी शपथ ली है। अतः उन्हें अपनी जाय-दाद खुशी-खुशी नीलाम होने देनी चाहिए। दूसरी ओर सरकार, यदि कर सके तो निश्चय ही करबन्दीकी हलचलको समाप्त कर देनेका तथा कर वसूली करने-भरके लिए जरूरी हर तरहके उपाय करनेका प्रयत्न करेगी। और यह विचार एक आदर्श विचार है कि ऐसी व्यवस्था की जाये जिससे जब्त की गई जमीनोंके लिए दलित वर्गके ही लोग बोली लगायें और उन्हें खरीदें। इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है कि जिन लोगोंको हम बुरी स्थितिसे उठाकर उन्नत बनानेका यत्न कर रहे हैं, ये जब्त की गई जमीनें कुछ समयके लिए उन्हींके कब्जेमें रहें?

मैं "कुछ समयके लिए" इसलिए कह रहा हूँ कि उन जमीनोंपर अभी जिनका अधिकार है उनको अपने अंगीकृत कार्यमें इतनी आस्था होनी ही चाहिए और वे यह समझें कि उन्हें स्वराज्य अवश्य मिलेगा और स्वराज्य मिलनेपर उन्हें अतिरिक्त सम्मान सहित अपना पहलेवाला दर्जा फिरसे प्रदान किया जायेगा। और अगर पुराने मालिकोंको उनकी जमीन फिर लौटा दी गई तो इससे उन दलित वर्गोंका, जिनका कि सरकार इस समय शतरंजके मोहरोंकी तरह उपयोग कर रही है, कुछ भी अहित नहीं होगा। कारण इन वर्गोंके लोगोंको जीवनमें भली-भाँति प्रतिष्ठित करना तथा सुखी और सन्तुष्ट बनाना स्वराज्य-सरकारका पहला कर्त्तव्य होगा।

सरकार जरूरी तौरपर जो कदम उठा सकती है उसके बारेमें मैं इतना ही कहकर बस करता हूँ। सच तो यह है कि उसमें जो घबराहट छाई हुई है, उससे उसके मनका पाप प्रकट होता है। कर वसूल करनेके लिए उसे अपनी लोकप्रियतापर भरोसा नहीं है। इसके लिए उसे संगीनों तथा जोर-जुल्मका आश्रय लेना पड़ रहा है। वह लोकप्रिय नेताओंको गिरफ्तार कर रही है और लोगोंको हिंसापर उतर आनेके लिए उत्तेजित कर रही है, जिससे उसे अपनी इन "खूनी" कार्रवाइयोंको उचित ठहरानेका मौका मिले।

और इसीमें आन्ध्रकी परीक्षा है। उन्होंने अभीतक तो अपनी बहादुरी और बलिदान-भावनाका परिचय दिया है। उनके चुनिन्दा नेता जेल चले गये हैं। उनके मवेशी भी उनसे छीन लिये गये हैं, किन्तु तब भी वे शान्त रहे। पर सबसे बुरा दृश्य देखना अभी बाकी है। उनसे यह आशा की जाती है कि जब सरकारी सैनिक उनपर गोलियोंकी बौछार करेंगे तब वे पीठ नहीं दिखायेंगे, बल्कि खुशी-खुशी सीना खोल-कर गोलियोंकी मार खाते हुए भी अपने मनमें प्रतिहिंसा अथवा रोषकी भावना नहीं आने देंगे। यदि सरकारी कर्मचारी उनसे उनके बर्तन-बासन, उनका माल-असबाब छीन ले जायें तो उन्हें ले जाने दें। उस समय वे द्रौपदी अथवा प्रह्लादकी तरह ईश्वरसे प्रार्थना करते हुए उसमें अपनी आस्थाका परिचय देते रहें।

कर न देना एक विशेष अधिकारकी बात है। उसका उद्देश्य कर न देनेवाले प्रतिरोधियोंकी समृद्धि नहीं है। उसका उद्देश्य तो स्वेच्छया गरीबीको स्वीकार करके राष्ट्रको समृद्ध बनाना है। और इस विशेष अधिकारके प्रयोगके पात्र तो वे तभी हो सकते हैं जब वे अपनेको पवित्र बनायें, विदेशी कपड़ा छोड़कर हाथसे कती-बुनी खादी पहनें और यदि हिन्दू हों तो अस्पृश्यताके कलंकको मिटाकर अस्पृश्योंके साथ अपने विशिष्ट भाइयोंकी तरह व्यवहार करें। उन्हें अपने इन भाइयोंका स्पर्श अनिच्छापूर्वक नहीं करना चाहिए, बल्कि उन्हें प्रेमसे गले लगाना चाहिए और उनकी सेवा करनी चाहिए। हमपर किये गये अन्यायोंके लिए जैसे हम सरकारसे पश्चात्ताप करनेकी अपेक्षा रखते हैं, उसी प्रकार हम जब उनका स्पर्श करें तो अपने पहलेके पापोंके लिए मनमें सच्चे पश्चातापका भाव भरकर ही करें। जो अवश्यम्भावी है, उसे अनिच्छापूर्वक स्वीकार करनेसे ईश्वर प्रसन्न नहीं होता। अस्पृश्योंके प्रति हमारा व्यवहार पूर्ण हृदय-परिवर्तनका द्योतक होना चाहिए। हमें अपने स्कूलोंमें उनके बच्चोंको स्थान देना चाहिए, सार्वजनिक स्थानोंमें भी उन्हें निर्बाध प्रवेश करने देना चाहिए। उनकी रुग्णावस्थामें अपने भाईकी तरह हमें उनकी सेवा करनी चाहिए। हमें अपनेको उनका आश्रयदाता —अन्नदाता नहीं समझना चाहिए। हमें अपने धर्म-ग्रन्थोंकी बातोंको इस तरह तोड़-मरोड़कर नहीं पेश करना चाहिए जिससे वे उनके खिलाफ पड़ें। हमें अपने धर्म-ग्रन्थोंसे उन चीजोंको निकाल देना चाहिए जिनका उद्गम शंकास्पद हो और जिनका ऐसा अर्थ लगाया जा सकता हो जो अस्पृश्योंके मानवीय अधिकारोंके खिलाफ हो। ऐसी प्रथाओंको भी प्रसन्नतापूर्वक उठा देना चाहिए जो विवेक, न्याय और मानव-हृदयके स्वाभाविक धर्मके खिलाफ हों। हमें ऐसा नहीं करना चाहिए कि अज्ञान और अन्ध-विश्वासके वशीभूत होकर किसी कुप्रथासे चिपटे रहें और उसका त्याग तभी करें

जब और कोई चारा न रह जाये। यह तो उस कंजूसके समान आचरण करना होगा जो नाजायज तरीकेसे इकट्ठा किये गये अपने धनको तभी छोड़ता है, जब उसपर दबाव पड़ता है या वह यह देखता है कि उसे छोड़े बिना उसका काम नहीं चल सकता।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें मुझे यहाँ इतना इसलिए लिखना पड़ा है क्योंकि मुझे कई तार और पत्र भेजकर चेतावनी दी गई है कि आपको अस्पृश्यताके सम्बन्धमें कांग्रेसकी शर्तोंका पालन करनेके जो आश्वासन दिये गये हैं, उनपर विश्वास न करें। वे मुझसे यह कहते हैं कि आन्ध्रके लोग अभी अस्पृश्यताको छोड़नेके लिए तैयार नहीं हैं। मैं वहाँके नेताओंसे यह आग्रह करता हूँ कि वे पूरी सतर्कता बरतें। सही मार्गसे जरा भी विचलित होनेसे हमारे उद्देश्यकी इतनी भयंकर क्षति होगी जिसे कभी पूरा नहीं किया जा सकेगा। ईश्वर हमसे पवित्रतम बलिदानकी अपेक्षा रखता है। यह ईसाई धर्म तथा इस्लामके साथ-साथ हिन्दू धर्मकी भी परीक्षाका समय है। हिन्दू लोग यदि इस परीक्षामें उत्तीर्ण नहीं होते तो वे 'उपनिषदों' में प्रतिपादित हिन्दू धर्मके झूठे प्रतिनिधि साबित होंगे, क्योंकि 'उपनिषदों' का हिन्दुत्व गुणके आधारपर प्राप्त अधिकारके अलावा और किसी अधिकारको मान्यता नहीं देता और जो भी हृदय तथा मस्तिष्कको ठीक न लगे, ऐसी किसी चीजको स्वीकार नहीं करता।

आन्ध्रके लोग बहादुर हैं। उन्हें अपनी परम्पराओंका अभिमान है। वे बड़े धार्मिक हैं और बलिदानकी क्षमता रखते हैं। देश उनसे बहुत भारी उम्मीद रखता है और मुझे विश्वास है कि वे उसे अवश्य पूरा करेंगे। अगर वे सभी शर्तोंका पूरी तरह पालन करनेके लिए अभी तैयार न हों तो जरा ठहर जानेमें उनकी कुछ भी हानि न होगी। किन्तु अगर वे पूरी तैयारीके बिना रणक्षेत्रमें उतरेंगे तो सब-कुछ खो बैठेंगे और देशकी कुसेवा ही करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-२-१९२२

११८. भाषण: बारडोली ताल्लुका सम्मेलनमें[1]

२९ जनवरी, १९२२

प्रमुख महोदय, भाइयो और बहनो,

बारडोली ताल्लुकेमें मेरा यह तीसरा दौरा है। जब मैं पहली बार यहाँ आया था तब मैं केवल इतना ही देख गया था कि आप भाइयों और बहनोंने बारडोली ताल्लुकेमें कितनी तैयारी कर रखी है। उस दौरेके वक्त मुझपर या आपपर कोई जिम्मेदारी नहीं थी। जब मैं दूसरी बार यहाँ आया[2] तब हम दोनोंके ही ऊपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ चुकी थी, क्योंकि तब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अपना

१. यह भाषण सविनय अवज्ञा सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत करते समय दिया गया था।
२. २ और ३ दिसम्बर, १९२१ को; देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ५४४-४५।

सविनय अवज्ञा सम्बन्धी प्रस्ताव पास कर चुकी थी और उस प्रस्तावकी कसौटीपर वारडोलीकी तैयारीकी जाँच करनी थी और उसे देशके सामने प्रस्तुत करना था। पिछले दौरेसे मेरे मनपर यह प्रभाव पड़ा था कि वारडोलीको तैयार किया जा सकता है, किन्तु मैं यह नहीं कह सका था कि वारडोली वस्तुतः तैयार है। मैं ताल्लुकेके गाँवोंमें भी गया था और मैंने लोगोंसे पूछताछ करके वास्तविक हालत मालूम की थी। उसके अनुसार मैं ऐसा नहीं कह सका था कि इस ताल्लुकेमें स्वदेशीके प्रचार और अस्पृश्यता-निवारणके कार्यकी प्रगति सन्तोषजनक है।

दूसरी जगहोंमें अस्पृश्य-वर्गोंके लिए पृथक शालाएँ हो सकती हैं, किन्तु वारडोली-में तो अस्पृश्यताको पाप ही मानना चाहिए। अन्त्यजोंके लिए पृथक शालाएँ खोलकर आप सन्तोष कर लें यह बात चल नहीं सकती। आपका तो यह कर्त्तव्य है कि जिन-जिन गाँवोंमें राष्ट्रीय शालाएँ हों उनमें आप लोग अन्त्यजोंसे प्रार्थना करके उनके बच्चोंको स्वयं लायें और उन्हें अपने बच्चोंके साथ बिठायें। आजका प्रस्ताव पास करनेसे पहले उक्त गाँवोंके लोगोंको यह बात स्वीकार करनी चाहिए। किन्तु यहाँ आनेके बाद मुझे यह खबर मिली है कि अभीतक ऐसा नहीं किया गया है। मैं अपने पिछले दौरेके वक्त इस ताल्लुकेके वाँकानेर गाँवमें गया था। मैंने देखा था कि तबतक वहाँकी राष्ट्रीय शालामें अन्त्यज बच्चे नहीं आते थे। उस समय वहाँके कार्यकर्त्ताओंने इस कमीको दूर करनेका जिम्मा लिया था। किन्तु जैसा कि सभापति महोदयने आज कहा कि वाँकानेरकी राष्ट्रीय शालामें अन्त्यज बालकोंका आना अभीतक शुरू नहीं हुआ। मैं जानता हूँ कि इसका कारण अन्त्यजोंके प्रति तिरस्कार नहीं है, बल्कि कार्यकर्त्ताओंकी लापरवाही ही है। यदि हमें स्वराज्य लेना हो, खिलाफत और पंजाबके मामलोंमें न्याय प्राप्त करना हो तो हम अन्त्यजोंके प्रति तिरस्कारका भाव न रखें, इतना ही काफी नहीं है, बल्कि हम इस मामलेमें लापरवाही भी नहीं कर सकते।

जैसी स्थिति अस्पृश्यताके सम्बन्धमें है वैसी ही स्वदेशीके सम्बन्धमें भी है। बार-डोली ताल्लुकेके भाइयों और बहनोंने स्वदेशीका प्रचार उतना नहीं किया है जितना करना उचित था। अभी आप लोगोंमें अपनी जरूरत पूरी करने लायक खादी तैयार करनेकी शक्ति नहीं आई। अभी आपके यहाँ इतने हाथकरघे भी नहीं हैं कि आप उनसे अपनी जरूरतकी खादी बुन सकें। अभी बारडोलीकी सब बहनोंने यह प्रतिज्ञा भी नहीं की है कि वे रोज कमसे-कम दो, तीन या चार घंटे, बुनाईके लायक बढ़िया सूत कातेंगी और उसे बुनवायेंगी। यह बात जरूर है कि पन्द्रह दिन अथवा एक महीना पहले बारडोली ताल्लुकेमें जितने चरखे चलते थे उनकी अपेक्षा अब अधिक चरखे चलते हैं और अधिक सूत काता जाता है; किन्तु इतना ही काफी नहीं है। यदि आप समस्त भारतको स्वतन्त्र करानेका यश लेना चाहते हों, यदि आप बारडोलीकी नाक रखना चाहते हों तो आपको अपने ताल्लुकेमें जितना और जैसा सूत इस समय कतता है उससे बहुत अधिक और बहुत बारीक सूत कातना पड़ेगा।

मैं मानता हूँ कि हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई सब आपसमें भाई-भाई हैं। यह भावना तो आप लोगोंमें है, किन्तु मुझे पता है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके

मनोंमें से अभी पूरा मैल नहीं गया है। अभी अल्पसंख्यक जातियोंमें अपनी सुरक्षाके सम्बन्धमें विश्वास पैदा नहीं हुआ है। अभी हिन्दुओं और मुसलमानोंकी मित्रताका भय पारसी, ईसाई और अन्य अल्पसंख्यक जातियोंके मनसे गया नहीं है। स्वराज्यका अर्थ ही यह है कि उसमें बहुमतकी सत्ता चले। किन्तु किसी बहुसंख्यक समुदायकी सत्ता बढ़े और उस बढ़ी हुई सत्ताका दुरुपयोग किया जाये यह तो स्वराज्य नहीं होगा; यह तो अत्याचार होगा, स्वेच्छाचार होगा। और यदि ऐसा हो तो उन स्वेच्छाचारियोंका तो नाश ही हो सकता है। भारतमें आज जो स्थिति है वह इससे बिलकुल उलटी है। आज करोड़ों लोगोंपर मुट्ठी-भर लोगोंका स्वेच्छाचार चल रहा है। किन्तु इन अंग्रेजोंका स्वेच्छाचार एक हदतक सह्य हो गया है। मुट्ठी-भर अंग्रेज जब अपने स्वेच्छाचारसे तीस करोड़ भारतीयोंपर अत्याचार करते हैं तब उसमें इन करोड़ों लोगोंका भाग भी होता है। यदि हमारे हाथमें सत्ता हो तो मुझे नहीं लगता कि हम भी छोटी और निर्बल जातियोंपर अंग्रेजोंके समान अत्याचार न करेंगे।

यदि मुट्ठी-भर लोगोंको करोड़ों लोगोंपर राज्य करना हो तो या तो वह आतंक और अत्याचारके द्वारा किया जा सकता है या उन्हें फकीर बनकर रहते हुए जितना-कुछ किया जा सके उतना करना होगा। किन्तु ऐसा फकीर बननेके लिए तो पर-हित बुद्धि और स्वार्थ-त्यागकी जरूरत है। यदि ये न हों तो आजकी तरह अन्याय करके ही बहुसंख्यक लोगोंके ऊपर शासन किया जा सकता है।

अंग्रेजी हुकूमत अब लोभ-लालचके वशीभूत हो गई है। वह लोभ-लालचके कारण ही यहाँ आई थी। ईस्ट इंडिया कम्पनी लालचकी प्रेरणासे ही यहाँ आई थी। उसने यहाँ आकर देखा कि राज्यके बिना तो व्यापार चलाया नहीं जा सकता। उसने यहाँ सोने और चाँदीकी खानें देखीं। ये खानें थीं हमारे शरीर और उनपर पहने हुए वस्त्र। इस सोने-चाँदीको लूटनेके लिए इस हुकूमतने हमको नंगा कर दिया। हमें लालच दिखाकर, अत्याचार और अनेक प्रकारके अन्यायोंसे हमारे वस्त्रोंका अपहरण कर लिया।

सरकार बंगाल, चम्पारन और असममें हजारों बीघे जमीनपर कब्जा करके उसमें फसलें उगाती है।[1] किन्तु वहाँ मजदूर देखें तो मजदूर हम ही हैं। सारा व्यापार दबावसे अथवा लालच दिखाकर किया जाता है। इस प्रकार यह हुकूमत साम, दाम, दण्ड और भेदकी चारों नीतियोंका उपयोग करके हमारे ऊपर राज्य कर रही है; परन्तु इसमें उसका दोष निकालना तो नामर्दीकी निशानी है।

यदि इसी हुकूमतके पद-चिह्नोंपर चलकर बारडोली ताल्लुकेकी ८४,०००की आबादीमें से ८१,००० हिन्दू और मुसलमान, शेष ३,००० पारसी और ईसाई भाइयोंपर अत्याचार करें और उन्हें परेशान करें तो हमें संसार क्या कहेगा? कृष्ण भगवान्ने स्वेच्छाचारी यादवोंको जैसा शाप दिया था वैसा ही शाप संसार हमें देगा और उससे हमारा नाश हो जायेगा।

यदि हमें अपने बलपर विश्वास हो गया हो तो राम-राज्यकी स्थापना करनेके लिए गोला-बारूद या तोपोंकी नहीं बल्कि जागृतिकी और ज्ञानकी जरूरत है।

१. जूट, नील और चायकी फसलें।

आप यह न समझें कि सरकार आपके ऊपर बन्दूकके जोरसे राज्य कर रही है। ८५,००० की आबादीमें हुकूमतके चिह्नके रूपमें तो कुछ इने-गिने अफसर ही हैं। वे केवल आपकी सम्मतिसे, आपको फुसलाकर ही राज्य चलाते हैं। किन्तु जिस क्षण आप यह निश्चय कर लें कि आपको इन अफसरोंके नीचे नहीं रहना है, ज्यों ही आप इस निर्णयपर पहुँचेंगे कि यदि ये रहना चाहें तो हमारे नौकर बनकर भले ही रहें, त्यों ही आप ८५,००० लोग तो अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ही सकते हैं। आप ऐसा कर सकते हैं, यह आशा लेकर ही मैं यहाँ आया हूँ। आपको स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए किसी भी अधिकारीको न तो मारनेकी जरूरत है और न गाली देनेकी। केवल उनको सहयोग देनेसे साफ ना कहनेकी जरूरत है। उनसे यह कहनेकी जरूरत है कि अब आप उनसे सहयोग करना नहीं चाहते।

लॉर्ड विलिंग्डनने एक बार एक मानपत्रके उत्तरमें यह कहा[1] था कि भारतके लोगोंको तो "ना" कहना आता ही नहीं। सभी लोग "हाँ, साहब", "हाँ, हुजूर" यही कहना जानते हैं। अब जब उनके कहनेके अनुसार हम "ना" कहना सीख गये हैं और यह कहते हैं कि हमें आपके साथ सहयोग करनेकी जरूरत नहीं है, तब वे हमपर नाराज होते हैं। हम उनसे कहते हैं कि यदि आपको हमसे सम्बन्ध निभाना है तो वह सम्बन्ध मित्र-रूपमें, सज्जनोचित और सभ्य व्यवहारका ही हो सकता है। किन्तु यदि आप हमारे स्वामी बनना चाहते हों तो आपके साथ हमें सहकार नहीं करना है। यह तो सहकार नहीं हुआ, इसका मतलब तो यह हुआ कि आप हमें गुलाम बनाकर रखना चाहते हैं।

हमारी लड़ाईकी सफलताकी कुंजी हमारी एकता है। हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताका अर्थ यह है कि हम पारसियों और ईसाइयोंकी रक्षा करें और उसका पदार्थपाठ यह है कि हम किसी भी सरकारी अधिकारीपर अत्याचार न करें, बल्कि सभीको मित्र बनाकर रखें। उन्हें मित्र बनाकर रखनेका अर्थ इतना ही है कि हम उनका अपमान न करें, तिरस्कार न करें, उनसे तू कहकर न बोलें और उनकी मानरक्षा करें। हम उनसे कहें, "आपसे हमारी कोई दुश्मनी नहीं है पर आपका राज्य हमें नहीं चाहिए; बस इसके सिवा हमारा-आपका कोई झगड़ा नहीं है। आप असभ्यतासे हमारे गाँवमें किसीपर राज्य नहीं कर सकते।" अधिकारीके मनमें यह विश्वास होना चाहिए कि वह स्वयं और उसके बच्चे साथमें पिस्तौल रखे बिना आपके गाँवमें किसी भी समय निर्भय होकर आ-जा सकते हैं।

आप इतनी बात समझ गये हैं, इसी विश्वासके साथ मैं यहाँ आया हूँ। यदि आप सच्चे दिलसे ऐसी अहिंसाका पालन न करते हों और पाखण्डी ही हों तो मैं आपके सम्मुख भविष्यवाणी करता हूँ कि हम एक महीनेके भीतर-भीतर ही बाजी हार बैठेंगे। यदि हिन्दुओं और मुसलमानोंकी यह एकता ढोंग होगी और हमारे मनमें अविश्वास भरा होगा तो मुसलमानोंको अफगानोंकी सहायता लेनेकी बात सूझेगी और हिन्दुओंका मन जापानके पास जानेको होगा अथवा वे अन्तमें अंग्रेजोंके पास जाकर ही

१. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ २६३।

यह कहेंगे कि अब तो आप ही राज-काज चलायें। पर इस स्थितिसे तो मृत्यु ही अच्छी है। इस स्थितिमें मुझ-जैसे लोग तो हिजरत कर जायेंगे अर्थात् देश छोड़कर चले जायेंगे। हिजरतका विधान इस्लाममें ही नहीं है। तुलसीदासजीने भी कहा है कि जहाँ असन्त बसते हों वहाँसे चले जाना चाहिए। वन्दना तो असन्तोंकी भी करनी है; पर सैकड़ों कोस दूरसे। हमारा यहाँ काम करना तभीतक सम्मानजनक होगा जबतक हम यहाँ रहकर स्वतन्त्रताका मन्त्र जप सकते हैं। किन्तु जब हमें यह लगे कि इस देशमें हमारा साथी तो कोई रहा नहीं, तब सभीको देश छोड़कर चले जानेका अधिकार होगा।

भारतकी स्थितिको देखते हुए हमारे सम्मुख एकमात्र मार्ग, जिससे हमारा त्राण सम्भव है, शान्तिका ही मार्ग है।

प्रस्ताव रखनेसे पूर्व इन सब बातोंका स्पष्टीकरण मैं इस कारण करता हूँ कि हममें से कोई भी मनुष्य बातको समझे-बूझे बिना हाथ न उठाये। हाथ उठानेसे स्वराज्य नहीं मिलेगा। स्वराज्य तो मिलेगा स्वयं अपने प्राण देनेसे, माल-मिल्कियत-को बर्बाद होने देनेसे तथा अपने बर्तन-भाँडे और ढोर-डंगर गँवानेसे।

जबतक सभी स्त्रियाँ सूत नहीं कातने लगतीं, जबतक सब पुरुष सूत नहीं कातेंगे और आलसमें वक्त खोयेंगे तो हम अवश्य मरेंगे। हमें मरना तो है; किन्तु ज्ञानपूर्वक और पवित्र होकर मरना है। इसके लिए तो हमारे हाथमें निरन्तर माला होनी चाहिए और सच्ची माला यही चरखेकी माला है। हमें अपने मनमें निरन्तर यही बात जपनी चाहिए कि भारत वस्त्रहीन है और हमें उसका तन ढकना है। जो लोग इस समय सूत कात रहे हैं वे प्रभुका कार्य कर रहे हैं। यदि आप सब लोग एक, दो या तीन घंटे रोज चरखा चलानेके लिए और बारडोलीकी खादी न मिलनेपर लँगोटी पहनकर रहनेके लिए तैयार हों तभी आप इस प्रस्तावको स्वीकार करें।

आज सुबह श्री विट्ठलभाई और अन्य कई प्रतिनिधियोंसे मेरी बात हुई तो मुझे यह बताया गया कि अभी बारडोली तैयार नहीं है। इससे प्रकट होता है कि हम ईश्वरको धोखा नहीं दे रहे हैं। उसे तो कभी धोखा दिया नहीं जा सकता। मनुष्यको धोखा दिया जा सकता है। किन्तु हम न तो मनुष्यको धोखा देते हैं और न अपनी आत्माको। इसलिए मैंने इस समय यही निश्चय किया कि बारडोलीके तैयार होनेकी घोषणा पन्द्रह दिन बाद ही की जाये। किन्तु मैंने यह सोचा कि मैं ऐसा प्रस्ताव तैयार करनेके पूर्व सभी गाँवोंके प्रतिनिधियोंसे मिल लूँ जिससे उन लोगोंको जो तैयार हैं, निराशा न हो। बारडोली तैयार नहीं है, यह उत्तर कार्यकर्त्ता स्वयंसेवकोंने दिया है और इससे उनकी सतर्कता प्रकट होती है। फिर मैं जब प्रतिनिधियोंसे मिला, तो जिन गाँवोंके प्रतिनिधि आये थे उनमें से पच्चीस गाँवोंके प्रतिनिधियोंने कहा कि वे तो आज ही पूरी तरह तैयार हैं। मैंने उनसे कहा कि उन्हें कल ही अन्त्यज बालकोंको अपनी शालाओंमें ले आना होगा। मैंने उनसे कहा कि 'गीता' में पाँच वर्णोंका नहीं, चार ही वर्णोंका उल्लेख है। क्या आप इस पाँचवें वर्णको चार मूल वर्णोंमें समानेके लिए तैयार हैं? इसका अर्थ इतना ही है कि आपको जैसा बरताव

दुबला[1] जाति अथवा ऐसी ही अन्य जातियोंके प्रति रखना चाहिए वैसा ही अन्त्यजोंके प्रति भी रखना चाहिए। समानताका बरताव करना है, इसका यह मतलब नहीं कि आप दुबला आदि लोगोंको जैसा कष्ट देते हैं वैसा ही अन्त्यजोंको देने लगें; मतलब यह है कि जैसे हम दुबला जातिके बच्चोंको अपने घरों और शालाओंमें आने और बैठने देते हैं वैसे ही अन्त्यज बालकोंको भी आने और बैठने दें और यदि दुबले हमारे कुँओंसे पानी भर सकते हैं तो अन्त्यज भी भर सकें। जिस बातको हम धर्म मानते हैं उसके पालनमें हमें कंजूसी नहीं करनी चाहिए; हमें उसमें उदारता ही दिखानी चाहिए। यहाँ जो लोग मौजूद हैं यदि उनमें से कोई यह मानते हों कि गांधी-जैसे पागलका उपयोग करनेके लिए हम इस समय तो ढेढ़ोंसे मिलन-जुलने लगें, तो मैं कहता हूँ कि ऐसे लोग ईश्वरको, मुझे और आपको धोखा देंगे। यदि आपके मनमें ऐसा पाखण्ड होगा तो आप यह निश्चय मानें कि आप अन्त्यजोंके ही हाथों मरेंगे।

आप ऐसा न समझना कि मैं तो एक भ्रष्ट और सुधारवादी मनुष्य हूँ। मैं शुद्ध सनातनी हिन्दूके रूपमें यह मानता हूँ कि जैसी अस्पृश्यता इस समय बरती जा रही है हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें वैसी अस्पृश्यताके लिए कोई स्थान नहीं है। मैं शास्त्रार्थ नहीं करना चाहता। मैं तो शास्त्रोंको जिस रूपमें समझा हूँ उस रूपमें उनका दोहन करके आपके सम्मुख रखता हूँ। इस प्रकारकी अस्पृश्यताका आचरण करना अधर्म है। ऐसी अस्पृश्यताका पालन जो भी करेगा उससे यमराज अवश्य पूछेगा और उसे उसका फल भोगना पड़ेगा। उसके सम्मुख अज्ञानका बहाना भी नहीं चलेगा। हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें अथवा अन्य धर्मोके धर्मशास्त्रोंमें ऐसा नहीं कहा गया है कि जो अज्ञानमें पाप करता है उसे उसका फल नहीं भोगना पड़ता। हाँ, इतना है कि उसे जान-बूझकर पापका आचरण करनेवाले मनुष्यकी अपेक्षा कम फल भोगना पड़ता है। किन्तु अज्ञानमें पापका आचरण करनेवाले मनुष्यको भी अपने कर्मका फल तो भोगना ही पड़ता है। कर्मकी गति ही ऐसी अनोखी है। आप ऐसा न सोचें कि व्यावहारिक दृष्टिसे आज अन्त्यजोंका स्पर्श कर लेना ठीक है। यदि आप सचमुच यह मानते हों कि ऐसा करना धर्म नहीं है तो आप कह दें कि आप इसे धर्म नहीं मानते। मुझे इससे दुःख नहीं होगा। मैं फिर दूसरी जगह भीख मागूंगा और पूछूंगा कि इस शर्तपर सविनय अवज्ञा करनेके लिए कौन तैयार है? और यदि कोई तैयार न होगा तो मैं अकेला ही सविनय अवज्ञा करूँगा।

शान्तिके सम्बन्धमें भी स्थितिको स्पष्ट करना आवश्यक है। मुसलमान और 'गीता' का पारायण करनेवाले विद्वान् मुझसे कहते हैं कि विशेष अवसरोंपर तलवारका उपयोग करना धर्मानुकूल है और स्वयं कृष्ण भगवान्ने अर्जुनको युद्ध करनेके लिए प्रेरित किया था। किन्तु मेरे लिए तो अहिंसा ही परम धर्म है। वह आपके लिए भले ही व्यवहार-धर्म हो। किन्तु अस्पृश्यताका निवारण तो सनातन धर्म ही है। अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ यह नहीं है कि आप अन्त्यजोंके साथ खायें-पियें, अथवा बेटी-व्यवहार

१. गुजरातकी एक पिछड़ी जाति।

करें, साफ किये बिना उनके जूठे लोटेमें पानी पियें। मैं ऐसा नहीं कहता। हिन्दू धर्ममें एक-दूसरेके जूठे बर्तनमें पानी पीना लाजिमी नहीं है। आप इस प्रस्तावसे अन्त्यजोंके साथ शूद्रों जैसा बरताव करनेके लिए बँध जाते हैं। यदि आप इतनी बात समझ गये हों तभी आप अपना हाथ उठायें।

आपकी उत्सुकताके सम्बन्धमें तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। आप उत्सुक हैं, इसीलिए तो आप सबको बुला रहे हैं। किन्तु जब आप अस्पृश्यताको मिटा दें और स्वदेशीके व्रतका पालन करें तब मैं मानूँ कि आप सचमुच जेल जाने और अपनी जमीनें जब्त करानेके लिए तैयार हैं और देशको स्वतन्त्र कराना चाहते हैं। और जो लोग भारत-जैसे महान् देशको स्वतन्त्र करनेके लिए निकले हैं, उनको त्याग भी बड़ा करना चाहिए।

कोई यह न मान बैठे कि मैं यहीं रहूँगा, इसलिए आपको बचा लूँगा। मैं तो जहाँ जाता हूँ वहाँ उलटे उपद्रव ही होता है। वहाँ सबके हृदयोंमें खलबली ही मचती है। मैं आपके हृदयोंमें शान्ति उत्पन्न करनेके लिए नहीं बल्कि अशान्ति उत्पन्न करनेके लिए आया हूँ। अशान्ति उत्पन्न किये बिना शान्ति नहीं होती। किन्तु यह अशान्ति अपने भीतर होनी चाहिए। जब उससे हमारे हृदयोंमें खलबली मचेगी और जब हम कष्टोंकी अग्निमें भली-भाँति तपेंगे तभी हम सच्ची शान्ति प्राप्त कर सकेंगे।

आप यह मान बैठे हैं कि आपका जेल जाना ही काफी होगा। किन्तु सिर्फ जेल जानेसे काम न चलेगा। सरकार आपकी फसलोंको उठा ले जायेगी। हाँ, मैं आपको साहूकारी चोरी करना तो अवश्य सिखाऊँगा। इस सरकारके तो दस सिर और बीस हाथ हैं। आप जिस दिन लगान देनेसे इनकार करेंगे उसके दूसरे दिन ही सरकारके घुड़सवार आ खड़े होंगे। उस वक्त हम उन सिपाहियोंसे लड़ेंगे नहीं। वे हमारी कपास, शाक-भाजी और हमारा अनाज भले ही ले जायें। किन्तु यदि सरकार इन चीजोंको वहाँ रहने देगी तो हम उन्हें अपने घर अवश्य ले जायेंगे। यदि इस प्रकार अपने मालको घर ले जाना चोरी कहा जा सकता हो तो सरकार भले हमें दण्ड दे और मार डाले। मोहनलाल पण्ड्याने[1] इसी प्रकार मेरी सलाहसे प्याजकी चोरी की थी और इसी कारण उनकी ख्याति "प्याज-चोर" की हुई। किन्तु वह चोरी साहूकारी चोरी थी। सरकार आपके पशुओंको छीनेगी। तब जो लोग पशुओंको लेने आयें उन्हें आप गालियाँ न दें बल्कि उन्हें अपने पशुओंको स्वयं खोलकर दे दें। जब आप ऐसा व्यवहार करेंगे तभी आप कर-बन्दीके योग्य माने जायेंगे। आपको इन सभी नुकसानोंको बरदाश्त करनेके लिए तैयार रहना पड़ेगा। यदि सरकारने आपका यह सारा माल हजम कर लिया तो इसका अर्थ यही होगा कि दो लाखके लगानके बजाय आप दस लाखके मालकी बर्बादी होने देंगे।

क्या आपकी इतनी तैयारी है? यदि हो तो मैं प्रस्ताव रखूं। यदि कोई कुछ पूछना चाहे या कोई बात किसीकी समझमें न आई हो तो वह स्पष्टीकरण करा ले।

१. खेड़ा सत्याग्रहके कर्मठ कार्यकर्ता; देखिए खण्ड १४।

प्र०: राज्य कर्मचारी हमारी माल-मिल्कियत ले जायें, यह सहन किया जा सकता है; किन्तु यदि वे हमारी बहू-बेटियोंपर अत्याचार करें तो?

उ०: अपने ऊपर और मानव-जातिमें हमारा विश्वास नहीं रहा है। यद्यपि स्वयं मेरी अवस्था ऐसी है कि मुझे पन्द्रह सालका लड़का भी गिरा सकता है; किन्तु मैं अपनी पत्नीके साथ इसीलिए रहता हूँ कि मुझमें उसकी रक्षा करनेकी शक्ति है। मैं किसी भी युवा मनुष्यको या काबुलीको चुनौती देता हूँ कि वह मेरी पत्नीकी लाज लूटनेके लिए आये। मुझमें अपने प्राणोंकी आहुति देनेका साहस है और जबतक किसीमें आत्मबलिदानकी यह क्षमता हो तबतक उसे किसी भी प्रकार डरनेकी जरूरत नहीं है। आप कहेंगे, यदि कोई हमारे हाथ-पैर बाँध दे तो? हमारे ऊपर पिस्तौल तानकर खड़ा हो जाये तो? पिस्तौलधारी लोग पिस्तौल सही-सलामत होनेपर भी लुटे हैं और उनकी लाज गई है। रक्षाके लिए पिस्तौल नहीं, छाती चाहिए।[1]

१. जैसा कि मैंने समझाया क्या आप हिन्दुओं, मुसलमानों, पारसियों और ईसाइयोंकी मित्रताको धर्म समझते हैं?

२. भारतकी वर्तमान स्थितिको देखते हुए स्वराज्य प्राप्त करने और खिलाफत और पंजाबके मामलेमें न्याय प्राप्त करनेका मार्ग एक ही है और वह है शान्तिका मार्ग, जो ऐसा मानता हो वह हाथ उठाये।

३. जो भाई और बहन यह मानते हों कि स्वदेशीको अपनाये बिना भारतकी उद्देश्य सिद्धि न होगी, और जो विदेशी या कारखानोंके बने कपड़ेका त्याग करने एवं ५ फरवरीके बाद बारडोली ताल्लुकेसे बाहरकी बनी खादी न पहननेके लिए कृत-संकल्प हैं वे अपने हाथ उठायें।

४. क्या आप अस्पृश्यताको अधर्म मानते हैं और अन्त्यजोंके बालकोंको राष्ट्रीय शालाओंमें अपने बच्चोंके साथ बिठानेके लिए तैयार हैं?

५. आपकी जमीन और खेत, ढोर-डंगर और माल-मिल्कियत जब्त कर लिये जायें और आप भिखारी हो जायें तो उसकी भी परवाह न करते हुए क्या आप भारतकी लाज बचानेके लिए अक्रोधभावसे सर्वस्व गँवाने और जेल जानेके लिए तैयार हैं?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २-२-१९२२

१. यहाँ गांधीजीने सवाल पूछे जानेके लिए इन्तजार किया। फिर उन्होंने प्रतिनिधियोंकी तैयारीकी जाँच करनेके उद्देश्यसे इसके बाद दिये गये प्रश्न पूछे।

११९. बारडोलीका निर्णय

३० जनवरी, १९२२

बारडोलीने बड़ा गम्भीर और महत्त्वपूर्ण निर्णय किया है। उसने अपना रास्ता अन्तिम रूपसे चुन लिया है और अब उससे पीछे नहीं हटा जा सकता। ताल्लुकेके प्रतिनिधियोंका एक सम्मेलन हुआ था।[1] अध्यक्ष विट्ठलभाई पटेलके भाषणमें चेतावनीका स्वर बहुत स्पष्ट और प्रभावपूर्ण था। उन्होंने जो-कुछ कहा, बिना किसी दुराव-छिपावके साफ शब्दोंमें कहा। ४,००० खद्दरधारी प्रतिनिधियोंका श्रोतृसमूह वहाँ उपस्थित था। पाँच सौ स्त्रियाँ भी थीं। स्त्रियोंमें भी अधिकांशने खद्दर ही पहन रखा था। जिस विषयको लेकर सम्मेलन हुआ था, उसमें उनकी गहरी रुचि थी; और इस विशिष्ट श्रोतृसमुदायको देखकर कौतूहल पैदा होता था। सभी स्त्री-पुरुष बड़े गम्भीर और जिम्मेदार ढंगके लोग थे; सभीके मनमें एक बड़ा सवाल मौजूद था और उन्हें यह भान था कि उसके साथ उनका हिताहित जुड़ा हुआ है।

विट्ठलभाईके बाद मेरा भाषण[2] हुआ। मैंने कांग्रेस द्वारा निर्धारित सामूहिक सविनय अवज्ञाकी एक-एक शर्त लोगोंको समझाई। मैंने हर शर्तपर अलग-अलग श्रोताओंकी राय ली। हिन्दू-मुस्लिम-पारसी-ईसाई एकताके महत्त्व और अर्थको समझते थे। वे अहिंसाकी महत्ता और उसके सत्यको भी समझते थे। अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ उनके सामने स्पष्ट था; वे अस्पृश्य बालकोंको राष्ट्रीय शालाओंमें भरती करनेके लिए ही नहीं बल्कि उन्हें उनमें भरती होनेके लिए प्रेरित और प्रोत्साहित करनेको भी तैयार थे। गाँवके कुँओंसे अस्पृश्योंके पानी भरनेपर उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी। उन्हें मालूम था कि उन्हें अस्पृश्य रोगियोंकी सेवा भी उसी तरह करनी है जिस तरह वे अपने बीमार पड़ोसियोंकी सेवा करते हैं। उन्होंने स्वीकार किया कि जबतक वे मेरे बताये गये तरीकेसे अपने-आपको पवित्र और निष्कलुष नहीं बना लेते तबतक लगान-बन्दी तथा दूसरे ढंगकी सविनय अवज्ञा करनेके विशेष अधिकारका प्रयोग नहीं कर सकते। उन्हें यह भी मालूम था कि उन्हें उद्यमी बनना है और अपनी जरूरतका सूत खुद ही कातना है तथा अपनी जरूरतका खद्दर भी खुद ही बुनना है। और अन्तमें, वे अपनी चल सम्पत्ति, अपने मवेशियों और अपनी जमीनकी जब्तीको भी झेलनेको तैयार थे। वे कारावास और आवश्यकता पड़नेपर मृत्युको भी स्वीकार करनेको तैयार थे, और मनमें किसी प्रकारका क्षोभ या क्रोधका भाव लाये बिना यह सब करनेको तैयार थे।

हाँ, छुआछूतके सवालपर एक बूढ़े आदमीने अपना मतभेद प्रकट किया था। उन्होंने कहा कि सिद्धान्तके रूपमें तो आपका कहना ठीक है; पर व्यवहारमें इस

१. २९ जनवरी, १९२२ को आयोजित।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

रिवाजको एकदम तोड़ देना कठिन है। मैंने अपना आशय उन्हें खूब स्पष्ट करके समझाया; लेकिन उपस्थित जनसमुदाय तो इस विषयमें निर्णय कर ही चुका था।

इस बड़ी सभासे पहले मैं कोई पचास सच्चे कार्यकर्त्ताओंसे मिला था। इस मुलाकातके पहले विट्ठलभाई पटेल, कुछ कार्यकर्त्ताओं तथा मैंने मशविरा करके तय किया था कि ऐसा प्रस्ताव पास किया जाये कि पन्द्रह दिनोंतक निर्णय स्थगित रखा जाये, जिससे उस अवधिमें स्वदेशीकी तैयारी और भी पूरी तरह हो जाये तथा साठों राष्ट्रीय शालाओंमें अस्पृश्य बच्चोंको भरती करके अस्पृश्यता-निवारणको एक ठोस रूप दे दिया जाये। लेकिन बारडोलीके उन बहादुर और सच्चे उत्साही लोगोंने निर्णयको स्थगित करना पसन्द न किया। उन्हें विश्वास था कि पचास फी सदीसे भी अधिक हिन्दू लोग छुआछूतके सम्बन्धमें बिलकुल तैयार हैं और इस बातका भी यकीन था कि अब आगे जितनी जरूरत होगी उतना खद्दर वे स्वयं तैयार कर सकेंगे। वे तो सरकारके साथ आखिरी फैसला करनेपर तुले हुए थे। श्री विट्ठलभाई पटेलने जितने एतराज उठाये उन सबको वे अस्वीकार करते गये। सफेद दाढ़ीवाले और सर्वदा प्रसन्नमुख रहनेवाले वृद्ध अब्बास तैयबजीने उन्हें सावधान किया। लेकिन वे अपने निश्चयसे एक अंगुल भी हटना नहीं चाहते थे। फलस्वरूप नीचे लिखा प्रस्ताव[1] एकमतसे स्वीकार कर लिया गया:

> सामूहिक सविनय अवज्ञा शुरू करनेके लिए आवश्यक शर्तोंको अच्छी तरह सोच-समझ लेनेके बाद, बारडोली ताल्लुकेके निवासियोंका यह सम्मेलन निश्चय करता है कि यह ताल्लुका सामूहिक सविनय अवज्ञाके लिए तैयार है।
>
> इस सम्मेलनकी राय है कि:
>
> (क) भारतके कष्टोंको दूर करनेके लिए हिन्दुओं, मुसलमानों, पारसियों, ईसाइयों तथा भारतकी दूसरी जातियोंमें एकता स्थापित करना बिलकुल आवश्यक है।
>
> (ख) इन कष्टोंको दूर करनेके लिए अहिंसा, धैर्य और सहनशीलता ही एकमात्र उपाय है।
>
> (ग) हर एक घरमें चरखा चलाया जाना और हर व्यक्तिका दूसरे कपड़ोंको छोड़कर सिर्फ हाथकता और हाथबुना कपड़ा ही पहनना भारतकी स्वतन्त्रताके लिए अनिवार्य है।
>
> (घ) हिन्दुओं द्वारा छुआछूत पूर्णतः दूर किये बिना स्वराज्य असम्भव है।
>
> (ङ) जनताकी प्रगतिके लिए तथा स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए, तमाम चल और अचल सम्पत्तिके बलिदानके लिए, जेल जाने तथा आवश्यकता आ पड़े तो अपने प्राणोंतक को न्यौछावर कर देनेके लिए तैयार रहना परम आवश्यक है।

१. मूल प्रस्ताव गुजरातीमें था।

> यह सम्मेलन आशा करता है कि पूर्वोक्त बलिदानके लिए बारडोली ताल्लुकेको ही यह सौभाग्य सबसे पहले प्राप्त होगा और इस प्रस्तावके द्वारा यह सम्मेलन कार्य-समितिको सूचित करता है कि यदि कार्य-समिति इसके विपरीत फैसला न करे और यदि प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलनकी आयोजना न हो तो यह ताल्लुका श्री गांधी तथा इस सम्मेलनके अध्यक्षकी सम्मति और संकेतके अनुसार तुरन्त सामूहिक सविनय अवज्ञा शुरू कर देगा।
>
> यह सम्मेलन इस बातकी सिफारिश करता है कि इस ताल्लुकेके जो लोग कांग्रेस द्वारा निर्धारित सामूहिक सविनय अवज्ञाकी शर्तोंका पालन करनेको राजी और तैयार हों वे जबतक दूसरी सूचना न मिले तबतक सरकारी लगान तथा दूसरे कर अदा न करें।

कौन जानता है क्या होगा? कौन जानता है कि बारडोलीके नर-नारी, दमनके लिए सरकार जो कार्रवाइयाँ कर सकती है, उनका मुकाबला कहाँतक कर सकेंगे? यह तो केवल ईश्वर ही जानता है। उसीके नामपर इस युद्धका बीड़ा उठाया गया है। उसे इसका वारा-न्यारा कर ही देना है।

सरकार अबतक बड़े ही आदर्श ढंगसे पेश आ रही है। वह इस सम्मेलनको बन्द कर सकती थी। पर उसने ऐसा नहीं किया। वह कार्यकर्त्ताओंको भी जानती है। बहुत पहले ही वह उन्हें वहाँसे हटा सकती थी। पर उसने यह भी नहीं किया। उसने लोगोंकी कार्रवाइयोंमें दखल नहीं दिया। उसने उन्हें हर तरहकी तैयारियाँ करने दीं। सरकारके इस व्यवहारको देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। उसकी यह रीति प्रशंसनीय है। यह लेख लिखते समयतक दोनों पक्षके लोग प्राचीन शूरवीर योद्धाओंकी तरह परस्पर व्यवहार कर रहे हैं। यह तो शान्ति-युद्ध है। इसमें इससे भिन्न व्यवहार होना भी नहीं चाहिए। यदि यह युद्ध इसी रीतिसे जारी रहा तो इसका अन्त एक ही तरहसे हो सकता है। विजय उसीकी होगी जिसके पक्षमें बारडोलीके ८५,००० नर-नारी होंगे।

कार्य-समितिकी बैठक होनेवाली है और वह बारडोलीके इस निर्णयपर अपना फैसला देगी। वाइसरायको अब भी मौका है और एक और मौका भी उन्हें दिया जायेगा। जल्दबाजीका, तैयारी या विचार न करनेका, अशिष्टता और असभ्यताका इल्जाम बारडोलीके लोगोंपर लगाना किसी तरह मुमकिन नहीं।

इसलिए —

> प्रभो, मैं घोर तिमिरसे घिरा हूँ, अपनी कृपाकी ज्योति जलाओ;
> मुझे राह दिखाओ, प्रभो! मुझे ले चलो;
> रात बहुत अँधेरी है; मैं अपने घरसे दूर, बहुत दूर हूँ;
> इसलिए प्रभो! मुझे राह दिखाओ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-२-१९२२

१२०. बारडोली ताल्लुकेके पटलोंसे

बारडोली
३० जनवरी, १९२२

कल बारडोली ताल्लुकेकी परिषद्ने गम्भीर कदम उठाया है और अपने ऊपर एक बड़ी जिम्मेदारी ले ली है। हम आशा रखते हैं कि धर्म और देशके इस कार्यमें वहाँके पटेल[1] पूरा-पूरा योगदान देंगे। कुछ पटेलोंने त्यागपत्र देनेका विचार प्रकट किया है। हमें उम्मीद है कि प्रत्येक पटेल अब सरकारका नहीं, वरन् कौमका पटेल बनेगा। हम आशा करते हैं कि उनके त्यागपत्र जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी हमारे पास पहुँच जायेंगे।

सरकार अपने पापोंका प्रायश्चित्त करेगी और शुद्ध बनेगी, इस ओरसे हम अभी बिलकुल निराश नहीं हुए हैं। इसलिए त्यागपत्रोंको तुरन्त ही सरकारके पास भेजनेका हमारा इरादा नहीं है; लेकिन जब सविनय अवज्ञा आरम्भ हो जायेगी तब हम इन्हें सरकारको भेज देना चाहते हैं। इस बीच हमें अपनी तैयारी इस अन्दाजसे करनी चाहिए मानो हमें आज ही सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करना है। इसलिए प्रत्येक पटेल बिना ढील किये हमें अपना त्यागपत्र दे देगा, हम ऐसी आशा करते हैं।

मोहनदास करमचन्द गांधी
विट्ठलभाई झवेरभाई पटेल

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २-२-१९२२

१२१. भाषण: सूरतकी सार्वजनिक सभामें[2]

३१ जनवरी, १९२२

डाक्टर चोइथरामने[3] आपको बताया कि सम्भव है मुझे सरकार दस-एक दिनमें जेल भेज दे, और इस कारण आपने मुझसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। किन्तु मुझे कहना चाहिए कि मुझे इस समय जेल जानेकी बिलकुल इच्छा नहीं है। मैं तो गोली खाकर मरना चाहता हूँ, फाँसीपर चढ़ना चाहता हूँ और मेरी इच्छा है कि

१. गाँवोंके मुखियागण जो सरकारको किसानोंसे लगान वसूल करनेमें सहायता देते थे।

२. भाषण जिस मानसिक परिस्थितिमें दिया गया था उसकी जानकारीके लिए देखिए "मेरा सूरतका भाषण", ५-२-१९२२।

३. डाक्टर चोइथराम गिडवानी; सिन्धके कांग्रेसी नेता; सिन्ध प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष और बादमें संसदके सदस्य।

वहुत-से गुजराती भी ऐसा ही चाहें। मैं कुछ दिनोंसे ईश्वरसे यही प्रार्थना कर रहा हूँ कि हे ईश्वर! तू मुझे इस सरकारके हाथसे मौत देना।

भारतके लोग देशके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें जो कष्ट भोग रहे हैं मेरे लिए उनको सुनना और सहन करना कठिन हो गया है। किसीका माल-असवाव लूटा जाता है तो किसीको वेंत लगाये जाते हैं। सरकार लाठियाँ चलाकर सभाओंको भंग कर रही है। यह सव कैसे सहन किया जा सकता है? इन सव अत्याचारोंको रोकनेका उपाय जेल जाना नहीं है। इनको रोकनेका उपाय तो जलियाँवाला वागकी तरह गोलियाँ खाकर मरना है। और मैं यह चाहता हूँ कि यदि सरकारके ये सव उपद्रव तुरन्त वन्द न हों तो हम गुजरातमें कुछ जगह जलियाँवाला वागकी पुनरावृत्ति करें।

किन्तु इन दोनोंमें एक वड़ा भेद होना चाहिए। लोग जलियाँवाला वागमें तो सैर करने गये थे। उनको यह खयाल भी न था कि वहाँ उन्हें गोलियाँ खानी पड़ेंगी। उनकी इच्छा गोलियाँ खानेकी नहीं थी। यदि उन्हें यह पता होता कि उन्हें गोलियाँ खानी पड़ेंगी तो कदाचित् वहाँ कोई जाता ही नहीं। किन्तु अपने सम्वन्धमें तो मैं यह चाहता हूँ कि हम लोग इच्छापूर्वक गोली खायें। भले ही कोई जनरल डायर अपने सिपाहियोंको लेकर हमारे सामने खड़ा हो जाये और चेतावनी दिये वगैर ही हमारे ऊपर गोली चलाना शुरू कर दे तो भी हम परवाह न करें। ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि जिस समय ऐसा हो उस समय भी मैं इसी तरह प्रफुल्लित मनसे वोल रहा होऊँ और आप लोग भी जैसे इस समय शान्त होकर वैठे हैं, गोलियोंकी वर्षाके समय भी वैसे ही शान्त होकर वैठे रह सकें। उस समय आपके कान मेरी तरफ हों और आपकी पीठ मेरी तरफ हो, किन्तु आपकी छाती और आपकी आँखें गोलियोंकी तरफ हों और आप उन गोलियोंका स्वागत करते हों। गुजरातके लोगोंके लिए ऐसी इच्छा करना ही योग्य है। गुजरातने वातें वहुत की हैं, प्रस्ताव भी वहुत स्वीकार किये हैं; किन्तु जिस समय समस्त भारत कष्ट सहन कर रहा है उस समय हम तो कोई भी कष्ट सहन नहीं कर रहे हैं। मैं जानता हूँ इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपने कर्त्तव्योंका पालन करनेमें दूसरोंसे पीछे रह गये हैं। हम जेलमें इसलिए नहीं हैं कि हमें वम्वई सरकार जेलमें ले नहीं जाती। मुझे आशा है कि इस स्थितिका अर्थ यह है कि हमारे भाग्यमें केवल जेल जाना नहीं है, वल्कि गोलियाँ खाना है।

यदि हमारे मनमें इस तरहकी इच्छा सदा न रहती हो तो हमारे मिथ्याभिमानी हो जानेका भय है। इसके अतिरिक्त इस तरहकी इच्छा होनेके साथ-साथ हमारी पवित्रता भी दिन-प्रतिदिन वढ़नी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंके मनमें एक-दूसरेके प्रति जो द्वेष है वह दूर होना चाहिए। अभी तो हम एक-दूसरेसे डरते हैं, एक-दूसरेका अविश्वास करते हैं। अभी पारसियों और ईसाइयोंको हिन्दुओं और मुसलमानोंका डर है। यद्यपि सूरतके लोगोंने वहुत कार्य किया है तथापि अभी उन्हें वहुत-कुछ करना है। अभी तो सूरतकी स्त्रियों और पुरुषोंको सुख-चैन चाहिए। उन्हें चरखा चलानेमें आलस्य लगता है। अभी उन्हें रेशमी और वारीक विदेशी अथवा देशी कारखानोंके कपड़ोंसे वहुत मोह है। यदि कोई खादीका कुर्ता और टोपी पहननेके लिए तैयार है

तो उसे खादीकी धोती भारी लगती है। यद्यपि अस्पृश्योंके प्रति हमारा तिरस्कारका भाव कम होता जा रहा है, फिर भी हम उन्हें सगे भाईकी तरह गले लगानेके लिए तैयार नहीं हैं। यदि उनमें से किसीको साँप काट ले तो हममें से कितने ही लोग प्रेमपूर्वक उसका विष चूसनेके लिए तैयार नहीं हैं। यदि उनको ज्वर आये तो जैसे हम अपने भाई-बहन और माँ-बापकी सेवा करते हैं वैसे उनकी सेवा करनेके लिए हममें से कितने लोग तैयार हैं?

हम सरकारको गाली क्यों दें? यदि हमें गाली देनी हो तो अपने-आपको ही देनी चाहिए, क्योंकि बहुत-सी ठोकरें खानेपर भी हम अभीतक होशमें नहीं आये हैं, हमने अभीतक पूरी आत्मशुद्धि नहीं की है, पूरा स्वार्थ-त्याग नहीं किया है और पूरा त्यागभाव नहीं दिखाया है। मुझे बहुत बार लगता है कि जबतक हम सामूहिक रूपसे मरनेका साहस नहीं दिखाते तबतक हमारे भीतरका अनेक प्रकारका दुर्भाव और भय दूर न हो सकेगा। अभी हमारे ऊपर पूरे कष्ट नहीं आये हैं, इसलिए मैं अपने लिए और गुजरातके लिए ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि वह हमारे ऊपर अन्य प्रान्तोंके लोगोंके कष्टोंसे अधिक बड़े कष्ट डाले। इन कष्टोंके अन्तमें जो नवीन भारत पैदा होगा वह रहने लायक होगा। ऐसा साहस दिखाकर ही हम उन घावोंको, जो हमारे मुसलमान भाइयोंके दिलोंमें हो गये हैं, भर सकेंगे और पंजाबके मामलेमें न्याय प्राप्त कर सकेंगे। स्वराज्य प्राप्त करनेका मार्ग भी यही है।

इसलिए यदि सरकार मुझे पकड़ ले तो कोई परवाह नहीं। उससे हमारे मनमें दुःख नहीं होगा। उससे हम अशान्त नहीं होंगे। उससे हम पागल नहीं बनेंगे। मैं तो आशा करता हूँ कि जब ऐसा होगा तभी हमारी शेष कमजोरियाँ भी दूर हो जायेंगी। तब स्वयंसेवकोंकी पंजिकाएँ आप भाइयों और बहनोंके नामोंसे भर जायेंगी। तब आप सभी लोग हाथ-कते सूतकी और हाथसे बुनी खादी पहनने लग जायेंगे और बिलकुल निर्भय बन जायेंगे।

सूरतकी नगरपालिकाने बहुत हिम्मत दिखाई है। शहरके लोगोंका कर्त्तव्य है कि वे अपने प्रतिनिधियोंका पूरा-पूरा साथ दें। आपने शिक्षाको [सरकारके] नियन्त्रणसे मुक्त कर लिया, इतना काफी नहीं है। आप पूरी नगरपालिकाको उसके प्रभावसे मुक्त करें। इसमें तो जेल जानेका भी कोई भय नहीं है। इसके लिए तो एकमात्र युक्तिकी, आत्मविश्वासकी और एक-दूसरेके प्रति विश्वासकी जरूरत है। हम अपने पाखाने और अपने रास्ते साफ रखें। जो लोग गरीब हैं हम उनकी सार-सँभाल करें, जो लोग रोगी हैं उनकी सेवा करें, उनके लिए आवश्यक धन इकट्ठा करें और उसके खर्चका सही-सही हिसाब रखें।

इस कामको करनेके लिए सरकारकी अथवा सरकारके कानून-कायदोंकी क्या जरूरत हो सकती है? दुर्भाग्यसे हमारा आत्मविश्वास चला गया था। हमारी पंचायत अप्रामाणिक हो गई थीं। लोग भी उद्दण्ड हो गये थे। ऐसी स्थितिका लाभ सरकारको मिला। सूरतके लोग स्वेच्छासे तय किया हुआ कर पंचायतको दें और पंचायत उसके खर्चका पूरा हिसाब ईमानदारीसे रखे। वह संचित रुपयेका उपयोग मेरे बताये हुए कामोंमें करे तो वह पंचायत आपकी स्वतन्त्र नगरपालिका होगी। पंचायतका भ्रष्ट

रूप आजकी नगरपालिका है। सरकारी नगरपालिकाका अर्थ है स्वाधीनताको बेचकर पराधीनता मोल लेना।

मुझे आशा है कि सूरतके लोग अपने निश्चयपर अटल रहेंगे और उन्होंने अबतक जितना कार्य किया है उससे अधिक कार्य करके सूरत, गुजरात और भारतको गौरवान्वित करेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-२-१९२२

१२२. पत्र : मु० रा० जयकरको[1]

मंगलवार रात्रि [३१ जनवरी, १९२२][2]

प्रिय श्री जयकर,

इसके साथ ही आप वाइसरायके नाम मेरे पत्रकी[3] प्रति देखेंगे। यह मैं उनको कल भेज रहा हूँ। मैं इसका प्रकाशन ४ तारीखतक रोक रहा हूँ। यह आपकी अपेक्षाओंके भी अनुकूल पड़ेगा। मैं समझता हूँ कि मैं इससे अधिक कुछ नहीं कर सकता।

आशा है आपको इस पत्रमें कोई चीज आपत्तिजनक नहीं लगेगी। वाइसराय जितना कुछ चाहते हों उससे कुछ अधिकको ही गुंजाइश इसमें है। उनको गोलमेज सम्मेलन बुलानेकी जरूरत नहीं रह जायेगी। मैं इस सम्बन्धमें जितना ही सोचता हूँ उतना ही यह स्पष्ट लगता है कि वे सम्मेलन नहीं बुला सकते; लेकिन हाँ, मेरा सुझाव यदि वे चाहें तो आसानीसे स्वीकार कर सकते हैं।

मैं इसकी एक प्रति मालवीयजीको भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १०-२-१९२२

१२३. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्को

[१ फरवरी, १९२२ के पूर्व][1]

प्रिय सुन्दरम्,

तुम्हारे साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है। मैं कोई कठोर शब्द लिखकर या किसी सहानुभूतिपूर्ण शब्दको न लिखनेकी कठोरता बरतकर तुम्हारा हृदय दुखाना नहीं चाहता मेरी यही कामना है कि मौनका सप्ताह तुम्हारे लिए शान्ति और सुविधाका सप्ताह हो। इस सप्ताहमें बाके काममें हाथ बँटानेकी बात मत सोचो। चरखेका उपयोग करो। वही सच्चा साथी है। हिन्दीका अध्ययन करो और गहराईसे मनन करो। जो मनमें आये वही लिखो। फिलहाल बहुत ज्यादा मत पढ़ो।

बापू

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३२०१)की फोटो-नकलसे।

१२४. पत्र : वाइसरायको[2]

[बारडोली
१ फरवरी, १९२२][3]

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसराय
दिल्ली

महोदय,

बारडोली बम्बई अहातेकी सूरत जिला-स्थित एक छोटी-सी तहसील है। उसकी कुल आबादी लगभग ८७,००० है।

गत मासकी २९ तारीखको यह निर्णय किया गया कि चूँकि पिछले नवम्बर महीनेके प्रथम सप्ताहमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अपनी दिल्लीकी बैठकमें पास

१. इस पत्रमें मौन रखनेका जो उल्लेख आया है वह शायद पहला ही अवसर था जब सुन्दरम्ने एक सप्ताहका मौन रखा था और जो १ फरवरी, १९२२ को या उसके पूर्व समाप्त हुआ था, क्योंकि पहली फरवरीको उन्होंने दूसरी बार मौन शुरू कर दिया था; देखिए "पत्र : वी० ए० सुन्दरम्को", १-२-१९२२।

२. यह ४ फरवरी, १९२२ को अखबारोंमें प्रकाशित हुआ था। सरकारके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट २।

३. **इंडिया इन १९२१-२२ से।**

किये गये प्रस्तावमें जो शर्तें[1] रखी थीं, उनका पालन करनेकी योग्यता बारडोलीने सिद्ध कर दी है, इसलिए वहाँ सामूहिक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ की जाये। यह निर्णय श्री विट्ठलभाई पटेलकी अध्यक्षतामें हुए एक सम्मेलनमें किया गया। किन्तु इस निर्णयके लिए मुख्य रूपसे कदाचित् मैं ही जिम्मेदार हूँ। इसलिए परमश्रेष्ठ तथा जनताके सामने यह स्पष्ट कर देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि किन परिस्थितियोंमें यह निर्णय किया गया है।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके इस प्रस्तावके अधीन ऐसा सोचा गया था कि बारडोलीको सविनय अवज्ञाकी प्रथम इकाई बनाकर सरकारके खिलाफ राष्ट्रीय विद्रोहका शंख फूंका जाये — यह विद्रोह इसलिए कि खिलाफत, पंजाब तथा स्वराज्यके सम्बन्धमें सरकारका रवैया अपराधपूर्ण रहा है और वह इन सवालोंपर भारतीयोंके संकल्पकी निरन्तर अवहेलना करती रही है।

किन्तु उसके बाद ही १७ नवम्बरको बम्बईमें वे दुर्भाग्यपूर्ण और खेदजनक दंगे हो गये, जिनका परिणाम यह हुआ कि बारडोली जो कदम उठानेकी सोच रहा था, उसे उस समय रोक रखना पड़ा।

इस बीच भारत सरकारकी सहमतिसे बंगाल, असम, संयुक्त-प्रान्त, पंजाब, दिल्ली तथा एक तरहसे बिहार और उड़ीसामें भी भयंकर दमन-कार्य किये गये हैं। मैं जानता हूँ कि इन प्रान्तोंके सत्ताधारियोंकी कार्रवाइयोंको "दमन"की संज्ञा देने पर आपने आपत्ति की है। लेकिन मैं मानता हूँ कि परिस्थिति-विशेषसे निबटनेके लिए जितनी कड़ी कार्रवाई अपेक्षित हो, उससे अधिक कार्रवाई करना, बेशक, दमन ही है। लोगोंकी धन-सम्पत्ति लूटना, निर्दोषों और निरीहोंको मारना-पीटना, जेलोंमें कैदियोंके साथ क्रूर व्यवहार करना, उन्हें कोड़े लगाना — इस सबको वैध और सभ्य कार्रवाई तो नहीं कहा जा सकता, और न किसी भी तरह इसे आवश्यक ही माना जा सकता है। माना कि हड़तालों और धरना देनेके सिलसिलेमें असहयोगियों या उनके समर्थकोंने किसी हदतक डराने-धमकानेके तरीकेका सहारा लिया; किन्तु क्या इतनी-सी बातपर एक असाधारण कानूनका अनुचित प्रयोग करके स्वयंसेवकोंके शान्तिपूर्ण कार्यों और शान्तिपूर्ण सभाओंपर रोक लगा देना उचित है? उस असाधारण कानूनकी रचना तो ऐसी प्रवृत्तियोंका सामना करनेके लिए की गई थी जो अपने उद्देश्यकी दृष्टिसे तथा वस्तुतः भी स्पष्ट रूपसे हिंसात्मक हों। और फिर निर्दोषों तथा निरीहोंके खिलाफ साधारण कानूनके अधीन जो कार्रवाई की गई है, उसे भी दमनके अलावा और किसी नामसे नहीं पुकारा जा सकता। हममें से बहुत-से लोगोंको ऐसा लगा है कि इन मामलोंमें साधारण कानूनका अवैध उपयोग किया गया है। इसी तरह जिस कानूनको रद करनेका वादा किया जा चुका है, उसके अधीन प्रशासनिक तौरपर अखबारोंकी स्वतन्त्रतापर हाथ डालना भी दमनके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

आज हमारी वाणीकी स्वतन्त्रता, सभा-संगठनकी स्वतन्त्रता और अखबारोंकी स्वतन्त्रताका गला घोंटा जा रहा है; इसलिए अभी देशके सामने सबसे आवश्यक

१. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४३२-३५।

कर्त्तव्य इनकी रक्षा करना ही है। इन्हीं परिस्थितियोंमें परमश्रेष्ठको गोलमेज परिषद् बुलानेके लिए प्रेरित करनेके उद्देश्यसे मालवीय सम्मेलनका आयोजन हुआ। असहयोगी लोग उस सम्मेलनसे कोई सरोकार नहीं रखना चाहते थे; क्योंकि एक ओर तो सरकारके वर्तमान रुखको देखते हुए उन्हें कोई आशा नहीं थी और दूसरी ओर वे यह देख रहे थे कि हिंसात्मक तत्त्वोंपर पूरी तरह नियन्त्रण रखनेकी दृष्टिसे देश अभी तैयार नहीं है। लेकिन मैं इस बातके लिए बहुत उत्सुक था कि संघर्ष छिड़नेपर जनताको जो कष्ट झेलना पड़ेगा, उसे जहाँतक टालना सम्भव हो, टाला जाये। सो मैंने कार्य-समितिको बेहिचक यह सलाह दी कि परिषद्की सिफारिशें स्वीकार कर ली जायें।[1] आपके कलकत्तेके भाषण और कुछ दूसरे सूत्रोंसे मैंने अनुमान लगाया था कि गोलमेज परिषद् बुलानेके लिए आप किन बातोंकी अपेक्षा रखते हैं; और मालवीय सम्मेलनकी शर्तें मुझे आपकी अपेक्षाओंके सर्वथा अनुरूप लगीं। फिर भी आपने प्रस्तावपर तनिक भी विचार किये बिना उसे अस्वीकार कर दिया।

इन परिस्थितियोंमें, देशके सामने इसके अलावा और कोई चारा नहीं रह गया है कि अपनी माँगोंको, जिनमें वाणी, सभा-संगठन और अखबारोंकी स्वतन्त्रता भी शामिल है, स्वीकार करानेके लिए वह कोई अहिंसात्मक तरीका अपनाकर संघर्ष छेड़ दे। मेरी नम्र सम्मतिमें, हालकी घटनाएँ इस बातकी द्योतक हैं कि अली-बन्धुओंकी उदात्त, पुरुषोचित तथा बिना शर्त क्षमा-याचनाके[2] समय परमश्रेष्ठने जो सभ्य नीति निर्धारित की थी, उसका परित्याग कर दिया गया है। लगता है, अब यह नीति छोड़ दी गई है कि जबतक असहयोग आन्दोलन वाणी और कर्मसे अहिंसात्मक तरीकेसे चलाया जा रहा है, तबतक भारत सरकारको उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यदि सरकार तटस्थताकी नीति बरतती रहती और लोकमतको परिपक्व होकर प्रभावकारी रूप ग्रहण करने देती तो आज लोगोंको ऐसी सलाह दी जा सकती थी कि जबतक कांग्रेस देशके हिंसात्मक तत्त्वोंपर पूरा नियन्त्रण नहीं पा लेती और अपने करोड़ों अनुयायियोंको और भी अनुशासनबद्ध नहीं कर देती तबतक आक्रामक सविनय अवज्ञा न छेड़ी जाये। किन्तु इस अवैध दमन-कार्य (जिसका इस अभागे देशमें एक तरहसे कोई दूसरा उदाहरण नहीं मिलता) के कारण सामूहिक सविनय अवज्ञा तत्काल प्रारम्भ कर देना एक आवश्यक कर्त्तव्य हो गया है। कांग्रेसकी कार्य-समितिने तय किया है कि यह आन्दोलन समय-समयपर चुने जानेवाले कुछ विशेष क्षेत्रोंमें ही किया जाये, और फिलहाल तो सिर्फ बारडोलीमें ही करनेका निश्चय किया गया है। वैसे मैं चाहूँ तो, मुझे जो अधिकार दिया गया है उसके अधीन, मद्रास अहातेके गुण्टूर जिलेके सौ गाँवोंके एक समूहमें तत्काल सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेकी अनुमति दे सकता हूँ, बशर्ते कि वहाँके लोग उसके लिए आवश्यक शर्तोंका कड़ाईसे पालन कर सकते हों। वे शर्तें हैं अहिंसा, विभिन्न वर्गों एवं जातियोंके बीच एकता, हाथकते सूतसे खादी तैयार करना और उसीका उपयोग करना तथा अस्पृश्यताका निवारण।

१. देखिए "कार्य-समितिका प्रस्ताव", १७-१-१९२२।
२. देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ९२।

लेकिन भारत सरकारके प्रधानके रूपमें आपसे मैं विनयपूर्वक अनुरोध करता हूँ कि बारडोलीकी जनता द्वारा वस्तुतः सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेसे पूर्व आप इस नीतिपर एक बार अन्तिम रूपसे विचार करें और ऐसे सभी असहयोगी कैदियोंको छोड़ दें जिन्हें अहिंसक गति-विधियोंके कारण ही या तो सजा दी जा चुकी है, या जिनपर मुकदमे चल रहे हैं। साथ ही आपसे यह अनुरोध भी है कि वर्तमान नीतिके स्थानपर स्पष्ट शब्दोंमें एक नई नीतिकी घोषणा करें। वह नई नीति यह हो कि खिलाफत, पंजाब अथवा स्वराज्यके प्रश्नपर या किसी अन्य उद्देश्यसे देशमें जो भी अहिंसक हलचलें होंगी, उनमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा। ये हलचलें यदि दण्ड संहिता अथवा दण्ड प्रक्रिया संहिताके दमनात्मक दण्डोंके अन्तर्गत आयेंगी तब भी उनमें कोई दखल नहीं दिया जायेगा, बशर्ते कि वे पूर्ण रूपसे अहिंसात्मक हों। एक अनुरोध यह भी है कि अखबारोंको समस्त प्रशासनिक नियन्त्रणसे मुक्त कर दें, और उनपर हालमें जो भी जुर्माने किये गये हों और उनकी जो भी जमानतें जब्त की गई हों, सब वापस दे दें। परमश्रेष्ठसे मैं कोई असाधारण काम करनेका अनुरोध नहीं कर रहा हूँ; यह सब आज सभ्य सरकार द्वारा शासित समझे जानेवाले हर देशमें हो रहा है। यदि इस ज्ञापन-पत्रके प्रकाशनके सात दिनोंके अन्दर आप आवश्यक घोषणा कर सकें, तो मैं लोगोंको ऐसी सलाह देनेको तैयार हूँ कि जबतक कैदी कार्यकर्ता अपनी रिहाईके बाद सम्पूर्ण परिस्थितिपर विचार न कर लें और स्थितिको नये सिरेसे देख-परख न लें तबतक आक्रामक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ न की जाये। यदि सरकार यह घोषणा कर देती है तो मैं मानूंगा कि वह सचमुच लोकमतका आदर करना चाहती है; और उस हालतमें मैं देशको निस्संकोच भावसे ऐसी सलाह दूंगा कि वह लोकमतको और भी तैयार करे और भरोसा रखे कि उसकी बदौलत देशकी वे माँगें पूरी हो जायेंगी, जिनमें किसी तरहका परिवर्तन नहीं किया जा सकता। यदि यह सब हो जाये तो आक्रामक सविनय अवज्ञा फिर तभी की जायेगी, जब सरकार अपनी कठोर अ-हस्तक्षेपकी नीतिका परित्याग कर देगी या भारतकी जनताका जबरदस्त बहुमत जो-कुछ चाहता हो उसे स्वीकार न करेगी।

आपका विश्वस्त सेवक और मित्र,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-२-१९२२

१२५. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्‌को

बारडोली
१ फरवरी [१९२२][1]

मेरे प्यारे सुन्दरम्,

बड़ी खुशीकी बात है कि मौन रखना तुमको अनुकूल पड़ा और अब तुम फिरसे मौन शुरू कर रहे हो।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३१९०) की फोटो-नकलसे।

१२६. टिप्पणियाँ

बड़े भाईका पत्र

मौलाना शौकत अली द्वारा अपने पुत्रको लिखा निम्नलिखित पत्र[2] पाठकोंको अच्छा लगेगा :

मैं नहीं समझता कि मुझे इस पत्रमें अतिरिक्त हिदायतोंके रूपमें कुछ और जोड़ना है। इसमें हिदायतें तो दी ही गई हैं, इसके अलावा एक और भी उद्देश्य इससे सिद्ध

१. देखिए "पत्र : वी० ए० सुन्दरम्‌को", १-२-१९२२ के पूर्व, और ३-२-१९२२ ।

२. पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है । मौलाना साहबने यह पत्र कराची जेलसे लिखा था और इसमें वहाँकी अवस्थाका वर्णन करते हुए बताया था कि जो बातें अपमानजनक हैं, उनका विरोध करनेके लिए वे कृतसंकल्प हैं । जेल जानेवाले कार्यकर्ताओंको उन्होंने निम्नलिखित हिदायतें दे देनेका सुझाव दिया था :

(१) उन्हें सबके प्रति शिष्टतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए; और उनके साथी कैदी तथा घृणित कार्य करनेके लिए मजबूर किये जानेवाले कमजोर और असहाय हिन्दुस्तानी वार्डर तो ऐसे व्यवहारके विशेष पात्र हैं । हमें उनको इस अधोगतिसे ऊपर उठाना है, उनके भीतर सच्चा साहस भरना है और उन्हें देशभक्ति तथा अनुशासनकी शिक्षा देनी है । इसके साथ-साथ हमें अपने-आपपर और अपनी कष्ट-सहनकी क्षमतापर पूरा भरोसा होना चाहिए ।

(२) हमें स्वच्छ भोजन, स्वच्छ वस्त्र और साफ-सुथरे बिस्तरकी माँग अवश्य करनी चाहिए। लेकिन मेरे विचारसे यह बात बहुत कम महत्त्वकी है । अधिक महत्त्वकी बातें आगे बता रहा हूँ ।

(३) अपने स्वास्थ्यको हानि पहुँचाये बिना हम जितना काम कर सकते हैं, उतना हमें अवश्य करना चाहिए। यदि हमसे अपनी शक्ति और परिस्थितियोंसे अधिक काम करनेको कहा जाये तो हम जवाबमें

होता है। अली-बन्धुओंके रुखके बारेमें सभी सन्देह इससे दूर हो जाते हैं। मैं जानता हूँ कि उन्हें फुसलाया नहीं जा सकता। उनका रवैया बहुत ही उचित है, पर ईश्वरको धन्यवाद है कि वे दृढ़ भी हैं। अपनी कमजोरीके कारण वे इंच-भर भी झुकेंगे नहीं। पर वे हर युक्तिसंगत चीजके लिए तैयार हो जायेंगे। खुदाका डर होनेसे वे अपने विपक्षियोंकी वास्तविक कठिनाइयोंको भी अच्छी तरह समझ सकते हैं। यदि विपक्षी पूर्णतया सच्चे हों और सही बात करने व गलतीको मान लेनेके लिए तैयार रहें तो किसी भी विपक्षीको उनसे डरने या उनपर अविश्वास करनेकी जरूरत नहीं है। लेकिन यह सोचना कि अली-बन्धुओंकी तसल्ली किये बिना मुसलमानोंकी तसल्ली की जा सकती है, भारतमें इस्लामकी उपेक्षाका प्रयास होगा।

मेरठमें आतंक

जिला खिलाफत समितिके मन्त्री, काजी बशीरुद्दीन अहमद लिखते हैं:[1]

इसे तथा इससे अगले पत्रको उद्धृत करते हुए मुझे हार्दिक दुःख हो रहा है। यह देखकर कि मानव-स्वभाव इतना नीचे गिर सकता है, मुझे अपमान और लज्जाका अनुभव हो रहा है। पत्र भेजनेवालों के बयानोंकी सचाईपर शक करनेका तो कोई कारण ही नहीं है।

इन तमाम बहादुर साथियोंको मेरी यही सलाह है कि अहिंसाकी अपनी प्रतिज्ञापर दृढ़ रहो; अत्याचारियोंको क्षमा करते रहो। जाहिर है कि वे पागल हैं। वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं। गालियोंकी परवाह मत करो। जो गालियाँ देता है, वे उसीको दूषित करती हैं। जो सुनना नहीं चाहता उसका वे कुछ नहीं बिगाड़तीं। मारपीटसे तो हमारे जिस्मको चोट लगती है, लेकिन यदि हम उन्हें बिना क्रोधके बहादुरीसे झेल सकें तो गालियोंसे हमें लाभ ही होगा। पुलिसका कानूनके खिलाफ यह पौरुषविहीन आचरण इस प्रणालीकी भ्रष्टताका एक और उदाहरण है। इस प्रणालीके अन्तर्गत बर्बरताका पोषण किया गया है और मानव-स्वभावको पतनके गर्तमें ढकेल

काम करनेसे इनकार कर सकते हैं, और हमारे हाथमें यही एकमात्र हथियार है। . . . हमें जेलसे बाहर और जेलके भीतर भी इस सरकारको यह एहसास करा देना चाहिए कि वह हमें अपनी इच्छाके विरुद्ध कोई काम करनेके लिए किसी भी तरह मजबूर नहीं कर सकती। . . . जेलोंमें कुछ बहुत ही अपमानजनक रीति-रिवाज जारी हैं। हमें उनका पालन करनेसे इनकार कर देना चाहिए। वे रीति-रिवाज इस प्रकार हैं:

(क) हर रोज हमारे तमाम कपड़े उतार लिये जाते हैं और हमें मामूली-सा अँगोछा पहनकर यह दिखाना पड़ता है कि अपनी रानोंके बीच हमने कुछ छिपा नहीं रखा है।

(ख) जेल-परेडके समय लोगोंसे ऐसे काम कराये जाते हैं जो आत्मसम्मानका हनन करनेवाले होते हैं और अनुशासनके नामपर वस्तुतः अपमान ही होते हैं।

(ग) शौच करते समय आसपास कई लोग रहते हैं और एक वार्डर कैदीपर निगाह रखता है।

(घ) हमें दोनों वक्त नमाज पढ़ते समय खुले आम अजान देनी चाहिए। . . .

1. इसका पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें मेरठके मजिस्ट्रेट [illegible] और पुलिसके अमानुषिक अत्याचारका वर्णन किया गया था।

दिया गया है। और यह सब सिर्फ इसलिए किया गया है कि इस गरीब देशका — जिसके बारेमें मेरी इच्छा ऐसा माननेकी होती है कि वह किसी समय मानव-शक्ति तथा धन-धान्यसे भरा-पूरा था — शोषण करने और इसकी सम्पत्ति लूटकर अपना घर भरनेपर कटिवद्ध एक अल्पसंख्यक समुदायके व्यापारिक हितोंके लिए वलात् छीनी गई सत्ताको कायम रखा जाये।

वनारसमें बर्बरता

यहाँ मैं एक तारका सार दे रहा हूँ, जो वनारससे भेजा जानेवाला था, पर जिसे तारघरने आपत्तिजनक वताकर लौटा दिया:

> **अधिकारी लोगोंको पीटते हैं और आधी रातको जाड़ेमें उन्हें नंगा घर भेज देते हैं। स्वयंसेवक लड़कोंको गन्दी गालियाँ दी जाती हैं और उनके साथ गन्दे मजाक किये जाते हैं। देशभक्तोंको सम्मेलन या समझौतेकी वात करनेसे पहले इस दिशामें राहत दिलानी चाहिए।**

जब बराबर इस प्रकारका अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा हो तब सम्मेलनों और समझौतोंकी वात सोचनेके लिए 'देशभक्तों' को जो कड़ी फटकार वताई गई है, पाठकोंका ध्यान उसपर जरूर जायेगा। तारमें जो तथ्य संक्षेपमें रखे गये हैं, उनका विस्तृत विवरण उसके साथके पत्रमें दिया गया है। परन्तु मैं अभी उन्हें यहाँ देनेके लिए स्वतन्त्र नहीं हूँ। इस तारके प्रेषक प्रोफेसर कृपलानी खुद जेलमें ऐसे कदम उठा रहे हैं जिनसे तारमें वर्णित अपमानजनक अमानुषिकताओंकी समाप्ति सम्भव है।

जो लोग जेलसे वाहर हैं, उन्हें क्या करना चाहिए यह विलकुल स्पष्ट है। क्षुब्ध और उत्तेजित होनेसे हमें कोई लाभ नहीं होगा। हमें समस्याकी गम्भीरताको समझना चाहिए। गन्दगी जितनी ज्यादा हो, आत्मशुद्धि और आत्मत्यागकी आवश्यकता उतनी ही अधिक होती है। पुलिसको वुरा-भला कहनेसे हमें कोई लाभ नहीं हो सकता। पुलिसवाले परिस्थितियोंकी उपज हैं। उनके प्रशिक्षणसे उनका सहज स्वभाव सुधरा नहीं है, वह शायद विगड़ा ही है।

पहली ही वार उनका वास्ता अपने ऐसे देशवासियोंसे पड़ रहा है जो सुसंस्कृत हैं और उच्च उद्देश्य रखते हैं। हमें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि पुलिसमें एकाएक परिवर्तन आ जायेगा। यदि हम उनके साथ धैर्य और नम्रताका व्यवहार करेंगे तो वे भी शिष्ट मनुष्य वन जायेंगे और हमारे दुःख-दर्दको समझने लगेंगे। जिस दिन हमारे सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति जेलकी दीवारोंके अन्दर पहुँचे, मेरे लिए तो स्वराज्य उसी दिन आरम्भ हो गया। तबसे निरन्तर शक्तिकी अभिवृद्धि और सुधारका क्रम चल रहा है। सुधार झगड़ेके निवटारेके वाद शुरू नहीं होना है, वल्कि निवटारा वास्तविक और उत्तरोत्तर वढ़ते हुए सुधारका फल होगा। और पुलिसकी क्रूरताके लिए क्या हम स्वयं भी दोपी नहीं हैं? क्या हम वहुत कालतक उनकी उपेक्षा नहीं करते रहे हैं, वहुत कालतक उनसे डरते नहीं रहे हैं, उनका वुरा नहीं चाहते रहे हैं और यह नहीं मानते रहे हैं कि अव उनका उद्धार सम्भव नहीं है? यदि हमारी यही मनोवृत्ति रही तो

हम बहुत-से समुदायोंके बारेमें मान बैठेंगे कि उनमें किसी प्रकारके सुधारकी आशा नहीं रखनी चाहिए और तब अन्तमें हम केवल मुट्ठी-भर लोग ही पूर्णताके प्रतिरूप और श्रेष्ठताके आदर्श रह जायेंगे। दूसरे शब्दोंमें, यदि हम सिर्फ अपनेको ही गुणी व्यक्ति मानेंगे तो अन्तमें स्वराज्यसे वंचित रह जायेंगे। इसलिए हमें पुलिसके दुर्गुणों और अपनी आम परिस्थितियोंकी दुर्बलताके लिए कुछ दोष अपने ऊपर भी लेना चाहिए। किन्तु हमारा धैर्य केवल तभी सही सिद्ध होगा जब हम सहूलियत और आरामसे प्यार करनेकी बजाय दर्द और कष्टसे प्यार करें। यदि हम इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए अपनी-अपनी लघु भूमिका अच्छेसे-अच्छे ढंगसे अदा करते जायें तो, दिन-प्रतिदिन मिल रहे भयानक समाचारोंके बावजूद, हम प्रसन्न रह सकते हैं। फल तो हमें हर हालतमें ईश्वरपर ही छोड़ देना चाहिए।

पंजाबका योगदान

निष्पक्ष पंजाब सरकारने जालन्धरको भी, जो पीछे छूट गया लगता था, अपनेको सम्मानित करनेका अवसर प्रदान किया है। वहाँके प्रमुख कार्यकर्त्ता लाला हंसराज गिरफ्तार कर लिये गये हैं। वे बैरिस्टर हैं और एक पुराने प्रतिष्ठित परिवारके हैं, जो सरकारकी बहुत सेवा कर चुका है। लाला हंसराजका अपराध यह था कि उन्होंने, अम्बालाके लाला दुनीचन्दकी तरह, शराबके ठेकेकी नीलामीपर खुद धरना देनेकी हिम्मत की थी। किसी बैरिस्टर द्वारा वकालतकी जगह नैतिक सुधारका काम अपनानेको कोई भी व्यक्ति एक अच्छाई ही मानेगा। परन्तु भारतमें सरकार ऐसी बातोंको किसी और ही दृष्टिसे देखती है। लेकिन जेल-जीवनसे लाला हंसराजका कोई नुकसान नहीं होगा। उनके कृतज्ञ देशवासी एक सफल बैरिस्टरके रूपमें उनकी सेवाओंको जितना मूल्यवान समझते थे, एक राष्ट्रीय बन्दीके रूपमें उन्हें उससे कहीं अधिक मूल्यवान समझेंगे।

लाला दुनीचन्द अपने पुत्रके पास एक पत्र मुझे भेजनेके लिए छोड़ गये हैं। उससे मैं निम्नलिखित अंश यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ।[1]

श्रीमती दुनीचन्दने एक छोटेसे पत्रमें बताया है कि यद्यपि उनके पतिका शरीर दुर्बल है, फिर भी वे उन्हें विदा करके बहुत प्रसन्न हैं, क्योंकि वे जानती हैं कि वे जनताकी सेवा कर रहे हैं।

धार्मिक स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप

> खबर मिली है कि मेरे पिताके साथ अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा है। वे घातक नमूनिया रोगसे पीड़ित हैं। बीमारीके बावजूद उनसे चक्की चलवाई गई। इस तरह दवाये जानेपर ही उन्होंने माफीनामा दिया था; लेकिन स्थितिका भान होते ही उन्होंने फौरन उसे वापस ले लिया। आजकल उन्हें अंडे खाने और शराब पीनेके लिए मजबूर किया जा रहा है। उनका वजन कम हो गया है।

मैं नहीं जानता कि यह खबर कहाँतक सच है। पुत्र अपने पितासे मिल नहीं सका है। जो खबर उसे मिली है अगर वह सच है तो यह साफ-साफ यातना देनेका मामला है। कोई भी यह देख सकता है कि वे इतने कमजोर हैं कि उन्हें चक्की चलानेका काम नहीं दिया जा सकता। किसी रोगीको ब्रांडी या अण्डे लेनेके लिए मजबूर करना धर्मके विरुद्ध एक अपराध है। दक्षिण आफ्रिकाके रेवाशंकर सोढा नामक एक नौजवान सत्याग्रहीकी बात मैं जानता हूँ। उसके हलकके नीचे जबरदस्ती अंडे उतारे गये। उसने उस द्रवको जबरदस्ती पिलाये जानेके बाद तुरन्त ही उलटी कर दी, और इस तरह अपने उत्पीड़कोंको परास्त कर दिया। इस तरहके दृढ़ संकल्पके आगे उस अत्याचारको दोहरानेकी फिर अधिकारियोंकी हिम्मत नहीं हुई। यह बतानेकी आवश्यकता नहीं कि वह बहादुर नौजवान अंडे न खानेपर भी ठीक हो गया और आज वह पूरी तरह स्वस्थ और सुखी है। डाक्टरों द्वारा सुझाये गये भोजनको अस्वीकार करनेके औचित्यके बारेमें मतभेद हो सकता है। परन्तु हम यहाँ इसके चिकित्सा-सम्बन्धी पहलूपर विचार नहीं कर रहे हैं। मेरे विचारसे तो मनुष्य जिस चीजको अपना धार्मिक विश्वास मानता है, उसकी कीमतपर रोगमुक्त होनेसे इनकार करनेका उसे पूरा अधिकार है, विशेष-कर जब वह जेलमें हो।

'मदरलैंड' मुकाबलेके लिए तैयार

मौलवी मजहरुल हकके[1] 'मदरलैंड'से जमानत दाखिल करनेके लिए कहा गया है। बिहार सरकारके लिए वह पत्र जरूरतसे ज्यादा स्वतन्त्र सिद्ध हुआ है। उसने बड़ी बेरहमीसे उसके कुकर्मोंका भण्डा-फोड़ किया है। अपने विचारोंको उसने खुलेआम रखनेकी हिम्मत दिखाई है। स्पष्टवादिताका मुँह बन्द करना ही चाहिए। सम्पादकने गर्वके साथ जमानत दाखिल करनेसे इनकार कर दिया है और यह घोषणा की है कि वे अपने पत्रको हस्तलिखित रूपमें निकालेंगे। वे प्रतिदिन अपने विचारोंको अभिव्यक्ति देते हुए जो-कुछ लिखा करेंगे उसकी नकलें तैयार करनेके लिए उन्हें बहुत सारे स्वयं-सेवकोंकी सहायता मिलनी चाहिए। इस तरह पाठकगण समाचारों और विचारोंके संक्षिप्तीकरणका महत्त्व शायद अधिक समझ पायेंगे — भले ही कारण सिर्फ इतना ही

१. १८६६-१९३०; बिहारके राष्ट्रवादी नेता; मुस्लिम लीगके संस्थापकोंमें से एक और बादमें उसके अध्यक्ष; चम्पारन सत्याग्रह तथा असहयोग आन्दोलनमें गांधीजीकी मदद की।

हो कि प्रतियाँ तैयार करनेके लिए बहुतसे कार्यकर्ताओंको विशेष प्रयत्न करना होगा। साफ-सुन्दर अक्षरोंमें लिखी 'गीता'की किसी प्रतिको मुद्रित प्रतियोंकी अपेक्षा सदा ही अधिक महत्त्व दिया जायेगा। 'ट्रिब्यून'में मैंने पढ़ा है कि 'वन्देमातरम्'की २,००० रुपयेकी जमानत जब्त कर ली गई है। मेरा खयाल है कि उसे भी हस्तलिखित समाचारपत्रोंकी उत्तरोत्तर बढ़ती हुई फौजमें शामिल होना पड़ेगा। किसी-न-किसी दिन सभी अखबारों और समाचारपत्रोंका मुद्रण बन्द कर दिया जायेगा। छपाईको तो दबाया जा सकता है, लेकिन लिखाईको दबाना कठिन है। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि उड़ीसा सरकारने नेताओंको यह नोटिस दिया है कि वे स्वयंसेवक अथवा भर्ती करनेके बारेमें नोटिस न लिखें। अगर सरकार चाहे कि ऐसे शब्द बिल्कुल लिखे ही न जायें तब तो उसे यह आदेश करनेवाले समस्त लेखकोंको, उनके साथियोंको जेल भेजना पड़ेगा। लेकिन तब विचार अवरुद्ध होनेकी बजाय बिल्कुल स्वतन्त्र हो जायेंगे। एक मरते और मरते हुए आदमीका मूक शब्द ऐसे आदमीके लिखित या मुद्रित शब्दसे कहीं अधिक प्रभावशाली होता है जिसे लोग न जानते हों, न अच्छा समझते हों। हर अखबारवालेको पिछले तीन महीनोंके दमन और उसके फलस्वरूप आई जागृतिसे एक शानदार सबक लेना चाहिए, और उसे अखबारोंके लिये निकाले गये समाचारपत्रोंके दमनसे एक क्षणके लिए भी परेशान नहीं होना चाहिए।

और लिखे हुए समाचारपत्र

इलाहाबादका 'स्वराज्य', जिसकी जमानत जब्त हो गई थी, एक लिखित समाचारपत्रके रूपमें निकलने लगा है। उसके सम्पादक बाबू रामकृष्ण स्वरूप हैं। उसे बहुत साफ-सुन्दर अक्षरोंमें लिखा जा रहा है। छपाई और टाइपिंगके चलनसे लिखावटकी कलाका चलन उठता जा रहा है। हस्तलिखित पत्रोंका निकलना यदि दीर्घकाल तक चलता रहा, तो इसके फलस्वरूप निश्चय ही इस सुन्दर कलाका पुनरुत्थान होगा। कुछ प्राचीन पाण्डुलिपियाँ 'सौन्दर्य और आनन्दकी अमर कृतियाँ हैं।' गौहाटीसे भी एक हस्तलिखित समाचारपत्र निकला है। यह हिन्दी और असमिया दोनोंमें लिखा जाता है और हर पखवाड़े निकलता है। मूल्य तीन पैसे है। तीनों लिखित पत्रोंमें सबसे साफ लिखावट गौहाटीवाले पत्रकी है। इसका नाम 'कांग्रेस' है। लिखावटकी दृष्टिसे 'स्वराज्य' सबसे अच्छा है। 'इंडिपेंडेंट'की छाप साफ नहीं है। या तो रोशनाई या फिर साइक्लोपर ट्रेसिंग खराब होती होगी। तीनों पत्रोंको स्वयंसेवकों या वेतनपर काम करनेवाले खास कार्यकर्त्ताओंको प्रशिक्षण देना होगा, जिससे कि वे ऐसी प्रतियाँ निकाल सकें जो छपे कागजकी तरह आसानीसे पढ़ी जा सकें। साथ ही उन्हें संक्षिप्त अभिव्यक्तिकी शैली भी विकसित करनी होगी। ये तीनों पत्र चुस्त शैलीमें लिखे जाते हैं, फिर भी मुझे विश्वास है कि विचारको अस्पष्ट किये बिना संक्षिप्तीकरणकी कलाको अभी और आगे बढ़ाया जा सकता है। उद्देश्य यही होना चाहिए कि विचार या तथ्योंके रूपमें पाठकको कुछ ऐसा दिया जाये जो उसे और कहीं न मिल सकता हो। व्यवस्थापकोंको प्रत्येक प्रति देखनी चाहिए और जिन-जिनपर छाप हलकी हो और पढ़ी न जा सके उन सबको नष्ट कर देना चाहिए, जैसा कि मुद्रक भी करते हैं। इन सराहनीय

पत्रोंके संचालकोंको मैं यह बात याद दिलाना चाहता हूँ कि 'सत्याग्रही'[1] जो थोड़े ही समय चला था, एक फुलस्केप कागजके सिर्फ एक ओर ही लिखा होता था।

स्थगित वेतन

सरकारको धारवाड़के श्री विनायकराव जोशीकी पेंशन, जिसे आजकल स्थगित वेतन (डिफर्ड पे) कहा जाता है, रोक देनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। कारण सिर्फ इतना था कि उन्होंने अपने देशकी सेवा करनेकी कोशिश की। लेकिन दूसरी ओर सर माइकेल ओ'डायरकी पेंशन बरकरार है, जबकि वह हर अवसरपर शिक्षित भारतीयोंकी निन्दा करता है, और बराबर इस ताकमें रहता है कि कब मौका मिले और वह जन-साधारणपर उद्धततापूर्वक अपनी संरक्षकताकी धाक जमाये मानो वे छोटे-छोटे बच्चे हों, जिनपर किसी बड़े-बूढ़ेकी देख-रेख और चौकसी बराबर चाहिए ही। इसी प्रकार जनरल डायर भी, जो आजतक मानते हैं कि जलियाँवाला बागमें निर्दोष-निरीह लोगोंका कत्लेआम करके उन्होंने मात्र एक कर्त्तव्यका ही पालन किया, पेंशनका लाभ उठा रहे हैं। हमें यह बताया गया है कि उनकी पेंशनें रोकनेमें कानूनी कठिनाइयाँ हैं, और यदि कानूनी बाधा भी दूर की जा सके तो उनकी पेंशनें बन्द करना अनैतिक होगा। सचमुच भारतीयके लिए एक कानून है और अंग्रेजके लिए दूसरा! देशभक्तके लिए एक कानून है और अत्याचारीके लिए दूसरा! एकके मामलेमें जो नैतिक है वही दूसरेके मामलेमें अनैतिक है! श्री जोशीने सरकारको जो साहसपूर्ण उत्तर दिया है, और देशसेवा या अपनी पेंशनमें से एकको चुननेका मौका पड़नेपर अपनी पेंशनका त्याग करके जो देशभक्तिपूर्ण शौर्य दिखाया है, उसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। श्री जोशीके त्यागसे भारतके ध्येयको बल मिला है। उनकी भौतिक हानिसे भारतको नैतिक लाभ हुआ है।

पोलिटिकल एजेंसियाँ

दमनका जाल धीरे-धीरे सभी दिशाओंमें फैल रहा है। आजकल यह युवराजके आगे-आगे चलता है, मानो वह इस तरह लोगोंको उस शक्तिका परिचय दे रहा हो, जिसका कि युवराज प्रतिनिधित्व करते हैं। चूंकि वे इन्दौर पधारनेवाले हैं, इसलिए बाबू बद्रीलाल आर्यदत्त और बाबू छोटेलालको गवर्नर जनरलके एजेंटने इन्दौर कैम्पसे निकाल दिया है। रेजीडेंसी क्षेत्रके अन्दर सार्वजनिक सभाएँ न करनेके आदेश भी जारी कर दिये गये हैं। हो सकता है कि इन रेजीडेंसियोंमें सार्वजनिक जीवन उतना संगठित न हो जितना कि खास ब्रिटिश भारतमें है। लेकिन यदि यह उतना ही संगठित है, तो मुझे कैम्पके निवासियोंके कर्त्तव्यके बारेमें कोई सन्देह नहीं है। यदि वे अहिंसा कायम रख सकते हैं और यदि वे जरा भी अच्छी तरह संगठित हैं, तो उन्हें आदेशोंके

१. गांधीजीका अपंजीकृत समाचार-साप्ताहिक, जिसका प्रथम अंक ७ अप्रैल, १९१९ को प्रस ऐक्टको चुनौतीके रूपमें रौलट कानूनोंके विरोधी आन्दोलनके दौरान निकाला गया था। जब गांधीजीने सविनय अवज्ञा मुल्तवी कर दी तब इसका प्रकाशन बन्द हो गया। देखिए खण्ड १५।

यथावत् सभाएँ करनी चाहिए और निषेधाज्ञाका फैसला अदालतपर छोड़ देना चाहिए। मेरी रायमें, जिन्हें निष्कासित किया जाये उन्हें वहीं फिर वापस आकर गिरफ्तार होना चाहिए।

इसी तरहकी एक खबर काठियावाड़से भी आई है। ऐसा प्रतीत होता है कि काठियावाड़के राजाओंने गवर्नर महोदयके लिए शिकार पार्टियां और दूसरे अनावश्यक लेकिन गर्वीले मनोरंजनकी व्यवस्था की है। इन रियासतोंकी प्रजा बहुत नाराज है। नाराजगी गवर्नरके दौरेपर नहीं, बल्कि उनके सम्मानमें आयोजित इन गर्वीले मनो-रंजनोंपर है। शायद गवर्नर इनमें कोई रस भी न लेते हों। इन अधिकारियोंको हमेशा ऐसे मनोरंजनोंकी जरूरत आखिर क्यों हो? यह तो है नहीं कि जब वे सदर मुकामपर काम करते हैं तो वहाँ उनके लिए मनोरंजनकी व्यवस्था न होती हो। वस्तुतः ये मनोरंजन, उनमें से कमसे-कम कुछके लिए खुद एक काम बन जाते होंगे। कोई भी पक्ष इन प्रदर्शनोंमें अपने स्वाभाविक रूपमें नहीं रह पाता। उन्हें श्रेष्ठ व्यवहारका दिखावा करना पड़ता है और अपनी उचित दूरी रखनी पड़ती है। अनौप-चारिक रूपसे मिलनेपर उन्हें हमेशा औपचारिक और सही व्यवहार करना होता है। इन परिस्थितियोंमें, यदि इन मनोरंजनोंको स्थान न दिया जाये और दौरोंको केवल राजकीय कामकाज तक ही सीमित रखा जाये, तो निश्चय ही इससे समय और धनकी बहुत बचत होगी। इसके अलावा, शिकार-पार्टियोंसे शाकाहारी लोगोंसे आबाद काठियावाड़की भावनाओंको ठेस पहुँचती है। काठियावाड़के लोग, वे कुछ न कहें तो भी, जीव-जन्तुओंकी व्यर्थकी इस हत्यासे नाराज हुए बिना नहीं रह सकते। मुझे बताया गया कि शिकारके जानवरको प्रलोभन देकर शिकार-स्थलतक ले आनेके लिए कई दिन पहलेसे वहाँ बकरे बाँधे जाते हैं, जिन्हें रोज-रोज मारकर वह जानवर खा जाता है। इस तरहके शिकारमें, जिसके लिए इतना निर्दोष रक्त बहाना पड़े और शिकारीको जान या चोटका कोई खतरा न हो, कोई आकर्षण नहीं रहता। यह तो उस कानूनकी एक हल्की नकल बन जाता है जो आज भारतमें सरकार और जनताके बीच प्रचलित है; अर्थात् वह कानून जिसके अधीन जनता हमेशा सरकारका शिकार होती है और सरकारको कभी कोई खतरा नहीं होता। यह मूसाका कानून नहीं है, जिसमें जानके बदले जान लेनेकी व्यवस्था थी। इस कानूनके अधीन तो ईंटोंके बदले गोलियोंकी बौछार की जाती है और खरोंचके बदले प्राण ले लिये जाते हैं। जिसमें शिकारीको कोई खतरा न उठाना पडे, वह अच्छा शिकार नहीं, बल्कि साफ क्रूरता है। लेकिन जाहिर है कि गवर्नर-का एजेंट काठियावाड़में राजाओंकी फिजूलखर्ची तकके खिलाफ विरोधी सभाएँ सहन नहीं कर सका, और इसलिए ऐसा लगता है कि उसने सार्वजनिक सभाओंपर पाबन्दी लगा दी है और सर्वश्री मणिलाल कोठारी व मनसुखलाल रावजीभाई मेहताको गिरफ्तार कर लिया है।

एजेंसियोंमें यह सब हलचल एक नई घटना है। गिरफ्तार होनेवालों को मैं बधाई देता हूँ। हमारे लिए अहिंसाका नियम जितना खास ब्रिटिश क्षेत्रमें अनिवार्य है, उतना ही एजेंसियों और रियासतोंमें भी है। इससे बड़ी बात यह है कि रियासतोंके निवा-सियोंको सरकारसे असहयोग करनेके लिए या उस आन्दोलनके हितमें रियासतोंको

परेशान नहीं करना चाहिए। अपनी स्थानीय शिकायतोंको दूर करानेके लिए वे लड़ सकते हैं, लेकिन जबतक कि परिस्थितियाँ बहुत ही गम्भीर न हो जायें और जनमत उनके साथ न हो, तबतक वे अपनी लड़ाईमें तीव्र असहयोगका तरीका न अपनायें। रियासतोंमें प्रजा अभी यह दावा नहीं कर सकती कि राजाओंपर वह अन्य सभी साधनोंको आजमाकर देख चुकी है। उसे जनमत तैयार करना चाहिए, आन्दोलन चलाना चाहिए और अन्य प्रकारसे अपनेको संगठित करना चाहिए। मैं अकसर यह बात सुनता हूँ कि कांग्रेस असहयोगके आगमनके बाद ही उपयोगी बनी है। यह वस्तु-स्थितिके बारेमें बिलकुल गलत खयाल है। सचाई यह है कि कांग्रेस आन्दोलनसे असहयोगके लिए मार्ग तैयार हुआ है। असहयोग कांग्रेसकी पहलेकी गति-विधियोंका उचित और स्वाभाविक परिणाम है। कांग्रेस भारतमें सदासे लोगोंकी शिकायतोंको प्रभावपूर्ण ढंगसे प्रकट करनेवाली सबसे बड़ी संस्था रही है। जन-साधारणकी शक्ति और दुर्बलताका यह सच्चा मापदण्ड रही है। रियासतोंकी प्रजाकी भी अपनी कांग्रेसें और कान्फ्रेंसें होनी चाहिए, जो ब्रिटिश भारतके नमूनोंसे बिलकुल अलग हों और शायद उनका संचालन भी दूसरे ढंगसे होना चाहिए। वे इस मातृसंस्थाकी गलतियोंसे बहुत-कुछ सीख सकती हैं, पर उन्हें उस प्रारम्भिक अनुशासनमें से तो गुजरना ही होगा। किसी अन्यायको बढ़ाये-चढ़ाये बिना ज्योंका-त्यों उजागर कर देना कोई छोटी बात नहीं है। पापकी तरह अन्याय भी अंधकारमें ही फलता-फूलता है। सूर्यके प्रकाशमें वह मर जाता है। इसलिए रियासतोंकी प्रजाको तेजीके साथ, सुव्यवस्थित ढंगसे अपने-आपको संगठित करना चाहिए। उसे अपने स्थानीय मामले राष्ट्रीय कांग्रेसमें गड्ड-मड्ड करके खराब नहीं करने चाहिए। रियासतोंके लोग, रियासतोंके क्षेत्रसे बाहर, कांग्रेसमें और कांग्रेसके लिए काम कर सकते हैं, जैसा कि बहुत-से कर भी रहे हैं।

बंगालसे चेतावनी

एक मित्र हैं, पुराने और परखे हुए राष्ट्र-सेवी। बंगालके क्षितिजपर बार-बार जो अनिष्टकी आशंकासे युक्त बादल घिर आते हैं, उनकी सूचना देनेमें वे कभी भी चूकते नहीं हैं। इस बार उन्होंने एक आम लगानबन्दी आन्दोलनको शह देनेके खिलाफ चेतावनी दी है। उनका यह खयाल है कि चूंकि अधिकतर नेता जेलमें हैं, इसलिए बंगालमें उतावलेपनकी कार्रवाई बिलकुल सम्भव लगती है। मैं शिकायत नहीं कर सकता पर फिर भी यह कहे बिना नहीं रह सकता कि नेताओंकी गिरफ्तारी सरकारकी अपराधपूर्ण मूर्खताके कारण हुई है। उसने शान्ति कायम रखनेवाले सच्चे लोगोंके साथ शान्ति-भंग करनेवालोंका-सा बरताव किया है। सरकार हिंसाको निमन्त्रण दे रही है। वह मानो किसी निश्चित उद्देश्यके लिए, देशको हिंसाके लिए तैयार कर रही है। लेकिन इन मामलोंमें भी मुझे शिकायत नहीं करनी चाहिए। मैं यह मानता हूँ कि हममें से अधिकतर लोगोंको इस सबकी और इससे भी अधिककी आशंका थी; फिर भी हम इसी नतीजेपर पहुँचे कि हमें पूरी हिम्मतसे काम लेना चाहिए और बेझिझक आगे बढ़ना चाहिए। हमने ईश्वरपर भरोसा रखकर ही यह निर्णय लिया था, और आज भी उसीपर हमारा भरोसा है।

नहीं होगी, वल्कि वास्तवमें गौरवका अनुभव होगा। वे मेरा और देशका नाम वढ़ायेंगी। संसार उन्हें एक ऐसे परिवारका सदस्य मानेगा जो अधिकाधिक व्यक्तियोंको अपनानेके कारण उत्तरोत्तर वढ़ रहा है। पर जो स्थिति है उसमें मुझे यह दसवीं वार कहना पड़ रहा है कि मुझे किसी भी वेटीका वाप होनेका सौभाग्य प्राप्त नहीं है। हाँ, एक नन्ही-सी "अछूत" लड़की है, जिसे मैं गर्वके साथ अपनी गोद की वेटी कहता हूँ। उससे मुझे वहुत सुख मिला है और मैं आशा करता हूँ कि वड़ी होनेपर वह अपने भावी सेवा-क्षेत्रमें सत्यनिष्ठा और विनयशीलताके गुणोंसे युक्त होकर उतरेगी। इस समय तो वह पक्की "शैतान" है। अभी तो उसका मन वस खेल-ही-खेलमें लगता है, काममें विलकुल नहीं। अपने माँ-वापके घरमें तो आवनूसके डंडेके भयसे सीधी रहती थी, मगर यहाँ उसे वह भय नहीं है सो कोई काम ही नहीं करती। लेकिन निठल्ली रहनेवाली यह सात सालकी प्यारी लड़की जव मुझे अपना वाप कहती है तो मुझे जरा भी वुरा नहीं लगता। कुछ वड़ी लड़कियाँ भी हैं, जिन्हें अपनी वेटियाँ मानकर मुझे सुख मिलता है और जो मुझे यह सुख प्राप्त करने देती हैं। लेकिन वे मुझसे जैसे ऊँचे स्तरकी अपेक्षा रखती हैं, उसपर कायम रहना मेरे लिए कठिन हो जाता है। उन्हें हमेशा यह खतरा वना रहता है कि उनका यह वाप कहीं उनके विश्वासके अयोग्य न निकले। परन्तु मैं भारतकी सभी लड़कियोंको यह वता देना चाहता हूँ कि उनके जवरदस्ती मेरी वेटी वननेसे मेरी जो वदनामी हो सकती है, उसकी जोखिम मैं उठाना नहीं चाहता। लेकिन मुझपर इतने ऊँचे स्तरका निर्वाह करनेका वोझ डालनेवाली जो ये लड़कियाँ हैं, जिनके नाम तक मैं दुनियाके आगे रखनेकी हिम्मत नहीं करता, उन जैसी लड़कियोंको मैं वेशक अपनी वेटी वनाना चाहता हूँ।

लेकिन जिस लड़कीके मुझे ख्वाहमख्वाह अपना वाप वना लेनेकी खवर आई है, उसके वारेमें मैं कहूँगा कि वह इस तरह अपना मनवहलाव ही कर रही है और उसका यह व्यवहार अपेक्षाकृत कम हानिप्रद है। मैंने सुना है कि उदयपुरके मोतीलाल पंचोली नामक एक सज्जन मेरे शिष्य होनेका दावा कर रहे हैं और राजपूतानेकी रियासतोंके देहातियोंके वीच मद्य-निषेध और न जाने किस-किस चीजका प्रचार कर रहे हैं। खवर यह है कि उनके इर्द-गिर्द हथियारवन्द प्रशंसकोंका एक जमघट रहता है और वे जहाँ भी जाते हैं वहाँ अपना कुछ ऐसा ही राज्य स्थापित कर देते हैं। वे चमत्कारी शक्तिका भी दावा करते हैं। उन्होंने और उनके प्रशंसकोंने कुछ ध्वंसात्मक कार्य किया है, ऐसी भी खवर मिली है। मैं चाहता हूँ कि लोग हमेशाके लिए यह समझ लें कि मेरा कोई शिष्य नहीं है। कमसे-कम फिलहाल तो मेरा कांग्रेस और खिलाफत समितियोंसे अलग किसी तरहका कोई अस्तित्व नहीं है। मेरी सारी गतिविधि इन दो संस्थाओंसे सम्वद्ध है। कोई भी व्यक्ति मेरी ओरसे काम नहीं कर रहा है; और जवतक मैं किसीको लिखित रूपमें न दूँ, तवतक किसीको मेरे नामका उपयोग करनेका अधिकार नहीं है। किसीको भी मैंने कांग्रेस या खिलाफतके कामके अलावा कोई और काम करनेके लिए नहीं लिखा है। और किसीको भी मैंने किसी आदमीके खिलाफ कोई हथियार, डंडा तक इस्तेमाल करनेका अधिकार नहीं दिया है।

१२७. चरखेके बारेमें डा० रायके विचार

सर प्रफुल्लचन्द्र रायने चरखेसे सम्बन्धित एक बंगला पुस्तिकाकी एक बड़ी ही तर्क-संगत प्रस्तावना[1] लिखी है। उस समूची प्रस्तावनाका निम्नलिखित अनुवाद प्रकाशित करते हुए मुझे सचमुच बड़ी प्रसन्नता हो रही है। मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं कि रासायनिक गवेषणा और औद्योगिक संगठनके क्षेत्रमें प्राप्त की गई उनकी आश्चर्यजनक उपलब्धियोंकी भांति ही घरेलू पैमानेपर की जानेवाली कताईका उनका संगठन और भी कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण और विस्मयकारी होगा। उनकी रासायनिक गवेषणाओंने भारतकी प्रतिष्ठामें चार चाँद लगा दिये हैं, उन्होंने जो उद्योग खड़े किये, उनसे बंगालको कई लाख रुपयोंकी आमदनी हुई और प्रतिभासम्पन्न बंगालियोंको काम भी मिला; परन्तु घरेलू पैमानेपर कताईका काम शुरू करनेका मतलब है लाखों बंगाली परिवारोंको भुखमरी और कंगाली तथा अधःपतनसे मुक्त करना और अकालों तथा उनके कारण फैलनेवाले रोगोंसे मुक्ति दिलाना और उनके घरोंमें हँसी-खुशीका वातावरण पैदा करना, जो पेट भरा होनेपर ही सम्भव है। मैं डा० रायकी इस उक्तिका पूरा समर्थन करता हूँ कि प्रथम स्वदेशी आन्दोलनके दौरान मैनचेस्टर या जापानके बदले बम्बई या अहमदाबादसे कपड़ा लानेसे बंगालको कोई लाभ नहीं हुआ है। स्वदेशीका पूरा-पूरा और तात्कालिक प्रभाव देखनेके लिए जरूरी है कि हम पहले देश-भरमें

१. यहाँ उद्धृत नहीं की गई।

बिखरे करोड़ों घरोंमें सूत और वस्त्र तैयार करना शुरू करें। स्वदेशी उनमें जितनी एकता पैदा करेगी उतनी दूसरी कोई चीज नहीं कर सकती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-२-१९२२

१२८. विदेशोंमें रहनेवाले भारतीय

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

... केनियामें रहनेवाले हमारे देशवासियोंको यूरोपीय उपनिवेशोंके एक जबरदस्त आन्दोलनका सामना करना पड़ रहा है, और उधर फिजीमें हमारे असहाय भाइयोंकी हालत दिनोंदिन खराब होती जा रही है। उनकी मुसीबतें और कठिनाइयाँ इतनी अधिक हैं कि उनका बयान यहाँ नहीं किया जा सकता।

आज ... यह आशा नहीं की जा सकती कि भारतकी जनता विदेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंकी समस्याओंकी ओर बहुत अधिक ध्यान दे सकेगी; फिर भी हमारा फर्ज है कि हम उपनिवेशोंमें रहनेवाले अपने उन बदकिस्मत देश-भाइयोंके लिए कुछ-न-कुछ करें। ...

... हमने उपनिवेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंके लिए संगठित रूपसे प्रचार-कार्य करनेका निर्णय किया है। यदि उपनिवेशोंमें रहनेवाले भारतीय हमारे पास अपनी कठिनाइयोंके विवरण नियमित रूपसे भेजें तो हम अनुगृहीत होंगे। उन विवरणोंको यहाँके अंग्रेजी और देशी भाषाओंके अखबारोंके जरिये प्रचारित किया जायेगा। इस कामको ठीक ढंगसे संगठित करनेके लिए जो सुझाव मिलेंगे, उनके लिए हम आभारी होंगे।

आपके, आदि
तोताराम सनाढ्य[1]
बनारसीदास चतुर्वेदी

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

मैं आशा करता हूँ कि सच्ची लगनवाले ये कार्यकर्त्ता जो सहायता माँग रहे हैं, वह सब उन्हें अवश्य मिलेगी। जब मैं यह सोचता हूँ कि समुद्र-पार रहनेवाले अपने देशवासियोंकी स्थितिका विशेष ज्ञान होनेपर भी मैं उनके लिए खास तौरसे कुछ नहीं कर रहा हूँ, तब मुझे लज्जा अनुभव होती है। लेकिन यह सोचकर मुझे सन्तोष होता

१. ये कई वर्षतक फीजीमें रहे और अपने वहाँके निवासका वर्णन करते हुए उन्होंने एक पुस्तक भी लिखी थी। बादमें वे साबरमती आश्रममें आकर रहने लगे थे।

है कि मार्शी एण्ड्रयूजके अतिरिक्त दो और विशेषज्ञ भी इन मामलोंमें दिलचस्पी ले रहे हैं। मेरे लिए तो स्वराज्यके कार्यमें साम्राज्यके इन अफसरोंकी सेवा करना भी शामिल है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-२-१९२२

१२९. एक ईसाई धर्म-प्रचारकके भ्रमपूर्ण निष्कर्ष

सेवामें

श्री मो० क० गांधी

महोदय,

भारतमें आपके प्रचारके परिणामोंका अभी कुछ दिन पहले तक मुझे कोई व्यक्तिगत अनुभव नहीं था। लेकिन १३ जनवरीको, जिस दिन महाविभव युवराज (प्रिंस ऑफ़ वेल्स) मद्रास पधारे, मैं जब जॉर्ज टाउनकी सड़कोंपर से मोटरमें गुजर रहा था, तब "गांधीजीकी जय"का नारा लगाते हुए उपद्रवियोंका एक दल मुझपर टूट पड़ा। उन्होंने मुझपर ईंट-पत्थर फेंके, धूल डाली और मुझे आगे जानेसे रोक दिया। इतना ही नहीं, वे मेरी गाड़ीकी एक बत्ती भी खोल ले गये।... मैंने जो-कुछ भुगता वैसा ही बहुत-से अन्य लोगोंको भी भुगतना पड़ा, बल्कि कुछको तो और भी अधिक गम्भीर क्षति हुई। मैं भाग्यशाली हूँ कि मुझे कोई शारीरिक चोट नहीं आई।...

इस अनुभवसे मुझे कुछ बातें मालूम हुई, जिन्हें मैं आप तक पहुँचाना चाहता हूँ।

आपका दावा है कि आप भारतके हितके लिए काम कर रहे हैं। यही दावा और भी बहुत-से लोग करते हैं। उदाहरणके लिए ईसाई धर्म-प्रचारक — जिनमें एक मैं भी हूँ — यही दावा करते हैं और ब्रिटिश सरकार भी करती है। ये दोनों ही कह सकते हैं कि अतीतमें उन्होंने इस देश और इसकी जनताके लाभके लिए बहुत ज्यादा काम किया है।...

मैं आपसे पूछना चाहूँगा कि आपने इस देशमें निश्चित सुधारकी दिशामें क्या कार्य किये हैं और उनके क्या ठोस शुभ परिणाम निकले हैं?... अभी तक तो आप उपद्रव ही कराते रहे हैं। पंजाबमें हुए उपद्रवोंकी जड़ भी आप ही थे, दूसरा कोई नहीं। आप ही हैं जिसने मुसलमानोंके दिमागोंमें खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायका विचार भरा है। खिलाफतके सम्बन्धमें जो-कुछ हुआ है, वह ठीक हो या गलत, भारत, भारतकी जनता और भारत सरकारका उससे न तो कोई सरोकार है और न वे उससे कोई सरोकार रखना ही चाहते

हैं। यह मामला तो भारतके बिलकुल बाहरका है। आप देशको स्वराज्य-प्राप्तिकी दिशामें आगे बढ़ानेका दावा करते हैं, किन्तु स्वराज्य कैसा हो, इस सम्बन्धमें आपने अभी तक कोई रचनात्मक विचार नहीं दिया। केवल आपने खद्दर और चरखेके बचकाने और अव्यवहार्य विचार दिये हैं। इससे तो यही प्रकट होता है कि इस विशाल राष्ट्रके लिए समग्र रूपसे कौन-सी चीज हितकर हो सकती है, इस सम्बन्धमें आपकी धारणा कितनी बचकानी है। आप स्वराज्य किस तरह चलायेंगे? क्या आप किसी प्रकार स्वयंको या किसी अन्य व्यक्तिको स्वराज्यका दायित्व सँभालनेके लिए तैयार कर रहे हैं? ऐसे कार्योंकी दिशामें आपने क्या किया है जो उसकी व्यावहारिक व्यवस्थाके सिलसिलेमें करने पड़ेंगे? आप जिस चीजकी बात करते हैं उसका अन्त क्या होगा, इसका कोई स्पष्ट दर्शन नहीं होता। आपकी सारी बातें खोखली, अनिश्चित और अस्पष्ट हैं।

क्या आपने इतिहासका अध्ययन किया है और इस ओर ध्यान दिया है कि राष्ट्र कैसे प्रगति करते हैं? क्या आपने कभी इस बातपर गौर किया है कि प्रगति क्रान्ति और विनाशसे नहीं होती, बल्कि क्रमिक विकाससे होती है? क्या आपने कभी ध्यान दिया है कि प्रकृतिके माध्यमसे ईश्वर कैसे अपना कार्य करता है? पौधों और पशुओंमें जीवन धीरे-धीरे प्रगति करता है, और ऐसा क्रान्तिकी रीतिसे नहीं बल्कि विकासकी रीतिसे होता है। क्या आप कभी आकाश और तारोंकी गतिको ध्यानपूर्वक देखते हैं? जो तारे तेजीसे चलते हुए दिखाई पड़ते हैं, वे अपने स्थानसे गिर रहे होते हैं। तेजीसे चलना उनके विनाश और अवसानकी प्रक्रिया है। सूर्य और उनके अपने-अपने जगत्, जो युगोंसे चले आ रहे हैं, चलते नजर नहीं आते। क्या आपने ऊषाका आगमन देखा है? क्या वह किसी दुकानके दरवाजेके समान तुरन्त खुल जाती है? पहाड़पर चढ़नेवालेको ऊपर पहुँचनेके लिए धीरे-धीरे एकके बाद दूसरा कठिन कदम रखकर बढ़ना पड़ता है। लेकिन तेजीसे उतरनेके लिए कगारके छोरपर एक कदम-भर आगे बढ़ानेकी जरूरत होती है और कुछ ही क्षणोंमें मनुष्य नीचे आ जाता है। सोचिए, श्री गांधी, सोचिए इन बातोंपर!

मेरा विश्वास है कि जिस प्रकार बहुत-से अन्य लोग भारतका भला चाहते हैं वैसे ही आप भी चाहते हैं, किन्तु आपके वर्तमान तरीके आपको गलत मार्गपर ले जाते हैं। यदि भारत स्वराज्यके योग्य बनना चाहता है तो उसे यह योग्यता सजीव वस्तुकी भाँति धीरे-धीरे विकास पाकर प्राप्त करनी होगी। उसे ठोक-पीटकर तैयार नहीं किया जा सकता। उसके विकासकी प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। ब्रिटिश सरकार और जनता इसमें सहायता दे रही है; वे आगे भी इस नेक कामको करती रहेगी और जब उनके कन्धोंसे यह भार उतर जायेगा और उनकी जिम्मेवारी समाप्त हो जायेगी तब उन्हें बड़ी प्रसन्नता होगी।

किन्तु . . . स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए आपने जो तरीका अपनाया है उसके अबतक के परिणामोंसे भी आपको मालूम हो जाना चाहिए कि आपने गलत मार्ग अपनाया है। आपने पंजाब, बम्बई, मलाबार और दूसरी जगहोंमें जो अव्यवस्था फैलाई है, आज जो जगह-जगह दंगे, डकैतियाँ, नृशंसता, आगजनी और हत्याएँ हो रही हैं उन सबसे आपकी आँखें खुल जानी चाहिए, और आपको देख सकना चाहिए कि आपने कितना खौफनाक और गलत तरीका अपनाया है। आप अब भी इतने अन्धे क्यों हैं? आप शैतानियतकी ताकतोंको उकसा रहे हैं, जिनपर आप काबू नहीं रख सकते और आप उन अच्छी ताकतोंके साथ मिलनेसे इनकार करते हैं, जो इनपर काबू रख सकती हैं और आगे प्रगतिमें सहायक हो सकती हैं। जहाँ आप आजादीका दावा कर रहे हैं वहाँ आप स्पष्ट रूपसे केवल यह सिद्ध कर रहे हैं कि आप उसका उपयोग करने लायक नहीं हैं। हे महात्मा, यदि आप सचमुच महान् आत्मा हैं तो लौट आइए, लौट आइए। आत्मत्याग, कठोर अनुशासन और सहयोगपूर्ण प्रयासके सीधे और सँकरे मार्गपर आ जाइए। सिर्फ शोर मचाना और झण्डे फहराना छोड़ दीजिए। आप स्वयं कुछ अच्छा कार्य कीजिए और दूसरे लोग जो भलाई कर रहे हैं उसकी नुक्ताचीनी ही न करते रहिए। यह सच है कि उनका वह काम सर्वथा दोषरहित नहीं है, किन्तु वे कमसे-कम लगन तथा निःस्वार्थ भावसे वैसा करनेकी कोशिश तो कर रहे हैं।

हृदयसे आपका,
जी० एच० मैक्फरलेन

मद्रास,
२५ जनवरी, १९२२

अभी हालमें इन स्तम्भोंमें दो अंग्रेज महिलाओंके दो पत्र[1] प्रकाशित किये गये थे। वे दोनों ही ईसाई धर्म-प्रचारिकाएँ हैं। किन्तु श्री मैक्फरलेनके पत्रमें[2] उक्त दोनों पत्रोंसे ठीक उलटी बातें कही गई हैं। जाहिर है कि उन्होंने इस आन्दोलनको या तो समझा नहीं या इसका ठीकसे निरीक्षण नहीं किया। मिशनरियोंको तो और लोगोंकी बनिस्बत कहीं ज्यादा अच्छी तरह मालूम होना चाहिए कि कुछ विशेष घटनाओंको लेकर सामान्य निष्कर्ष निकाल लेना अत्यन्त खतरनाक है। मद्रासमें भीड़ने श्री मैक्फरलेनपर आक्रमण करके और उनकी मोटरकी बत्ती निकालकर निःसन्देह कायरताका काम किया है। हर समझदार आदमीने इस पागलपनकी निन्दा की है। हर समझदार आदमी यह मानता है कि इससे हमारे कामको नुकसान पहुँचा है, क्योंकि जिस असहयोगकी बुनियाद ही अहिंसा है, उसके प्रति झूठी हमदर्दी दिखानेके लिए हिंसाका सहारा लिया गया है।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-१-१९२२ का उप-शीर्षक "भगवान्के हाथोंमें", तथा "टिप्पणियाँ", २६-१-१९२२ का उप-शीर्षक "एक अंग्रेज महिलाका आशीर्वाद"।

२. यहाँपर केवल सारांश प्रकाशित किया गया है।

लेकिन बम्बई और मद्रासमें जो बातें हुई हैं, क्या वे विश्वके इतिहासमें नये अनुभव हैं? क्या यूरोपमें अक्सर ऐसी बातें नहीं हुई हैं? क्या इंग्लैंड और स्काटलैंडमें ऐसी बातें बार-बार नहीं हुईं? क्या किसी भी स्थानकी उत्तेजित भीड़ ठीक वैसा ही आचरण नहीं करती, जैसा कि बम्बई और मद्रासकी भीड़ने किया? भीड़ने बम्बई और मद्रासमें जो काम किये, क्या आयरलैंडके लोगोंने उससे भी अधिक बुरे काम नहीं किये हैं? और क्या उपद्रवोंके बलपर ही उन्होंने वह चीज नहीं पा ली है, जो स्वराज्यके बराबर है?

बम्बई और मद्रासमें हुए उपद्रवोंसे मैं घृणा करता हूँ, किन्तु एक भिन्न दृष्टिकोणसे। मैं आयरलैंडके उपद्रवोंसे भी घृणा करता हूँ। लेकिन आयरलैंडके उपद्रवों और बम्बई व मद्रासमें हुए उपद्रवोंमें एक फर्क है। आयरलैंडका उपद्रव व्यावहारिक और सच्चा था। व्यावहारिक इसलिए था कि आयरलैंडके वातावरणसे बेमेल नहीं था; और सच्चा इसलिए था कि आयरलैंडवासियोंने अपने [हिंसात्मक] सिद्धान्तको कभी छिपाया नहीं। भारतका उपद्रव न व्यावहारिक था और न सच्चा। व्यावहारिक वह इसलिए नहीं था कि जहाँतक मैं भारतीय मानसको जानता हूँ, भारतमें उपद्रव नहीं पनप सकता। भारतीय मानसका उससे कोई मेल नहीं बैठता। और वह सच्चा इसलिए नहीं है कि भारतीय आन्दोलन पूर्ण रूपसे अहिंसक होनेका दावा करता है; हालाँकि यह अहिंसक नीति इस बातको भी ध्यानमें रखकर अपनाई गई है कि हमारा कार्य किस तरह सिद्ध होगा। असहयोगियोंको ऐसा कोई काम अपने हाथोंमें नहीं लेना चाहिए जिसे वे अहिंसक नहीं रख सकते।

लेकिन श्री मैक्फरलेन मद्रासके उपद्रवसे इतने भयभीत हो गये हैं कि वे भारतको स्वराज्यके योग्य ही नहीं समझते। इसके विपरीत मेरे विचारमें वर्तमान अस्वाभाविक तथा बेईमानीकी स्थितिकी अपेक्षा तो उपद्रवकी स्थिति भी अच्छी हो सकती है। इस स्थितिको हर कीमतपर समाप्त करना है। बात केवल यह है कि वर्तमान नेतागण हिंसात्मक आन्दोलन नहीं चला सकते। उनमें से अधिकांश ऐसे हैं, जो न तो इसे चलाना चाहते हैं और न उनमें इसे चलानेकी योग्यता ही है। वे इसे अहिंसक रखनेका भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं।

श्री मैक्फरलेनका दावा है कि वर्तमान शासन प्रणालीके अन्तर्गत भारतको असीम लाभ हुए हैं। लेकिन मेरा खयाल तो यह है कि इसकी कारगुजारियोंसे भारतको कुल मिलाकर नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षति ही पहुँची है। नैतिक स्तर पहलेकी अपेक्षा आज बहुत गिर गया है। इस युगकी अनैतिकता परिष्कृत है और इसीलिए वह भ्रामक तथा और अधिक खतरनाक है। आर्थिक दृष्टिसे भारत आज पहलेकी अपेक्षा अधिक दरिद्र हो गया है। राजनीतिक दृष्टिसे भारत इतना पौरुषहीन हो गया है कि यहाँ लोगोंको अपने पतनका भी भान नहीं है।

पत्र-लेखक जानना चाहते हैं कि इस आन्दोलनसे क्या लाभ हुए हैं। इसने जनतामें एक जबरदस्त जागृति पैदा कर दी है। जहाँ लोगोंने हाथ-कताई बिलकुल छोड़ दी थी, वहाँ आज हजारों घरोंमें लाखों गज सूत काता जा रहा है। जहाँ हाथसे बने वस्त्रोंका उपयोग बिलकुल छूट गया था वहाँ आज हजारों स्त्री-पुरुष खद्दर पहन

रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप हजारों घरोंसे सुख दूर भाग गई है। लोग जानते हैं कि स्वराज्यका मतलब देशके धन, कानून, पुलिस और सेनापर उनका अधिकार होना है। वे जानते हैं कि जबतक पंजाबका घाव भर नहीं जाता और खिलाफतके साथ किये गये अन्यायका निराकरण नहीं किया जाता, तबतक शान्ति नहीं हो सकती।

राष्ट्रोंकी प्रगति क्रमिक विकास और क्रान्ति दोनों तरीकोंसे हुई है। क्रमिक विकास और क्रान्ति दोनों ही समान रूपसे जरूरी हैं। जैसे जन्म और उसके बादका काल धीमे और सुनिश्चित विकासकी प्रक्रिया है वैसे ही मृत्यु जो कि शाश्वत सत्य है, एक क्रान्ति है। मानवके विकासके लिए स्वयं जीवनके समान ही मृत्यु भी आवश्यक है। ईश्वर सबसे बड़ा क्रान्तिकारी है; संसारने इतना बड़ा क्रान्तिकारी न कभी देखा है और न कभी देखेगा। वह प्रलय करता है। एक क्षण पहले जहाँ शान्ति थी, वहाँ वह तूफान भेजता है। वह जिन पर्वतोंको अत्यधिक सावधानी तथा बड़े धैर्यके साथ बनाता है, उन्हें नष्ट भी कर देता है। मैं आकाशको देखता हूँ और उसे देखकर मेरा हृदय विस्मय-विमुग्ध हो जाता है, आश्चर्यसे भर जाता है। मैंने भारत और इंग्लैंड दोनोंके साफ नीले आकाशमें बादलोंको घिरते और भयंकर गर्जन-तर्जन करते देखा है, जिससे मैं अवाक् रह गया हूँ। इतिहासमें तथाकथित नियमबद्ध प्रगतिकी अपेक्षा चमत्कारपूर्ण क्रान्तियोंके अधिक उदाहरण मिलते हैं; और यह बात जितनी इंग्लैंडके इतिहासपर लागू होती है, उतनी और किसी देशके इतिहासपर लागू नहीं होती। मैं पत्र-लेखकको बताना चाहता हूँ कि मैंने ऐसे लोगोंको भी देखा है जो धीरे-धीरे लड़खड़ाते हुए पहाड़पर चढ़ते हैं और ऐसे लोगोंको भी देखा है जो महान् ऊँचाइयोंको मानो उड़ते हुए पार कर जाते हैं।

स्वराज्य भारतका जन्मसिद्ध अधिकार है। ब्रिटिश प्रणाली उसके स्वराज्यके मार्गमें बाधक बनी हुई है। भारत अपनी खोई हुई आजादीको फिरसे प्राप्त करनेके लिए संघर्ष कर रहा है और ऐसा करते हुए वह इतिहासकी पुनरावृत्ति करनेका नहीं, बल्कि नया इतिहास बनानेका प्रयत्न कर रहा है। हाँ, इस प्रक्रियामें वह कभी-कभी इतिहासकी पुनरावृत्ति करनेकी इच्छाका आभास भी देता है, जैसा कि बम्बई, मद्रास और मालेगांवमें दिया, और यह सचमुच दुःखकी बात है। मलाबारको इस आन्दोलनके साथ नहीं मिलाना चाहिए। स्वतन्त्रताका मतलब आवश्यक रूपसे यह भी है कि गलती करनेकी आजादी हो। अन्तमें पत्र-लेखक और उनके-जैसे विचार रखनेवाले अन्य व्यक्तियोंको मैं विश्वास दिलाता हूँ कि यह आन्दोलन किसीके प्रति दुर्भावनाका नहीं, बल्कि सबके प्रति सद्भावनाका आन्दोलन है। समय ही इसकी सत्यता सिद्ध कर सकता है। प्रसवकी पीड़ा हमें उस पीड़ाके पीछे छिपे नये सृजनको नहीं देखने देती। हम प्रतीक्षा और प्रार्थना करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-२-१९२२

१३०. वकालत करनेवाले वकील और स्वयंसेवकोंका कार्य

सम्पादक
'यंग इंडिया'
महोदय,

(१) क्या वकालत करनेवाले वकीलोंको स्वयंसेवकोंकी हैसियतसे नाम लिखवानेकी अनुमति है?

१२ तारीखके[1] 'यंग इंडिया' में आपने वकीलोंके बारेमें लिखते हुए कहा था: "इसलिए कांग्रेसने[2] जान-बूझकर ही उनके लिए एक सम्मानपूर्ण मार्ग खोल रखा है। मूल प्रस्तावके अनुसार केवल वही लोग स्वयंसेवक हो सकते थे जो असहयोग कार्यक्रमको पूरी तरहसे निबाहनेकी क्षमता रखते थे। पर अब स्वयंसेवक दलके लिए सहज नियम बना दिये गये हैं, उनमें से अधिकांश तो विश्वासोंसे ही सम्बन्धित हैं।"

दूसरी ओर, अहमदाबादमें बंगालके प्रतिनिधियोंसे हुई, आपकी वार्ताका जो विवरण[3] २० जनवरी, १९२२ के 'ट्रिब्यून' में प्रकाशित हुआ था, उसमें निम्नलिखित अनुच्छेद आया है:

"यह पूछे जानेपर कि एक वकालत करनेवाला वकील प्रस्तावके अनुसार किस तरह देशकी सेवा कर सकता है, महात्माजीने कहा:

वकालत करनेवाला वकील निश्चय ही खादी पहन सकता है किन्तु वह स्वयंसेवक नहीं बन सकता।

प्र०: इस दशामें आदमियोंकी कमीसे कुछ स्थानोंमें काम रुक जायेगा।

महात्माजी: . . . अछूतोंसे सम्बन्धित अपने काममें या नशाबन्दीके काममें, या स्वदेशीके प्रचारके काममें उनसे मदद लें, किन्तु वे स्वयंसेवक दलके सदस्य नहीं बन सकते। स्वयंसेवक दल सरकारी घोषणाओंकी अवहेलना करके संगठित किया जा रहा है और केवल वही लोग जेल जाने योग्य हैं जिनके विचार शुद्ध हैं।"

क्या यह विवरण वस्तुतः ही गलत है या फिर इधर हालमें इस सम्बन्धमें आपके विचारोंमें कोई परिवर्तन हुआ है? सामान्य किस्मके, वकालत करनेवाले वकीलोंके लिए सवाल इतना सीधा-सुलझा नहीं है। इसलिए कि कांग्रेसके

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-१-१९२२ का उप-शीर्षक "वकीलोंकी कठिनाई"।

२. अहमदाबादमें दिसम्बर १९२१ में हुई कांग्रेस।

३. १४-१-१९२२ को *अमृतबाजार पत्रिका*में प्रकाशित विवरणके लिए देखिए "भेंट: बंगालके प्रतिनिधियोंसे", २९-१२-१९२१।

प्रस्तावोंमें[1] काफी गुंजाइश छोड़ी गई है, उसके अनुसार सहयोगी और असहयोगी, वकील और साधारण-जन सभी इसमें शामिल हो सकते हैं, पर वकालत करनेवाले किसी भी वकीलके लिए स्वयंसेवक बनना बड़ा ही बेतुका, लगभग पाखण्ड जैसा लगता है।

और फिर असहयोगके सम्बन्धमें कांग्रेसने अबतक जितने प्रस्ताव पास किये हैं उनकी भावनासे, और उनकी आपने जब-तब जो व्याख्याएँ की हैं, उनके अनुसार भी यह बिलकुल गलत मालूम पड़ता है कि देशके कौलको निभानेमें असमर्थ कोई भी व्यक्ति एक प्रमुख सार्वजनिक कार्यकर्ताके रूपमें जनताके सामने आये।

(२) प्रतिज्ञाके खण्ड (४)में हर स्वयंसेवकसे यह अपेक्षा की गई है कि वह "हाथकते और हाथबुने खद्दरके अतिरिक्त अन्य कोई वस्त्र" धारण नहीं करेगा। क्या यहाँ खद्दर शब्दका प्रयोग उसके संकुचित शाब्दिक अर्थमें किया गया है जिसका मतलब होता है हाथबुना सूती कपड़ा या इस शब्दका प्रयोग अधिक व्यापक अर्थमें किया गया है, जिसमें ऊनी, सूती, रेशमी, आदि सभी वस्त्र आ जाते हैं, ये सभी वस्त्र जो हाथकते सूतसे हाथसे बुनकर तैयार किये गये हों?

आपका, आदि,
रामदास छोकरा
बार-एट-ला
लायलपुर

मैंने प्रकाशनके लिए उपर्युक्त पत्रके वे सभी अंश निकाल दिये हैं जिनमें आलोचना की गई थी। मेरी समझमें कांग्रेसके प्रस्तावके मुताबिक तो वकील लोग स्वयंसेवक दलमें अवश्य शामिल हो सकते हैं। मुझे मालूम है कि विषय-समितिने जान-बूझकर उसमें परिवर्तन किया था और उन असहयोगियोंके लिए गुंजाइश निकाली थी जो पूर्ण असहयोगी नहीं कहे जा सकते। खादीनगरमें बंगालके प्रतिनिधियोंके साथ हुई अपनी वार्ताका विवरण मैंने नहीं देखा। लेकिन मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने उसमें कहा हो कि कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार वकील लोग स्वयंसेवक नहीं बन सकते। 'यंग इंडिया' में अपनी टिप्पणियाँ मैंने करीब-करीब उसी वक्त लिखी थीं। मुझे तो इतना ही ठीक-ठीक याद है कि मैंने कहा था कि वकील लोग पदाधिकारी नहीं बन सकते। वे कार्यकारिणी समितियोंके सदस्य नहीं बन सकते। लेकिन स्वयंसेवकोंके लिए जो प्रतिज्ञा रखी गई है, उसका एक प्रयोजन यह भी है कि दल भंग करनेके सरकारी आदेशोंका प्रभाव खत्म कर दिया जाये। मैं तो समझता हूँ कि प्रतिज्ञा-पत्रपर ईमानदारीसे हस्ताक्षर करनेवाला कोई भी वकील जेल जाने लायक शुद्ध होता है। और वह जेल

१ और २. देखिए "भाषण: अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें — १", २८-१२-१९२१।

जानेको तैयार है इससे इतनी बात तो सुनिश्चित हो ही जाती है कि जेल-जीवनके दौरान वह अपनी वकालत मुल्तवी रखेगा। असहयोग सम्बन्धी प्रस्तावमें वकालतको स्वराज्य मिलनेतक मुलतवी रखनेकी बात है, जो शायद वकील नहीं कर पायेंगे, पर शायद प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर करनेके बाद जेल जानेपर वे वकालत बन्द होनेके खतरेकी परवाह न करें। पहली सूरतमें तो वकालत छोड़ना बिलकुल निश्चित है और दूसरीमें उसकी सम्भावना है, काफी दूरकी सम्भावना, यदि अधिक संख्यामें लोग वैसी प्रतिज्ञा कर लें। वकीलोंके प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर करनेमें बहुत बड़ा लाभ है। वे इस प्रकार हमारे ध्येयके प्रति खुले तौरपर अपनी सहानुभूति प्रकट करते हैं, भले ही एक सीमित अर्थमें ही सही; और साथ ही वे निश्चित रूपसे स्वदेशीके ध्येयको आगे बढ़ाते हैं। मैं इसे बहुत महत्त्वपूर्ण समझता हूँ कि वकील लोग अपने सर्वथा अनावश्यक विदेशी वस्त्रों और विदेशी ढंगके सिले वस्त्रोंका परित्याग करके खद्दरकी वेश-भूषा अपनायें और इस तरह देशकी जनताकी नई भावनाके साथ अपने-आपको एकाकार कर दें। कपड़ा ऊनी हो या रेशमी या सूती, यदि हाथका कता और हाथका बुना हुआ है तो वह खद्दर है। पर आशा यही की जाती है कि जबतक जलवायु या अन्य किसी तात्कालिक आवश्यकताके कारण जरूरी न हो जाये, तबतक लोग रेशमी या ऊनी खद्दर इस्तेमाल नहीं ही करेंगे। डा० रायने[1] ठीक ही कहा[2] है कि फैशन तो असलमें मोटा-खुरदरा खद्दर पहननेका ही होना चाहिए। मैं पहले भी कह चुका हूँ और अब फिर कह दूँ कि देखनेमें मोटा-खुरदरा खद्दर, पहननेमें रेशमी टसरकी तरह मुलायम रहता है और मुलायम दिखनेवाले खद्दरके मुकाबले चमड़ीकी हिफाजत कहीं ज्यादा करता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-२-१९२२

१३१. खोजा भाइयों और बहनोंसे

एक मुसलमान भाईने मुझे एक लम्बा पत्र लिखा है। इसमें उन्होंने खोजा[3] लोगोंमें स्वदेशीका प्रचार बहुत कम होनेका उल्लेख किया है। मैं इसमें से नीचेका अंश उद्धृत करता हूँ:[4]

मैंने खोजा लोगोंके लिए कोई विशेष सन्देश अभीतक नहीं दिया है, क्योंकि उसका कोई अवसर नहीं आया था। हम स्वदेश और स्वधर्मकी इस लड़ाईमें ढाई

१. डॉ० प्रफुल्लचन्द्र राय।

२. सतीशचन्द्र दासगुप्तकी पुस्तिका **चरखा**की प्रस्तावनामें।

३. बम्बई और गुजरातमें बसा हुआ मुसलमानोंका एक सम्प्रदाय।

४. इस पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र लेखकने गांधीजीसे अनुरोध किया था कि वे ढाई लाख खोजा लोगोंके नाम एक विशिष्ट सन्देश प्रकाशित करें और उसके द्वारा उन्हें खादी और चरखेको अपनानेके लिए राजी करें

लाख तो क्या पाँच लोगोंके समुदायको भी नहीं भुला सकते। हम तो लोग जितना दें उससे उतना लेकर अछूतोंके लिए विनती करते हैं। फिर खोजा लोगोंका सम्प्रदाय तो प्रसिद्ध सम्प्रदाय है। उनके पास धन है, बल है और उनमें से कुछ लोगोंका दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक है। उनमें उदारहृदय सज्जन मौजूद हैं। कभी-कभी इस जातिके सरल चित्त भाई और बहन मुझे मिल भी जाते हैं। मैं जानता हूँ कि उनमें से कुछ तो 'नवजीवन' को बहुत ध्यानसे पढ़ते हैं। यदि मुझसे हो सके तो मैं हर खोजा भाई और बहनको असहयोगकी ओर, और यदि वह इतना न कर सके तो स्वदेशीकी ओर, अवश्य ही आकर्षित करूँ।

स्वदेशी धर्म इतना सम्पूर्ण, सादा और सब लोगोंके लिए पालनीय धर्म है कि किसी भी भारतीयको उसका त्याग नहीं करना चाहिए। एक आठ वर्षकी तेलुगु कन्याने मुझे लिखा है: "मेरी श्रद्धा है कि चरखेसे स्वराज्य मिल सकता है। इस कारण मैं नित्य चरखा चलाती हूँ और सूत कातती हूँ। मैं मानती हूँ कि इससे स्वराज्य मिल जायेगा।"

मैंने इस कन्याको उत्तरमें लिखा है कि चरखेमें मेरी श्रद्धा पूर्ववत् ही है। मैं अवश्य ही यह मानता हूँ कि यदि भारत निरन्तर चरखा चलानेके धर्मको स्वीकार कर ले, विदेशी कपड़े पहनना त्याग दे, खादी पहने और सूत कातता हुआ नित्य ईश्वरसे सहायता माँगे तो हम इतनेसे ही स्वराज्य ले लेंगे।

इसलिए जो लोग असहयोगके सभी अंगोंको नहीं समझ सकते अथवा यदि समझते हैं तो उनको आचरणमें लानेमें सक्षम नहीं हैं, वे स्वदेशी धर्मका पालन तो तुरन्त करें। मुझे बहुत-सी खोजा बहनोंने कहा है कि खोजोंमें रेशमी और बारीक कपड़े पहननेका रिवाज हो जानेके कारण गरीब बहनें जमातखानेमें[1] नहीं जा सकतीं। कुछ लोग संकोचके कारण विदेशी कपड़ोंको नहीं छोड़ सकते और कुछको रेशमी और बारीक कपड़ोंका व्यसन इस हदतक लग गया है कि वे खादीको देखकर मुँह बिचकाते हैं। जो लोग अपने देशकी वस्तुओंका इतना तिरस्कार करते हैं वे इस देशमें जन्मे होनेपर भी विदेशी हो जाते हैं। उनमें भी जो स्वदेशी वस्त्रोंका — अपनी ही बहनोंके कते मोटे या पतले सूतसे बुने गये वस्त्रोंका — त्याग करते हैं वे तो देशद्रोही ही हो गये हैं, ऐसा माना जायेगा।

यदि सभी हिन्दू और मुसलमान ऐसा आचरण करें तो देशकी कंगाली कैसे दूर हो? तब तो गरीब स्त्रियोंके लिए पत्थर तोड़नेके सिवा दूसरा धन्धा ही क्या रहता है? डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय-जैसे प्रसिद्ध रसायनशास्त्रीतक ने यह बात समझ ली है कि वे बंगालमें अकालके संकटको अपनी रासायनिक खोजोंसे नहीं, बल्कि चरखेसे दूर कर सकेंगे। उन्होंने अभी हालमें ही खुलनामें एक चरखा तैयार कराया है जिसे वे खुलना चरखा कहते हैं। वे इसे अपने कारखानोंके द्वारा अकाल-पीड़ितोंको देते हैं। अब वे अकाल-पीड़ितोंको मुफ्त चावल नहीं बाँटते, बल्कि उनसे कहते हैं कि वे सूत कातें और चावल लें। वे इस प्रकार खुलनाके गरीब गाँवोंमें चरखेका प्रवेश करा रहे

१. खोजा लोगोंका जातीय सभा-गृह।

हैं। उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि यदि खुलनाके उन चार गाँवोंमें, जिनसे उनका घनिष्ठ परिचय है; छः मासके भीतर अपनी आवश्यकताकी पूर्ति करने लायक काफी सूत नहीं कातने लगते तो वे उन गाँवोंको त्याग देंगे। यह साधु-चरित रसायनशास्त्री अब केवल खादी ही पहनता है और उसे पहनकर गर्वका अनुभव करता है। उन्हें खादीके अतिरिक्त अन्य प्रकारका वस्त्र पहननेमें लज्जा आती है।

खोजा भाइयों और बहनोंको ऐसे उदाहरणोंपर विचार करके उनका अनुकरण करना चाहिए। मैं जानता हूँ कि खोजा-जैसी छोटी जातिमें, जहाँ कंगाली लगभग है ही नहीं, यकायक इतनी सादगी आना कठिन है। वे तो दान देनेमें ही धर्म मानते हैं। उनसे मैं इतना ही कहता हूँ, आपकी जाति छोटी-सी है, ऐसा आप क्यों मान बैठते हैं? आप क्या तीस करोड़ लोगोंसे अलग हैं? आप तो इन तीस करोड़ लोगोंके दुःख-सुखमें निश्चय ही सम्मिलित हैं। इन तीस करोड़में से जबतक एक भी भाई [भुखमरीसे] हाड़ और चाम मात्र रहता है और एक भी बहनको उचित धन्धा न मिलनेसे अपनी पवित्रता बेचनी पड़ती है, तबतक आपको और मुझे अवश्य ही लज्जित होनेका कारण है। इस कारण मुझे आशा है कि खोजा और ऐसी ही अन्य जातियोंके लोग, जिन्होंने अभीतक स्वदेशीका महत्त्व नहीं समझा है, अब उसे समझ जायेंगे और अमीर और गरीब सभी खोजाओंके घरोंमें चरखा चलने लग जायेगा और खादीका चलन हो जायेगा। मुझे यह भी आशा है कि अब कोई भी खादी पहननेमें न शरमायेगा बल्कि खादीको ही सच्चा शृंगार मानेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २-२-१९२२

१३२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको लिखे पत्रका अंश

बारडोली
३ फरवरी, १९२२

आपके चरखे और 'रामायण'से ईर्ष्या होती है। आशा है आपकी 'रामायण', वाल्मीकिकी 'रामायण'का भ्रष्ट अनुवाद न होकर, कम्बणकी[1] मौलिक कृतिपर आधारित होगी जिसके बारेमें पोपकी[2] 'तमिल हैंडबुक'में मैं काफी पढ़ चुका हूँ।

[अंग्रेजीसे]

जेल डायरी

१. तमिल **रामायण**के रचयिता।

२. जॉर्ज उग्लो पोप (१८२०-१९०८); दक्षिण भारतमें ईसाई धर्मके प्रचारक; **फर्स्ट लेसंस इन तमिल, ए हैंडबुक ऑफ द ऑर्डिनरी डायलेक्ट ऑफ द तमिल लैंग्वेज** और अन्य ग्रन्थोंके लेखक।

१३३. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्‌को

बारडोली
३ फरवरी [१९२२][1]

प्रिय सुन्दरम्,

तुम्हारी टिप्पणियाँ मिल गईं। जाहिर है कि तुम मुझसे यह उम्मीद तो नहीं ही करते कि मैं तुम्हें अक्सर पत्र लिखूँ। मौन रखनेके बारेमें तुम्हारे विचारोंपर मैं नजर रख रहा हूँ और ईश्वरसे तुम्हारे लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। तुम्हारे मौन रखनेसे अवश्य ही लाभ होगा। दिनमें एक बार भोजन करना, अर्ध-उपवास कहा जा सकता है, पर अक्सर यह उपवास होता ही नहीं। लेकिन इससे फर्क क्या पड़ता है कि उसे क्या कहा जाता है? तुम संयमसे रह रहे हो, बस यही काफी है।

तुम अगर रोजाना नियमपूर्वक तीन-चार घंटे कताई नहीं करते तो मेरी यही सलाह है कि इसे जरूर शुरू कर दो।

मैं तुम्हारी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि अपने-आपको बिलकुल निर्दोष बनाना, पूर्ण बनाना, अपने देशकी परम पूर्ण सेवा करना है। और देशकी परम पूर्ण सेवा तभी सम्भव है जब वह समूची मानवताकी सेवासे मेल खाती हो। पूर्णता प्राप्त करनेके कई तरीके हैं। कुछ लोग उसे मौन साधना द्वारा प्राप्त करते हैं तो कुछ कर्मठताके द्वारा। उद्देश्य दोनों हीका लगनसे सेवा होना चाहिए।

इसलिए तुमको बारडोलीके बारेमें तबतक कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए जबतक तुम्हें यह पक्का विश्वास हो कि तुम स्वयं भी उसी दिशामें प्रयत्नशील हो।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३२०२) की फोटो-नकलसे।

१. मूलमें सन् "१९२१" लिखा है, परन्तु गांधीजी ३ फरवरी, १९२१ को बारडोलीमें नहीं थे और न तब बारडोलीकी समस्यापर चर्चा ही चल रही थी, इसलिए स्पष्ट है कि १९२२ की जगह गलतीसे १९२१ लिख दिया गया होगा।

१३४. पत्र : महादेव देसाईको

बारडोली
३ फरवरी, १९२२

चि० महादेव,

तुम्हारे पत्रका उत्तर मैंने भेजा है। आशा है तुम्हें मिल गया होगा। तुम्हारे पत्रोंका उपयोग मैं नियमित रूपसे करता रहता हूँ।

जबतक तुम जेलरकी अनुमतिसे कुछ भी काम करते हो तबतक मैं कोई कठिनाई नहीं देखता। और जब जान-बूझकर और खुले तौरपर जेलके नियमोंको भंग करनेकी बात हो तब तो कठिनाईका कोई सवाल ही नहीं उठता। नियमोंका भंग कब किया जा सकता है, इसके बारेमें मैं तुम्हें लिख ही चुका हूँ।

यह तो तुमने देखा ही होगा कि बारडोली शुरुआत करे, यह निश्चय हो चुका है। अब मैंने नियमानुसार वाइसरायको अल्टीमेटम भेजा है। उसकी अवधि ११ तारीखको पूरी होती है। इसलिए ११ तारीखको हमें कुछ करके बताना होगा। मेरा पत्र वाइसरायको आज मिल जाना चाहिए। उसमें लिखी हुई माँगोंको यदि वे स्वीकार करते हैं तो फिलहाल सविनय अवज्ञा बन्द रहेगी। मेरी माँग यह है कि वाइसराय अपनी विज्ञप्ति वापस ले लें, कैदियोंको रिहा करें और भविष्यमें शान्त प्रवृत्तियोंमें हस्तक्षेप न करनेकी घोषणा करें। अगर वे ऐसा करें तो हम फिरसे शान्तिपूर्वक अपने कार्यका संगठन करनेमें जुट जायेंगे। इन माँगोंमें समाचारपत्रोंको स्वतन्त्रता प्रदान करनेकी बात आ जाती है। इस माँगको तो वाइसराय कदाचित् स्वीकार नहीं करेंगे लेकिन अन्ततः उन्हें इसे स्वीकार करना ही होगा, बशर्ते कि बारडोली बलिदानकी शक्तिका परिचय दे और देशके अन्य भाग शान्त रहें।

तुम लोग तो अब वहाँ स्वराज्यका तन्त्र चलाने लगे होगे। तुम्हें अध्यक्ष आदिका चुनाव करके ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि हरएक व्यक्तिका मिनट-मिनटका हिसाब लिया जा सके।

मेरे साथ रामदास और कृष्णदास हैं। गंगाबेन भी आई हैं। थोड़े समयमें आश्रमसे कातने और बुननेवाले लोगोंको बुलानेवाला हूँ। यहाँ बुनाईका काम कुछ ढीला जरूर है।

विट्ठलभाई अधिकतर यहीं रहेंगे।

तुम्हारा स्वास्थ्य बहुत अच्छा होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ७८६६)की फोटो-नकलसे।

१३५. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

बारडोली
४ फरवरी, १९२२

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा तार मिला। पूर्वी आफ्रिकाके बारेमें मुझे इससे अच्छे परिणामोंकी आशा नहीं थी, और इन दिनों मैं दक्षिण आफ्रिकासे भी कोई ज्यादा आशा नहीं रखता। पर जैसे भी हो वहाँके भारतीय अपनी बातपर डटे ही रहेंगे। तुम जितना कर सकते हो अवश्य करो, पर मैं चाहूँगा कि मेरी भाँति तुम भी यह महसूस कर लो कि जबतक भारतकी स्थितिमें काफी सुधार नहीं हो जाता, तबतक अन्य उपनिवेशोंकी दशामें भी किसी अधिक सुधारकी आशा नहीं की जा सकती। तुमको अन्दाज नहीं हो सकता कि भारतमें अमन और कानूनके नामपर कैसे-कैसे नृशंस कार्य किये जा रहे हैं। जो हो रहा है, वह पंजाबमें की गई ज्यादतियोंसे भी सचमुच बहुत बुरा है। सौभाग्यसे अब लोग जान-बूझकर अपनी शक्तिके कारण उसे सहन कर रहे हैं, कमजोरीके कारण नहीं। मैं जानता हूँ कि इसमें अभी सुधारकी गुंजाइश है। इसीलिए बारडोलीका निर्णय किया गया है।

यदि कोई ऐसी बात हो जिसके बारेमें मिल-बैठकर बात करना जरूरी हो, तो तुम बारडोली आ जाओ। सूरतसे यहाँ पहुँचनेमें डेढ़ घंटा लगता है। कोलाबासे सूरतके लिए रातमें ९ बजकर २० मिनटपर एक बड़ी अच्छी गाड़ी मिलती है, जो ६ बजे सुबह सूरत पहुँचा देती है। तुम १० बजे सुबह बारडोली पहुँच सकते हो।

वाइसरायको लिखा मेरा पत्र[1] तुम अवश्य पढ़ना।

सप्रेम,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६०९)की फोटो-नकलसे।

१. १ फरवरी, १९२२का।

१३६. अंगद-बसीठी

सभ्यतायुक्त युद्धमें योद्धा अपने वलकी सीमा पा लेनेके वाद पूर्णतया नम्र हो जाता है। पूर्ण शक्ति संचयके पश्चात् वह विनय कदापि नहीं छोड़ता। वह युद्ध आरम्भ करते हुए हर वार अपने प्रतिस्पर्द्धीको समुचित रूपसे चेतावनी देता है, उसे सावधान करता है और उससे अपनी भूल सुधारने अथवा युद्धका कारण दूर कर लेनेकी प्रार्थना करता है।

रामने रावणके प्रति ऐसी ही विनय दिखाई थी। जव रामचन्द्र सेतुवन्ध रामेश्वरम् पहुँच गये तव उन्होंने अपनी वानर-सेनाको एकत्र किया और सोचने लगे कि अव रावणको चेतावनी देनेके लिए किसे दूत वनाकर भेजें? कितने ही वानरोंको यह कार्रवाई अनावश्यक मालूम हुई। कितनों ही को इसमें कमजोरी दिखाई दी। उन्हें लगा रावण-जैसे अभिमानीके प्रति विनय दिखाना उसके अभिमानको उत्तेजना देनेके वरावर है। रामने उनकी वातोंको गौरसे सुना और सेनाको समझाया कि रामकी सेनाको यह चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नहीं कि दूत भेजनेका रावणपर कुछ असर होगा या नहीं। रामकी सेनाको तो सिर्फ सभ्यताका खयाल करना चाहिए। यदि इससे रावणका गर्व वढ़ता है तो वह और असावधान हो जायेगा। इसमें रामकी क्या हानि? राम चेतावनी देता है तो इस धर्माचरणसे रामका तो वल वढ़ेगा ही। इसलिए रामने वलवान्, धैर्यवान् और विनयशील अंगदको दौत्यके लिये चुना और अंगद रावणके दरवारमें दूत वनकर गया। रावण चिढ़ गया। वह भला कहीं समझानेसे समझनेवाला व्यक्ति था? आखिर वह अपने राजपाटसे हाथ धो वैठा।

सभ्यताके इसी प्राचीन नियमके अनुसार हमने वाइसरायको वसीठी-पत्र भेजा है। वे तो मानेंगे नहीं, किन्तु इससे हमें क्या हानि होगी? यदि वे न मानें तो इससे हमारा वल वहुत वढ़ जायेगा। संसार भी हमारी ओर अधिक झुकेगा और हमारा संसार तो हमारे वे भाई हैं जो अभी हमें भटका हुआ समझकर सरकारको मदद दे रहे हैं।

इस वार मुद्दा वदल गया है। खिलाफत, पंजाव या स्वराज्यके प्रश्नोंका निपटारा करनेसे पहले हमें सरकार और उसके साथियोंसे एक दूसरी ही वातपर निपटना है।

इस सरकारने अपनी सत्ता हमेशा लोगोंको भ्रममें रखकर कायम रखी है। रोग होता है कुछ और, वताया जाता है कुछ और। वंगालियोंको वंग-भंगके सम्वन्धमें शिकायत थी। इस कारण उन्होंने वम फेंके। सरकारने इस वमवारीको ही वीमारी वताकर असली रोगको छिपानेका प्रयत्न किया। उसने वमवारीको रोकनेके वहाने वेगुनाह लोगोंको तंग करने और जनताको पौरुषहीन वनानेकी योजना तैयार की। यही रौलट कानूनके वारेमें समझिए। इस रोगकी चिकित्सा करने जाकर पंजाव सन्निपातग्रस्त हो गया।

इस सन्निपातके शमनके लिए हत्याकाण्ड रचा गया और मूल रोगको छिपानेका प्रयत्न किया गया। अब खिलाफत, पंजाब और स्वराज्यके प्रश्नोंके निमित्त सारा भारत दुःखी होकर सन्तप्त हो उठा है। अत्याचारोंके मारसे कभी-कभी वह पागलपन भी कर बैठता है। सरकार इस पागलपनको मूल रोग बताकर दमनचक्र चलाती है। इस प्रकार मूल रोगको भुलाना, उसके परिणामोंको रोग बताना और उनके निवारणके लिए दमन-नीतिका आश्रय लेना सरकारका एक नियम-सा बन गया है।

अब हम अनुभवसे यह जान गये हैं कि सरकारको ऐसा मौका ही नहीं दिया जाना चाहिए कि वह लोगोंकी आँखोंमें धूल झोंक सके। असली रोग मिटता है या नहीं, हम चाहे इसकी परवाह न करें, परन्तु अब हम उसे ऐसा तो हरगिज न करने दें जिससे वह मूल रोगसे उत्पन्न उपद्रवोंको ही मूल रोग बताये और लोगोंको दबानेका प्रयत्न करे। ऐसे प्रयत्नोंके बलपर ही सरकारने आजतक अपनी सत्ता जमा रखी है। अब हम इस बातको गवारा नहीं कर सकते कि सरकारकी भूलोंसे या स्वेच्छाचारितासे लोगोंको कष्ट हों। सम्भव है उससे लोग आगेसे न रहें और सरकार उन्हें दबानेके प्रयत्नमें की गई अपनी स्वेच्छाचारिताकी ओरसे दुनियाका ध्यान बँटानेमें सफल हो जाये। यदि उसका यह शस्त्र सदाके लिए छीन लिया जाता है तो फिर वह स्वेच्छाचारी नहीं रह सकेगी। जहाँ दमन-नीति समाप्त हुई कि स्वेच्छाचारिताके बदले लोकमतका राज्य आया।

भाग्यसे सरकारने ही दमन-नीतिका आश्रय लेकर इस प्रश्नको खड़ा किया है। हमें सरकारकी यह चुनौती तो स्वीकार कर ही लेनी चाहिए। सरकार हमें जितना चाहे कष्ट दे, परन्तु हमारी तीन माँगोंके साथ यह एक चौथी माँग हो गई, और फिलहाल यही सर्वोपरि है। हमें ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देनी चाहिए कि सरकार दमन-नीतिका आश्रय ले ही न सके।

दमन-नीति क्या है? हमारा मुँह बन्द करना, हमारे सभा-सम्मेलनोंको भंग करना, और हमारे अखबारोंको बन्द करना। वह लालाजीको 'वन्देमातरम्' कहनेसे रोके, भला यह कहीं सहन किया जा सकता है? वह मजहरुल हक साहबका — 'मदरलैंड' पत्र बन्द कर दे, यह कहीं बरदाश्त किया जा सकता है? जफरअली खाँका 'जमींदार' बन्द, हबीब खाँका 'सियासत' और राधाकृष्णका 'प्रताप' बन्द। 'इंडिपेंडेंट' तो बन्द है ही। प्रयागका 'स्वराज्य' भी बन्द है। इन सबका इलाज हमारे पास अवश्य होना चाहिए। यह दमन-नीति कदापि नहीं चलनी चाहिए।

जो सरकार लोकमतके अधीन होना नहीं चाहती वह हमेशा प्रजाकी आवाजको दबानेका प्रयत्न करती है। जब वह ऐसा नहीं कर पाती तब उसकी हार हो जाती है। इसलिए बारडोलीकी ओरसे जो शान्ति-प्रस्ताव किये गये हैं उनमें दमन-नीतिका त्याग करनेकी माँगको प्रधानता दी गई है। जब हमारी वाणी मुक्त हो जायेगी, जब हमारे अखबार छपने लगेंगे और जब हम आजादीसे अपने सभा-सम्मेलन कर सकेंगे तब हम आजाद-जैसे ही होंगे। हमें तब समझना चाहिए कि तीन-चौथाई स्वराज्य तो मिल गया। तब प्रजाकी आवाज ही सरकारको बाध्य करनेके लिए पर्याप्त होगी।

स्वराज्यका एक अर्थ यही है कि हम अपनी इच्छाके अनुसार व्यवहार कर सकें और बोल-चल सकें। उस समय सिर्फ किसीकी जान लेनेपर अंकुश रहेगा और जान लेनेका हक तो हमें स्वराज्यमें भी नहीं मिल सकता।

उस वसीठी-पत्रमें यह कहा गया है कि यदि सरकार अहिंसात्मक कार्योंके सम्बन्धमें गिरफ्तार किये गये कैदियोंको छोड़ दे और दमन-नीतिको त्याग दे तो हम फिलहाल सविनय अवज्ञा वन्द कर देंगे। तीव्र सविनय अवज्ञा उसे कहते हैं जिसमें व्यक्ति अथवा समुदाय जान-बूझकर सत्ताका अनादर करनेके लिए मनुष्यकृत निर्दोष कानून भी मर्यादामें रहकर भंग करे। जो सविनय अवज्ञा आज सारे देशमें कर रहे हैं यह तो अनिवार्य है अतः सौम्य कानून-भंग है। इसके विना तो काम चल ही नहीं सकता। इसका अर्थ यह है कि हम सरकार द्वारा मुंह वन्द किये जानेपर भी वोलें, सभाओंपर रोक लगा दिये जानेपर भी सभाएँ करें और अखवारोंके वन्द कर दिये जानेपर भी लिख-लिखकर अखवार निकालें। यह सव सौम्य सविनय अवज्ञा है। हम यह सौम्य सविनय अवज्ञा कर रहे हैं और जवतक ऐसे वेहूदे हुक्म निकलते रहेंगे तवतक अवज्ञा करते ही रहेंगे। परन्तु इसके अलावा जो अवज्ञा वचावके रूपमें नहीं वल्कि सरकारको चिढ़ानेके लिए की जाती है, जो विद्रोहके रूपमें है, हम उसे — यदि सरकार दमन-नीतिका त्याग कर दे तो — वन्द कर देंगे। मैं समझता हूँ कि यदि इतना हो जाये तो हमें उसे वन्द कर देना चाहिए; क्योंकि यदि सरकार हमारे भाषणों, हमारी लेखनी और हमारे सभा-सम्मेलनोंपर से रोक हटा ले और उन्हें स्वतन्त्र कर दे तो फिर उसे हमारी माँगें कुछ दिनोंमें स्वीकार करनी ही होंगी।

अतएव इस समय वारडोलीपर इतना ही भार है कि वह योद्धाओंको छुड़ा ले और दमन-नीति वन्द करा दे। यदि वारडोली इतना कर सके तो कहा जायेगा कि उसने अपना काम पूरा कर दिया।

परन्तु यदि वाइसराय इसे भी न करें तो फिर क्या कर्त्तव्य है? यदि वे लोकमत व्यक्त करनेका अधिकार देना भी स्वीकार न करें तो फिर तीव्र सविनय अवज्ञा किये विना कैसे रहा जा सकता है? एक हदतक तो मनुष्य प्रतिरक्षात्मक संघर्ष करता रहता है; परन्तु किसी क्षण उसे आक्रमण भी करना पड़ता है। तीव्र सविनय अवज्ञा एक प्रकारका अहिंसात्मक आक्रमण ही कहा जा सकता है।

हम वाइसराय महोदयसे यह सव स्पष्ट कह चुके हैं। यह शान्ति-प्रस्ताव करके हमने पूरी सभ्यता प्रदर्शित की है। इसका अर्थ यह है कि यदि वाइसराय ११ फरवरी तक वारडोलीके मार्फत की गई हमारी माँगोंको स्वीकार कर लेंगे तो वारडोलीमें सविनय अवज्ञा फिलहाल मुल्तवी रहेगी। योद्धाओंके छूटनेपर सव मिलकर जो तय करेंगे वैसा आन्दोलन चलाया जायेगा। मेरी मान्यता तो यह है कि यदि हमारी ये माँगें मंजूर कर ली गईं तो सामुदायिक अवज्ञा वहुत छोटे रूपमें करनी पड़ेगी। हमारी माँगें मंजूर होनेका दूसरा अर्थ हो ही नहीं सकता। इसलिए मेरा यह मत है कि भाषण, लेखन और सभा-सम्मेलनकी स्वतन्त्रताकी माँगका स्वीकार किया जाना प्रायः असम्भव है।

बारडोलीको सारी तैयारी कर लेनी चाहिए। जहाँ जो कसर रह गई हो उसे दूर कर डालें और प्रत्येक नर-नारी ईश्वरसे यह प्रार्थना करे कि सर्वशक्तिमान् प्रभु, उन्हें जान और मालके नुकसानको सहन करनेकी पूरी शक्ति दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-२-१९२२

१३७. मेरा सूरतका भाषण

मुझे दूसरोंके और अपने भाषणोंका सार देना अच्छा लगता है और मैं यह जानता हूँ कि मुझमें उसकी क्षमता है। किन्तु मुझे ऐसा अवकाश शायद ही कभी मिलता है। सूरतमें ३१ तारीखको[1] मैंने जो भाषण दिया था उसका सार देनेका मुझे अवकाश है और उसको देनेकी मेरी इच्छा भी है।

उस दिन सूरतमें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक थी। उस बैठकमें समितिके सदस्य हकीम अजमल खाँ, मियाँ छोटानी, डाक्टर अन्सारी, डाक्टर चोइथराम गिडवानी, श्री कौजलगी और श्री विट्ठलभाई पटेल और मैं उपस्थित थे। इस स्थितिका लाभ उठाकर सूरतके लोगोंकी सभाका आयोजन किया गया था। यह निश्चय किया गया था कि सभामें मुझे नहीं जाना है इसलिए मैं अपने काममें व्यस्त था। इसी बीच भाई दयालजी-ने आकर मुझे खबर दी कि सभामें उपस्थित लोग चाहते हैं कि मैं वहाँ जाऊँ। इसका कारण यह था कि डाक्टर चोइथरामने जरूरत न होनेपर भी सभामें यह बात कह दी कि सम्भव है मैं दस दिनके भीतर पकड़ लिया जाऊँ। इसपर सभाके लोगोंने आग्रहपूर्वक कहा, "तब तो हम उन्हें देखना चाहते हैं।" उनकी इस माँगपर दयालजी मुझसे इस आशयका अनुरोध करनेके लिए आये थे और उसे मानकर मैं सभामें गया।

सामान्यतः मुझे जो-कुछ कहना होता है उसकी रूपरेखा मैं पहलेसे निश्चित कर लेता हूँ। किन्तु इस बार तो मैंने कोई विचार ही नहीं किया था। किन्तु जो बात मेरे मनमें पिछले कुछ दिनोंसे इतनी रम रही है वह मेरे मस्तिष्कमें निखर आई और उसे मैंने जितनी स्पष्टतासे पहले कभी नहीं रखा था उतनी स्पष्टतासे सूरतके लोगोंके सम्मुख रखा। यह बात सभी गुजरातियोंके जानने योग्य है, ऐसी मेरी धारणा है।

मैं चाहता हूँ कि मैंने जो विचार प्रकट किये हैं वे विचार सभी लोगोंके हों। इसलिए लोगोंके लाभार्थ सूरतके अपने उस भाषणका सार देनेकी मेरी इच्छा हो आई है।

एक समय ऐसा था जब मुझे यह लगता था कि यदि मैं जेल चला जाऊँ तो कैसा अच्छा हो? किन्तु अब तो मेरी जेल जानेकी इच्छा बिलकुल ही कम हो गई

१. जनवरी १९२२ को।

है। मैं मानता हूँ कि मेरा जेल जाना तो केवल आराम और मनमौजीपन है। सरकार मुझे जेलमें ले जायेगी तो मुझे दुःख देगी, इसका मुझे कोई भय नहीं है। दूसरे कैदियोंको तो थोड़ा-वहुत दुःख मिला है। इसलिए उनका जेल जाना तो कुछ हदतक सार्थक था और अव भी सार्थक है। इसलिए मैंने नीचे लिखे विचार प्रकट किये।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-२-१९२२

१३८. बँधाई हुई आशा

वारडोलीने मुझे वहुत वड़ी आशा बँधाई है। ईश्वर वारडोलीके लोगोंको साहस और सद्‌बुद्धि दे। जैसे दक्षिण आफ्रिकामें प्रिटोरियाकी मस्जिदमें शपथ ली गई थी,[2] जैसे चम्पारनमें मुजफ्फरपुरमें शपथ ली गई थी,[3] जैसे अहमदावादके मजदूरोंने नदी-तटपर पेड़के नीचे शपथ ली थी,[4] जैसे खेड़ाके पाटीदारोंने नडियादमें प्रतिज्ञा की थी,[5] वैसे ही वारडोलीके पाटीदारोंके प्रतिनिधियोंने पहले एक पेड़के नीचे और उसके वाद अन्य लोगोंके साथ सम्मेलनके मण्डपमें प्रतिज्ञा ली है।

जैसे अवसे पहले की गई प्रतिज्ञाएँ किसी भी तरह पूरी हुईं वैसे ही क्या ईश्वर इस प्रतिज्ञाको भी पूरी नहीं करेगा? कोई गिरेगा, कोई नया उठेगा, परन्तु क्या अन्तमें जो निश्चय किया है वह पूरा न होगा? सत्यकी ही जीत होती है और जवतक सत्यके लिए प्राण देनेवाला एक भी मनुष्य तैयार है तवतक सत्यके विरुद्ध चाहे करोड़ों लोगोंका दल हो तो भी जीत सत्यकी ही होती है। यह ब्रह्म-वाक्य है। इसमें अपवाद नहीं हो सकता।

किन्तु वारडोलीका विश्वास करनेमें मैंने भूल नहीं की है। मैं तो भूलें करता ही रहता हूँ और ईश्वर उनको सुधारता ही रहता है। लोग मुझे हजारों वार धोखा दें तो भी मैं उनपर अविश्वास कैसे करूँ? जवतक मुझे उनपर विश्वास करनेका तनिक भी कारण दिखाई देता है तवतक तो मैं उनपर विश्वास ही करूँगा। अवि-श्वासका स्पष्ट कारण मिलनेपर विश्वास रखना, यह मूर्खता है। केवल सन्देहके कारण अविश्वास करना उद्धतता और नास्तिकता है। विश्वासके वलपर ही तो नाव तरती है।

यदि मुझे यह मालूम हो कि कोई मनुष्य मुझे धोखा दे रहा है और फिर भी मैं उसपर विश्वास करूँ तो मेरी मूर्खताका कोई पार ही नहीं होगा। मुझसे तो वारडोलीके लोगोंने इतने शुद्ध हृदयसे वातें की हैं कि उनपर अविश्वास करना

१. देखिए "भाषण: सूरतकी सार्वजनिक सभामें", ३१-१-१९२२।
२. देखिए खण्ड ५।
३. देखिए खण्ड १३।
४ व ५. देखिए खण्ड १४।

मुझे पाप लगा। मैं अपने मनमें अविश्वास लेकर उनके प्रतिनिधियोंसे बात करने बैठा और उन्हीं लोगोंने मेरे मनमें यह विश्वास पैदा किया। बारडोलीके लोग सीधे हैं, भोले हैं, उनको अपने सुख-चैनकी परवाह नहीं। वे धनी नहीं हैं, वे भिखारी नहीं हैं, वे उत्पाती नहीं हैं और वे कायर नहीं हैं। वे झगड़ालू नहीं हैं बल्कि प्रेमी हैं। उनमें आपसके बड़े झगड़े नहीं हैं। उन्होंने अधिकारियोंसे अपने सम्बन्ध मीठे बना रखे हैं। उनकी कोई स्थानीय शिकायतें नहीं हैं। इसलिए उनकी लड़ाई शुरू करनेकी मांग विशुद्ध स्वार्थहीन मांग है। उन्होंने इसकी योग्यता प्राप्त करनेका पूरा प्रयत्न किया है। इसमें उन्होंने अपनी पूरी शक्ति लगानेमें कोई कमी नहीं रखी है। वे पूरी तरह स्वदेशीका पालन नहीं कर सके हैं; किन्तु इसका भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने अस्पृश्यताका निवारण जिस हदतक किया है उतना भारतके अन्य किसी भी भागमें नहीं किया गया है। इसलिए मैं मानता हूँ कि यदि देशमें किसी ताल्लुकेको इसके योग्य माना जा सकता है तो वह बारडोली ताल्लुका ही है।

किसीके मनमें यह शंका उठती है कि बारडोलीके लोग सौम्य स्वभावके हैं इसलिए वे जेल जानेसे ऊब जायेंगे, मरनेसे डरेंगे और जब उनकी माल-मिल्कियत जब्त की जायेगी तब वे हार मान बैठेंगे। मेरा अबतक का अनुभव मुझे बताता है कि सौम्य लोग ही शान्तिसे कष्ट सहते हैं। उत्पाती लोगोंसे कष्ट सहन नहीं किये जाते। वे तो दूसरोंको ही कष्ट देते हैं।

और क्या यह लड़ाई ही सौम्य लोगोंके लिए नहीं है? इस लड़ाईका उद्देश्य सौम्य लोगोंको उत्पाती बनाना नहीं बल्कि वीर बनाना है और उत्पाती लोगोंको, उनकी वीरताको कायम रखते हुए, नम्र बनाना है। यदि उत्पाती लोगोंके जेल जानेसे ही यह लड़ाई जीती जायेगी तो हमें मानना चाहिए कि हम अभीसे हार गये, क्योंकि तब तो उत्पाती लोगोंकी ही सत्ता चलेगी। इससे तो ईश्वर कमजोरोंका नहीं बल्कि उत्पाती लोगोंका ही सहायक ठहरेगा। इससे यहां भी यूरोपकी 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली नीति लागू होगी। क्या अली-भाई, दास, लालाजी और मोतीलालजी इसीके लिए जेल गये हैं?

हमें तो उत्पात, ढोंग, उद्धतता, मारपीट, झूठ, पशुबल और ऐसे ही अन्य दुर्गुणोंको हटाकर शान्ति, सरलता, नम्रता, सादगी, सत्य और आत्मबलको विजयी बनाना है। इसलिए पहला गुण, जिसकी खोज हमें करनी चाहिए वह यही है जिसे हम सौम्यता कहते हैं। इस सौम्यतापर जब वीरताका रंग चढ़ेगा तब वह चमक जायेगी। मैंने बारडोलीके लोगोंसे ऐसे ही कार्यकी आशा रखी है।

किन्तु बारडोलीने अबतक जितना काम किया है उसे उससे बहुत अधिक करना बाकी है। अभी तो उसे बहुत-कुछ करके दिखाना होगा। मैंने बारडोलीमें दो नये शब्द सुने हैं 'उजले लोग' और 'काले लोग'[1]। 'उजले लोगों' में पाटीदार, वैश्य, ब्राह्मण आदि हैं और 'काले लोगों' में दुबला आदि जातियां। इस लड़ाईमें 'उजले लोगों' ने और उसमें भी पाटीदारोंने अधिक दिलचस्पी और हिस्सा लिया है। ऐसा

१. गुजरातीमें "काली परज", उस क्षेत्रकी आदिवासी जातियोंके लिए व्यवहृत एक समूहवाचक शब्द।

माना गया है कि 'काले लोग' इनके पीछे-पीछे चलेंगे। यह सम्भव भी है। किन्तु इतना काफी नहीं है। 'काले लोगों'को भी देश-हितका ज्ञान होना चाहिए। उन्हें भी जागृतिमें भाग लेना आरम्भ करना चाहिए। यदि वे इसमें भाग न लें तो यह उनकी दासताकी अवस्थाका सूचक होगा। उजले और कालेका यह भेद ही समाप्त किया जाना चाहिए। लोग अपने-आपको एक-दूसरेसे ऊँचा मानें, यह असह्य है। एक ईश्वर ही ऊँचा है। हम सब नीचे हैं। यदि ईश्वरके दरबारमें कोई दर्जा होगा तो वह कर्मके अनुसार होगा। जिसने अधिक सेवा की होगी वह ऊँचा होगा और जिसने कम सेवा की होगी वह नीचा होगा। इसका अर्थ यह है कि वहाँ तो सेवक ही सरदार बनेगा। यदि शूद्र ज्ञानी बन जाये तो उसकी बराबरीका ब्राह्मण दूसरा नहीं। ब्राह्मण तो वही होता है जो अपने ज्ञानका उपयोग सेवामें करता है। यदि कोई भी शुद्ध सेवा-धर्ममें ब्राह्मणका मुकाबला कर सकता है तो ब्राह्मण तो केवल नामका ब्राह्मण रहा। ब्राह्मणमें शौर्य, व्यवहार-कुशलता, और सेवाकी पराकाष्ठा होनी चाहिए; क्योंकि उसमें ज्ञान है। ब्राह्मणसे अपेक्षा यह है कि वह अपने ज्ञानके द्वारा शौर्य, व्यवहार-कुशलता और सेवा, इन तीनों गुणोंको सबसे अधिक व्यक्त करे। किन्तु यदि ब्राह्मण कायर, व्यवहार-शून्य और सेवासे रहित होकर सरदारी करने लग जाये तो वह ज्ञानी नहीं बल्कि अहंकारी है। इसलिए बारडोलीके 'उजले लोगों'को काला और 'काले लोगों'को उजला होना पड़ेगा एवं अन्त्यज शब्द बारडोलीमें न रहे तभी उसकी प्रतिष्ठा होगी।

इसलिए अब स्वयंसेवकोंको, जिन्हें 'काले लोग' कहा जाता है उन्हें भी धीरे-धीरे आन्दोलनमें लाना चाहिए। अन्त्यज बालकोंको अपनी शालाओंमें प्रविष्ट करना अथवा अन्त्यजोंको अपने कुँओंसे पानी भरने देना ही काफी नहीं है। यदि अन्त्यजोंमें कोई व्यसन हो तो उनसे प्रेमपूर्वक उसका त्याग करवाना होगा। उनका स्पर्श करना जितना जरूरी है उतना ही जरूरी उनको स्नान आदिके नियम बताना, उनको मांसाहार छोड़नेके लिए समझाना और उन्हें गोरक्षा-धर्मका पालन करना सिखाना भी है।

स्वदेशीके सम्बन्धमें भी ऐसा ही है। बारडोलीवासियोंका एक क्षण भी व्यर्थ गँवाना सहन नहीं किया जा सकता। स्त्रियों, पुरुषों और बच्चोंका जितना भी समय बचे, वह सब कातने, पींजने और बुननेमें लगाना चाहिए। चरखा घर-घरमें पहुँचना चाहिए। बुनकरोंकी बहुत कमी है; यह कमी दूर की जानी चाहिए। जितने अधिक युवक बुनाईका काम सीखें उतना ही अच्छा है। बारडोली हर प्रकारसे आदर्श ताल्लुका तभी बनेगा जब वहाँ अच्छी खादी सर्वत्र बनने लग जायेगी।

बारडोलीका एक भी गाँव ऐसा न होना चाहिए जहाँ कांग्रेसका झण्डा न फहराता हो। ये सब काम स्वराज्य मिलनेके बाद थोड़े ही होंगे। इन कामोंको करना ही स्वराज्य है। जब लोग एक-दूसरेसे सम्बन्ध रखने लगें, एक-दूसरेका आदर करने लगें और अपने बनाये नियमोंको मानने लगें तभी स्वराज्य हो गया।

शराबकी बुराई बारडोलीमें निश्चय ही है। माना जाता है कि जिन लोगोंको शराबकी बुरी आदत पड़ गई है उनसे उसे छुड़वाना मुश्किल है। किन्तु यह मुश्किल

अपनी इच्छाकी ही है। यदि हम अपने शराबी भाइयोंको समझायें और उन्हें शराब पीनेके नुकसान बतायें तो वे हमारा कहना अवश्य मानेंगे। यह सब काम बहुतसे स्वयंसेवक मिलें तभी किया जा सकता है।

लोगोंने जेल जानेकी तैयारी कर ली है, ऐसा तभी कहा जा सकता है जब वे ये सब काम करने लगें। वैसे तो यह भी सम्भव है कि यदि हम इस प्रकार काम करें तो हमें जेल जाना ही न पड़े। हमारी जेल जानेकी तैयारी हमारी पवित्रतामें निहित है। इसलिए बारडोलीवासियोंको सतत प्रयत्न करके अब भी जो कमियाँ रह गई हैं उनको दूर कर देना चाहिए। ऐसा कर लेनेपर ही यह माना जा सकता है कि बारडोली समस्त भारतका भार उठाने योग्य हो गया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-२-१९२२

१३९. अपील बारडोलीके लोगोंसे

पत्रिका सं० १

बारडोली

रविवार, माघ सुदी ८ [५ फरवरी, १९२२]

बारडोलीके भाइयो और बहनो,

मेरा इरादा आपको यथासम्भव नियमित रूपसे पत्रिकाएँ लिखते रहनेका है।

आपने और मैंने कोई छोटी-मोटी जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं ली है। समस्त हिन्दुस्तानका बोझ आपने अपने कन्धोंपर ले लिया है। आप परीक्षामें सर्वप्रथम आना चाहते हैं।

आप बड़ेसे-बड़ा बलिदान देना चाहते हैं और उसके लिए पूरी आत्मशुद्धि करनेकी तैयारी कर रहे हैं।

ईश्वर आपका मनोरथ सफल करे। लेकिन यदि मनुष्य प्रयत्न न करे तो ईश्वर भी कदापि कृपा नहीं करता।

अभी-अभी मैंने सुना कि अठारह राष्ट्रीय स्कूलोंमें अन्त्यज बच्चे दाखिल हो चुके हैं। यह बात सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई। जबतक एक भी राष्ट्रीय स्कूल अन्त्यज बच्चोंसे विहीन है तबतक परिषद्का[1] निश्चय पूरा हुआ नहीं माना जा सकता।

इसी तरह प्रत्येक घरमें चरखा दाखिल किया जाना चाहिए। प्रत्येक असहयोगी स्त्री अथवा पुरुषको हाथकी कती-बुनी खादीके अतिरिक्त और कोई कपड़ा नहीं पहनना चाहिए।

१. बारडोली ताल्लुका परिषद्, जो २९ जनवरी, १९२२ को हुई थी।

मुझे उम्मीद है कि बारडोली ताल्लुकेमें एक भी समझदार व्यक्ति जमीनका महसूल नहीं भरेगा, भले ही सरकार उसका माल-असबाब, ढोर-बर्तन आदि ले जाये और चौथाई[1] भी ठोक दे। हमें कमसे-कम इतना तो सहन करना ही होगा।

कोई यह पूछ सकता है कि यदि सरकार हमारी जमीनें जब्त करके हमें बेघर कर दे तो हम क्या करेंगे? यदि सरकारने सभ्यतापूर्ण ढंगसे व्यवहार किया तो मेरे खयालसे जमीन जब्त किये जानेका सवाल ही नहीं उठता। लेकिन यदि सरकार ऐसा करना चाहे तो इसमें सन्देह नहीं कि उसके पास ऐसा करनेकी शक्ति है। हमें बेघरबार होनेकी स्थितिका सामना करनेके लिए भी तैयार तो रहना ही होगा। लेकिन स्वराज्य-वादीको इस बातका विश्वास अवश्य रहेगा कि स्वराज्य मिलनेके बाद उसे उसकी जमीन वापस मिल जायेगी। शस्त्रोंकी लड़ाईमें भी योद्धा इस विश्वासको लेकर लड़ता है कि विजय मिलनेपर वह अपनी जमीन प्राप्त कर लेगा। तो फिर इस अहिंसात्मक युद्धका इसके अतिरिक्त और कोई परिणाम कैसे निकल सकता है? लेकिन लड़ाईके दौरान हमें अपनी जमीनें जब्त किये जानेकी भी पूरी तैयारी रखनी चाहिए।

यह लड़ाई ही आत्मविश्वास अर्थात् ईश्वरपर श्रद्धा रखनेकी है। आप सबके हृदयोंमें यह श्रद्धा उत्पन्न हो, ऐसी मेरी कामना है।

आपका सेवक और शुभचिन्तक,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
गुजराती, १२-२-१९२२

१४०. पत्र : एस्थर मेननको

५ फरवरी [१९२२][2]

प्यारी बिटिया,

तुम्हारा प्रसन्नतादायक पत्र मिला। तुम्हारा रुख बिलकुल ठीक है। सरकार जो भी करना चाहे, करने दो। सारी बातोंकी खबर मुझे भेजती रहना। अभी इस मौके-पर मैं यह खबर अखबारोंमें नहीं दे रहा हूँ। तुम जानती ही हो कि मैं बारडोलीमें सामूहिक सविनय अवज्ञाकी तैयारी कर रहा हूँ। तुमने वाइसरायके नाम मेरा पत्र पढ़ लिया होगा।

तुम सबको प्यार,

तुम्हारा,
बापू

नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडियामें सुरक्षित अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकल तथा 'माई डियर चाइल्ड' से।

१. लगानके चौथे भागके बराबर जुर्माना जो लगान न देनेकी हालतमें किसानसे वसूल किया जाता है।
२. इस पत्रमें उल्लिखित "वाइसरायके नाम पत्र" १ फरवरी, १९२२ को ही लिखा गया था।

१४१. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे

बारडोली
५ फरवरी, १९२२

मैंने इतवारकी[1] सुबह महात्माजीसे भेंट की। वे काफी स्वस्थ और प्रसन्नचित्त दिखाई पड़े और नियमपूर्वक रोजकी तरह कताई शुरू करने जा रहे थे। उनके पुत्र रामदासने चरखा लाकर रख दिया। महात्माजी चरखा चलाते-चलाते मेरे प्रश्नोंके उत्तर देते रहे . . .

प्र० : कांग्रेस कार्य-समितिने अब विदेशोंमें किये जानेवाले प्रचारपर इतना जोर क्यों दिया है, और इस प्रकार उसने इस सम्बन्धमें नागपुर कांग्रेसके फैसलेको बदल क्यों दिया है?

उ० : प्रश्न गलत ढंगसे पूछा गया है। नागपुर कांग्रेसने समाचारोंके प्रसारके रूपमें विदेशोंमें किये जानेवाले प्रचारको निषिद्ध तो ठहराया नहीं था, और अब कांग्रेस कार्य-समितिने मुझे विदेशोंमें समाचारोंके प्रसारकी एक योजना पेश करनेका आदेश दिया है और मैं अपनी सारी अक्ल यह सोचनेमें लगा रहा हूँ कि विदेशोंमें समाचारोंके प्रसारके लिए देश कष्ट-सहनके अतिरिक्त और क्या कर सकता है?

इस प्रचारको आप कैसे संगठित रूप देना चाहते हैं?

पहले प्रश्नका उत्तर देते हुए मैंने बतलाया है कि मुझे सोचना यह है कि कष्ट-सहनके द्वारा जितना प्रचार हो सकता है क्या उसके अलावा भी प्रचारके लिए कुछ किया जा सकता है। मेरा अपना खयाल यह है कि कष्ट-सहन द्वारा ही सर्वोत्तम और सबसे प्रभावशाली प्रचार किया जा सकता है। फिर भी चूंकि कार्य-समितिने इसका सारा दायित्व मुझे ही सौंप दिया है, इसलिए मैं पूरी ईमानदारीसे इसपर विचार करूंगा और देखूंगा कि इस सिलसिलेमें अधिक क्या किया जा सकता है।

लन्दनकी 'नेशन' जैसी प्रगतिवादी पत्रिकाने भी भारतकी परिस्थितिको बड़े ही गलत ढंगसे समझा है और आपके देश-निकालेका सुझाव दिया है। क्या यह तथ्य ऐसा सिद्ध नहीं करता कि आपके आन्दोलनके वास्तविक महत्त्वके बारेमें इंग्लैंडमें घोर अज्ञान फैला हुआ है और ऐसी परिस्थिति पैदा करनेमें नागपुर कांग्रेसके निर्णयका काफी बड़ा हाथ है?

मैं ऐसा नहीं मानता। मेरी रायमें तो ब्रिटिश जनता और अन्य देशोंकी जनता भी नागपुर कांग्रेसके मुकाबले आज कहीं ज्यादा जानकारी रखती है। लेकिन 'नेशन' पत्रिकाने जैसे अज्ञानका परिचय दिया है, वैसा तो हमेशा सामने आता

१. ५ फरवरी।

रहेगा, क्योंकि समाचारपत्रोंको संसार-भरकी घटनाओंके बारेमें लिखना पड़ता है। मैं तो समझता हूँ कि ऐसा अज्ञान अपरिहार्य है और हम इसके बारेमें सिवाय इसके कुछ नहीं कर सकते कि उनकी बातोंकी कोई परवाह ही न करें और अपने कामके जरिये कोशिश करते रहें कि अज्ञान न फैलने पाये। मैं इसका एक उदाहरण देता हूँ। मुझे यदि देश-निकाला दिया जायेगा या मौतकी सजा दी जायेगी तो सारे संसारपर यह प्रकट हो जायेगा कि कितना बड़ा अन्याय किया जा रहा है। लेकिन उससे पहले संसारके लोगोंकी आँखें नहीं खुलेंगी। आज इंग्लैंडकी पत्रिकाओंको मेरे कार्यों और मेरे इरादोंपर सन्देह व्यक्त करनेका अधिकार है, लेकिन जब मैं मैदानमें उनके अज्ञानके विरुद्ध आवाज उठानेके लिए यहाँ रहूँगा ही नहीं तब ऐसे प्रचारकोंको मेरे बारेमें अपनी जानकारी ठीक करनेपर विवश होना ही पड़ेगा। मेरा अनुभव तो यही रहा है। ब्रिटिश भारतीयोंकी सामाजिक प्रतिष्ठासे सम्बन्धित प्रश्नकी ओर दक्षिण आफ्रिका और यहाँतक कि भारतके लोगोंका भी ध्यान मैं तबतक आकर्षित नहीं कर पाया जबतक कि जनताने कष्ट-सहनकी प्रक्रिया शुरू नहीं की, और इसीलिए मैंने यह सीखा है कि जो लोग बहरे बने रहना चाहते हों, उनको अपनी बात सुनानेकी कोशिश करना बेकार है। हमारे कष्ट-सहनसे एक ऐसा वातावरण तैयार होगा जिसमें लोग हमारी बातोंको सुनेंगे।

'क्रॉनिकल' ने हालमें एक सुझाव रखा था कि मिस्र और आयरलैंड-जैसे परतन्त्र और पीड़ित देशोंकी जनताके नेताओंके साथ परस्पर सहानुभूतिके आधारपर मैत्री-सम्बन्ध कायम किये जाने चाहिए जिससे कि असहयोगके प्रचार-आन्दोलनके बलपर पाश्चात्य देशोंके साम्राज्यवादका सम्मिलित रूपसे सामना किया जा सके। इस सुझावके बारेमें आपका क्या खयाल है?

मैं तो चाहूँगा कि ऐसी मैत्री स्थापित हो, लेकिन वह तो बनते-बनते ही बनेगी। मेरा विनम्र मत यह है कि हम लोग अभी ऐसी उपयोगी मैत्री स्थापित करनेकी दिशामें काफी आगे नहीं बढ़ पाये हैं। मैं नाम-मात्रकी मैत्रीमें विश्वास नहीं करता। हम जब तैयार हो जायेंगे तो वह अपने-आप स्थापित हो जायेगी।

क्या आप समझते हैं कि दमन बन्द कराने और राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके प्रस्तावके प्रश्नपर बंगाल सरकारकी हार हो जानेसे सरकार दमन बन्द करनेपर मजबूर हो जायेगी? या आपको उम्मीद है कि सरकार कौंसिलके आदेशकी अवज्ञा करेगी? यदि कौंसिलोंकी अवज्ञा की जाती है, तो क्या आपकी रायमें एक बार फिर यह सिद्ध नहीं हो जायेगा कि सुधार एक तमाशेसे ज्यादा कुछ नहीं हैं और क्या फिर उसके बाद कौंसिलोंमें एक क्षण भी चिपके रहनेसे सहयोगियोंके आत्म-सम्मान-पर सीधी चोट नहीं पड़ेगी?

यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि कौंसिलमें प्रस्ताव पास हो जानेसे सरकार अपनी दुराग्रहपूर्ण नीतिसे पीछे हट ही जायेगी; हो सकता है कि हट जाये, लेकिन हो सकता है न हटे। यदि असहयोग आन्दोलन न छिड़ा होता तो सरकार इस

प्रकारके प्रस्तावकी पूरी तरह उपेक्षा ही कर देती, लेकिन अब यदि सरकार कौंसिल-के प्रस्तावकी अवज्ञा करती है तो उसे बर्बरताके नंगे नाचपर उतर आना पड़ेगा और इसलिए मैं यह नहीं कह सकता कि वह क्या करेगी। मैं तो समझता हूँ कि सरकार आजकल जिस किस्मका दमन कर रही है वही इस बातका निश्चित प्रमाण है कि सुधारोंके नामपर बिलकुल मखौल किया जा रहा है। पर कौंसिलकी रायकी उपेक्षा करना तो निश्चय ही स्पष्ट रूपसे दिखा देगा कि सरकार कौंसिलके सदस्योंको वाकई कितनी अहमियत देती है।

आपने लाला लाजपतरायकी रिहाई और पुनः गिरफ्तारीका क्या अर्थ लगाया है?

मुझे तो लाला लाजपतरायकी पुनः गिरफ्तारीकी अदूरदर्शितापूर्ण भूलके लिए सरकारकी अक्लपर तरस ही आता है। इससे पंजाब और आम तौरपर भारतके लोगोंका रुख और ज्यादा कड़ा ही बन सकता है।

क्या आपका खयाल है कि बारडोलीका सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू होते ही, आपको गिरफ्तार कर लिया जायेगा और क्या हफ्ते-भर यहां रहनेके बाद आपको यह भरोसा हो गया है कि आपकी अनुपस्थितिमें आन्दोलन ठप्प नहीं होगा?

यह कहना कठिन है कि मियाद खत्म होनेपर सरकार मेरे साथ क्या सलूक करेगी; लेकिन मैं नहीं समझता कि मेरे गिरफ्तार होते ही बारडोलीकी जनता कन्धे डाल देगी। पर यदि वह सचमुच हारकर बैठ रहती है, तब तो फिर सरकारका मुझे गिरफ्तार करना बिलकुल उचित होगा क्योंकि उसका मतलब होगा कि आन्दोलनमें कमजोरी आ गई है। यदि भारत सचमुच आन्दोलनके लिए तैयार है तो अन्य सभी कार्यकर्त्ताओंकी गिरफ्तारीकी भांति मेरी गिरफ्तारीके फलस्वरूप भी असहयोगकी कार्र-वाइयोंको और अधिक बढ़ावा मिलना चाहिए और अहिंसाका वातावरण अधिक सुस्थिर बनना चाहिए। मुझे व्यक्तिगत तौरपर इसके बारेमें कोई शंका नहीं है। लेकिन निश्चित तौरपर कोई यह नहीं कह सकता कि मेरी गिरफ्तारीके बाद क्या होगा। मुझमें ऐसी-ऐसी मानवीय और अलौकिक शक्तियां आरोपित की जाती हैं; इस बारेमें लोगोंमें इतना अन्धविश्वास है कि कभी-कभी ऐसा लगने लगता है कि मुझे बन्दी बनाना, देश-निकाला देना और यहांतक कि प्राण-दण्ड देना भी सर्वथा उचित ही होगा। मेरे अन्दर अलौकिक शक्तियां मौजूद हैं — ऐसा विश्वास वास्तवमें राष्ट्रीय प्रगतिमें बाधक बनता है और विवेकशील लोगोंको सरकारको धन्यवाद देना चाहिए यदि वह मुझे जन-जीवनसे अलग कर दे और बादमें स्वयं कोई पागलपन न करे बल्कि न्यायकी भावनासे और आतंकका सहारा लिये बिना काम करने लगे। लेकिन हालकी घटनाओंको देखकर मुझे सरकारसे ऐसी कोई आशा नहीं बँधती।

बारडोली सम्मेलन[1] द्वारा पास किये गये प्रस्तावको छोड़ दें तो भी क्या आपको इस बातका भरोसा है कि बारडोली सचमुच ऐसा कदम उठानेके लिए तैयार है? क्या बारडोली शुद्ध खादी तैयार करनेके मामलेमें आत्म-निर्भर बन चुका है?

१. २९ जनवरी, १९२२ को।

जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, मेरा तो निश्चित मत है कि बारडोली बिलकुल तैयार है। आज बारडोलीमें हिंसाकी जितनी कम गुंजाइश है, उतनी अन्य किसी भी ताल्लुकेमें नहीं है। मेरे लिए इस गारण्टीका निस्सन्देह बहुत बड़ा महत्त्व है और इसे नजरमें रखकर ही मैंने ऐसा निर्णय किया है। बारडोली अभीतक तो आत्म-निर्भर नहीं बना, लेकिन अब वह आत्म-निर्भर बन जायेगा। लोग तैयार हैं, पर उनको और अधिक संगठित करना जरूरी है।

मारपीट और कोड़े लगानेकी घटनाओंको देखते हुए, क्या अब भी आप यही कहेंगे कि कमसे-कम कष्ट भोगकर स्वराज्य प्राप्त करनेका छोटेसे-छोटा रास्ता यही है कि इस आन्दोलनके दौरान बड़े पैमानेपर अभी और कष्ट सहे जायें?

मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। कारण, कष्टसे पीड़ा तो होती ही है। पर यदि जनता बदलेकी कार्रवाई करेगी तो उसे और अधिक पीड़ा भुगतनी पड़ेगी। लेकिन यदि जनता काफी हदतक अहिंसाका पालन करती रहेगी, तो कोई प्रतिक्रिया न होने पर, सरकार खुद ही कुछ समय बाद हाथ-पैर पटककर चुप बैठ जायेगी। यह एक वैज्ञानिक सत्य है, जिसका कहीं कोई अपवाद हो ही नहीं सकता। इसलिए यदि जनता सरकारकी हिंसाका जवाब हिंसासे देगी तो उस सूरतमें उसे आजके मुकाबले सौ गुने अधिक कष्ट भोगने पड़ेंगे।

क्या मैं पूछ सकता हूँ कि जेलोंमें पड़े सैकड़ों युवकोंके कष्टोंको नजरमें रखकर ही आपने सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनके सम्बन्धमें कदम उठानेका फैसला किया है? क्या आप यह नहीं मानते कि वे जिस चीजके लिए संघर्ष कर रहे थे वह सब प्राप्त करनेके बाद अब उनको पूरे सम्मानके साथ यथाशीघ्र रिहा कर दिया जाना चाहिए?

अवश्य ही, और मैंने इसीलिए इस समय सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनके सर्वप्रथम उद्देश्यके रूपमें उनकी रिहाई और सभी किस्मकी क्रूरता बन्द करानेके मसलेको रखा है।

क्या आपको यह उम्मीद नहीं कि सरकार एक काफी लम्बे अर्सेतक आपके सविनय अवज्ञा आन्दोलनकी ओरसे आँखें मूँदकर आपके प्रयत्नोंको विफल बना सकती है? क्या सरकार एक अवांछनीय स्थिति उत्पन्न होने देनेके बजाय एक लम्बे अर्सेतक के लिए राजस्वकी वसूली मुल्तवी नहीं कर सकती या उसे बिलकुल छोड़ ही नहीं सकती? तब उस सूरतमें आप क्या करेंगे?

सरकार ऐसा अवश्य ही कर सकती है। और अगर वह ऐसा करे तो मैं कोई भी उत्तेजनापूर्ण कार्रवाई न करके सरकारकी बुद्धिमानी और उसके संयमकी पूरी कद्र करूँगा। परन्तु वास्तवमें उसका अर्थ यही होगा कि बारडोलीने अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है और तब फिर दूसरे ताल्लुके भी अवश्य ही उसका अनुकरण करेंगे और मेरा खयाल है कि सरकार जबतक आम जनताकी रायके आगे सिर झुकानेका फैसला ही नहीं कर लेती तबतक वह चाहे संगीनोंके बलपर ही हो, राजस्व वसूल करना अपनी प्रतिष्ठाका प्रश्न बना लेगी।

क्या आपका विश्वास है कि भारतके मुसलमान खिलाफतके प्रश्नके सन्तोषप्रद निबटारेके बाद भी कांग्रेसकी न्यूनतम मांगोंका इतने ही उत्साहके साथ आग्रह करते रहेंगे?

मेरे दिमागमें इस सम्बन्धमें जरा भी सन्देह नहीं है और शायद इसलिए कि खिलाफतके मामलेमें जो-कुछ भी हासिल होगा, उसे वही भारत महफूज रख सकता है जो इंग्लैंडके प्रतिबन्धोंसे मुक्त हो और अपना शासन आप चलाता हो।

क्या आपने बारडोलीके किसानोंमें कोई खास विशेषता देखी है?

बारडोलीके किसानोंमें उनकी सादगी और भोलेपनके अतिरिक्त कोई और विशेषता मैंने नहीं देखी।

क्या वाइसरायके नाम अपना हालका पत्र लिखनेकी प्रेरणा आपको 'मालवीय कान्फ्रेंस' के किसी सदस्यसे मिली थी?

वह मैंने बिलकुल अपने-आप ही लिखा था। सच तो यह है कि कार्य-समितिके सदस्योंको थोड़ी देरके लिए आश्चर्य भी हुआ था और उन्होंने इसे संघर्षके तरीकेमें एक परिवर्तनके रूपमें भी लिया था, हालांकि मैंने 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' के जरिये इसके लिए पहलेसे काफी जमीन तैयार कर दी थी। घोषणा-पत्रमें संघर्षके तरीके-में परिवर्तन करने जैसी कोई चीज नहीं है, पर यह तो परिस्थितिको देखते हुए उसके अनुसार थोड़ी फेर-बदल की गई थी। मान लीजिए कि आप एक दिशामें आगे बढ़ रहे हैं और आपका दुश्मन रास्तेमें कोई ऐसी बाधा खड़ी कर देता है जिसे आप पार नहीं कर सकते। तब जाहिर है कि आप अपने हमलेका रुख बदल देंगे और आप उस बाधाको दूर करनेमें ही अपनी सारी शक्ति लगायेंगे; तभी तो आप आगे बढ़ सकेंगे। और मैंने कार्य-समितिकी पूरी सहमतिसे ठीक यही किया है।

यदि वाइसराय आपकी शर्तें नहीं मानते, तो आप 'मालवीय कान्फ्रेंस' में भाग लेनेवाले नरमदलीय नेताओंसे क्या करनेकी उम्मीद करते हैं?

मैं तो यही उम्मीद करता हूँ कि वे भाषण स्वातन्त्र्य, समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रता और संस्थाओंकी स्वतन्त्रताके झण्डेके नीचे आ जायेंगे और मुझे तो यही आशा है कि वे कमसे-कम इस हदतक असहयोगियोंके साथ आ मिलेंगे। हाँ, अगर उनको मेरे द्वारा उठाये इन मुद्दोंपर विदेशी लोगोंसे न्याय हासिल करनेका कोई दूसरा ज्यादा कारगर तरीका मिल जाये तो बात दूसरी है। मैं जहाँतक समझ पाया हूँ इन मुद्दोंके बारेमें देशमें कोई मतभेद नहीं है।

क्या आपका खयाल है कि वाइसराय उन शर्तोंपर अमल करेंगे?

उनको करना चाहिए।

यदि आपको कोई आपत्ति न हो, तो मैं पूछूं कि सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनके बारेमें पहला कदम आप क्या उठायेंगे?

पहला कदम तो जाहिर है, यही होगा कि कर-अदायगी न करनेके आन्दोलनको और मजबूत किया जाये और उसके बाद मैं सोचूंगा कि हिंसाका कोई भी खतरा उठाये बिना किन-किन अन्य क्षेत्रोंमें सविनय अवज्ञा शुरू की जा सकती है। आप

समझते ही हैं कि वैसे तो सारी संविधि-पुस्तिका मेरे सामने है और उसके उन कानूनोंको छोड़कर जो विश्वके नैतिक नियमनकी व्यवस्थाका अंग माने जा सकते हैं, बाकी सारे कानून तोड़े जा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-२-१९२२

१४२. मौन-दिवसकी टिप्पणियाँ

[६ फरवरी, १९२२][1]

मैं समझता हूँ कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय अभी न तो बलिदानके लिए तैयार हैं, और न वहाँ जनताके दिलमें इतनी ज्यादा चुभन ही है।

* * *

पूर्वी आफ्रिकाके भारतीयोंमें यदि कुछ भी दम है, तो उनसे जहाँतक बन सके और हर रूपमें निष्क्रिय प्रतिरोध करना चाहिए —

'इंडिया आफिस' द्वारा वाइसरायको पूरी तरह काबू किये बिना चर्चिल उस तरहका वक्तव्य नहीं दे सकते थे — सबसे अच्छा तो यही रहे कि वाइसराय और मॉन्टेग्यु इस सवालपर इस्तीफा दे दें।

लेकिन यदि भारतीय सदस्योंमें थोड़ा भी आत्म-सम्मान रह गया है तो उनको भी ऐसा ही करना चाहिए — लेकिन अफसोस है कि फिलहाल मुझे इसकी कोई उम्मीद नहीं।

* * *

पानीका सवाल यहाँ निबट गया है। अछूत लोग आम कुँओंसे पानी भर सकते हैं —

प्रिय चार्ली,

तुम अगर कताईके सम्बन्धमें मेरी टिप्पणीको ठीक नहीं समझते, तो उसको भेजनेकी जरूरत नहीं। हम लोग उसके बारेमें बात कर लेंगे।

मोहन

अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २६३३)की फोटो-नकलसे।

१. इन टिप्पणियोंमें उल्लिखित चर्चिलके वक्तव्यके बारेमें सी० एफ० एन्ड्रयूजने १६ फरवरी, १९२२ के **यंग इंडियामें** एक लेख लिखा था। गांधीजीने ४ फरवरीको एन्ड्रयूजको बारडोली आनेकी दावत दी थी; देखिए इसी तिथिका "पत्र: एन्ड्रयूजको"। एन्ड्रयूजने ८ फरवरीको लिखा था (एस० एन० ७८९६) कि वे जिन-जिन विषयोंपर बात करना चाहते थे, उनपर "सोमवारको" — गांधीजीके मौन-दिवसपर — बातें नहीं कर पाये। इसलिए ये टिप्पणियाँ सोमवार, ६ फरवरीको लिखी गई होंगी।

१४३. पत्र : मु० रा० जयकरको

बारडोली
६ फरवरी, १९२२

प्रिय श्री जयकर,

आपका पत्र और तार दोनों मिले। मैं देख रहा हूँ कि वाइसरायको मेरा पत्र लिखना समितिको अच्छा नहीं लगा। इसका मुझे खेद है। मेरा तो खयाल था कि करीब एक पखवारेतक सविनय अवज्ञा शुरू न करके मैंने अत्यधिक सावधानी बरती है। मैं नहीं समझता था कि वाइसरायको पत्र लिखना भी उचित नहीं था। मैंने जान-बूझकर पत्रको तीन दिन बाद प्रकाशित किया था, जैसा कि आप चाहते थे।

मैंने अपनी ओरसे इस बातमें भी काफी सावधानी रखी है कि बन्दियों और आन्दोलनके उद्देश्योंके साथ हमदर्दी रखनेवालोंको, मेरी रायमें, क्या करना चाहिए। सम्मेलनके मंत्रियोंको कृपया यह बतला दीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
स्टोरी ऑफ माई लाइफ

१४४. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

सोमवार, ६ फरवरी, १९२२

तुम फिर नहीं आये। इसका कारण मैं तुम्हारा आलस्य ही समझता हूँ। जिस बातका निश्चय कर लिया हो उस बातपर अमल करना शुरू कर ही देना चाहिए।[1]

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. मथुरादास त्रिकमजीने गांधीजीके सुझावपर हर हफ्ते एक दिनके लिए बारडोली आना स्वीकार किया था।

१४५. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

[६ फरवरी, १९२२][1]

चि० परसराम,[2]

तुम्हारा खत मीला। इलाहाबादमें चरखाका कुछ भी काम होता है क्या?

बापूके आशीर्वाद

मास्टर परसराम मेहरोत्रा
आनन्द भवन
इलाहाबाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ५९९४)से।
सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

१४६. भारत सरकारको प्रत्युत्तर

[बारडोली
७ फरवरी, १९२२][3]

वाइसराय महोदयके नाम लिखे मेरे पत्रका जो उत्तर सरकारने दिया है, उसे मैंने बड़े ध्यानसे पढ़ा है। मैं स्वीकार करता हूँ कि इस उत्तरमें मामलेसे सम्बन्धित असली बातोंसे जिस तरह बचनेकी कोशिश की गई है, उसके लिए मैं बिलकुल तैयार नहीं था। मैं सरकारके प्रथम खण्डनको ही लेता हूँ। उत्तरमें लिखा है:

> वह (सरकार) जोरके साथ इस कथनका खण्डन करती है कि उसने गैर-कानूनी दमन-नीतिका अवलम्बन किया है, और वह इस बातको भी नहीं मानती कि असहयोगी दलको सभा-संगठनकी स्वतन्त्रता, वाणीकी स्वतन्त्रता और समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रताके बुनियादी अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए मजबूर होकर ही सविनय अवज्ञाका सहारा लेना पड़ रहा है।

१. टाककी मुहरसे।

२. इन दिनों परशुराम मेहरोत्रा इंडिपेंडेंटमें कार्य करते थे; बादमें आश्रममें हिन्दीके अध्यापक।

३. गांधीजीको ६ फरवरी, १९२२ की सरकारी विज्ञप्ति ७ फरवरी (देखिए परिशिष्ट २) के अखबारोंमें देखनेको मिली थी। उसको पढ़नेके तुरन्त बाद ही उन्होंने यह उत्तर बोलकर लिखाया था और तार द्वारा एसोसिएटेड प्रेस, दिल्लीको भेजा था।

मेरे पत्रको सरसरी तौरपर पढ़ लेनेसे ही यह मालूम हो जाता है कि यद्यपि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने ४ नवम्बरको दिल्लीमें हुई अपनी बैठकमें सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलानेका अधिकार दे दिया था, फिर भी वह आरम्भ नहीं हुआ। मैंने अपने पत्रमें यह भी स्पष्ट कर दिया था कि १७ नवम्बरको बम्बईमें हुई शोचनीय घटनाओंके कारण प्रस्तावित सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर दिया गया है। यह निर्णय यथासमय प्रकाशित कर दिया गया था और सरकार तथा जनता दोनोंको यह बात मालूम है कि अब भी लोगोंमें जो-कुछ हिंसाकी प्रवृत्ति रह गई है उसको दूर करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न किया जा रहा है। यह बात भी सरकार और जनता दोनोंको मालूम है कि स्वयंसेवकोंसे एक विशेष प्रतिज्ञा-पत्रपर दस्तखत कराये जानेकी तजवीज की गई थी जिसका सुविचारित उद्देश्य यह था कि स्वयंसेवक दलमें सिर्फ चरित्रवान् लोगोंको ही भरती किया जाये। इन स्वयंसेवक संघोंका मुख्य उद्देश्य जनतामें अहिंसाके संस्कारोंको दृढ़ करना और असहयोगसे सम्बन्धित सभा-समारोहोंमें शान्ति कायम रखना था। दुर्भाग्यवश बम्बईकी दुर्घटनाओं और शायद उससे भी अधिक उसी दिन हुई कलकत्तेकी पूर्ण हड़तालके कारण भारत सरकार अपना सन्तुलन खो बैठी। मैं इस बातसे इनकार नहीं करना चाहता कि कलकत्तेमें डराने-धमकानेके तरीकेसे भी थोड़ा-बहुत काम लिया गया होगा, परन्तु मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि इस डराने-धमकानेसे नहीं बल्कि कलकत्तेकी पूर्ण हड़तालसे उत्पन्न कुढ़नके कारण ही भारत सरकार और बंगाल सरकारका दिमाग भिन्ना उठा। दमन तो पहलेसे ही हो रहा था; किन्तु उसके खिलाफ कुछ भी कहा या किया नहीं गया। लेकिन जिन सरकारी विज्ञप्तियोंमें घोषणा की गई कि स्वयंसेवक संघोंके उद्देश्यसे निपटनेके लिए दण्डविधि संशोधन अधिनियमका उपयोग किया जायेगा तथा असहयोगियों द्वारा की जानेवाली सभाओंसे निपटनेके लिए राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमोंका सहारा लिया जायेगा, उनके साथ-साथ जो दमन शुरू हुआ, वह असहयोगी समाजपर बमके गोलेकी तरह आया। इसलिए मैं फिर कहता हूँ कि इन विज्ञप्तियोंके प्रकाशनसे तथा बंगालमें देशबन्धु चित्तरंजन दास और मौलाना अबुल कलाम आजादकी गिरफ्तारी, संयुक्त-प्रान्तमें पण्डित मोतीलाल नेहरू तथा उनके साथियोंकी गिरफ्तारी तथा पंजाबमें लाला लाजपतराय तथा उनके दलके लोगोंकी गिरफ्तारीसे यह नितान्त आवश्यक हो गया कि आक्रामक सविनय अवज्ञा तो नहीं बल्कि प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा, जिसे दूसरे शब्दोंमें अनाक्रामक प्रतिरोध कहते हैं, प्रारम्भ की जाये। सर होर्मसजी वाडियाको भी यहाँतक कहना पड़ा कि यदि बम्बईकी सरकारने बंगाल, संयुक्त-प्रान्त और पंजाबकी सरकारका अनुकरण किया तो मुझे ऐसी विज्ञप्तियोंका प्रतिरोध करना ही होगा, अर्थात् अपना नाम स्वयंसेवकोंमें लिखाना होगा या सरकारके ऐसे आदेशोंके विरुद्ध की जानेवाली सभाओंमें सम्मिलित होना होगा। इस तरह, यह स्पष्ट है कि जबतक सरकार अपनी उस नीतिको नहीं बदलती, जिसके कारण भारतके कितने ही भागोंमें सार्वजनिक सभाएँ, सार्वजनिक संस्थाएँ तथा असहयोगी अखबार बन्द हो गये हैं, तबतक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलानेका पूरा कारण मौजूद है।

अब मैं इस कथनको लेता हूँ कि सरकारने "गैर-कानूनी दमन-नीति प्रारम्भ कर दी है।" कानून और व्यवस्थाके नामपर सरकारी अधिकारियोंने जो नृशंस कार्य किये हैं, उनपर खेद प्रकट करने या क्षमा माँगनेकी बजाय सरकार अपने उत्तरमें किसी भी प्रकारके "गैर-कानूनी दमन" से साफ इनकार करती है। यह देखकर इस सम्बन्धमें मैं सरकार और जनता दोनोंसे आग्रह करता हूँ कि वे निम्नलिखित तथ्योंपर गम्भीरतासे विचार करें। इनकी सचाईके बारेमें तो किसी तरहके शककी गुंजाइश ही नहीं है।

१. कलकत्तेमें इन्टाली मुकामपर सरकारी अधिकारियोंका गोली चलाना और यहाँतक कि लाशके साथ भी हृदयहीन व्यवहार करना;

२. नागरिक रक्षक-दल (सिविल गार्ड्स) द्वारा किये गये पाशविक अत्याचार जो स्वीकार किये जा चुके हैं;

३. ढाकामें एक सभाका जबरदस्ती भंग किया जाना और बेगुनाह लोगोंका टाँग पकड़कर घसीटा जाना, यद्यपि उन्होंने किसी प्रकारका उत्तेजनात्मक काम नहीं किया था;

४. अलीगढ़में स्वयंसेवकोंके साथ इसी प्रकारका सलूक;

५. लाहौरमें स्वयंसेवकों तथा जनतापर किये गये पाशविक और अनुचित प्रहारोंके सम्बन्धमें डा० गोकुलचन्द नारंगकी अध्यक्षतामें काम करनेवाली समिति-के निष्कर्ष जो (मेरे विचारसे) निर्णायक हैं;

६. जालन्धरमें स्वयंसेवकों तथा जनताके साथ किया गया दुष्टतापूर्ण तथा अमानुषिक व्यवहार;

७. देहरादूनमें एक बालकपर गोली चलाना और बेरहमीके साथ जबरदस्ती वहाँ एक सार्वजनिक सभाका भंग किया जाना;

८. बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत यह तथ्य कि एक अधिकारीने अपने दस्तेके साथ बिहारके कुछ गाँवोंको लूटा-खसोटा और उन्होंने इसके लिए किसीकी इजाजत नहीं ली थी; लेकिन जैसा कि असहयोगियोंका कहना है, उन्होंने एक बागान-मालिकके इशारेपर ही ऐसा किया। इसी तरह सोनपुरमें स्वयंसेवकोंको मारना-पीटना और कांग्रेसकी खादी तथा कागजोंको जला देना;

९. कांग्रेस और खिलाफतके दफ्तरोंमें आधी रातको तलाशी लेना और गिरफ्तारी करना।

सरकारी अधिकारियोंकी निरंकुशता और बर्बरताके ऐसे कितने ही 'अचूक प्रमाण' हैं। यहाँ तो मैंने उनके कुछ नमूने ही पेश किये हैं। मैंने जो-कुछ कहा है वह सारे देशमें जो-कुछ हो रहा है, उसका दशमांश भी नहीं है; और मैं कहना चाहता हूँ कि भारतके बहुतसे प्रान्तोंमें जैसा अन्धाधुन्ध दमन हो रहा है उसके सामने — यदि हम जलियाँवाला बागके हत्याकाण्ड और रेंगनेके आदेशको छोड़ दें तो — पंजाबमें हुए अमानवीय अत्याचार भी फीके पड़ जाते हैं। मेरा खयाल है, इस बातका तथ्योंके आधारपर कोई भी खण्डन नहीं कर सकता। मेरा निश्चित विश्वास है कि ऊपर मैंने

जिन काली करतूतोंका वर्णन किया है, उनकी तुलनामें जलियाँवाला बागका हत्याकाण्ड एक साफ-सुथरी कार्रवाई था। इसमें शुभकी बात यह है कि इस वक्त लोगोंपर गोलियाँ नहीं दागी जा रही हैं या उनकी नृशंस हत्या नहीं की जा रही है, इसलिए हजारों निरपराध मनुष्योंको जो यन्त्रणाएँ सहनी पड़ी हैं वे हमारे दिलको इतना नहीं हिला पातीं कि जिससे देशका हर आदमी इस सरकारके खिलाफ उठ खड़ा हो। मानो इन बेगुनाहोंके खिलाफ चलाई जा रही यह लड़ाई काफी नहीं थी, इसलिए अब जेलोंमें भी शिकंजे कसे जा रहे हैं। आज कराची जेलमें साबरमती जेलके उस एकाकी कैदीपर और बनारस जेलमें कैदियोंके उस समूहपर क्या बीत रही है, हमें कुछ भी मालूम नहीं। ये सब लोग उतने ही बेगुनाह हैं, जितना बेगुनाह मैं अपने-आपको मानता हूँ। उनका जुर्म यही है कि उन्होंने अपनेको राष्ट्रीय सम्मान और गौरवका अभिरक्षक बनाया है। मैं आशा कर रहा हूँ कि ये स्वाभिमानी और विद्रोही आत्माएँ अधिकारियोंका स्वाँग बनानेवाले इन गुस्ताख लोगोंके आगे नहीं झुकेंगी। मैं कहता हूँ कि इन सत्ताधारियोंको कोई हक नहीं है कि वे इन उन्नत आत्माओंको अपने सामने प्रायः नंगा हाजिर होनेके लिए मजबूर करें, उन्हें अपनी दोनों खुली हथेलियाँ जोड़कर सलाम करने और गुलामोंकी तरह अपना अदब करनेके लिए बाध्य करें या उनसे जबरदस्ती 'सरकार एक है' का नारा लगवायें। ईश्वरसे डरनेवाला कोई भी व्यक्ति यह नारा नहीं लगायेगा, फिर चाहे उसका पाँव काठमें डालकर उसे कितने ही दिनोंतक चौबीस घंटे क्यों न खड़ा किया जाये। बंगालके एक स्कूलके अध्यापकके साथ ऐसा ही सलूक करनेकी खबर आई है।

मानव-स्वभावकी गरिमामें अपने विश्वासके कारण मैं यह मान लेता हूँ कि लॉर्ड रीडिंग और उनके पत्रका मसविदा बनानेवाले उन तथ्योंको नहीं जानते, जिन्हें मैंने प्रस्तुत किया है या फिर वे विश्वासके वशीभूत होकर कि उनके कर्मचारी तो गलती कर ही नहीं सकते, उन बातोंको सच माननेसे इनकार करते हैं जिन्हें लोग 'ईश्वरीय सत्य' समझते हैं। यदि मेरी कही बातोंमें जरा भी अतिरंजना हो तो मैं उन्हें उसी प्रकार सार्वजनिक रूपसे वापस ले लूँगा और उनके लिए क्षमा-याचना करूँगा जिस प्रकार अब मैं उन्हें सार्वजनिक रूपसे कह रहा हूँ। लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि जो सरकारसे सम्बद्ध न हों ऐसे पुरुषों या स्त्रियोंके किसी भी निष्पक्ष न्यायाधिकरणके सामने मैं इन आरोपोंके यदि प्रत्येक अक्षरको नहीं तो कमसे-कम प्रत्येक आरोपके सारको, बल्कि उससे भी बहुत-कुछ अधिक, सिद्ध कर देनेको तैयार हूँ। मैं श्री मालवीयजी तथा उन दूसरे सज्जनोंसे, जो कि गोलमेज परिषद् बुलानेका श्रेयहीन कार्य कर रहे हैं, अनुरोध करता हूँ कि वे इन आरोपोंकी जाँचके लिए एक निष्पक्ष आयोग बैठायें, जिसके निर्णयके अनुसार मेरी जीत या हार हो।

लोगोंको जो शारीरिक यातनाएँ दी जा रही हैं, उनके साथ जो पाशविक दुर्व्यवहार किया जा रहा है, उसके कारण मेरे तथा मेरे कितने ही साथियोंके लिए जीवन असह्य हो गया है, और ऐसी दशामें मैं सर्व-साधारणका समय उन बातोंकी तफसील देकर नष्ट नहीं करना चाहता, जिन्हें मैं देशमें प्रचलित कानूनका दुरुपयोग मानता हूँ। परन्तु

बम्बईके उपद्रवोंके सम्बन्धमें लोगोंको भ्रम हो जानेकी जो सम्भावना है, उसे मैं दूर कर देना चाहता हूँ। वे उपद्रव लज्जाजनक और निन्दनीय तो थे ही, किन्तु यह याद रखना चाहिए कि उनमें जिन ५३ व्यक्तियोंकी जानें गईं, उनमें ४५ से अधिक असहयोगी या उनसे सहानुभूति रखनेवाले उपद्रवकारी थे और जिन ४०० व्यक्तियोंको चोटें पहुँचीं उनमें से भी निश्चित रूपसे ३५० से ऊपर उसी वर्गके थे। मैं शिकायत नहीं करता। उन असहयोगियोंको तथा उनके हिमायती हुल्लड़बाजोंको वही मिला जिसके कि वे पात्र थे। उन्होंने हिंसा शुरू की — उसका फल उन्होंने पाया। लेकिन इस बातको भी भूलना नहीं चाहिए कि असहयोगियोंने ही इंडिपेंडेंटों तथा सहयोगियोंकी सहायतासे १७ तारीखके दुर्भाग्यपूर्ण दिनके दो दिन बादतक होनेवाले उपद्रवोंका शमन कर शान्ति स्थापित की। हां, इस दिशामें बम्बई सरकारके योगदानका खयाल तो रखना ही है।

मैं सरकारके इस कथनको पूरी तरह अस्वीकार करता हूँ कि संशोधन "दण्डविधि अधिनियम (क्रिमिनल लॉ एमेंडमेंट ऐक्ट) का उपयोग केवल उन्हीं संघोंतक सीमित था, जिनके अधिकांश सदस्य बार-बार हिंसा तथा डराने-धमकानेके तरीकेका अवलम्बन करते थे।" भारतकी जेलोंमें आज जो लोग कैद हैं, उनमें से कुछ तो सर्वथा निरीह-निर्दोष ढंगके लोग हैं। इनमें से शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसने हिंसा या डराने-धमकानेके तरीकेका सहारा लिया हो, किन्तु वे सब उक्त कानूनके अन्तर्गत दण्डित किये गये हैं। उक्त कथनको सिद्ध करनेके लिए अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं। इसी प्रकार इस बातके समर्थनमें भी प्रचुर प्रमाण दिये जा सकते हैं कि जहाँ-जहाँ सभाएँ भंग की गई हैं, लगभग ऐसे सभी स्थानोंपर हिंसाका कतई कोई खतरा नहीं था।

भारत सरकार इस बातको अस्वीकार करती है कि अली भाइयों द्वारा खेद प्रकट करनेपर वाइसरायने यह सभ्य नीति अख्तियार की थी कि असहयोगियोंकी अहिंसक गति-विधियोंमें सरकार दखल नहीं देगी। सरकारकी इस अस्वीकृतिपर मुझे अत्यधिक दुःख है। सरकारने अपने उत्तरमें विज्ञप्तिका जो अंश उद्धृत किया है, वही मेरी रायमें इस बातका काफी प्रमाण है कि सरकारका मंशा ऐसी हलचलोंमें हस्तक्षेप करनेका नहीं था। सरकार यह अनुमान नहीं लगाने देना चाहती थी कि "ऐसे भाषण देना जिनसे अपेक्षाकृत कम हिंसात्मक ढंगके असन्तोषको उत्तेजना मिलती हो, कानूनके खिलाफ अपराध नहीं।" मैंने यह कभी नहीं कहा कि किसी भी कानूनको भंग करना उस कानूनके खिलाफ अपराध नहीं है। लेकिन मैंने यह अवश्य कहा है, और अब भी कहता हूँ कि उस समय सरकारका यह विचार नहीं था कि अहिंसक हलचलोंके लिए मुकदमे चलाये जायें, यद्यपि हो सकता है कि प्राविधिक दृष्टिसे उनसे कानून-भंग होता हो।

जहाँतक परिषद्की शर्तोंका सम्बन्ध है, सरकारी जवाबमें मेरे पत्रके दो-तीन शब्द "तथा अन्य जरियोंसे" छोड़ दिये हैं, जो "कलकत्तेके भाषण" के बाद आने चाहिए थे। मैं फिर दोहराता हूँ कि जहाँतक मैं "कलकत्तेके भाषणसे तथा अन्य जरियोंसे" जान पाया हूँ, वे शर्तें प्रायः वही थीं जिनका उल्लेख मालवीय परिषद्के प्रस्तावोंमें

हुआ था। असहयोगी दलकी तथाकथित गैर-कानूनी कार्रवाइयाँ, जो सरकारकी अधिसूचनाओंके विरुद्ध शुरू की गई थीं, अधिसूचनाओंको वापस लेते ही स्वयमेव बन्द हो जातीं; क्योंकि इन क्षोभकारी अधिसूचनाओंके वापस लेते ही स्वयंसेवक दलका संगठन, तथा सार्वजनिक सभाएँ गैर-कानूनी गति-विधियाँ नहीं रह जातीं। जब कलकत्तेमें सुलहकी बातचीत चल रही थी, उस समय भी फतवा कैदियोंकी रिहाईकी माँग पेश की गई थी, और अब तो मैं अन्यत्र कही गई अपनी यह बात फिर दुहराऊँगा — यदि यह कहना गैर-वफादारी है कि वर्तमान शासन-प्रणालीके अन्तर्गत फौजी अथवा दूसरी नौकरी करना ईश्वर और मानवताके प्रति पाप है, तो मेरा खयाल है ऐसी गैर-वफादारी जारी ही रहनी चाहिए।

सरकारने विज्ञप्तिमें यह आरोप लगाकर मेरे साथ क्रूर अन्याय किया है कि मैं प्रस्तावित गोलमेज परिषद् केवल अपने निर्णयको स्वीकार करानेके लिए ही चाहता हूँ। मैंने कांग्रेसकी माँगें जरूर यथासम्भव स्पष्ट शब्दोंमें पेश की थीं, जिससे कि किसी तरहकी गलतफहमी न हो और यह मेरा फर्ज भी था। कोई भी कांग्रेसी अपनी स्थितिको स्पष्ट किये बिना किसी परिषद्में नहीं जा सकता था; और मैंने आशा की थी कि सरकार मेरे या अन्य किसी भी कांग्रेसीके प्रति यह माननेकी शिष्टता तो दिखायेगी ही कि हम तर्क तथा बुद्धिसंगत बातोंको स्वीकार करनेसे इनकार नहीं करेंगे। यदि कोई भी व्यक्ति आकर मुझे यकीन दिला दे कि कांग्रेसकी खिलाफत, पंजाब और स्वराज्य-विषयक माँगें अनुचित हैं तो मैं अवश्य ही अपना कदम पीछे हटा लूंगा और जहाँतक मेरा सवाल है, मैं अपनी भूलको सुधार लूंगा। भारत सरकार जानती है कि मेरा रुख सदासे ऐसा ही रहा है।

बड़े आश्चर्यकी बात है कि विज्ञप्तिमें मेरे घोषणा-पत्रकी[१] माँगोंको कार्य-समितिकी माँगोंसे भी अधिक बताया गया है। पर मैं दावेके साथ कहता हूँ कि वे कार्य-समितिकी माँगोंसे बहुत कम हैं, क्योंकि आज तो मैं आक्रामक ढंगकी सविनय अवज्ञाको सर्वथा बन्द कर देनेके बदलेमें सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि यह नृशंस दमन बन्द कर दिया जाये, उसके अन्तर्गत जिन लोगोंको सजाएँ दी गई हैं वे छोड़ दिये जाय और सरकारी नीतिकी स्पष्ट रूपसे घोषणा की जाये। कार्य-समितिकी माँगोंमें तो गोलमेज परिषद् भी शामिल थी। मैंने अपने घोषणा-पत्रमें गोलमेज परिषद्की माँग, बिलकुल नहीं की है। यह सच है कि गोलमेज परिषद्की माँगको कुछ इस दृष्टिसे नहीं छोड़ा गया है कि यह हमारी सिद्धिमें सहायक होगा। सच तो यह है कि यह अपनी वर्तमान कमजोरीको स्वीकार करना है। मैं निःसंकोच भावसे यह स्वीकार करता हूँ कि तबतक भारतकी रग-रगमें अहिंसाकी भावना नहीं भर जाती, और वह अनुशासनयुक्त शक्ति नहीं प्राप्त कर लेता, जो कि केवल अहिंसाके द्वारा ही प्राप्त हो सकती है, तबतक वह अपनी माँगोंको पूरा नहीं करा सकता। इसी कारणसे मैं अब सोचता हूँ कि लोग सबसे पहले इस पागलपन-भरे दमनसे छुटकारा पायें और फिर अधिक पूर्ण संगठन

१. देखिए "पत्र: वाइसरायको", १-२-१९२२।

और अधिक रचनात्मक कार्योंमें अपनी शक्ति केन्द्रित करें। और यहाँ फिर सरकारने सिर्फ यह कहकर कि आक्रामक ढंगकी सविनय अवज्ञा तवतक के लिए मुल्तवी की जायेगी जवतक कि जेलमें पड़े नेता छूटकर सारी स्थितिपर नये सिरेसे विचार न कर लें, और अपनी सुविधानुसार मेरे पत्रके निम्नलिखित अन्तिम वाक्योंको छोड़कर मेरे साथ अन्याय किया है:

> यदि सरकार यह घोषणा कर देती है तो मैं मानूंगा कि वह सचमुच लोकमतका आदर करना चाहती है; और उस हालतमें मैं देशको निस्संकोच-भावसे ऐसी सलाह दूंगा कि वह लोकमतको और भी तैयार करे और भरोसा रखे कि उसकी वदौलत देशकी वे माँगें पूरी हो जायेंगी, जिनमें किसी तरहका परिवर्तन नहीं किया जा सकता। यदि यह सव हो जाये तो आक्रामक सविनय अवज्ञा फिर तभी की जायेगी, जव सरकार अपनी कठोर अहस्तक्षेपकी नीतिका परित्याग कर देगी *या भारतकी जनताका जवरदस्त वहुमत जो-कुछ चाहता हो उसे स्वीकार न करेगी।*

मैं साहसपूर्वक यह कहता हूँ कि मैंने ऊपर मामलेको जिस तरह पेश किया है उसमें हद दर्जेके युक्ति-संगत और नरम तरीकेसे काम लिया है।

इसलिए सरकारी विज्ञप्तिके अन्तमें कही गई यह वात ठीक नहीं है कि अव लोगोंको "एक ओर अराजकता और उसके घातक परिणामों तथा दूसरी ओर उन सिद्धान्तोंको कायम रखना जो प्रत्येक समय सरकारके लिए आधारभूत हैं", इन दो स्थितियोंके वीच चुनाव करना है। विज्ञप्तिमें आगे कहा गया है कि "सामूहिक सविनय अवज्ञा राज्यके लिए इतनी खतरनाक है कि उसका सामना कठोरता और दृढ़ताके साथ किया जाना चाहिए।" दरअसल लोगोंके सामने अव सवाल यह है कि सामूहिक सविनय अवज्ञासे असंदिग्ध रूपसे जो खतरे हैं उनके वावजूद वे ऐसी अवज्ञाकी नीति अपनायें या जनताकी विधि-सम्मत गति-विधियोंके अवैध दमनको वरदाश्त करें। मेरी तो धारणा है कि जव देशमें कानून और शान्तिके नामपर वेगुनाह लोगोंका माल-असवाव लूटा जा रहा है और उनपर हमला किया जा रहा है तव स्वाभिमानी व्यक्तियोंके किसी भी समुदायके लिए अज्ञात खतरोंकी आशंकासे चुपचाप वैठे रहना और कुछ न करना असम्भव है।

मो० क० गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७८८५) की फोटो-नकलसे।

१४७. पत्र : कार्य-समितिके सदस्योंको[1]

गोपनीय (प्रकाशनके लिए नहीं)

बारडोली

८ फरवरी, १९२२

प्रिय मित्र,

यह तीसरा अवसर है जब सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करनेके ठीक पहले मुझे एक जबरदस्त झटका लगा है। पहला अवसर था अप्रैल १९१९ में[2], दूसरा पिछले साल नवम्बरमें[3], और तीसरी बार अब फिर गोरखपुर जिलेकी घटनाओंने मेरे मनको अत्यधिक अशान्त बना दिया है। बरेली और सहारनपुरमें जो-कुछ भी हुआ है उससे मेरे मनकी अशान्ति बहुत ज्यादा बढ़ गई है। वहाँ स्वयंसेवकोंने टाउन हालों-पर कब्जा करनेकी कोशिश की थी। वैसे अपराधपूर्ण अवज्ञा और सविनय अवज्ञा दोनों एक ही उद्देश्यके लिए की जा रही हैं। लेकिन यदि देशके कुछ दूसरे भागोंमें ऐसी अपराधपूर्ण अवज्ञा चलती रही तो जाहिर है कि बारडोलीमें की जानेवाली सविनय अवज्ञाका देशपर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। सविनय अवज्ञाकी पूरी संकल्पना यही मानकर चलती है कि सविनय अवज्ञा अहिंसापूर्ण वातावरणमें ही चल सकती है और पूर्ण अहिंसात्मक आचरणके बलपर ही सफल हो सकती है। हो सकता है कि मानव-स्वभावको परखनेमें मेरी समझ बड़ी ही अधकचरी हो, पर मेरा तो यही विश्वास है कि भारत-जैसे एक विशाल देशमें ऐसा वातावरण तैयार किया जा सकता है। लेकिन मेरी समझके अधकचरेपनकी दलील, मेरी समझदारीके बारेमें ही तो एक दलील हो सकती है, उसे एक ऐसा आन्दोलन जारी रखनेकी दलील तो नहीं माना जा सकता जो उस हालतमें नाकामयाब ही होगा। मैं व्यक्तिगत रूपसे ऐसे किसी भी आन्दोलनमें कभी हाथ नहीं बँटा सकता जो आधा हिंसक और आधा अहिंसक हो, फिर चाहे उसके बलपर स्वराज्य ही क्यों न मिलनेवाला हो। ऐसा इसलिए कि उस तरीकेसे मिला स्वराज्य, मैं स्वराज्यको जिस रूपमें देखता हूँ, वैसा सच्चा स्वराज्य नहीं होगा। इसलिए बारडोलीमें ११ तारीखको इन प्रश्नोंपर विचार करनेके लिए कार्य-समितिकी एक बैठक बुलाई जा रही है कि क्या सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनको फिलहाल स्थगित नहीं किया जाना चाहिए। और दूसरा प्रश्न यह कि आन्दोलनके स्थगनकी

१. साधन-सूत्रमें दी गई प्रस्तावनात्मक टिप्पणीके कुछ अंश इस प्रकार हैं: "बारडोलीका सविनय अवज्ञा आन्दोलन . . . वाइसरायको दिये गये समयकी अवधिकी समाप्तिपर १२ फरवरी, १९२२ को शुरू किया जानेवाला था. . . परन्तु महात्माजीने ८ तारीखको एकाएक अपना सारा कार्यक्रम बदल दिया और . . . इस तब्दीलीके बारेमें कार्य-समितिके सदस्योंके पास एक निजी पत्र भेजा . . ." ।

२. देखिए खण्ड १५ ।

३. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४८५-८९ ।

स्थितिमें क्या उसे एक निश्चित और काफी लम्बी अवधितक के लिए बन्द नहीं कर दिया जाना चाहिए, जिससे कि उस दौरान रचनात्मक कार्यका संगठन करके देश निर्विवाद रूपसे अहिंसात्मक वातावरण पैदा कर सके। मैं इस मामलेमें ज्यादासे-ज्यादा मित्रोंसे रहबरी चाहता हूँ। आप यदि बैठकमें शरीक न हो पायें, तो भी मैं चाहूँगा कि मुझे अपनी राय लिख भेजें, समय हो तो पत्र द्वारा और नहीं तो तारके जरिये।

मैं यह पत्र कार्य-समितिके सदस्योंको ही भेज रहा हूँ। लेकिन मैं चाहूँगा कि आप जिनसे भी मिलें अपने सभी मित्रोंसे सलाह-मशविरा करें और अगर उनमें से कोई चर्चामें भाग लेने आना चाहे तो उसे या उन्हें कृपया अपने साथ ले आयें या यहाँ भेज दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१४८. पत्र : डा० एम० एस० केलकरको

बुधवार, ८ फरवरी, १९२२

प्रिय डा० केलकर,[1]

मेरा खयाल है कि समितिको सिर्फ स्वदेशीके लिए ही रुपया दिया गया था। मेरी तो यही इच्छा है कि आप जल्दीसे-जल्दी विशेषज्ञ नियुक्त कराकर अपना काम शुरू कर दें। इस पत्रको कृपया श्री दास्तानेको[2] दिखा दीजिए। आपने प्रचारकके सम्बन्धमें जो लिखा वह मैंने देख लिया है। मैं एक दिनके लिए बम्बई जा रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डा० केलकर
मार्फत डा० नूलकर
जलगाँव
पूर्व खानदेश

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ६१०७)की फोटो-नकलसे।

१. डा० एम० एस० केल्कर; इनका कहना था कि बर्फसे सभी रोगोंका इलाज किया जा सकता है; ये जनतामें "डाक्टर बर्फ" (डा० आइस)के नामसे मशहूर थे।

२. महाराष्ट्रमें खानदेशके एक कांग्रेसी कार्यकर्ता।

१४९. टिप्पणियाँ

जेलखानेकी कालकोठरीसे

वेलौर जेलसे प्राप्त सी० राजगोपालाचारीका मजेदार पत्र नीचे दे रहा हूँ:

. . .मुझे महीनेमें केवल एक पत्र लिखने और एक ही पत्र पानेकी अनुमति है और इसलिए मैं राजनीति, समाचार तथा समाचारपत्रोंसे पूरी तरह कट गया हूँ। . . .

दमा पीछा नहीं छोड़ रहा है, फिर भी पेटको हल्का रखकर मैं अपने इस दुश्मनपर हावी हूँ। मेरा वजन १०४ पौंडसे घटकर ९८ पौंड रह गया है, किन्तु इसमें कोई हर्ज नहीं है। . . .

यदि आप इस एकान्त काल-कोठरीमें मुझे सूत कातते हुए देखते तो आपकी आँखें खुशीसे चमक उठतीं।

यह सरकार बड़ी अजीब है। माना तो यह जाता है कि देश-भरमें एक ही कानून लागू है; फिर भी जो काम बंगालमें जुर्म है, वही काम मद्रासमें जुर्म नहीं है। और मद्रासकी जेलोंमें कैदियोंके साथ जो बरताव किया जाता है, वह संयुक्त-प्रान्तकी जेलोंमें नहीं किया जाता। आगरा जेलमें जॉर्ज जोजेफको सभी प्रकारकी सुविधाएँ और आराम सुलभ है। यहाँतक कि समाचारपत्र भी दिये जाते हैं। दूसरी ओर वेलौर जेलमें राजगोपालाचारीको रहनेके लिए काल-कोठरी दी गई है और उन्हें समाचारपत्र आदि कुछ नहीं दिये जाते। राजगोपालाचारीको समाचारपत्रोंसे वंचित रखे जानेकी परवाह नहीं है। समाचारपत्रोंका न दिया जाना मैं तो अपने लिए एक सौभाग्यकी बात मानूंगा, किन्तु इससे इतना तो स्पष्ट ही है कि अलग-अलग जेलोंमें अलग-अलग बरताव किया जा रहा है। राजगोपालाचारीका वजन घट गया है, यह अधिक चिन्ताकी बात है। मुमकिन है कि उनके वजनके घटनेका कारण पौष्टिक भोजनका अभाव न हो, कोई दूसरा ही कारण हो। तो भी यदि यह एकान्त कोठरी कुछ उसी तरहकी है जिससे मेरा पाला पड़ चुका है, तो दमेके रोगीके लिए उसे प्राणघातक ही समझना चाहिए। इस प्रकारकी कोठरीमें ताला डालकर किसीके बन्द किये जानेका मतलब ऐसे सन्दूकमें बन्द किया जाना है जिसमें जिन्दा रहनेके लायक हवा-भरके लिए कुछ सूराख रख दिये गये हों। इन कोठरियोंमें रोशनीका तो नाम भी नहीं होता और न हवाके आरपार बहनेकी व्यवस्था ही होती है। थोड़े ही समयमें कमरेकी हवा आपकी छोड़ी हुई साँससे भर जाती है और फिर आपको बार-बार अपनी ही छोड़ी हुई हवा भीतर लेनी पड़ती है। इनसानियतका कमसे-कम यह तकाजा है कि अगर आज चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको रात-दिन यथासम्भव स्वच्छ वायु मिलते रहना सुलभ नहीं है तो वह तत्काल सुलभ की जाये।

दिल्ली जेलसे

श्री आसफअलीने दिल्ली जेलसे एक विवरणात्मक पत्र लिखा है। उसके सार्वजनिक हितसे सम्बन्ध रखनेवाले कुछ अंश यहाँ दिये जा रहे हैं:[1]

पाठकोंको याद होगा कि दिल्लीमें श्री आसफअलीने बावन स्वयंसेवकोंके साथ सविनय अवज्ञा शुरू की थी।

शेरवानी वकालत करनेसे वंचित

इलाहाबाद उच्च न्यायालयने श्री शेरवानीको, जो अदालतका हुक्म जारी होनेके बहुत पहले ही खुद वकालत छोड़ चुके थे; वकालत करनेके अधिकारसे वंचित करके कोई अपनी प्रतिष्ठा नहीं बढ़ाई। स्पष्ट है कि किसीने अदालतको ऐसा कदम उठानेके लिए उकसाया होगा। जिसने भी सरकारको यह सुझाया उसने इलाहाबाद उच्च न्यायालयके साथ बदी ही की है। श्री शेरवानीके विरुद्ध की गई कार्रवाईसे एक भी वकील भयभीत होनेवाला नहीं है। इन कार्रवाइयोंसे कुछ वकील इस बातपर शर्मिन्दा हुए होंगे कि हम एक ऐसे न्यायालयमें वकालत कर रहे हैं जो एक व्यक्तिको उसके राजनैतिक सिद्धान्तके कारण दण्डित करता है। मेरी रायमें अदालत सार्वजनिक रूपसे इस बातपर ध्यान देनेके लिए मजबूर थी कि असहयोग आन्दोलन एक वस्तुस्थिति है और इसलिए श्री शेरवानी अपने सिद्धान्तोंके कारण नीचेकी अदालतमें अपना बचाव करनेके लिए जानेवाले नहीं हैं।

लालाजी फिर गिरफ्तार हुए

पंजाब सरकार एक साधारण अनुताप भी शोभाके साथ प्रदर्शित न कर सकी। उसे बताया गया कि लालाजी तथा उनके साथियोंको सजा देनेवाले न्यायाधीशने कानूनका ठीक मंशा समझे बिना सजा दे दी है। इसलिए सरकारको उन्हें छोड़नेपर बाध्य होना पड़ा। फिर भी सब लोगोंको उसने एक साथ नहीं छोड़ा; वे आगे-पीछे छोड़े गये और कुछ तो आधी रातको रिहा हुए थे। परन्तु यह सरकारके इस तमाशेके बेहूदेपनकी पराकाष्ठा नहीं थी। पराकाष्ठा तो तब हुई जब उसने रिहाईके तुरन्त बाद लालाजीको फिर गिरफ्तार कर लिया। सरकारके इस कामसे जाहिर होता है कि वह गलतीपर पछतानेके बजाय बदला लेनेपर तुली हुई है। उसके पास उन्हें रिहा करनेके अलावा और कोई चारा था ही नहीं मगर वह अपनी क्षुद्रतासे भी बाज नहीं आ सकती थी। वह एक क्षणके लिए भी लालाजीको आजाद नहीं छोड़ना चाहती

१. उक्त अंश यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं। उन अंशोंका मुख्य अभिप्राय इस प्रकार था: "जेल आनेके समय आसफअली काफी बीमार थे और उनका आपरेशन होनेवाला था; किन्तु उन्होंने जेल जानेके स्वर्ण अवसरको खो देना उचित नहीं समझा और आश्चर्य यह रहा कि जेलमें उनकी तबीयतमें सुधार हुआ। आसफअली और उनके साथियोंने जेलमें उन विशिष्ट सुविधाओंको लेनेसे इनकार कर दिया जो अन्य भारतीय कैदियोंको नहीं दी जातीं। जेलके कष्टोंको वे सिपाहीके शरीरपर लगे घावोंकी तरह गौरवास्पद मान रहे थे।

थी इसलिए उसने उन्हें फिरसे पकड़ लिया। यद्यपि अभी वे मुलजिमकी हैसियतसे हवालातमें हैं फिर भी उनके रिश्तेदारों, यहाँतक कि उनके लड़कोंको भी, उनसे मिलने नहीं दिया गया। सरकार जानती थी कि यदि लालाजी सम्मनके जरिये तलब किये गये होते तो वे 'न्याय'से वंचित नहीं रखे जा सकते थे। परन्तु ऐसी स्वाभाविक और शिष्टतापूर्ण कार्रवाई तो पंजाब सरकारके लिए बहुत ही सीधी-सादी कार्रवाई हो जाती। मैं लालाजीको उनकी दुबारा गिरफ्तारीपर बधाई देता हूँ और पण्डित सन्तानम्, मलिक लालखाँ और डा० गोपीचन्दके प्रति उनके समयसे पहले रिहा कर दिये जानेपर, सहानुभूति प्रकट करता हूँ।

पेंशन या रोका गया वेतन

मैंने अब सामान्य पेंशनोंके सम्बन्धमें सर्व-सामान्य नियमोंके अध्याय १५के खण्ड १ का ३५१वाँ अनुच्छेद प्राप्त कर लिया है। धारवाड़के श्री जोशीको इसीके अधीन उनकी पेंशनसे वंचित किया गया है। नियम इस प्रकार है:

> आगे भी आचरण अच्छा रहेगा, यह सदा पेंशन दिये जानेकी मंजूरीमें एक निहित शर्त है। यदि पेंशन पानेवालेको किसी गम्भीर अपराध करनेके कारण सजा दी गई हो या वह किसी बड़े दुराचरणका दोषी पाया गया हो तो स्थानीय सरकार, भारत सरकार और सपरिषद् राज्य-सचिव पेंशन या उसका कोई अंश रोकने या बिलकुल बन्द कर देनेका अधिकार अपने हाथमें रखते हैं।
>
> इस नियमके अधीन पूरी पेंशन या उसके किसी अंशको रोकने या उसे बन्द कर देनेके प्रश्नपर सपरिषद् राज्य-सचिव द्वारा किया गया फैसला अन्तिम और निर्णायक होगा।

मामूली आदमीकी दृष्टिमें इसे पेंशन कहें, विलम्बित वेतन कहें या और कुछ, है एक ही चीज। यह रकम किसी ऐसे कर्मचारीको नहीं दी जा सकती जो अपने कर्त्तव्य-पालनमें अविश्वसनीय साबित हुआ हो या जो सक्रिय सेवाकालकी समाप्तिके बादके अपने आचरणसे पेंशनके अयोग्य सिद्ध हो गया हो। शायद पेंशन पानेवाले कर्मचारीको अपने आचरणके बारेमें सक्रिय सेवामें लगे कर्मचारीकी अपेक्षा और अधिक सावधान रहना जरूरी है। और इसका सीधा-सादा सबब यह है कि जबतक वह कामपर है, वह निगाहके सामने है और निवृत्त होनेपर विश्वासपर। इस मापदण्डको नजरमें रखते हुए जनसेवककी दृष्टिसे श्री जोशीका काम तनिक भी निन्दनीय नहीं है; इतना ही नहीं उन्होंने तो वही किया है जो कोई भी सम्माननीय व्यक्ति करेगा। कहनेका तात्पर्य यह है कि यद्यपि उन्हें अपना समय निवृत्त भावसे आरामके साथ बितानेका हक था किन्तु अपने जीवनकी सन्ध्यामें उन्होंने अपने प्रकाण्ड पाण्डित्यका दिल खोलकर जनताकी सेवामें उपयोग किया। जो सरकार जनमतके प्रति उत्तरदायी हो उसे जनतासे भिन्न नहीं माना जा सकता। जनताका हित सरकारका सर्वोच्च उद्देश्य होना चाहिए; इसलिए यदि मौजूदा वस्तुस्थितियोंमें श्री जोशी आज जनताके सुख-

दुःखमें हाथ बँटा रहे हैं तो वे देशके साथ-साथ सरकारकी भी सेवा ही कर रहे हैं। यदि सर माइकेल श्री जोशी या मौलाना शौकत अलीकी तरहके जन-सेवक होते और उनकी आचार-संहिता भी इन्हीं जैसी होती तो स्वयं उनके वचनोंके और मेरे द्वारा उद्धृत नियमके अनुसार सर माइकेल ओ'डायर अपराधी ठहरते हैं और पेंशनसे उन्हें ही वंचित किया जाना चाहिए, क्योंकि वे लगातार अपने वेतनदाताओंकी अनिष्टकर निन्दा करके अपने-आपको पेंशन पानेके सर्वथा अयोग्य सिद्ध कर रहे हैं। हो सकता है कि सर माइकेल जो-कुछ कहते हैं उसमें उनका विश्वास हो और वे सच्चे दिलसे यह मानते हों कि शिक्षित भारतीय निपट मूर्ख होते हैं या अपने देशके प्रति गद्दारी करते हैं और यहाँकी अशिक्षित जनता पशुओंसे वेहतर वरतावके योग्य नहीं है; परन्तु यह एक विलकुल अलग वात है। किसी कामके पीछे आदमीके मनमें उद्देश्य क्या है यह तो ईश्वर ही जानता है। किन्तु हम मनुष्य तो दूसरेके उद्देश्यको कामसे ही समझ सकते हैं और जिस तरह असहयोगियोंको उनके उद्देश्यसे नहीं परखा जाता जिसकी वे मंचोंसे निरन्तर घोपणा करते रहते हैं अथवा जिसकी वे शपथ लेते हैं वल्कि उन्हें उनके तथा उनके साथियोंके कार्योंसे ही परखा जाता है; यह विलकुल ठीक है। इसी तरह पेंशन पानेवाले जन-सेवकोंके वारेमें या अन्य लोगोंको भी वे जो कुछ करते हैं, उसीसे आँकना चाहिए न कि उससे जो वे सोचते या जो कहते हैं।

अली-भाई

चूंकि अधिकारी लोग उसे तारके रूपमें नहीं आने देते थे अतः कराचीसे साधारण डाकके जरिये एक तार आया है; उसे मैं नीचे दे रहा हूँ:[1]

> जेलमें मौलाना मुहम्मद अलीका वजन २५ पौंड कम हो गया है। . . .
>
> उन्हें मधुमेहकी वीमारी है। उसके लिए जेलके स्वास्थ्य अधिकारीने भोजनमें मूंगफली और पनीर शामिल करनेको कहा है। अधीक्षकका मंशा ये चीजें देनेका न था परन्तु अन्ततोगत्वा प्रतिदिन एक आनेकी मूँगफली दी जाने लगी और मौलानाके आग्रह करनेपर वढ़ाकर दो आने रोजकी कर दी गई। यह उनका सुवहका भोजन है।
>
> . . . मौलाना शौकत अली, डाक्टर किचलू, मौलवी निसार अहमद, पीर गुलाम मजीदसे शनिवार २८ तारीखको कहा गया कि उन्हें अपनी जामा-तलाशी देनी होगी। ऐसी तलाशी आमतौरपर सजायाफ्ता अपराधियोंको ही देनी पड़ती है। इस तलाशीमें उन्हें नंगा होना पड़ता है वदनपर एक ढीली लँगोटी-भर रहने दी जाती है और तलाशीके समय उन्हें अपने हाथ ऊँचे करने पड़ते हैं और अपना मुंह भी खोलकर दिखाना पड़ता है ताकि मालूम हो जाये कि कहीं कुछ छिपा हुआ नहीं है। मौलाना शौकत अली और उनके साथी

१. यहाँ तारके केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

> अभीतक इस तौहीनसे बचे हुए थे। २८ तारीख शनिवारको उन्होंने जामा-तलाशी देनेका हुक्म माननेसे इनकार किया। सोमवार ३० को जबरदस्ती उनकी जामा-तलाशी ली गई और उपरोक्त नेताओंको उस बेइज्जती करनेवाले हुक्मको स्वेच्छासे न माननेपर एक महीनेतक काल-कोठरीमें रहनेकी सजा दी गई।' . . .
>
> मौलाना मुहम्मद अली इसका विरोध व्यक्त करते हुए चाहते हैं कि उनके साथ भी वैसा ही किया जाये।
>
> नेतागण जेल अधिकारियोंसे मामलेको सरकारतक पहुँचानेके लिए अन्तिम क्षणतक कहते रहे परन्तु उन्होंने इनकार कर दिया।

इससे यह प्रकट होता है कि सरकारकी ओरसे हिदायत है कि विवेक और बुद्धिमत्तासे काम करनेकी नीतिके बजाय जेलके कानून-कायदोंको पूरी सख्तीके साथ बरतनेकी नीति काममें लाई जाये। जरा सोचिए, मौलाना शौकत अली या दूसरे तेजस्वी नेतागण जेलरके तथा एक-दूसरेके सामने प्रायः नंगे खड़े होकर अपनी तलाशी कैसे दे सकते हैं; यह तो उनके नजदीक डूब मरनेकी बात है। पक्के मुजरिमोंकी जामा-तलाशी लेना आवश्यक और उपयोगी है, यह मैं समझ सकता हूँ और जेलके ज्यादातर कानून-कायदे केवल उन्हीं लोगोंको ध्यानमें रखकर बनाये गये हैं; परन्तु ऐसे लोगोंसे इन कानून-कायदोंका पालन जबरदस्ती करवाना पागलपनके सिवा और क्या हो सकता है जो राजनैतिक आन्दोलनमें भाग लेते रहनेके अतिरिक्त सभ्य नागरिक माने जाते हैं और जिनमें से कुछ लोग तो विख्यात देश-सेवक भी हैं, ऐसे कैदियोंपर इन मौजूदा नियमोंको लादना वास्तविकताकी ओरसे पूरी तौरसे आँख बन्द करके परेशानियोंको न्यौता देना है। जेलकी मामूली मर्यादाका पालन तो कारावास-दण्ड प्राप्त अच्छेसे-अच्छे लोगोंसे भी, जरूर कराया जाना चाहिए और खासकर जब वे जान-बूझकर जेलमें आये हैं। जेल-जीवनमें होनेवाले कष्टोंकी उन्हें अपेक्षा करनी चाहिए ही। वे उसके बारेमें शिकायत नहीं कर सकते। यदि वे खुद खूबसूरतीके साथ जेलके अधिकारियोंके प्रति सम्मान प्रदर्शित नहीं करते तो उन्हें इसके लिए अवश्य ही बाध्य किया जाना चाहिए। परन्तु ऐसा नहीं कि अनुशासन अपमानका रूप धारण कर ले। असुविधाएँ यन्त्रणा न बना दी जायें और अदब जाहिर करनेका अर्थ 'पेटके बल रेंगना' न बन बैठे। इसलिए असहयोगी कैदियोंको चाहिए कि वे बेड़ियों और हथकड़ियोंकी सजा पानेके खयालसे, कालकोठरीमें डाल दिये जानेके भयसे, गोलीसे मार डाले जानेकी आशंकासे अनुशासनके नामपर भी कदापि जेलरके सामने नंगे न हों; जेलके कष्टोंके नामपर मैले, बदबूदार कपड़े हरगिज न पहनें और गन्दा या हजम न होने लायक खाना कदापि न खायें और इसी तरह 'अदब' के नामपर हथेलियाँ पसारकर न दिखायें, दब या दुबककर न बैठें और जब जेलका कोई अफसर सामनेसे गुजरे तब अपनी जबानसे हरगिज 'सरकार एक'[1] या 'सरकार सलाम' न कहें। और यदि सरकार अब जेलोंमें हमारी अग्निपरीक्षा लेनेपर तुली हुई है या हमें झुकानेके लिए

शारीरिक यातना देना चाहती है, तो इस तरह बेइज्जत होनेसे हमें अदबके साथ इनकार कर देना चाहिए और जान-बूझकर की जानेवाली इस बेइज्जतीका मुकाबला करने और इसके बदलेमें मिलनेवाली शारीरिक यातनाओंको सहन करनेका बल प्राप्त करनेके लिए ईश्वरका सहारा लेना चाहिए। वीर अली भाई और उनके साथी इस तरह कराची जेलको सुधार रहे हैं; वे अवश्य ऐसा करें। इसी तरह स्वाभिमानी सिन्धी अध्यापक कृपलानीजी बनारसके कैदखानेको सुधारें, क्योंकि मुझे मालूम हुआ है कि बनारस जेलमें लाये गये असहयोगी कैदियोंका जो अकथनीय अपमान किया जा रहा है उसे प्रो० कृपलानी तथा उनके विद्यार्थी बरदाश्त नहीं कर पा रहे हैं। यह बात समझमें नहीं आती कि संयुक्त-प्रान्तमें जहाँ कि राजनैतिक कैदियोंके साथ सरकारका बरताव आदर्श माना जाता है, एक ओर आगरा और लखनऊमें तो जैसा-कुछ होना चाहिए वैसा ही हो रहा है परन्तु दूसरी ओर बनारसमें तथा अन्यत्र उसके विपरीत हो रहा है। क्या इसका यह अर्थ है कि स्थानीय अधिकारी निरंकुश हो गये हैं और वे आला अफसरोंके हुक्मकी परवाह नहीं करते और उनकी मर्जी ही कानून बन गई है? इन घटनाओंसे लोग यह अन्दाज लगा सकते हैं कि भारतकी जेलोंमें अपराधियोंपर कैसी बीतती होगी। मैं यह नहीं मानता कि खास तौरपर केवल राजनैतिक कैदी ही इस व्यवहारके लिए चुने गये हैं। बल्कि मेरी तो धारणा यह है कि जो वास्तवमें मुजरिम हैं उनके साथ तो और भी बुरा बरताव किया जाता है; क्योंकि वे तो चुटकी बजाते ही दबाये जा सकते हैं। जेलर और वार्डर तो प्रायः गैर-जिम्मेदार होते ही हैं, इसलिए वे मनमानी करते हैं और अपराधियोंके साथ बड़ी ही निर्दयतासे पेश आते हैं। हम लोगोंने आजतक अपने अज्ञान अथवा स्वार्थके वश इस शासन-प्रणालीको सहायता पहुँचाई है, जिसमें कि इने-गिने लोगोंने करोड़ों मनुष्योंको गुलाम बना रखा है। हमें भगवान्‌के सामने मानवताके विरुद्ध किये गये इन अत्याचारोंके लिए उत्तरदायी होना पड़ेगा जो कानून और व्यवस्थाके नामपर परन्तु वास्तवमें मुट्ठी-भर लोगोंके हितार्थ किये गये हैं और यदि आज इतने असहयोगियोंका बलिदान न हुआ होता तो इनपर परदा पड़ा ही रहता और किसीको इनका कुछ पता न चलता।

कैदियोंकी जो बेइज्जती की जा रही है उसे देखते हुए कराची जेलमें अधिकारियोंकी उस नीचताकी आलोचना करना व्यर्थ लगता है, जिसका परिचय देते हुए उन्होंने मौलाना मुहम्मद अलीको जेलके डाक्टरकी बताई हुई तथा उनके रोगके निवारणार्थ जरूरी खुराक भी नहीं दी। मेरा खयाल है कि मौलानाको पनीर या काफी मात्रामें मूँगफली न देनेकी खबर गलत निकलेगी अथवा उन्हें ये चीजें न दिये जानेका कोई समुचित कारण होगा।

कैसा सलूक किया जा रहा है, इसकी बात छोड़िए। जो लोग जेलोंके बाहर हैं उनका कर्त्तव्य तो स्पष्ट है। हमें रोषमें आकर बिना सोचे-समझे कोई गलत काम नहीं कर बैठना चाहिए। हमारा वास्ता ऐसी शासन-प्रणालीसे पड़ा है जो पूरी तरह सड़ चुकी है और जिसने क्या अंग्रेज, क्या भारतीय, सारी मनुष्य जातिका मान घटाया है। असलमें हम एक रोगसे जूझ रहे हैं। मैं यह नहीं मानता कि अंग्रेज या हिन्दु-

स्तानी कोई भी इरादतन शैतानियत ओढ़े हुए है। बल्कि मेरा विश्वास तो यह है कि उन्हें अपने कृत्योंका भान नहीं है। यह तो निश्चित है कि उन्हें ऐसा नहीं लगता कि हम कोई गलत काम कर रहे हैं और बहुत मुमकिन है कि उनमें से बहुतेरे तो यहाँतक मानते हों कि बाज मौकोंपर दमन भी एक तरहसे ममतापूर्ण व्यवहारका अंग बन जाता है। आखिर हममें से भी कितने ही लोग अधीर होकर कई बार ऐसे-ऐसे काम कर बैठते हैं जिनका समर्थन आपद्-धर्मकी आड़ लिये बिना किया ही नहीं जा सकता।

इतना लिख चुकनेपर मालूम हुआ कि अली भाई जामा-तलाशी देनेके लिए राजी नहीं हुए और जबरदस्ती जामा-तलाशी ली गई। इसके बाद शायद उन्हें तनहाईकी सजा दी गई है और जो शख्स वहाँ तैनात हैं वे उनके साथ बुरी तरह पेश आते हैं। यदि यह सब सच हो तो मुझे बहुत ज्यादा दुःख होगा। सरकार नामी-गिरामी देश-सेवकोंके साथ जेलोंमें पूरी तरह भलमनसाहतका बरताव करेगी और वहाँ उनके साथ किसी प्रकारका अपमान न किया जायेगा ऐसा माननेका आधार था। पर यदि अली-भाइयोंके प्रति किये गये दुर्व्यवहारकी बात सच हो और उसके फलस्वरूप यदि सरकारके खिलाफ उग्रसे-उग्र आन्दोलन उठ खड़ा हो तो इसके लिए खुद सरकार ही जिम्मेवार होगी।

स्पष्ट है कि ईश्वर असहयोगियोंकी पूरी-पूरी परीक्षा कर लेना चाहता है। मैं जानता हूँ कि अली-भाई बड़े बहादुर हैं और वे इस अग्नि-परीक्षामें अविचल रहेंगे और उसमें खरे उतरेंगे। जो असहयोगी कराची जेलमें हैं वे सभी चुने हुए लोग हैं और अपना निपटारा स्वयं करनेमें समर्थ हैं। तो भी अली-भाइयों, डा० किचलू, पीर गुलाम मजीद तथा उनके साथी कैदियोंका जो बेहद अपमान किया जा रहा है उससे लोगोंका खून खौले बिना न रहेगा। परन्तु इस तमाम विवेकहीन उत्पीड़न और उत्तेजनाके बावजूद हमें आत्मसंयमसे काम लेना होगा। हमारी अन्तिम मुक्ति तो अपनी प्रतिज्ञाके यथावत् पालनपर ही अवलम्बित है। यदि यह बात हमें बेधती है तो हमें और भी अधिक अहिंसापरायण होना चाहिए। हम सविनय अवज्ञामें अपनी और भी अधिक शक्ति लगायें और अवज्ञाके लिए आवश्यक शर्तोंको पूरा करनमें थोड़ा भी विलम्ब न करें। हिन्दू-मुसलमान तथा दूसरी जातियाँ ऐक्य-सूत्रमें अधिक दृढ़ता से बँध जायें, अब भी जो-कुछ विलायती कपड़े हमारे पास पड़े हों उन्हें हम त्याग दें और अधिक खादी बुनने और चरखा कातनेमें लग जायें। हमारी प्रगति तो अपने द्वारा निर्धारित कार्यक्रमके अनुसार चुपचाप काम करते रहनेपर अवलम्बित है, न कि एक क्षण भी व्यर्थकी झुंझलाहट और बकझकमें खोनेपर। जो लोग जेलम हैं उनके साथ होनेवाले दुर्व्यवहारसे हमें परेशान नहीं होना चाहिए। व्यवहारके सम्बन्धमें सरकारने हमसे कोई समझौता नहीं कर रखा है। हमने तो बिना किसी शर्तके अपने शरीर उसको अर्पित कर दिये हैं —— वह चाहे तो उनके टुकड़े-टुकड़े कर डाले और यदि ईश्वर हमें शक्ति दें तो, हम इतना होनेपर भी उफतक न करें। चाहे जो हो जाये हमें आपेसे बाहर न होना चाहिए।

झूठे आरोप

दमन-नीतिका पक्ष मजबूत बनाये रखनेके लिए नियुक्त अधिकारियोंने उस नीतिका समर्थन करनेकी तीव्र उत्कण्ठामें निराधार बातें कहनेमें संकोच नहीं किया है। मौलाना अब्दुल बारी साहब मुझे लिखते हैं कि असहयोग आन्दोलनके सिलसिलेमें जबसे उन्होंने शुद्धतम अहिंसा-पालन करनेके राष्ट्रीय संकल्पको स्वीकार किया है तबसे उन्होंने न तो हिंसाकी बात सोची, न उसका समर्थन किया और न हिंसाके लिए किसीको उत्तेजित ही किया। वे कहते हैं कि उन्होंने अहिंसा-नीतिका प्रतिपादन भी किया और पूरी ईमानदारी तथा हार्दिक रूपसे उसका पालन भी किया। अपंजीयत 'इंडिपेंडेंट' समाचारपत्र लिखता है:

> मौलाना अब्दुल बारीने 'हमदम' दैनिकमें लेख लिखकर सर विलियम विन्सेंटके[1] उस वक्तव्यके उन शब्दोंका खण्डन किया है जो उन्होंने निन्दा प्रस्ताव-पर हुई बहसके दौरान कहे थे — यानी कि मौलाना हिंसाके हामी हैं। मौलाना-का कहना है कि उन्होंने पिछले चार महीनोंमें एक भी भाषण नहीं दिया। उन्होंने अपने सबसे अन्तिम लिखित भाषणमें, जो उन्होंने मुसलमानोंकी एक सभाके समक्ष पढ़ा था, अहिंसात्मक असहयोगकी जोरदार वकालत करते हुए कहा कि भारतीय मुसलमानोंके पास खिलाफत सम्बन्धी अन्याय दूर करानेके लिए एकमात्र सुलभ उपाय यही है। वे कहते हैं कि मेरे दिलमें यह आशा बनी हुई है कि अहिंसात्मक कांग्रेस और खिलाफत कार्यक्रम ब्रिटिश सरकारको अन्तमें खिलाफत और पंजाब सम्बन्धी अत्याचारोंका निराकरण करने और भारतको स्वशासित राष्ट्रोंके ब्रिटिश कामनवेल्थमें स्वतन्त्र साझेदारकी तरह स्थान देनेपर विवश करेंगे।

अपने खिलाफ लगाये गये आरोपके सम्बन्धमें पण्डित जवाहरलाल नेहरू इस प्रकार लिखते हैं:

> कहा जाता है कि संयुक्त-प्रान्त सरकारके वित्त सदस्य सर लुडविक पोर्टरने २३ जनवरीको संयुक्त-प्रान्तकी कौंसिलमें भाषण देते हुए निम्नलिखित बातें कहीं: "अब मैं श्री जवाहरलाल नेहरूके बारेमें कुछ कहना चाहता हूँ। उनका अन्तिम वार प्रान्तके पश्चिमी भागमें कहीं दिये गये एक भाषणके रूपमें था। उन्होंने उसमें राजद्रोह सम्बन्धी खण्डको अर्थात् वैध सरकारके प्रति विरति जगानेवाले तथा उस खण्डको जो महामहिमकी प्रजाके वर्गोंके बीच घृणा बढ़ानेसे सम्बन्ध रखता है, शब्दशः दुहराया। उन्होंने यह भी कहा था कि उनके जीवनका उद्देश्य इस विद्रोह-भावनाको तथा सरकारके प्रति नफरतको बढ़ाना है।"

१. भारत सरकारके तत्कालीन गृह-सदस्य।

> यह गलत है। किसी भी अवसरपर और अपने किसी भी भाषणमें मैंने दण्ड-संहिता (पेनल कोड)के राजद्रोह सम्बन्धी खण्ड या किसी भी अन्य खण्डको शब्दशः या अन्य प्रकारसे उद्धृत नहीं किया। मैं अपने साथ भारतीय दण्डसंहिताकी कोई प्रति लिये नहीं फिरता और न मैंने उसका कोई भी खण्ड रट डालना उपयोगी समझा है। फिर भी मैंने जो बात कई बार कही है वह यह है कि मैं इसे अपना और हर भारतीयका कर्त्तव्य मानता हूँ कि वह भारतकी वर्तमान शासन-प्रणालीके प्रति विरति या नफरत बढ़ाये। और इस अर्थमें मैं लगातार भारतीय दण्ड संहिताके खण्ड १२४ अ के खिलाफ जुर्म करता रहा हूँ। मुझे यकीन है कि मैंने कभी ऐसा कुछ नहीं कहा जिससे लोग यह समझें कि मैं "महामहिमकी प्रजाके विभिन्न वर्गोंमें घृणा" फैलाना चाहता हूँ। जब कभी मौका मिला मैंने उसके ठीक विपरीत करनेकी भरसक कोशिश की है और यदि ऐसा न होता तो निःसन्देह मैं एक खराब असहयोगी और उस महान् नेताका विनम्र अनुयायी होनेके सर्वथा अयोग्य होता जिसका काम संसारको प्रेम और अहिंसाकी अपरिमित शक्ति फिरसे दिखा देना है।

इन दोनों सम्माननीय सार्वजनिक नेताओंके चरित्रपर धब्बा लगानेवाले अफसरोंके दिमागमें यह कभी नहीं आया कि उनके विरुद्ध हिंसाका उपदेश देने या उसके बारेमें अपनी सहमति प्रकट करनेके आरोप पूरी तरह प्रमाणित किये जाने चाहिए। सर विलियम विन्सेंटको मौलाना बारीसे और सर लुडविक पोर्टरको पण्डित जवाहरलालसे माफी माँगनी चाहिए।

मजेदार भूल

रोहतकके लाला श्यामलालके सिवा किसी दूसरे श्यामलालको न जाननेके कारण मैंने एक बड़ी भूल कर डाली है। मैंने उनके एक नामराशिकी प्रशंसा कर दी जो रोहतकके नहीं, हिसारके हैं और वकील भी हैं। मैं हिसारके लाला श्यामलालसे क्षमा-याचना करता हूँ और कहना चाहता हूँ कि वह सारी प्रशंसा उनपर भी लागू होती है; रोहतकके लाला श्यामलालके कथनानुसार और भी अधिक लागू होती है। वे अपने पत्रमें यह कहते हैं :

> उनका उदाहरण प्रेरणादायक है। उनकी गिरफ्तारीके बाद शीघ्र ही उनकी उदारमना पत्नीने उनका काम उठा लिया और इससे हिसार जिलेमें कांग्रेसकी गति-विधियोंको बड़ा प्रोत्साहन मिला है।

सविनय अवज्ञामें सावधानी

लाला श्यामलाल अपने जिलेके बारेमें लिखते हुए कहते हैं :

> यहाँका जिलाधीश शान्ति-भंगका अन्देशा हुए बिना गिरफ्तारी नहीं करता। फलस्वरूप हमारे स्वयंसेवकोंको कामकी पूरी छूट मिली हुई है। विदेशी कपड़ेका आयात नहीं हो रहा है। शराबका कोई ठेका भी नहीं बिका है।

लाला श्यामलाल यह जानना चाहते हैं कि जिन जिलोंमें गिरफ्तारियाँ नहीं की जा रही हैं उनमें लोग अपनेको गिरफ्तार करानेका कोई खास प्रयत्न करें या नहीं। मेरा तो खयाल था कि मैंने पिछले अंकोंमें इस बातको अच्छी तरह साफ-साफ तरीकेसे समझा दिया है। अपने कर्त्तव्यका पालन करते हुए यदि गिरफ्तार होनेका मौका आये तो हमें उसे नहीं टालना चाहिए; परन्तु सरकारको हमें गिरफ्तार करना ही पड़े इस खयालसे हमें अपनी परिधिका उल्लंघन नहीं करना चाहिए। इसे उग्र सविनय अवज्ञा या अपराधमय अवज्ञा कहा जायेगा। अपराधमय अवज्ञाका तो सवाल ही नहीं उठता और उग्र सविनय अवज्ञा एक ऐसा अधिकार है जिसका उपयोग हम आवश्यकता पड़नेपर, पूरी तैयारी कर लेनेके पश्चात् ही कर सकते हैं। इतना ही नहीं, अगर परिस्थितिको देखते हुए सत्याग्रह जरूरी समझा जाये और साथ ही हमारी तैयारी भी हो, तो सत्याग्रह करना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। पर यह उग्र सविनय अवज्ञा, चाहे वैयक्तिक हो या सामुदायिक हमारे पासके तमाम शान्तिमय साधनोंमें सर्वाधिक प्रभावकारी होते हुए भी सबसे अधिक भयावह है। मैं बखूबी जानता हूँ कि देश सामुदायिक रूपसे अभी इस प्रकार अपने स्वत्वोंकी रक्षाके लिए संघर्ष करनेको तैयार नहीं है। इसके लिए तो हमें इससे कहीं अधिक महान् और कठोर अनुशासनकी जरूरत पड़ेगी। हमें कष्टकर, यहाँतक कि बहुत नागवार मालूम होनेवाले कानूनों और अनुशासन-का पूरा महत्त्व — मैं तो आध्यात्मिक महत्त्व कहनेवाला था — समझ लेना चाहिए। स्वत्व सूचक सविनय अवज्ञा एक ऐसा अधिकार है जो कठिन तपस्या करनेपर ही प्राप्त हो सकता है परन्तु हमारी तपस्या अभी इतनी उच्च कोटिकी नहीं हो पाई है। इसलिए यदि अधूरी तैयारीपर ही हम आक्रामक सविनय अवज्ञा शुरू कर बैठें तो हम एक ऐसी संकटमय स्थिति उत्पन्न कर देंगे, जिसकी न हमने कल्पना की है और न जिसकी हमें आवश्यकता है। इतना ही नहीं ऐसी क्रान्तिसे तो हमें जैसे बने वैसे बचनेकी कोशिश करनी चाहिए। अतएव हमारा तबतक रुके रहना तो अनिवार्य ही है जबतक कि मैं इस प्रयोगको स्वयं करके न देखूँ। यह एक नई चीज है और साधारण विवेक भी यही कहता है कि परीक्षणका फल देख लेनेतक रुके रहना उचित है। यदि सामूहिक अथवा वैयक्तिक सविनय अवज्ञा भारतके अन्य हिस्सोंमें करनेकी कोशिश की जाती है तो मुझे उससे निःसन्देह परेशानी हो सकती है और देशके हितको नुकसान भी पहुँच सकता है। मैं सभी असहयोगियोंका ध्यान कार्य-समितिके उस प्रस्तावकी[1] ओर दिलाता हूँ जिसके अनुसार कांग्रेस संगठनोंको आक्रामक सविनय अवज्ञा तबतक न करनेका आदेश दिया गया है जबतक कि मैं वैसा करनेकी अनुमति साफ शब्दोंमें न दे दूँ और मेरी समझमें आन्ध्र देशके सौ गाँवोंके एक समूहको ही मैं एकमात्र अपवाद मान सकता हूँ। किन्तु वहाँ भी मैंने श्रीयुत कोण्डा वेंकटप्पैयाको सूचित कर दिया है कि यदि किसी भी तरह आक्रामक सत्याग्रह टालना सम्भव हो तो मुझे खुशी होगी। मैंने उन्हें यह भी लिख दिया है कि वे उस कार्यक्रमको तभी हाथमें लें जब उन्हें लगे कि कदम वापस लेना नैतिक बलको नीचे गिरानेवाला होगा

१. देखिए खण्ड २१।

और मानवीय दृष्टिसे देखनेपर यह भरोसा हो जाये कि समस्त आन्ध्र देश अहिंसाका पालन करेगा और कांग्रेस द्वारा लगाई गई अन्य शर्तोंका भी दृढ़तासे पालन होगा। मेरे मनमें यह सन्देह बैठा हुआ है कि देशमें कई स्थानोंमें हाथकती, हाथबुनी खादी पहननेकी शर्तका पालन अच्छी तरह नहीं हो रहा है। उसी प्रकार अस्पृश्यताके रोगसे भी हम सभी जगह अभीतक मुक्त नहीं हुए हैं। मेरा तो खयाल यह है कि जेल जानेकी सामर्थ्य हिन्दू-मुस्लिम-सिख-पारसी-ईसाई एकताको निबाहने, अस्पृश्यताको धोने और हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी पहननेकी शर्तोंके पालन करनेकी अपेक्षा बहुत कम महत्त्व की चीज है। यदि हम इन शर्तोंको यथावत् पूरा न करेंगे तो हमें मालूम हो जायेगा कि हमारा जेल जाना कोरी शेखी है और शक्तिका अपव्यय है। जेल जानेका मुख्य हेतु तो आत्मशुद्धि है, सरकारको परेशानीमें डालना गौण है। मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि सरकार किसी निरपराध, अज्ञात परन्तु शुद्धात्मा व्यक्तिको जेल भेजने या उसे फाँसीपर चढ़ा देनेमें चाहे किसी प्रकारकी परेशानीका अनुभव न करे किन्तु ऐसे दण्ड देते ही उसे रसातलको गया हुआ समझिए। घनेसे-घने अन्धकारको केवल एक ही दीपक नष्ट कर देता है। असहयोग एलोपैथी इलाज जैसा नहीं है, यह होमियोपैथी इलाज है। रोगीको दी जानेवाली दवाकी बूंदोंके स्वादका भी पता नहीं चलता। कभी-कभी तो उसे भरोसा ही नहीं होता कि वह कोई दवा भी हो सकती है; किन्तु यदि होमियोपैथीके डाक्टरोंका कथन सत्य माना जाये तो होमियो-पैथीकी बेस्वाद बूंदें या नन्हीं-नन्हीं गोलियाँ एलोपैथीकी दो तोलेकी खूराक या गला रूंध देनेवाली गोलियोंसे ज्यादा ताकतवर होती है। मैं पाठकोंको आश्वस्त करता हूँ कि होमियोपैथी दवाकी अपेक्षा शुद्धिकारक असहयोगका प्रभाव होना अधिक निश्चित है। इसलिए मेरी यह इच्छा अवश्य है कि असहयोगी सभी जगह सविनय अवज्ञाकी तमाम शर्तोंको पूरा करनेका आग्रह रखें। हरएक शख्स फिर वह वकील, उपाधिधारी, परिषद्का सदस्य, कोई भी क्यों न हो, सविनय अवज्ञाका पूरा-पूरा अधिकार रखता है; बात इतनी ही है कि वह मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पालन करता हो, हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी अपना पवित्र कर्त्तव्य समझकर पहनता हो, अस्पृश्यताको एक जबरदस्त बुराई मानकर उससे सदा दूर रहता हो और ऐसा मानता हो कि भिन्न-भिन्न जातियों और वर्गोंमें एकता, लोगोंकी खुशहाली, भारतमें स्वराज्य स्थापित करने तथा उसे बनाये रखनेके लिए सदैव आवश्यक हैं।

आक्रामक बनाम प्रतिरक्षात्मक

अब आक्रामक सविनय अवज्ञा और प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञामें ठीक क्या अन्तर है, यह समझ लेना आवश्यक हो गया है। आक्रामक, उग्र या सरकारको चोट पहुँचानेवाली सविनय अवज्ञा भी अहिंसात्मक है। वह राज्यके उन कानूनोंकी जान-बूझकर की गई अवज्ञा है जिनको भंग करना नैतिक भ्रष्टाचारके अन्तर्गत नहीं आता और जो राज्यके विरुद्ध विद्रोहके रूपमें की जाती है। इस प्रकार राजस्व सम्बन्धी या व्यक्तिगत आचरण सम्बन्धी ऐसे कानूनोंकी जो राज्यकी सुविधाके लिए हों, अवज्ञा करना — भले ही वे कोई परेशानी पैदा करनेवाले न हों और न उन्हें बदलवाना

ही जरूरी हो — उग्र, आक्रामक या सरकारको चोट पहुँचानेवाली सविनय अवज्ञा कहलायेगी।

दूसरी ओर, प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा या ऐसे कानूनोंकी अवज्ञा जो अपने-आपमें बुरे नहीं हैं, परन्तु जिनको मानना आत्मसम्मान या मानवीय प्रतिष्ठाके अनुरूप नहीं होगा, विवश होकर की गई अवज्ञा है। और शान्तिपूर्ण कामोंके लिए स्वयंसेवक दल बनाना, ऐसे ही कामोंके लिए सार्वजनिक सभाएँ करना, सरकारके निषेधादेशोंके बावजूद ऐसे लेख प्रकाशित करना जो हिंसाका प्रतिपादन नहीं करते या हिंसाको नहीं भड़काते, प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा है। और इसी कारण प्रतिकूल निषेधादेशोंके बावजूद इस मतलबसे शान्तिमय धरना देना कि लोगोंको उन चीजोंसे या उन संस्थाओंसे जहाँ धरना दिया गया है, विमुख कर दिया जाये, प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा है। ऊपर कही गई शर्तोंको पूरा करना प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञाके लिए भी उतना ही जरूरी है जितना कि आक्रामक सविनय अवज्ञाके लिए।

एक उपयुक्त फटकार

कहा जाता है कि तंजोरके श्री पी० वी० हनुमन्तरावने मद्रास सरकारसे क्षमा-याचना की है और अपनी रिहाई चाही है। चूँकि उन्होंने एक असहयोगीकी तरह अपने ऊपर किये गये विश्वासको नहीं निबाहा, सरकारका उनसे जमानत माँगना बिलकुल ठीक ही हुआ है। मद्रास सरकार कहती है कि एक कैदी श्री सुब्रह्मण्य शिवने, जो बीमार थे, रिहाईके लिए अर्जी दी। उन्होंने कुछ समयके लिए राजनीतिमें भाग न लेनेका वायदा भी किया, और अब मुकर गये हैं और इस बातको स्वीकार ही नहीं करते कि उन्होंने कभी क्षमा माँगी थी। श्री सुब्रह्मण्य शिव एक सुविख्यात जनसेवक हैं। मैं आशा करता हूँ कि वे इन सब बातोंका जिक्र करते हुए पूर्ण वक्तव्य देकर अपनी स्थिति साफ करेंगे और यदि उन्होंने दुर्बल क्षणोंमें माफी माँगी है तो मैं आशा करता हूँ कि वे श्री याकूब हसनकी तरह उसे निर्भयतापूर्वक स्वीकार करनेका साहस दिखायेंगे। सभी जानते हैं कि वे एक भयंकर रोगसे पीड़ित हैं और यदि उन्होंने ऐसी परिस्थितिमें क्षमा-याचना की है तो निश्चय ही जनता उनकी इस दुर्बलताको नजर-अन्दाज कर देगी। यदि उन्होंने इस आशयका कोई वायदा किया है कि वे एक साल-तक राजनीतिमें भाग नहीं लेंगे तो उसे जरूर पूरा करना चाहिए। असहयोगीके मनमें दुर्बलता कैसी? वह कमजोरीको छिपायेगा भी नहीं। उसके लिए सबसे जरूरी बात तो पूरी तरह ईमानदार होना है और उसे चाहिए कि वह अपने वायदे, चाहे वे दुर्बल क्षणमें ही क्यों न किये गये हों, निष्ठाके साथ पूरे करे; यदि उन वचनोंको पूरा करनेमें कोई अनैतिकता होती हो तो बात अलग है।

ईसाई समाजमें

कहा जाता है, ईसाई समाजमें इन दिनों ऐसी चर्चा चल रही है कि मैंने निजी बातचीतमें लोगोंसे यह कहा है कि यदि भारत शस्त्रोंके प्रयोगके लिए समर्थ होता तो मैं निश्चय ही उसका सहारा लेता और शस्त्रोंके प्रयोगकी सलाह देता। मैंने ऐसा

नहीं सोचा था कि भारतमें मेरे विषयमें कभी ऐसी बात कही या मानी जायेगी। मैं अपने ईसाई तथा अन्य पाठकोंको विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने किसी भी आदमीसे कभी ऐसी बात नहीं कही। इसके विपरीत मेरा विश्वास चालीससे भी अधिक वर्षोंसे अनाचारीके दुर्व्यवहारको जान-बूझकर बरदाश्त कर लेने और प्रतिकार न करनेमें रहा है और मैंने तदनुसार आचरण भी किया है। मेरे सार्वजनिक जीवनमें अनेक बार ऐसा हुआ है जब बदला लेनेकी क्षमता होते हुए भी मैंने बदला नहीं लिया और मित्रोंको भी यही सलाह दी कि बदला न लिया जाये। मेरा जीवन इसी नियमके प्रचारके लिए अर्पित है। जरतुश्त, महावीर, डैनियल, ईसा मसीह, मुहम्मद, नानक आदि संसारके अनेक बड़ेसे-बड़े सन्तोंके वचनोंको मैंने पढ़ा है। मूसाने बदला लेनेकी बात तो कही है, किन्तु उसका यह अर्थ लगाना कि उन्होंने अपने अनुयायियोंको दाँतके बदले दाँत तोड़नेका आदेश दिया है; उनके प्रति न्याय करना है अथवा नहीं सो निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। हो सकता है कि यह मेरी अभिलाषा-भर रही हो और उसीने इस विचारको जन्म दिया हो; किन्तु मेरा यह विचार जरूर है कि उस जमानेमें जब कि लोग खुले तौरसे शत्रुके खूनके प्यासे हुआ करते थे, मूसाने अपने अनुयायियोंसे यह कहा हो कि बदला ही लेना है तो उसी हदतक लो जितनी तुम्हारी हानि हुई है, अधिक नहीं। किन्तु मैं पाठकोंको धार्मिक विवादमें घसीटना नहीं चाहता। अहिंसा सभी कालोंमें मेरा सर्वोच्च और निर्विवाद सिद्धान्त रहा है और अब भी है तथा मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि सदैव ऐसा ही रहे। फिर भी यह सच है कि असहयोगियोंमें हजारों व्यक्ति ऐसे हैं जिनके नजदीक अहिंसा एक मसलहत या ऐसी नीतिके रूपमें है जिससे वे हमेशा और हर हालतमें बँधे हुए नहीं हैं। उनका विश्वास है कि भारत आज जैसा-कुछ है उसे देखते हुए उसके सामने अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी खातिर अहिंसाके सिवाय दूसरा कोई उपाय नहीं है। उनका यह विश्वास केवल इसलिए नहीं है कि भारतके पास कोई अस्त्र-शस्त्र या तत्सम्बन्धी प्रशिक्षण नहीं है बल्कि इसलिए भी है कि उसमें विभिन्न धर्मों और जातियोंके लोग रहते हैं इसलिए यदि उसके निवासी हर अवसरपर युद्धके देवताका आह्वान करने लगें तो आपसी झगड़ोंके सिवा और कुछ हाथ नहीं लगेगा। जब हमने पहले-पहल अहिंसाके सिद्धान्तको अंगीकार किया था, हमारे बड़ेसे-बड़े विचारक भी उस दिनकी अपेक्षा आज उसमें अधिक खूबियाँ देखने लगे हैं।

इस सिलसिलेमें मेरा ध्यान 'ज्ञानोदय'में प्रकाशित एक अनुच्छेदकी ओर भी दिलाया गया है। उसमें कहा गया है कि साधु सुन्दरसिंहने श्री गांधीके तरीकोंसे गहरी असहमति व्यक्त की और स्पष्ट शब्दोंमें यह भी कहा कि आपके तौर-तरीके भारतको तबाही और व्यर्थके कष्टोंकी ओर ले जानेके सिवा और कुछ नहीं कर सकते। मुझे खेद है कि उस साधुका नाम इस विवादमें इस तरह घसीटा गया है। परन्तु चूँकि ऐसा हो ही चुका है, साधु और उद्देश्यके प्रति न्याय करते हुए मुझे इतना जरूर कहना पड़ेगा कि जहाँतक मुझे याद आता है उन्होंने न केवल "स्पष्ट शब्दोंमें" मेरे तरीकोंसे असहमति तो दूर उसे पूरे तौरपर पसन्द करते हुए यह माना है कि भारतके

पास और कोई उपाय है ही नहीं। उनका और मेरा घनिष्ठतम सम्पर्क रहा है। साधु खासकर कुछ ऐसी बातें समझनेके लिए आये थे जिनके बारेमें उन्हें पूरी जानकारी नहीं थी। उदाहरणके लिए उन्हें यह नहीं मालूम था कि हिन्दू-मुस्लिम मैत्रीसे मेरा क्या अभिप्राय है; अल्पसंख्यकोंकी स्थिति क्या होगी और आन्दोलन अन्ततक अहिंसात्मक रह सकेगा या नहीं। इन सब तथा अन्य विषयोंपर हमारी बातचीत बहुत देरतक होती रही और निश्चय ही उनकी बातचीतकी मुझपर यह छाप पड़ी कि कोई भी धार्मिक व्यक्ति इसके सिवा कोई दूसरा रास्ता चुन ही नहीं सकता। बेशक सबसे बड़ी कठिनाई आम जनताको अन्ततक अहिंसात्मक बनाये रखना ही है। आदमीके लिए भले ही कुछ शक्य न हो किन्तु प्रभुके लिए कुछ भी अशक्य नहीं है। वैसे तो मेरी इच्छा इस बातचीतका उल्लेख करनेकी नहीं थी किन्तु जिन मित्रोंने इस बातकी ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया है उनका कहना है कि साधु सुन्दरसिंह परेशानीमें पड़ गये हैं और उपरोक्त अनुच्छेदका उपयोग भारतीय ईसाइयोंको आन्दोलनसे विरत करनेकी दृष्टिसे किया जा रहा है। आन्दोलनकी सफलता या विफलता उसके अपने गुण-दोषोंपर आधारित है। अगर उसके प्रतिपादक ही अपने उत्तरदायित्वसे च्युत होते हैं तो कोई भी प्रशंसा उसके रक्षणमें असमर्थ है और यदि वे अन्ततक साहसपूर्वक डटे रहते हैं तो उसकी बड़ीसे-बड़ी निन्दा भी उसको कोई स्थायी क्षति नहीं पहुँचा सकती। फिर भी मुझे लगा कि साधु सुन्दरसिंहके विचारोंके बारेमें जो कुछ मैं जानता हूँ उसे जनतासे छिपाना ठीक नहीं है।

नये युगका उषःकाल

श्री पियर्सनने अपने लेखमें प्रश्नका उत्तर स्वीकारोक्तिमें दिया है। मैं उस उत्तरका प्रथम भाग इस अंकमें प्रकाशित कर रहा हूँ। कुछ लोगोंको शायद वह लेख बहुत ही ज्यादा आशावादी लगे किन्तु निराशावादी होनेसे आशावादी होना बेहतर है। कदाचित् नये युगके प्रारम्भका सबसे अच्छा प्रमाण एशियाके उस कविका, जो नवभावना और नवीन आशाका प्रतिनिधित्व करता है, यूरोप और अमेरिकामें किया गया शानदार स्वागत है। उनका सम्मान उनकी कुलीनता या विद्वत्ताके कारण नहीं बल्कि उस नवीन सन्देशके लिए किया गया है जो उनके जीवनका मुख्य लक्ष्य है। ऐसा लगता है कि यह आशा करना तो एक तरहसे बहुत ज्यादा होगा कि यह सवेरा उस अधम साम्राज्यवादी भावनाके पूरी तरह छिन्न-भिन्न हो जानेसे पहले ही होगा जिसका कि अंग्रेज लोग प्रतिनिधित्व करते हुए जान पड़ते हैं। नये युगका प्रारम्भ होनेसे पूर्व ब्रिटेनको एक वास्तविक 'कॉमनवेल्थ' बन जाना चाहिए या उसका साम्राज्यके रूपमें बने रहना समाप्त हो जाना चाहिए या फिर उसे नये युगके प्रारम्भसे पूर्व समाप्त ही हो जाना चाहिए। और किसी कारणसे नहीं तो केवल इस कारणसे कि वहाँके कुछ बड़े-बड़े लोग हृदयसे विश्वास करते हैं कि वही एक ताकत है जो आज शान्ति बनाये हुए है, लेकिन वही संसारकी शान्तिके लिए सबसे बड़ा खतरा है। वे यह माननेसे इनकार करते हैं कि शस्त्रोंके बलपर, जबरन् कायम रखी जानेवाली शान्ति कोई शान्ति नहीं होती। इसलिए यदि ब्रिटेन येनकेन प्रकारेण अपनी नीति और उसके फल-

स्वरूप अपना हृदय परिवर्तित नहीं करता तो नया सवेरा होनेसे पहले अंग्रेजों और जर्मनोंके बीच हुए महायुद्धसे भी अधिक भयंकर विश्व-युद्ध अवश्य छिड़ जायेगा। ब्रिटेनके हृदय परिवर्तनके लिए हमें प्रार्थना और प्रयास करना उचित है।

प्रकाशनकी दृष्टिसे अवांछनीय

कुछ ऐसी बातें होती हैं जिनका छप जाना पसन्द नहीं किया जा सकता; सो इसलिए नहीं कि उनमें कुछ गोपनीयता होती है, वरन् इसलिए कि वे इतनी अधिक पवित्र हैं कि उनका प्रकाशित किया जाना अनुचित माना जायेगा। कभी-कभी प्रकाशित विवरण मनपर जो छाप डालता है वह कही गई बातसे बिलकुल भिन्न होता है। किन्तु हो सकता है कि वह विवरण वैसे बिलकुल सही हो। यदि मैं बतौर मजाकके या घुड़ककर किसी छोटे बच्चेको पक्का बदमाश कह दूं तो केवल इतना ही विवरण देना काफी नहीं हो सकता है कि मैंने किसीको पक्का बदमाश कहा। ऐसे अवसरोंपर उचित तो यह है कि उसे पक्का बदमाश कहनेके कारण और परिस्थितिपर भी प्रकाश डाला जाये। गत दूसरी तारीखके 'बॉम्बे क्रॉनिकल' में एक विवरण[1] प्रकाशित हुआ है, उसमें सत्याग्रह आश्रम साबरमतीमें हुए एक वार्तालाप और विवादका विवरण है। मित्र जान पड़नेवाले उस विवरणके प्रेषक महोदयने कुछ इसी प्रकारका अहितपूर्ण कार्य किया है। मैं ऐसी बातोंका विवरण प्रकाशित किया जाना नापसन्द करता हूँ। बातचीतकी झड़ीमें कुछ अनकहा रह ही जाता है। और तब ऐसी बातचीतका सही विवरण विस्तृत और स्पष्ट पाद-टिप्पणियोंके बिना दे सकना सम्भव नहीं होता। उदाहरणार्थ उक्त विवरणके अनुसार मैंने यह कहा कि शान्तिनिकेतन भौतिक प्रगतिके लिए है और सत्याग्रह आश्रम पूरी तरह आत्मिक उन्नतिके लिए। इसे पढ़नेपर यदि कविवरके ध्यानमें रहा कि मैं शान्तिनिकेतनके बारेमें ऐसी बात कह ही नहीं सकता और न कभी मेरा ऐसा अभिप्राय हो ही सकता है तो वे इस विवरणपर हँसेंगे; नहीं तो यह सोचकर क्रुद्ध और निराश होंगे कि मैं भी कैसा निपट अनभिज्ञ और अनाड़ी हूँ कि शान्तिनिकेतनका आध्यात्मिक स्वरूप ही नहीं पहचान पाया। मुझे पूरा

१. बातचीतका २-२-१९२२ के **हिन्दू** में प्रकाशित ब्योरा इस प्रकार था: "... महात्माजीने आश्रमके पुराने निवासियोंको अपने समीप बुलाया और आश्रमके बारेमें उनकी राय पूछी। विभिन्न रायें व्यक्त की गई। कुछ लोगोंने आश्रमके नियमोंको बहुत कड़ा कहा और कुछ उन्हें और भी कड़ा करनेके पक्षमें थे। उसके बाद गुजरात महाविद्यालयके हिन्दी-शिक्षकने जो पहले शान्तिनिकेतनमें थे, कहा: "हम लोग जो संयुक्त-प्रान्तके हैं, शामको जल्दी खा लेना पसन्द नहीं करते और न सुबह चार बजेका उठना। मेरे लिए तो यह बिलकुल ही असम्भव है।" बापूजी मुस्कराए और बोले: "देखिए आपका शान्तिनिकेतन भौतिक प्रगतिके लिए है और सत्याग्रह आश्रमका लक्ष्य है केवल आत्मिक प्रगति। आप कहते हैं कि शान्तिनिकेतनमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता अधिक है किन्तु मैं इसे स्वतन्त्रता नहीं कहता। मैं इसे उच्छृंखलता कहता हूँ। सुबह जल्दी उठना अच्छा होता है। रोज सुबह प्रार्थनाके बाद ही मैं **नवजीवन** और **यंग इंडिया** के लिए लिखता हूँ। मैं प्रातःकालमें अन्य किसी समयकी अपेक्षा कहीं अधिक अच्छी तरह एकाग्रचित्त हो पाता हूँ। यदि आप जल्दी सो जायें तो जल्दी उठना कठिन नहीं है। जहाँतक मेरा सवाल है, आप जानते हैं कि मेरा सोनेका समय दस बजे है।"

यकीन है कि उक्त संवाददाताने शान्तिनिकेतनके बारेमें मेरी जो धारणा व्यक्त की है वह मेरे मनमें कभी आ भी सकती है, कविवर ऐसा मानकर मेरे साथ अन्याय न करेंगे। मैं कविसे यह कहनेको तैयार हूँ, और सच पूछिए तो कह भी चुका हूँ कि शान्तिनिकेतनमें अनुशासनकी कमी जरूर है। वे उसपर हँस दिये थे और उन्होंने मेरी आलोचनाकी पुष्टि की तथा यह कहकर उसे उचित बताया था कि 'मैं कवि हूँ और शान्तिनिकेतन मेरे चित्तरंजनका स्रोत है। मैं तो केवल गा सकता हूँ और लोगोंसे गवा सकता हूँ। आप चाहें तो यहाँ अपने मनका अनुशासन चलायें; किन्तु मैं तो कोरा कवि हूँ।' पाठक जानते होंगे कि मैं शान्तिनिकेतनमें कई बार ठहर चुका हूँ। उसे अपना विश्रामगृह माननेकी मुझे अनुमति प्राप्त है। जब मैं इंग्लैंडमें[1] था तब आफ्रिकासे भारत आये हुए मेरे विद्यार्थी वहाँ और गुरुकुल (काँगड़ी)में रहे थे। हिन्दी-शिक्षकके साथ मेरी बातचीतका आधार ही यह था कि हम दोनों ही शान्तिनिकेतनके प्रेमी हैं। जब शान्तिनिकेतनके सारे कामकाज शुद्ध आध्यात्मिक काव्यके रचयिताकी छत्रछायामें ही चलते हैं तो फिर वह एक आध्यात्मिक स्थानके अतिरिक्त हो ही क्या सकता है? मैं इतना मतिमन्द नहीं हूँ कि यह सोचूँ कि जिस स्थलपर देवेन्द्रनाथ ठाकुर[2] रहा करते थे वह आध्यात्मिक भावनासे विहीन हो सकता है। 'यंग इंडिया'के पाठक जानते हैं कि मुझे समय-समयपर शान्तिनिकेतनसे 'बड़ो दादा'के भेजे हुए आध्यात्मिक सन्देश मिलते रहते हैं और वे मुझपर निरन्तर कृपादृष्टि रखते हैं और मेरे उद्देश्यकी सफलताके लिए प्रार्थना भी करते रहते हैं। मैं यहीं यह निवेदन कर देना चाहता हूँ कि शान्तिनिकेतनके कई प्राध्यापकों और शिक्षकोंको मैं बहुत ही आध्यात्मिक और सत् पुरुष मानता हूँ। उनके सम्पर्कको मैंने अपना सौभाग्य माना है; और यह भी कह दूँ कि भारतके प्रान्तोंमें बंगालको मैं सबसे अधिक आध्यात्मिक मानता हूँ। दुर्भाग्यसे जिसका विवरण प्रकाशित कर दिया गया है, मेरी वह पूरी बातचीत मजाकके लहजेमें चल रही थी। इसी लहजेमें शान्तिनिकेतनसे प्रेम करनेवाले सज्जनोंके बीच मैंने प्रायः शान्तिनिकेतनकी अपेक्षा सत्याग्रह आश्रममें अधिक आध्यात्मिकता होनेका दावा किया है। किन्तु इस स्पर्धा और दावेका अर्थ अपनेको बढ़ा-चढ़ाकर प्रकट करना नहीं है। मैं सत्याग्रह आश्रमको आम जनताकी नजरोंसे दूर ही रखना चाहता हूँ। हम आश्रमके लोग विनम्र और बिना पढ़े-लिखे कार्यकर्तागण हैं और हमें अपनी कमजोरियों-का भान है। उन्हें हम अधिकाधिक समझनेकी कोशिश कर रहे हैं और निःसन्देह सत्यकी उपलब्धिके लिए कटिबद्ध हैं और उसीके लिए जीना और मरना चाहते हैं। साम्य रखते हुए भी जो एकरूप नहीं हैं ऐसी संस्थाओंकी परस्पर तुलना कदापि नहीं की जानी चाहिए। यदि तुलना करनी ही हो तो मैं सच्चे हृदयसे शान्तिनिकेतन-को आश्रमके बड़े भाईका स्थान दूँगा भले ही आश्रममें लोग सुबह जल्दी उठ जाते हों और अनुशासनपरायण भी हों। वह उम्रमें कहीं बड़ा है और मैं जानता हूँ कि बुद्धिमत्तामें भी बड़ा है। लेकिन एक 'लेकिन' तो वहाँ लगा हुआ ही है। शान्ति-

१. १९१५ में; देखिए खण्ड १३ पृष्ठ १९-२०।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरके पिता।

निकेतनके निवासियोंको उस दौड़के प्रति सावधान रहना चाहिए जिसमें गुजरातका वह छोटा-सा स्थान क्रियाशील है।

शान्तिनिकेतनके बारेमें समाधानकी दृष्टिसे इतना कह देना पर्याप्त है। अपने उस दिनके वार्तालापका[1] विवरण प्रस्तुत करनेका यह न समय है, न स्थान। उसकी कोशिश भी आवश्यक नहीं है। उस समय मैंने जो-कुछ कहा था वह मेरे अन्तस्तलसे ही निकला था। अब मैं खुद भी उसे जोरके साथ पेश नहीं कर पाऊँगा, मैंने अपनी पूरी बात एक बहनके मुँहसे एक ही वाक्यमें इन शब्दोंमें सुनी : "उनका कथन यथार्थ है।" क्या ही अच्छा होता यदि ये अपरिचित महानुभाव उसका विवरण लिखनेकी बात ही न सोचते। विवरणमें मूल बात ही व्यक्त नहीं हो पाई।

पुण्यधाम काशीमें

काशीमें जो-कुछ हो रहा है, वह निम्नलिखित तारमें पूरी तरहसे आ गया है :[2]

> स्वयंसेवकोंको बीस तारीखको सजा सुनाई गई . . . अबतक सादी कैद . . . अब सपरिश्रम। कामसे इनकार तनहाईकी सजा। साथ ही गन्दगी भूख-प्याससे त्रस्त . . . कृपलानी तथा अन्य यहाँतक कि साधारण मुजरिम आज तीन तारीखसे विरोधमें भूख हड़तालपर . . . स्थिति चिन्ताजनक।

आन्ध्रमें

आन्ध्रमें सविनय अवज्ञाके लिए तैयारीसे सम्बन्धित श्री नरसिंहराव द्वारा लिखित एक संक्षिप्त लेख पाठकोंके लाभार्थ दिया जा रहा है। साथमें उसकी पूर्तिके विचारसे देशभक्त वेंकटप्पैयाका २ तारीखको लिखा एक पत्र[3] भी दे रहा हूँ :

पूनामें

श्री नरसिंह चिन्तामण केलकर और उनके साहसी सहयोगी आगे बढ़ रहे हैं। सरकार उन्हें कैद नहीं कर रही है। उसने श्री केलकरपर धरना देनेके अपराधमें ५०) रु० जुर्माना किया है। कहनेकी जरूरत नहीं कि उन्होंने उसे अदा करनेसे इनकार कर दिया। यदि जुर्मानोंके बावजूद श्री केलकर तथा अन्य लोगोंने धरना देना जारी रखा तो उन्हें भारी आर्थिक क्षति उठानी पड़ेगी। मैं आशा करता हूँ कि वे सब इस परीक्षामें खरे उतरेंगे। राष्ट्रीय उत्थानके लिए धनहानि बरदाश्त करना भी उतना ही जरूरी है जितना जनहानि सहना।

साबरमती जेलमें

जेलमें अधिकारी जो-कुछ कर रहे हैं उससे ऐसा जान पड़ता है मानो इसकी कोई योजना बना ली गई हो। जो कराचीमें किया गया उसीके साबरमती जेलमें

१. देखिए "भाषण : सत्याग्रह आश्रम, अहमदाबादमें", २६-१-१९२२।

२. तारके कुछ अंश ही यहाँ दिये जा रहे हैं।

३. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें गुण्टूर और नेलौरमें असहयोगियों द्वारा की गई कार्यवाहियोंका वर्णन था।

दोहराये जानेकी खबर मिली है और जयरामदास [दौलतराम] ने जेलके अपमानजनक तरीके माननेसे इनकार कर दिया है। वे उसे मानकर न तो उस ढंगसे सलाम करेंगे, जिस ढंगसे जेलमें करनेका विधान है और न वे जामातलाशी ही देंगे। इसलिए उन्हें एकान्त कोठरीमें बन्द कर दिया गया है। उन्हें रोशनी और चप्पलसे भी वंचित रखा गया है। कहा जाता है कि यदि वे नहीं झुकेंगे तो उन्हें और भी सजाएँ दी जायेंगी। शायद उन्हें डंडा-बेड़ी दी जाये और तीन दिनतक उसीमें खड़ा रखा जाये। ऐसी सजा पहले हमारे पूर्वज भोग चुके हैं; सभी कालोंमें और सभी देशोंमें ऐसा होता आया है। मैं आशा करता हूँ कि जिन कैदियोंने अधिकारियोंको चुनौती दी है परमात्मा उन्हें शक्ति देगा और वे प्राण गँवानेकी नौबत आ जानेपर भी नहीं झुकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-२-१९२२

१५०. एक ही मामला

मैंने परमश्रेष्ठ वाइसरायको जो पत्र लिखा था वह गम्भीर विचार और प्रभुकी प्रार्थना करनेके बाद ही लिखा था। वह कोई धमकी नहीं है; क्योंकि उसका प्रत्येक शब्द कार्यान्वित करनेके इरादेसे लिखा गया है। वह एक हार्दिक प्रार्थना है कि क्रूर शासक अनुचित कामसे विरत हो जाये। क्रूर शासक लॉर्ड रीडिंग नहीं हैं। वे बिना जाने ही जिस शासन-प्रणालीके शिकार बनकर लाचार हो चुके हैं वह प्रणाली ही क्रूर है। किन्तु शासन-प्रणाली आखिरकार किसी व्यक्तिके ही रूपमें सामने आती है। आज लॉर्ड रीडिंग ही उसके साकार स्वरूप हैं; चाहे उन्हें इसकी प्रतीति हो चाहे न हो। मैंने बड़ी विनम्रताके साथ निवेदन किया है कि वे स्थितिपर गम्भीरतापूर्वक विचार करें और अपने-आपसे पूछें कि क्या सरकारकी ओरसे की जानेवाली मनमानी किसी भी तरह उचित ठहराई जा सकती है। जरा वे साप्ताहिक समीक्षा-[1] पर ध्यान दें जिसे वही पुराना शीर्षक "इन कोल्ड ब्लड" दिया गया है। यदि सभी गवाह झूठे नहीं हैं तो यह पूराका-पूरा बयान सच है। क्या ऐसा होना उचित है?

किन्तु सत्ताके आदेशोंकी अवज्ञा हो तो क्या किया जाये? क्या सत्ताकी अवहेलना (कमसे-कम अहिंसापूर्ण अवज्ञा) का मुकाबला नृशंसताके साथ, सत्ताका कुटिल और मनमाना प्रयोग करके किया जाना चाहिए?

यदि वाइसराय इतना सीधा-सादा मामला भी नहीं समझ सकते या वे उसे समझना नहीं चाहते तो क्या भारत हाथपर-हाथ रखे बैठा रहे? प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा तो हर हालतमें जारी रहनी चाहिए। यदि सारा भारत भी एक स्वरसे कहता कि बिना अनुमतिके शान्तिपूर्ण आम सभाएँ नहीं करनी चाहिए, बिना अनुमतिके शान्तिपूर्ण स्वयंसेवक संघ नहीं बनाया जाना चाहिए और बिना अनुमतिके समाचार-

१. **यंग इंडिया,** ९-२-१९२२ में प्रकाशित पुलिस और यूरोपीयों द्वारा किये गये अत्याचारोंका विवरण।

पत्र प्रकाशित नहीं किये जाने चाहिए तो वह निषेधाज्ञा स्वीकार नहीं की जा सकती थी। क्योंकि ये तो साँस लेने जैसी बातें हैं और किसी व्यक्तिसे यह आशा नहीं रखी जा सकती कि वह साँस लेने, खाने या पीनेके लिए दूसरे व्यक्तिसे अनुमति माँगेगा। जिन तीन बातोंका मैंने ऊपर जिक्र किया है वे सार्वजनिक जीवनके लिए साँस, भोजन और पानीकी तरह अनिवार्य हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-२-१९२२

१५१. चक्करमें

बंगाल सरकारकी, और कहें तो भारत सरकारकी भी, स्थितिका वर्णन करनेके लिए सर हेनरी व्हीलरने हमें एक उपयुक्त शब्दावली प्रदान की है। बंगाल विधान परिषद्में उस प्रस्तावपर होनेवाली बहसको जिसमें सरकारसे माँग की गई थी कि वह सब दमनकारी विज्ञप्तियोंको रद कर दे और उनके अन्तर्गत दण्डित सभी बन्दियों-को रिहा कर दे, उन्होंने "नितान्त अवास्तविक" बताया। वे बंगालके बारेमें सिर्फ उतना ही जानते हैं जितना कि उनके अधीनस्थ कर्मचारियोंने उन्हें बताना उचित समझा। इसके अतिरिक्त वे कुछ नहीं जानते कि वहाँ क्या हो रहा है। अतः उनके लिए बहस "नितान्त अवास्तविक" हो सकती है। वे पचासों पार्षद, जिन्हें वास्तविक स्थितिका प्रत्यक्ष ज्ञान है, सर हेनरीकी वक्तृतासे गुमराह नहीं हुए। बंगाल सरकारने जो रुख अख्तियार किया है, वह उनके लिए "नितान्त अवास्तविक" है। सर हेनरी व्हीलरने देशमें व्याप्त जिस अराजकताका वर्णन किया है, वह केवल उनकी कल्पनाकी सृष्टि थी। पार्षदोंके विचारानुसार देशमें वस्तुतः जो-कुछ हो रहा है, उसके लिए बंगाल सरकारको ऐसे कठोर उपाय अपनानेकी आवश्यकता नहीं थी। वे जानते थे कि बंगालमें जैसी अराजकता मौजूद है, वह अनुशासित, विनयपूर्ण और अहिंसात्मक है तथा अधिकारियोंके अविचारपूर्ण कृत्योंके कारण आवश्यक हो गई है। सर हेनरी व्हीलरने श्रोताओंको यह समझानेकी कोशिश की कि चित्तरंजन दास, मौलाना अबुल कलाम आजाद, श्यामसुन्दर चक्रवर्ती और अब यहाँतक कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके वयोवृद्ध अध्यक्ष श्री हरदयाल नागका इरादा भी शरारत-भरा था। लेकिन वे पार्षदोंको इस बातकी प्रतीति नहीं करा पाये। जननेताओंके तथा बहुत-से अन्य निर्दोष कार्यकर्त्ताओं-के बन्दी बनाये जानेका चित्र उनके मनमें था। जनताके इन विश्वस्त नेताओं तथा अन्य अनेक निर्दोष कार्यकर्त्ताओंकी कैदकी बातसे पार्षदोंका मन भरा हुआ था और इसलिए सर हेनरी व्हीलरने परिस्थितियोंका जो भयंकर चित्र खींचा वह उन्हें सर्वथा अवास्तविक प्रतीत हुआ और फलतः सर व्हीलर जो चाहते थे कि इस तरह डरकर पार्षदगण उक्त प्रस्तावको अस्वीकार कर देंगे, वह नहीं हो सका। विचार-स्वातन्त्र्यके लिए पार्षदोंने जो साहसपूर्ण रवैया अपनाया, उसके लिए वे बधाईके पात्र हैं, क्योंकि जिस अराजकताकी शिकायत सर हेनरी व्हीलरने की वह और कुछ नहीं, केवल वाणीकी

स्वतन्त्रता और संगठनकी स्वतन्त्रताके अपने अधिकारपर लगाये गये प्रतिबन्धकी अवज्ञापर ही आग्रह रखना था।

शान्तिपूर्ण सभाओंको बलपूर्वक भंग करना, कांग्रेस तथा खिलाफतके समर्थक समाचारपत्रोंकी तलाशियाँ लेना तथा उन्हें जब्त करना और जन-साधारणको मारना-पीटना पार्षदोंके लिए ऐसे भयानक सत्य थे कि उनके सामने प्रस्तावका अनुमोदन करनेके अतिरिक्त और कोई चारा ही नहीं था। यह बात ध्यान देने लायक है कि सर हेनरी व्हीलरने जो संशोधन पेश किया वह किसी प्रकार भी हठधर्मीसे भरा हुआ नहीं था। उन्होंने इस मामलेकी जाँचके लिए एक गैर-सरकारी समिति नियुक्त करने-का प्रस्ताव किया, किन्तु पार्षदोंने इस समझौतेको अस्वीकार कर दिया जो कि सर्वथा उचित ही था। जिन बातोंको वे प्रत्यक्ष देख रहे हैं, जिन्हें वे साफ-साफ अनुभव कर रहे हैं, उनके बारेमें वे किसी समितिको शंका उठानेका अवसर देनेको तैयार नहीं थे। अब बंगाल सरकार जरूर चक्करमें आ गई होगी। यदि वह निर्दोष बन्दियोंको रिहा करती है और अपनी अनमोल विज्ञप्तियोंको वापस ले लेती है तो कांग्रेस और खिलाफत संगठन निश्चित रूपसे अपना आन्दोलन दूने उत्साहसे आगे बढ़ायेंगे। यदि वह उस प्रस्तावको अस्वीकार कर देती है तो उसे नरम दलके समर्थनको अधिकांश रूपमें खो देना पड़ेगा। निःसन्देह वह उनके समर्थनके बिना भी रह सकती है, जैसा कि वह वर्षोंसे रहती चली आ रही है। किन्तु उसे निश्चित रूपसे समझ लेना होगा कि भारतमें नये युगका उदय हुआ है। अब लोग दमनके आगे झुकनेवाले नहीं हैं। उन्हें अपनी शक्तिका अधिकाधिक ज्ञान होता जा रहा है। वे कष्ट सहनके अधिकाधिक आदी होते जा रहे हैं। जिन लोगोंमें कष्ट सहनकी क्षमता और इच्छा काफी मात्रामें हो, उन्हें संसारकी कोई भी सरकार दमनके जरिये गुलाम नहीं बना सकती।

जो बात बंगालपर लागू होती है वही बिहारपर भी लागू होती है। बिहारकी विधान परिषद्ने भी अपनी बात कुछ कम स्पष्ट शब्दोंमें नहीं कही है। संयुक्त-प्रान्तकी विधान परिषद्ने भी एक समझौता स्वीकार कर लिया है। किन्तु वहाँ भी वास्तवमें सरकारकी बात नहीं बनी। 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंकी संख्या दूनी कर देनेपर भी भारतके प्रायः सभी भागोंसे आनेवाली भयानक दमनकी समस्त रिपोर्टोंको प्रकाशित करना मेरे लिए कठिन हो गया है। अब केवल कैदकी ही बात नहीं रही। अब तो सरकार दमन-सम्बन्धी समाचारोंकी लज्जाजनक उपेक्षा ही नहीं करती, बल्कि उन्हें उतना ही तोड़ती-मरोड़ती भी है।

सर हेनरी व्हीलरने हमें एक और सुन्दर शब्दावली दी है—' शब्दों और मुहा-वरोंका अत्याचार"। वे "दमन"का नाम सुनकर भयभीत नहीं होंगे। उनका कहना है कि प्रत्येक कानून दमनकारी होता है और जनताको इस शब्दसे डरना नहीं चाहिए, बल्कि उसे वास्तविकताकी ओर ध्यान देना चाहिए। तो आइए, अब हम वास्तविकता-का ही मुकाबला करें, और "कानून एवं व्यवस्था" इस मुहावरेकी विभीषिकापर विचार करें। सर होर्मसजी वाडियाने मालवीय परिषद्में बड़े ओजस्वी ढंगसे लोगोंको याद दिलाया था कि बोर्बो सम्राटोंके समय फ्रांसमें तथा अन्यत्र बहुतसे काले कारनामे "कानून एवं व्यवस्था"के पवित्र नामपर किये गये थे। यदि हम इन दो शब्दोंके

मोहन-मन्त्रसे अपना पीछा छुड़ा लें तो हम देखेंगे कि "कानून एवं व्यवस्था" के प्रशासकोंने अपने कृत्योंसे भारतके लोगोंके जीवन और सम्पत्तिको सर्वथा अरक्षित बना दिया है। आम लोग तथा यहाँतक कि पार्षदगण भी "शब्दों और मुहावरोंके अत्याचार" के अधीन नहीं रहना चाहते और न सरकारकी नितान्त अवास्तविक स्थितिसे धोखेमें आना चाहते हैं; यह इस बातका संकेत है कि अब कैसा समय आ गया है। असहयोगमें व्यामोहको काटनेकी बहुत जबरदस्त शक्ति है, और हम शीघ्र ही देखेंगे कि जनता और सरकार दोनों अबतक अवास्तविकताओंके जिस जालमें रहती आई है उससे उन्हें बाहर निकलना होगा और ठोस वास्तविकताओंका मुकाबला करना होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-२-१९२२

१५२. घरमें हिंसा

डॉ० राजन् तथा डॉ० शास्त्री मद्रासके सर्वोत्कृष्ट कार्यकर्त्ताओंमें से हैं। मद्रास सरकारने, कह सकते हैं, शराबखोरीको बढ़ावा देनेकी अपनी नीतिकी रक्षाके लिए उन दोनोंको दो अन्य व्यक्तियोंके साथ गिरफ्तार कर लिया है। मद्रास सरकारने कांग्रेस तथा खिलाफत संगठनोंको छिन्न-भिन्न करनेके लिए एक नई प्रणाली ढूंढ़ निकाली है। इस तरह वह दण्डविधि संशोधन अधिनियम तथा राजद्रोहात्मक सभा अधिनियमका सहारा लिये बिना ही अपना कार्य कर रही है। वह संयुक्त-प्रान्त और बंगालकी सरकारोंके मुकाबले ज्यादा सफल रहेगी। वह उन अधिनियमोंको अमलमें लानेकी बदनामीसे बच जायेगी, जो देश-भरमें आलोचनाका विषय बन गये हैं। और मैंने सुना है कि कमसे-कम मद्रासमें तो लॉर्ड विलिंग्डनकी अपेक्षा सर त्यागराज चेट्टी ही, जो बड़े दुर्धर्ष व्यक्ति हैं, उक्त संगठनोंको छिन्न-भिन्न करनेपर अधिक तुले हुए हैं। किन्तु असहयोगी तो इन कार्रवाइयोंके खिलाफ हैं, व्यक्तियोंके नहीं; अतः उनके लिए इनके कर्त्ता चाहे भारतीय हों या अंग्रेज, एक ही बात है। यह मेरा निश्चित विश्वास है कि स्वराज्य सरकारके अधीन काम करनेवाले अंग्रेज भी भारतीयोंके समान ही अच्छे होंगे। और हम दुःखके साथ प्रत्यक्ष देखते हैं कि हमारे कुछ देशवासी, वर्तमान प्रणालीके अन्तर्गत, अंग्रेजोंके समान ही इस दोषपूर्ण प्रशासनके कुशल प्रशासक बन गये हैं। इसलिए व्यक्तियोंकी ओर ध्यान दिये बिना हमें प्रणालीके विरुद्ध संघर्ष करना है। हम चार पीढ़ियोंसे दोहरे कानूनके शिकार बने हुए हैं—एक कानून हमारे लिए है और दूसरा अंग्रेजोंके लिए; इसलिए हम स्वयं इसके दोषी नहीं हो सकते। इसलिए सर त्यागराज चेट्टीके शासनमें भी मद्रासकी परीक्षा तथा आत्मशुद्धि होनी चाहिए।

यदि हम अपने प्रति सच्चे हैं तो हम अपने सभी प्रतिपक्षियोंके साथ सफलतापूर्वक निबट सकते हैं, चाहे वे हमारे अपने देशभाई हों या अंग्रेज। किन्तु डॉ० राजन्की गिरफ्तारीके चार दिन पूर्व उनका एक पत्र मिला था। उसमें उन्होंने हालकी

घटनाओं द्वारा दी गई इस चेतावनीपर जोर दिया है कि हमें अपने प्रतिपक्षियोंकी अपेक्षा अपनेसे ही अधिक सावधानी बरतनी होगी। यहाँपर हम उनका पत्र दे रहे हैं। यह स्पष्ट है कि पत्र न तो प्रकाशनके लिए लिखा गया है, न शाबाशी पानेके लिए। यह आत्मस्वीकृति और आलोचना दोनों ही है। डॉ० राजन् लिखते हैं :

जी० बी० कृपानिधि नामक हमारे एक तरुण मित्र हैं। उन्होंने इस मासकी १५ तारीखको मद्रासमें हुए हड़ताल सम्बन्धी-उपद्रवोंके बारेमें 'हमारे लिए शर्मनाक' शीर्षकसे 'स्वराज्य'में सम्पादकीय लिखा है। श्री प्रकाशम् अनुपस्थित थे। वे बम्बईमें थे। हड़तालसे एक दिन पूर्व मैंने संगठनकर्त्ताओंसे यह बात स्वीकार करवा ली थी कि स्वयंसेवकोंसे पुलिसका काम लिया जाये और वे उन लोगोंकी सुरक्षामें रहें जिन्होंने अपनी दुकानें खोल रखी हों और जो युवराजको देखने गये हों। किन्तु बादमें श्री प्रकाशम्ने जोर दिया कि वे घरके भीतर रहें। उस लेखकी कटु आलोचना की गई, इसलिए मैंने यह अपना कर्त्तव्य समझा कि मैं उस सम्पादकीय लेखका समर्थन करूँ। उस लेखकी एक प्रति पढ़नेके लिए आपके पास भेज रहा हूँ।

अभी ठीक दो दिन पहले मद्रास जिला कांग्रेसके अध्यक्ष श्री सिंगारावेलु चेट्टियरने मद्रास समुद्र-तटपर एक सार्वजनिक सभा की। प्रथम प्रस्तावमें सफल हड़तालके लिए मद्रासके नागरिकोंको बधाई दी गई और दूसरे प्रस्तावमें उस दिन की गई ज्यादतियोंकी निन्दा की गई। आपको भेजे गये मेरे पत्रकी आपने जो आलोचना की थी उससे श्री प्रकाशम् सहमत नहीं थे। उन्होंने अपने भाषणमें बताया कि मेरे पत्रसे आपको पर्याप्त रूपसे ऐसी सामग्री उपलब्ध नहीं हुई थी कि आप उससे ऐसा निष्कर्ष निकालें जैसा कि आपने निकाला है। मैंने श्री सिंगारावेलुको तार देकर उक्त निन्द्य सभा न करनेके लिए कहा, किन्तु स्पष्टतः मालूम पड़ता है कि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया। यह सचमुच अत्यन्त खेदकी बात है कि मैं अपने असहयोगी भाइयोंको यह प्रेरणा देनेके लिए पर्याप्त रूपसे समर्थ नहीं हूँ कि वे अपनी गलतियोंको पहचानें। वे तो इस सफलतापर फूले नहीं समा रहे हैं कि मद्रासकी जनताने हड़तालके सम्बन्धमें आपको दिये गये वचनका पूरी तरह पालन किया है। फिर भी यह क्रूर तथ्य सामने है कि हिंसा और अनुचित बल-प्रयोगने अहिंसक असहयोगकी दृष्टिसे हड़तालको असफल बना दिया है। जबतक हमें अपने ही लोगोंकी हिंसात्मक प्रवृत्तिके खिलाफ अहिंसाका यह संघर्ष चलाना पड़ रहा है तबतक किसीको भी सविनय प्रतिरोधकी दिशामें एक भी कदम बढ़ानेमें हिचकिचाहट होनी ही चाहिए। मैंने अपने दलकी कमजोरियोंके बारेमें अक्सर स्थानीय पत्रोंमें लिखा है और यह तथ्य सामने रखा है कि हमारे कुछ असहयोगी भाई अहिंसामें उतना विश्वास नहीं रखते जितना कि उन्हें रखना चाहिए।

इस सप्ताह स्थानीय सरकारके आक्रमणका लक्ष्य सेलम रहा है। प्रायः सारे कार्यकर्त्ताओं, वक्ताओं, स्वयंसेवकों, जिनमें मैं और रामस्वामी नायकर भी हैं, को धारा १४४के अन्तर्गत नोटिस दिये गये हैं और कहा गया है कि हम न तो कोई सभा करें और न नशाबन्दीकी ही वकालत करें। सविनय अवज्ञा (वैयक्तिक रूपसे) प्रारम्भ हो गई है, और तीन असहयोगी वकील तथा पन्द्रह अन्य लोग पहले ही आदेश भंग कर चुके हैं और उन्हें गिरफ्तार करके जेलमें डाल दिया गया है। कल तीन और लोगोंने आदेश भंग किया है और बारह गिरफ्तार कर लिये गये हैं। नगरपालिकाके अध्यक्ष और चार वकालत करनेवाले वकीलोंको धारा १४४के अन्तर्गत नोटिस दिया गया है कि वे किसी भी सभामें भाषण न दें। आज मदुरामें धरना देते हुए सत्रह स्वयंसेवक गिरफ्तार कर लिये गये हैं। अबतक कहीं भी हिंसाका सहारा नहीं लिया गया है। मैंने अभी अवज्ञा प्रारम्भ नहीं की है, किन्तु मेरा इस सप्ताह या पहली फरवरीके बाद वैसा करनेका इरादा है।

मुझे अपनेमें ही हुए परिवर्तनपर कुछ आश्चर्य होता है — मैं १९०८में इंडिया हाउसका क्रान्तिकारी था और अब १९२२में अहिंसक असहयोगी बन गया हूँ। यह वास्तवमें परिवर्तन है, किन्तु यह हृदयका परिवर्तन, शान्तिपूर्वक कष्ट-सहनकी क्षमता तथा सामने आये हुए कष्टके प्रति मनका पूर्ण रूपसे तटस्थ होना — ये सब यदि सजीव उदाहरण सामने न होते तो प्रायः असम्भव ही मालूम पड़ते। वर्षों पहले मैं किसी भी निषेधात्मक आदेशपर झल्ला उठता, इस नोटिसको तामील करनेवाले पुलिसके सिपाहीसे तथा उस गैर-कानूनी तथा पागलपनसे भरे आदेशको जारी करनेवाले अधिकारीसे बदला लेनेकी प्रतिज्ञा करता। किन्तु आज मेरी उनके प्रति कोई दुर्भावना नहीं है, बल्कि मैं उन्हें धन्यवाद देनेकी सोचता हूँ कि उन्होंने इस बातका एक और सबूत, चाहे यह सबूत कितना ही तुच्छ क्यों न हो, दिया है कि वर्तमान प्रशासनिक तन्त्र सत्य और न्यायके प्रति कितनी उपेक्षा बरत रहा है कि उसने सज्जन तथा कोमल-हृदय मानवोंको दानवोंमें परिवर्तित कर दिया है। मेरे हृदयमें भूल करनेवाले इन अधिकारियोंके लिए दया के सिवा और कुछ नहीं है। उन अधिकारियोंके कल्याणकी दृष्टिसे भी इस समय मुझे जो एकमात्र उपाय दिखाई देता है वह कष्ट-सहन ही है।

'नवजीवन'में प्रकाशित एक लेखमें आपने जो यह कहा है कि "आप एक अनिश्चय और निराशाकी स्थितिसे गुजर रहे हैं", इससे विरोधी पत्र नाजायज फायदा उठा रहे हैं। इससे गलतफहमी होनेका अंदेशा पैदा हो गया है। हो सकता है कि एसोसिएटेड प्रेसने अपनी सुविधाके अनुसार उसके कुछ अंश ही उद्धृत किये हों। मुझे लगता है कि आप जरूरतसे ज्यादा निराश हैं। मैं

नहीं जानता कि आप अहिंसा तथा अस्पृश्यताके बारेमें भी घोर निराशा अनुभव कर रहे हैं या नहीं। हमारी वर्तमान अवस्था ऐसी है कि हम उतनी ही प्रगति कर सकते हैं जितनी कि इन विपरीत परिस्थितियोंमें सम्भव है और जबतक हमारी राह रोकनेवाली ये विपरीत परिस्थितियाँ समाप्त नहीं होतीं तबतक तीव्र विकास सम्भव नहीं है। स्वराज्य हमारी कमजोरियोंको दूर करेगा और हमें पर्याप्त प्रकाश और शुद्ध वायु प्रदान करेगा। स्वराज्यकी जो भी योजना हो, उसका लक्ष्य प्रगतिके मार्गमें विघ्न डालनेवाली इन बातोंको समाप्त करना होना चाहिए और यह एक ऐसा सवाल है जिसपर सबसे पहले ध्यान देना चाहिए। हमारे देशवासी अधिकाधिक यूरोपीय बनते जायें और चरखेका मजाक उड़ाते रहें, जैसा कि इस विचित्र मद्रास मन्त्रिमण्डलने किया है, इससे कोई लाभ नहीं होगा। इस प्रकारके राष्ट्रीय ह्रासको रोकना होगा। यदि आप 'नवजीवन'में प्रकाशित अपने पूरे लेखको 'यंग इंडिया'में प्रकाशित कर सकें तो मेरे विचारमें यह अच्छा होगा। आप आवश्यक समझें तो उसपर साथ ही कुछ टिप्पणी भी दे दें। मैंने इस पत्रको अनावश्यक रूपसे लम्बा कर दिया है। कृपया कष्टके लिए क्षमा करें।

मुझे अब इस तथ्यके बारेमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं कि आजकल लोगोंको अहिंसक होनेके कारण, यदि वे प्रभावशाली भी हैं तो, चुन-चुनकर जेल भेजा जा रहा है। इस पत्रमें जो चेतावनी दी गई है, उसके कारण मैं इसे प्रकाशित कर रहा हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हममें कुछ ऐसे लोग हैं जो प्रतिज्ञाबद्ध होनेपर भी आस्थाके साथ अहिंसामें विश्वास नहीं करते; अर्थात् वे उन लोगोंकी सहायताको बुरा नहीं समझते जो कि हिंसापर उतारू हो सकते हैं। लगता है, उनका विश्वास है कि अहिंसाके साथ-साथ हिंसा भी चल सकती है और ये दोनों मिलकर देशको लक्ष्यतक पहुँचनेके लिए गति दे सकती हैं। ऐसा रुख कपटपूर्ण तो है ही, साथ ही निश्चित रूपसे देशके हितके भी विरुद्ध है। दो परस्पर विरोधी शक्तियाँ साथ-साथ चल सकती हैं, किन्तु वे "दोनों एक ही दिशाकी ओर नहीं जा सकतीं"। यदि अहिंसा एक छद्मावरण है या हिंसाकी तैयारी है तो हिंसाका आकस्मिक या जान-बूझकर किया गया विस्फोट, हो सकता है कि परीक्षाके तौरपर तथाकथित अहिंसात्मक नीतिकी अवधिमें भी एक महान् लाभ सिद्ध हो। किन्तु भारत जो धर्मयुद्ध कर रहा है वह इससे भिन्न है। ऊपर ईश्वर साक्षी है और वह इतना न्यायशील है कि दुरंगा व्यवहार करने ही नहीं देगा। आज हमारा विश्वास यह है कि भारतको हिंसासे कुछ भी लाभ नहीं होगा और उसे अहिंसाके जरिये ही अपने तीनों लक्ष्य प्राप्त करने होंगे। उसमें हिंसाकी सहायता भी नहीं लेनी होगी। इसलिए यदि हमें विजय प्राप्त करनी है तो असहयोगियोंका कर्त्तव्य है कि वे ऐसे प्रत्येक हिंसा-कार्यकी मन और वाणीसे जबरदस्त निन्दा करें जो उनके ध्येयके प्रति सहानुभूति रखकर किया गया हो। वे लोग जो अहिंसापर विश्वास नहीं रखते या हिंसा और अहिंसाको साथ-साथ

चलाना चाहते हैं, चाहें तो अपना अलग दल बनाकर अलग संघर्ष करें। इससे असहयोगीका कार्य कठिन हो जायेगा, किन्तु उतना कठिन नहीं जितना कि तब होगा जब कि उसे अपने ही घरमें शत्रुसे लड़ना हो। उसकी देह शुद्ध रहनी चाहिए। किसी प्रकारकी भी आन्तरिक अशुद्धि शारीरिक रोग बन जायेगी और वह घातक सिद्ध हो सकती है। बाहरका कोई भी आक्रमण कभी भी घातक नहीं होता। इसलिए सफलताकी पहली और एकमात्र शर्त यह है कि हम अपने प्रति सच्चे रहें।

इसलिए डॉ० राजन् द्वारा की गई स्वीकारोक्ति शक्ति प्रदान करनेवाली एक प्रक्रिया है। इससे उन्हें तो बल मिलता ही है, किन्तु साथ ही उनके उस ध्येयको भी बल मिलता है, जिसके लिए वे संघर्ष कर रहे हैं। यदि असहयोगका अर्थ पूर्णतया आत्मशुद्धि नहीं है, तो वह एक बुरा और भ्रष्ट सिद्धान्त है; सचमुचमें वह एक "मनहूस" शब्द है। आन्तरिक भ्रष्टाचारका दृढ़ता और कठोरताके साथ किया गया प्रतिरोध सरकारका पर्याप्त प्रतिरोध है। ज्यों ही आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया पूर्ण होगी, हमें उस प्रणालीसे मुक्ति मिल जायेगी जिससे हम संघर्ष करते प्रतीत होते हैं।

उस लाभमें कुछ भी नहीं धरा है जो कि 'नवजीवन' में प्रकाशित मेरे उस लेखसे उठाया जा रहा है, जिसका उल्लेख डॉ० राजन्ने किया है। मैंने देखा है कि 'स्वराज्य' में मेरे उस सारे लेखका, जिसे मैंने भली-भाँति सोच-विचारकर लिखा है, एक अच्छा अनुवाद पहले ही प्रकाशित हो चुका है। वह लेख अपनी व्याख्या आप करता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-२-१९२२

१५३. टिप्पणी: समितिके[1] साथ हुए समझौतेपर

[९ फरवरी, १९२२]

१. सामूहिक सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें,

श्री गांधी कार्य-समितिको यह सलाह देनेवाले हैं कि वह ३१ दिसम्बर, १९२२ तक स्थगित रखी जाये।

२. अन्य कार्यक्रमोंके सम्बन्धमें,

श्री गांधी कार्य-समितिसे यह कहेंगे कि शराब और कपड़ेकी दुकानोंपर धरना देनेका तरीका उन्हीं उपायोंतक सीमित रखा जाये जो लोगोंको भड़काने या कानूनकी अवहेलना करनेवाले नहीं हैं और विशेषकर

१. १४ और १५ जनवरी, १९२२ को नेताओंकी परिषद् द्वारा नियुक्त समिति। जयकरने **दि स्टोरी आफ माई लाइफ,** खण्ड १, पृष्ठ ५५५ पर ९ फरवरी, १९२२ के अन्तर्गत लिखा है: ". . . मैंने वे कुछ शर्तें जिनपर वे [गांधी] और समिति राजी हो चुके थे, लिखकर उन्हें दे दीं। उनका व्यवहार सदाकी भाँति ईमानदारी-भरा है और उन्होंने उन्हें मान भी लिया।"

(१) धरना वहीं दिया जाये जहाँका वातावरण पूर्ण अहिंसक हो;
(२) केवल एक निश्चित उम्रसे अधिकके जिम्मेदार लोगोंको ही धरना देनेके लिए नियुक्त किया जाये;
(३) धरना देनेका उद्देश्य, भड़काना या कानूनकी अवज्ञा करना न होकर प्रश्नके गौरवको बढ़ाना होना चाहिए।

इसका भी उसी अवधिमें होना आवश्यक नहीं है; क्योंकि यह सामूहिक सविनय अवज्ञा सम्बन्धी प्रस्तावमें आ जायेगा।[१]

३. स्वयंसेवक,
सामूहिक सविनय अवज्ञाके लिए भरती न किये जायें और न कानूनकी अवहेलनाके लिए ही, बल्कि वे सामाजिक, नैतिक और आर्थिक सुधार-कार्यके लिए भरती किये जायें।

४. जबतक गोलमेज परिषद् न हो जाये तबतक एतराजके काबिल, विरोधी या उत्तेजित करनेवाली हलचलोंकी तैयारियाँ मुल्तवी रखी जायें।

५. बम्बईमें प्रतिनिधियोंकी सभामें जो शर्तें रखी गई हैं उनपर पुनः विचार हो सकता है।

गांधीजी कहते हैं कि धाराएँ ४ और ५ जरूरी नहीं हैं क्योंकि वे १ से ३ तककी धाराओंमें आ जाती हैं, किन्तु यदि आगे-पीछे गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें आश्वासनके रूपमें इन्हें देना जरूरी समझा जाये, तो ये काममें लाई जा सकेंगी।

मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७९०९) से।

१५४. टिप्पणी

बलियामें दमन

बलियासे चि० देवदास गांधीने एक पत्र भेजा है। उसमें उसने बलियाके दमनका सजीव चित्र खींचा है। मैं उसे नीचे देता हूँ।[२] बलिया संयुक्त-प्रान्तका एक गरीब जिला है। वहाँके लोग उत्साही, सीधे-सादे और भोले हैं। वे देशभक्त हैं। मैंने कई बार वहाँ जानेका प्रयत्न किया, परन्तु जा नहीं सका। वह बिहारकी सरहदपर है; इससे वहाँके लोग बिहारियोंसे अधिक मिलते-जुलते हैं। दमनसे उनकी जो दशा हुई होगी मैं उसकी कल्पना कर सकता हूँ। उस कल्पनासे मेरा दिल रो उठता है। मैं वहाँ न जा सका; इससे मुझे दुःख होता है। यदि मैं इस वेदनासे पार पा गया तो बलियाको तीर्थ मानकर वहाँकी यात्रा करनेकी इच्छा रखता हूँ। मैं चाहता हूँ कि

१. यह गांधीजीके स्वाक्षरोंमें है।
२. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

इससे बलियाके लोगोंको कुछ सान्त्वना मिले। बलिया-जैसे शहरोंके बलिदान इस देशको अवश्य मुक्त करेंगे। परमात्मा बलियाके लोगोंको कष्ट सहनेकी और अधिक शक्ति प्रदान करे। मेरी कामना है कि बलियाके उदाहरणसे गुजरातके लोगोंमें कष्ट सहन करनेकी और भी अधिक उत्सुकता पैदा हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९-२-१९२२

१५५. तार : देवदास गांधीको

बम्बई
९ फरवरी, १९२२

देवदास गांधी
कांग्रेस कार्यालय
गोरखपुर

तार मिला। सही-सही पूरा ब्योरा भेजो।[1] लोगोंको हिंसासे दूर रखो। पूरी जानकारी प्राप्त करो। कार्यकर्त्ताओंसे कहो मुझे बहुत दुःख पहुँचा है। शान्त रहो। ईश्वर सफलता देंगे। आज रात बारडोली वापस जा रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७८९८) की फोटो-नकलसे।

१५६. टिप्पणी : गुण्टूरमें सविनय अवज्ञापर[2]

[१० फरवरी, १९२२ के पूर्व]

यदि आन्ध्र सविनय अवज्ञा बन्द करता है, तो प्रसन्नताकी बात है। किन्तु यदि वह बन्द करनेमें असमर्थ है तो मुझे बुरा नहीं लगेगा परन्तु उसी सूरतमें जब हिंसाकी प्रवृत्तियोंपर पूरा नियन्त्रण प्राप्त कर लिया जाये और सब शर्तोंका पालन हो।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

आन्ध्र गवर्नमेंट रेकर्ड्स

१. चौरीचौराकी घटनाके बारेमें।

२. साधन-सूत्रमें इसके ऊपर लिखा था: "गुण्टूर कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री बी० पट्टाभि सीतारामैयाको उक्त जिलेमें कर-बन्दी आन्दोलनके सम्बन्धमें महात्मा गांधी द्वारा भेजी गई पेन्सिलसे लिखी टिप्पणी।" सम्बन्धित विवरणपर १० फरवरी, १९२२ की तारीख है।

१५७. भाषण : बारडोलीमें कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंके समक्ष[1]

[१० फरवरी, १९२२][2]

आज जो लोग यहाँ इकट्ठे हैं, उन्हें मैं देशके चुने हुए कार्यकर्त्ताओंमें मानता हूँ। भारतकी वर्तमान स्थितिको आज मैं इस छोटी-सी सभामें ठीक-ठीक प्रतिबिम्बित देख पा रहा हूँ। मैंने अभी जो सुना उससे मेरा यह अनुमान दृढ़ हो गया है कि जो यहाँ मौजूद हैं उनमें से अधिकतर लोग अहिंसाका सन्देश समझनेमें सफल नहीं हुए हैं। इससे मुझे भरोसा हो गया है कि देशकी ज्यादातर जनता अहिंसाका सबक सीखनमें एकदम असमर्थ है। इसलिए मुझे सविनय अवज्ञा आन्दोलन तुरन्त बन्द कर देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी

१५८. प्रस्ताव : बारडोली कार्य-समितिके[3]

[१२ फरवरी, १९२२]

बारडोलीमें इसी ११ और १२ तारीखोंको कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक हुई। उसमें निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये गये :

(१) चौरीचौरामें भीड़ द्वारा पुलिसके सिपाहियोंकी नृशंस हत्या करने और पुलिस थानेको जला देनेके अमानुषिक कृत्यकी कार्य-समिति निन्दा करती है और सन्तप्त परिवारोंके प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त करती है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार : "... महात्माजीने सभी कार्यकर्त्ताओंको तथा उन सभीको जो आज बारडोलीमें मौजूद थे चौरीचौराकी भयानक घटना हो जानेपर भी सविनय अवज्ञा शुरू करना उचित है या नहीं, इसपर बातचीत करनेके लिए बुलाया। उन्होंने प्रत्येक उपस्थित व्यक्तिसे राय माँगी। दो बच्चे भी उत्सुकतावश आ गये थे; उनसे भी महात्माजीने राय माँगी। ... लगभग हर छोटे-बड़े व्यक्तिने यह कहा कि ... महात्माजीने सरकारी विज्ञप्तिके उत्तरमें जिस ढंगसे पत्र लिखकर लॉर्ड रीडिंगको चुनौती दी है, उसे देखते हुए यदि पीछे कदम उठाया गया तो संसारके सामने सारे देशकी बेइज्जती होगी। केवल तीन व्यक्तियोंने इस विचारसे मतभेद व्यक्त किया ...।"

२. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।

३. अनुमानतः गांधीजीने इनका मसविदा तैयार किया था। ये प्रस्ताव कार्य-समितिने, जिसकी बैठक ११-१२ फरवरीको बारडोलीमें हुई थी, पास कर दिये और बादमें इन्हें अ० भा० कां० कमेटीने २५ फरवरीको अपना लिया। देखिए "प्रस्ताव : अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें", २५-२-१९२२ और **यंग इंडिया**, २-३-१९२२।

(२) इसे प्रकृतिकी चेतावनी ही समझना चाहिए कि जब-जब सामूहिक सविनय अवज्ञाका श्रीगणेश होनेको हुआ तब-तब जनता द्वारा हिंसापूर्ण उपद्रव किये गये। इससे यह पता चलता है कि अभी देशमें सामूहिक सविनय अवज्ञाके लिए पर्याप्त अहिंसापूर्ण वातावरण नहीं है। सबसे ताजा उदाहरण गोरखपुरके समीप चौरीचौराकी दुःखद और भयानक घटनाएँ हैं। कांग्रेस कार्य-समिति निर्णय करती है कि बारडोली तथा अन्य स्थानोंपर जो सामूहिक सविनय अवज्ञा शुरू करनेका विचार था उसे मुल्तवी रखा जाये। साथ ही वह स्थानीय कांग्रेस कमेटियोंको आदेश देती है कि वे किसानोंको सरकारका बकाया भूमिकर तथा अन्य कर जिन्हें सामूहिक सविनय अवज्ञाके विचारसे रोक रखा गया था, तत्काल अदा कर देनेकी सलाह दें और स्वयं उन्हें यह निर्देश देती है कि वे आक्रामक ढंगकी अन्य सभी तैयारियोंको मुल्तवी कर दें।

(३) सामूहिक सविनय अवज्ञा तबतक मुल्तवी रहेगी जबतक कि वातावरणके इतने अहिंसापूर्ण होनेका भरोसा नहीं हो जाता कि गोरखपुरके नृशंस कार्य और १७ नवम्बरको बम्बईमें या १८ जनवरीको मद्रासमें की गई गुंडागर्दी-जैसी घटनाएँ फिर घटित न होंगी।

(४) शान्तिपूर्ण वातावरण तैयार करनेकी दृष्टिसे कार्य-समिति सलाह देती है कि अन्यथा निर्देश मिलनेतक सभी कांग्रेस संगठन उन सारी कार्यवाहियोंको बन्द रखें जो गिरफ्तार होने और जेल भेजे जानेके लिए विशेष रूपसे की जानेवाली थीं। कांग्रेसकी साधारण कार्यवाहियाँ जारी रखी जा सकती हैं और इनमें जहाँ वातावरण पूर्ण रूपसे शान्तिमय हो, वहाँ स्वेच्छाप्रेरित हड़तालें भी शामिल हैं। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए धरना देना एकदम बन्द रखा जाये। अलबत्ता सद्भावपूर्ण और शराबकी दुकानोंपर आनेवालोंको शराब पीनेके दोषोंसे आगाह करनेके शान्तिपूर्ण उद्देश्यसे धरना जारी रखा जा सकता है; किन्तु इन धरनोंका संचालन ऐसे ही लोगोंके हाथमें होना चाहिए जिन्हें सभी सदाचारी व्यक्ति जानते-मानते हों और जिन्हें सम्बन्धित कांग्रेस कमेटियोंने इस कामके लिए विशेषरूपसे चुना हो।

(५) कार्य-समिति सलाह देती है कि अन्यथा निर्देश प्राप्त होनेतक स्वयंसेवकोंके किसी भी प्रकारके जलूस निकालना और केवल प्रतिबन्ध सम्बन्धी विज्ञप्तियोंकी अवहेलनाके लिए सार्वजनिक सभाएँ करना बन्द कर दिया जाय। ये आदेश कांग्रेस कमेटीकी तथा अन्य समितियोंकी सामान्य बैठकोंके सम्बन्धमें अथवा ऐसी सार्वजनिक सभाओंके सम्बन्धमें जो कांग्रेसके रोजमर्राके कामसे ताल्लुक रखती हों, लागू नहीं होंगे।

(६) चूँकि कार्य-समितिके पास शिकायतें आई हैं कि किसान लोग जमींदारोंको लगान अदा नहीं कर रहे हैं, वह कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं और संगठनोंको सलाह देती है कि वे किसानोंको बतायें कि इस तरह लगान रोकना कांग्रेसके प्रस्तावोंके प्रतिकूल है और देशके बड़ेसे-बड़े हितोंके लिए घातक है।

(७) कार्य-समिति जमींदारोंको आश्वासन देती है कि कांग्रेस आन्दोलन किसी भी तरह उनके कानूनी हकोंपर चोट करनेके उद्देश्यसे नहीं चलाया गया है। जहाँ रयतको वास्तवमें शिकायतें हैं, वहाँ भी समितिकी इच्छा है कि परस्पर सलाह-मशविरे द्वारा और बीच-बचावकी प्रणालीका सहारा लेकर राहत प्राप्त की जाये।

(८) कार्य-समितिके सामने इस आशयकी शिकायतें आई हैं कि स्वयंसेवक दलोंके गठनमें बहुत ही ढीलढाल बरती जाती है और हाथकते, हाथबुने खद्दरके प्रयोगका, और हिन्दुओं द्वारा अस्पृश्यता निवारणके नियमका आग्रहपूर्वक पालन नहीं किया जाता; यह जाननेकी सावधानी भी नहीं बरती जाती है कि उम्मीदवार कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार अहिंसापर मन, वचन, कर्मसे विश्वास करता है अथवा नहीं। इसलिए कार्य-समिति सभी कांग्रेस संगठनोंको अपनी-अपनी स्वयंसेवक सूचियोंपर पुनर्विचार करनेका आदेश देती है और उनमें से ऐसे सभी स्वयंसेवकोंके नाम हटा देनेको कहती है जो शपथकी अपेक्षाओंको सब तरहसे पूरा नहीं करते।

(९) कार्य-समितिकी राय है कि जबतक कांग्रेसके लोग कांग्रेस संविधानको तथा कार्य-समिति द्वारा समय-समयपर पास किये गये प्रस्तावोंपर पूर्ण रूपसे अमल नहीं करते तबतक अपना उद्देश्य शीघ्र या देरीसे भी पूरा कर पाना सम्भव नहीं है।

(१०) अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक विशेष रूपसे न बुलाये जानेतक और उसके द्वारा इनकी पुष्टि हो जानेतक उपर्युक्त प्रस्ताव लागू होंगे। सचिव ऐसी बैठक हकीम अजमलखांसे सलाह करके यथासम्भव शीघ्र बुलायेंगे।[1]

नया कार्यक्रम

चूंकि गोरखपुरकी दुःखद घटना इस बातका जबरदस्त सबूत है कि आम जनताने अभीतक पूरी तरहसे सामूहिक सविनय अवज्ञाके अविच्छिन्न, सक्रिय और मुख्य अंगके रूपमें अहिंसाकी आवश्यकता महसूस नहीं की है; और चूंकि कहा जाता है कि कांग्रेसके निर्देशके विपरीत ही, बिना छानबीन किये लोगोंको स्वयंसेवकके रूपमें स्वीकार कर लिया गया है, इससे यह जाहिर होता है कि सत्याग्रहके प्रमुख तत्त्वको ठीक-ठीक नहीं समझा गया है; और चूंकि कार्य-समितिकी रायमें राष्ट्रीय उद्देश्यकी पूर्तिमें देर होनेका एकमात्र कारण कांग्रेस संविधानपर ज्यों-त्यों, आधा-दूधा अमल करना ही है, कार्य-समिति आन्तरिक संगठनको पूरी तरह ठीक बनानेके खयालसे सभी कांग्रेस संगठनोंको सलाह देती है कि वे निम्नलिखित कार्यवाहियोंमें लग जायें:

१. कमसे-कम एक करोड़ कांग्रेस-सदस्य बनायें।

टिप्पणी (१): चूंकि शान्ति (अहिंसा) और वैधता (सत्य)[2] कांग्रेस सिद्धान्तके मूल तत्त्व हैं, इसलिए ऐसे किसी भी व्यक्तिको सदस्य नहीं बनाया जाना चाहिए जो स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अहिंसा और सत्यको अपरिहार्य नहीं मानता।[3] इसलिए जिस व्यक्तिसे भी कांग्रेसमें सम्मिलित होनेको कहा जाये उसे सावधानीसे कांग्रेसके सिद्धान्त भी समझाये जाने चाहिए।

१. अ० भा० कां० कमेटीने जो संशोधित पाठ पास किया था उसमें ये अनुच्छेद प्रस्ताव सं० १ और इसके बादके अनुच्छेद प्रस्ताव सं० ३ के रूपमें हैं। उनपर १२ फरवरीकी तारीख दी गई हैं; देखिए **यंग इंडिया**, २-३-१९२२ ।

२. यहाँपर अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावमें है: "शान्तिपूर्ण और वैध तरीके"।

३. अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावमें है: "जैसे उपायोंमें विश्वास नहीं करता है।"

टिप्पणी (२): कार्यकर्त्तागण ध्यान रखें कि कोई भी व्यक्ति वार्षिक चन्दा दिये बिना बाकायदा कांग्रेसी नहीं माना जा सकता। इसलिए सभी पुराने सदस्योंको फिरसे अपने नाम दर्ज करवानेकी सलाह दी जाती है।

२. चरखेका प्रचार करें और हाथकते सूतको करघेपर बुनवाकर खद्दरके उत्पादनकी व्यवस्था करें।[1]

टिप्पणी: इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सभी कार्यकर्त्ताओं और पदाधिकारियोंको खद्दर पहनना चाहिए, साथ ही सुझाव दिया जाता है कि औरोंको प्रोत्साहन देनेके खयालसे उन्हें खुद [हाथसे] सूत कातना सीखना चाहिए।

३. राष्ट्रीय स्कूलोंका संगठन करें।

टिप्पणी: सरकारी स्कूलोंपर धरना न दिया जाये, बल्कि विद्यार्थियोंके राष्ट्रीय स्कूलोंमें अपने-आप आनेका आधार हो[2] — उनका महत्त्वपूर्ण बातोंमें सरकारी स्कूलोंकी अपेक्षा अच्छा होना।

४. दलित-वर्गोंका संगठन करें ताकि उनका जीवन बेहतर बन सके; उनकी सामाजिक, मानसिक और नैतिक स्थिति सुधारें, उन्हें अपने बच्चोंको राष्ट्रीय शालाओंमें भेजनेके लिए राजी करें और उनके लिए वे साधारण सुविधाएँ प्रस्तुत करें जो अन्य नागरिकोंको प्राप्त हैं।

टिप्पणी: इसलिए जहाँ अब भी अछूतोंके प्रति पूर्वाग्रह दृढ़ हैं, कांग्रेस-कोषसे पृथक स्कूल और कुँए मुहैया किये जाने चाहिए। ऐसे बच्चोंको राष्ट्रीय स्कूलोंमें लानेके लिए जो-कुछ सम्भव है, करना चाहिए और लोगोंको राजी करना चाहिए कि वे अछूतोंको सामान्य कुँए इस्तेमाल करनेकी अनुमति दें।

५. जिन लोगोंको शराब पीनेकी आदत पड़ गई है उनसे उनके घर जाकर मद्यपान न करनेके लिए कहना चाहिए और इस प्रकार नशाबन्दी आन्दोलनको संगठित करना चाहिए। मानना चाहिए कि शराबी लोगोंको उनके घर जाकर समझाना-बुझाना धरना देनेकी अपेक्षा अधिक अच्छा है।

६. सभी झगड़ोंके आपसी निपटारेके लिए गाँव और नगर-पंचायतोंका संगठन करना चाहिए; जनमतकी शक्तिपर और पंचोंके निर्णयकी यथार्थतापर पूरी तरह भरोसा रखना चाहिए ताकि उनके आदेशोंका पालन हो।

टिप्पणी: जो लोग पंचायतका फैसला न मानें उनका किसी प्रकारका सामाजिक बहिष्कार नहीं करना चाहिए। ऐसा भासिततक न होने पाये कि किसी प्रकारका दबाव डाला जा रहा है।

७. सभी वर्गों और जातियोंमें एकता बढ़ाना, उसका महत्त्व समझाना तथा पारस्परिक सद्भाव बढ़ाना असहयोग आन्दोलनका उद्देश्य है, इस दृष्टिसे एक समाज-

१. अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावमें यहाँपर इतना और जोड़ा गया है: "और घर-घर जाकर उसके प्रयोगको लोकप्रिय बनायें।"

२. अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावमें था: "सरकारी या सरकार द्वारा सहायता प्राप्त स्कूलोंसे विद्यार्थियोंको अपनी तरफ खींचनेके लिए"।

सेवा विभाग संगठित किया जाये। यह विभाग बीमारी या दुर्घटनाके समय राजनैतिक[1] मतभेदका विचार किये बिना सबकी मदद करे।

टिप्पणी: असहयोगी अपने सिद्धान्तका दृढ़तासे पालन करता हुआ भी बीमारी या दुर्घटनामें हर व्यक्तिकी, चाहे वह व्यक्ति अंग्रेज हो या भारतीय, व्यक्तिगत रूपसे सेवा करना अपना सौभाग्य मानेगा।

८. तिलक स्मारक स्वराज्य-कोष[2] जारी रखना और हर कांग्रेसी या कांग्रेसके समर्थकसे निवेदन करना कि वह १९२१की सालमें कमाई हुई रकमका कमसे-कम सौवाँ भाग उस कोषमें दे। हर प्रान्त तिलक स्वराज्य-कोषसे अपनी आयका २५ प्रतिशत अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको भेजे।

९. यदि जरूरी हुआ तो उपरोक्त प्रस्ताव पुनर्विचारके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके आगामी अधिवेशनके सामने लाये जायेंगे।

१०. कार्य-समितिकी रायमें जो लोग सरकारी नौकरी छोड़ें उन्हें काम मिल सके इसके लिए किसी योजनाकी जरूरत है। इस कामके लिए समिति सर्वश्री मियाँ मुहम्मद हाजी जान मुहम्मद छोटानी, जमनालाल बजाज और वल्लभभाई पटेलको नियुक्त करती है। वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी उक्त[3] विशष बैठकमें विचारार्थ एक योजना बनायेंगे।[4]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-२-१९२२

१५९. स्वराज्यकी शर्तें

हम स्वराज्यकी शर्तोंपर विचार तो बहुत बार कर चुके हैं; किन्तु जबतक हम उनका पालन नहीं करते तबतक हमें उनकी चर्चा करते ही रहना चाहिए, और हमें यह विश्वास रखना चाहिए कि इन शर्तोंका पालन किये बिना स्वराज्य मिलना सम्भव नहीं है। यदि हम ऐसा करें तो हम बहुतसे संकटोंसे बच जायेंगे। तब हमें अपने ऊपर ही रोष आयेगा और हम कोई अनुचित कार्य न करेंगे।

कांग्रेसने इन शर्तोंको बहुत बार और अनेक तरहसे बताया है और अन्तमें स्वयं-सेवक बननेके लिए उनका पालन किया जाना अनिवार्य कर दिया है। इसलिए अब हमें जितने स्वयंसेवक चाहिए उतने नहीं मिल रहे हैं और जो मिलते हैं वे भी शर्तोंका पूरा पालन नहीं करते।

१. यह शब्द अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके प्रस्तावमें निकाल दिया गया है।

२. दिसम्बर १९२० में शुरू किया गया था; देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १९२-९३।

३. अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावमें: "अगली"।

४. अ० भा० कां० कमेटीने जो संशोधित पाठ पास किया था उसमें यह अनुच्छेद प्रस्ताव सं० २ है और प्रस्ताव सं० १ के साथ इसपर ११ फरवरीकी तारीख दी गई है।

वैद्यने रोगीसे जिस दवाको और जिस ढंगसे लेनेके लिए कहा है यदि रोगी उसी दवाको और उसी ढंगसे न ले तो इसमें दोष रोगीका है, वैद्यका नहीं। इसी प्रकार यदि हम स्वराज्यकी शर्तोंका पालन नहीं करते तो इसमें दोष हमारा ही है।

किन्तु हमें इस समय गुण-दोषका विचार नहीं करना है। हमें तो यही विचार करना है कि स्वराज्य कैसे मिल सकता है। जैसे रोगी ठीक दवा लिये बिना नीरोग नहीं हो सकता वैसे ही स्वराज्य भी ठीक शर्तोंका पालन किये बिना अवश्य ही नहीं मिलेगा। स्वराज्य स्वयंसेवक बन जानेसे ही नहीं मिलेगा, बल्कि स्वयंसेवक बननेके लिए जो शर्तें रखी गई हैं उनका पालन करनेवाले स्वयंसेवक ही स्वराज्य ले सकते हैं। यदि सेनाके लिए पांच फुट ऊँचे जवानोंकी भरती की जाती हो और उनमें कोई चार फुटवाला बौना आ घुसे तो वह लड़ाईकी जीतका कारण नहीं होगा, बल्कि सेनाके लिए भाररूप हो जायेगा और यह भी सम्भव है कि वह उसकी हारका कारण बन जाये। इसी प्रकार शान्ति और अहिंसाका पालन करनेवाले स्वयंसेवकोंमें अशान्तिकारी मनुष्य भरती हो जायें तो वे नुकसान ही पहुँचायेंगे। घरमें और घरके बाहर सदा हाथकते सूतकी खादी पहननेवाले लोगोंको ही स्वयंसेवकोंमें भरती होनेकी अनुमति है; तो फिर मिलके कते सूतके तानेसे बुनी गई खादी पहननेवाले मनुष्य अथवा भरती होते समय और स्वयंसेवकका काम करते समय ही शुद्ध खादी पहनने-वाले मनुष्य स्वराज्य कैसे दिला सकते हैं? उन्होंने तो पहलेसे ही धोखा देनेका धन्धा स्वीकार कर लिया है। यह खादी पहननेकी बात, जो आसान लगनी चाहिए, वह बहुत कठिन लगती जान पड़ती है; जिसमें कमसे-कम खर्च आता है वह बहुत खर्चीली मानी जाती मालूम होती है।

खादीसे स्वराज्य मिल सकता है सम्भव है कि इसका लोगोंको विश्वास न हो। किन्तु ऐसा हो तो उन्हें कांग्रेस अधिवेशनमें और कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें खादीके पक्षमें हाथ नहीं उठाने चाहिए थे। यदि हम करने योग्य कार्योंको मन लगाकर नहीं करेंगे तो हम कुछ भी प्रगति कर न पायेंगे। इस प्रकार तो अबतक किया हुआ श्रम भी व्यर्थ हो जायेगा।

यदि हम गरीबसे-गरीब, अधमसे-अधम, अकालसे पीड़ित और भीख माँगनेवाले लोगोंके लिए भी स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हों और यदि हम भारतकी भुखमरीको मिटाना चाहते हों तो हाथ-कते सूतकी खादी पहने बिना कभी काम न चलेगा क्योंकि उसके बिना किसी दूसरे तरीकेसे उनके घरमें हम अन्न वस्त्र-पहुँचा ही नहीं सकते।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें भी यही बात है। जो लोग अस्पृश्यताको हिन्दू धर्मका अंग मानते हैं उनको असहयोगी बननेका कोई अधिकार नहीं है। इस सरकारने सामाजिक मतभेदोंको बड़ी चतुराईके साथ बढ़ावा दिया है। हम जहाँ भी जायें वहाँ अस्पृश्य ही माने जाते हैं। हमारे साथ ऐसा व्यवहार होता है मानो हम सर्वत्र ठोकरें तथा गालियाँ खाने लायक हैं और दूर रखे जानेके ही योग्य हैं। हमारा जेलमें रहना ही ठीक है। इस सबसे स्पष्ट है कि हम अस्पृश्य माने जाते हैं। यही बातें ढेढ़ों और भंगियोंके साथ किये जानेवाले हमारे व्यवहारमें भी देखी जा सकती हैं।

फिर हमें कांग्रेसकी कल्पनाका स्वराज्य प्राप्त करनेका क्या अधिकार है? फिर हम कांग्रेसके स्वयंसेवकोंमें कैसे भरती हो सकते हैं? जो हिन्दू अस्पृश्यताको धर्म मानता है उसे असहयोगी बननेका कोई अधिकार ही नहीं है, यह बात उसे तुरन्त समझ लेनी चाहिए। जो अपने-आपको हिन्दू मानते हैं यदि वे सब सच्चे हृदयसे अस्पृश्यताका त्याग करनेके लिए तैयार न हों तो मैं अकेला होनेपर भी यह कहूँगा कि हमें इस पापको दूर किये बिना स्वराज्य नहीं मिलेगा और यदि हम इस पापको दूर न करेंगे तो हिन्दू धर्मका ही नाश हो जायेगा। अस्पृश्यताको धर्म मानकर उससे चिपके रहकर हिन्दू धर्मको कायम रखना, गायकी रक्षा करना, अहिंसाका पालन करना, और समत्व भाव बनाये रखना मैं असम्भव समझता हूँ। जैसे धूपके बिना अन्न नहीं पक सकता वैसे ही अस्पृश्यता-रूपी अन्धकारका नाश हुए बिना स्वराज्य-रूपी अन्नकी फसल कभी नहीं पक सकती।

निर्भय हुए बिना स्वराज्य नहीं मिलेगा। फिर भी अभी हिन्दू मुसलमानोंसे और मुसलमान हिन्दुओंसे डरते हैं। पारसियों और ईसाइयोंको इन दोनोंसे भय है। फिर हमें स्वराज्य कैसे मिल सकता है? जिसने भयका भी त्याग नहीं किया है अर्थात् जो भारतके सभी लोगोंको अपने भाई-बहनके समान नहीं मानता उसे स्वराज्य-प्रेमी कैसे माना जा सकता है? वह स्वयंसेवक दलमें कैसे भरती किया जा सकता है?

इसलिए मैं गुजरातियोंसे तो अवश्य ही कहना चाहता हूँ कि यदि वे तुरन्त स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हों तो उन्हें ऊपर बताये गये धर्मका पालन तो करना ही चाहिए। चाहे कोई वकील हो, चाहे उपाधिधारी और चाहे धारासभाका सदस्य हो, यदि वह ऊपर बताई गई शर्तोंका पालन करेगा तो स्वयंसेवक दलमें भरती हो सकता है। किन्तु चाहे उसने वकालत छोड़ दी हो, उपाधि छोड़ दी हो, सरकारी शाला छोड़ दी हो और धारासभा भी छोड़दी हो, फिर भी यदि वह ऊपर बताई गई शर्तोंमें से किसी एकका भी पालन नहीं करता तो वह स्वराज्यवादी नहीं है। वह स्वयंसेवक दलमें भरती नहीं हो सकता और वह जेल जानेके योग्य नहीं है। उसके जेल जाने या प्राण देनेसे भी स्वराज्य नहीं मिलेगा। उसके जेल जानेसे इस राज्यका नाश हो सकता है; किन्तु यदि वैसा हुआ तो उसके बदलेमें जो राज्य स्थापित होगा वह इससे भी बुरा होगा।

किन्तु इस राज्यसे बुरे राज्यकी कल्पना मेरे मनमें नहीं आ सकती। इसलिए मैं यह मानता हूँ कि उक्त शर्तोंका पालन किये बिना जेल जानेसे स्वराज्य मिलेगा ही नहीं। जेल जाने और मारपीट सहन करनेसे एक प्रकारकी निर्भयता अवश्य आ जायेगी; किन्तु केवल निर्भयता आनेसे ही तो स्वराज्य नहीं मिल सकता। जैसे निर्भयताके साथ ज्ञान और विवेक होनेसे ही मुक्ति मिलती है, वैसे ही निर्भयताके साथ-साथ स्वराज्यकी शर्तोंका ज्ञान होने और पालन करनेसे ही स्वराज्य मिल सकता है। लछमनसिंह[1] और उनके साथियोंको मारनेवालोंमें भी वीरताका अभाव नहीं था किन्तु उन्हें कोई स्वराज्यवादी नहीं मानता। मृत्युका भय त्यागनेवाले ऐसे लोगोंको

१. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४४३।

इकट्ठा करनेसे हमें स्वराज्य नहीं मिल सकता। यदि एक क्षणके लिए यह मान भी लें कि इससे स्वराज्य मिल सकता है तो वह उन लोगोंका ही राज्य होगा और ऐसे राज्यसे असहयोगी तो दूर ही भागेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-२-१९२२

१६०. सरकारका जवाब

सरकारने वसीठी-पत्रका[1] जो उत्तर[2] दिया है, वह दुःखजनक है। उसमें न तो कहीं पश्चात्ताप दिखाई देता है और न कहीं अपनी भूलोंकी स्वीकृति। बल्कि सरकारने उसमें अथसे इतितक अपनेको निर्दोष बताया है और असहयोगियोंको दोषी सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है।

इस उत्तरको पढ़नेके बाद मेरे मनमें दो विचार उठे — इसमें या तो जान-बूझकर झूठी बातें लिखी गई हैं या उत्तरका मसविदा बनानेवालों और अधिकारियों-पर सरकारको इतना अधिक विश्वास है कि ये अधिकारी कभी भूल कर भी सकते हैं इस बातको वह नहीं मानती। मैंने मनुष्य-जातिके गौरवका विचार करके भी पहली सम्भावनाको छोड़कर दूसरीको स्वीकार किया है।

ये दोनों बातें भयंकर हैं। जान-बूझकर झूठ बोलना और असत्याचरण करना अथवा अपने दोषको देख ही न पाना और इसी मिथ्या भ्रममें रहना कि मैं तो बेदाग हूँ — मनुष्यको इन दोनों दोषोंसे बचना चाहिए।

मैं सरकारको दूसरे दोषका दोषी मानता हूँ; क्योंकि मैं समझता हूँ कि मनुष्य अनजानमें बहुत-सी भूलें करता है। जैसे असहयोगी अपनी भूलें नहीं देख पाते वैसे ही सरकारके सम्बन्धमें भी हम क्यों न मानें? हमारा धर्म तो यह है कि हम अपने दोषोंको देखनेके लिए सूक्ष्मदर्शक यन्त्रसे काम लें और दूसरोंके दोष दूरबीनके द्वारा देखें। केवल तभी हम बड़ी मुश्किलसे अपने दोष देख पायेंगे। जो व्यक्ति या समाज इस नीतिके अनुसार व्यवहार करते हैं वे सदा सुखी रहते हैं। जो अपने दोषोंको पर्वतके बराबर मानता है उसे दूसरोंकी भूलें खोजनेके लिए बहुत कम समय रहता है। और इसके बाद तो मनुष्यको स्वयं अपने ही दोषोंपर पश्चात्ताप होता रहेगा। किन्तु मनुष्य स्वभावतः दुःखी होनेकी इच्छा नहीं करता। वह अपने पहाड़-जैसे दिखाई देनेवाले दोषोंको जल्दी सुधारनेकी कोशिश करता है।

मैं इसी नियमका अनुसरण करना चाहता हूँ और सरकारके दोष देखनेके लिए आँखोंके सामने दूरबीन रखना चाहता हूँ। दूरबीनकी एक विशेषता पाठकोंको याद रखनी चाहिए। दूरबीन हमें केवल दूरकी ही वस्तुओंको, सो भी अस्पष्ट और छोटे रूपमें, दिखाती है; और नजदीककी चीजें तो उससे दिखाई ही नहीं देती। मुझे याद

१. देखिए "पत्र : वाइसरायको", १-२-१९२२।

२. देखिए परिशिष्ट २।

है कि मैंने सरकारकी छोटी-छोटी भूलोंपर तो ध्यान ही नहीं दिया है। परन्तु अव तो सरकारने हद ही कर दी है। उस उत्तरमें सरकारने अपनी कितनी ही भूलोंको गुणके रूपमें दिखाया है। और जिन भूलोंको गुण वताया ही नहीं जा सकता वह उनको अनदेखा कर गई है। सभावन्दी और जवानवन्दीके जो नोटिस जारी किये गये हैं उनके विषयमें वह लिखती है कि ये नोटिस तो असहयोगियोंकी धूर्तताओंके कारण जारी करने पड़े हैं। यद्यपि सच वात यह है कि सरकारने ऐसा एक भी प्रमाण नहीं दिया जिससे इस प्रतिवन्धकी आवश्यकता सिद्ध हो। तथापि कोई-न-कोई तर्क तो उसके समर्थनमें दिया ही जा सकता था; इसलिए सरकारने उस गलत कामको अच्छा कहकर पेश किया। परन्तु लूट-पाटका, मार-पीटका, खादी जलानेका और रातमें कांग्रेस दफ्तरों-पर छापा मारनेका वचाव किस तरह किया जा सकता है? यदि लोग कानूनके खिलाफ काम करते हैं तो क्या इस कारण सरकारी कर्मचारी भी कानूनके खिलाफ लूटपाट या मारपीट कर सकते हैं? इसलिए इस वातपर सरकार चुप्पी साध गई है। इसी तरह इस उत्तरमें दूसरी गम्भीर वातोंके विषयमें भी अत्युक्ति करने अथवा मौन रखनेकी नीतिका अवलम्वन किया गया है। मैं उनके विश्लेषणमें पाठकोंका समय लेना नहीं चाहता। उत्तर तो मिलने ही वाला था और मेरा यह भी खयाल था कि उसमें कोई वड़ी वात न होगी; परन्तु उसमें जो वेशर्मी दिखाई देती है मैं उसके लिए तैयार नहीं था। मैं यह सोचता था कि उसमें नरम दलको कुछ सान्त्वना देनेकी कुछ-न-कुछ वात जरूर होगी। परन्तु वे सूखे ही टरका दिये गये हैं और असहयोगियोंके लिए तो जो पहले था वह है ही। सरकार हमें अस्पृश्य समझती है इसका समझदार आदमी-के लिए इस उत्तरसे वढ़कर और क्या प्रमाण हो सकता है?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-२-१९२२

१६१. गोरखपुरका अपराध

गोरखपुर जिला शायद सवसे वड़ा जिला है। उसमें प्रखर स्वभावके लोग रहते हैं। अखवारोंमें जो खवरें छपी हैं उनसे मालूम होता है कि उन्होंने अपने स्वभावकी प्रखरताका उपयोग विपरीत दिशामें किया है। उन्होंने पुलिसका एक थाना जला दिया,[1] उन्होंने इक्कीस निर्दोष सिपाहियोंको मार डाला और उनकी लाशें जला दीं। इन मरे हुए लोगोंमें वहाँके थानेदारका एक जवान लड़का भी है। अखवारोंमें जो विवरण छपा है उनके अनुसार ये लोग एक जगह लगी हुई पैंठ या हाटको रोकनेके लिए गये थे। पहले थोड़े-से लोग गये थे, किन्तु उनको वहाँसे भगा दिया गया। इसलिए वादमें एक वड़ा दल गया। इस दलमें स्वयंसेवक भी थे।

१. ४ फरवरी, १९२२ को।

मेरे लिए और प्रत्येक समझदार असहयोगीके लिए यह घटना नीचा दिखानेवाली है। वहाँसे जो दूसरी खबरें आई हैं उनसे भी हमारे अहिंसक रहनेके सम्बन्धमें शंका होती है।

बारडोलीमें आन्दोलनका जो श्रीगणेश किया जानेवाला है उसके लिए यह घटना एक अपशकुन है। शान्तिका और अशान्तिका प्रयोग साथ-साथ नहीं हो सकता। यदि लोगोंको अशान्तिका प्रयोग करना हो तो शान्तिका प्रयोग करनेवाले लोगोंको अलग मार्ग ग्रहण करना होगा। जो लोग शान्तिके पुजारी हैं उन्हें अशान्तिको माननेवाली सरकार और जनता दोनोंसे ही असहयोग करना होगा।

यदि गोरखपुर जिलेके इन लोगोंका सम्बन्ध असहयोगकी लड़ाईसे नहीं है तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि वहाँ असहयोगियोंका प्रभाव जितना अपेक्षित था उससे बहुत कम हुआ है। प्रत्येक शुभ कार्यमें ऐसे विघ्न तो आ ही जाते हैं। जब अपने लोग मरते हैं तब मेरा हृदय दुःखित नहीं होता अथवा होता भी है तो मैं उसे अपने वशमें रख सकता हूँ। किन्तु जब एक भी सहयोगीका खून किया जाता है तब मुझे शर्म मालूम होती है और आन्दोलनकी प्रगतिके सम्बन्धमें भय पैदा होता है। शान्तिमें विश्वास रखनेवाले प्रत्येक मनुष्यकी स्थिति ऐसी ही होनी चाहिए।

यह लेख मैं बम्बई जाते समय लिख रहा हूँ।[1] भारतभूषण पण्डित मदनमोहन मालवीयने मुझे वहाँ बुलाया है। कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक बारडोलीमें बुलाई गई है और वह शनिवारको[2] होगी। यह लेख पाठकोंके हाथोंमें रविवारको पहुँचेगा। मैं स्वयं सामूहिक सविनय अवज्ञाको मुलतवी करनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेना नहीं चाहता; इसलिए मैं इस सम्बन्धमें कार्य-समितिसे सलाह करना चाहता हूँ।

मेरा धर्म अडिग है। उसकी कसौटी ऐसे समयमें ही हो सकती है। मैं जबतक अहिंसाकी भावनामें वृद्धि होते देखता हूँ तबतक तो अनेक जोखिमें उठानेके लिए तैयार हूँ। किन्तु जब मैं यह देखता हूँ कि कोई दूसरा मेरी प्रवृत्तिका अनुचित उपयोग कर रहा है तब मैं एक पग भी आगे नहीं उठा सकता।

मैं गोरखपुरसे और ज्यादा खबर मिलनेकी राह देख रहा हूँ। मैं अपने विचार पाठकोंके सम्मुख इसलिए रखता हूँ कि मैं इस सम्बन्धमें प्रत्येक पाठककी सहायता लेना चाहता हूँ। यह लड़ाई नये ढंगकी है। जो लोग शान्तिमय उपायोंमें विश्वास करते हैं उन्हें आत्म-निरीक्षण करना चाहिए। उनको केवल शान्तिका, अहिंसाका ही प्रसार करना होगा। यह लड़ाई वैर बढ़ानेकी नहीं, बल्कि वैरको मिटानेकी है; लोगोंमें भेदभाव बढ़ानेकी नहीं, बल्कि उनको एकत्र करनेकी है। यह लड़ाई ऐसी नहीं है जिसमें मिश्रित साधन काममें लाये जा सकें, बल्कि ऐसी है जिसमें हमें विवेकसे काम लेकर उचित और अनुचितका भेद जानना है और उनको अलग-अलग करना है।

गोरखपुर जिलेके लोगोंके पापके लिए मैं सबसे अधिक उत्तरदायी हूँ। किन्तु इसके लिए प्रत्येक शुद्ध असहयोगी भी उत्तरदायी है। उसका दुःख हम सबको होना चाहिए।

१. ८ फरवरी, १९२२ को; देखिए "पत्र: डा० एम० एस० केल्करको", ८-२-१९२२।
२. ११ फरवरी, १९२२ को।

किन्तु इस सम्बन्धमें अधिक विचार तो ज्यादा खबर मिलनेपर ही किया जा सकता है। ईश्वर भारतकी और असहयोगियोंकी लाजकी रक्षा करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-२-१९२२

१६२. टिप्पणियाँ

'विश्वासपात्र सेवक' क्यों?

एक सज्जन लिखते हैं:

> **आपने माननीय वाइसरायके नाम लिखे गये अपने पत्रमें हस्ताक्षर करते हुए 'विश्वासपात्र सेवक और मित्र' शब्द लिखे हैं। मैं आशा करता हूँ कि यह 'सेवक' शब्द भूलसे लिखा गया होगा। इसे आपने तो अवश्य ही नहीं लिखा होगा।**

मुझे आशा है कि ये सज्जन यह जानकर नाराज नहीं होंगे कि 'सेवक' शब्द मैंने विचारपूर्वक लिखा है। माननीय वाइसरायको मैं एक ऊँचा राज-पदाधिकारी मानता हूँ और उन्हें पत्र लिखनेमें जिस शिष्ट भाषाका प्रयोग किया जाना चाहिए उसका त्याग नहीं करना चाहता। असहयोगका अर्थ असभ्य व्यवहार नहीं है। शान्तिपूर्ण असहयोगका अर्थ सभ्यतापूर्ण असहयोग होता है। असभ्य पुरुषको असहयोग करनेका अधिकार ही नहीं है। इसके अतिरिक्त हम जिससे असहयोग करते हैं उससे तो हमें जान-बूझकर अधिक विनययुक्त व्यवहार करना चाहिए, क्योंकि उससे व्यवहार करनेमें हमें यह भय रहता है कि वह कहीं बुरा न मान जाये और यह न समझ ले कि हमें उससे वैयक्तिक द्वेष है। शान्तिपूर्ण असहयोगका शास्त्र यही कहता है। इसलिए एक असहयोगीके रूपमें मैं वाइसराय महोदयको लिखे जा रहे पत्रमें शिष्टतापूर्ण भाषाका प्रयोग करनेके लिए बँधा हुआ था। मैंने 'सेवक' शब्दके साथ 'मित्र' शब्दका प्रयोग भी सोच-समझकर किया है। इसका प्रयोग करके मैंने यह बताया है कि मैं सेवक तो अवश्य हूँ किन्तु गुलाम नहीं हूँ। मनुष्य सेवक शब्दका प्रयोग करते हुए शत्रु भी हो सकता है। मैं किसीको भी शत्रु समझना नहीं चाहता, मैंने अपना यह धर्म 'मित्र' शब्दका प्रयोग करके व्यक्त किया है। फिर इस शब्दके प्रयोगसे मैंने अपना यह निश्चय बताया है कि मैं अंग्रेजोंसे नीचा रहना नहीं चाहता और उनसे बराबरीकी शर्त-पर ही व्यवहार करना चाहता हूँ। 'विश्वासपात्र' शब्दका प्रयोग करके मैंने अपना अहिंसा-धर्म बताया है और यह जताकर अभयदान दिया है कि उनको और उनकी जातिको मेरी ओरसे धोखा दिये जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। इस प्रकार यद्यपि मेरे हस्ताक्षरोंके साथ लगाये गये विशेषण रूढ़िके अनुसार हैं फिर भी वे सब विचारपूर्वक लिखे गये हैं और सार्थक हैं।

'करना नहीं आता'

एक मित्रने एक स्थानमें युवराजके स्वागतका वहिष्कार करनेके सम्बन्धमें यह लिखा है :[१]

स्थितिका यह चित्रण यथार्थ है। इस तरीकेसे शान्ति कायम नहीं रखी जा सकती। इस समय तो आन्दोलनकी प्रगतिमें बाधा डालनेवाले स्वयं हम ही हैं। जैसे आवश्यकतासे अधिक भोजन करनेवाला मनुष्य अपचसे नहीं बच सकता उसी प्रकार कटुभाषा बोलनेवाला मनुष्य भी अशान्तिको नहीं रोक सकता। अधिक भोजन करनेवाले मनुष्यको अपच अच्छा नहीं लगता; उसी तरह कटुभाषा बोलनेवाले मनुष्यको भी निश्चय ही अशान्ति अच्छी नहीं लगती होगी। किन्तु यदि ये दोनों अपनी-अपनी मर्यादाका पालन नहीं करते तो उनके कार्यका अभीष्ट परिणाम नहीं हो सकता। हम लोगोंमें अभीतक कहीं-कहीं हिंसाकी भावना मौजूद है; इसका कारण यही है कि हमने अभी हिंसाको रोकनेका उपाय ही नहीं किया है; विचारसे वाणी और वाणीसे कर्म — परिणामकी उत्पत्तिका यही क्रम है। यदि हम विचारपर अंकुश न रखें; अपनी वाणीको वशमें न रखें तो इन दोनोंके परिणामको रोकनेका प्रयत्न भी असफल होगा। इसी कारण कांग्रेसको एक प्रस्ताव पास करके इस बार यह बात स्पष्ट करनी पड़ी है कि हमें विचारमें से भी हिंसाको निकाल देनेकी आवश्यकता है। उदाहरणार्थ मौलाना बारीने मुझे एक पत्रमें लिखा है कि वे हिंसाका विचार भी अपने मनमें नहीं लाते। कांग्रेसकी ऐसी आज्ञा है अथवा गांधीने ऐसा कहा है, इतना कहना काफी नहीं है। जब हमारा विचार भी ऐसा हो तभी हमें उसके पोषक तर्क सुगमतासे मिल सकते हैं।

इसके सिवा जिन लोगोंने युवराजका स्वागत करनेवाले लोगोंको 'गधा' और 'बन्दर' कहा है उन्होंने तो स्पष्ट हिंसा की है, गाली दी है, अपना रोष प्रकट किया है और इस प्रकार अपनी प्रतिज्ञाको ही भंग किया है। उन्होंने सभ्य व्यवहारका त्याग किया है। हमें अपने प्रतिस्पर्धी और विरोधीको ऐसे विशेषणोंसे कभी सम्बोधित नहीं करना चाहिए। हमारी भाषामें अवश्य ही अहिंसा होनी चाहिए। जो जुलूसमें जाये, उसका निकाह रद्द हो, ऐसा कहना तो यह सुझानेके समान है कि उसे सजा मिलनी चाहिए। यदि सब स्त्रियाँ इस बातको मानकर युवराजका स्वागत करनेवाले पुरुषोंको त्याग दें तो भारतकी क्या गति हो? यह तो स्पष्टतः ज्यादती ही हुई।

ज्यों ही हमारे विचारोंमें परिवर्तन हो त्यों ही हमारे ये नये विचार यदि हमारे नित्यके साथीको स्वीकार न हों, वह उन्हें न समझे तो उसका त्याग किया जाये, यह तो जंगलीपन माना जायेगा। इस तरहसे तो संसारका व्यवहार एक क्षण भी नहीं चल सकता। विचार-वैषम्य होनेपर भी हमें मित्रता कायम रखनी चाहिए। यदि हम ऐसा नहीं करते तो हिन्दुओं और मुसलमानोंकी एकताका अर्थ ही क्या हुआ? हिन्दुओं और मुसलमानोंके विचारोंमें कितना बड़ा अन्तर है? एक पूर्वकी ओर मुँह

१. पत्रका यह अंश यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने यह शिकायत की थी कि वक्ता लोगोंसे अहिंसक रहनेका अनुरोध तो करते हैं और निःसन्देह यह चाहते हैं कि अहिंसाका पालन किया जाये, किन्तु लोगोंको यह सब समझानेके लिए जिस भाषाका प्रयोग करना चाहिए, वह भाषा उन्हें नहीं आती।

करके ईश्वरका भजन करना धर्म समझता है तो दूसरा पश्चिमकी ओर मुँह करके। एकके धर्ममें शिखा रखनेका विधान है, तो दूसरेके धर्ममें दाढ़ी रखनेका। फिर भी दोनों एक-दूसरेका सम्मान करते हैं, एक-दूसरेको सहन करते हैं; वे एक-दूसरेसे कोई जबरदस्ती नहीं करते। यदि हिन्दुओं और मुसलमानोंने इस प्रकार सच्चे हृदयसे ऐसा व्यवहार करनेकी प्रतिज्ञा ली हो तो आजकलके असहयोगी सहयोगियोंपर जबरदस्ती कैसे कर सकते हैं? अथवा यदि असहयोगी सहयोगियोंपर जबरदस्ती करेंगे तो यह स्पष्ट है कि असहयोगी हिन्दू असहयोगी मुसलमानोंसे जरूर लड़ेंगे। इसलिए जबतक असहयोगी सहयोगियोंको मित्रभावसे जीतनेका ही निश्चय नहीं करते तबतक मैं हिन्दुओं और मुसलमानोंमें शुद्ध एकता होना असम्भव मानता हूँ।

'नवजीवन'का विरोध

'नवजीवन'के एक प्रेमी वेरावलसे लिखते हैं:[1]

काठियावाड़में 'नवजीवन' और खादीकी टोपीके विरोधका कारण समझमें आना मुश्किल है। किन्तु श्री अमृतलाल ठक्करपर[2] वेरावलमें जो-कुछ बीती थी उसका जिसे स्मरण है उसे ऊपर दी हुई घटनासे कोई आश्चर्य नहीं होगा। मैं तो यह मानता हूँ कि काठियावाड़में 'नवजीवन'के प्रचारका अर्थ शुद्ध विचारोंका प्रसार है। खादीकी टोपी और खादीके कपड़े काठियावाड़की समृद्धिके चिह्न हैं। यदि छब्बीस लाखकी आबादी प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति औसतन ढाई रुपयेका कपड़ा भी पहने और उतनी खादी काठियावाड़में ही बने तो उससे काठियावाड़में पैंसठ लाख रुपये बचें। काठियावाड़के घरोंमें प्रतिवर्ष इतना रुपया जमा होते रहनेसे काठियावाड़की अवस्था कितनी सुधर जायेगी इसका हिसाब हर मनुष्य स्वयं लगा सकता है। इस हिसाबसे दूसरे आँकड़े भी निकाले जा सकते हैं जो इतने ही सन्तोषजनक होंगे। यदि हम प्रत्येक परिवारमें पाँच सदस्य मानें तो इससे परिवारकी आय प्रतिवर्ष साढ़े बारह रुपये बढ़ जायेगी। जब हम औसत निकालते हैं तब हम जानते हैं कि प्रत्येक मनुष्यको तो उतना रुपया नहीं मिलता जितना उसके हिस्सेमें आता है, किन्तु पूरे समुदायको तो उतना लाभ होता ही है। इसका अर्थ तो यह हुआ कि यह पैंसठ लाख रुपयेका लाभ काठियावाड़के उन निर्धन परिवारोंको होगा जिन्हें पैसेकी जरूरत है, और जिन्हें संकटग्रस्त रहना पड़ता है; अथवा इसका दूसरा अर्थ इस तरीकेसे लगाया जा सकता है कि पैंसठ लाख रुपयेका ढेर काठियावाड़ियोंके पास खुला पड़ा है; उसमें से जिसे जितना लेना हो उतना लूटकर ले जा सकता है। ऐसा होनेपर भी यह लूट तो सभ्यतापूर्ण लूट ही होगी। फिर चूँकि इस रुपयेका लोगोंमें वितरण चरखेकी मार्फत करना होगा, इसलिए यह रुपया उन गरीबोंके घरोंमें ही जायेगा जिन्हें उसकी जरूरत है। ऐसी शुभ परिणामकारी खादी, शान्ति और सत्यका प्रचार करनेवाले 'नवजीवन'का विरोध किया जाता

१. इस पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है।

२. १८६९-१९५१; भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के सदस्य और दलित-वर्गों और आदिवासियोंके निमित्त काम करनेवाले एक प्रमुख कार्यकर्ता।

है, इसे समयकी विपरीत गति ही कहना चाहिए। ऐसे प्रतिबन्धका उत्तर काठियावाड़में एक ही दिया जाना चाहिए और वह यह है कि समस्त काठियावाड़ी केवल खादीका ही व्यवहार करने लग जायें। यदि ऐसा किया जा सके तो पोर्ट कमिश्नर साहबको खादीका प्रचार रोकना कठिन हो जायेगा। और चूंकि 'नवजीवन'की आय सार्वजनिक कार्यमें ही प्रयुक्त होती है, इसलिए मैं निष्पक्ष भावसे यह भी कह सकता हूँ कि यदिप्रत्येक लिखना-पढ़ना जाननेवाला मनुष्य 'नवजीवन' मँगाने लग जाये तो वेरावलमें लगाई गई यह रोक व्यर्थ हो जायेगी। जहाँ किसी वस्तु-विशेषका व्यवहार बहुतसे लोग करने लगते हैं वहाँ उसपर रोक लगाना पूर्णतः नहीं तो लगभग अशक्य अवश्य हो जाता है।

राष्ट्रीय शालाओंके सम्बन्धमें

एक सज्जनने राष्ट्रीय शालाओंके सम्बन्धमें यह चेतावनी दी है कि "प्राथमिक शालाओंकी ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। यदि इन शालाओंके राष्ट्रीयकरणके पश्चात् इन्हें सुधारनेका कोई प्रयत्न न किया गया और बच्चोंको भटकना पड़ा तो उनके माँ-बाप उकताकर बच्चोंको इन शालाओंमें से निकाल लेंगे और यह भी सम्भव है कि वे उन्हें फिर सरकारके आश्रयमें रख दें।" इसमें शक नहीं कि इस बातमें बहुत-कुछ तथ्य है। बड़े विद्यार्थियोंमें, जो अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, और केवल आठ-दस वर्षके बालकोंमें बहुत बड़ा अन्तर होता है। कम आयुके बच्चोंकी शिक्षाकी व्यवस्था तो तुरन्त की जानी चाहिए। जिन स्थानोंमें सविनय अवज्ञा नहीं की जा रही है वहाँ लोगोंको इस ओर ध्यान न देनेका कोई कारण भी नहीं है। इन स्थानोंमें यह कार्य सविनय अवज्ञाकी तैयारीका ही एक अंग है, क्योंकि सविनय अवज्ञाकी योग्यता प्रदर्शनोंसे नहीं बल्कि काम करनेसे ही आती है। सविनय अवज्ञाकी तैयारीका अर्थ है खादीका प्रचार और चरखेका प्रसार, सूतकी मात्रा और किस्मको सुधारना, बुनकरोंकी संख्या बढ़ाना, ज्यादा अच्छी पूनियाँ बनाना, शराबखोरीको रोकना, राष्ट्रीय शिक्षाकी जड़ें मजबूत करना, अस्पृश्योंसे मेल-जोल बढ़ाना और ऐसी ही अन्य अनेक रचनात्मक और सृजनात्मक प्रवृत्तियोंको आगे बढ़ाना। इनसे ही सविनय अवज्ञाकी शक्ति आती है। जहाँ सविनय अवज्ञा नहीं की जा रही है वहाँ ऐसी प्रवृत्तियाँ अधिक वेगपूर्वक चलाई जानी चाहिए। इसी तरह कांग्रेसकी संस्थाओंको भी मजबूत बनाना चाहिए। सदस्य बनाने और चार आने चन्दा उगाहनेका काम तो बहुत ही वेगपूर्वक किया जाना चाहिए। कांग्रेसके दफ्तर गाँव-गाँवमें खोले जाने चाहिए और उनमें पाँच अधिकारी चुने जाने चाहिए। यदि ये सब काम न किये जायें तो हम देश-भरमें सविनय अवज्ञा करनेके योग्य कभी न हो सकेंगे।

इसलिए मैं आशा करता हूँ कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियाँ स्वयंसेवकोंको उनके कामके सम्बन्धमें निर्देश भेज देंगी।

शरीर-सम्पत्ति

जिन सज्जनने प्राथमिक शालाओंके सम्बन्धमें चेतावनी दी है, उन्होंने शारीरिक स्वास्थ्यकी रक्षाके सम्बन्धमें भी चर्चा की है। उनका खयाल है कि ब्रह्मचर्यसे शरीरको

जो लाभ होता है, मैंने उसके और व्यायामके सम्बन्धमें काफी नहीं लिखा है। इस पत्रके लेखक सूरतके रहनेवाले हैं। वे लिखते हैं कि सूरतके लोगोंमें उत्साह तो बहुत होता है, किन्तु शरीरसे निर्बल होनेके कारण वे जेलके कष्ट और सत्याग्रहियों-पर पड़नेवाले अन्य कष्टोंको सहनेके लिए तैयार नहीं हो सकते। वे मारपीटको तो क्या बरदाश्त करेंगे?

उनकी यह चेतावनी तो ठीक ही है। किन्तु ब्रह्मचर्यका विषय ही ऐसा है कि उसपर बार-बार लिखना कठिन है। फिर मेरी मान्यता है कि ब्रह्मचर्यका उपयोग केवल शारीरिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे नहीं होना चाहिए। यह तो पाईकी जगह रुपयेका उपयोग करनेके समान होगा। मैंने यह बात मान ली है कि जो लोग स्वराज्यके कार्यक्रमके अन्य अंगोंको आगे बढ़ानेमें व्यस्त रहेंगे उनको सहज ही ब्रह्मचर्यकी आवश्यकता प्रतीत होगी।

ऐसा होनेपर भी ब्रह्मचर्यकी रक्षापर जितना अधिक जोर दें उतना ही कम है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्यका पालन नहीं करता वह मनुष्य नहीं रहता। इतना ही नहीं बल्कि वह पशुत्वसे भी गिर जाता है। पशु तो स्वभावतः ब्रह्मचर्यका पालन करता है। वह स्वादके वशमें नहीं होता और इन्द्रियोंके विलासको भी नहीं जानता। वह मर्यादाके भीतर रहता है। इसलिए अब्रह्मचारी मनुष्यकी जब हम पशुसे उपमा देते हैं तब हम पशुका ही अपमान करते हैं। जो मनुष्य ब्रह्मचर्यका भंग करता है वह अन्तमें नपुंसक हो जाता है। यही कारण है कि हम अंग्रेजी और गुजराती दोनों भाषाओंके अखबारोंमें वीर्यवर्धक ओषधियोंके बड़े-बड़े विज्ञापन देखते हैं। यह हमारे लिए बहुत लज्जाकी बात है। विज्ञापनदाताओंको इतने बड़े-बड़े विज्ञापन देना पुसाता है, यह स्थिति हमारे दुर्भाग्यकी सूचक है। ब्रह्मचर्य मनुष्य-जातिका स्वभाव ही होना चाहिए; आत्माका तो है ही। अब्रह्मचारी मनुष्यकी आत्मा मूर्च्छित होती है। जिसकी आत्मा जाग्रत है, वह अपने शरीरका उपयोग ऐसे कार्यमें कभी नहीं कर सकता जो अत्यन्त मलिन है और जिसके परिणाम बहुत कटु होते हैं।

विचार उन्नत हों तो मनुष्यके लिए ब्रह्मचर्यका पालन पूरी तरह शक्य और सुगम है। पाठक एक घड़ी एकान्तमें शान्तचित्त होकर विचार करें और ब्रह्मचर्य-भंगकी मलिनताके पूरे चित्रकी कल्पना करें तो क्या उनके मनमें घृणा पैदा नहीं होगी? किन्तु जब मनुष्यके मनमें मलिन विचार उत्पन्न होता है तब वह पागल बन जाता है। वह शराब पिये बिना ही बेहोश-जैसा हो जाता है और उस बेहोशी-जैसी हालतमें विषय-भोगकी मलिन क्रियामें सुख मानता है। वह इस क्षणिक सुखके पश्चात् होनेवाले पिछले कटु अनुभवको भूल जाता है और उसकी दशा पहले जैसी ही हो जाती है।

ब्रह्मचारी दुर्बल हो ही नहीं सकता। उसका मन, उसका शरीर और उसकी आत्मा, जितना चाहो उतना काम देते हैं। ब्रह्मचारीको पशुबलकी आवश्यकता नहीं है। बहुतसे लोग ऐसा मानते जान पड़ते हैं कि ब्रह्मचारी यानी ऐसा आदमी जिसमें बहुत ज्यादा पशुबल हो। ब्रह्मचारीमें शारीरिक कष्टोंको सहन करनेकी असीम शक्ति होती है। हम कह सकते हैं कि ब्रह्मचारीको शारीरिक थकान तो होती ही नहीं। ऐसा ब्रह्मचारी कोई विरला ही देखनेमें आता है।

ब्रह्मचारीके लिए व्यायाम तो सामान्य बात होती है। उसके लिए खुली हवाकी काफी जरूरत होती है। हमें तो खुली हवामें रहनेका चाव ही नहीं होता। गन्दी हवासे शरीर जितना दुर्बल होता है उतना किसी दूसरी बाहरी चीजके असरसे नहीं होता। जिसका धन्धा ऐसा हो कि उसमें शरीरका पूरा व्यायाम न होता हो उस युवकको नित्य दो घन्टे घूमनेका श्रम अवश्य करना चाहिए। वह सामान्य चालसे, शरीरको सीधा और दृष्टिको जमीनकी ओर रखकर और शान्तचित्त होकर एकान्तमें स्वच्छ स्थानमें घूमे। इस समय ज्यों-ज्यों उसके फेफड़े स्वच्छ हवासे साफ होते जायें त्यों-त्यों यदि वह अपने हृदय और मस्तिष्कको भी शुद्ध करता जाये तो उसके शरीर और मन अवश्य ही बलवान होंगे। ब्रह्मचारीको मिताहारी ही नहीं बल्कि अल्पाहारी भी होना चाहिए। उसका शरीर कर्ममें प्रवृत्त रहते हुए भी बहुत ही कम क्षीण होता है; इसलिए उसे कमसे-कम भोजनकी जरूरत पड़ती है। उसका भोजन मसालों और मिष्टान्नोंसे रहित होना आवश्यक है। जिसे हम भारी आहार कहते हैं, उसके लिए वह भी त्याज्य है। जिन लोगोंको मानसिक काम बहुत रहता है उनके लिए दालें शत्रु-रूप हैं। गेहूँ, दूध और कुछ साग-सब्जी, सम्भव हो तो कुछ ताजे फल — इनके अतिरिक्त उसे शायद ही किसी चीजकी जरूरत होती है।

किन्तु मैं जानता हूँ कि मैं निश्चित मर्यादासे बाहर चला गया हूँ। ब्रह्मचर्यसे सम्बन्धित अन्य बहुतसे विषय अभी रहते हैं किन्तु उन सबकी चर्चा एक ही टिप्पणीमें नहीं की जा सकती। जो इस प्रवृत्तिको धार्मिक दृष्टिसे देखते हैं ऐसे भाइयों और बहनोंको इससे अधिक मदद मिल सके इस हेतु मैंने सूरतके उक्त सज्जनके सुझावकी चर्चा करते हुए ये विचार प्रकट किये हैं।

"कर्मठ" और "रक्षित" स्वयंसेवक

कांग्रेसने स्वयंसेवकोंके दो वर्ग किये हैं। 'एक्टिव' यानी कर्मठ स्वयंसेवक और 'रिजर्व्ड'[1] यानी रक्षित स्वयंसेवक। इनके अर्थके सम्बन्धमें कुछ भ्रम हुआ जान पड़ता है। कुछ लोग ऐसा मानते मालूम होते हैं कि कर्मठ स्वयंसेवक भाषण अथवा प्रदर्शन करेंगे, एक जगहसे दूसरी जगह जायेंगे-आयेंगे और रक्षित स्वयंसेवक चरखा चलायेंगे।

कहा जा सकता है कि यह तो अर्थका अनर्थ करना हुआ। कर्मठ स्वयंसेवकोंका अर्थ है वे स्वयंसेवक जो अपना सारा समय कांग्रेसके कार्यके लिए दे सकें और दें। जो लोग स्वयंसेवकोंमें अपना नाम तो इस कारण अवश्य लिखा देते हैं कि सरकार कांग्रेसके स्वयंसेवक बनना अपराध मानती है किन्तु वास्तवमें कांग्रेसका काम करनेकी आशा नहीं रखते, ऐसे लोग रक्षित स्वयंसेवकोंके वर्गमें आते हैं। अलबत्ता, ये स्वयंसेवक जब जेल जानेके लिए गिरफ्तार होनेकी जरूरत होती है तब गिरफ्तार होनेके लिए निकल पड़ते हैं। इसलिए रक्षित वर्गके स्वयंसेवक अपनी आजीविका कमानेका धन्धा करते रहते हैं और जब जरूरत होती है तब जेल जानेके लिए आगे आ जाते हैं। लेकिन कर्मठ वर्गके स्वयंसेवक तो चाहे जेल जाना हो या न जाना हो कांग्रेसके कामके लिए अर्पित

१. गांधीजीने अंग्रेजी शब्दोंका ही प्रयोग किया है।

रहते हैं। ऐसे लोगोंके पास या तो अपने भरण-पोषणके लायक पैसा होता है या कांग्रेस जरूरत समझती है तो उनको पैसा देकर उनकी सेवा लेती है। यह सक्रिय काम करनेवाला वर्ग जरूरत होनेपर भाषण देने और ऐसे ही अन्य काम करनेके लिए अवश्य जायेगा। किन्तु जबतक उसे कोई खास काम न सौंपा जाये तबतक वह सूत कातेगा, रुई पींजेगा और खादी बुनेगा। वह चाहे रुई न भी पींजे और खादी न भी बुने, किन्तु सूत कातनेका काम तो उसे करते ही रहना चाहिए। दिल्लीमें जो प्रस्ताव[1] स्वीकार किया गया था उसमें यह लाजिमी माना गया है और कांग्रेसकी रचनात्मक प्रवृत्ति तो सूत कातना और कतवाना ही है। इसलिए कांग्रेसके स्वयंसेवक और नेता इस क्रियामें जितनी दक्षता प्राप्त करेंगे, लोगोंको उतना ही लाभ होगा। इन दोनों बातोंमें चालाकी करनेवाले स्वयंसेवकोंके दोषके कारण कांग्रेसको बहुत नुकसान उठाना पड़ता है। इसके कारण हजारों लोगोंकी आजीविकामें बाधा पड़ती है। यदि हमें इस कार्यमें दक्ष लोग अधिक संख्यामें मिल जायें तो काते जानेवाले सूतकी मजबूती, बारीकी और समानतामें बहुत सुधार किया जा सकता है। किन्तु स्वदेशीमें तन्मय होनेवाले और सूत कातनेमें रस लेनेवाले ऐसे कुशल सेवक हमारे पास बहुत ही कम हैं। इसलिए मेरी समझसे तो कर्मठ स्वयंसेवकोंका पहला काम कातनेकी पूरी शक्ति प्राप्त करना और उसे प्राप्त करके अपने खाली समयका उपयोग कातनेमें ही करना है।

हममें कष्ट सहन करनेकी शक्ति चाहे कितनी ही क्यों न आ गई हो, किन्तु फिर भी यदि हम भारतको आर्थिक दृष्टिसे स्वतन्त्र करनेकी कुंजी नहीं पहचान सके हैं और उसका उपयोग नहीं करते हैं तो स्वराज्यका द्वार कभी नहीं खुलेगा। हममें ज्ञानपूर्वक कष्ट सहन करनेकी क्षमता आनी चाहिए। हमें जेल क्यों जाना है, यह हमें जान लेना चाहिए। इसलिए जबतक हममें स्वदेशीके कार्यके सम्बन्धमें ईमानदारी नहीं आती, और हम उसका महत्त्व नहीं समझते तबतक हमें स्वराज्य मिलनेकी आशा ही नहीं करनी चाहिए। सच तो यह है कि तबतक हमें स्वराज्य लेनेका हक ही नहीं है क्योंकि तबतक हममें इतनी शक्ति ही न आयेगी कि हम स्वराज्यको चला सकें। स्वयं सूत कातना और दूसरोंसे भी कतवाना यह हमारी सबसे बड़ी प्रवृत्ति है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

अन्त्यजोंके विषयमें

जो बात खादीके बारेमें सच है वही अन्त्यजोंके बारेमें भी है। अस्पृश्यताका निवारण न हो तो स्वराज्य मिल ही कैसे सकता है? उसे हम ले भी कैसे सकते हैं? जबतक हम अन्त्यजोंपर प्रभुत्व बनाये रखना चाहते हैं तबतक हमें अपने प्रति किये जानेवाले सरकारके व्यवहारके सम्बन्धमें शिकायत करनेका कोई अधिकार ही नहीं है। ईश्वर तो हम जैसा करते हैं वैसा ही हमें देता है। मनुष्य अशक्त और अज्ञानी है इसलिए वह क्षमा करके न्याय करता है। ईश्वर सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ है इसलिए वह उचित दण्ड देकर न्याय करता है। यदि हम इस सम्बन्धमें अपनी आत्माको धोखा

१. कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा ४ नवम्बर, १९२१ को स्वीकृत; देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४३२-३५।

देंगे तो ईश्वर हमें स्वराज्यसे वंचित रखनेकी व्यवस्था अवश्य करेगा। इस सम्बन्धमें एक युवकने चेतावनी दी है। मैं उसका सारांश यहाँ उसीकी भाषामें देता हूँ :[1]

एक गुजराती कविका पत्र — एशियाके एकमेव कविके नाम

सभी लोग जानते हैं कि कवि श्री नानालालने[2] अपनी नौकरी छोड़ दी। उन्होंने महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरको निम्न पत्र[3] लिखा है :

कवि श्री नानालालने महाकविको यह पत्र लिखा है, यह ठीक ही किया है। उन्होंने नौकरी छोड़ दी, यह भी अच्छा किया है। वे चाहें तो तटस्थ भी रहें। किन्तु ऐसा पत्र लिखनेके बाद उनसे गुजरात यह अवश्य पूछेगा कि जबतक इच्छित फल नहीं मिलता तबतक वे इस बातके लिए तो बँधे हुए हैं कि न तो स्वयं चैनसे बैठें और न दूसरोंको बैठने दें। उनका प्रथम कर्त्तव्य तो यह है कि वे गुजरातके तटस्थ लोगोंको संगठित करें।

ज्ञातव्य प्रश्न

एक भाईने शुद्ध हृदयसे कोई पन्द्रह प्रश्न पूछे हैं। अपने हस्ताक्षरोंके पूर्व "बारडोली ताल्लुकेका एक हितचिन्तक" विशेषण लगाकर उन्होंने अपना नाम भी दिया है। मैं स्थानकी कमीके कारण उन प्रश्नोंको यहाँ नहीं देता। किन्तु उनके उत्तर इस तरहसे देनेका प्रयत्न करूँगा कि उनको पढ़नेसे प्रश्न सुगमतासे समझमें आ सकें।

१. मैं जब पहली बार बारडोली गया था तब मैंने कहा था कि अभी लोगोंको और अधिक तैयारी करनी चाहिए। इस बार दो मास बाद जब मैं वहाँ गया तब मैंने लोगोंकी तैयारी पर्याप्त मान ली, क्योंकि मैंने देखा कि वहाँ अब पहलेसे अधिक काम हुआ है। मैंने वहाँ अस्पृश्यता-निवारणके सम्बन्धमें अन्य सब स्थानोंसे अधिक तैयारी देखी। मुझे इस ताल्लुकेमें हिंसा होनेका भय सबसे कम है। इसके अतिरिक्त मैं इस ताल्लुकेके कार्यकर्त्ताओंपर मुग्ध हूँ।

२. मुझे विश्वास है कि अन्य सब स्थानोंकी अपेक्षा इस ताल्लुकेमें असहयोगकी सभी शर्तोंका पालन अधिक किया जा रहा है। जिस ताल्लुकेने अपनी ओरसे आमन्त्रण ही न दिया हो, हम उसकी बात ही क्यों करें?

३. यहाँके लोग अपेक्षाकृत अधिक संख्यामें हाथकते सूतका बुना कपड़ा पहनते हैं।

४. यहाँ चरखे इतनी संख्यामें चलते हैं कि उनसे इस ताल्लुकेको सदा अपनी जरूरत-भरका सूत मिलता रह सकता है।

१. उक्त सारांशका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है।

२. (१८७७-१९४६); गुजरातके एक प्रमुख कवि।

३. यहाँ इसका अनुवाद नहीं दिया गया है। नानालालने इसमें लिखा था कि सरकार और असहयोगियोंके बीच लड़ाई अवश्यम्भावी दिखती है, अतः जो लोग इसमें तटस्थ हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे इस बातका ध्यान रखें कि दोनों पक्ष सभ्यतापूर्ण लड़ाईके नियमोंका पालन करते रहें।

५. अब ताल्लुकेमें विदेशी कपड़ा बहुत-कम बिकता है। बेशक, उनके घरोंमें पहलेसे जो था उसे उन्होंने निकाला नहीं है। मुझे दुःख है कि वह उन्होंने जमा कर रखा है।

६. इस ताल्लुकेके बहुत-कम लोग अब ढेढ़ों और भंगियोंका स्पर्श करनेमें दोष मानते हैं।

७. यहाँके लोग असहयोगके कार्यक्रमके अंगोंका पालन सन्तोषजनक रूपमें कर रहे हैं।

८. मेरा खयाल है कि इस ताल्लुकेके लोगोंमें दम्भ, ढोंग, लुच्चापन, झूठ बोलना आदि दोष कम हैं। मैंने इस ताल्लुकेको इन्हीं कारणोंसे असहयोगके लिए चुना है।

९. अच्छेसे-अच्छे कार्योंमें भी लोगोंको जबरदस्ती सम्मिलित करना महापाप है।

१०. मुझे आशा है कि लगान बहुत-कम लोग देंगे। यदि कोई असहयोगी उनका भी तिरस्कार करेगा तो वह पाप करेगा।

११. बारडोली एक छोटा-सा ताल्लुका है। उसके निवासी सरल हृदय हैं। वे राजनीतिक विषयोंको नहीं समझते। वे बकरीकी तरह सीधे हैं और यह सीधापन ही उनका गुण है। उनमें विवेक है और वे भला-बुरा समझते हैं। वे स्वार्थ और परमार्थका अन्तर समझते हैं। जो समझदार हैं उनको इस लड़ाईमें कोई खतरा दिखाई नहीं देता। बकरा कसाईके घर अपने-आप नहीं जाता; तब यदि बारडोलीके स्त्री-पुरुष भोलेपन अथवा श्रद्धाके कारण, अपनी इच्छासे किसी तरहकी जोर-जबरदस्तीके बिना जेल जायेंगे, अपनी सम्पत्ति जब्त होने देंगे, अपने प्राण देंगे और अपने मनमें रोष नहीं लायेंगे तो संसार उनको पूजेगा। वे भारतको स्वराज्य दिलायेंगे और इतिहासमें अमर हो जायेंगे।

१२. मैं मुख्यतः अहमदाबादमें रहता हूँ और वहाँ धन, ज्ञान, चतुरता, व्यापार और साहस आदि गुणोंकी बहुलता है, फिर भी मैंने उसे छोड़कर बारडोली ताल्लुकेको इस लड़ाईके लिए चुना है; इससे इस लड़ाईकी विशेषता प्रकट होती है। यदि बारडोली-जैसा नम्र और सीधा ताल्लुका शान्तिपूर्ण साहसका परिचय देगा तभी स्वराज्य मिलेगा। यह लड़ाई गरीबोंकी, निर्दोष लोगोंकी है। इस लड़ाईमें बकरी-जैसे निरीह लोगोंको बाघ-जैसे बली लोगोंके भयसे मुक्त होना है। यह तो तभी होगा जब बारडोलीके लोग लड़ेंगे। अहमदाबाद या बम्बईमें धन होते हुए भी मैं वहाँ निर्भय होकर नहीं लड़ सकता। वहाँ तो मुझे सदा धोखा खाने अथवा हिंसा होनेका भय बना रहेगा। बारडोलीमें मैं निर्भय हूँ। यदि बारडोली मुझे धोखा दे तो मेरी क्या दशा होगी, यह ईश्वर ही जानता है।

१३. श्री विट्ठलभाईने सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें जो भाषण पहले दिया था उससे उनकी अश्रद्धा प्रकट नहीं होती। वह तो उन्होंने उसका समर्थन करनेके लिए दिया था। उन्होंने अपने उस भाषणसे हमें सावधान किया था और इस बातमें शंका प्रकट की थी कि लोग अन्ततक अहिंसक रह सकेंगे। किन्तु अब जब कि सविनय अवज्ञाका समय आ गया है, उन्हें उस आन्दोलनको चलानेमें क्या आपत्ति हो सकती है?

१४. मैं असहयोगको भयंकर युद्ध नहीं मानता। मुझे विश्वास है कि इसमें शहरोंके बड़े-बड़े लोग जितना हिस्सा ले सकते हैं उसकी अपेक्षा गाँवोंके भोले किन्तु शान्त लोग अधिक हिस्सा ले सकते हैं। दमन-नीतिका आश्रय लिये जानेपर लोग डर जायें और भाग निकलें, इसमें यह भय तो है और यह हँसीकी बात भी होगी; किन्तु इसकी अपेक्षा उन लोगोंसे अधिक भय है जो जेल जानेसे तो नहीं डरते किन्तु जो हिंसा कर सकते हैं; और ऐसे लोगोंसे भयकी अपेक्षा भी बदनामी अधिक होती है। भागनेवालोंके कारण हम बाजी तो नहीं हार जायेंगे; किन्तु हिंसा करनेवाले लोगोंसे भारतके वातावरणमें लोगोंके आतंकित होने और अन्तमें स्वराज्यकी बाततक भूल जानेकी सम्भावना मौजूद है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-२-१९२२

१६३. पत्र : देवदास गांधीको

मौनवार [१२ फरवरी, १९२२][1]

चि० देवदास,

मुझे हमेशा तुम्हारी याद आती रहती है लेकिन तुम्हें पत्र लिखनेकी फुरसत ही नहीं मिलती।

तुम्हारा तार मिला है। मैंने बम्बईसे जो तार दिया था वह तुम्हें मिल गया होगा।

मैंने आजसे उपवास शुरू किया है। यह शुक्रवारकी शामको छूटेगा। इतना किये बिना तो चल ही नहीं सकता था। साँपकी बाँबीमें हाथ डालना और इस अविनयके वातावरणमें सविनय अवज्ञा करना दोनों एक जैसे हैं। मेरे उपवाससे तुम घबराना मत। तुम इसमें मेरा अनुकरण तो कदापि न करना। पीड़ा तो प्रसूताको ही भोगनी पड़ती है। अन्य तो केवल उसकी मदद कर सकते हैं। मुझे भी अहिंसा और सत्य-धर्मको जन्म देना है इसलिए उपवासादिकी पीड़ा तो मुझे ही भोगनी होगी। तुम सब तो उसके लिए आतम-शुद्धि करो और निर्धारित कार्य करते रहो। सो तो तुम करते ही हो। इन पापोंमें तुम्हारा कोई भाग नहीं है।

वहाँसे मुझे खबर बराबर भेजते रहना।

तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हरिलालकी सजा कम नहीं हुई है। मुझे [उसकी सजा कम होनेकी] खबर अच्छी नहीं लगी थी। वह वहाँ प्रसन्न है। मालवीयजी कल बम्बई रवाना हो गये। वे कार्य-समितिकी बैठकमें हाजिर हुए थे।

१. गांधीजीने चौरीचौराकी घटनापर प्रायश्चित्तके रूपमें पाँच दिनका उपवास किया था। उपवास रविवार, १२ फरवरी, १९२२ की शामको शुरू हुआ था।

मैं तुम्हें निम्नलिखित तार भेज रहा हूँ :

"तुम्हारा तार। कार्य-समितिने बड़े पैमानेपर सविनय अवज्ञा अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर दी है और आक्रामक प्रकारकी अन्य छोटी प्रवृत्तियाँ भी। प्रायश्चित्तके रूपमें और उन लोगोंको चेतावनीके रूपमें, जिन्होंने मेरे नामपर सिपाहियोंकी निर्दयतापूर्वक हत्या की है शुक्रवार शामतक उपवास कर रहा हूँ। अपराधियोंको अपना अपराध स्वीकार करने और अपने-आपको अधिकारियोंके हवाले कर देनेकी जोरदार सलाह दे रहा हूँ। तुम उपवास मत करना। चिन्ता न करके काम करो और प्रार्थना करो।"

तुम नियमपूर्वक तार और पत्र लिखते रहो। मालवीयजीको दो-चार दिनोंमें वहाँ पहुँच जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-१०-१९२३

१६४. तार : जहूर अहमदको[1]

[१२ फरवरी, १९२२के पश्चात्][2]

तारके लिए धन्यवाद। [मेरे निणयका] उलटा अर्थ लगाया जाना अपरिहार्य। परन्तु ईश्वर हमारे साथ। लोगोंके समर्थनके बजाय हम उसकी ओर निहारें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

सेवन मन्थ्स विद महात्मा गांधी

१६५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

सोमवार, १३ फरवरी, १९२२

रहा नहीं गया। शुक्रवारकी साँझको उपवास टूटेगा। इससे कम तो सम्भव ही नहीं लगा। यह तो कमसे-कम है। मुझे इसमें कुछ कष्ट नहीं होनेवाला है। तुम बेफिक्र रहना। तबीयतको खूब सँभालकर रखना। स्वयं उपवास [करनेके चक्कर] में

१. केन्द्रीय खिलाफत समितिके।

२. साधन-सूत्रमें इस बातका उल्लेख है कि यह तार जहूर अहमदके उस तारके जवाबमें दिया गया था जिसमें गांधीजी द्वारा सविनय अवज्ञाके मुल्तवी किये जानेपर बम्बईमें 'क्षोभ' व्याप्त होनेकी बात की गई थी। कार्य-समितिने ११-१२ फरवरी, १९२२ की अपनी बारडोलीकी बैठकमें इस निर्णयकी पुष्टि की थी।

कदापि न पड़ना। पीड़ा तो केवल प्रसूताको ही सहनी पड़ती है, दूसरे तो मदद ही कर सकते हैं। आज (एसोसिएटेड) प्रेसको तार भेजा है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

१६६. पत्र : चिमनदास ईश्वरदास जगतियानीको

बारडोली

१४ फरवरी, १९२२

प्रिय चिमनदास,[1]

तुम्हारा पत्र मिला।

भारतमें वातावरणके बारेमें तुमने जो बातें कही हैं मैं उनसे सहमत हूँ। तुम देखोगे कि कार्य-समिति सही निर्णयपर पहुँची है। मैं सिर्फ यही आशा कर रहा हूँ कि सभी विभिन्न समितियाँ हृदयसे सहयोग करेंगी। यदि वे ऐसा करती हैं, तो हमें किसी भी तरहकी कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। मगनलाल[2] यहीं है; उससे मैं तुम्हारे लिए एक बुनकर सिन्धमें भेजनेके बारेमें बात करूँगा। उसने मुझे बताया है कि वह पहले ही तुम्हें एक पत्र लिखकर एक प्रशिक्षक भेजनेका प्रस्ताव दे चुका है। प्रशिक्षक वह व्यक्ति होता है जिससे बुद्धिमान लोग अपने-आप सीख सकते हैं। एक अध्यापक प्रशिक्षकसे कुछ अधिक होता है। उसमें काम सिखानेकी स्वाभाविक क्षमता अवश्य होनी चाहिए। आश्रममें ऐसे व्यक्ति अधिक नहीं हैं, किन्तु एक प्रशिक्षकको जो सर्वथा योग्य है, आसानीसे भेजा जा सकता है। तुम तथा अन्य कुछ लोग उससे यह कला सीख सकते हो।

हृदयसे तुम्हारा,

मो० क० गांधी

श्री चिमनदास
कांग्रेस बुनाई-आश्रम
हैदराबाद (सिन्ध)

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५७३६) की फोटो-नकलसे।

१. डाक्टर चिमनदास ईश्वरदास जगतियानी, सिन्धके एक कांग्रेसी नेता।

२. मगनलाल गांधी (१८८३-१९२८); खुशालचन्द गांधीके पुत्र और गांधीजीके भतीजे। एक समय फीनिक्स आश्रम और बादमें सत्याग्रह आश्रम, साबरमतीके व्यवस्थापक।

१६७. तार: सैयद महमूदको[1]

[१४ फरवरी, १९२२ या उसके पश्चात्]

प्रस्ताव अपने गुणोंके कारण पास किये गये हैं। समझौता कतई नहीं। आशा है कि कार्य-समितिके प्रस्तावोंपर बंगाल पूरी तरह अमल करेगा। लोगोंसे चौकीदारी-कर तथा अन्य कर अदा करनेको भी कहेगा।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७९१३)की फोटो-नकलसे।

१६८. तार: देवदास गांधीको

बारडोली
१५ फरवरी, १९२२

देवदास
कांग्रेस कमेटी
गोरखपुर

अखबारी गलतबयानियोंकी परवाह न करो। भूल सुधार दो और भूल जाओ। सब हालात सविस्तार लिखो। मैं बहुत ठीक हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७९१८)की फोटो-नकलसे।

१. डा० सैयद महमूद (जन्म १८८९); बिहारके कांग्रेसी नेता; स्वातन्त्र्य आन्दोलनमें कैद भोगी; केन्द्रीय खिलाफत समितिके सचिव; संसद-सदस्य।

यह सैयद महमूदके १४ फरवरी, १९२२ के तारके जवाबमें भेजा गया था जो इस प्रकार था: "कार्य-समितिका निर्णय आज प्रकाशित; बहुत ही आश्चर्यजनक। बंगाल और बिहारमें लोग निराश, बहुत उद्विग्नता, शायद बंगाल आदेश न माने। यदि कोई समझौता किया गया है तो तार द्वारा सूचित करनेकी कृपा कीजिए।"

१६९. पत्र : सर डेनियल हैमिल्टनको

बारडोली
१५ फरवरी, १९२२

प्रिय महोदय,

श्री हाजने[1] लिखा है कि आप मेरे साथ घण्टा-भर बातचीत करना चाहते हैं और सुझाया है कि इस दिशामें पहल मैं ही करूँ, सो खुशी-खुशी वैसा कर रहा हूँ। आपके इस समयका उपयोग मैं अपनी किसी प्रवृत्तिकी चर्चामें नहीं सिर्फ अपने चरखा सम्बन्धी कार्यमें ही आपकी दिलचस्पी पैदा करनेमें करूँगा। मेरी जितनी भी बाहरी प्रवृत्तियाँ हैं, मेरा निश्चित मत है कि चरखा उनमें सबसे अधिक स्थायी और कल्याण-कारी है। मैं बराबर कहता रहा हूँ कि चरखा भारतके करोड़ों घरोंसे दरिद्रताके दुःखको दूर कर देगा, और अकालके खिलाफ यह सुरक्षाका एक बहुत बड़ा साधन है। अब अपनी इस बातको पुष्ट करनेके लिए मेरे पास प्रचुर प्रमाण मौजूद हैं।

डा० प्रफुल्लचन्द्र रायको तो आप जानते ही हैं, लेकिन आपको शायद यह मालूम न हो कि अब वे चरखेके भी एक बहुत उत्साही समर्थक बन गये हैं।[2] आधुनिक अर्थोंमें भारतके औद्योगीकरणकी कोई जरूरत नहीं है। १,९०० मील लम्बे और १,५०० मील चौड़े इस विशाल भूभागमें ७,५०,००० गाँव बसे हुए हैं। लोग जमीनसे बँधे हुए हैं और उनमें बहुत बड़ी संख्या ऐसे लोगोंकी है जो मुश्किलसे किसी तरह अपना रोटी-कपड़ा ही जुटा पाते हैं। चाहे कोई कुछ कहे, किन्तु मैंने तो खुली आँखोंसे सारे देशका भ्रमण करके और करोड़ों लोगोंके सम्पर्कमें आकर जो-कुछ देखा है, उससे निस्सन्देह यही सिद्ध होता है कि गरीबी दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही है। इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि करोड़ों लोग हर साल चार महीने मजबूरन बेकार रहते हैं। कृषिमें कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन करनेकी जरूरत नहीं है। भारतीय किसानोंको बस किसी पूरक उद्योगकी जरूरत है, और सबसे सहज-स्वाभाविक हाथ-करघा नहीं बल्कि चरखेका प्रचलन करना है। करघेका प्रचलन घर-घरमें नहीं हो सकता; लेकिन चरखेका हो सकता है, और सौ साल पहले ऐसी ही स्थिति थी भी। किन्तु चरखेका प्रचलन समाप्त हो गया — सो कुछ आर्थिक दबावके कारण नहीं। प्रामाणिक रेकर्डोंसे यह सिद्ध किया जा सकता है कि उसे तो जान-बूझकर जोर-जबरदस्तीसे ही समाप्त किया गया। इसलिए उसके पुनरुद्धारसे भारतकी आर्थिक समस्या आनन-फाननमें हल हो जायेगी। मैं जानता हूँ कि आपको भारतसे बड़ा प्रेम है और मेरे देशके आर्थिक एवं नैतिक उत्थानमें आपकी गहरी दिलचस्पी है। मैं यह भी जानता हूँ कि आपका प्रभाव

१. श्री हाज सर डेनियल और गांधीजी, दोनोंके मित्र थे।
२. देखिए "चरखेके बारेमें डा० रायके विचार", २-२-१९२२।

बहुत अधिक है और वह प्रभाव ऐसा है जिसका उपयोग मैं चरखेके प्रचलनके लिए करना चाहूँगा। सफल सहकारी समितियाँ स्थापित करनेकी दृष्टिसे भी यह सबसे कारगर साधन है। करोड़ों लोगोंके सक्रिय सहयोगके बिना यह आयोजन कभी सफल नहीं हो सकता; और चूंकि यह अभीसे हजारों स्त्रियोंको लज्जाजनक जीवनसे मुक्ति दिलानेका एक साधन सिद्ध हो रहा है, इसलिए यह नैतिक उत्थानमें भी उतना ही सहायक है जितना कि आर्थिक प्रगतिमें।

आशा है, आपने यदि यन्त्रोंके खिलाफ मेरे विचित्र विचारोंके बारेमें कुछ सुना हो तो उनसे आप अपने मनमें पहलेसे ही कोई धारणा नहीं बना लेंगे। यन्त्रोंके द्वारा भारतमें और किसी उद्योगका विकास किया जाये तो उसके खिलाफ मुझे कुछ नहीं कहना है, लेकिन जहाँतक वस्त्र-उद्योगकी बात है, मैं अवश्य यह कहता हूँ कि बड़ी-बड़ी मिलोंमें — चाहे वे भारतीय हों या विदेशी — बने कपड़ेसे भारतकी वस्त्र-सम्बन्धी आवश्यकताकी पूर्ति करना प्रथम श्रेणीकी आर्थिक भूल है। जिस प्रकार भारतमें कुछ प्रमुख केन्द्रोंमें बड़ी-बड़ी पाकशालाएँ खोलकर लोगोंको सस्ते दामपर रोटियाँ उपलब्ध कराना और घरके चूल्हे-चक्कियाँ बन्द करवा देना एक भारी भूल होगी उसी प्रकार मिलोंमें बने कपड़ेसे देशकी जरूरतको पूरा करना भी एक जबरदस्त गलती होगी।[1]

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ६-४-१९२२

१. सर डेनियलके उत्तरके कुछ अंश इस प्रकार थे: "... आपने चरखेके बारेमें जो-कुछ कहा है उसके सम्बन्धमें मैं भारतके ग्रामीण जीवनके अपने वैयक्तिक अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि न केवल चरखेको बल्कि हाथ-करघेको भी आधुनिक आर्थिक साधनोंका लाभ और उपयुक्त अवसर दिया जाये, तो वे सफलतापूर्वक वाष्पशक्तिके साथ प्रतियोगिता कर सकते हैं। इसका कारण यह है कि जिन चार महीनोंमें खेतीका कोई काम नहीं रहता उनमें जो श्रम अधिकांश रूपमें व्यर्थ जाता है वह इस कामके लिए मुफ्त ही मिल जायेगा। उस सूत और कपड़ेसे और कोई कपड़ा या सूत सस्ता नहीं हो सकता जिसपर कि केवल कच्चे मालके लिए खर्च किया गया हो।

... विशाल कारखानोंकी प्रणालीके सम्बन्धमें मैं आपके विचारोंसे पूर्णतया सहमत हूँ।... मैं भारतमें जिस चीजको वर्द्धमान देखना चाहता हूँ, और मेरा विचार है कि आप भी वैसा ही चाहते हैं, वह है ऐसा स्वराज्य, जिसकी शक्ति बुरे तरीकेसे प्राप्त धनसे नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवनसे आँकी जायेगी। इस बीच मैं आशा करता हूँ कि आप सरकारके प्रति अत्यधिक कठोर नहीं बनेंगे।... मैं चाहूँगा कि आप पुराने शासनको नष्ट करनेवाले देवदूत नहीं, बल्कि नये शासनके महान् निर्माता बनें।"

१७०. पत्र : एस० ए० ब्रेलवीको[1]

वारडोली
१५ फरवरी, १९२२

आपके तारमें जो स्नेह झलक रहा है उसकी मैं कद्र करता हूँ। मैं अपने व्रतको जो इतनी पवित्र भावनासे शुरू किया गया था, बीचमें नहीं तोड़ सकता था, लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इस उपवाससे मुझे जरा भी कष्टका अनुभव नहीं हो रहा है। मेरे सभी काम यथावत् चल रहे हैं, और मुझे आशुलिपिककी मदद देकर श्री बोमनजीने[2] उचित समयपर मेरा काम बहुत आसान कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-२-१९२२

१७१. पत्र : महादेव देसाईको

वारडोली
१५ फरवरी, १९२२

प्रिय महादेव,

बहुत लम्बे अर्सेसे तुम्हारा कोई पत्र नहीं आया, न तुम्हारे साथके कैदियोंके बारेमें किसीसे कुछ मालूम हुआ। तुम्हें जेलसे लिखनेकी अनुमति है या नहीं, इसके बारेमें मुझे सूचित करना। तुम गुजरातीमें पत्र नहीं लिख सकते, केवल इसी कारण लिखना मत छोड़ देना, क्योंकि मुझे यह मालूम नहीं कि तुम्हें जेलमें क्या छूट दी गई है। मैंने गोविन्दको कोई पत्र नहीं लिखा; मुझे उसका ध्यान तो निरन्तर बना रहता है। उसने मुझे बहुत सुन्दर पत्र लिखा है। मालवीयजीने मुझे गोविन्द और कृष्णकान्त-को लिखे अपने पत्रोंको उद्धृत करनेकी अनुमति दे दी है। मैं किसी समय उन्हें उद्धृत करूँगा।

मुझे उम्मीद है कि सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित किये जानेकी बात तुम सबको पसन्द आई होगी। अगर तुम्हें 'यंग इंडिया' पढ़नेकी अनुमति हो तो तुम 'यंग इंडिया' के आगामी अंकमें[3] वह सब देख सकोगे जिसके कारण मैंने आन्दोलन

१. यह पत्र **बॉम्बे क्रॉनिकल**के सम्पादक एस० ए० ब्रेल्वीके एक तारके जवाबमें लिखा गया था। उस तारमें चौरीचौराकी दुःखद घटनाके बाद गांधीजीने जो ५ दिनका उपवास शुरू किया था उसके दौरान उनके स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ता व्यक्त की गई थी।

२. एस० आर० बोमनजी।

३. १६ फरवरी, १९२२ का।

स्थगित किया है। मेरे उपवासको लेकर तुम चिन्ता न करना। जबतक तुम्हें यह पत्र मिलेगा तबतक मेरा छोटा-सा उपवास खत्म हो चुका होगा। मेरा इरादा तो इससे भी बड़ा उपवास करनेका था, लेकिन मैंने सोचा कि मेरे लिए और उन गलती करनेवाले लोगोंके लिए, जिनके कारण मैंने यह उपवास रखा है, अभी इतना ही काफी है।

मालवीयजी, श्री जयकर और श्री नटराजन् पिछले शनिवारको यहाँ आये थे। मालवीयजी दो दिन और अन्य लोग एक दिन ठहरे। देवदास अभीतक गोरखपुरमें है और वहाँ बहुत अच्छा काम कर रहा है। प्यारेलाल और परसराम[1] इलाहाबादमें हैं। मैं अभी कुछ दिनोंके लिए बारडोलीमें हूँ। आश्रमसे मगनलाल और कुछ अन्य लोग भी कुछ दिनोंके लिए यहाँ आये हुए हैं। ये लोग हाथ-करघे और चरखेके आन्दोलनका प्रसार करनेके उद्देश्यसे आये हैं।

मेरे उपवासका यह तीसरा दिन है। अभी पौ फटी है; और मैं यह पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ। मुझे उपवासके कारण कोई कमजोरी महसूस नहीं हो रही है, इसलिए उम्मीद है कि मुझे शुक्रवारको भी ज्यादा कमजोरी महसूस नहीं होगी।

तुम्हारा,
बापू

श्रीयुत महादेव ह० देसाई
मार्फत/सुपरिंटेंडेंट
जिला जेल
आगरा

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७९२१) की फोटो-नकलसे।

१७२. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल'के प्रतिनिधिसे

बारडोली
१५ फरवरी, १९२२

प्रश्न : क्या आपने निकट भविष्यमें या तुरन्त ही शुरू कर देनेके लिए कोई निश्चित कार्यक्रम तय कर लिया है?

उत्तर : यदि आपके प्रश्नका अभिप्राय मेरे निजी कार्यक्रमसे है तो मैं अभी कुछ दिनोंतक बारडोलीमें ही रहकर यह देखना चाहता हूँ कि कार्य-समिति द्वारा प्रस्तुत रचनात्मक कार्यक्रमका सबपर क्या प्रभाव पड़ रहा है। मुझे आशा है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी उसे स्वीकार कर लेगी। इसमें प्रत्येक सच्चे कार्यकर्त्ताके लिए

१. परशुराम मेहरोत्रा।

काफी काम है और काफी विविधता है। लेकिन आप देखेंगे कि यह कार्यक्रम दो भागोंमें विभक्त है: अहिंसाका प्रसार और खद्दरका प्रचार। इनमें से पहला तो निश्चित रूपसे आन्तरिक परिवर्तनका द्योतक है और दूसरा निश्चय ही बाह्य प्रगतिका सूचक है। भारत संसारके विरुद्ध अहिंसाके बिना अपनी बातपर अड़ा नहीं रह सकता, और जबतक चरखेको सभी लोग नहीं अपनाते तबतक भारत आर्थिक दृष्टिसे स्वतन्त्र नहीं हो सकता।

क्या आप निकट भविष्यमें सारे भारतका दौरा करनेका विचार कर रहे हैं?

जहाँतक मैं देख सकता हूँ, निकट भविष्यमें तो नहीं; अलबत्ता अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें शामिल होनेके लिए दिल्ली जाना है।

लोग कहते हैं कि परिस्थितियोंसे मजबूर होकर आपको अपने सभी राजनैतिक कार्य छोड़ने होंगे और अपना शेष जीवन अस्पृश्यता, नशाबन्दी आदि सामाजिक समस्याओंमें लगाना होगा। क्या ऐसी कोई सम्भावना है?

जहाँतक मैं राष्ट्रकी वर्तमान मनःस्थिति समझ सकता हूँ ऐसी सम्भावना नहीं है। अहिंसाके सम्बन्धमें जो नियमभंग मेरे देखनेमें आये हैं उनके बावजूद भारत ठोस तौरसे अहिंसात्मक हो गया है — मेरा खयाल है कि प्रबुद्ध वर्ग और साधारण जनता, दोनों ही। और जबतक कांग्रेसी लोग प्रस्तुत कार्यक्रमपर अमल करनेको तैयार रहेंगे और जबतक वे अहिंसा तथा चरखेके सिद्धान्तको ठुकराते नहीं हैं तबतक मेरे लिए अपना वर्तमान कार्य छोड़नेकी सम्भावना नहीं है। मेरे लिए राजनीति और धर्ममें कोई भेद नहीं है। धार्मिक भावनाके बिना राजनीति व्यर्थ है; और मैं जो आज देशके राजनैतिक जीवनमें डूबा हुआ हूँ वह इसलिए कि देशकी राजनैतिक परिस्थिति राष्ट्रीय जीवनका प्रमुख अंग है। किसी-न-किसी केन्द्रबिन्दुपर राजनैतिक जीवनसे सम्बद्ध हुए बिना [देशकी] प्रगति सम्भव नहीं है।

हिंसा भड़क उठनेकी आशंकाका ध्यान रखते हुए क्या सामूहिक सविनय अवज्ञाका विचार सर्वथा त्याग देना और कम खतरेवाले कामों, जैसे दण्डविधि-संशोधन अधिनियमके अधीन विज्ञप्तियोंकी अवज्ञा करना और कमसे-कम एक शहर — मान लीजिए कलकत्ता — में संगठनको सर्वांगपूर्ण बनाना और जेलोंको भरना क्या बेहतर नहीं होगा?

मैं नहीं समझता कि सामूहिक सविनय अवज्ञाका विचार त्याग देना जरूरी है। इस विचारमें कोई दोष नहीं है। यह अनैतिक नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि यह जनताका अधिकार है जिसे त्यागा नहीं जा सकता। इसका केवल यही अर्थ है कि जनताको अहिंसात्मक ढंगसे काम करनेका प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। उस विचारमें दोष क्या है? मैं मानता हूँ कि मैं सामूहिक सविनय अवज्ञा जल्दबाजीमें शुरू करने नहीं जा रहा हूँ। मैं खुद सामूहिक सविनय अवज्ञा दुबारा शुरू करनेसे पहले लोगोंसे पूरा-पूरा आश्वासन चाहूँगा। आखिरकार दक्षिण आफ्रिकामें सविनय अवज्ञा सामूहिक सविनय अवज्ञा ही थी; उस आन्दोलनमें कोई अवांछनीय घटना नहीं हुई थी। १९१८में

खेड़ामें भी सामूहिक सविनय अवज्ञा की गई थी और उसमें हिंसाकी एक भी घटना नहीं हुई। सामूहिक सविनय अवज्ञा समस्त भारतके लिए और भारतके नामपर एक सफल कार्यक्रमका विस्तार-मात्र है। यदि भारतके अन्य हिस्सोंमें भी उसकी नकल बिना सोच-विचारके करनेका खतरा न होता तो मैं निश्चय ही बारडोलीके कार्यक्रमको स्थगित न करता। मुझे पूरा विश्वास है कि भारतके अन्य भागोंमें हिंसा भड़क उठनेके बावजूद बारडोलीके लोग पूरी तरह अहिंसात्मक रहते, किन्तु उससे राष्ट्रीय उद्देश्य पूरा नहीं होता। यदि बारडोली किसी स्थानीय शिकायतके लिए सामूहिक सविनय अवज्ञा करता तो निश्चय ही वह बन्द न की जाती।

यदि आप सविनय अवज्ञा एक स्थानपर बन्द करा सकते हैं, या उसकी एक कड़ी तोड़ सकते हैं तो आप पूरी शृंखला भी तोड़ देंगे। इसलिए क्या नगरपालिकाके अधिकारोंपर ही पूरा ध्यान देना और सरकारको नीचा दिखाना बेहतर नहीं होगा?

आप किसी एक कार्यक्रमके जरिये यह नहीं कर सकते। निश्चय ही इससे लाभ होगा, किन्तु केवल नगरपालिकाओंके सुधारसे स्वराज्य पाना एक मन्द गतिवाली प्रक्रिया होगी। मैं निश्चय ही आशा कर रहा हूँ कि अहमदाबाद और सूरत अच्छा काम कर दिखायेंगे। और बम्बई सरकारने जो बिना सोचे-विचारे आतंक जमानेकी चेष्टा की है, उसकी व्यर्थता पूर्ण रूपसे सिद्ध कर देंगे। और जब कि अहमदाबाद और सूरत सफल हो जायेंगे तो भी उनकी सफलतासे राष्ट्रीय आन्दोलनको लाभ तो होगा, किन्तु इससे स्वराज्यका प्रश्न हल नहीं होगा। स्वराज्य आन्दोलनका अर्थ है पूरे जनसमूहको शिक्षित बनाना और यह काम कुछ शहरोंको पूरी तरहसे ठीक कर देने या स्वतन्त्र सरकार हासिल कर लेनेसे आप नहीं कर सकते। निःसन्देह अहमदाबाद, सूरत और नडियाद जिस प्रकार साहसपूर्वक अनुशासनबद्ध विरोध कर रहे हैं वह सामान्य जनतामें जागृति आ जानेके कारण ही हो सका है। जब परीक्षण पूर्ण हो जायेगा और यदि वह सफल रहा तो लोग देखेंगे कि इन तीनों स्थानोंके नागरिकोंने कैसे आत्मबल, कैसी रचनात्मक योग्यता, कष्टसहनकी क्षमता और अन्य महान् गुणोंका, जो किसी राष्ट्रको महान् बनाते हैं, परिचय दिया है। परन्तु वह प्रयोग अकेला ही कांग्रेसके कार्यक्रम द्वारा निर्धारित समयके अन्दर भारतको स्वराज्य नहीं दिला सकता।

क्या आप अहमदाबाद और सूरतमें नगरपालिकाका संघर्ष सुसंगठित करने जा रहे हैं?

नहीं, मैं ऐसा नहीं करूँगा; किन्तु मैं आशा करता हूँ कि इन दोनों शहरोंके नागरिकोंने जो संघर्ष सच्चे दिलसे शुरू किया है, उसे वे छोड़ेंगे नहीं।

कुछ लोगोंने इस प्रकार सोचना शुरू कर दिया है कि आपका यह विचार दुराशा मात्र है कि भारत अहिंसात्मक अवस्था प्राप्त कर लेगा, और वे कहते हैं कि आप भले ही दो वर्षतक लगातार अपने देशभाइयोंको अहिंसा सिखलानेका प्रयत्न करते रहें और देश शान्त हो जाये और आप अपना सविनय अवज्ञाका आन्दोलन शुरू भी कर दें तब भी कोई सनकी आदमी राजनीतिक ढंगका कोई एक हिंसापूर्ण

काम कर सकता है और इस प्रकार वातावरणकी शान्तिको ठेस पहुँचा सकता है। उनका यह भी कथन है कि आप शताब्दियोंतक उपदेश देनेके बाद भी ३१ करोड़ भारतीयोंके अहिंसात्मक बननेकी आशा नहीं कर सकते। "बुद्ध, चैतन्य, नानक और कबीर-जैसे महान् पैगम्बर, जिन्होंने केवल प्रेम और अहिंसाका उपदेश दिया था, ढाई हजार वर्ष बाद भी भारतको पूर्णतया अहिंसात्मक बना सकनेमें सफल नहीं हो पाये। जबतक मानवता फरिश्तों और सन्तोंके स्तरतक नहीं उठ जाती, हिंसा बनी रहेगी। यदि देश भविष्यमें काफी लम्बे समयतक शान्त बना रहता है, तो भी इसका क्या भरोसा कि दमनके परिणामस्वरूप कुछ लोगोंमें हिंसा नहीं भड़केगी? भीड़का मन जब इतना अधिक भड़का दिया जाये कि वह काबूमें न आ सके, तो वह धधक उठेगा और अवश्य पागल हो जायेगा। तो क्या कुछ व्यक्तियोंके अपराधोंके कारण पूरे देशके मनमें बसी हुई स्वराज्यकी इच्छा, खिलाफतके हल और पंजाबके अत्याचारोंके निराकरणकी आकांक्षा समाप्त कर दी जाये?"

इतने कठोर तथ्योंके होते हुए, क्या हिंसाको अनिवार्य मानना और उसे भारतसे पूरी तरह मिटानेके बजाय केवल उसे रोकनेकी चेष्टा करना बुद्धिमानी नहीं होगी? बहुतेरे लोग कहते हैं कि इसका खतरा तो हमेशा बना रहेगा और ऐसे खतरेके बिना सविनय अवज्ञा कभी भी नहीं की जा सकेगी। वे ऐसा आग्रह करते हैं कि आपने स्वयं कहा था कि हमें गैर-कानूनी दमन और सारे खतरों सहित सामूहिक सविनय अवज्ञाके बीच चुनाव करना है। क्या मैं जान सकता हूँ कि इसके जवाबमें आपको क्या कहना है?

प्रश्नोंके रूपमें इस व्याख्यानसे लगता है कि इस संघर्ष तथा उसपर अहिंसाके प्रभावकी जानकारी लोगोंको बिलकुल ही नहीं है। मेरा तात्पर्य यह नहीं कि आप नहीं जानते। आप तो केवल शंकालु व्यक्तियोंके मनकी बात-भर कहते हैं। निश्चय ही यदि मैं वह पानेकी कोशिश करूँ जो ईसा मसीह, बुद्ध या मुहम्मद नहीं पा सके तो मुझे निराश होना ही पड़ेगा। बल्कि इसके विपरीत मेरा प्रयत्न तो बेहद छोटा और सादा है। मैं ऐसा नहीं मानता कि भारतको इतना सरल सत्य समझना नहीं सिखाया जा सकता कि उसके लिए सशस्त्र संघर्ष द्वारा स्वराज्य-प्राप्तिका स्वप्न देखना कई पीढ़ियोंतक असम्भव है। संसारमें ऐसा कोई भी देश नहीं जो सशस्त्र संघर्षके लिए इतना अनुपयुक्त हो जितना भारत है। हो सकता है कि अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलानेके लिए हिंसाकी शक्तियोंको काफी काबूमें न रखा जा सके। यदि सारे नेता इसी निष्कर्षपर पहुँचते हैं, तो इसका यह अर्थ नहीं कि भारत अहिंसात्मक तरीकोंसे स्वतन्त्रता नहीं पा सकता। एक सत्याग्रहीके सामने कई तरहकी सविनय अवज्ञाके रास्ते हैं; किन्तु मैं मानता हूँ कि सामूहिक सविनय अवज्ञाका रास्ता सबसे छोटा है। यदि वह असम्भव साबित होता है तो मुझे सन्देह नहीं कि सविनय अवज्ञा-का एक नरम कार्यक्रम तय किया जा सकता है ताकि लोगोंको आत्म-बलिदानकी शिक्षा दी जा सके। इससे जनता कष्ट-सहनका नियम सीखेगी और जैसे कि वे आज

घरेलू मामलोंमें उसका व्यवहार करते हैं, वैसे ही राष्ट्रके हितमें करें। निश्चय ही अग्नि-परीक्षा और कष्टोंसे गुजरे बिना स्वराज्य प्राप्त नहीं होगा और मुझे रोज जो खबरें मिलती हैं कि लोग अवर्णनीय कष्टोंको राष्ट्रके लिए बिना बदला लिये सह रहे हैं, उन्हें पढ़कर मेरे मनको खुशी होती है।

इसलिए इस मुद्देपर मेरे मनमें कोई गलतफहमी नहीं है। मैं किसी असम्भव वस्तुको प्राप्त करनेकी कोशिश नहीं कर रहा हूँ। हिंसा हमेशा रहेगी और हिंसाकी एकाध घटनासे मुझे परेशान होनेकी जरूरत नहीं है। मैंने सविनय अवज्ञा बन्द करनेकी सलाह इसलिए दी है कि गोरखपुरके पड़ोसमें की गई हिंसा वैयक्तिक नहीं थी, किसी व्यक्तिगत अन्यायके सम्बन्धमें भी नहीं थी बल्कि राजनीतिक अन्यायके धुँधले ज्ञानके कारण थी। चौरीचौराके जैसा अवसर, जिसके फलस्वरूप सार्वजनिक हिंसा की गई, आनेपर लोगोंमें फिर भी आत्मसंयम बना रहे ऐसी आशा मैं कभी नहीं छोड़ सकता। इससे कहीं ज्यादा उत्तेजनामें भी जैसे कि जब सार्वजनिक सभाएँ बलपूर्वक भंग की गईं, भारतमें लोग लगभग सभी जगह वर्ष-भर शान्त रहे हैं। जनतामें पागलपन भड़क उठनेके ये सभी अवसर थे परन्तु लोगोंने अनुकरणीय संयम बनाये रखा। मेरा विश्वास है कि धीरे-धीरे परन्तु निश्चित रूपसे अहिंसाकी भावना फैल रही है। मुझपर की गई प्रश्नोंकी बौछारसे संकेत मिलता है कि यह बहुत कठिन काम है, परन्तु वास्तवमें यह कठिन या अव्यावहारिक है नहीं। यदि कांग्रेस और खिलाफत संगठन बिलकुल ठीक तरहसे संगठित होते तो चौरीचौरा-जैसी घटना हो ही नहीं सकती थी। यह तो मात्र कांग्रेस संगठनको ठीक बनानेका सवाल है। और यह तो राजनीति-शास्त्रका प्रारम्भिक पाठ है कि जबतक आपका संगठन काफी अच्छा नहीं है तबतक आप कुछ नहीं कर सकते। सरकार इसलिए सफल हो जाती है कि वह संगठित हिंसा कर सकती है। कांग्रेस भी तभी सफल होगी जब इसका संगठन जो अहिंसापर आधारित है, पूरी तरह सुव्यवस्थित हो जायेगा। कार्य-समितिने रचनात्मक कार्यक्रमकी जो रूपरेखा तैयार की है वह इसी दिशामें एक प्रयत्न है। यह भी याद रखना चाहिए कि चूँकि अहिंसाको अपनाना मनुष्यके लिए स्वाभाविक है, इसलिए हिंसाकी अपेक्षा उसे बहुत कम समयमें संगठित किया जा सकता है। जरा सोचिए कि १८ महीनोंमें भारतने अहिंसाके रास्तेमें कितनी प्रगति की है—और उस लम्बे समयका खयाल कीजिए जो भारतको अस्त्रोंका प्रयोग सिखानेमें लग जायेगा।

क्या आपको ऐसी कोई आशंका नहीं कि कांग्रेस मशीनरी ढीली हो जायेगी और बार-बार होनेवाली निराशाओंके कारण उत्साहमें कमी आ जायेगी?

मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है। इसका कारण केवल यही है कि सच्चे कार्य-कर्त्ताओंको समझना चाहिए, जैसा कि वे समझ भी गये हैं, कि सभी सजीव संस्थाओंके विकासमें वातावरणमें होनेवाले लगातार परिवर्तनोंको स्वीकार कर लेने और उन्हें सहन करनेकी क्षमता होनी ही चाहिए।

महात्माजी! क्या आपको ऐसी कोई आशंका नहीं है कि [सविनय अवज्ञाको] मुल्तवी करनेके कारण लोग आपके अहिंसाके सिद्धान्तमें विश्वास खो बैठेंगे?

मेरे मनमें ऐसी कोई आशंका नहीं है।

कैदियोंके बारेमें आपके क्या विचार हैं? कमसे-कम जो १५,००० व्यक्ति इस आशासे कि स्वराज्य शीघ्र प्राप्त होगा, जेल गये हैं उनके बारेमें आपका क्या विचार है? क्या केवल यही एक प्रश्न उन्हें रिहा करानेके लिए आपको किसी तरहका प्रतिरोध ढूंढ़नेके लिए बाध्य न करेगा?

गोरखपुरकी दुर्घटनासे बात बदल गई है। फिलहाल कांग्रेसको कैदियोंका बलिदान अवश्य करना होगा। गोरखपुरके जनसाधारणके कुकृत्योंके लिए उन्हें अवश्य कष्ट उठाना होगा।

क्या आप समझते हैं कि सविनय अवज्ञा अनिश्चित कालतक मुल्तवी रखनेसे जनताका जोशीला अंश बेकाबू नहीं हो जायेगा?

मुझे आशा है कि नहीं होगा। यदि हठधर्मी लोग बेकाबू होंगे, तो इससे कांग्रेस अनुशासनकी कमी जाहिर होगी और इसीलिए सामूहिक सविनय अवज्ञा मुल्तवी करनेका औचित्य साबित होगा।

क्या आप नरम दलवालों से आशा करते हैं कि वे पर्याप्त संख्यामें कांग्रेसके साथ सहयोग करेंगे?

निश्चय ही मैं आशा करता हूँ कि बहुतेरे नरम दलवाले लोग अब कांग्रेसके साथ मिलकर काम करनेके इस अवसरको हाथसे न जाने देंगे।

जब सविनय अवज्ञा शुरू करनेका समय आयेगा तब क्या आप उसे बारडोलीमें आरम्भ करनेकी आशा रखते हैं?

यदि कभी सविनय अवज्ञा शुरू करनेकी जरूरत हुई तो निश्चय ही मैं समझता हूँ कि यह सम्मान बारडोलीको दिया जायेगा। किन्तु मेरा खयाल है कि तबतक न केवल बारडोली बल्कि अन्य अनेक स्थान आत्मत्यागके लिए तैयार हो जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-२-१९२२

१७३. टिप्पणियाँ

अली-भाई

अली-भाइयोंके सम्बन्धमें इस हफ्ते काफी जानकारी मिली है। मैंने सरकार द्वारा किया गया खण्डन भी पढ़ा है। इसके सिवा लोगोंने अपने नेताओंके बारेमें तरह-तरहकी अफवाहें सुन रखी थीं जिनमें से एक यह भी थी कि अली-भाइयोंमें से एककी मृत्यु हो गई है। इस कारण लोग अधीर और उत्तेजित हो उठे थे। [उन्हें शान्त करनेके लिए] अली भाई तथा डाक्टर किचलूको जेलके छज्जेपर लाया गया। यदि मजिस्ट्रेटका कथन बिलकुल सही है, तो कराचीसे प्राप्त समाचार निश्चय ही अतिरंजित है। किन्तु श्री महादेव देसाईने जेलमें अपने साथ अच्छे व्यवहारका जो प्रमाणपत्र अधिकारियोंको दिया था, उसे अधिकारियों द्वारा, यह जानते हुए भी कि प्रमाणपत्र देनेके पहले वे बहुत तकलीफ उठा चुके थे, अपने पक्षमें पेश किये जानेके बाद अब मैं मजिस्ट्रेट द्वारा किये गये अर्ध-खण्डनको भी अविश्वासकी दृष्टिसे देखता हूँ। साथ ही यह भी सच है कि कराचीसे प्राप्त समाचार त्रुटिपूर्ण अवश्य हैं। अब साफ हो गया है कि समाचारोंसे जैसा लगता है वैसा क्रूरतापूर्ण और अभद्र व्यवहार उनके साथ नहीं किया गया था। किन्तु यदि अधिकारी लोग जेलमें होनेवाले व्यवहारके बारेमें अनावश्यक गोपनीयता बरतें और रिश्तेदारोंको भी उक्त कैदियोंसे मिलनेकी इजाज़त न दें, तो फिर जो हुआ उसके दोषी वे स्वयं हैं। जब कैदियोंके रिश्तेदार लोग कैदियोंके साथ ऐसे दुर्व्यवहारकी शंका करते हों जिसे जेलके अधिकारीगण माननेको तैयार नहीं हैं, तब उस हालतमें, यदि उन्हें कुछ छिपाना अभीष्ट नहीं है तो रिश्तेदारोंको कैदियोंसे मिलनेकी अनुमति देनेमें उन्हें झिझकना नहीं चाहिए। उन्हें यह अनुमति रिश्तेदारोंको सुविधा देने या कैदियोंकी खातिर नहीं, बल्कि अपने ही हितमें दे देनी चाहिए।

साबरमती जेलके कैदी

उदाहरणके लिए साबरमती जेलके कैदियोंको लीजिए। मैं समझता हूँ कि पिछले सप्ताह जो सूचना[1] मैंने दी थी वह बिलकुल सही है और उसमें जिस दुर्व्यवहारका जिक्र है वह न केवल श्री जयरामदासके साथ, बल्कि मौलाना हसन अहमद और उसी जेलमें रखे गये धारवाड़के दो कैदियोंके साथ भी किया गया है। मौलाना और धारवाड़के एक कैदी श्री दाभाड़े, ये दोनों ही लगभग ६० वर्षके बूढ़े आदमी हैं। खाना-तलाशी लेनेपर आपत्ति करनेके कारण उन्हें जिस तरहसे दण्डित किया जा रहा है, वह निश्चय ही अमानुषिक है और उस "कानून तथा व्यवस्था" के हकमें भी इसे उचित नहीं ठहराया जा सकता जिसके लिए सरकार इतनी अधिक उत्कण्ठा व्यक्त करती रहती है। अपने पास आये एक पत्रसे मैं यहाँ एक उद्धरण दे रहा हूँ :

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ९-२-१९२२ का उप-शीर्षक "साबरमती जेलमें"।

> श्री जयरामदास दुबले हो गये हैं। जेलोंके महानिरीक्षक (इंस्पेक्टर जनरल ऑफ प्रिजंस)ने उन्हें 'टाइम्स ऑफ इंडिया' और 'सिन्ध आब्जर्वर' पढ़नेकी अनुमति दे दी थी, किन्तु बम्बई सरकारने एक आदेश द्वारा इन समाचार-पत्रोंका उनके पास भेजा जाना बन्द कर दिया है। महानिरीक्षकने उन्हें बाहरसे पुस्तकें मँगाने और दस बजे राततक लैम्पका इस्तेमाल करनेकी अनुमति भी प्रदान की थी। किन्तु उच्च अधिकारियोंने इसे भी बन्द कर दिया है। हालमें जारी किये गये सरकारी आदेश इस आशयके हैं कि राजनैतिक बन्दियोंको किसी प्रकारकी रियायतें न दी जायें और उनके सम्बन्धमें भी दैनिक तलाशीका नियम बरता जाये। मौलाना हसन अहमद और दो अन्य कैदियोंने भी तलाशी देनेसे इनकार कर दिया, इसलिए उन सबको सजाके रूपमें रातमें हथकड़ियाँ पहना दी गईं। यह सजा तीन दिनतक दी जानी है। अगर फिर भी वे न मानें तो अन्य सजाएँ भी दी जायेंगी। उन्हें यदि कोड़े भी लगाये जायें तो आश्चर्यकी बात नहीं होगी। हथकड़ियोंकी वजहसे वे रातमें ठीक तरहसे सो नहीं पाते और रातको पेशाब वगैरहकी हाजत रफा नहीं कर सकते। दिनमें उन्हें काममें लगाया जाता है। हथकड़ियोंकी वजहसे जो शामके ६ बजेसे सुबह ६ बजेतक हाथोंमें कसी रहती हैं, मौलाना हसन अहमद अपनी नमाज नहीं पढ़ पाते। शुरूमें श्री जयरामदासको जूते पहननेकी इजाजत दी गई थी, परन्तु यह भी निषिद्ध कर दिया गया है।

यदि सरकारमें हिम्मत हो तो इन गम्भीर आरोपोंका खण्डन करे।

कांग्रेसके दफ्तर गैरकानूनी

फरीदपुर कांग्रेसके मन्त्रीने जो पत्र भेजा है उससे स्थिति स्वयं ही स्पष्ट हो जाती है।[1] जब इस पत्रमें वर्णित ढंगसे लोगोंपर अत्याचार किया जा रहा हो तब उन्हें यह बताना कि उन्हें क्या करना चाहिए, आसान काम नहीं है। यहाँ सबसे बड़ी बात है कि लोग हिम्मत न हारें। मुमकिन है कि मकान-मालिक इस नोटिससे डर जायें और हमें दफ्तर खोलनेके लिए अपने मकान किरायेपर न उठायें। तो इस दशामें जबतक हम जेलके बाहर हैं तबतक खुली जगहोंमें दफ्तर चलायें। यदि वे हम सब लोगोंको जेलमें ले जायें और एक ही जगह रखें तो हम वहीं आपसमें बातचीत और सलाह-मशविरा किया करें और जैसा कि हमारे साथी आगरा जेलमें कर रहे हैं, उसी तरह हम भी वहाँ चरखा चलायें, मिली-जुली प्रार्थना-सभाएँ करें और उनमें सभी धर्मोंके भजन गायें, और जिस हदतक जेलके नियमोंके अन्तर्गत सम्भव हो, उस हदतक मिल-जुलकर दूसरे काम करें, और इस प्रकार जेलोंमें ही

१. उक्त पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें बताया गया था कि कांग्रेस दफ्तर किस तरह तोड़े गये, स्वयंसेवक कैसे पीटे गये और किस प्रकार मकान-मालिकोंसे यह कहा गया कि अवैध सभाओं या कार्यालयोंके लिए वे अपने मकान न दें।

स्वराज्यका निर्माण करें। जब जेलके अधिकारी हमें मारते-मारते थक जायेंगे तब निश्चय ही वे हमपर गोलियाँ चलाना शुरू करेंगे और जब वे ऐसा करें तो हम उससे पस्तहिम्मत न हों बल्कि कह सकें, 'नजर सामने', बस, तभी स्वराज्य स्थापित हुआ रखा है, क्योंकि तब हम कष्टसहनकी असीम क्षमता प्राप्त कर चुकेंगे।

"जैसा कि दूसरे सब देशोंमें"

आगे हमें जिस भीषण परिस्थितिका सामना करना पड़ सकता है, उसका उक्त चित्रण मुझे इसलिए करना पड़ा है क्योंकि गैरकानूनी दमनके जो आरोप मैंने सरकार-पर लगाये थे, उनसे जहाँ वाइसराय महोदयने साफ इनकार कर दिया था वहीं सर विलियम विन्सेंटने सरकारी दमन सम्बन्धी मेरे लगभग सभी आरोपोंका उत्तर देते हुए दमनकी कार्रवाइयोंको उचित ठहराया है। पहले सरकार ऐसे तथ्योंको बिलकुल गलत बता दिया करती थी जिनसे उसकी स्थिति अटपटी हो जाती थी। लेकिन सर विलियमने जो-कुछ कहा है उससे स्पष्ट है कि सरकार अब झूठे सौजन्यके इस जामेको भी उतार फेंकना जरूरी समझने लगी है। जिस साहसके साथ अब लोग हर अत्याचारका भण्डाफोड़ करने लगे हैं उसे देखते चूँकि सरकारके लिए तथ्यों-पर पर्दा डालना असम्भव हो गया है, इसलिए सरकारने अपने अत्याचारोंको उचित ठहरानेकी दुस्साहसपूर्ण नीति अपनाई है। मालूम होता है कि सर विलियम विधान सभाके सदस्योंको खास तौरपर मूर्ख समझते हैं। पहले तो उन्होंने उनके सामने आम तौरपर उन बातोंसे इनकार किया और कहा कि यह विधान सभाके अधिकारकी बात नहीं कि प्रान्तीय शासनकी बातोंपर विचार किया जाये। फिर उन्होंने गम्भीरतम आरोपोंका भी बचाव इन शब्दोंमें किया है:

> **दो खास इलजाम ऐसे हैं जिनकी ओर मुझे आपका ध्यान अवश्य आकर्षित करना चाहिए। एकका सम्बन्ध गैरकानूनी सभा-समितियोंको बलपूर्वक भंग करनेसे है, और मैं आपसे यह साफ तौरपर कह देना चाहता हूँ कि सरकारका इरादा यह है कि जहाँ-कहीं अधिकृत सरकारी अफसरों द्वारा गैर-कानूनी सभाओंको भंग करनेका आदेश दिया जाये और वे भंग न की जायें तो आवश्यकतानुसार उन्हें बलपूर्वक भंग कर दिया जाये जैसा कि दूसरे तमाम मुल्कोंमें होता है। ऐसी दशामें बलप्रयोग ही एकमात्र इलाज है। दूसरे यह कि श्री गांधीने जो अपने इस वक्तव्यमें रातको ली जानेवाली तलाशियों और गिरफ्तारियोंकी बात उठाई है उसकी ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया गया है। भारत सरकार ऐसा कोई आश्वासन नहीं देगी कि इस सम्बन्धमें जहाँ-कहीं आवश्यक होगा, वहाँ दिनको या रातके समय तलाशियाँ नहीं ली जायेंगी या गिरफ्तारियाँ नहीं की जायेंगी।**

यह जवाब काफी खरा जवाब है। इससे कोई बहुत फर्क नहीं पड़ता कि निहत्थे लोगोंपर बलप्रयोग करना और आधी रातको घरोंमें घुस जाना आदि बातें मामूली कार्रवाईके नामपर की जाती हैं। इससे तो केवल इस आरोपकी पुष्टि ही होती है

कि यह सरकार सामान्यतया खराब और असह्य है। यह खुली स्वीकृति तो आवश्यक ही थी। क्योंकि अब लोगोंके दिलोंसे जेलोंका डर तो दूर हो ही चुका है। लोगोंको भयभीत करनेका दूसरा साधन हुआ शारीरिक दण्ड और खुल्लमखुल्ला लूटपाट, जिससे लोग यह समझ लें कि सत्ताधारियोंकी इच्छाके आगे सिर न झुकानेका क्या फल हो सकता है। इसलिए यही उम्मीद की जा सकती है कि अब शारीरिक दण्ड और रातके धावे पहलेकी अपेक्षा अधिक ही होंगे, कम नहीं। जब हम इन बातोंको सामान्य मानकर इनके आदी हो जायेंगे तब सरकारके लिए इसके बादकी कुदरती सीढ़ी है दिन-रात गोलियाँ बरसाना; और कुछ समयसे मैं असहयोगियोंको इसी बातके लिए तैयार कर रहा हूँ कि वे उस अन्तिम पारितोषिककी आशामें रहें जो आजादीको चाहनेवाले लोगोंके ही लिए सुरक्षित रखा जाता है। स्वेच्छासे खुशी-खुशी प्राण देना मुक्ति पाना है। हिन्दू मतके अनुसार तो स्वतन्त्रताका सर्वोपरि स्वरूप अर्थात् उसी अवस्थामें सम्भव है कि जब मनुष्य स्वेच्छापूर्वक अपने शरीरको अर्पण कर दे और शारीरिक आवश्यकताओंके विषयमें बिलकुल उदासीन हो जाये। अनुशासित ढंगकी राजनैतिक स्वतन्त्रता उस उच्चतर स्वतन्त्रताकी पूर्वपीठिका मात्र है। अतएव यह ठीक ही है कि हम अपनी समस्त मिल्कियत यहाँतक कि अपना शरीर भी अपनी राष्ट्रीय स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए स्वेच्छापूर्वक अर्पित कर दें।

सर विलियम मारपीट और लूटपाटकी कार्रवाइयोंका बचाव यह कहकर पेश करते हैं कि "दूसरे सभी देशोंमें ऐसा ही किया जाता है।" पर मैं कहता हूँ कि बात हरगिज ऐसी नहीं है। दूसरे देशोंमें शान्तिपूर्ण सभाएँ, फिर चाहे वे कितनी ही गैरकानूनी क्यों न हों, कभी बलपूर्वक भंग नहीं की जातीं और न भारतमें ही इससे पहले कभी की गईं। ऐसे मौकोंपर तो सभाओंके संचालक और यदि आवश्यकता हुई तो श्रोतागण भी तलब किये जाते हैं और वे जेल पहुँचा दिये जाते हैं। सभ्य सरकार कहलानेके लिए पहला काम यह होना चाहिए कि शारीरिक दण्डकी प्रथा बिलकुल उठा दी जाये। लोग इस बातको याद रखें कि ये सार्वजनिक सभाएँ हिंसा कराने अथवा उसके बारेमें लोगोंमें प्रचार करनेके लिए नहीं की जातीं हैं, बल्कि जनताके बहुमूल्य अधिकारकी परीक्षा करनेके लिए की जाती हैं। वक्ता और दर्शक लोग गिरफ्तार भले ही कर लिये जायें; पर उनपर हमला तो हरगिज न होना चाहिए; न वे पकड़-पकड़ कर घसीटे ही जाने चाहिए।

सर विलियमको अपनी निष्ठुर स्वीकृतिपर मानो शर्म महसूस हुई, इसलिए उन्होंने अपनी निर्लज्ज सफाईके अन्तमें, यह सिद्ध करनेके लिए कि अहिंसाकी प्रतिज्ञा करनेवाले सब स्वयंसेवक भी शान्तिमय नहीं रहे, अकारण ही गोरखपुरकी दुर्घटनाको घसीटा है। चौरीचौराके लोगोंका पाशविक व्यवहार किसी तरह भी उचित नहीं ठहराया जा सकता। पर पता नहीं, उसमें स्वयंसेवक थे भी या नहीं। जिन स्वयंसेवकोंने हिंसापूर्ण कृत्य किये उन्हें शौकसे सजा दीजिए; पर भीड़के इस प्रकारके गलत आचरणके कारण निरपराध और उपद्रवोंसे दूर रहनेवाले लोगोंपर बलप्रयोग करना जायज कैसे हो सकता है?

लेकिन असहयोगियोंको सरकारकी ऐसी गैरकानूनी हरकतोंसे कुपित न होना चाहिए। उन्हें धैर्यके साथ कष्टसहन करते हुए उसे परास्त करना है। उनके मनमें 'बदले'का विचारतक न आना चाहिए। मैं यहाँ प्रति सप्ताह सरकारी दमनकी जो घटनाएँ इकट्ठी कर देता हूँ उसका उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि सरकारमें बलप्रयोगकी असीम क्षमता है। इसलिए सरकार जितना ही अधिक बलप्रयोग करे उतना ही अधिक हम उसे सहन करनेकी शक्ति अपनेमें लानेका प्रयत्न करें। तभी हम पशुबलपर आधारित सरकारके स्थानपर लोकमतपर आधारित सरकारकी स्थापना कर सकेंगे। हाँ, बलका प्रयोग तो लोक-संचालित सरकार होनेपर भी करना पड़ेगा; पर उस अवस्थामें उसका प्रयोग जैसा कि दूसरे देशोंमें होता है सिर्फ उन्हीं लोगोंपर होगा जो लोकमतका विरोध बलके द्वारा करनेकी कोशिश करेंगे। श्री मॉन्टेग्यु यह कहकर कि तमाम यूरोपकी सरकारें पशुबलपर ही आधारित हैं, नरम दलवालोंको बिलकुल गलत रास्तेपर ले गये हैं। लन्दन या पेरिसमें शान्तिमय जनसमूहको, चाहे वह गैरकानूनी तौरपर ही एकत्र हुआ हो, बलपूर्बक तितर-बितर कर देना असम्भव होगा। हाँ, यदि वह जनसमूह बलप्रयोग करने या उसका प्रचार करनेके लिए एकत्र हुआ हो तो बात दूसरी है।

क्या-क्या स्थगित?

लेकिन चौरीचौराने असहयोगियोंके सामने एक नया ही कर्त्तव्य उपस्थित कर दिया है। कार्य-समितिकी एक बैठकमें यह प्रस्ताव[1] स्वीकार किया गया है कि असहयोगी लोग फिलहाल सविनय कानून-भंगकी तमाम हलचलें, क्या सामूहिक और क्या वैयक्तिक, स्थगित कर दें। जबतक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक नहीं हो जाती सभी तरहकी सविनय अवज्ञा, आक्रामक हो या प्रतिरक्षात्मक, स्थगित रहनी चाहिए। मैं आशा कर रहा हूँ कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी कार्य-समितिके प्रस्तावको स्वीकार कर लेगी। मेरी रायमें तो सामूहिक कानून-भंग बहुत समयतक — कमसे-कम इस सालके अन्ततक — बन्द रहना चाहिए। यह साफ जाहिर है कि हम अभीतक जन-समाजपर आवश्यक नियन्त्रण स्थापित नहीं कर पाये हैं। वैयक्तिक आक्रामक सविनय अवज्ञा भी कुछ समयके लिए बन्द रहनी चाहिए। लेकिन कांग्रेसकी दूसरी तमाम मामूली हलचलोंके बारेमें, जो कि निषिद्ध भले ही हों पर हमारे उद्देश्य-साधनके लिए आवश्यक हैं, कार्य-समितिने विचार नहीं किया है। वे पूर्ववत् चलती रहें, भले ही सरकार उन्हें निषिद्ध कर दे। इस प्रकार हमें अपनी प्रतिज्ञाके यथावत् पालनकी खातिर स्वयंसेवकोंकी भरती अवश्य करनी चाहिए। यह भरती सरकारी हुक्मोंको भंग करनेके लिए नहीं बल्कि कांग्रेसके वास्तविक कार्यके लिए करनी चाहिए। इसी तरह हमें खादीका प्रचार भी बराबर करते रहना चाहिए। कार्य-समितिने विदेशी कपड़ोंकी दूकानोंपर धरना देना भी फिलहाल बन्द कर रखा है। उसने सिर्फ शराबकी दूकानोंपर ही धरना देनेकी इजाजत दी है और सो भी अच्छे चरित्रवाले लोगों द्वारा। अतएव मैं आशा करता हूँ कि तमाम कार्यकर्त्ता सच्चे दिलसे कार्य-समितिके प्रस्तावोंका

१. देखिए "प्रस्ताव: बारडोली कार्य-समितिके", १२-२-१९२२।

अनुसरण करेंगे और उत्साहके साथ उसके बताये रचनात्मक कार्योंमें लग जायेंगे। इस रचनात्मक कार्यक्रमके द्वारा तमाम दलोंमें जिनका लक्ष्य एक ही है — यानी खिलाफत, पंजाब और स्वराज्य — एकता हो जानी चाहिए।

एक मूक कार्यकर्त्ता

आन्ध्र देशका एक सबसे अच्छा मौन कार्यकर्त्ता चल बसा। के० हनुमन्तरावने मसूलीपट्टमकी महान् शैक्षणिक संस्थाके[1] लिए, जो आन्ध्र देशका गौरव है, बहुत परिश्रम किया। वह उसीके लिए जिये और उसीके लिए मरे। डा० पट्टाभि सीतारामैयाने[2] उनके बारेमें यह मार्मिक पत्र[3] लिखा है: स्वर्गीय हनुमन्तरावके मित्रोंने उनके एक स्मारकके हेतु एक लाख रुपयेकी अपील प्रकाशित करनेमें देर नहीं की है। इस धनको व्यर्थके दिखावेमें इस्तेमाल करनेका इरादा नहीं है। यह रकम तो उस संस्थाकी आर्थिक स्थिति दृढ़ बनानेमें लगाई जायेगी, जिसके लिए हनुमन्तरावने रात-दिन एक कर दिया था। मैं इस अपीलकी सिफारिश जोरोंके साथ न केवल प्रत्येक आन्ध्र-वासी देशभक्तसे करता हूँ वरन् उन अन्य सब लोगोंसे भी करता हूँ जो हनुमन्तराव-को जानते थे या उनकी महान् संस्थामें कभी गये थे।

आगा मुहम्मद सफदर

यद्यपि लाला लाजपतरायके उत्तराधिकारी आगा मुहम्मद सफदर एक बार गिरफ्तार हुए, इजलासमें उनपर मुकदमा चला और सियालकोटके मजिस्ट्रेटने उन्हें रिहा भी किया, लेकिन यह उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि वे अधिक दिनोंतक जेलके बाहर रह सकेंगे। अब वे फिरसे गिरफ्तार कर लिये गये हैं और उनपर लाहौरमें अभियोग चलाया जायेगा। सियालकोटसे कोई १८ मीलकी दूरीपर स्थित धरताल नामक स्थानपर जहाँ वे एक सभामें व्याख्यान देनेवाले ही थे कि गिरफ्तार कर लिये गये। वहाँ एक हजारसे अधिक गांववाले उपस्थित थे। हिंसा जरा भी नहीं की गई थी। उनके पकड़े जानेके बाद आगा साहबके साथियोंने सभाका काम पूर्ववत् चलाया, मानो कहीं कुछ हुआ ही न हो।

सिख-गौरव

सिखोंमें जो जागृति दीख पड़ रही है वह वास्तवमें आश्चर्यजनक लगती है। अकाली दल अहिंसाका एक प्रभावशाली दल बन गया है, यही नहीं, वह श्रेष्ठ आचार और व्यवहारका अनुकरणीय नमूना पेश कर रहा है। गुरुद्वारा समिति अब पण्डित

१. आन्ध्र जातीय कलाशाला।

२. १८८०-१९५९; चिकित्सक, राजनीतिज्ञ और लेखक; **जन्मभूमि**के सम्पादक; १९४९ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष; मध्यप्रदेशके राज्यपाल।

३. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है; इसमें हनुमन्तरावकी मृत्युका हवाला दिया गया था और जिस संस्थाके लिए उन्होंने काम किया था उसके लिए कोषकी अपील की गई थी।

दीनानाथ, जो एक गैर-सिख हैं और चावियोंवाले मामलेमें[१] गिरफ्तार किये गये थे, की रिहाईपर जोर दे रही है। समितिने एक साहसपूर्ण नोटिस जारी किया है जिसे मैं प्रकाशित कर रहा हूँ।[२]

अहमदाबाद और सूरत

अहमदाबाद और सूरतकी नगरपालिकाओंको सरकारने अपने हाथमें ले लिया है[३]—इसलिए नहीं कि वे अपना काम अच्छी तरह नहीं चला पाती थीं, बल्कि इसलिए कि बहुत ही अच्छी तरह चलाती थीं और वे अपना काम बहुत आजादीके साथ करती थीं। ये दो नगरपालिकाएँ तथा नडियादकी नगरपालिका बड़े व्यवस्थित ढंगसे, वीरता और शानके साथ सरकारकी बेजा दस्तंदाजी और अनुचित नियन्त्रणके विरुद्ध संघर्ष करती रही हैं। इन नगरपालिकाओंका अपराध यह था कि उन्होंने प्रारम्भिक पाठशालाओंको सरकारके अंकुशसे मुक्त कर दिया है। उन्होंने सरकारी सहायता लेना बन्द कर दिया था। यह खयालमें रखनेकी बात है कि इन नगरपालिकाओंमें निर्वाचित सदस्योंका बहुमत था, और वे करदाताओंसे हमेशा अच्छी तरह सलाह-मशविरा करके काम करते रहे हैं। पर स्पष्ट है कि सरकार इसी बातको नहीं चाहती क्योंकि इससे लोकमत प्रभावकारी होता है।

नगरपालिकाके पार्षदों और मतदाताओंका कर्त्तव्य बहुत सरल है। वे अब भी प्रारम्भिक पाठशालाओंपर अपना कब्जा बनाये रखें। करदाता लोग उस नामजद समितिको कर न दें जो सरकार नागरिकोंपर थोपे लेकिन उन्हें अपने बच्चोंको राष्ट्रीय शिक्षा दिलानेके लिए रुपया अवश्य देना चाहिए। पार्षदगण मतैक्यके साथ मिल कर काम करें और जहाँतक व्यवहार्य हो, वे इस तरह काम करें गोया वह राष्ट्रीय नगरपालिका ही है। मेरी रायमें तो शायद ही कोई ऐसा महकमा होगा जिसे चलानेमें शिक्षित और प्रबुद्ध नागरिकोंको सरकारी सहायताकी जरूरत हो। ऐसा कोई भी कारण नहीं है जिससे अहमदाबाद, सूरत और नडियादके लोग सरकारका मुँह ताके बिना अपने शहरोंकी सड़कें व नालियाँ साफ न कर सकें, रोशनीका प्रबन्ध न कर सकें, अपने ही बच्चोंकी शिक्षाकी व्यवस्था न कर सकें, रोगियोंका इलाज न कर सकें और लोगोंको पानी न पहुँचा सकें। हाँ, पुलिसकी सत्ता उनके पास नहीं है। उन्हें सिर्फ एक ही बातमें सरकारकी सहायताकी जरूरत होगी — कर वसूल करनेमें। सो सरकारी ताकतकी जगहपर लोकमतकी ताकत रख दीजिए; बस आपको कर वसूल करनेकी मंजूरी मिल गई। अहमदाबादमें सत्ताके बलपर जितना कर वसूला जाता है, उससे ज्यादा धन तो स्वेच्छापूर्वक दिये गये चन्दोंमें जमा हो जाता है। इन जाग्रत स्थानोंमें नामजद समितियों और लोकनिर्वाचित प्रतिनिधियोंका द्वन्द्व-युद्ध जनता बड़े चावके साथ देखेगी।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-१-१९२२ का उप-शीर्षक "गुरुद्वारा आन्दोलन"।
२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।
३. फरवरीके शुरूमें।

न छप सका

दिल्ली जेलमें होनेवाले बरतावके बारेमें एक महत्त्वपूर्ण पत्र, जो इन पृष्ठोंमें दी गई बातोंकी पुष्टि करता है, अधिक सामग्री आ जानेके कारण, प्रकाशित नहीं किया जा सका है। इसी प्रकार अन्य महत्त्वपूर्ण चीजें भी प्रकाशित नहीं की जा रही हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-२-१९२२

१७४. चौरीचौराका हत्याकाण्ड

ईश्वरकी मुझपर असीम कृपा रही है। उसने तीसरी बार मुझे चेतावनी दी है कि अभी भारतमें वैसी सत्यपरायणता और अहिंसाका वातावरण स्थापित नहीं हो पाया है जैसा कि आवश्यक है। ऐसे और केवल ऐसे ही वातावरणमें सविनय कही जा सके, ऐसी सामूहिक अवज्ञा करना उचित माना जा सकता है। उसे सविनय अर्थात् नम्रतापूर्ण, सत्यमूलक, विनीत, सजग तथा स्वेच्छाकृत, फिर भी प्रिय कहा जा सकता है और वह अपराधपूर्ण तथा घृणित कभी भी नहीं हो सकती।

उसने मुझे १९१९ में, जब रौलट अधिनियम विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ किया गया था, चेतावनी दी। अहमदाबाद, वीरमगाँव और खेड़ामें गलतियाँ हुईं; अमृतसर और कसूरमें भी गलतियाँ हुईं। मैंने अपने कदम वापस ले लिये, इसे अपनी हिमालय-जैसी भारी भूल कहा;[1] ईश्वर और मानवके सामने अपनी पराजय स्वीकार की तथा न केवल सामूहिक सविनय अवज्ञाको बल्कि अपनी वैयक्तिक सविनय अवज्ञाको भी, जिसे मैं जानता हूँ कि विनयपूर्ण एवं अहिंसात्मक ही रखनेका इरादा था, स्थगित कर दिया।

दूसरी बार बम्बईकी घटनाओंके जरिये ईश्वरने मुझे भयानक चेतावनी दी। उसने १७ नवम्बरको बम्बईकी भीड़की करतूतें मुझे प्रत्यक्ष दिखाईं। भीड़ने सोचा कि वह असहयोगकी भलाई कर रही है। बारडोलीमें सामूहिक सविनय अवज्ञा तुरन्त प्रारम्भ होनेवाली थी। मैंने उसे बन्द करनेका अपना इरादा घोषित किया। इस बार १९१९ से कहीं अधिक अपमान सहना पड़ा। किन्तु इससे मेरा भला ही हुआ। मेरा विश्वास है कि आन्दोलन स्थगित करनेसे राष्ट्रको लाभ ही हुआ। इससे ज्ञात हुआ कि भारत सत्य और अहिंसाका पोषक है।

किन्तु अभी मेरे लिए अपमानका सबसे कड़वा घूँट पीना शेष था। मद्रासने मुझे चेतावनी भी दी, किन्तु मैंने उधर ध्यान नहीं दिया। पर ईश्वरने चौरीचौराके जरिये मुझे स्पष्ट बताया। मुझे मालूम है कि पुलिसके जिन सिपाहियोंकी बर्बरतापूर्वक बोटी-बोटी काट डाली गयी, उन्होंने बहुत उत्तेजनात्मक कार्रवाई की थी।

१. देखिए खण्ड १५, पृष्ठ ४५०-५३।

उन्होंने इन्स्पेक्टर द्वारा जनताको दिया गया यह वचन भी भंग किया कि उसे तंग नहीं किया जायेगा। जब जलूस निकल गया तब पुलिसके सिपाहियोंने पीछे छूटे हुए लोगोंको तंग किया और उन्हें गालियाँ दीं। लोग सहायताके लिए चिल्लाये। भीड़ वापस आ गई। पुलिसके सिपाहियोंने गोलियाँ दागीं। उनके पास जो थोड़ी-सी गोलियाँ थीं वे समाप्त हो गईं। वे सुरक्षाके लिए थानेमें वापस चले गये। इसपर भीड़ने, जैसा कि मेरे संवाददाताका कहना है, थानेमें आग लगा दी। अब सिपाहियोंको, जिन्होंने अपनेको अन्दर बन्द कर रखा था, अपना जीवन बचानेके लिए बाहर आना पड़ा, और जब वे बाहर आये, उन्हें मारकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया और उनके खण्ड-खण्ड हुए शरीरावशेषको आगकी प्रचण्ड लपटोंमें डाल दिया गया।

यह दावा किया जाता है कि इस पाशविक कृत्यमें किसी असहयोगीका कोई हाथ नहीं है और न केवल उस समय भीड़को उत्तेजित करनेवाली कार्रवाई की गई थी, बल्कि उसे जिलेमें पुलिस द्वारा किये गये भीषण अत्याचारोंका भी पता था। किन्तु किसी प्रकारकी भी उत्तेजना ऐसे व्यक्तियोंकी पाशविक हत्याका औचित्य सिद्ध नहीं कर सकती, जो बिल्कुल असहाय हो गये थे और जिन्होंने दरअसल अपनेको भीड़की दयापर छोड़ दिया था। और जब भारत अहिंसक होनेका दावा करता है और अहिंसक तरीकोंसे स्वतन्त्रताका सिंहासन प्राप्त करनेकी आशा रखता है तब भयंकर उत्तेजनाके बावजूद भीड़ द्वारा हिंसाको अपनाना अशुभ बात ही है। मान लीजिए, ईश्वर बारडोलीकी 'अहिंसक' अवज्ञाको सफल बना देता और सरकार विजेताओंके पक्षमें गद्दी छोड़ देती, उस दशामें उन उपद्रवी तत्त्वोंपर कौन नियन्त्रण रखता जो पर्याप्त उत्तेजनाके कारण प्रस्तुत होनेपर पाशविक कृत्य करते हों? अहिंसक तरीकोंसे स्वराज्य प्राप्त करनेमें यह बात पहलेसे ही शामिल है कि देशके हिंसक तत्त्वोंपर अहिंसा द्वारा काबू पा लिया गया है। अहिंसक असहयोगी तभी सफलता प्राप्त कर सकते हैं जब वे भारतके हुल्लड़बाजोंपर काबू पा लें; दूसरे शब्दोंमें जब हुल्लड़बाज लोग भी देशप्रेम या धर्मके कारण कमसे-कम तबतक के लिए हिंसासे दूर रहना सीख लें जबतक कि असहयोग आन्दोलन चल रहा है। इसलिए चौरीचौराकी दुर्घटनाने मुझे पूर्णरूपसे सजग कर दिया है।

किन्तु शैतानकी आवाज बोली, "वाइसरायको भेजे गये आपके घोषणापत्र तथा उनके उत्तरमें लिखे गये आपके प्रत्युत्तरका क्या होगा?" अपमानका यह घूंट सबसे अधिक कड़वा था। "बड़े जोश-खरोशके साथ सरकारको धमकी देकर तथा बारडोलीके लोगोंको वचन देकर दूसरे ही क्षण पीछे हट जाना निश्चित रूपसे कायरता है।" इस प्रकार शैतान आमन्त्रित कर रहा था कि सत्यसे इनकार कर दो, इस तरह धर्म तथा स्वयं ईश्वरको अस्वीकार कर दो। मैंने अपनी शंकाएँ तथा कठिनाइयाँ कार्य-समिति तथा उन अन्य साथियोंके सामने रखीं, जिन्हें मैंने अपने नजदीक पाया। पहले तो वे मुझसे सहमत नहीं हुए। उनमें से कुछ तो शायद अब भी मुझसे सहमत नहीं हैं, किन्तु जैसे विचारशील और क्षमाशील साथी प्राप्त करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है वैसा शायद ही कभी किसीको हुआ हो। उन्होंने मेरी कठिनाई समझ ली और मेरे

तर्कोंको धैर्यके साथ सुना। उसका परिणाम कार्य-समितिके प्रस्तावोंके[1] रूपमें जनताके सामने है। प्रायः सम्पूर्ण आक्रामक कार्यक्रमसे बिलकुल पीछे हट जाना राजनीतिक दृष्टिसे भले ही गलत और अबुद्धिमत्ताका काम हो, किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह धार्मिक दृष्टिसे बिलकुल सही है, और मैं सन्देह करनेवालों को विश्वास दिलानेका साहस करता हूँ कि मेरे अपमानसे तथा मेरे द्वारा भूल स्वीकार किये जानेसे देशको लाभ ही होगा।

मैं यदि किसी सद्गुणका दावा करना चाहता हूँ तो वह सत्य और अहिंसा है। मैं यह दावा नहीं करता कि मुझमें अतिमानवीय शक्ति है। मैं वैसी शक्ति पाना भी नहीं चाहता। मुझमें भी वैसा ही कलुषित हाड़-मांस है, जैसा कि मेरे किसी कमजोरसे-कमजोर मानव-बन्धुमें। इसलिए मुझसे भी गलतियाँ होनेकी उतनी ही सम्भावना है जितनी किसी औरसे। सेवाके क्षेत्रमें भी मेरी बहुत-सी मजबूरियाँ हैं, किन्तु उनके अपूर्ण होनेपर भी ईश्वरने उन्हें अबतक सफल बनाया है।

गलती स्वीकार करना झाड़के समान है, जो गन्दगीको हटाकर सतहको साफ़ कर देती है। गलती स्वीकार कर लेनेसे मैं अपनेको अधिक शक्तिशाली अनुभव करता हूँ और पीछे हटनेपर भी हमारे उद्देश्यमें अवश्यमेव प्रगति होगी। हठपूर्वक सीधी राह छोड़कर चलनेसे मनुष्य कभी अपने उद्दिष्ट स्थानतक नहीं पहुँचा है।

यह कहा गया है कि चौरीचौराका असर बारडोलीपर नहीं पड़ सकता। यह तर्क दिया जाता है कि बारडोली यदि कमजोर है और यदि वह चौरीचौरासे प्रभावित होकर हिंसापर उतर आये तभी खतरेकी बात है। इस बारेमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं है। मेरे विचारमें बारडोलीके लोग भारतमें सबसे अधिक शान्तिप्रिय हैं। किन्तु बारडोली भारतका एक अत्यन्त छोटा भाग है। उसके प्रयत्न तबतक सफल नहीं हो सकते जबतक कि उसे अन्य भागोंसे पूरा सहयोग नहीं मिलता। बारडोलीकी अवज्ञा तभी सविनय होगी जब कि भारतके अन्य भाग अहिंसक रहें। जिस प्रकार दूधसे भरे बर्तनमें संखियेका एक छोटा-सा कण भी दूधको पीने लायक नहीं रहने देता, इसी प्रकार चौरीचौराका घातक विष मिलनेसे बारडोलीकी विनय भी अस्वीकार्य हो जायेगी। चौरीचौरा भी उसी प्रकार भारतका प्रतिनिधित्व करता है, जिस प्रकार कि बारडोली करता है।

आखिरकार चौरीचौरा भी तो हिंसावृत्तिका एक उग्र लक्षण ही है। मेरे मनमें कभी यह खयाल नहीं आया कि जिन स्थानोंमें दमनचक्र चल रहा है वहाँ मानसिक या शारीरिक हिंसा नहीं होती। जो खयाल आया है वह यह कि दमनग्रस्त क्षेत्रोंमें जो भयानक दमन किया जा रहा है, उसके मुकाबले जनता द्वारा की जानेवाली हिंसा नगण्य है। मैं अब भी ऐसा मानता हूँ और 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंसे भी यह बात भली-भाँति सिद्ध हो जाती है। निषिद्ध क्षेत्रोंमें दृढ़ निश्चयके साथ सभा करनेको मैं हिंसा नहीं कहता। जिस हिंसाका मैं उल्लेख कर रहा हूँ उसका मतलब यदा-कदा

१. कार्य-समितिकी बैठक बारडोलीमें ११ और १२ फरवरी, १९२२ को हुई थी। उसमें ये प्रस्ताव पास हुए थे।

ईंट-पत्थर फेंकने या धमकियाँ देने और बल-प्रयोगसे है। वस्तुतः सविनय अवज्ञामें उत्तेजना होनी ही नहीं चाहिए। सविनय अवज्ञा तो चुपचाप कष्ट-सहनकी तैयारी मात्र है। उसका प्रभाव आश्चर्यजनक होता है, यद्यपि वह दिखाई नहीं देता और धीरे-धीरे होता है। किन्तु मेरा विचार था कि थोड़ी मात्रामें उत्तेजना तो अपरिहार्य है; अनिच्छासे की गई कुछ हिंसा भी क्षम्य है, अर्थात् किसी हदतक अपूर्ण परिस्थितियोंमें भी सविनय अवज्ञाको मैं असम्भव नहीं मानता था। पूर्ण परिस्थितियोंमें तो यदि अवज्ञा सविनय हो तो वह महसूस भी नहीं होती। किन्तु काफी-कुछ प्रतिकूल परिस्थितियोंके अन्तर्गत वर्तमान आन्दोलनको चलाना वस्तुतः एक खतरनाक प्रयोग है।

चौरीचौराकी दुःखद घटना दरअसल वस्तुस्थितिकी ओर संकेत करनेवाली घटना है। यह बताती है कि यदि कड़ी सावधानी न बरती गई तो भारत आसानीसे किसी ओर जा सकता है। यदि हम हिंसामें से अहिंसाका विकास नहीं कर सकते तो यह स्पष्ट है कि हमें जल्दीसे अपने कदम पीछे हटा लेने चाहिए और शान्तिका वातावरण पुनः स्थापित करना चाहिए, अपने कार्यक्रमको पुनर्गठित करना चाहिए और तब-तक सामूहिक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेका विचार छोड़ देना चाहिए जबतक कि हमें यह विश्वास न हो जाये कि सामूहिक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेपर तथा सरकारके उकसानेपर भी शान्ति कायम रहेगी। हमें इस तरफसे भी आश्वस्त होना चाहिए कि अनधिकृत लोग सामूहिक सविनय अवज्ञा आरम्भ न करें।

अभी तो स्थिति यह है कि कांग्रेसका संगठन ही अपूर्ण है और उसकी हिदायतोंका पालन अब भी बेदिलीसे किया जाता है। हमने अभीतक प्रत्येक गाँवमें कांग्रेस कमेटियाँ स्थापित नहीं की हैं। जहाँ हमने स्थापित की हैं वहाँ वे हमारी हिदायतोंका पालन पूर्णरूपसे नहीं करतीं। हमारी सूचीमें शायद एक करोड़से अधिक सदस्य नहीं हैं। फरवरीका आधा मास बीत गया है, लेकिन बहुत-से लोगोंने चालू वर्षका चार आने चन्दा अभीतक अदा नहीं किया है। स्वयंसेवकोंके नाम दर्ज करते समय पूरा ध्यान नहीं दिया जाता। वे अपनी प्रतिज्ञाकी सभी शर्तोंका पालन नहीं करते। वे हाथसे कता-बुना खद्दरतक नहीं पहनते। सभी हिन्दू स्वयंसेवकोंने अभीतक अपनेको अस्पृश्यता-के पापसे मुक्त नहीं किया है। उनमें से सभी अबतक हिंसाके दोषसे मुक्त नहीं हुए हैं। उनके जेल जानेसे हम न तो स्वराज्य ही प्राप्त कर सकेंगे, न खिलाफतके पवित्र उद्देश्यको सफल बना सकेंगे और न बेईमान सरकारी नौकरोंका वेतन बन्द करनेकी ही योग्यता प्राप्त कर सकेंगे। हममें से कुछ लोग न चाहते हुए भी गलती कर बैठते हैं, किन्तु कुछ दूसरे लोग तो जान-बूझकर पाप करते हैं। यह जानते हुए भी कि वे न तो अहिंसक रहना चाहते हैं और न रह ही सकते हैं, वे स्वयंसेवक दलमें भरती हो जाते हैं। इस तरह हम जिस प्रकार सरकारको झूठा समझते हैं, उसी प्रकार हम भी झूठे हैं। सत्य और अहिंसाके प्रति केवल मौखिक सम्मान दिखाकर हमें स्वतन्त्रताके साम्राज्यमें प्रवेश करनेका साहस नहीं करना चाहिए।

आगे प्रगतिके लिए यह आवश्यक है कि सामूहिक सविनय अवज्ञाको स्थगित कर दिया जाये और उत्तेजनाको रोका जाये। सच तो यह है कि और अधिक

अधःपतनको रोकनेके लिए भी ऐसा करना अनिवार्य है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आन्दोलनको स्थगित करनेसे प्रत्येक कांग्रेसी स्त्री या पुरुष न केवल अपनेको निराश अनुभव नहीं करेगा, बल्कि यह अनुभव करेगा कि वह अयथार्थता तथा राष्ट्रीय पापके भारसे मुक्त हो गया है।

हमारे अपमान और कथित पराजयपर प्रतिपक्षी गर्व करते रहें। अपनी प्रतिज्ञा भंग करके ईश्वरके प्रति पाप करनेकी अपेक्षा कायर और कमजोर होनेका दोषी होना कहीं अच्छा है। अपने प्रति झूठा सिद्ध होनेकी अपेक्षा संसारकी आँखोंके सामने झूठा सिद्ध होना लाख गुना अच्छा है।

इसलिए सामूहिक सविनय अवज्ञा तथा उन अन्य छोटी-मोटी गति-विधियोंको, जिनसे उत्साह कायम रह सकता था, स्थगित करना ही मेरे प्रायश्चित्तके लिए काफी नहीं है, क्योंकि चौरीचौरामें लोगोंने जो पाशविक हिंसा की है उसका मैं, अनैच्छिक रूपमें ही सही, एक उपकरण रहा हूँ।

मुझे वैयक्तिक रूपसे प्रायश्चित्त करना होगा। मुझे एक ऐसा संवेदनशील उपकरण बनना है जो आसपासके नैतिक वातावरणमें होनेवाले सूक्ष्मतम परिवर्तनको स्पष्ट रूपसे प्रकट कर सके। मेरी प्रार्थनाओंमें उससे कहीं अधिक गहरी सचाई तथा नम्रता होनी चाहिए जितनी कि उनसे अभी प्रकट होती है। और मेरे लिए तो उपवास तथा उसके साथ आवश्यक मानसिक सहयोगके समान सहायक एवं शुद्ध करनेवाला कोई उपाय नहीं है।

मैं जानता हूँ कि मानसिक प्रवृत्ति ही सब-कुछ है। जिस प्रकार प्रार्थना पक्षीकी चहचहाहटके समान केवल यान्त्रिक स्वर-विन्यास हो सकती है, उसी प्रकार उपवास भी शरीरको दिया जानेवाला केवल यान्त्रिक कष्ट हो सकता है। इस प्रकारके यान्त्रिक उपायका वांछित उद्देश्यकी सिद्धिके लिए कोई महत्त्व नहीं है। फिर, जिस प्रकार यान्त्रिक गायनसे कण्ठ सुरीला हो सकता है उसी प्रकार यान्त्रिक उपवास केवल शरीर-को शुद्ध कर सकता है; किन्तु दोनोंमें से अन्तरात्माको कोई भी स्पर्श नहीं करेगा।

किन्तु जब पूर्णतर आत्म-प्रकाशनके लिए तथा शरीरपर आत्माका प्रभुत्व स्थापित करनेके लिए उपवास किया जाता है तब वह सम्बन्धित व्यक्तिके विकासमें अत्यधिक शक्तिशाली सिद्ध होता है। इसलिए गम्भीर चिन्तनके बाद मैंने पाँच दिनके सतत उपवासका व्रत लेनेका निश्चय किया है। इस बीच मैं जलके अतिरिक्त और कुछ नहीं लूँगा। यह रविवारकी[1] शामको प्रारम्भ हुआ है और शुक्रवारकी शामको समाप्त हो जायेगा। कमसे-कम इतना तो मुझे करना ही होगा।

शीघ्र ही अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी जो बैठक[2] होनेवाली है, उसपर मैंने विचार कर लिया है। मैं यह जानता हूँ कि मेरे पाँच दिनके उपवाससे भी मेरे बहुतसे मित्रोंको कितनी अधिक वेदना होगी। किन्तु मैं इस प्रायश्चित्तको और स्थगित नहीं कर सकता और न मैं इसे कम कर सकता हूँ।

१. १२ फरवरी, १९२२।

२. यह २४ और २५ फरवरीको दिल्लीमें हुई थी।

मैं अपने सहयोगियोंसे आग्रह करता हूँ कि वे मेरा अनुकरण न करें। उनके मामलेमें उपवासका कोई कारण नहीं होगा। वे सविनय अवज्ञाके प्रवर्त्तक नहीं हैं। मैं उस शल्यचिकित्सक (सर्जन)की अवांछनीय स्थितिमें हूँ जो निश्चित रूपसे खतरनाक चीर-फाड़के लिए अनाड़ी साबित हुआ हो। मुझे या तो इसे छोड़ देना होगा या अधिक दक्षता प्राप्त करनी होगी। जहाँ व्यक्तिगत प्रायश्चित्त मेरे लिए न केवल आवश्यक, बल्कि अनिवार्य भी है, वहाँ कार्य-समिति द्वारा निर्धारित अनुकरणीय आत्म-संयम धारण करना ही अन्य सभी लोगोंके लिए निश्चित रूपसे काफी प्रायश्चित्त है। यह कोई छोटा प्रायश्चित्त नहीं है। यदि इसे सच्चे हृदयसे किया जाये तो यह उपवाससे कई गुना सच्चा और उपयोगी सिद्ध हो सकता है। मन, कर्म और वचनसे अहिंसाकी प्रतिज्ञाको अधिकाधिक पूरा करने या उस भावनाका व्यापक रूपसे प्रसार करनेसे अधिक मूल्यवान् तथा अधिक फलदायक और क्या हो सकता है? यदि मेरे सभी सहयोगी इस सप्ताह व्यर्थ वाद-विवाद न कर चुपचाप कार्य-समिति द्वारा तैयार किये गये रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करने, जिनके बारेमें स्वराज्य-प्राप्तिके लिए कांग्रेसके सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तको समझनेका भरोसा हो ऐसे लोगोंके नाम कांग्रेसकी सदस्य-सूचीमें दर्ज करने, प्रतिदिन धर्म समझकर निर्धारित समयतक चरखा चलाने, समृद्धि और स्वतन्त्रताके प्रतीकरूप चरखेका प्रत्येक घरमें प्रचार करने, अछूतोंके अभावोंके बारेमें जाननेके लिए उनके घरोंमें जाने, राष्ट्रीय पाठशालाओंमें अछूत बच्चे दाखिल करनेके लिए प्रोत्साहित करने, हर वर्गके स्त्री-पुरुषोंके लिए सामान्य मंच ढूँढ़नेके विशेष उद्देश्यसे सामाजिक संगठन करने, मद्यके अभिशापसे बरबाद घरोंमें जाने तथा राष्ट्रीय पाठशालाओं तथा वास्तविक पंचायतोंको समुचित आधारपर स्थापित करनेमें व्यस्त रहें तो यह देखकर मुझे भोजनसे भी अधिक तृप्ति उपलब्ध होगी। कार्यकर्त्ता उपवास करनेकी अपेक्षा इन गति-विधियोंमें अपनेको व्यस्त रखें तो ज्यादा अच्छा होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि कोई भी व्यक्ति झूठी हमदर्दी दिखानेके लिए अथवा उपवासके आध्यात्मिक मूल्यकी गलत धारणावश उपवास करनेमें मेरा अनुकरण नहीं करेगा।

जहाँतक हो सके सभी तरहके उपवास तथा प्रायश्चित्त गुप्त ही रहने चाहिए। किन्तु मेरा उपवास प्रायश्चित्त और दण्ड दोनों ही है, और दण्ड तो सार्वजनिक रूपसे ही दिया जाता है। यह मेरे लिए तो प्रायश्चित्त है और उन लोगोंके लिए, जिनकी मैं सेवा करनेकी कोशिश करता हूँ तथा जिनके लिए मैं जीना और मरना भी पसन्द करता हूँ, एक दण्ड है। उन्होंने कांग्रेसके कानूनके विरुद्ध अनिच्छापूर्वक पाप किया है; यद्यपि वे केवल हमदर्दी दिखानेवाले थे, कांग्रेससे उनका कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं था। शायद उन्होंने पुलिसके सिपाहियोंको —— अपने देशवासियों तथा साथी मानवोंको —— मेरा नाम लेकर ही बोटी-बोटी काटकर मारा है। अपने प्रियजनोंको प्रेमपूर्वक दण्ड देनेका एकमात्र उपाय स्वयं कष्ट सहन करना है। मैं यह भी नहीं चाहता कि वे गिरफ्तार किये जायें। यह मैं चाह भी नहीं सकता। किन्तु मैं उन्हें यह बताना चाहूँगा कि उनके कांग्रेस-सिद्धान्तको भंग करनेके कारण मुझे कष्ट उठाना होगा। जो लोग अपनेको दोषी अनुभव करते हैं और अब पश्चात्ताप कर रहे हैं, उन्हें मेरी सलाह है

कि वे दण्ड प्राप्त करनेके लिए अपनेको स्वेच्छया सरकारको सौंप दें और स्पष्ट रूपसे अपना अपराध स्वीकार कर लें। मुझे आशा है कि गोरखपुर जिलेके कार्यकर्त्ता अपराधियोंको ढूँढ़ने तथा उन्हें स्वयमेव अपनी गिरफ्तारी करानेके लिए मजबूर करनेके लिए कुछ भी उठा नहीं रखेंगे। किन्तु चाहे हत्यारे मेरी सलाहको स्वीकार करें या न करें, मैं उन्हें यह बताना चाहूँगा कि उन्होंने स्वराज्यके आन्दोलनमें बहुत बड़ा रोड़ा अटकाया है। बारडोलीमें आन्दोलनको स्थगित करनेका कारण बनकर उन्होंने उसी उद्देश्यको हानि पहुँचाई है जिसकी वे शायद सेवा करना चाहते थे। मैं उन्हें यह भी बताना चाहूँगा कि यह आन्दोलन न तो हिंसाको छिपानेके लिए कोई आवरण है और न उसकी पूर्व तैयारी ही। मैं आन्दोलनको हिंसक होने या हिंसाका अग्रदूत बननेसे बचानेके लिए हर हालतमें हर प्रकारका अपमान, हर प्रकारकी यन्त्रणा, पूर्ण बहिष्कार, यहाँतक कि मृत्युको भी सहन करूँगा। मैं अपना प्रायश्चित्त सार्वजनिक रूपसे इसलिए भी कर रहा हूँ कि इस तरह अपने-आपको बन्दियोंके साथ बन्दी-गृहमें रहनेके सौभाग्य से भी वंचित कर रहा हूँ। हमारा प्रमुख प्रश्न एक बार फिरसे दूसरा हो गया है। अब हम सरकारी विज्ञप्तियोंके वापस लिये जाने तथा बन्दियोंके मुक्त किये जानेपर जोर नहीं दे सकते। चौरीचौराके अपराधके लिए उन्हें और हमें कष्ट सहन करना ही होगा। चाहे हम इसे चाहें या नहीं, यह घटना जीवनकी एकताको सिद्ध करती है। सभी लोगोंको, जिनमें शासक-वर्ग भी शामिल है, इसका फल भोगना होगा। चौरीचौरा-काण्डसे सरकारका रवैया निश्चित रूपसे और भी सख्त हो जायेगा और पुलिस और भी भ्रष्ट हो जायेगी; और अब जो प्रतिशोध लिया जायेगा उससे लोगोंका हौसला और भी टूटेगा। आन्दोलनको स्थगित करने तथा प्रायश्चित्त करनेसे हम वापस उसी स्थितिमें आ जायेंगे जिस स्थितिमें चौरीचौराकी दुर्घटनासे पहले थे। कड़ाईके साथ अनुशासनका पालन करने तथा आत्मशुद्धिसे हम उस नैतिक विश्वासको पुनः प्राप्त कर लेंगे जो सरकारी विज्ञप्तियोंको वापस लेने तथा बन्दियोंको मुक्त करनेकी माँग करनेके लिए आवश्यक है।

यदि हम इस दुःखद घटनासे पूरी शिक्षा ग्रहण करें तो हम अभिशापको वरदानमें बदल सकते हैं। मन और कर्म दोनोंसे सत्यपरायण और अहिंसक बनकर तथा स्वदेशी अर्थात् खद्दरके कार्यक्रमको पूरा करके हम पूर्ण स्वराज्यकी स्थापना और पंजाब तथा खिलाफतके साथ किये गये अन्यायोंका प्रतिकार कर सकते हैं। फिर तो इसके लिए किसी व्यक्तिको सविनय अवज्ञा भी नहीं करनी पड़ेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-२-१९२२

१७५. तार: देवदास गांधीको

वारडोली
१६ फरवरी, १९२२

देवदास
कांग्रेस कमेटी
गोरखपुर

हालत बहुत अच्छी है। तुम्हारे तारका आशय मैं भी समझ नहीं पाया था। तुमने किन भयानक घटनाओंका उल्लेख किया है सो स्पष्ट नहीं हो पाया।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एन० एन० ७९२४) की फोटो-नकलसे।

१७६. पत्र: देवदास गांधीको

शुक्रवार [१७ फरवरी, १९२२][1]

चि० देवदास,

तुम्हारी ओरसे कोई पत्र नहीं आया, यह दुःखकी बात है। मैं समझता हूँ कि तुम्हें बहुत काम रहता है लेकिन ऐसे समयमें मैं तुमसे पूरी-पूरी रिपोर्टकी आशा तो रखता ही हूँ। वह मिले तो मैं [वस्तु-स्थितिको] अच्छी तरह समझ सकूंगा और अधिक विचार भी कर सकूंगा। सिपाहीका काम है कि वह अपने जनरलको सब बातोंकी पूरी-पूरी रिपोर्ट दे।

उपवास आज अभी एक घंटेमें खत्म हो जायेगा। मुझे कमजोरीके अलावा और कोई कष्ट नहीं हुआ। 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' तो तुम्हें मिलते ही होंगे।

२४ तारीखको मैं दिल्लीम होऊँगा। यहाँसे २२ तारीखकी शामको निकलूंगा। २४-२५ के दिन दिल्लीमें समझो। बादमें कदाचित् कलकत्ते जाना पड़े। निश्चित कुछ भी नहीं है। बा यहीं है।

आशा है, तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी।

बापूके आशीर्वाद

१. चौरीचौरा-हत्याकाण्डके कारण गांधीजीने पाँच दिनका जो उपवास किया था, यह पत्र उस उपवासके आखिरी दिन लिखा गया था।

[पुनश्च :]

यह 'टाइम्स' में प्रकाशित हुआ है। जवाब देने जैसा लगे तो देना; मुझे भेजना। कतरन भी वापस भेजना।

बापू

गुजराती पत्र (एस० एन० ७६८२) की फोटो-नकलसे।

१७७. दैवी चेतावनी

मनुष्य एक बार भूल करे तो उसे क्षमा कर दिया जाता है, दो बार करे तो भी उदारमना उसे क्षमा कर देते हैं, लेकिन यदि तीसरी बार भी वह वैसी ही भूल करे तो? तब तो उसे बरखास्त करनेके अलावा और कुछ किया ही क्या जा सकता है?

एक बार जो धोखा खाता है उसे हम सीधा-सादा व्यक्ति मानते हैं, दो बार जो धोखा खाये वह भोला कहलाता है, लेकिन जो तीन बार धोखा खाता है उसे मूर्खके सिवा हम और क्या कह सकते हैं?

बारडोलीमें कानूनकी सविनय अवज्ञा करनेकी हमारी योजना स्वप्न हो गई। जो मुहूर्त हमने आन्दोलन शुरू करनेके लिए नियत किया था ईश्वरकी इच्छा उसी मुहूर्तमें आन्दोलनको बन्द कर देनेकी थी। इसमें तो आश्चर्यकी कोई बात नहीं। जब राम-जैसे महापुरुषके राज्याभिषेककी घड़ी वनवासकी घड़ी बन गई तब बारडोलीकी तो बिसात ही क्या है? इसी तरह आज सच जान पड़नेवाली चीजें कल जब स्वप्नवत् लगेंगी तभी हमें स्वराज्यके सही अर्थकी उपलब्धि होगी। फिलहाल तो मुझे एक ही अर्थ सही जान पड़ता है। स्वराज्य प्राप्त करनेका सच्चा प्रयत्न ही स्वराज्य है। स्वराज्य तो जैसे-जैसे हम उसके पीछे भागेंगे वैसे-वैसे दूर प्रतीत होगा।

समस्त आदर्शोंपर यही बात लागू होती है। मनुष्य जैसे-जैसे सच्चा बनता जाता है वैसे-वैसे सत्य उससे दूर भागता है क्योंकि वह समझ जाता है कि उसने जल्दीमें जिसे सत्य मान लिया था वह तो वस्तुतः असत्य था।

अतएव सत्यका आचरण करनेवाला सदाचारी मनुष्य हमेशा नम्र होता है, अपने दोषोंको वह निरन्तर अधिकाधिक समझता जाता है। ब्रह्मचारीसे ब्रह्मचर्य दूर भागता चला जाता है, क्योंकि प्रयत्नशील ब्रह्मचारी देखता है कि उसके अन्तरतममें बहुत अधिक विषय-लालसा विद्यमान है। अपने स्थूल ब्रह्मचर्यसे उसे सन्तोष नहीं होता। मोक्षार्थीसे भी मोक्ष दूर भागता जाता है। इसीसे महान् 'नेति' शब्दकी खोज हुई। प्राचीन कालमें अनेक महान् ऋषि मोक्ष — आत्मा — को ढूंढ़नेके लिए निकले। इसकी खोजमें वे अनेक घाटियोंमें उतरे, अनेक पहाड़ोंपर चढ़े, बहुत सारी कँटीली झाड़ियोंको उन्होंने पार किया और अन्तमें उन्हें मालूम हुआ: "यह नहीं है"। कौन जाने उनमें से कितनोंने मोक्षकी झाँकी देखी होगी, तथापि हम इतना तो जानते ही हैं कि वे ऐसे पारखी थे, इतने चतुर थे कि वे छले नहीं गये।

इसलिए मैं तो दिन-प्रतिदिन यह सीखता जाता हूँ कि हमारा स्वराज्य हमारे प्रयत्नोंमें ही निहित है।

सन् १९१९ में अहमदाबाद और वीरमगांवने, अमृतसर और कसूरने मुझे मेरी भूल बताई और सत्याग्रह स्थगित हो गया।[1] गत नवम्बरमें बम्बईमें मुझे मनुष्यके जंगलीपनका साक्षात्कार हुआ। और मैंने फिर सामूहिक सविनय अवज्ञा स्थगित कर दी।[2] तब भी मुझे पूरी सीख नहीं मिली। अब चौरीचौराने मुझे शिक्षा दी। कौन जाने मेरे भाग्यमें अभी ऐसी कितनी ठोकरें लिखी होंगी। अब यदि लोग मेरे नेतृत्वको अस्वीकार कर दें या मूर्ख मानें तो इसमें उनका दोष नहीं माना जायेगा।

मैं यदि मनुष्य-स्वभावको नहीं जानता तो ऐसे कार्योंमें हाथ ही क्यों डालता हूँ? मुझसे तो रहा ही नहीं जाता। भूल होनेपर उसे स्वीकार किये बिना भी नहीं रहा जाता। मुझे लोगों द्वारा अस्वीकार किया जाना अच्छा लगेगा, मेरी गिनती मूर्खोंमें की जाये, यह तो मुझे बहुत अच्छा लगेगा; लेकिन मैं अपने शरीरमें दोषका मैल रखकर आत्माको कदापि मलिन नहीं कर सकता।

"राणा रूठे नगरी राखे, हर रूठे कहाँ जाऊँ?" इस आशयका गीत मीराने गाया है या नहीं, इसकी मुझे खबर नहीं, लेकिन उसने ऐसा कर दिखाया। हम इस जगत्की गाली सहन करें लेकिन ईश्वरके अपराधी न बनें, उसकी चेतावनीको अवश्य शिरोधार्य करें।

गोरखपुरसे दैवी चेतावनी मिलनेके बावजूद अगर हम बारडोलीके सविनय अवज्ञा आन्दोलनको बरकरार रखते तो हमें हाथ मलने पड़ते, जनताको भारी नुकसान उठाना पड़ता, सत्य और शान्तिकी बदनामी होती। हम कायर तो कहलाते ही हैं; इसके बाद हमारी गिनती झूठोंमें भी होती। मेरे शब्द, मेरी शर्त यह थी कि हिन्दुस्तान के अन्य भाग शान्त रहेंगे तभी बारडोली सविनय अवज्ञा करेगा। यह शर्त टूटनेके बावजूद यदि बारडोली सविनय अवज्ञा करता तो बारडोली भी पापी बनता।

यदि कोई यह तर्क प्रस्तुत करे कि हिन्दुस्तानके लोग ऐसी शान्तिका पालन नहीं कर सकते तो इसे हम भले चुपचाप सुन लें। लेकिन यह तर्क तो सत्याग्रहका और विनयका मार्ग छोड़नेका तर्क है। विनयका मार्ग छोड़कर हिन्दुस्तान जो चाहे सो करे लेकिन हमें तो यह देखना है कि वह सत्यके नामपर असत्यका आचरण न करे, शान्तिके नामपर शान्ति-भंग न करे। बारडोलीने और मैंने इन बातोंका पूरा-पूरा पालन किया है। ऐसा करके हम दोनोंने राष्ट्रकी सेवा की है। मैं तो यह मानता हूँ कि ऐसा करके मैंने अपनी सेवककी योग्यता सिद्ध की है। भूलको स्वीकार करनेसे जनताकी उन्नति ही होगी, उसका पतन नहीं होगा।

सचमुच, ईश्वरने ही हमारी लाज रखी है। मुझे तो मद्रासकी घटनाओंसे ही चेत जाना चाहिए था। अपने विरोधियों और असहयोगियोंके मुझे जो पत्र प्राप्त होते रहते हैं, उनसे भी मुझे सावधान हो जाना चाहिए था। मैं नहीं चेता, लेकिन जिस-

१. देखिए खण्ड १५, पृष्ठ ५५१-५५२।

२. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४८५-८९

पर ईश्वरकी कृपा होती है उसे तो अगर वह इशारोंसे नहीं चेतता तो नौबत बजाकर और अगर नौबतसे भी नहीं चेतता तो घन-गर्जन और बिजलीके साथ मूसलाधार पानी बरसाकर चेतावनी देता है। सहज धर्मका पालन करके हम गम्भीर संकटोंसे मुक्त हो गये हैं।

हमें झुकना पड़ा, पीछे हटना पड़ा -- सो आगे बढ़नेके लिए ही। जो राहसे भटक जाता है उसे पहले तो लौटकर उसी स्थानपर आना पड़ता है और वापस आनेके बाद ही वह फिर आगे बढ़ता है। मतलब यह कि हम जो नीचे गिरते जा रहे थे, कार्य-समितिके इस प्रस्तावके बादसे अब ऊपरकी ओर चढ़ने लगे हैं।

लेकिन मेरे लिए इतना पर्याप्त नहीं है। मुझे इससे अधिक प्रायश्चित्तकी जरूरत थी। गोरखपुरसे तार आनेके बादसे ही मानसिक पीड़ा आरम्भ हो गई थी, लेकिन देह-दमनकी आवश्यकता थी। अपनी भूलके परिमापको देखते हुए मैं मात्र पाँच दिनके उपवाससे सन्तुष्ट नहीं हो सकता था। मेरी इच्छा चौदह दिनका उपवास करनेकी थी। लेकिन मैंने उसे पाँच ही दिनका रहने दिया है। अगर यह प्रायश्चित्त कम हुआ तो मुझे देर या सवेर बाकीका चुकाना ही होगा और सो भी चक्रवृद्धि व्याजके साथ। जो व्यक्ति अपना ऋण यथासमय पूरा-पूरा चुका देता है वही बादमें ज्यादा बड़ा ऋण चुकानेकी स्थितिसे बच सकता है।

प्रायश्चित्तका ढोल नहीं पीटा जाना चाहिए तथापि उसे मैंने प्रकाशित किया है। इसका एक विशेष कारण है। मेरा उपवास मेरे लिए प्रायश्चित्त है, लेकिन चौरीचौराके लोगोंके लिए यह दण्ड है। प्रेमका दण्ड ऐसा ही होता है। प्रेमी जब दुःखी होता है तब प्रियको दण्ड नहीं देता लेकिन स्वयं पीड़ा भोगता है। भूखा रहता है और अपना माथा पीटता है। प्रियजन इसे समझता है या नहीं, इसकी वह चिन्ता नहीं करता।

लेकिन मैंने अपने उपवासको प्रकाशित कर दिया है, यह दूसरोंके लिए भी चेतावनी है। मेरे पास और कोई उपाय ही नहीं है। असहयोगी अगर मुझे छलता है -- और मैं तो समस्त हिन्दुस्तानको असहयोगी मानता हूँ -- तो वह मेरे प्राण ले ले। मुझे तो ऐसा मोह है कि हिन्दुस्तानको अभी मेरी देहकी जरूरत है। अगर यह सच है तो मैं शारीरिक कष्टको सहनकर हिन्दुस्तानको यह सूचना दे रहा हूँ कि वह मुझे धोखा न दे। अगर वह चाहे तो "शान्ति" शब्दको, शान्तिका पालन करनेकी शर्तको छोड़नेका फैसला करे और मेरा त्याग करे। लेकिन जबतक वह मेरी सेवाओंको स्वीकार करता है तबतक उसे शान्ति तथा सत्यको भी स्वीकार करना ही होगा।

आज तो पाँच दिनके उपवाससे ही निबटारा हो गया लेकिन यदि लोग अब भी नहीं चेतेंगे तो पाँचके पन्द्रह और पन्द्रहके पचास हो सकते हैं और इस तरह मेरे प्राण भी जा सकते हैं।

यह लेख मैं उपवासके तीसरे दिन लिख रहा हूँ।[१] मेरी आत्मा साक्षी देती है कि हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई सब शान्ति तथा सत्यके मार्गसे ही स्वराज्य

१. यह उपवास १२ फरवरीको शुरू किया गया था।

प्राप्त कर सकेंगे, उसी मार्गसे खिलाफतकी सेवा कर सकेंगे और पंजाबके मामलेमें न्याय प्राप्त कर सकेंगे। कांग्रेसमें और खिलाफतकी परिषदोंमें यही मार्ग स्वीकार किया गया है। फिर भी यदि हम इसका त्याग करते हैं तो इसका मतलव यह होगा कि हम धर्मके लिए या ईश्वरके लिए नहीं वरन् अधर्म और शैतानकी खातिर लड़ते हैं।

हमें दूसरोंका अनुकरण नहीं करना है; गाजी मुस्तफा कमाल पाशाका भी नहीं। "यदि दुर्वल व्यक्ति सवलका अनुकरण करे, वह अगर मरेगा नहीं तो बीमार अवश्य पड़ेगा" यह एक वहुत ही सच्ची कहावत है। ज्ञानी अपनी प्रकृतिके अनुसार आचरण करता है। जगत् अपने स्वभावके अनुसार चलता है। फिर वलात्कारसे क्या लाभ हो सकता है? मैं सच कहता हूँ कि हिन्दुस्तान शरीर-वलसे साम्राज्यका उपभोग कभी नहीं कर सकता। उससे यह आशा रखना कि वह शरीर-वलके द्वारा कुछ कर दिखायेगा, उसके साथ वलात्कार करने-जैसा है। हिन्दुस्तानका स्वभाव शान्तिमय है। इसी कारण हिन्दुस्तान जाने-अनजाने शान्ति और सत्यमय असहयोगपर मोहित हो गया है। अहमदावाद और वीरमगाँवके पागल लोगोंका किसीने अनुकरण नहीं किया और न ही कोई चौरीचौराके पागल लोगोंका अनुकरण करेगा। यह हिन्दुस्तानका स्वभाव नहीं है, यह तो रोग है। टर्कीकी वात अलग है; मुस्तफा कमाल पाशाकी तलवार चलती है क्योंकि प्रत्येक तुर्ककी रग-रगमें ताकत है। तुर्क सैकड़ों वर्षसे लड़ते चले आये हैं। हिन्दुस्तानकी जनता हजारों वर्षोंसे शान्त रही है। इन दोनोंमें से किस राष्ट्रकी जनताने ज्यादा अच्छा काम किया और किसने नहीं किया —— इस समय हम इस वाद-विवादमें नहीं पड़ेंगे। हिंसा और अहिंसा दोनोंका इस जगत्‌में स्थान है। आत्मा और शरीर दोनोंका कार्य चलता है पर अन्ततः विजय आत्माकी है अथवा शरीरकी, इसपर विचार करनेका यह समय नहीं है। इसपर यदि हम विचार करना चाहें तो भले ही स्वराज्य प्राप्त करनेके वाद विचार करें। अभी तो हमें आसानसे-आसान उपायोंसे स्वराज्य प्राप्त करना चाहिए। एक क्षणमें हिन्दुस्तानका स्वभाव नहीं वदल सकता। हिन्दुस्तानको तलवारके जरिये स्वतन्त्र करवानेवाले व्यक्तिको युग चाहिए, ऐसी मेरी दृढ़ मान्यता है।

हिन्दुस्तानके मुसलमान भी अगर मुस्तफा कमाल पाशाका अनुकरण करते हैं तो इस्लामकी प्रतिष्ठामें वट्टा लगायेंगे। इस्लाममें शान्तिका महत्त्वपूर्ण स्थान है। शान्ति और सव्रका महत्त्व क्रोधकी अपेक्षा, तलवारकी अपेक्षा कहीं अधिक है। हिन्दुस्तानकी जनता वहुत लम्वे अर्सेसे शान्ति और सत्यकी उपासना करती आई है। इनका पुनरुद्धार करके हिन्दुस्तान चाहे तो आज ही स्वराज्य प्राप्त कर सकता है अथवा इनका त्याग करके गुलाम वना रह सकता है। मनुष्य एक साथ पूर्व और पश्चिम, दोनों दिशाओंमें नहीं जा सकता। फिलहाल तो यही स्पष्ट दिखता है कि पश्चिमका मार्ग अशान्तिका, नास्तिकताका है; तथा एक लम्वे समयसे लोगोंको इस वातकी प्रतीति हो गई है कि पूर्वका मार्ग शान्ति और धर्मका है, आस्तिकताका है। पश्चिमका आकर्षण-केन्द्र इस समय इंग्लैंड है। पूर्वका आकर्षण-केन्द्र अनादि-कालसे हिन्दुस्तान रहा है। दुनियाको लगता है कि इंग्लैंड साम्राज्यका स्वामी है और भारतभूमि उसकी मुख्य

दासी है। हमारा आजका प्रयास इस दासत्वसे मुक्ति पानेका है। भारतभूमि यदि इस दासत्वसे मुक्त होना चाहती है तो ऐसा वह अपने प्राचीन अस्त्रों -- शान्ति और सत्यके द्वारा ही कर सकती है।

समस्त पृथ्वी-तलपर इस समय एक भी ऐसा देश नहीं है जो शारीरिक बलमें हिन्दुस्तानसे कम हो। अफगानिस्तान-जैसा छोटा देश भी हिन्दुस्तानको धमका सकता है।

हिन्दुस्तान किसकी सहायताके बलपर इंग्लैंडसे जूझना चाहता है? जापानकी? काबुलकी? वह जिस किसी देशकी सहायतासे इंग्लैंडसे लड़ेगा तो उसे उसी देशकी दासता स्वीकार करनी होगी। अतएव इस युगमें यदि हिन्दुस्तान मुक्त होना चाहता है तो उसके पास ईश्वरीय सहायताके सिवा और कोई चारा नहीं है। और ईश्वर तो सिर्फ सत्यका और शान्तिका साथी है। इसलिए गोरखपुरसे मिली दैवी चेतावनीसे हमें यही सीखना है कि यदि हम अपना मनोरथ सिद्ध करना चाहते हैं तो हम शान्तिका विकास करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-२-१९२२

१७८. कैदियोंका क्या हो?

एक सज्जनने बहुत लम्बा पत्र लिखा है, उसमें से मैं निम्नलिखित भाग उद्धृत करता हूँ:[1]

इसी आशयका एक अन्य पत्र भी है। मैं जानता हूँ कि ऐसी शंका दूसरे लोगोंके दिलोंमें भी अवश्य उठी होगी। उठी हो तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। लेकिन ऐसी शंकाओंसे पता चलता है कि ऐसे संशयात्मा लोग हमारी लड़ाईके रहस्य अथवा उसकी खूबीको अभीतक समझ नहीं पाये हैं। पण्डित मालवीयजीपर जो आक्षेप लगाया गया है वह अज्ञानवश ही लगाया गया है। सविनय अवज्ञाको बन्द करवानेमें पण्डितजीका जरा भी हाथ नहीं है। उसे बन्द करनेका निश्चय तो अपने मनमें मैंने तभी कर लिया था जब मैंने बारडोलीमें गोरखपुरका किस्सा सुना। मैंने बारडोलीसे इस आशयके पत्र भी लिखे थे। मैंने अपने साथियोंके साथ सलाहमशविरा किया और कार्य-समितिकी बैठक बुलानेका निश्चय किया। उसके बाद बम्बई गया। पण्डितजी भी अगर यही माँग करें तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। लेकिन हमने जो निश्चय किया है वह मेरा और कार्य-समितिका है, पण्डितजीका इससे कोई ताल्लुक नहीं है।

१. उक्त संक्षिप्त अंश यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने पूछा था कि हजारों नेता और असंख्य लोग जेलमें हैं, उनके सम्बन्धमें क्या पण्डित मालवीयजीको कोई चिन्ता नहीं है; यदि है तो जब ये सब लोग जेलमें हैं, वे समझौता करानेकी कोशिश क्यों कर रहे हैं।

आइए, अब इसके गुणदोषोंपर विचार करें। क्या अपनी प्रतिज्ञाको भंग करके भी कैदियोंको छुड़वाना हमारा धर्म है? सत्याग्रहका अर्थ ही यह है कि राज जाये, पाट जाये, कुटुम्ब जाये अथवा प्राण जायें तो भी हम सत्यको न छोड़ें। सत्यको छोड़कर यदि हम कैदियोंको रिहा करवायेंगे तो स्वयं कैदी ही शरमिन्दा हो उठेंगे। वे तो स्वराज्य मिलनेपर ही रिहा होना चाहते हैं। वे सम्मानपूर्वक रिहा होना चाहते हैं। वे दुःख भोगनेके लिए ही जेल गये हैं। वे दुःखको सुख मानते हैं तथा बाहर रहकर जो सुख मिलता है उसे दुःख मानते हैं। इसलिए हमने जो कदम उठाया है वह यदि अन्य दृष्टियोंसे सही हो तो उनके खयालसे भी हम उसे वापस नहीं ले सकते।

इसके अतिरिक्त सविनय अवज्ञाको चालू रखकर भी क्या हम उन्हें रिहा करवा सकते थे? उन्हें रिहा करवानेकी शक्ति तो हमारी शान्तिमें ही निहित थी। बारडोली अपने बलका प्रदर्शन तभी कर सकता था जब देशके अन्य भाग शान्तिका पालन करते। शान्ति और अशान्ति दोनों साथ-साथ कदापि नहीं चल सकतीं। रात और दिन दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते। इसलिए हम चाहे जिस तरहसे विचार करें हमें एक ही उत्तर मिलता है और वह यह कि सविनय अवज्ञाको मुल्तवी करनेके सिवा हमारे सामने और कोई चारा न था।

उसका अर्थ यह नहीं कि अब हमें कुछ नहीं करना है। क्षत्रियको यदि एक मार्ग अनुकूल नहीं पड़ता तो वह किसी दूसरे ऋजु मार्गकी खोज करता है। जिस स्थानसे वह भटक जाता है वहांसे वापस मूल स्थानपर आकर अपने बलको आजमाता है। वैसा ही हमें भी करना है। कैदियोंको कोई भूलनेवाला नहीं है।

पण्डितजीकी आत्मा भीतर-ही-भीतर कितनी व्याकुल है सो मैं अच्छी तरहसे जानता हूँ। वे कैदियोंको छुड़वानेके लिए उतने ही उत्सुक हैं जितने हम। वे भी हिन्दुस्तानकी सुपत्नीको उज्ज्वल रखते हुए ही कैदियोंको छुड़वाना चाहते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-२-१९२२

१७९. टिप्पणियाँ

बारडोलीकी जनतासे

आपने खूब अच्छा काम किया। सविनय अवज्ञाको आपकी किसी भूलके कारण नहीं वरन् गोरखपुरकी भूलके कारण बन्द करना पड़ा है। लेकिन हम सब भारतवर्षके हैं इसलिए गोरखपुरकी भूलका प्रभाव हमपर भी पड़ता है।

सिपाहीके लिए तो लड़ना अथवा न लड़ना एक समान होता है। उससे अगर लड़नेके लिए कहा जाता है तो वह लड़ता है और अगर रुकनेको कहा जाये तो वह रुक जाता है। कार्य-समितिने रुकनेके लिए कहा है इसलिए बारडोलीको रुकना चाहिए और लगान तुरन्त भरकर अपनी सिपहगरी सिद्ध करनी चाहिए।

सविनय अवज्ञा भले ही स्थगित हो जाये परन्तु सत्याग्रह तो कभी स्थगित नहीं होता। सत्याग्रह तो हमें प्राणोंके समान प्रिय होना चाहिए। इसलिए सत्यको ही अनन्य भावसे वरण करनेके लिए, तथा उसके प्रतीक स्वरूप कार्य-समितिने जो प्रस्ताव पास किया है हमें उसका पूर्णतः पालन करना चाहिए।

यद्यपि बारडोली-निवासी सविनय अवज्ञा करनेके लिए बेचैन हो रहे थे तथापि उनमें त्रुटियाँ तो थीं ही। मेरी आपसे विनय है कि आप उन सब त्रुटियोंको दूर कर सविनय अवज्ञाके लिए और भी अधिक योग्य बनें।

बारडोलीमें रहकर मैंने यह देखा कि वहाँ जिन्हें 'काली परज' कहा जाता है उनकी स्थिति लगभग गुलामोंकी-सी है। उजले वर्गोंके लोगोंका कर्त्तव्य है कि वे उन्हें अज्ञानसे मुक्त करें। उनका उजलापन इसीमें है। 'काली परज' के घरोंमें चरखेका प्रवेश होना चाहिए। उनके सारे बच्चे राष्ट्रीय स्कूलोंमें आने चाहिए। और उन्हें भी सामान्य ज्ञान मिलना चाहिए।

बारडोलीकी जनता कांग्रेसकी समस्त शर्तोंका पूरा-पूरा पालन करके और भी योग्य बने, ऐसी मेरी कामना है।

शराब तो 'काली परज' ही पीते हैं। उनके घर जाकर उन्हें समझा-बुझाकर उनकी शराबकी आदतको छुड़ाना चाहिए। इसके लिए उन्हें दूध, छाछ अथवा शक्कर-का पानी आदि देना चाहिए।

आप आज भी पंचायतोंकी स्थापना कर अपने झगड़ोंको आपसमें ही निबटा सकते हैं। अपने स्कूलोंका विकास करके अपने बच्चोंको सम्पूर्ण शिक्षा प्रदान कर सकते हैं। हरएक घरमें चरखा चालू करके तथा बुनकर और पींजनेवाले तैयार करके अपनी आयमें वृद्धि कर सकते हैं और आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं; एवं उससे प्राप्त होनेवाले लाभसे ही आप अपनी अदालतोंका, स्कूलोंका, मद्यनिषेधका तथा स्वदेशीका काम चला सकते हैं।

कांग्रेसने आपको इसके उपाय भी सुझा दिये हैं। एक उपाय यह है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष कांग्रेसका सदस्य बन जाये और दूसरा यह कि तिलक स्वराज्य-कोषमें आप सब अपनी गत वर्षकी कमाईका एक प्रतिशत दें।

आप जो स्वतन्त्रता चाहते हैं उसका अधिकांश आपको इतना करनेसे ही मिल जायेगा और अब तो आप सविनय अवज्ञाके योग्य तभी बन सकेंगे जब आप इतनी स्वतन्त्रता सुव्यवस्थित ढंगसे प्राप्त कर लें।

प्रत्येक गुजरातीसे

जो बात बारडोलीके निवासियोंपर लागू होती है वही प्रत्येक गुजरातीपर भी लागू होती है। सविनय अवज्ञा बन्द रहनेका तात्पर्य यह है कि हम उसके लिए और अधिक योग्यता प्राप्त करें। अतएव हमें कांग्रेस द्वारा निश्चित रचनात्मक कार्यको पूरा करनेमें लग जाना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि अब्बास साहबके खेड़ा जिलेको, जो भारी उत्साह दिखा रहा था, बहुत निराशा होगी। जो व्यक्तिगत रूपसे सविनय अवज्ञा करनेके लिए तैयार हो रहे थे उन्हें अब कर देना बहुत अखरेगा। लेकिन उनकी सिपहगरी तो इसीमें है कि वे ऐसा न मानें और कर देकर रचनात्मक कार्यमें तल्लीन हो जायें। अब हम देख सकते हैं कि प्रत्येक व्यक्तिको कांग्रेसका सदस्य बननेके लिए राजी करना और उसकी वार्षिक आयका एक प्रतिशत भाग प्राप्त करना उससे जेल जानेकी बातको स्वीकार करवानेकी अपेक्षा कहीं अधिक मुश्किल काम है। जब हम इन सब कार्योंको पूरा कर लेंगे तब केवल बारडोली ही नहीं, समस्त गुजरात सविनय अवज्ञा आरम्भ कर सकेगा।

अहमदाबाद और सूरत-निवासियोंसे

राष्ट्रीय स्तरपर सविनय अवज्ञा बन्द हो गई है लेकिन आपके पास तो सुवर्ण अवसर है। आपको स्थानीय तकलीफ है और आप अपने स्थानीय जौहरको अच्छी तरह सिद्ध कर सकते हैं। सरकारने आपकी इच्छाके विरुद्ध अपनी समितियाँ नियुक्त की हैं।[1] उनमें आपके साथी नागरिक काम करनेके लिए तैयार हो गये हैं, यह देखकर मुझे तो बहुत दुःख हुआ है। लेकिन उससे निराश होनेकी कोई जरूरत नहीं। वे लोग नागरिकोंके सहयोगके बिना काम-काज नहीं चला सकेंगे। उन समितियोंके स्कूलोंमें आपके बच्चे तभी जा सकेंगे जब आप उन्हें भेजेंगे, आप अपनी इच्छाके विरुद्ध कर भी न दें। फिर चाहे एक ओर आपकी इच्छाके विरुद्ध जबरदस्ती नियुक्त की गई सरकारी समितियाँ काम करें तथा दूसरी ओर आप लोगोंकी अपनी संस्था। उस हालतमें लोगोंको मालूम हो जायेगा कि कौन किसके साथ है।

इस कार्यको आप अत्यन्त विनम्रतापूर्वक तथा अत्यन्त शान्तिके साथ चला सकते हैं। [सरकार द्वारा नियुक्त] समितियोंके साथ सलाह-मशविरा करके आप जितना भार उठा सकते हैं उतना आप उठा लें और जो आपके बसका न हो उसे छोड़ दें। मैं दोनोंके बीच एक सभ्यतापूर्ण संघर्ष देखनेके लिए उत्सुक हूँ। यदि कोई एक पक्ष

१. सरकारकी इस कार्रवाईके लिए जिम्मेदार परिस्थितियोंके लिए देखिए "नगरपालिकाओंपर विपत्ति", १५-१२-१९२१।

मर्यादाका उल्लंघन नहीं करेगा तो दूसरे पक्षको निस्सन्देह मर्यादाका पालन करना ही होगा। अतएव यदि नागरिक एक भी कटु वचन बोले बिना अपना काम करते रहेंगे तो वे अवश्य विजयी होंगे। दोनों शहरोंके नागरिकोंका पहला कर्त्तव्य तो यह है कि एक भी राष्ट्रीय स्कूल उनके हाथसे न जाने पाये। उसके लिए तो सिर्फ उत्साही कार्यकर्त्ताओं तथा धनकी आवश्यकता है। यदि हम इन दोनोंको इकट्ठा न कर पाये तो हम निश्चय ही पराजित होंगे।

ढसा दरबारका सत्याग्रह

देसाई गोपालदास काठियावाड़में ढसा नामक गाँवके दरबार हैं।[१] वहाँके लोगोंका जीवन अत्यन्त सरल और सुखी है। दरबार और प्रजाके बीच पिता-पुत्र जैसा मीठा सम्बन्ध है। ढसामें स्वदेशी, अस्पृश्यता-निवारण आदि आन्दोलन बड़े जोरोंसे चल रहे हैं। लेकिन जब अब्बास साहबने खेड़ा जिलेकी व्यवस्था अपने हाथमें ली तब पाटीदार होनेकी वजहसे देसाईजी अपनेको रोक न सके और अपनी धर्मपत्नीको ढसाका कार्यभार सौंपकर खेड़ा जिलेके आन्दोलनमें कूद पड़े। उनके और कमिश्नरके बीच हुए पत्र-व्यवहारको सबने देखा है। देसाईजी द्वारा लिखे प्रत्येक पत्रमें उनका सत्याग्रह उभरकर सामने आ जाता है। राष्ट्र ऐसे लोगोंके त्यागसे ही उन्नति करेगा। जापानके अमीर-उमरावोंने जब अपनी जागीरें और अपना सर्वस्व राष्ट्रको अर्पण कर दिया तब देखते-देखते जापानका वातावरण बदल गया। गरीब लोग भी इस त्यागके महत्त्वको समझ गये और सब राष्ट्रके कार्यमें जुट गये। इसी तरह जब हिन्दुस्तानमें अनेक दरबार और जागीरदार राष्ट्रके लिए त्याग करने लगेंगे तब गरीब और अमीरके बीच जो संगम होगा उसे देखकर संसार चकित हो उठेगा। असहयोग आन्दोलनमें फिलहाल तो मुख्यरूपसे गरीब और मध्यम-वर्गके लोग ही भाग ले रहे हैं। यह बात देशके लिए कुछ हदतक खतरनाक भी है। यदि धनिक वर्ग भी इस आन्दोलनमें पूरा-पूरा भाग ले तो इस समय जो विषम स्थिति उत्पन्न हो गई है वह भी दूर हो जाये। उसके लिए साहस और क्षत्रियत्वकी आवश्यकता है। देसाईजीने इन दोनों गुणोंका परिचय दिया है। मुझे उम्मीद है कि दूसरे लोग भी उनके इस उदाहरणसे शिक्षा ग्रहण करेंगे।

गोविन्दजी वसनजीका मामला

बम्बईके सुप्रसिद्ध मिठाईवाले गोविन्दजी वसनजी जेलमें विराजमान हैं। इस मामलेपर मैं काफी पहले लिखना चाहता था लेकिन मेरे पास मामलेके कागजात नहीं थे, इसलिए ऐसा करनेमें असमर्थ रहा। ये कागजात मुझे अभी-अभी प्राप्त हुए हैं।

श्री गोविन्दजीको जेलमें छः महीने आराम करना है। उन्हें सपरिश्रम कारावासका दण्ड मिला है, इस बातका मैं और भी अधिक स्वागत करता हूँ। सादी कैद भोगनेवाले वस्तुतः कैद नहीं भोगते, ऐसा मेरा अनुभव है। जेलका आनन्द तो सपरिश्रम कारावासका दण्ड पानेवालों को ही मिलता है। सादी कैदवालों के ऊब जानेकी सम्भावना रहती है। परिश्रम करनेवालों के दिन आसानीसे गुजर जाते हैं। हमारा मन जेलको

१. गुजरात-काठियावाड़में छोटी रियासतोंके राजाओंके लिए प्रचलित शब्द।

महल बना सकता है और अगर हम निरन्तर इसी बातका विचार करते रहें कि हम जेलमें बन्द हैं तो वह उसे कष्टकारक भी बना सकता है। असहयोगीको यदि जेल कष्टकारक लगती है तो वह असहयोगी कहला ही नहीं सकता। मीराबाईको जहरका प्याला अमृतके समान जान पड़ा। सुकरातने जहरके प्यालेको अपने हाथमें लेकर आत्माकी अमरताके सम्बन्धमें अपने प्रिय शिष्यको ऐसा व्याख्यान दिया जिसे संसार सदैव याद रखेगा। उनकी मधुर भाषासे यह सिद्ध हो जाता है कि जहर देनेवाले दरोगा अथवा जहर पीनेकी सजा देनेवाले न्यायाधीशके प्रति उनके मनमें तनिक भी द्वेष अथवा रोष न था। संसारके इतिहासमें ऐसे अनेक उदाहरण मिल जाते हैं।

असहयोगियोंको अदालतोंका त्याग सिर्फ राजनीतिक मामलोंमें ही नहीं करना है। उनपर किसीने कोई गन्दा आरोप लगाया हो तो भी जिन अदालतोंका उन्होंने परित्याग कर दिया है उन अदालतोंमें वे अपना बचाव नहीं कर सकते। अपराध करना, दुःख की बात है; जगत् हमें अपराधी माने इसमें दुःखका कोई कारण नहीं। अपने पापको छिपाकर रहनेवाले अनेक पापी धर्म-धुरन्धर कहलाते हैं और भाररूप होकर पृथ्वीपर विचरण करते हैं। लेकिन उन्हें अपने जीवनमें जय मिलती हो, ऐसी बात नहीं; उन्हें तो हम जगत्के ठग मानते हैं।

अदालतोंमें जिन लोगोंको सजा होती है उन सब लोगोंको हम अपराधी नहीं मानते, बल्कि प्रत्येक अनुभवी व्यक्तिको मालूम है कि अनेक निर्दोष व्यक्तियोंको अदालतोंमें सजा हो जाती है और दोषी छूट जाते हैं। एक वकीलके रूपमें मैंने भी ऐसे अनेक उदाहरण देखे हैं। अदालतोंमें जाना चौपड़की बाजी खेलनेके समान है। किसीका दाव सीधा पड़ता है और किसीका उलटा। जिसका दाव सीधा पड़ता है उसे ही योग्य माना जाता हो सो बात नहीं। चौपड़ खेलनेवाला प्रत्येक व्यक्ति ऐसे अनेक उदाहरणोंकी याद कर सकता है जिसमें कोई खिलाड़ी बार-बार हारता ही जाता है और लाख प्रयत्न करनेपर भी उसका दाव सीधा नहीं पड़ता। दुर्योधन जीत गया और पाण्डवोंकी हार हुई, सो कोई इस कारण नहीं कि पाण्डवोंको जुआ खेलना नहीं आता था। बेचारे युधिष्ठिरने मेहनत करनेमें कोई कसर नहीं छोड़ी थी। लेकिन पाण्डवोंको तो अमर होना था। धर्मके साथ हमेशा दुःख-ही-दुःख जुड़ा हुआ है — यह बात उन्हें फिरसे सिद्ध करनी थी। इसीलिए पाण्डव पराजित हो गये लेकिन इन पराजित पाण्डवोंकी आज जगत् पूजा करता है।

श्री गोविन्दजीकी दुनिया तो उनके मित्र हैं। उनके मित्र उनके सम्बन्धमें क्या सोचते हैं? मुझे अभीतक उनका एक भी ऐसा मित्र नहीं मिला जो उन्हें अपराधी मानता हो। मेरी आँखोंके सम्मुख अब भी उनका आँसुओंसे भीगा चेहरा है। उनपर मुकदमा चलेगा अथवा क्या होगा, इसकी जब मुझे खबरतक न थी, उस समय मेरे सन्देहको दूर करनेके लिए बीमारीकी हालतमें भी वे मेरे पास आये और उन्होंने रोते-रोते मुझे बताया कि उन्होंने किसी भी व्यक्तिको भड़कानेमें तनिक भी भाग नहीं लिया है। उन्होंने गद्‌गद कंठसे कहा: "मेरे खयालमें आप इतना तो मानेंगे कि मुझमें कमसे-कम इतनी समझ तो है कि जिन पारसियोंके साथ मेरा उठना-बैठना है, जिनकी

बदौलत मैं धनवान बना हूँ उनके विरुद्ध अगर मैं किसी व्यक्तिको भड़काऊँ तो जगत् तथा ईश्वरके प्रति अपराधी ठहरूँगा।" उन्होंने ऐसा ही और भी बहुत-कुछ कहा और मुझे अपने निर्दोष होनेका विश्वास दिलाया।

मैं मानता हूँ कि यदि उन्होंने अपना बचाव किया होता तो वे अवश्य छूट जाते। अच्छे-अच्छे वकीलोंने उन्हें अपनी ओरसे यह कहलवाया कि वे उनकी पैरवी करनेके लिए तैयार हैं। लेकिन उनकी बहादुर माँने इनकार कर दिया। उन्होंने कहा: "मेरा बच्चा सत्याग्रही है। मैं जानती हूँ कि वह निर्दोष है। बचाव न करनेपर उसका जेल जाना सम्भव है। लेकिन अगर की हुई प्रतिज्ञाको वह तोड़ता है तो मुझे और हमारे कुलको लजायेगा। मुझे उसका बचाव नहीं चाहिए", ऐसा कहकर उस बहादुर माँने अपने लड़केको (अदालतमें अपना बचाव पेश करनेके संकटसे) बचा लिया। गोविन्दजी-को अगर माँका बल और आशीर्वाद प्राप्त न होता तो कदाचित् वे लालचमें पड़ जाते। लेकिन उन्होंने जेल जाना स्वीकार करके अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया है। ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं जिसमें अपनी प्रतिष्ठाको बट्टा पहुँचानेवाले आरोपके बावजूद असहयोगियोंने अपना बचाव न किया हो। श्री गोविन्दजी वसनजी हमारी बधाईके पात्र हैं। उनके दृष्टान्तको मैं अनुकरणीय समझता हूँ।

मेरे इस कथनसे कि अगर श्री गोविन्दजी अपना बचाव करते तो छूट जाते कोई यह न मान बैठे कि अगर यह बात है तो फिर अदालतोंका त्याग किया ही क्यों जाये? हमें अन्य [अराजनीतिक] आरोपोंके विरुद्ध भी बचाव करनेकी छूट क्यों न मिले। ऐसे प्रलोभनोंके कारण ही इस जगत्में असत्य और छल-कपट फले-फूले हैं। ब्रिटिश अदालतोंमें कभी किसीको न्याय मिलता ही नहीं — ऐसा तो किसीने कदापि नहीं कहा। लेकिन जहाँ तनिक-सा भी राजनीतिक प्रसंग होता है वहाँ इन अदालतोंमें न्याय मिलना लगभग असम्भव होता है, कौन ऐसा भारतीय है जो इस तथ्यसे परिचित नहीं है? तिलक महाराजने अपने बचावकी भारी कोशिश की। उस समय हम इसमें कोई दोष नहीं मानते थे। उस समय तो बचाव करना ही धर्म था। लेकिन वे बच नहीं पाये। पंजाबमें लाला हरकिशनलाल आदिने वकीलोंपर पानीकी तरह पैसा बहाया, लेकिन क्या वे बच सके? और यह तो हम जानते ही हैं कि लाला लाज-पतराय, चित्तरंजन दास, मौलाना अबुल कलाम आदि बिलकुल निर्दोष हैं। हम यह भी जानते हैं कि अगर उन्होंने बड़े-बड़े वकीलोंको नियुक्त किया होता तो भी वे बच न पाते। इसी कारण जहाँ राज्यसत्ता मदान्ध हो जाती है वहाँ उसकी ओरसे मिलनेवाले मामूली लाभोंका त्याग करना धर्म माना गया है। अदालतें राज्यसत्ताका बहुत जबरदस्त स्तम्भ हैं। सामान्य स्थितिमें यह सम्भव है कि लोग इसका लाभ उठायें, लेकिन समझदार लोग ऐसी सहायताके प्रलोभनमें नहीं आते।

भाटिया भाई-बहनोंसे

एक भाटिया[1] सज्जन लिखते हैं:[2]

१. कच्छकी एक व्यापारी जाति।
२. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

भाटिया लोगोंने देशसेवा करनेमें कोई कसर नहीं रखी है। धनवान होनेके कारण उन्होंने खूब पैसा दिया है। कुछ-एक भाटिया बहनें अपना समय देकर बहुत अच्छी देशसेवा कर रही हैं। तथापि धनिक-वर्गके लिए खादी अपनाना अब भी मुश्किल मालूम हो रहा है। उसका कोई समुचित कारण नहीं है। जिनपर देशसेवाका रंग चढ़ चुका है, वे जो सेवा आवश्यक होगी उसे किये बिना न रहेंगे। स्वदेशी अर्थात् चरखा चलाने और खादी पहननेके समान अन्य कोई सेवा नहीं है। यह ऐसा धर्म है जिसका पालन करना आसान है और जिसमें कोई जोखिम भी नहीं है। तथापि उसके परिणाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। यदि हिन्दुस्तानके अमीर लोग खादी पहननेके धर्मको स्वीकार करें तो इसमें ऐसा कुछ नहीं होगा जिसे विचित्र कहा जाये। अंग्रेजोंका इतिहास साक्षी है कि उन्होंने बाहरसे आनेवाली लेसों आदिका त्याग कर केवल इंग्लैंडमें ही बनने-वाले मोटे कपड़ेसे अनेक वर्षोंतक निर्वाह किया था। उनमें अमीर-उमराव भी शामिल थे। जिसे इस बातकी समझ आ जाये कि खादीसे ही हिन्दकी भुखमरीका नाश होगा, खादीसे ही हिन्दकी गरीब स्त्रियोंकी पवित्रताकी रक्षा हो सकेगी, खादीसे ही अकालका निवारण होगा, क्या वह विदेशी अथवा मिलका कपड़ा पहन सकता है? मुझे उम्मीद है कि भाटिया भाई-बहन अपनी शिथिलता छोड़कर खादी तथा चरखेके धर्मको सम्पूर्ण रूपसे स्वीकार करेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-२-१९२२

१८०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[1]

बारडोली
१९ फरवरी, १९२२

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे मालूम हुआ है कि तुम सबको कार्य-समितिके प्रस्तावोंसे[2] भयंकर पीड़ा हुई है। मुझे तुमसे हमदर्दी है और [तुम्हारे][3] पिताकी बात सोचकर मेरा दिल टूटता है। उन्हें जो पीड़ा हुई होगी, उसकी मैं स्वयं कल्पना कर सकता हूँ। परन्तु मुझे यह भी महसूस होता है कि यह पत्र अनावश्यक है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि पहले आघातके बाद स्थिति सही तौरपर समझमें आ गई होगी। बेचारे देवदासकी बचपन-भरी नासमझियोंके कारण हमें उद्विग्न नहीं होना चाहिए। यह सर्वथा सम्भव है कि उस गरीब लड़केके पैर उखड़ गये हों और उसका मानसिक सन्तुलन जाता रहा

१. जवाहरलालजी उन दिनों जेलमें थे अतः यह पत्र उनकी बहन सरूप (विजयलक्ष्मी) के जरिये भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

२. ११ और १२ फरवरीको पास किये प्रस्ताव।

३. पण्डित मोतीलाल नेहरू।

हो, परन्तु इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि असहयोग-आन्दोलनसे सहानुभूति रखनेवाली क्रुद्ध भीड़ने पुलिसके सिपाहियोंकी वहशियाना ढंगसे हत्या की। इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि उस भीड़में राजनीतिक चेतना थी। ऐसी साफ चेतावनीपर ध्यान न देना अपराधपूर्ण काम होता।

मैं तुम्हें बता दूँ कि इस घटनाके बाद मेरे लिए कोई चारा नहीं रह गया था। वाइसरायको पत्र[1] भेजते समय मन शंकाओंसे खाली नहीं था, जैसा कि उसकी भाषासे जाहिर है। मद्रासकी कार्रवाइयोंसे भी मैं बहुत अशान्त हुआ था, लेकिन मैंने चेतावनीकी आवाजको दबा दिया। मुझे कलकत्ता, इलाहाबाद और पंजाबसे हिन्दुओं और मुसलमानोंके पत्र मिले और ये सभी गोरखपुरकी घटनासे पहले मिले थे। उन्होंने मुझे लिखा था कि सारा दोष सरकारी पक्षका ही नहीं हैं, हमारे लोग आक्रमणकारी, उद्धत, धमकी देनेवाले बनते जा रहे हैं। वे हाथसे निकलते जा रहे हैं और उनका रवैया अहिंसात्मक नहीं है। जहाँ फीरोजपुर जिरकाकी घटना[2] सरकारके लिए अपयश-कारी है, वहाँ हम भी सर्वथा निर्दोष नहीं हैं। हकीमजीने बरेलीकी बाबत शिकायत की। मेरे पास झज्जरके बारेमें बड़ी शिकायतें हैं। शाहजहाँपुरमें भी टाउन हालपर जबरदस्ती कब्जा करनेकी कोशिश की गई। कन्नौजसे तो खुद कांग्रेसके मन्त्रीने तार दिया कि स्वयंसेवक उद्दण्ड हो गये हैं। वे हाईस्कूलपर धरना देकर सोलह वर्षसे छोटे लड़कोंको भी स्कूल जानेसे रोक रहे हैं। गोरखपुरमें छत्तीस हजार स्वयंसेवक भरती किये गये, जिसमें से सौ भी कांग्रेसकी प्रतिज्ञाका पालन नहीं करते। जमना-लालजी मुझे बताते हैं कि कलकत्तामें घोर अव्यवस्था है। स्वयंसेवक विदेशी कपड़े पहनते हैं और अहिंसाकी प्रतिज्ञासे कतई बँधे हुए नहीं हैं। ये सब खबरें और दक्षिणसे इससे भी ज्यादा खबरें मेरे पास पहुँची थीं कि चौरीचौराके समाचारोंने बारूदमें जबरदस्त चिनगारीका काम किया और आग लग गई। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि अगर यह चीज मुल्तवी न कर दी जाती तो हम अहिंसक संघर्षके बदले वस्तुतः हिंसक संघर्ष चलाते। बेशक यह सच है कि अहिंसा देशके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक गुलाबके इत्रकी खुशबूकी तरह फैल रही है। परन्तु हिंसाकी दुर्गन्ध अब भी जबरदस्त है और उसकी उपेक्षा करना, या उसके जोरको घटाकर देखना बुद्धिमानी नहीं है। हमारे इस तरह पीछे हटनेसे उद्देश्यमें प्रगति होगी। आन्दोलन अनजानेमें सही रास्तेसे हट गया था। अब हम फिर राहपर वापस आ गये हैं और फिरसे सीधे आगे बढ़ सकते हैं। तुम प्रतिकूल स्थितिमें हो, इसलिए घटनाओंको सही रूपमें नहीं देख सकते और मैं अनुकूल स्थितिमें हूँ इसलिए मैं उन्हें सही रूपमें देख सकता हूँ।

क्या मैं तुम्हें दक्षिण आफ्रिकाका अपना अनुभव बताऊँ? हमारे पास जेलोंमें सभी तरहकी खबरें पहुँचाई जाती थीं। अपने पहले अनुभवके दौरान दो-तीन दिनतक तो मैं चटपटे समाचार सुनकर खुश होता रहा, लेकिन मैंने फौरन समझ लिया कि इस तरह चोरीसे खबरें पानेमें मेरा दिलचस्पी लेना बिलकुल व्यर्थ है। मैं कुछ कर नहीं सकता

१. १ फरवरी, १९२२ का।

२. २३ दिसम्बर, १९२१ की गोलीबारी।

था; मैं लाभप्रद सन्देश नहीं भेज सकता था और मैं व्यर्थ ही अपनी आत्माको कष्ट पहुँचाता था। मैंने अनुभव किया कि जेलमें बैठकर आन्दोलनका पथ-प्रदर्शन करना मेरे लिए असम्भव है। इसलिए मैं तबतक प्रतीक्षा ही करता रहा जबतक कि बाहरवालोंसे मिलने और उनसे खुलकर बातें करनेमें समर्थ नहीं हुआ। फिर भी, मेरी बात सच मानो, मैंने केवल सैद्धान्तिक दिलचस्पी ली; क्योंकि मैंने महसूस किया कि कोई निर्णय करना मेरे अधिकारके बाहर है और मैंने देखा कि मैं बिलकुल सही रास्तेपर हूँ। मुझे याद है कि किस तरह हर बार जेलसे छूटनेके समयतक मेरे जो विचार बनते थे, उन्हें तुरन्त रिहाईके बाद और रूबरू जानकारी मिलनेपर बदलना पड़ता था। जो कुछ भी हो, जेलके वातावरणके कारण हमारे मनमें सारी बातें नहीं रहतीं। इसलिए मैं चाहूँगा कि तुम बाहरकी दुनियाको अपने खयालसे ही निकाल दो और यह समझ लो कि वह है ही नहीं। मैं जानता हूँ कि यह काम बहुत ही कठिन है, परन्तु यदि कोई गम्भीर अध्ययन शुरू कर दो और शरीर-श्रमका कोई काम हाथमें ले लो तो यह काम हो सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि तुम कुछ भी करो, मगर चरखेसे न उकताओ। तुम्हारे और मेरे पास अपने-आपसे खिब्त होनेके कारण हो सकते हैं, क्योंकि हमने बहुत-से ऐसे काम किये हैं और ऐसी बहुत-सी बातोंका विश्वास किया है। किन्तु इसपर अफसोस करनेके लिए कभी कोई कारण नहीं मिलेगा कि हमने चरखेपर क्यों श्रद्धा केन्द्रित की या मातृभूमिके नामपर हमने रोज इतना अच्छा सूत क्यों काता। तुम्हारे पास 'भगवद्गीता' का एडविन अर्नाल्ड कृत अनुवाद तो है। मैं तुम्हें एडविन अर्नाल्ड-जैसा बेमिसाल अनुवाद तो नहीं दे सकता, मगर मूल संस्कृतका उल्था यों है, "सत्प्रयत्न बेकार नहीं जाता, नष्ट तो होता ही नहीं। इस धर्मका स्वल्प पालन भी मनुष्यको महान् भयसे बचा लेता है।" इस धर्मका आशय कर्मयोगसे है और हमारे युगका कर्मयोग चरखा है। प्यारेलालकी मार्फत मेरा खून जमा देनेवाली बातें तुमने कहलाई थीं, लेकिन अब तुम्हारा उत्साहवर्धक पत्र आना चाहिए।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

१८१. पत्र : विजयलक्ष्मी पण्डितको

[बारडोली
१९ फरवरी, १९२२]

प्रिय सरूप,[1]

अगर तुम्हारा खयाल है कि उपर्युक्त पत्रसे[2] लखनऊके बन्दियोंको कुछ ढाढ़स मिल सकता है तो अगली बार जब तुम जवाहरलालसे मिलो तब इसको पढ़कर सुना देना। वैसे भी मुझे जरूर बताना कि वहाँके क्या हाल-चाल हैं। आशा है, तुम लोगोंमें से कोई दिल्ली आ रहा है। तुम्हारे नाम लिखे पिताके पत्रोंमें से एक रणजीतने मेरे पढ़नेके लिए भेजा था।

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :] प्यारेलाल बताते हैं कि तुम्हारे नाम भेजा पत्र देरसे मिलनेकी सम्भावना रहती है। इसलिए यह पत्र दुर्गाकी मार्फत भेजा जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

१८२. तार : देवदास गांधीको

बारडोली
२० फरवरी, १९२२

देवदास गांधी
कांग्रेस कमेटी
गोरखपुर

यदि सम्भव हो तो दिल्ली अवश्य आओ।[3]

बापू

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७९४५) की फोटो-नकलसे।

१. श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित; जवाहरलाल नेहरूकी बहन।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. २४ और २५ फरवरीको होनेवाली अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लेनेके लिए गांधीजी अपने पांच दिनके उपवासके बाद दिल्लीके लिए रवाना होनेवाले थे।

१८३. पत्र : अ० भा० कां० कमेटीके अध्यक्षको

बारडोली
२२ फरवरी, १९२२

सेवामें
अध्यक्ष कार्य-समिति,
अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, दिल्ली

महोदय,

पिछली ३१ जनवरीको सूरतमें हुई कार्य-समितिकी बैठकमें निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया गया था:

> **यह कार्य-समिति लिखित रूपसे अपनी यह दृढ़ धारणा व्यक्त करती है कि भारतकी राजनीतिक दशाके बारेमें विदेशोंमें सही खबरें पहुँचाना नितान्त आवश्यक है और विदेशोंमें प्रचार सम्बन्धी सारा पत्र-व्यवहार जो इस समितिके मन्त्रीके पास है वह सबका-सब महात्मा गांधीके हवाले करती है। और प्रार्थना करती है कि वे शीघ्र ही इस सम्बन्धमें एक निश्चित योजना तैयार करें ताकि यह समिति अगली बैठकमें उसपर विचार कर सके।**

प्रस्तावपर तथा मन्त्री महोदय द्वारा मेरे पास भेजे गये कागजोंको पढ़ने तथा उनके मजमूनोंपर विचार करनेके बाद मेरा निवेदन है:

मेरे विचारसे वर्तमान स्थितिमें यह न केवल अवांछनीय है वरन् हानिकर सिद्ध हो सकता है कि किसी अन्य देशमें कोई ऐसा कार्यालय स्थापित किया जाये जो उस देशमें भारतकी राजनैतिक दशाकी सही जानकारी कराता रहे। मैं ऐसा क्यों मानता हूँ इसके कारण नीचे दिये जाते हैं:

अव्वल तो यह है कि उससे जनताका ध्यान बँट जायेगा, और बजाय इसके कि लोगोंको इसकी अनुभूति होने लगे कि हमें पूरी तरह अपनी शक्तिपर निर्भर रहना है, वे इस विषयमें विचार दौड़ानेके लिए विवश होंगे कि हमारे प्रचारका विदेशोंमें क्या असर हो रहा है और विदेशोंसे राष्ट्रीय उद्देश्यको क्या सहायता प्राप्त हो सकती है। इसका यह अर्थ नहीं कि हम संसारकी सहायताकी परवाह ही नहीं करते परन्तु उसकी मदद पानेका तरीका यही है कि हममें अपने प्रत्येक कामको ठीकसे करनेका आग्रह हो और इसका विश्वास रखें कि सत्यमें स्वयं ही अपना प्रसार करनेकी क्षमता है।

१. दिसम्बर १९२० में दो बातें तय की थीं। एक तो यह कि विदेशोंमें किया जानेवाला प्रचार-कार्य बन्द किया जाये और दूसरे ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी तथा उसके द्वारा लन्दनसे प्रकाशित होनेवाले इंडियाका प्रकाशन बन्द कर दिया जाये। देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १८६।

दूसरे, मेरा अनुभव यह कहता है कि जब किसी विशेष कामके लिए कोई एजेंसी स्थापित की जाये तो कुछ हदतक उसमें स्वतन्त्र दिलचस्पी खत्म हो जाती है और हमारे विदेश-स्थित कार्यालय जो-कुछ प्रचार करते हैं उसे अमुक पक्षका प्रचार माना जाता है और उसे कोई महत्त्व नहीं दिया जाता।

तीसरी बात यह कि इस प्रकारकी एजेंसियोंपर कांग्रेस काफी कठोर अंकुश नहीं रख सकेगी और संघर्षके बारेमें गलत सूचना और गलत विचारोंके अधिकृत प्रसारणका बहुत बड़ा खतरा बना रहेगा।

चौथी बात यह कि वर्तमान कालमें किसी उपयोगी व्यक्तिको विदेशोंमें मात्र समाचार प्रसारणके कामके लिए भारतके बाहर भेज पाना सम्भव नहीं है, क्योंकि देशके अन्दर काम करनेके लिए ही ऐसे आदमी बहुत कम हैं।

इसलिए मेरी राय यह है कि कांग्रेसके बुलेटिनोंके प्रकाशन-कार्यकी व्यवस्था कुछ और अच्छी बनानी चाहिए, और यदि जरूरी हो तो इसी कामके लिए एक विशेष सम्पादक रख लिया जाये और संसारकी मुख्य समाचार एजेंसियोंको कांग्रेस बुलेटिन नियमित रूपसे भेजा जाया करे। उसको यह निर्देश दे देना चाहिए कि वह ऐसे समाचारपत्रों अथवा समाचार वितरण-केन्द्रोंसे जो भारत सम्बन्धी प्रश्नोंके बारेमें दिलचस्पी लेते हों, पत्र-व्यवहार करने लगे।

दक्षिण आफ्रिकामें मैंने जिन समाचारपत्रोंका सम्पादन किया है उस अनुभवके आधारपर मेरी यह निश्चित राय है कि कांग्रेसका कार्य जितना ठोस होगा और उसके सदस्योंका, स्त्री हों या पुरुष, कष्ट-सहन जितना ही अधिक होगा उतना ही ज्यादा हमारे आन्दोलनका बिना विशेष श्रम किये प्रचार होगा। मुझे 'यंग इंडिया'के प्रकाशनके सम्बन्धमें रोज-रोज जो पत्रादि संसारके सभी भागोंसे मिलते रहते हैं उनसे मैं देखता हूँ कि भारतीय मामलोंमें इतनी अधिक दिलचस्पी पहले कभी नहीं ली गई थी, जितनी आज ली जा रही है। हमारी यातनाएँ अनुपातमें जितनी ज्यादा बढ़ेंगी उतनी ही लोगोंकी दिलचस्पी बढ़ेगी। इसलिए भारतकी राजनैतिक स्थिति सम्बन्धी समाचारके प्रचारका सबसे अधिक अच्छा तरीका कांग्रेसके कामको और भी शुद्ध बनाना, उसे अच्छी तरह संगठित करना और कष्ट-सहनकी भावनाको और भी अधिक मात्रामें जगाना है। इससे न केवल जिज्ञासा तीव्र होती है, वरन् लोग स्थितिके बारेमें असलियत और अन्दरूनी बात समझनेके लिए और अधिक उत्सुक हो जाते हैं।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ९-३-१९२२

१८४. टिप्पणियाँ

एक बहुत बढ़िया चुनाव

सरदार खड्गसिंहको प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्षके रूपमें आगा मुहम्मद सफदरका उत्तराधिकारी चुनकर कांग्रेस कमेटीने एक बहुत अच्छा काम किया है। वह इससे अच्छा चुनाव नहीं कर सकती थी। सरदार साहबका सम्मान करके कमेटीने स्वयं अपना सम्मान किया है। सरदार खड्गसिंहका चुनाव अपने-आपमें सिखोंका उनकी वीरता, त्याग और देशभक्तिके लिए एक सुन्दर अभिनन्दन भी है। इन दिनों किसी भी कांग्रेस कमेटी, खिलाफत समिति या गुरुद्वारा समितिके अध्यक्षका पद कोई आराम और चैनका पद नहीं है। सरकारने भारतकी जनतापर जो साधारण और असाधारण कानून लाद रखे हैं, उनके मातहत इस या उस अपराधके लिए चलनेवाले मुकदमे कई प्रान्तोंमें एक आम बात हो गये हैं। केवल कुछ प्रान्तोंको छोड़कर, अधिकांशमें इस प्रकारकी कमेटियोंमें कुछ पदाधिकारियोंने सरकार बहादुरके "होटलों"को आबाद करनेमें भी अंशदान किया है। इसलिए मैं सरदार खड्गसिंहको राष्ट्रके जीवनके इस तूफानी समयमें इस पदका भार सँभालनेका साहस करनेके लिए बधाई देता हूँ।

दोनों पक्षोंके लिए सन्तोषप्रद

लगता है, नेताओंकी गिरफ्तारीसे सरकार और जनता दोनोंको सन्तोष होता है। यह तो जाहिर ही है कि सरकारको इससे सन्तोष होता है, वरना वह नेताओंको जेल भेजनेकी जहमत क्यों उठाती। उसका खयाल है कि इस प्रकार वह असहयोग आन्दोलनको कुचल सकेगी। इसी तरह यह भी जाहिर है कि जनता इन गिरफ्तारियोंसे सन्तुष्ट है, क्योंकि जिन जगहोंमें ये गिरफ्तारियाँ हो रही हैं, वहाँ आन्दोलन आगे बढ़ रहा है। सबसे ताजा उदाहरण नेलोरका है। हालाँकि वहाँ दृढ़तासे काम हो रहा था, फिर भी उत्साहका वह वातावरण नहीं था जो अब निश्चित रूपसे वहाँ होगा। एक मान्य कार्यकर्त्ताने लिखा है:[1]

> . . . यहाँ भी अधिकारी हमारे आन्दोलनको आगे बढ़ानेके लिए जनताके साथ सहयोग कर रहे हैं। हालमें उन्होंने जिला कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष, मन्त्री और तीन अन्य सदस्योंको एक-एक सालकी कड़ी कैदकी सजा देकर हमारा बड़ा उपकार किया है। . . . कमेटीके मन्त्री हैं श्री राम रेड्डी, जो आपकी नेलोर यात्राके समय आपके मेजवान थे। . . . वे रेड्डी जातिके सबसे प्रभावशाली परिवारसे सम्बन्धित हैं, और उनके मुकदमेने हमारे सन्देशको दूर-दूर, ऐसे-ऐसे स्थानोंतक फैला दिया है जहाँ उसकी पहुँच लगभग असम्भव थी। . . .

१. यहाँ केवल कुछ अंश दिये जा रहे हैं।

श्री वेंकटप्पैयाने अभी कुछ ही दिन पहले मुझे पत्र लिखते हुए यह आशंका व्यक्त की थी कि हो सकता है कि सरकार श्री रेड्डीके मुकदमेको आगे न बढ़ाये, क्योंकि वे अपने जिलेके एक सबसे प्रभावशाली नेता हैं। उन्हें डर था कि अगर यह मुकदमा उठा लिया गया तो जनताका बढ़ता हुआ जोश ठंडा पड़ जा सकता है। लेकिन सरकारने श्री वेंकटप्पैय्याकी आशंकाको दूर कर दिया है, और श्री रेड्डीके कारावाससे नेलौरमें ऐसी जागृति आ गई है वैसी पहले कभी यहाँ नहीं थी।

अध्यक्षको सिर्फ छः महीनेकी सादी कैद!

मौलाना आजादको बहुत कम समयकी सजा हुई है। इसपर खुद मौलाना साहब तथा उनकी बेगम साहिबाने इस बातकी शिकायत की है कि बस, इतने कम समयकी सजा। यह तो बहुत ही नाकाफी है। अब इस हालतमें कांग्रेसके अध्यक्ष[1] और उनकी सहधर्मिणीको यह सुननेपर क्या महसूस हुआ होगा कि श्री ससमलके साथ उन्हें छः महीनेकी सादी कैदकी सजा दी गई है। यदि ऐसी ही प्रभावहीन सजा देना अभीष्ट था, तो सरकार ही बतला सकती है कि अभियोग चलाने और बार-बार फैसले मुल्तवी रखनेकी क्या आवश्यकता थी। कुछ विश्वसनीय सूत्रोंसे यह खबर भी सुननेको मिली है कि सरकार मौलाना और देशबन्धु दोनोंको छोड़ देनेका कोई मौका ताक रही है। एक और भी खबर मिली है जो कि विश्वस्त सूत्रसे आई मानी जाती है; पर मैं उसे प्रकट नहीं कर सकता, और पाठकोंके लिए उसका कोई महत्त्व भी नहीं है। हमें तो, और अध्यक्षको भी, जैसा आ पड़े उसीको खुशी-खुशी मंजूर कर लेना चाहिए। कुछ लोग मुझे बड़े कटु पत्र भेज रहे हैं। वे मुझपर भोलेपन, संगदिली, कमजोरदिली तथा इसी तरहकी दूसरी कमजोरियोंका इलजाम लगा रहे हैं। कुछ सज्जन कहते हैं कि मैंने जेल-यात्रियोंके महती उद्देश्योंकी बलि चढ़ा दी है। कुछ लोगोंका कथन है कि मैंने कांग्रेसके अध्यक्ष महोदयके साथ बेईमानी की है और असहयोगके सभी आदर्शोंको धता बतला दी है। परन्तु सौभाग्यवश कितने ही वर्षोंकी सार्वजनिक सेवाओंकी बदौलत मेरी चमड़ी काफी मोटी हो गई है और ये तीर उसे बेध नहीं पाते। परन्तु मैं इन तमाम अधीर पत्र-लेखकोंको यकीन दिलाता हूँ कि इन प्रस्तावों द्वारा असहयोग-सिद्धान्तका किंचिन्मात्र त्याग नहीं किया गया है। बल्कि इसके विपरीत, प्रकृतिकी ओरसे चेतावनियाँ होते हुए भी, सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनके स्थगनसे मुँह मोड़ना असहयोगके मूलभूत सिद्धान्तका पूर्णरूपसे त्याग करना होता। कैदियोंको छोड़ देनेकी बात तो, जब कि वह राष्ट्रीय सम्मानका प्रश्न हो गया, मैंने ही जान-बूझकर पेश की थी; क्योंकि त्रिविध लक्ष्य — स्वराज्य, खिलाफत और पंजाब — की शीघ्र प्राप्तिके प्रश्नने बदलकर त्रिविध स्वातन्त्र्य — भाषण, लेखन और सम्मेलन — की शीघ्र प्राप्तिके प्रश्नका रूप ले लिया था, और उस हालतमें कैदियोंको छोड़ देनेकी माँग करना स्वाभाविक हो गया था। लेकिन चौरीचौराने एक दूसरा ही प्रश्न उपस्थित कर दिया है, अर्थात् घोर प्रायश्चित्त और आत्मशुद्धिका कठोरतम प्रयास। और इस प्रायश्चित्तजन्य आत्मशुद्धिके लिए हमें कुछ समयतक अपनी कितनी ही हलचलें, जिनकी बदौलत राष्ट्रमें नवजीवनका संचार

१. चित्तरंजन दास, मनोनीत अध्यक्ष।

हुआ है, बन्द रखनेकी आवश्यकता है। लेकिन ऐसा तो तमाम युद्धोंमें होता ही है; और आध्यात्मिक युद्धमें तो और भी अधिक होता है। और क्या हमारा यह दावा नहीं है कि हमारा यह युद्ध आध्यात्मिक है? मैं इसे आध्यात्मिक इस अर्थमें कहता हूँ कि हमने अपने ध्येयकी सिद्धिके लिए शारीरिक बलका प्रयोग न करनेका पक्का संकल्प कर रखा है। खतरा यह पैदा हो गया था कि कहीं हम अपने पथसे भ्रष्ट न हो जायें, कहीं हमारा जहाज अपने लंगरसे छूटकर दिशाहीन और बेसहारा होकर लहरोंकी मरजीपर जहाँ-तहाँ न भटकने लगे; और इसलिए वापस लौटना आवश्यक था। पर वापसीका मतलब केवल इतना ही है कि हम अधिक शुद्ध हो जायें, हमारी ग्रहणशीलता, हमारी समझदारी बढ़ जाये जिसका मतलब है कि हमारे अन्दर अधिक बल आ जाये; और यदि असहयोगियोंको इस राष्ट्रीय संग्रामके सधे-तपे योद्धा बनना है तो निस्सन्देह वे प्रतीक्षा और तैयारीका मूल्य समझेंगे। जो शख्स तैयारी तक अथवा कोई दूसरी कमी पूरी करनेके लिए ठहरा रहता है, वह भी लक्ष्यकी पूर्तिमें उतना ही योग देता है जितना कि वह योद्धा जो मोर्चेपर तीन फुट गहरी खाईमें खड़ा रहता है। यदि हम युद्ध-शास्त्रके, फिर वह चाहे शारीरिक युद्ध हो या आध्यात्मिक, इन तत्त्वोंको नहीं समझेंगे तो हमारा यह सारा बलिदान व्यर्थ चला जायेगा।

मलाबारका पुनर्निर्माण

श्री माधवराव और सर्वेंट्स आफ इंडिया सोसाइटीके अन्य कार्यकर्त्ताओं तथा यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशनके मन्त्रियोंने मलाबारके पुनर्निर्माणके सम्बन्धमें संयुक्त रूपसे एक प्रश्नावली जारी की है। इन प्रश्नोंको विस्तारसे तैयार किया गया है; और इनमें सभी विषयोंका समावेश है—आर्थिक, औद्योगिक, शैक्षणिक और नागरिक तथा सामान्य विषय, सबके-सब आ गये हैं। मैं इनमें से केवल एकपर विचार करना चाहता हूँ। मेरा मत है कि यह अन्य सभी प्रश्नोंको हल कर देता है। मलाबारके पीड़ित जनोंके पुनर्वासके लिए ऋण तथा अन्य चीजोंकी व्यवस्था करना एक बहुत कठिन काम सिद्ध होगा। परन्तु यदि अभावग्रस्त जनोंको चरखे दिलवा दिये जायें तो अधिकांश प्रश्न अपने-आप हल हो जायेंगे। इस कामको कमसे-कम पूंजीसे किया जा सकता है, और इससे मलाबारी लकड़ी-उद्योगमें स्थायी वृद्धि होगी, क्योंकि चरखोंके लिए इस लकड़ीकी बहुत जरूरत है और मलाबारके लिए इस लकड़ीका कोई विशेष महत्त्व नहीं है। इस प्रकार बिना किसी अतिरिक्त प्रयासके बहुतसे सहायक उद्योगोंको भी शक्ति और प्रोत्साहन प्राप्त हो सकेगा। इसलिए मैं पुनर्निर्माण योजनाके आयोजकोंसे इस एकमात्र सुझावपर दिलसे विचार करनेकी सिफारिश करना चाहता हूँ। यह एक ऐसा बुनियादी सत्य है जिसको ध्यानमें रखकर ही अन्य सभी योजनाएँ चलनी चाहिए। ऐसा करनेपर आयोजक देखेंगे कि इस प्रकार तैयार की गई योजनाओंमें बहुत किफायतमें काम चल जाता है; और वह कारगर भी है तथा उसमें किसी तरहके अपव्ययकी भी कमसे-कम गुंजाइश है।

आदर्श पिता और आदर्श पुत्र

कुछ सप्ताह पहले मैंने तीनों मालवीयोंके जेल जानेके सम्बन्धमें कुछ लिखा था और बतलाया था कि गोविन्द मालवीयने अपने अन्तःकरणकी आवाज अनसुनी न कर पानेपर किस विनम्रता और अपने पिताके प्रति किस भक्ति-भावसे, पण्डितजीके न चाहने पर भी, जेलयात्रा की थी।[1] अब गोविन्दने मुझे पण्डितजीके उस पत्रकी एक प्रति भेजी है, जो उन्होंने गोविन्दके नाम भेजा था। पाठकोंके लिए उसका अनुवाद प्रस्तुत है। मूल पत्र हिन्दीमें ही है:

गोविन्दको आशीर्वाद। ईश्वर तुम्हें चिरायु करे।

तुम्हारा पत्र मिला। अन्यथा व्यस्त होनेके कारण मैं इससे पहले उसका उत्तर नहीं दे पाया। मैं तुमसे नाराज नहीं हूँ। मनमें ऐसी कोई आशंका रख-कर दुःखी मत हो। हाँ, माडर्न हाईस्कूलपर धरना देना मुझे पसन्द नहीं आया। स्कूल कोई ऐसा स्थान तो है नहीं जहाँ पाप पलता हो या जो सामाजिक जीवनमें विष घोलता हो कि बच्चोंको वहाँ जानेसे रोकनेके लिए धरना देना पड़े। परन्तु तुम्हारा और कृष्णका सार्वजनिक सभामें जाना और उपस्थित जनोंको कांग्रेसका सन्देश सुनाना सर्वथा उचित था। सरकारने जो नीति अपनाई है वह बिलकुल बेजा है। आशा है, वह नीति बदली जायेगी। तुम बिलकुल प्रसन्न रहो। तुमने अपनी गिरफ्तारीके बारेमें श्री गांधीको जो पत्र लिखा था वह उन्होंने मेरे पास भेज दिया है।

उपर्युक्त पत्र १३ जनवरीका है।

पण्डितजीने इसी तारीखको एक पत्र कृष्णकान्त मालवीयको भेजा था, जो इस प्रकार है:

खेद है कि इधर कुछ दिनों मैं इतना अधिक व्यस्त रहा कि तुम्हें और गोविन्दको पत्र लिख ही नहीं सका। इस समय मैं रातको ग्यारह बजे पत्र लिखने बैठा हूँ।

सभामें तुम्हारा बोलना बिलकुल ठीक था। एसी किसी आशंकासे दुःखी मत रहना कि मैंने तुम्हारे उस कामको पसन्द नहीं किया। मैंने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी (बल्कि कहना चाहिए विषय-निर्धारिणी समिति)की अहमदाबादकी बैठकमें कहा था कि यदि सरकार कांग्रेस स्वयंसेवक-संस्थाओंको "गैर-कानूनी" करार देनेकी अधिसूचना वापस नहीं लेती तो ऐसे स्वयंसेवकों-का उसका उल्लंघन करके जेल जाना बिलकुल उचित होगा।

मैंने अन्य कुछ लोगोंके साथ मिलकर जो सम्मेलन बुलाया है उसकी बैठक कल होगी। साथके पत्रसे तुम्हें सम्मेलनके उद्देश्यका पता चल जायेगा। श्री

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-१-१९२२ का उप-शीर्षक "मालवीय परिवार"।

गांधी और शंकरन् नायर, सर विश्वेश्वरैया और अन्य कई लोग आ पहुँचे हैं। आज कई घंटेतक आरम्भिक ढंगकी चर्चा चलती रही। आशा है, इसका कुछ अच्छा ही परिणाम निकलेगा।

पूर्णतया प्रसन्नचित्त रहना। जेलमें अपने किसी भी सहयोगीको ऐसा कोई खयाल न होने देना कि तुम्हारी सजा छः महीनेकी सख्त कैदसे बदलवाकर सादी कैद करानेमें मेरा कोई हाथ है। मैंने तुम लोगोंकी सजाओंके बारेमें किसीसे भी कोई शिकायत नहीं की, हालाँकि इनकी क्रूरता देखकर मुझे दुःख अवश्य हुआ है।

मैं इलाहाबाद लौटनेपर तुम दोनोंसे जेलमें मुलाकात करनेकी सोच रहा था। पर अब तो तुम्हें आगरा जेल भेज दिया गया है, इसलिए अभी कुछ दिनोंतक मुलाकात शायद न हो पाये। पर इससे कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। तुम्हें यह जानकर दिली खुशी होगी कि अगले कुछ महीनोंके लिए मेरे हाथमें बहुत काफी काम है। शेष अगले पत्रमें।

गोविन्दने पत्रकी एक प्रति मेरे पास भेजते हुए लिखा है कि सम्मेलन बुलानेके सिलसिलेमें भेजा गया परिपत्र कृष्णकान्तको नहीं दिया गया था। उसने यह भी लिखा था कि मैं पण्डितजीकी अनुमति लिये बिना दोनों पत्रोंको प्रकाशित न करूँ। इन दोनों पत्रोंको मैंने सार्वजनिक दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण समझा, और इसलिए मुझे लगा कि इन्हें प्रकाशित कर देना चाहिए। सो आवश्यक अनुमति लेकर मैंने दोनों पत्र जनताके लाभके लिए प्रकाशित कर दिये हैं। मेरी दृष्टिमें ये दोनों पत्र बड़े कीमती हैं। ये इस बातके उदाहरण हैं कि कौटुम्बिक जीवन कैसा होना चाहिए। मालवीय परिवारके भिन्न-भिन्न व्यक्तियोंमें परस्पर कितनी सहिष्णुता है तथा तरुण लोग किस प्रकार अपनी स्वतन्त्रताको कायम रखते हैं और किस प्रकार बुजुर्ग लोग उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त इन पत्रोंसे पण्डितजीके चरित्रकी उदात्तता प्रकट होती है। यदि आज वे जेलमें नहीं हैं, तो इसका कारण यह नहीं कि वे जेलसे डरते हैं, बल्कि यह है कि अभी उन्हें जेलका मार्ग ठीक नहीं दिखाई दिया है। उनके निकट सम्पर्कमें रहनेवाला ऐसा कौन है जो यह नहीं जानता कि वे आजकल परस्पर विरोधी कर्तव्योंको लेकर उठे मानसिक द्वन्द्वसे कितने अधिक पीड़ित रहते हैं और कितने चिन्ताग्रस्त रहते हैं? मुझे अक्सर यह लगा करता है कि यदि उन्हें जेल भेज दिया जाये तो इन लगातार चिन्ताओं और झंझटोंसे, जो कि उनके जैसा सार्वजनिक जीवन व्यतीत करनेवाले के पीछे लगी रहती हैं, उन्हें निश्चय ही छुटकारा मिल जायेगा।

मैंने इन दोनों पत्रोंको इसलिए प्रकाशित किया है कि असहयोगी लोग आम तौरपर सहिष्णुताका महत्त्व समझें। मेरा यह विश्वास है, और मैं चाहता हूँ कि पाठक भी इसे स्वीकार करें कि यद्यपि पण्डितजीके सदृश देशकी सेवा करनेवाला कोई भारतीय आज मौजूद नहीं है, तथापि इंडिपेंडेंटोंमें तथा नरम दलमें ऐसे भी लोग हैं जो हमसे सहमत नहीं हो पाते। इसलिए नहीं कि वे कमजोर हैं; बल्कि इसलिए

कि उनकी दृढ़ कर्त्तव्य-भावनाका यही तकाजा है। यदि हम अपने प्रतिपक्षियोंके प्रति आवश्यक विनम्रता, उदारता और सहनशीलताके भाव ही अपने हृदयमें रखें और उनकी ईमानदारीपर सन्देह न करें, तो मैं जानता हूँ कि हम कितने ही ऐसे सज्जनोंको अपनी ओर कर सकेंगे जो आज हमारी असहिष्णुताकी बदौलत हमारे खिलाफ खड़े हैं। जब बहुसंख्यक लोग असहिष्णु हो जाते हैं तब लोग उनसे डरते हैं, उनका अविश्वास करते हैं, और अन्तमें उनसे घृणा करने लगते हैं, और यह ठीक भी है। यदि असहयोगियोंके पक्षमें जनताका बहुत बड़ा भाग हो, जैसा कि मुझे विश्वास है कि है, तो अवश्य ही उनके लिए यही उचित है कि वे अपने मतोंपर पूरी दृढ़तासे डटे रहनेके साथ-साथ अल्पसंख्यक लोगोंके साथ सहनशीलता, दया और आदरका बरताव रखें। असहिष्णुता एक प्रकारकी कमजोरी है और उसके द्वारा इस आरोपकी पुष्टि होती है कि यद्यपि इस आन्दोलनका उद्देश्य द्वेष पैदा करना नहीं है पर उससे द्वेष फैलता अवश्य है। मुझे आशा है कि ऊपर उद्धृत दोनों पत्र असहयोगियोंको अपने तईं सावधान कर देंगे।

गोरखपुरकी दुर्घटना असहिष्णुताके सबल उदाहरणके सिवा और क्या थी? हम अक्सर इस बातको भूल जाते हैं कि हमारा एक कर्त्तव्य यह भी है कि हम पुलिस और फौजवालों को भी अपने मतका बना लें। हम आतंकके बलपर ऐसा कभी नहीं कर सकते। लोगों द्वारा सामूहिक तौरपर किये गये उन अमानुषिक कार्योंने पुलिसमें व्याप्त अन्धेरगर्दी और भ्रष्टाचारको और भी बढ़ा दिया है, अब उसने बदलेकी कार्रवाई शुरू कर दी है जिससे हमें सदमा पहुँचा है। हमें यह बात सदैव ध्यानमें रखनी चाहिए कि भ्रष्ट सरकार और भ्रष्ट पुलिसका होना सूचित करता है कि सरकार और पुलिसके भ्रष्टाचारके सामने सिर झुकानेवाले लोगोंमें भी भ्रष्टाचार मौजूद है। आखिरकार इस कथनमें भी बहुत-कुछ सत्य है कि "यथा राजा तथा प्रजा"। इस बातको समझनेके लिए यह जरूरी नहीं कि हम धार्मिक दृष्टिसे अहिंसाके सिद्धान्तके कायल हों ही कि हमें पुलिस और फौजको, जिनमें ज्यादातर हमारे ही देशभाई हैं, दया और सहनशीलताके द्वारा, बल्कि उनकी पाशविकताको भी सहकर अपनी तरफ करना है। निश्चय ही अधिकांश मामलोंमें वे बेचारे जानते ही नहीं हैं कि वे कर क्या रहे हैं।

सविनय अवज्ञाका मर्म

एक मित्रने, जो कांग्रेस-अधिकारी हैं, शिमलासे लिखा है:[1]

> . . . विभिन्न कांग्रेस-संगठनोंके कुछ सदस्योंने. . . कानूनकी अवज्ञा करनेके कुछ नये तरीके निकाले हैं। उदाहरणार्थ, वे सरकार द्वारा गैर-कानूनी घोषित किये गये उस 'जख्म-ए-पंजाब' जैसे कुछ नाटकोंका अभिनय करते हैं, जो कुछ समय पहले मुल्तानमें खेला गया था और हालमें ही शिमलामें भी खेला गया तथा दोनों जगह इस सिलसिलेमें कुछ गिरफ्तारियाँ भी हुईं। अखिल

१. यहाँ केवल कुछ अंश दिये जा रहे हैं।

भारतीय कांग्रेस कमेटीके प्रस्तावके अनुसार कानूनकी अवज्ञा १५ जनवरी, १९२२ से शुरू होनेवाली थी। इसलिए मैं जानना चाहता हूँ कि निर्धारित समयसे पूर्व ही इस तरहकी जो अवज्ञा की गई है, उसके सम्बन्धमें आपकी सम्मति क्या है। इसके अलावा, कृपया यह भी बतायें कि क्या इन नाटकोंके अभिनेताओंने अवज्ञाकी भावनासे प्रेरित होकर सरकारको यह पूर्व-सूचना देकर कि वे एक गैर-कानूनी नाटकका अभिनय करने जा रहे हैं और इस प्रकार गिरफ्तारियों-को न्यौता देकर ठीक काम किया?

इसके साथ ही मैं उस विप्लवी साहित्यकी ओर भी आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ जो दिल्ली तथा अन्य स्थानोंसे प्रकाशित हो रहा है और छोटे-छोटे बच्चों तथा कुछ गैरजिम्मेदार स्वयंसेवकों द्वारा जिसका सार्वजनिक पाठ किया जाता है और जिसमें ऐसी सामग्री है जो अहिंसक असहयोगके सिद्धांतसे स्पष्ट ही मेल नहीं खाती। क्या मैं पूछ सकता हूँ कि इस प्रकारके प्रचारसे सहायता मिलनेकी बजाय शरारतपूर्ण परिणाम ही नहीं निकलेंगे?

यदि यह नाटक १५ जनवरीसे पहले खेला गया था तो निश्चय ही अनुचित था। यदि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी अनुमतिके बिना ऐसा किया गया हो, तो यह भी अनुचित था। सविनय अवज्ञाके प्रत्येक रूपके लिए स्थानीय कांग्रेस कमेटीकी पूर्वस्वीकृति अनिवार्य है। यदि इस नाटकका उद्देश्य अनावश्यक रूपसे उत्तेजना और घृणा फैलाना रहा हो, तो इस दृष्टिसे भी इस नाटकका खेला जाना अनुचित था। यदि यह मान लिया जाये कि जिन शर्तोंका मैंने उल्लेख किया है, उन सबको पूरा किया गया था, तो नाटकके व्यवस्थापकोंने शालीन ढंगसे सरकारको पूर्वसूचना देकर बिलकुल ठीक किया, क्योंकि सविनय अवज्ञाका मर्म यही है कि वह सार्वजनिक या प्रकट रूपसे की जाती है और विशेष रूपसे उन्हें बताकर की जाती है जो गिरफ्तारी करनेका काम करते हैं।

जहाँतक "विप्लवी साहित्य" का सम्बन्ध है, यह दुःखकी बात है कि पत्र-लेखक द्वारा उल्लिखित पुस्तिकाओं-जैसी चीजें प्रकाशित होती हैं और उनका इतना अधिक प्रचार होता है। पत्र-लेखकने ऐसी दो पुस्तिकाओंका उल्लेख किया है। मैं उनके नाम नहीं दे रहा हूँ। एक अन्य पत्र-लेखकने इनमें से एक पुस्तिका मेरे पास मेरे ज्ञानवर्धन और सम्मतिके लिए भेजी है। इसका नाम और इसकी विषयवस्तु दोनों ही आपत्ति-जनक हैं; उनमें घृणाके अलावा और कुछ नहीं है। यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम प्रत्येक अन्यायको जनताकी नजरोंमें लायें, लेकिन इसके अनेक तरीके हैं। किसी बातको आपत्तिजनक ढंगसे दूसरोंपर आक्षेप करते हुए पेश करनेसे कोई लाभ नहीं। आक्षेप तो तथ्यमें ही निहित है। इस प्रकारके तथ्योंको बढ़ा-चढ़ाकर पेश करनेसे, जो दोष हम दिखाना चाहते हैं, वह पूरी तरह उभर नहीं पाता, तथा वर्तमान समयमें, जब कि लोगोंने अहिंसाकी शपथ ली है, इस प्रकारके साहित्यका प्रकाशन बहुत निन्दनीय है। इससे क्रोधकी भावना फैलती है और सविनय अवज्ञाका काम और भी कठिन हो जाता है।

मेरी साख उठ गई

लाहौरसे एक मित्रने एक गुमनाम पत्र भेजा है। वह दहला देनेवाला पत्र[1] इस प्रकार है:

मंगलवार ११ तारीखको मैंने 'ट्रिब्यून'में अखिल भारतीय कांग्रेसकी कार्य-समितिकी आपत्कालीन बैठकमें पास किये गये प्रस्ताव पढ़े। . . .

लोगोंकी राय यह है कि अब आपने अपना मुँह मोड़ लिया है। आपका चित्त अस्थिर हो गया है। अब वे बिना किसी हिचकिचाहटके सरकारके साथ सहयोग करेंगे और युवराजके स्वागत-समारोहमें शरीक होंगे। . . .

कुछ व्यापारियोंका यह खयाल हो गया है कि आपने शराबकी दुकानों तथा विदेशी कपड़ोंपर से सभी प्रतिबन्ध उठा लिये हैं।

सच कहें तो लाहौरमें तमाम लोग बैठकें कर रहे हैं . . . और वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके इस कदमकी निन्दा कर रहे हैं।

मैं आपसे अपनी ओरसे ये सवाल पूछता हूँ।

(१) क्या आप इस आन्दोलनका नेतृत्व छोड़ देंगे? यदि हाँ, तो क्यों?

(२) कृपया बताइए कि आपने तमाम प्रान्तीय कमेटियोंको ऐसी सूचनाएँ क्यों दी हैं? क्या आपने पण्डित मालवीयको गोलमेज सम्मेलनके लिए यह मौका दिया है, जिससे कोई निपटारा हो जाये; या पण्डितजी इस बातपर तैयार हो गये हैं कि यदि सरकार अपना वचन पूरा न करे, तो वे आपके आन्दोलनमें शामिल हो जायेंगे?

(३) मान लीजिए कि कोई ऐसा समझौता होता हो कि पंजाब और खिलाफतके दुःख दूर कर दिये जायें और स्वराज्यके सम्बन्धमें सरकार सिर्फ और अधिक शासन-सुधार कर दे, तो क्या इससे आप सन्तुष्ट हो जायेंगे अथवा जबतक पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्य न मिले, आप अपनी हलचलें जारी रखेंगे?

(४) फर्ज कीजिए, कोई फैसला न हो पाया। तो क्या पण्डित मालवीय तथा दूसरे तमाम सज्जन, जो इस सम्मेलनसे सम्बन्धित हैं, आपके पक्षमें आ मिलेंगे या इसी तरह तटस्थ बने रहेंगे?

(५) यदि कोई फैसला न हो पाया तो क्या आप, यदि हिंसाका भय हो तो, सविनय अवज्ञाका खयाल छोड़ देंगे?

(६) क्या अब आपका यह इरादा है कि मौजूदा स्वयंसेवक सेना भंग कर दी जाये और सिर्फ वही लोग भरती किये जायें जो सूत कातना जानते हों और हाथ-कती तथा हाथ-बुनी खादी पहनते हों?

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

(७) मान लीजिए कि आपके सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू कर देनेपर कहीं हिंसाकाण्ड हो गया, तो उस समय आप क्या करेंगे? क्या आप उसी दम अपनी गति-विधियाँ बन्द कर देंगे?

इस पत्रमें इससे भी अधिक आलोचना की गई है। पत्र-लेखक कहते हैं कि लोग इतने तंग आ गये हैं कि वे सरकारके साथ सहयोग करनेकी धमकी देते हैं और उन सबका खयाल है कि मैंने लाला लाजपतराय, देशबन्धु चित्तरंजन दास, पण्डित मोतीलाल नेहरू और अली-बन्धुओं आदिको बेच डाला है। पत्र-लेखकका कहना है कि यदि मैं नेतृत्व छोड़ दूँगा तो हजारों आदमी आत्महत्या कर डालेंगे। अब मैं खास तौरपर लाहौरके और आम तौरपर पंजाबके सभी लोगोंको यह यकीन दिलाता हूँ कि मैं उसपर भरोसा नहीं करता जो उनके विषयमें कहा गया है। मार्शल लॉके जमानेमें भी, सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर देनेके कारण, मेरे पास ऐसे ही पत्र आया करते थे, पर मैं उन तमाम खबरोंको अधिकतर गलत ही मानता रहा और जब अक्तूबरमें[1] मैं पंजाब पहुँचा, तो मैंने देखा कि पंजाबके लोगोंकी मनःस्थितिका जो अनुमान मैंने किया था, वह ज्यादा सही था और मुझे मालूम हुआ कि मेरे कार्यके औचित्यपर किसीने अँगुली नहीं उठाई थी। अब तो कार्य-समितिके निर्णयके ठीक होनेपर मुझे और भी अधिक विश्वास है; पर यदि मुझे यह मालूम हुआ कि देश मेरे कार्यका विरोध करता है, तो मैं इसका कुछ खयाल न करूँगा। मैं तो सिर्फ अपने कर्त्तव्यका पालन करूँगा। जो नेता अपनी अन्तरात्माकी आवाजके विरुद्ध आचरण करता है वह किसी कामका नहीं; क्योंकि उसके आसपास तो हर किस्मके विचार रखनेवाले लोग रहते हैं। यदि वह अपने अन्तःकरणकी प्रेरणापर अटल न रहे और उसके संकेतके अनुसार न चले तो वह बिना लंगरवाले जहाजकी तरह न जाने कहाँ बह निकलेगा। और इन सबसे बढ़कर तो यह बात है कि यदि संसार मुझे न अपनाये तो इसे मैं सहन कर लूँगा; पर ईश्वरसे मुँह मोड़ना मेरी कल्पनामें भी नहीं आ सकता। संघर्षके इस नाजुक अवसरपर मैंने जो सलाह दी यदि वह न दी होती तो वह ईश्वर और सत्य दोनोंसे मुँह मोड़ना होता। भारतके अनेक स्थानोंसे — क्या सहयोगी और क्या असहयोगी, सबकी तरफसे — मेरे पास धड़ाधड़ तार और पत्र चले आ रहे हैं। उनमें बारडोलीके निर्णयपर मुझे धन्यवाद दिया जा रहा है और जिनसे मेरे इस विश्वासकी पुष्टि होती है कि देशने इस निर्णयका स्वागत किया है। मालूम होता है कि लाहौरके इन सज्जनने किसी गरमा-गर्म बाजारू बातचीतको जरूरतसे ज्यादा महत्त्व दे दिया है। बारडोलीके इस निर्णयने पहलेके तमाम अनुमानोंको उलट-पलट दिया है। इससे लोगोंमें कुछ ऐसी भावना आना स्वाभाविक ही था। यह खबर सुनते ही लोगोंके दिलको जो धक्का पहुँचा होगा, उसको मैं समझ सकता हूँ। पर मुझे यह भी विश्वास है कि जब लोग अहिंसाके भीतरी और व्यावहारिक आशयका विश्लेषण करने लगेंगे, तब वे कार्य-समितिके निष्कर्षके सिवा किसी दूसरे निष्कर्षपर पहुँच ही नहीं सकते।

१. १९१९ में।

अब मैं पत्र-लेखकके प्रश्नोंके उत्तर देता हूँ:

(१) जबतक मुझे स्पष्ट रूपसे यह मालूम न हो जायेगा कि लोग मुझे नेता बनाये रखना नहीं चाहते, तबतक मेरे नेतृत्व छोड़ देनेकी कोई सम्भावना नहीं। ऐसी इच्छा प्रकट करनेकी एक विधि है — कार्य-समिति अथवा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका मेरे निर्णयके खिलाफ मत देना।

(२) मैं सर्वसाधारणको आश्वस्त करता हूँ कि मेरे इस निर्णयमें पण्डित मालवीयजीका बिलकुल हाथ नहीं है। मैंने अक्सर पण्डितजीकी बातें मानी हैं और जब भी मैं उनकी बात मान सका हूँ उससे मुझे आनन्द ही हुआ है; और जब कभी मुझे उनसे मतभेद रखना पड़ा तब-तब मुझे अवश्य दुःख हुआ है; क्योंकि पण्डित मालवीयजीने देशकी अनुपम सेवा की है। वे त्यागकी साक्षात प्रतिमूर्ति हैं। परन्तु सविनय अवज्ञा मुलतवी करनेका निर्णय तो खुद मैंने ही चौरीचौराकी दुर्घटनाओंका ब्योरा 'क्रॉनिकल' में पढ़कर किया था। बारडोलीसे ही कार्य-समितिके सदस्योंकी बैठकें बुलानेके लिए उन्हें तार किये गये और वहींसे मैंने उनपर एक पत्र[1] द्वारा सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनेकी अपनी इच्छा प्रकट की थी। इसके बाद पण्डितजीके बुलानेसे मैं बम्बई गया। इसमें सन्देह नहीं कि पण्डितजी तथा मालवीय परिषद्के दूसरे मित्र भी मुझसे वहाँ इसीलिए बातचीत करना चाहते थे कि वे मुझे सविनय अवज्ञा स्थगित करने-पर राजी कर सकें। सो जब मैंने उन्हें बताया कि अपने तईं तो मैं ऐसा करनेका निश्चय कर ही चुका हूँ, लेकिन अभी इस खयालसे इस सम्बन्धमें अन्तिम निर्णय नहीं किया है कि कार्य-समितिके सदस्योंसे इस बारेमें पूरी चर्चा कर लूँ, तो उन्हें बड़ी खुशी हुई और आश्चर्य भी। गोलमेज सम्मेलन अथवा किसी समझौतेकी कोई बात इस स्थगनसे सम्बन्ध नहीं रखती। मेरी रायमें तो गोलमेज सम्मेलन निष्फल ही सिद्ध होगा। स्थितिको अच्छी तरह समझने और उसे ठीक-ठीक प्रकट करनेके लिए लॉर्ड रीडिंगसे बहुत ज्यादा मजबूत दिलके वाइसरायकी जरूरत है। बेशक मैं यह अनुभव करता हूँ कि पण्डित मालवीयजी इस आन्दोलनमें शामिल हो चुके हैं। उनके लिए अपनेको कांग्रेससे अथवा खतरेसे दूर रखना सम्भव नहीं है। परन्तु बारडोलीके निर्णयके पीछे किसी भी बाहरी कारणका कोई हाथ नहीं था, वह सिर्फ इसलिए किया गया कि वही उचित था। यदि चौरीचौराकी यह अन्तिम दुर्घटना न हुई होती तो मैं अपने पहलेके निश्चयसे कभी न डिगता और अपना निर्णय न बदलता।

(३) खुद मुझे तो पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्यसे जरा भी कममें सन्तोष नहीं हो सकता। और यदि खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार नहीं किया गया तो इंग्लैंडसे पूर्ण सम्बन्ध विच्छेदसे कम किसी चीजसे मैं सन्तुष्ट नहीं हो सकता। लेकिन बिलकुल सही स्वरूप क्या होगा यह मुझपर निर्भर नहीं है। मैंने कोई पूर्ण और निश्चित योजना तैयार नहीं की है। वह तो जनताके प्रतिनिधियों द्वारा ही तैयार की जायेगी।

१. देखिए "पत्र: कार्य-समितिके सदस्योंको", ८-२-१९२२।

(४) वर्तमान अवस्थामें तो समझौतेका कोई सवाल ही नहीं उठता। अतएव यह सवाल कि पण्डितजी अथवा दूसरे सज्जन क्या करेंगे, यदि अप्रासंगिक नहीं है तो समयके पहले तो अवश्य किया गया है। पर मान लीजिए कि पण्डितजीने ऐसे किसी सम्मेलनका आयोजन किया और उसके प्रस्तावोंपर सरकारने ध्यान न दिया; उस अवस्थामें पण्डितजी तथा दूसरे सज्जन वैसा ही कार्य करेंगे जैसा कि ऐसी स्थितिमें सभी स्वाभिमानी व्यक्ति करते हैं।

(५) मैं सविनय अवज्ञाका विचार तो नहीं छोड़ सकता — फिर हिंसाका चाहे कितना ही खतरा क्यों न हो, पर जबतक हिंसाका भय निश्चित रूपसे है, सार्वजनिक सविनय अवज्ञा शुरू करनेका खयाल अलबत्ता मैं मनसे दूर रखूँगा। व्यक्तिगत स्तरकी सविनय अवज्ञाकी बात कुछ और है।

(६) किसी भी स्वयंसेवक-दलको तोड़ देनेकी कोई बात नहीं है। हाँ, यह बात जरूर है कि यदि हम ईमानदार रहना चाहते हैं तो जो लोग कांग्रेसकी निश्चित प्रतिज्ञाका पालन नहीं करते, उनके नाम अवश्य ही निकाल दिये जायें।

(७) यदि हम अहिंसाके परम आवश्यक अंगोंको अच्छी तरह समझ गये हों, तो हम सिर्फ एक ही नतीजेपर पहुँच सकते हैं। वह यह कि यदि कहीं भी व्यापक हिंसा हो — और इस सन्दर्भमें मैं चौरीचौराकी दुर्घटनाको व्यापक कहता हूँ — तो सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन अपने-आप बन्द हो जायेगा। देशके दूसरे कितने ही भागोंने अहिंसाकी भावनाको अपना लिया है यह अच्छी बात है; पर यह इतना काफी नहीं है कि सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन जारी रह सके। यदि एक आदमी भी उपद्रव खड़ा कर दे या हिंसा-कार्य कर बैठे तो एक पूरीकी-पूरी अत्यन्त शान्तिपूर्ण सभामें गोलमाल हो उठता है। यही हाल सार्वजनिक सविनय अवज्ञाका है। वह तभी सफल हो सकती है, जब चारों ओर पूर्ण शान्तिमय वातावरण हो। एक ही छोटेसे स्थानमें उसे सीमित रखनेका कारण यही है कि दूसरी किसी जगह हिंसाका उद्रेक न होने पाये। अतएव इससे यही अर्थ निकलता है कि किसी विशेष स्थानमें सार्वजनिक सविनय अवज्ञा उसी दशामें सम्भव है जब दूसरे तमाम स्थानोंके लोग पूर्ण रूपसे शान्तिमय बने रहें और इस तरह निष्क्रिय रूपसे उसके साथ सहयोग करें।

और अधिक संख्यामें लिखित अखबार

सिख मित्रोंने गुरुमुखी और उर्दू दोनोंमें 'आजाद अकाली'का प्रकाशन आरम्भ किया है। अभी पिछले दिनों मैंने गोहाटीके जिस अखबारकी तारीफ की थी, इनका अखबार उससे भी अधिक पठनीय और अधिक सुन्दर है। इसका हर पृष्ठ बहुत ही साफ है। एक और अखबार है — 'असम कांग्रेस बुलेटिन', जो साप्ताहिक है और तेजपुरसे निकला है। यह सिर्फ अंग्रेजीमें है। इसकी छपाई 'आजाद अकाली' जितनी साफ नहीं है। इन सभी अखबारोंको पढ़नेका समय मुझे नहीं मिल पाता, लेकिन यह देखते हुए कि जबतक इस प्रकारके अखबारोंको लिखने और प्रकाशित करनेका साहस करनेवाले लोग मौजूद हैं तबतक संसारकी कोई भी सरकार इनपर नियन्त्रण नहीं

रख सकती। आशा है, इन लिखित अखबारोंके सम्पादकगण समाचारोंके चुनावमें विशेष सावधानी वरतते होंगे; वे ऐसा एक भी तथ्य प्रकाशित नहीं करते होंगे, जो प्रमाणित न हो सके और न घृणाको वढ़ावा देनेवाली आलोचनाएँ ही लिखते होंगे। उन्हें वहुत संयत भाषाका प्रयोग करना चाहिए। यदि लिखित अखबार असंयत भाषाका प्रयोग करेंगे, तो यह वड़ी भयानक वात होगी। जवतक हमारा देश अहिंसाके व्रतसे वँधा हुआ है, क्रोध या द्वेषकी भावनासे लिखा या कहा गया प्रत्येक शब्द हमारी प्रगतिमें वाधा पहुँचायेगा।

खादी टोपीपर रोक

लखनऊके मौलवी जफरुल्मुल्क अलवीसे, जो इस समय फतेहगढ़ जेलमें कैदकी सजा काट रहे हैं, निम्नलिखित पत्र पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई। पाठकोंको शायद याद भी न हो कि वे उन लोगोंमें से हैं जो दमनके सवसे पहले शिकार हुए थे। उनकी गिरफ्तारीकी आशा नहीं की जाती थी, इसलिए उससे बड़ी सनसनी फैली थी। वे साहित्यिक रुचिके व्यक्ति हैं और विलकुल निवृत्त जीवन विता रहे थे। अपनी रचनाओंमें वे वड़े निडर और सत्यवादी रहे हैं। इसीलिए उन्हें गिरफ्तार किया गया। उनके पत्रसे पाठकोंको ज्ञात हो सकेगा कि वे जेलमें कितनी सावधानीसे अपना कर्त्तव्य निभा रहे हैं। दूसरे वहुत-से असहयोगी कैदियोंकी भाँति वे भी जेलमें अनुशासन वनाये रखनेमें अधिकारियोंकी सहायता कर रहे हैं। पत्रसे[1] स्वयं ही सारी वात स्पष्ट हो जायेगी :

> मैंने यहाँ विताये पिछले पन्द्रह महीनोंके दौरान आपको पत्र लिखनेसे जान-वूझकर अपने-आपको रोके रखा, क्योंकि मैं अपनी स्थितिसे पूरी तरह सन्तुष्ट था। . . .
>
> लेकिन असहयोगी वन्दियोंके जेल-जीवनसे सम्वन्धित कुछ ऐसी वातें पैदा हो गई हैं जिन्हें मैं आपके ध्यानमें लाना चाहता हूँ। . . .
>
> दूसरी वात कुछ ज्यादा गम्भीर है। दो असहयोगियोंको, जिन्हें हालमें ही सादी कैदकी सजा दी गई है और इसलिए उन्हें अपने निजी कपड़े पहननेकी इजाजत है, गांधी टोपी पहननेसे मना कर दिया गया। . . .
>
> मैंने सम्वन्धित अधिकारीसे वात की और उसने मुझे विश्वास दिलाया कि व्यक्तिगत रूपसे इस सम्वन्धमें उसका विशेष आग्रह नहीं है। वास्तवमें उसने जिला मजिस्ट्रेटकी इच्छाका पालन किया है। . . .
>
> जेलके नियमोंके अनुसार सभी साधारण कैदी अपने निजी कपड़े ही पहनते हैं। . . . इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस नई रोकका अभी हालमें ही आविष्कार किया गया है; तथा यह विलकुल आपत्तिजनक और अपमानकारी है। . . .

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

संयुक्त-प्रान्तके जेलोंके इंस्पेक्टर जनरल जल्दी ही इस जेलके मुआइनेपर आनेवाले हैं और यह मामला उनके सामने पेश किया जायेगा। आशा है, वे इसे सन्तोषजनक रूपसे हल कर देंगे, बशर्ते कि स्थानीय सरकारके किसी आदेशने उनके विवेकको पहले ही न जकड़ लिया हो। यदि ऐसा हुआ तो निश्चय ही हमारा यह कर्त्तव्य होगा कि हम इस आदेशको न मानें, चाहे इसका जो भी परिणाम हो।

खद्दरकी टोपीके साथ मुश्किल असलमें सिद्धान्तकी है, जिसपर किसी प्रकारका आत्मसमर्पण नहीं किया जा सकता। सादी कैदकी सजावाले कैदियोंको अपनी पोशाक पहननेका अधिकार है। इसलिए उन्हें अपनी टोपियोंसे वंचित करना उनका अपमान करना है। मुझे आशा है कि मौलवी साहबकी आशाके अनुरूप इंस्पेक्टर जनरलने इस समस्याको निबटा दिया होगा।

जेलोंमें सरकारसे लड़ाई लड़नी पड़े, यह कोई खुशीकी बात नहीं है। उन्हें तो ऐसे तटस्थ क्षेत्रकी तरह माना जाना चाहिए, जहाँ हर प्रकारकी शत्रुता समाप्त हो जाती है। मृत्यु अनेक प्रकारके विवादोंको समाप्त कर देती है। कैद भी एक प्रकारकी मृत्यु है — नागरिक स्वतन्त्रता की। क्या यह सम्भव नहीं कि राजनीतिक वैरको जेलकी दीवारोंके बाहर ही रहने दिया जाये? परन्तु मैं जानता हूँ कि इस सरकारसे, जो भद्रताका केवल स्वाँग भरती है, लोहेके सीखचोंके पीछे भी सभ्य व्यवहारकी आशा करना दुराशा-मात्र है। हमसे स्वतन्त्रताका जो इतना कड़ा मूल्य लिया जा रहा है, उसके कारण यह हमें और भी अधिक प्रिय होगी।

इन कटु वाक्योंको लिखते समय मेरी अन्तरात्मा मुझसे पूछती है कि क्या मैं सरकारके साथ न्याय कर रहा हूँ। क्या मैं नहीं जानता कि आगरा जेलमें बन्दीगण खासा मजेका जीवन बिता रहे हैं? लेकिन तुरन्त ही मेरा मन उत्तर देता है — सभी जेल आगरा जेल नहीं हैं। जो-कुछ दिया जाता है, वह छीन भी लिया जाता है। जिसे आसानीसे रोका जा सकता है, उसे तो दबा ही लिया जाता है। पण्डित मोतीलालजी मानो मुझसे कह रहे हैं: "मेरे आरामका महत्त्व ही क्या है, जब कि मेरे पड़ोसीको, सिर्फ इसलिए कि वे एक नामी बैरिस्टर नहीं हैं, वे मामूली सुविधाएँ भी प्राप्त नहीं जो मुझे प्राप्त हैं!"

सिन्धके बन्दी

एक महान् समाज-सुधारक और सक्खरके प्राण, श्री वीरूमल बेगराजने, जब उन्हें सिन्धसे किसी अज्ञात स्थानको ले जाया जा रहा था, एक पत्र[1] लिखा है।

यह एक बहुत बड़ा रहस्योद्घाटन है कि कार्यकर्त्ताओंको जितनी जल्दी गिरफ्तार किया जाता है, नये कार्यकर्त्ता उतनी ही जल्दी उनकी जगह ले लेते हैं। आन्दोलन कितना शक्तिशाली है, यह इसका एक निश्चित प्रमाण है।

१. पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। उसमें बतलाया गया था कि पत्र-लेखक और उनके साथियोंको जेलमें डाल दिये जानेपर उनके 'युवा मित्र' सारी राष्ट्रीय कार्रवाइयाँ चालू रखे हुए हैं।

डा० किचलू — — नं० ७७६

डा० किचलूका पत्र, जो अन्यत्र उद्धृत[1] है, सन्ताप और सन्तोष दोनों भावोंके साथ पढ़ा जायेगा। हम उनका वजन बढ़ जानेसे और उनकी प्रफुल्लतासे ईर्ष्या कर सकते हैं, लेकिन बम्बई सरकार जिस प्रकारका व्यवहार राजनीतिक बन्दियोंके साथ कर रही है, उसके लिए हम उसे बधाई नहीं दे सकते।

डा० किचलूने इस वास्तविकताकी ओर ठीक ही ध्यान आकर्षित किया है कि जब पंजाबमें उनपर अधिक गम्भीर अपराधका अभियोग लगाया गया था, वहाँ उनके साथ अच्छा बरताव किया जाता था, और अब जब कि अभियोग वास्तवमें कुछ भी नहीं है, उनके और उनके साथी बन्दियोंके साथ सामान्य अपराधियोंके जैसा बरताव किया जा रहा है। परन्तु इस पत्र-व्यवहारमें विशेष दिलचस्पीका केन्द्र है कर्नल वैजवुडका[2] स्पष्टतावादी पत्र, जिसे डा० किचलूने प्रकाशनार्थ भेजा है। कर्नल वैजवुड द्वारा उल्लिखित "गांधीवाद" और कुछ नहीं केवल सत्य और सरलताकी पुनः स्थापना है। सत्यको सदा सरल होना चाहिए। और जो सरल और सत्य है; उसका हिंसासे कोई वास्ता नहीं है। "गांधीवाद" उन्हीं प्राचीन सिद्धान्तोंका पुनः प्रवर्तन है जो समान रूपसे पूर्व और पश्चिम दोनोंके हैं। असहयोग "जियो और जीने दो" के सिद्धान्तका समर्थन करता है। हिंसापर आधारित भयानक अलगाव ही आजकलका आदर्श है। समानता और भाईचारेकी भावनाका केवल नाम ही रटा जाता है। पारस्परिक व्यवहार पारस्परिक प्रेमपर आधारित नहीं; बल्कि पारस्परिक घृणा और तज्जनित हिंसाके लिए तत्परतापर आधारित है। फिर भी, अभी "गांधीवाद" की बात करनेका समय नहीं आया है। भारतको अभी परीक्षा देनी है और हिंसापर अहिंसाकी श्रेष्ठता सिद्ध करनी है, इसके बाद ही इस आदर्शके कुछ समीप पहुँचा जा सकेगा।

एक भूल-सुधार

२ फरवरीके 'यंग इंडिया' में मैंने पण्डित अर्जुनलाल सेठीके पुत्रका एक पत्र[3] उद्धृत किया था, जिसमें उन्होंने जेलमें पण्डित सेठीके साथ किये जानेवाले बरतावके बारेमें लिखा था। अब मुझे पता चला है कि उनके पुत्रको गलत सूचना मिली थी। अर्जुनलालजीको ब्रांडी या अंडे नहीं दिये गये। यह भी बताया गया है कि उन्हें खाना और कपड़ा ठीकसे दिया जा रहा है। वैसे पत्र-लेखकोंने आम तौरसे बिलकुल ठीक सूचनाएँ दी हैं, फिर भी समाचार भेजते समय बहुत अधिक सावधानीसे काम लेना चाहिए। अगर पत्र-लेखक गलती भी करें तो उन्हें बातको घटाकर ही कहनेकी गलती करनी चाहिए। अत्युक्तिसे हम न केवल बदनाम होते हैं, बल्कि इसका विरोधीपर भी उलटा असर होता है, जब कि कथनकी सत्यतासे अभियुक्तके समक्ष उसका दोष प्रकट हो जाता है, फिर भले ही वह उसे स्वीकार करे या न करे। मैंने बराबर यह पाया

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२. इंग्लैंडकी लेबर पार्टीके नेता और संसद-सदस्य, जो दिसम्बर १९२० में भारत आये थे और कांग्रेसके नागपुर-अधिवेशनमें शामिल हुए थे।

३. देखिए "टिप्पणियाँ", २-२-१९२२ का उप-शीर्षक "धार्मिक स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप"।

है कि अन्यायका सचाईके साथ उद्घाटन करनेसे उसकी उग्रतामें हमेशा कुछ-न-कुछ कमी हो जाती है। मैंने यह भी पाया है कि अत्युक्तिके फलस्वरूप आम तौरसे उसकी उग्रता बढ़ जाती है। सत्य असत्यवादी आदमीको भी उदार बना देता है। असत्य उसे हठी ही बनाता है, क्योंकि सत्यसे वह अनभिज्ञ होता है।

शराबसे मुक्तिकी बजाय स्वतन्त्र भारत

जब मैं ये टिप्पणियाँ लिख रहा था तो मेरे सहायकने 'लीडर'की एक कतरन मुझे दी, जिसमें पण्डित गोपीनाथ कुँजरूका पत्र उद्धृत था। इस पत्रमें उन्होंने जरा भी उत्तेजित हुए बिना बहुत शान्तिसे यह बताया था कि जब वे आगरामें एक रोगीके शरीरपर लगानेके लिए ब्रांडी खरीदने गये तो उनके और उनके मित्रके साथ कैसा व्यवहार किया गया। पण्डित कुँजरू द्वारा वास्तविक स्थितिके बारेमें हर प्रकारसे आश्वासन दिये जानेके बावजूद स्वयंसेवकोंने उन्हें ब्रांडी नहीं खरीदने दी। यह न केवल अहिंसा नहीं है, बल्कि शुद्ध हिंसा है। शान्तिपूर्ण धरनेका अर्थ यह नहीं है कि शारीरिक हिंसाके प्रयोगके अलावा दूसरे हर प्रकारके दबावसे काम लिया जा सकता है। यदि वे स्वयंसेवक अपनी प्रतिज्ञाके प्रति सच्चे होते तो उन्होंने पण्डित गोपीनाथ और उनके मित्रको बेरोक-टोक जाने दिया होता। धरना देनेवालोंका कर्त्तव्य केवल इतना है कि वे शराब पीनेवालों को शराबके दुर्गुणोंके प्रति आगाह करें, यह नहीं कि अगर वे नहीं सुनते तो उन्हें तंग करें या उनके साथ रोक-टोक करें। यदि यह मानकर कि शराबसे परहेज लोगोंके लिए हितकर है, हम उनके ऊपर यह परहेज थोप सकते हैं तो फिर निश्चय ही अंग्रेज शासक और उनके भारतीय समर्थक भी बिलकुल यही कार्य कर रहे हैं। वे भी हमारे ऊपर वर्तमान प्रणाली इसलिए लादे हुए हैं कि उनका विश्वास है, यह हमारे लिए हितकर है। इसलिए यदि स्वराज्य चाहनेवाले स्वयंसेवक इस प्रकारकी छूट ले सकते हैं, जैसी कि उन्होंने पण्डित गोपीनाथ कुँजरूके साथ निश्चित रूपसे ली है, तो इसका यह मतलब है कि वे प्रणालीको नहीं बल्कि सिर्फ शासकोंको बदलना चाहते हैं। यदि स्वतन्त्रताकी बलि देकर संयम और शराबबन्दी हासिल करनी है, तो मैं शराबसे मुक्त और संयमका पालन करनेवाले भारतकी बजाय स्वतन्त्र भारत ही अधिक पसन्द करूँगा।

विदेशी कपड़ा

जब कि एक ओर उपर्युक्त उदाहरण-जैसी घटनाओंसे शराबबन्दीके लिए धरना देनेके प्रति भी सतर्कता बरतनेकी आवश्यकता सिद्ध होती है, दूसरी ओर दो जगहोंसे शिकायत मिली है कि कार्य-समितिने विदेशी कपड़ेकी दुकानोंपर धरना बन्द करा दिया है। इस तरहके किसी कार्यक्रमका स्थगन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके निर्णयपर निर्भर करता है। परन्तु यह चाहते हुए भी कि विदेशी कपड़ेके इस्तेमालपर पूरी रोक लगे, अगर धरनेमें जरा भी जोर-जबरदस्ती होती है, तो कमसे-कम मैं इसका समर्थन नहीं कर सकता। देशके सामने सबसे अधिक स्पष्ट प्रश्न यह है कि क्या हमें विचार, वाणी और कर्ममें पूर्ण अहिंसाका पालन करना है, या अपने प्रयोजनके अनु-

सार जब जैसा ठीक लगे वैसी कार्रवाई करनी है? परन्तु मुझे और अधिक अनुमान करनेकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि जबतक ये टिप्पणियाँ पाठकोंतक पहुँचेगी तबतक भाग्यका निर्णय हो ही चुकेगा।

सुदूर सिलचरसे

यह बाबू तरुणराम फूकनका सिलचर जेलसे, जिसे उन्होंने इस बार साधना-आश्रमका नाम दिया है, भेजा गया दूसरा पत्र[1] है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१८५. एक शानदार बयान

मौलाना अबुल कलाम आजाद द्वारा अदालतमें दिया गया बयान मुझे अभी-अभी मिला है। यह घने टाइप किये हुए कुल तेतीस फुलस्केप पृष्ठोंमें है। लेकिन है पढ़ने लायक चीज। जाहिर है कि मूल बयान मौलाना साहबकी मँजी हुई उर्दूमें है। अंग्रेजी अनुवाद भी बुरा नहीं है, लेकिन इससे बेहतर अनुवाद होता तो ज्यादा अच्छा रहता। इस बयानमें काफी साहित्यिक सौन्दर्य है। यह विशद और ओजपूर्ण है। यह निर्भय और दो टूक, लेकिन संयत है। इस पूरे बयानमें व्यंग्यका एक स्वर है। यह एक ओजस्वी निबन्ध है, जिसमें खिलाफत और राष्ट्रीयताके बारेमें मौलानाके विचार हैं। आशा है, इसकी छपी हुई प्रतियाँ उपलब्ध हो सकेंगी। मौलानाके सचिवको मेरी सलाह है कि इस बयानका सावधानीसे पुनरीक्षण करा लें।

इस वक्तव्यको पढ़नेके बाद मुझे पहलेसे भी कहीं अधिक स्पष्ट रूपमें यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि अदालतोंका बहिष्कार किया जाना चाहिए। इस प्रकारके बहिष्कारके बिना हम निर्भीकतापूर्ण वह शक्ति कभी प्राप्त नहीं कर सकते थे जो हमने प्राप्त की है। तब अध्यक्ष महोदय[2], लालाजी और पण्डितजीकी महान् घोषणाओंकी बजाय हम छोटे-छोटे शाब्दिक झगड़ोंमें फँस जाते जो किसी भी राष्ट्रकी उन्नतिमें बाधक होते हैं। बहिष्कार आन्दोलनके बिना हमें मौलानाका यह वक्तव्य भी नहीं मिलता जो अपने-आपमें एक अच्छी राजनीतिक शिक्षा भी है।

सन् १९१९ और १९२२के बीच कितना फर्क आया है — १९१९में सजाओंका उत्तेजनापूर्ण भय और हर प्रकारकी सफाई और बचावकी चिन्ता; १९२२में सजाओंकी ओरसे पूरी लापरवाही और किसी तरहका बचाव नहीं। १९१९में राष्ट्र उसके सिवा और कुछ कर भी नहीं सकता था; १९२२में वह जो-कुछ कर रहा है उसके अलावा

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। फूकनने अपना दिन-दिन दृढ़तर होता यह विश्वास प्रकट किया था कि जबतक लोग बदलेकी कार्रवाई करनेकी बात सोचे बिना कष्ट सहनेके लिए तैयार नहीं होते तबतक वे अपने संघर्षमें सफलता प्राप्त नहीं कर सकेंगे।

२. चित्तरंजन दास, मनोनीत अध्यक्ष।

और-कुछ नहीं कर सकता, वरना उसे संसार-भरकी घृणाका पात्र होना पड़ता। वहिष्कारके प्रभावको इससे नहीं मापा जा सकता कि कितने लोगोंने वकालत त्यागी। इसकी सही माप है उस गौरवका तिरोहित हो जाना जो अभी दो ही साल पहलेतक अदालतोंको सुशोभित करता था। अव तो वे सर्राफों और सटोरियोंके अड्डोंके रूपमें मौजूद हैं। लेकिन अव राष्ट्रीय और यहाँतक कि वैयक्तिक स्वतन्त्रताके भी आश्रयके रूपमें उनका महत्त्व समाप्त हो गया है। अव यह आश्रय उन मजबूत दिलोंमें मिलेगा, जिन्हें राष्ट्र बड़ी तेजीसे विकसित कर रहा है।

मौलानाका यह वक्तव्य हालाँकि अदालतको सम्बोधित करता है, लेकिन अदालतके लिए नहीं है। यह जनताके लिए है। वास्तवमें यह एक ऐसा भाषण है, जिसके लिए आजीवन कैदकी सजा मिल सकती है। साल-भर की सख्त कैदकी सजा सुनाई जानेके बाद मौलाना अपना आश्चर्य बखूबी दो शब्दोंमें इस तरह व्यक्त कर सकते हैं: "मेरी जो अपेक्षा थी, उससे तो यह बहुत ही कम रही!"

निम्नलिखित अंशोंसे, जिन्हें मैं इस वक्तव्यमें से उद्धृत कर रहा हूँ,[1] पाठक स्वयं अपने निष्कर्ष निकाल लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१८६. मौलाना अबुल कलाम आजाद

बेगम अबुल कलाम आजादने मुझे नीचे लिखा तार-संवाद डाक द्वारा भेजा है:[2]

मेरे पति मौलाना अबुल कलाम आजादके मामलेका फैसला आज सुना दिया गया। उन्हें सिर्फ एक सालकी सख्त कैदकी सजा दी गई है। यह तो मेरी आशासे बहुत ही कम सजा है। . . . मैं आपको यह सूचित करनेकी धृष्टता करती हूँ कि उनकी कैदसे बंगालके राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंके बीच जो स्थान खाली हुआ है, उसकी पूर्ति करनेके लिए मैं तैयार हूँ। उनके तमाम कार्य उसी तरह जारी रखे जायेंगे। . . . इसके पहले उनकी चार वर्षकी नजरबन्दीके समय मैं पहला इम्तहान दे चुकी हूँ, और मुझे विश्वास है कि इस दूसरे इम्तहानमें भी खुदाकी मेहरबानीसे कामयाबी हासिल करूँगी। . . . आजसे मैं अपने भाईकी मददसे बंगाल प्रान्तीय खिलाफत समितिसे ताल्लुक रखनेवाले तमाम फर्ज अदा करूँगी। मेरे पतिने आपको प्रेम और श्रद्धाके साथ सलाम कहा है और यह पैगाम भेजा है: "मौजूदा हालतमें सरकार और मुल्क, दोनों तरफके लोग किसी तरहके समझौतेके लिए बिलकुल तैयार नहीं हैं। हमारा फर्ज तो सिर्फ यही है

१. ये अंश यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

२. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

कि हम अपनेको तैयार करें। वंगाल इस दूसरे दौरमें भी अपना कदम आगे ही रखेगा, जैसे कि आज रख रहा है। बारडोली तहसीलके साथ मेहरबानी करके वंगालका भी नाम जोड़ दीजिए। और यदि कभी समझौतेका अवसर आये तो आप हम लोगोंकी रिहाईको इतनी अहमियत न दीजिएगा, जितनी कि बदकिस्मतीसे आज दी जा रही है। समझौतेकी शर्तें तय करते समय सिर्फ हमारी राष्ट्रीय उच्चाकांक्षाओंपर ही दृष्टि रखिएगा हमारी रिहाईके सवालको उससे अलग रखिएगा।"

तार मुझे अभीतक नहीं मिला है, हालाँकि पत्र द्वारा मुझे सूचना मिली है कि तार अहमदावाद और बारडोली दोनों ही पतोंपर भेजा गया था। मैं जनताके सामने यह तार इसीलिए पेश कर पा रहा हूँ कि वंगाल की प्रान्तीय खिलाफत समितिने वेगम साहिवाके कहनेपर मुझे इसकी नकल डाकसे भेजनेकी कृपा की है। यह कोई कम तसल्लीकी वात नहीं कि वड़े-वड़े घरानोंकी महिलाएँ एकके वाद एक उन खाली स्थानोंकी पूर्तिके लिए आगे वढ़ रही हैं जो राष्ट्रीय पुरुष कार्यकर्त्ताओंके जेल जानेसे खाली हो गये हैं। मैं वेगम मौलाना अवुल कलाम आजादको इस वातके लिए तहेदिलसे मुवारकवाद देता हूँ कि उन्होंने कौम और मुल्ककी खिदमतके लिए अपने-आपको सौंप दिया है। मौलाना साहवके सन्देशको पाठक अपने हृदयपर अंकित कर लें। यह वात विलकुल सच है कि न तो सरकार और न देश ही आज किसी समझौतेके लिए तैयार है। सरकार तवतक तैयार न होगी जवतक हम अधिक दिनोंतक और भी अधिक कष्ट-सहन न कर लेंगे। वंगालने अवश्य ही इस मामलेमें सवसे पहले कदम वढ़ाया है। वारडोलीने तो अभी वहुत ही थोड़ा काम किया है। निर्दय प्रकृतिने दो वार उसको इस सौभाग्यसे वंचित कर दिया है। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वंगाल आगे वढ़ता है या वारडोली। असल वात यह है कि कोई भी आगे वढ़कर हमें उस प्रणालीसे छुटकारा दिलाये, जिसके वारेमें हमें दिन-प्रतिदिन इस वातकी अधिकाधिक प्रतीति होती जा रही है कि वह आतंकपर आधारित है। मौलाना साहवको डर है कि कहीं ऐसा न हो कि असहयोगी कैदियोंकी रिहाईके क्षणिक सुखके आगे देश-हितका त्याग कर दिया जाये। लेकिन देशकी जो मनोदशा इस समय है, उसमें तो ऐसी कोई आशंका नहीं दिखाई देती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१८७. गर्जन-तर्जन[1]

जब ब्रिटिश सिंह बार-बार हमें अपना खूनी पंजा दिखा रहा है तब कोई समझौता कैसे हो सकता है? लॉर्ड बर्कनहेडने[2] हमें चेतावनी दी है कि ब्रिटेनका "प्रचण्ड बाहुबल" अभी तनिक भी कम नहीं हुआ है। श्री मॉन्टेग्यु बड़े स्पष्ट शब्दोंमें कहते हैं कि अंग्रेज इस संसारमें संकल्पके सबसे धनी लोग हैं; अपनी लक्ष्य-सिद्धिके मार्गमें वे किसी तरहकी विघ्न-बाधा सहन नहीं करेंगे। अब मैं रायटर द्वारा भेजे तारके आधारपर ठीक उन्हींके शब्द उद्धृत कर रहा हूँ:

> यदि साम्राज्यके अस्तित्वको कोई चुनौती दी जायेगी, यदि भारतके प्रति अपने दायित्वोंका निर्वाह करनेमें ब्रिटिश सरकारके मार्गमें रोड़े अटकाये जायेंगे, यदि कोई माँग इस भ्रममें पड़कर की जायेगी कि हम भारतको छोड़ जानेकी सोच रहे हैं तो मैं बता देना चाहता हूँ कि अंग्रेज इस संसारमें संकल्पके सबसे धनी लोग हैं और भारतकी ऐसी कोई भी चुनौती उनके सामने सफल नहीं होगी। वे एक बार फिर अपनी समस्त शक्ति और संकल्पसे उस चुनौतीका जवाब देंगे।

लॉर्ड बर्कनहेड तथा श्री मॉन्टेग्युको शायद यह मालूम नहीं कि इंग्लैंड सात समुद्र पारसे यहाँ जितना भी "प्रचण्ड बाहुबल" ला सकता हो, यह देश उस सबका सामना करनेको तैयार है। उन्हें शायद नहीं मालूम कि वे जिस चुनौतीकी चर्चा कर रहे हैं वह तो कलकत्तेमें सितम्बर, १९२० में दी जा चुकी है।[3] वह चुनौती यह है कि पंजाब तथा खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायोंके पूर्ण निराकरण तथा स्वराज्यसे कम कोई भी चीज भारतको सन्तुष्ट नहीं कर सकती। और इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस चुनौतीके साथ साम्राज्यके अस्तित्वका प्रश्न भी जुड़ा हुआ है। ब्रिटिश साम्राज्यका अस्तित्व अब इस बातपर निर्भर करता है कि उसे सहज और शान्तिपूर्ण ढंगसे स्वतन्त्र राष्ट्रोंके एक ऐसे कुलका रूप लेने दिया जाता है या नहीं, जिसमें प्रत्येक सदस्यको समान अधिकार हों, प्रत्येकको यह हक हो कि वह जब चाहे, अपनी इच्छासे पारस्परिक सम्मान तथा मैत्री भावपर आधारित इस साझेदारीसे अलग हो जाये। यदि ब्रिटिश साम्राज्यके वर्तमान संरक्षकोंको यह सहज परिवर्तन स्वीकार नहीं तो वे याद रखें कि संसारमें अपने "संकल्पके सबसे धनी लोगों" की समस्त शक्ति और संकल्प भारतमें आकर व्यर्थ हो जायेंगे, उनका "प्रचण्ड बाहुबल" यहाँ उनके किसी

१. प्रस्तुत लेख उन लेखोंमें से है जिनके लिए गांधीजीपर १९२२ में मुकदमा चलाया गया था और कैदकी सजा दी गई थी।

२. १८७२-१९३०; इंग्लैंडके वकील, राजनीतिज्ञ तथा विद्वान् लेखक; पहले लॉर्ड चान्सलर और बादमें भारत-मन्त्री।

३. कांग्रेसके विशेष अधिवेशनमें।

काम नहीं आयेगा। नई भावना, नये उत्साहसे अनुप्राणित भारतीयोंको वे किसी भी तरह झुका नहीं सकेंगे, तोड़ नहीं सकेंगे। यह सत्य है कि हममें "प्रचण्ड बाहुबल" नहीं है। मगर अब ऐसा लगता है कि भारतके चावल खानेवाले क्षीण-दुर्बल करोड़ों मानवोंने अपने अटल भवितव्यकी प्राप्तिका, अपनी आजादी हासिल करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया है। इसके लिए उन्हें न किसी संरक्षककी छत्रछायाकी आवश्यकता है, न शस्त्र-बलका प्रयोग करने की। लोकमान्य तिलकके शब्दोंमें स्वराज्य उनका "जन्मसिद्ध अधिकार" है। ब्रिटेन अपने "प्रचण्ड बाहुबल"का प्रयोग करे, और अपनी समस्त शक्ति तथा संकल्पके साथ करे, किन्तु भारतीय अपना यह अधिकार प्राप्त करके रहेंगे। इंग्लैंडवालों की उद्धतताका जवाब भारत उद्धततासे नहीं देगा। लेकिन अगर वह अपनी प्रतिज्ञापर दृढ़ रहता है तो उसकी यह प्रार्थना ईश्वर अवश्य सुनेगा कि उसे इस यातनासे मुक्त करे। शक्तिके मदमें चूर और कमजोर जातियोंको लूटने-खसोटनेवाला साम्राज्य इस दुनियामें कभी भी अधिक दिनोंतक नहीं टिका; और यदि ईश्वर है तो ब्रिटिश साम्राज्य भी अधिक दिनोंतक नहीं टिक पायेगा; क्योंकि इसका आधार योजनाबद्ध शोषण और निरन्तर पशुबलका प्रदर्शन है। ब्रिटिश राष्ट्रके इन तथाकथित प्रतिनिधियोंको शायद यह मालूम नहीं कि ब्रिटेनको अपने "प्रचण्ड बाहुबल"का जौहर दिखानेका अवसर देनेके लिए भारत अपने बहुत-से बलिदानी सपूत भेंट कर चुका है। अगर चौरीचौरा-काण्डके कारण राष्ट्रीय बलिदानके प्रवाहमें व्यवधान उपस्थित न हो गया होता तो हमने इस सिंहको और भी ज्यादा और रुचिकर बलि भेंट की होती। लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और थी। फिर भी, डाउनिंग स्ट्रीट तथा व्हाइट हॉलको सुशोभित करनेवाले ये प्रतिनिधि बुरेसे-बुरा जो कर सकते हों शौकसे करें। मैं जानता हूँ कि सात समुद्र पारसे आई इस धमकीके बारेमें मैंने बहुत कड़े शब्द कहे हैं, लेकिन अब वह अवसर आ गया है, जब अंग्रेजोंको यह अहसास करा देना बहुत जरूरी है कि जो लड़ाई १९२० में छिड़ी है, वह अन्तिम लड़ाई है। वह महीना-भर चले या महीनों चले, वर्ष-भर चले या वर्षों चले, लेकिन वह लड़ाई अन्तिम है और यदि वे इस लड़ाईमें दूनी शक्तिसे गदरके दिनोंकी बर्बरताकी पुनरावृत्ति करें तो हमें उसकी भी परवाह नहीं है। मैं ईश्वरसे केवल यही आशा रखता हूँ, उससे केवल यही प्रार्थना करता हूँ कि वह भारतको अन्ततक अहिंसापर दृढ़ रहनेके लिए पर्याप्त विनय और बलका वरदान दे। समुद्र पारसे समय-समयपर आनेवाली इन चुनौतियोंको बरदाश्त करना अब असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१८८. मिलका कपड़ा

एक सवाल अक्सर पूछा जाता है कि यदि हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी — फिर वह चाहे सूती हो या ऊनी अथवा रेशमी — इस्तेमाल करना ही वर्तमान कालका धर्म हो तो फिर देशकी अर्थ-व्यवस्थामें मिलके कपड़ेका क्या स्थान है। यदि देहातोंमें रहनेवाले करोड़ों लोग आज चरखेका सन्देश सुन सकें, उसका रहस्य समझ सकें और उसपर अमल भी कर सकें, तो मैं जानता हूँ कि हमारी घरेलू अर्थ-व्यवस्थामें मिलके कपड़ेके लिए — फिर वह चाहे विदेशी हो या हिन्दुस्तानी — कोई जगह नहीं है और यदि ऐसा हो सके तो मिलके कपड़ेके इस पूर्ण लोपसे देशकी दशा बेहतर ही होगी।

इस कथनका सम्बन्ध न तो मशीनोंसे है न विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके प्रचारसे। यह तो केवल भारतीय जनताकी आर्थिक दशासे सम्बन्धित प्रश्न है।

लेकिन मिलोंके कपड़ेके पूर्ण लोपकी स्थिति तो तभी आ सकती है जब हमारे त्राणके लिए स्वयं ईश्वर ही कोई चमत्कार दिखाये और सारे देशकी जनताको अपने कष्टोंसे मुक्ति पानेके लिए चरखेकी शरणमें जानेकी प्रेरणा दे। लेकिन जबतक यह चमत्कार नहीं होता तबतक कमसे-कम अभी कुछ वर्षोंतक तो खद्दरके उत्पादनके साथ ही मिलोंके बने कपड़ेकी जरूरत बनी ही रहेगी। काश कि भारतके बड़े-बड़े मिल-मालिकोंको हम यह समझा सकते कि मिल-उद्योग एक राष्ट्रीय न्यास है और इससे उन्हें राष्ट्रीय जीवनमें इस उद्योगके उचित स्थानकी सही प्रतीति हो जाती। मिल-मालिकोंको जनताको हानि पहुँचाकर पैसा पैदा करनेकी इच्छा नहीं करनी चाहिए, इसके विपरीत उन्हें अपने व्यवसायको राष्ट्रीय आवश्यकताओंके अनुकूल साँचेमें ढालना चाहिए और उस कलंकको धो देना चाहिए जो बंग-भंग आन्दोलनके[1] समय उनके माथेपर लगाया गया था और जो ठीक भी था। अब भी कलकत्ता तथा दूसरे स्थानोंसे ऐसी शिकायतें आ रही हैं कि हिन्दुस्तानकी मिलें अपनी धोतियोंके दाम मैंचेस्टरवालों से भी अधिक लेती हैं, यद्यपि उनकी धोतियाँ मैंचेस्टरवालों से घटिया दरजेकी होती हैं। यदि यह खबर सच हो तो यह बात देशभक्तिके विरुद्ध पड़ती है और धन बटोरनेकी इस नीतिसे देश और देश-कार्य दोनोंको हानि पहुँचनेकी सम्भावना है। ऐसे समय, जब कि हमारा राष्ट्र नये जन्मके कष्टोंसे गुजर रहा है, बेहिसाब दाम लेना निश्चय ही खोटापन है। ऐसा करना केवल इस जन-आन्दोलनसे अलग रहना ही नहीं, बल्कि सचमुच उसकी निर्दयतापूर्ण उपेक्षा करना है।

मिल-मालिक यदि स्थितिपर व्यापक दृष्टिसे विचार करें तो वे खादी-आन्दोलन-का रहस्य समझ जायेंगे, उसकी कद्र करेंगे और उसका पोषण करेंगे तथा लोगोंकी जरूरतोंको जान-समझकर देशकी नवीन आवश्यकताओंके अनुरूप माल तैयार करने लगेंगे।

१. १९०५ में।

पर वे लोग ऐसा करें या न करें, देशकी आजादीकी प्रगतिको किसी एक संस्थाका अथवा किन्हीं थोड़े-से आदमियोंके कुछ समूहोंका मोहताज नहीं बनाया जा सकता। इस देशमें आज जो-कुछ हो रहा है, वह वही है जो यहाँकी समग्र जनता चाहती है। जनता मुक्तिकी ओर तेजीसे बढ़ रही है और इन पूँजीपतियोंकी मदद मिले या न मिले, उसकी गति तो रुक ही नहीं सकती। अतएव इस आन्दोलनको पूँजीपतियोंपर निर्भर रहे बिना चलना चाहिए; फिर भी उनका विरोध नहीं करना चाहिए। पर यदि पूँजीपति लोग जनताकी सहायताके लिए आगे बढ़ें, तो इससे उनकी कीर्ति बढ़ेगी और भावी सुखके दिन भी जल्दी ही नजदीक आ जायेंगे।

पहले भी यहाँ यही हालत थी। भारतके इतिहासमें पूँजीपति और श्रमजीवियोंके सम्बन्ध बुरे नहीं रहे हैं। चार वर्णोंकी व्यवस्था केवल धार्मिक दृष्टिसे ही नहीं, बल्कि आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिसे भी की गई है; और मुसलमान संस्कृतिके मिश्रणसे उसपर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा है, क्योंकि मुसलमान संस्कृति सार रूपमें धार्मिक संस्कृति है, अतएव गरीबोंके लिए कल्याणकर है। इस्लाम साफ शब्दोंमें सूदखोरीको मना करता है, इसलिए मानना चाहिए कि वह पूँजी जमा करनेके भी खिलाफ है।

और इस समय भी यह तो नहीं कहा जा सकता कि पूँजीपति लोग इस आन्दोलनसे दूर-दूर ही हैं। तिलक स्वराज्य कोषके लिए जिस वर्गने इतनी उदारतासे दान दिया वह मध्यम श्रेणीके पूँजीपतियोंका ही वर्ग था। लेकिन यह बात भी दुःखके साथ कबूल करनी पड़ती है कि दुर्भाग्यवश अधिकांश मिल-मालिक इससे अलग ही रहे हैं। इस देशमें अगर सबसे बड़ा कोई उद्योग है तो वह वस्त्र-उद्योग ही है। अब समय आ गया है कि वह अपना मार्ग निश्चित कर ले। वह इस आन्दोलनके साथ चलेगा या इससे दूर रहेगा?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१८९. मेरे दुःखका अन्त नहीं

'लोकमान्य'के व्यवस्थापकने अपने पत्रके प्रतिनिधि और एम० पॉल रिचर्डके बीच हुई मुलाकातका निम्नलिखित विवरण मेरे पास भेजा है। उन्होंने मुझसे इसे प्रकाशित करने और इसपर अपनी सम्मति देनेके लिए कहा है। मैं बहुत संकोच-विकोच और अनिच्छापूर्वक अपनी सम्मति दे रहा हूँ, क्योंकि सार्वजनिक कार्यकर्त्ताके सामने प्रायः कोई विकल्प नहीं रह जाता। उसे अनिच्छा और संकोचपर काबू पाना पड़ता है। एक बार मेरे शान्तिनिकेतन-सम्बन्धी विचारोंको बहुत ही गलत रूपमें पेश किया गया था, हालाँकि उसके पीछे कोई दुराशय नहीं था। उसे सुधारते हुए मुझे बड़ा दुःख हुआ था।[1] कुछ चीजें ऐसी होती हैं जिन्हें कोई बहुत पवित्र मानता है

१. देखिए "टिप्पणियाँ", ९-२-१९२२ का उप-शीर्षक "प्रकाशनकी दृष्टिसे अवांछनीय"।

और जिनके बारेमें वह खुलेआम बहस करना पसन्द नहीं करता। मेरे सामने पहलेसे ही दुःखके अनेक कारण मौजूद हैं। अब जिस मुलाकातके विवरणको प्रकाशित करनेके लिए मुझसे कहा गया है, उससे एक और भी कारण प्रस्तुत हो गया है। वह इस प्रकार है:

> प्रश्न: बारडोलीमें सविनय अवज्ञा आन्दोलनके पिछले स्थगनके बादसे असहयोगियोंमें ऐसे लोगोंकी संख्या बढ़ रही है जो महात्माजीके विचारोंको नहीं समझते। इस सम्बन्धमें आपका क्या विचार है?
>
> उत्तर: महात्मा गांधीके रुखके बारेमें सब-कुछ समझ पाना बहुत आसान है, यदि कोई यह न भूले कि उनका वास्तविक ध्येय वह नहीं है जो आमतौरसे लोग समझते हैं, बल्कि वह है जो उन्होंने कुछ दिन पहले इन शब्दोंमें मेरे सामने स्पष्ट किया था: "मैं भारतकी स्वाधीनताके लिए नहीं, वरन् संसारमें अहिंसाकी स्थापनाके लिए काम कर रहा हूँ, तथा मुझमें और श्री तिलकमें यही अन्तर है। श्री तिलकने एक बार मुझसे कहा था, 'मैं अपने देशकी स्वाधीनताके लिए सत्यका भी बलिदान कर सकता हूँ'; परन्तु मैं सत्यके लिए स्वाधीनताके बलिदानके लिए भी तैयार हूँ।" इन शब्दोंके प्रकाशमें आप राष्ट्रीय आन्दोलनको तबतक स्थगित करनेका कारण समझ सकते हैं जबतक कि भारतमें सर्वत्र हिंसात्मक भावनाकी जड़ नहीं हिल जाती। और यह स्थिति तो शायद इस संसारमें कभी न आये।
>
> जिस प्रकार श्रीमती बेसेंट और नरमदलीय लोगोंके विचारोंको इस सूक्तिमें प्रकट किया जा सकता है कि "किसी भी कीमतपर कानून और व्यवस्था", उसी प्रकार महात्माजीके विचारोंको इन चन्द शब्दोंमें ही प्रकट किया जा सकता है — 'किसी भी कीमतपर अहिंसा'; और जो श्रीमती बेसेंट और नरम-दलीय लोग चाहते हैं वही सरकारकी इच्छा भी है। लेकिन इस सबके पीछे एक और भी स्वर है, राष्ट्रकी आत्माका स्वर, जिसका महत्त्व सबसे अधिक है। वह स्वर है: "किसी भी कीमतपर एक नया कानून और एक नई व्यवस्था।"
>
> भारत, एशिया और समस्त संसारमें एक नई चेतनाका उदय हुआ है, और मेरा विश्वास है कि इस नई चेतनाको प्रकट करनेवाली यह इच्छा ही अन्तमें विजयी होगी।

एम० पॉल रिचर्डके साथ मेरी भेंट बड़ी अच्छी रही थी। हमने कई घंटे बड़े आनन्दके साथ गुजारे थे। मैं तुरन्त ही यह समझ गया कि कुछ बातोंमें जीवन-सम्बन्धी हमारे दृष्टिकोणमें मूलभूत अन्तर है, लेकिन इस बातको मैंने जरा भी महत्त्व नहीं दिया। हम एक-दूसरेसे मामूली जान-पहचानके व्यक्तियोंके रूपमें मिले और घनिष्ठ मित्रोंके रूपमें जुदा हुए। यद्यपि अब मुझे पॉल रिचर्डने जो कहा है उसकी आलोचना

करनी पड़ रही है। परन्तु उनकी विद्वत्ता, उनकी मानवता और उनके दर्शनके प्रति मेरी श्रद्धा अब भी अक्षुण्ण है। परन्तु इस बातपर मैं अपना गहरा खेद प्रकट किये बिना नहीं रह सकता कि उन्होंने आत्मीयताके वातावरणमें हुई हमारी व्यक्तिगत बातचीत लोगोंके सामने प्रकट कर दी और वह भी बहुत कटे-छटे रूपमें। उन्होंने उस मुलाकातका विवरण कुछ इस तरह पेश किया है कि मेरी स्थिति हास्यास्पद हो जाती है। उसके सार-तत्त्वसे इनकार करना सम्भव नहीं है, किन्तु उसे उसके सन्दर्भसे अलग-थलग और एम० पॉल रिचर्डकी भाषामें प्रस्तुत करनेसे मेरी स्थिति हास्यास्पद ही प्रतीत होती है। मैं और महाराष्ट्रका दल दोनों एक-दूसरेको समझनेका प्रयास कर रहे हैं। हम प्रतिदिन एक-दूसरेके समीप आते जा रहे हैं। भारतके एक महानतम नेता और उस व्यक्तिके जीवन और चरित्रके बारेमें, जिसका उस दलके सदस्योंके हृदय-पर ऐसा गहरा प्रभाव है जैसा किसी भी समुदायपर किसी अन्य व्यक्तिका नहीं है, यदि मैं कोई अनुचित बात कहता हूँ तो उस दलका अप्रसन्न होना ठीक ही होगा। मैं और एम० पॉल रिचर्ड एक गम्भीर धार्मिक वार्त्तालापमें निमग्न थे। मैं उनके समक्ष अपनी मान्यताके आधारभूत तथ्य प्रस्तुत करनेका प्रयास कर रहा था। हम दोनोंको अपने बीच जो गम्भीर मतभेद दिखाई दिये थे, उनके बारेमें मैं बात कर रहा था, और जब मैं अपनी बात समझा रहा था तो मैंने अपने और लोकमान्यके बीचके मतभेदका अत्यन्त श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया। लोकमान्यके साथ कई बार स्पष्टता-पूर्वक हुई बातचीतके बाद मैं इस नतीजेपर पहुँचा था कि कुछ महत्त्वपूर्ण विषयों-पर हम कभी एकमत नहीं हो सकते। संस्कृत साहित्यके ज्ञानके अपने अक्षय भण्डारसे दृष्टान्त देते हुए वे जीवन-सम्बन्धी मेरी व्याख्याको चुनौती देते तथा बहुत स्पष्टता और कठोरताके साथ कहते थे कि सत्य और असत्य केवल सापेक्ष शब्द हैं, परन्तु मूल रूपमें सत्य और असत्य-जैसी कोई चीज नहीं है, वैसे ही जैसे जीवन और मृत्यु-जैसी कोई चीज नहीं है। मैं इस सूक्ष्म विवेचनका खण्डन तो नहीं कर सकता था, परन्तु उसे वास्तविक जीवनपर लागू करनेमें मुझे एक त्रुटि नजर आई और जिसे मैंने अत्यन्त विनम्रताके साथ उनके सामने प्रस्तुत किया। मेरा खयाल है कि हमने कभी भी एक-दूसरेको गलत नहीं समझा। सिंहगढ़में, जहाँ हम दोनों कुछ विश्रामके लिए गये थे, हम एक-दूसरेके अधिक समीप आये।[1] मैंने पाया कि अपने विचारोंके प्रतिपादनमें वे निडर और खरे थे और उनका अनुसरण करनेका प्रयास करते थे। मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि अपने करोड़ों देशवासियोंपर उनका ऐसा अद्भुत प्रभाव क्यों था। मैंने अपने लिए कभी श्रेष्ठताका दावा नहीं किया है। मैं सिर्फ यह जानता हूँ कि हमारा मतभेद बुनियादी था, परन्तु अधिक सम्पर्कके कारण उनके प्रति मेरी श्रद्धा बढ़ती गई, और मुझे विश्वास है कि जैसे-जैसे समय बीतता गया, मेरे प्रति उनका स्नेह भी बढ़ता गया। इसलिए मैं पाठकोंको विश्वास दिलाता हूँ कि एम० पॉल० रिचर्डके सामने मैंने जो मत व्यक्त किया, उसमें उस दिवंगत महान् नेताके व्यक्तित्व और चरित्रकी अव-

१. तिलकने २ मई, १९२० को सिंहगढ़में गांधीजीके साथ चर्चा की थी; देखिए खण्ड १७, पृष्ठ ४०१-११ ।

माननाकी कोई बात नहीं थी, और मैं आशा करता हूँ कि इस मुलाकातमें मतभेदका जिस भौंडे ढंगसे उल्लेख हुआ है, उससे महान् महाराष्ट्र पार्टीके सदस्योंका मन खट्टा नहीं होगा। राष्ट्रीय आन्दोलनमें उस दलके लोगोंके हार्दिक सहयोगको मैं बहुत अधिक मूल्यवान मानता हूँ और उन्हें साथ लेकर चलनेके लिए मैं अपनी आन्तरिक इच्छाके भी खिलाफ उतनी दूरतक चलनेको तैयार रहता हूँ, जितनी दूर चलनेसे मुझे अपने सिद्धान्तकी बलि न देनी पड़े।

एम० पॉल रिचर्डने अहिंसाके सम्बन्धमें मेरे विचारोंको जिस प्रकार प्रस्तुत किया है वह वास्तवमें उसका एक मखौल-भर है। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उन्होंने मुझे जैसा समझा है, उसी रूपमें प्रस्तुत किया है। जब मैं कहता हूँ कि मैं अपने देशसे भी अधिक अपने धर्मको महत्त्व देता हूँ और इसलिए मैं पहले एक हिन्दू हूँ और बादमें राष्ट्रवादी, तो एक मानेमें निश्चय ही यह कथन सच है। लेकिन केवल इसी कारण मैं किसी भी सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रवादीसे कम राष्ट्रवादी नहीं हो जाता। इससे मेरा अभिप्राय केवल यह है कि मेरे देशके हित मेरे धर्मके हितोंके अनुरूप हैं। इसी प्रकार, जब मैं कहता हूँ कि मैं अपनी निजी मुक्तिको अन्य सभी चीजोंसे अधिक, ––भारतकी मुक्तिसे भी अधिक महत्त्व देता हूँ तो इसका यह मतलब नहीं कि मेरी निजी मुक्तिके लिए भारतकी राजनीतिक या अन्य किसी प्रकारकी मुक्तिके बलिदानकी आवश्यकता है। ठीक इसी अर्थमें अहिंसाकी कीमतपर मुझे भारतकी मुक्ति स्वीकार नहीं है। इसका मतलब यह है कि अहिंसाके बिना या हिंसाके जरिए भारत कभी भी स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर सकता। हो सकता है कि इस प्रकारका विचार रखकर मैं बिलकुल ही गलती कर रहा हूँ, लेकिन यह बात दूसरी है; बहरहाल मेरा विचार यही है और यह प्रतिदिन दृढ़ होता जा रहा है। मैंने बहुत बार कहा है कि अन्य देशोंके लिए भले ही कुछ भी ठीक हो, परन्तु भारतकी मुक्ति अहिंसाके मार्ग-पर चलनेसे ही होगी। अगर एम० पॉल रिचर्डने मुझे ठीकसे समझा होता तो वे अपने प्रश्नकर्त्ताको यह कहकर शान्त कर देते कि मेरा विश्वास है कि भारत केवल अहिंसाके माध्यमसे ही अपनी स्वतन्त्रता जल्दी प्राप्त कर सकता है, और इसीलिए जबतक देशको मेरा निर्देशन स्वीकार है तबतक उसे मेरी सीमाओंको स्वीकार करना पड़ेगा, तथा इसलिए मुझे वह तबतक अपना पथ-प्रदर्शन करने दे जबतक उसे यह विश्वास हो कि अपने लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए उसके पास सत्य और अहिंसाके अलावा और कोई चारा नहीं है। एम० पॉल रिचर्डने यह कहकर स्थितिको और भी खराब कर दिया है कि यदि भारतकी स्वाधीनता अहिंसापर निर्भर है तो वह उसे कभी भी प्राप्त नहीं कर सकेगा। समझमें नहीं आता कि देशने स्वाधीनताकी दिशामें जो आश्चर्यजनक प्रगति की है, उसे उन्होंने कैसे नजरअंदाज कर दिया। वास्तवमें, मेरा दावा है कि भारत आज सारतः स्वतन्त्र हो चुका है, उसने अपना मार्ग पा लिया है, वह आज अपनी अस्मिताको दृढ़तापूर्वक प्रकट कर रहा है; उसकी सन्तानने ––सहस्रों पुरुषों और स्त्रियोंने ––बदलेकी भावनाके बिना बलिदान करनेका श्रेष्ठ गुण सीख लिया है, और मुझे दृढ़ विश्वास है कि यदि कार्यकर्त्तागण उस रचनात्मक कार्यक्रमको, जो उनके सामने प्रस्तुत किया गया है, लगन और सचाईके साथ पूरा करेंगे तो इसमें कोई

सन्देह नहीं कि हम शीघ्र ही अपने तीनों लक्ष्य प्राप्त करनेमें सफल हो जायेंगे। मैं एक क्षणके लिए भी यह माननेको तैयार नहीं कि कांग्रेसके कार्यकर्त्ता देशमें मौजूद गुण्डागर्दीकी ताकतोंपर काबू पानेमें असमर्थ हैं। बात सिर्फ इतनी है कि हमने इनपर काबू पानेके लिए पूरे दिलसे कोशिश ही नहीं की है।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१९०. हमारी ढील

एक विश्वसनीय व्यक्तिने मुझे लिखा है कि इलाहाबाद और बनारसमें स्वयंसेवकोंकी भरतीके मामलेमें उनकी योग्यताओंका कोई ध्यान नहीं रखा गया है। मुश्किलसे पचास स्वयंसेवक ऐसे दिखाई पड़ते हैं जो सिरसे पैरतक हाथकते खद्दरके वस्त्र पहने हों। कुछ ऊपरसे खद्दर पहने रहते हैं, पर अन्दर विदेशी वस्त्र ही पहनते हैं। उसी पत्र-लेखकका कहना है कि कुछ स्वयंसेवक जब-तब शराब भी पी लेते हैं और अहिंसामें उनके विश्वासकी कोई जाँच नहीं की गई है और बहुत-से मामलोंमें तो स्थानीय कांग्रेसके पदाधिकारियोंका उनपर कोई नियन्त्रण ही नहीं रहा है। अधिकृत रिपोर्टके अनुसार संयुक्त-प्रान्तमें ९६,००० स्वयंसेवकोंकी भरती हुई है। यदि यह सच है कि वहाँ इतने सारे स्वयंसेवक भरती किये गये हैं और उनमें से अधिकांश कांग्रेसकी शर्तोंका पालन नहीं करते तो उनका न होना ही ज्यादा अच्छा था। मैंने जो शिकायतें की हैं, वे अपने-आपमें बहुत भयंकर हैं, किन्तु ऐसा न समझना चाहिए कि मेरी कुल शिकायतें उतनी ही हैं, जितनीका मैंने उल्लेख किया है। कलकत्तासे भी ऐसा ही समाचार मिला है और वह भी एक विश्वस्त सूत्रसे ही। उसका कहना है कि जेल जानेवालों में सैकड़ों ऐसे हैं जो कांग्रेसकी प्रतिज्ञाके बारेमें कुछ भी नहीं जानते, खद्दर नहीं पहनते, और इतना ही नहीं, वे भारतीय मिलोंका नहीं बल्कि विदेशी वस्त्र पहने हुए जेल गये हैं और अहिंसाकी उन्हें तनिक भी शिक्षा नहीं मिली हैं। रोहतकसे एक व्यक्तिने लिखा है कि उस जिलेमें कई जगहके स्वयंसेवक कांग्रेस-पदाधिकारियोंके आदेश नहीं मानते और उनको बड़ी मुश्किलमें डाल देते हैं।

यदि पूर्वोक्त शिकायतोंमें दस प्रतिशत भी ठीक हों तो मुझे डर है कि शायद हम देशमें आई इस आश्चर्यजनक जागृतिके साथ कदम मिलाकर नहीं चल पाये हैं, और कांग्रेसमें आनेवाले इन नये लोगोंको भली-भाँति सँभाल नहीं पाये हैं। हो सकता है कि इनमें दोष किसीका भी न हो। आम सभाओं और स्वयंसेवकोंके बारेमें सरकारने धड़ाधड़ अधिसूचनाएँ जारी करके हमारे लिए कठिन अवसर उपस्थित कर दिया था। उसकी चुनौतीको स्वीकार करना था और वह की गई। नये और अनुभवहीन लोगोंके सिर कामकी जिम्मेवारी आती गई और उन्हें ऐसी कठिन परिस्थितिका सामना करना

1. इस लेखके उत्तरमें लिखा गया पॉल रिचर्डका लेख १६-३-१९२२ के **यंग इंडिया**में "उनका दुःख मेरा अपना दुःख" (दिज सॉरो इज माई सॉरो) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

पड़ा जिसमें जनतासे दूर, जेल चले जानेवाले उन अनुभवी लोगोंको भी काम करनेमें कठिनाई महसूस होती।

इस दलीलके पक्षमें तो बहुत-कुछ कहा जा सकता है। इसके लिए किसीपर दोषारोपण करनेकी आवश्यकता नहीं। लेकिन हमें वस्तुस्थितिकी ओरसे आँख न मूँद लेनी चाहिए, बल्कि हमें दृढ़ता और साहसके साथ उसका सामना करना चाहिए और हमें स्वयं अपनी कमियाँ दूर करनी चाहिए। संसारमें ऐसी किसी सेनाको आजतक विजय नहीं प्राप्त हुई है जिसके सैनिकोंमें सैनिकोंके आवश्यक गुण न हों। शान्ति-सेनामें तो उसके सैनिकोंके लिए निर्धारित गुणोंकी और भी अधिक आवश्यकता है। यह कहनेसे काम नहीं चलेगा कि आदर्श बहुत ऊँचा है। जो अफसर निश्चित मानसे कम दरजेके लोगोंको जान-बूझकर भरती करता है वह अपनेको अप्रामाणिकताका दोषी बनाता है। यदि निश्चित शर्तोंपर रंगरूट न मिलें, तो उसे प्रधान दफ्तरमें सूचना दे देनी चाहिए; किन्तु उनका उल्लंघन तो उसे कदापि न करना चाहिए।

मैंने स्वयं ही पिछले साल दिसम्बरमें कांग्रेस-पण्डालमें मौजूद सभी श्रोताओंको कांग्रेस द्वारा निर्धारित शर्तें पूरे विवरणके साथ पढ़कर सुनाई थीं।[1] अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और कार्य-समितिने उनपर सविस्तार चर्चा की थी और फिर मैंने कई अनौपचारिक चर्चाओंमें विभिन्न प्रान्तोंके प्रतिनिधियों और दर्शकोंको वे शर्तें समझाई थीं। इसलिए यह दलील नहीं मानी जा सकती कि शर्तें इतनी कठिन हैं कि उनका पालन नहीं किया जा सकता। प्रतिनिधियोंको उनकी पूरी-पूरी जानकारी थी। लगभग ६,००० प्रतिनिधि मौजूद थे। वे अपने-अपने क्षेत्रोंके प्रतिनिधि थे, इसलिए शर्तें पूरी करनेमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए थी।

यदि केवल ३०० स्वयंसेवक ऐसे हों जो शर्तोंको खूब अच्छी तरह समझते हों और उनका पालन करते हों, तो उतने ही मेरे लिए काफी हैं; पर इसके बजाय यदि ३०,००० स्वयंसेवक ऐसे हों जो न तो शर्तोंको जानते हों और न उनकी परवाह ही करते हों, तो मुझे उनके भरोसे किसी लड़ाईका नेतृत्व करना स्वीकार न होगा। कारण स्पष्ट है। पहली स्थितिमें मेरे पास ३०० ऐसे पक्के सिपाही होंगे जो मेरी सहायता करेंगे, जब कि दूसरी स्थितिमें ३०,००० लोगोंका भार मुझे वहन करना होगा। वे स्वयंसेवक नहीं होंगे, साधारण आदमी-भर होंगे, जिनका वजन मुझे ही ढोना होगा। पहले ३०० स्वयंसेवक तो मेरी सहायता करेंगे, मेरी आज्ञा मानेंगे, लेकिन ३०,००० लोग मेरी आज्ञाओंका पालन नहीं करेंगे और उनका भार मेरे लिए असहनीय बन सकता है। अतएव हमें कार्य-समितिके तमाम प्रस्तावोंके अनुसार पूरी तरह काम करनेका निश्चय कर लेना चाहिए। ये प्रस्ताव हमारे उस त्वरित और व्यावहारिक कार्यक्रमके अभिन्न अंग हैं, जिनकी समुचित पूर्तिपर ही भारतका भविष्य, खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार और स्वराज्यकी प्राप्तिका दारोमदार है। यदि प्रस्तावोंपर पूरा-पूरा अमल न किया जाये, तो उनका कोई मतलब ही नहीं होता। बीते हुए दिनोंमें, जब सरकारको सम्बोधित हमारे प्रस्तावोंपर वह अमल नहीं करती थी तब,

१. देखिए "भाषण: अहमदाबादके कांग्रेस अधिवेशनमें — १", २८-१२-१९२१।

हम शिकायतें करते थे। लेकिन अब शिकायत कौन करे, जब हम अपनी ही इच्छासे समझ-बूझकर स्वीकार किये गये अपने प्रस्तावोंपर स्वयं ही अमल नहीं करते? इसलिए मैं कांग्रेस तथा खिलाफतसे सम्बद्ध तमाम संगठनोंको दृढ़तापूर्वक सलाह देता हूँ कि वे अपने-अपने क्षेत्रोंमें तमाम शर्तोंके पूरे-पूरे पालनपर अवश्य ध्यान दें। यदि वे ऐसा नहीं करेंगे तो आन्दोलनको खतरेमें डालनेकी जिम्मेदारी उन्हींपर होगी, किसी औरपर नहीं। अपने भविष्यको बिगाड़ना या बनाना हमारे ही हाथमें है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१९१. दिल्ली जेलके कैदी

सिवाय एक अप्रासंगिक पैरेके, मैंने सारा पत्र[1] ज्यों-का-त्यों दे दिया है, यहाँतक कि वे विशेषण भी नहीं हटाये हैं जो सजीव होते हुए भी चोट पहुँचानेवाले नहीं हैं। कोई भी निष्पक्ष प्रेक्षक यह समझ सकता है कि इन रहस्योंके उद्घाटनसे जो कटुता पैदा हो गई है, सम्बन्धित पक्ष, चाहे वह कितने ही उच्च स्थानपर आसीन क्यों न हो, उसे निरे खण्डनसे मिटा नहीं सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१९२. सरकार द्वारा प्रतिवाद

१. बिहार सरकारकी ओरसे

महामहिम वाइसरायके नाम मेरे घोषणा-पत्रका भारत सरकारने जो उत्तर दिया था, उसके प्रत्युत्तरमें मैंने एक वक्तव्य दिया। अब बिहारके प्रचाराधिकारीने उस वक्तव्यका निम्नलिखित उत्तर प्रकाशनार्थ भेजा है:

> श्री गांधी द्वारा ७ फरवरीको बारडोलीसे जारी किये गये घोषणा-पत्रमें "गैरकानूनी दमन" की कुछ सरकारी कार्रवाइयोंका उल्लेख किया गया है। उनके विचारमें इन कार्रवाइयोंसे सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेका औचित्य सिद्ध होता है। जो मिसालें दी गई हैं, उनमें एक यह भी है: "एक अफसर और उसके दस्ते द्वारा, बिना किसीकी आज्ञाके, गाँवोंकी लूट, जिसे बिहार सरकार

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें गांधीजीने दिल्ली जिला कांग्रेस कमेटीके मन्त्री, हादी हसनके उस पत्रकी टीका की है, जिसमें दिल्ली जेलके असहयोगी बन्दियोंके साथ किये गये दुर्व्यवहारका वर्णन किया गया था। वह पत्र दिल्लीके मुख्य आयुक्त द्वारा इस सिलसिलेमें जारी की गई एक प्रेस विज्ञप्तिके उत्तरमें लिखा गया था।

स्वीकार कर चुकी है।" संकेत स्पष्ट रूपसे धनाहा थानेकी घटनाकी ओर है, और इस वक्तव्यसे साफ-साफ यह भाव निकलता है कि लूट पुलिस दस्तेके अधिकारीकी आज्ञासे हुई थी और यह तथ्य बिहार सरकार द्वारा स्वीकार किया जा चुका है। मुख्य सचिवने विधान परिषद्में जो बयान दिया था, और जिसकी ओर स्पष्टतः श्री गांधीका संकेत है, उसका सार इस प्रकार है:

"२७ दिसम्बर, १९२१को बैकुंठपुर फैक्टरीके मैनेजर श्री मैकिननसे यह खबर मिलनेपर कि कुछ गाँवोंमें बहुत ही गड़बड़ है, सशस्त्र पुलिसके सवारोंने पिपरिया, बैरटवा, चन्दरपुर और सिहुलिया गाँवोंमें से मार्च किया। पिपरिया गाँवकी लूटके जो आरोप थे, वे जिला मजिस्ट्रेट द्वारा की गई जाँचमें बिलकुल निराधार निकले हैं। पर, बाकी तीन गाँवोंमें कुछ लूट-पाट जरूर हुई है। जिला मजिस्ट्रेटकी यह राय है कि जो लूट हुई वह योजनाबद्ध नहीं, बल्कि छिटपुट थी। कुछ सवार बगलकी गलियोंमें निकल गये और उन्होंने लोगोंकी कुछ चीजें उठा लीं। उनके इन्चार्ज इन्स्पेक्टरको इस बातका पता तब चला जब सिहुलिया गाँवके लोगोंने आकर शिकायत की। और तब इन्स्पेक्टरके हुक्मसे सारा सामान उसी समय वापस कर दिया गया। पुलिसके इन्स्पेक्टर जनरलसे प्रार्थना की गई है कि जिन सवारोंके खिलाफ लूटमें भाग लेनेके निश्चित प्रमाण मिले, उनके विरुद्ध अनुशासनकी कार्रवाई की जाये। यदि जाँचके दौरान कुछ और अपराधोंका पता चला, तो बेतियाका सब-डिविजनल अफसर उनपर विचार करेगा।"

सरकारके वक्तव्यसे यह चीज साफ हो जाती है कि लूटकी जो खबरें छपी थीं वे बहुत ही अतिरंजित थीं, और जो लूट हुई भी थी वह जाती तौरपर कुछ सवारोंकी कार्रवाई थी। इससे यह भी पता चलता है कि सरकार अनुशासन-भंगकी किसी भी ऐसी कार्रवाईको, जैसी कि इन सवारोंने उस अवसरपर की थी, सहन नहीं करेगी।

श्री गांधीके घोषणा-पत्रमें इस सारे मामलेको एक बहुत ही भिन्न रूपमें पेश करनेकी कोशिश की गई है।

मैं इस टिप्पणीको सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ, परन्तु मुझे यह कहना पड़ेगा कि मेरी इससे कतई तसल्ली नहीं हुई है। मुख्य सचिवके बयानके सारांशमें वह घटना उसकी आधी भी निन्दनीय नहीं रह जाती जितनी निन्दनीय 'सर्चलाइट' (२७-१-१९२२) में प्रकाशित मूल बयानमें दिखती है। वह बयान मैंने पढ़ा है। बिहार विधान परिषद्में मुख्य सचिवपर चारों ओरसे ऐसी बौछार हुई थी कि उन्हें अपने बचावके लिए काफी पैंतरेबाजी करनी पड़ी थी। मुख्य सचिव इस बातको अस्वीकार नहीं कर पाये हैं कि अफसरने खुद लूटमें भाग नहीं लिया था। चम्पारनके इन गाँवोंसे मैं अच्छी तरह वाकिफ हूँ। उनमें कहीं चक्करदार गलियाँ नहीं हैं। लूटके मालको लौटा देनेसे लूट लूट न रहती हो, ऐसी बात नहीं। विधान परिषद्के सदस्य मुख्य सचिवसे

जितनी बातें मनवा सके हैं, उनसे पाठकके मनपर यही छाप पड़ती है कि उनकी स्वीकारोक्तिकी सतहके नीचे कुछ और भी सचाई छिपी हुई है जिसे प्रकट नहीं किया गया है। एक बात और भी देखनी चाहिए कि किसी मजिस्ट्रेटको साथ लिए बिना, घुड़सवार-पुलिसका दस्तेकी शक्लमें निकलना निषिद्ध है, फिर भी अफसर और सवारोंने ऐसा किया। इस बातकी अभीतक कोई सफाई नहीं दी गई है कि अफसर अपने सवारोंके साथ आखिर गाँवोंमें से क्यों निकला, और न यही बताया गया है कि अनुशासन तोड़नेके लिए, जैसा कि सरकारको बाध्य होकर स्वीकार करना पड़ा है, उसके खिलाफ क्या कार्रवाई की गई। यह बात भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि गाँव-वालोंने ऐसा कुछ नहीं किया था, जिससे लूटका यह अभियान उचित ठहराया जा सकता हो। जैसा कि बयानके सारांशमें माना गया है, "बैकुंठपुर फैक्टरीके मैनेजर, श्री मैकिननसे यह खबर मिलनेपर कि कुछ गाँवोंमें बहुत ही गड़बड़ है, सशस्त्र पुलिसके सवारोंने पिपरिया आदि गाँवोंमें से मार्च किया।" चम्पारनके देहातियोंके लिए इन मार्चोंका क्या अर्थ है, यह मैं जानता हूँ। मैं इस बातके लिए बहुत ही उत्सुक हूँ कि कोई मुझे यह यकीन करा दे कि अफसरशाही अभी पतनकी उस स्थितितक नहीं पहुँची है जो कि आम खबरोंसे जाहिर होती है और जो सरकारको न चाहते हुए भी आंशिक या पूर्ण रूपसे स्वीकार करनी पड़ी है। किन्तु मुझे खेद है कि इस दिशामें मेरे सारे प्रयास अभीतक निष्फल ही रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-२-१९२२

१९३. प्रस्ताव: अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें[1]

२५ फरवरी, १९२२

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी जो बैठक ११ और १२ फरवरीको बारडोलीमें हुई थी उसमें कार्य-समिति द्वारा पास किये गये प्रस्तावोंपर ध्यानसे विचार करनेके उपरान्त उन प्रस्तावोंकी उसमें सम्मिलित किये गये संशोधनोंके साथ पुष्टि[2] करती है और निश्चय करती है कि कुछ स्थानोंमें या कुछ कानूनोंके सम्बन्धमें वैयक्तिक सविनय अवज्ञा, चाहे वह प्रतिरक्षात्मक हो या आक्रामक, सम्बद्ध प्रान्तीय समितिके कहनेपर या उसकी अनुमति प्राप्त हो जानेपर शुरू की जा सकती है; बशर्ते कि ऐसी सविनय अवज्ञाकी अनुमति तबतक नहीं दी जायेगी जबतक कांग्रेस या अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी या कार्य-समिति द्वारा निश्चित की गई सभी शर्तोंका पूरा-पूरा अमल नहीं होता।

१. यह बैठक दिल्लीमें हुई थी।
२. देखिए "प्रस्ताव: बारडोली कार्य-समितिके", १२-२-१९२२ की पाद-टिप्पणियाँ।

विभिन्न क्षेत्रोंसे ऐसी सूचना प्राप्त होनेपर कि विदेशी वस्त्रकी दुकानोंपर धरना देना उतना ही जरूरी है जितना कि शराबकी दुकानोंपर धरना देना। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी विदेशी वस्त्रोंकी दुकानोंपर वास्तविक धरनेकी उन्हीं शर्तोंपर स्वीकृति देती है जो शराबकी दुकानोंपर धरनेके बारेमें बारडोली प्रस्तावोंमें कही गई हैं।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी चाहती है कि यह बात समझाई जाये कि कार्य-समितिके प्रस्तावोंका आशय यह नहीं है कि कांग्रेसका मूल असहयोग कार्यक्रम रद माना जाये या सामूहिक सविनय अवज्ञाको हमेशाके लिए बन्द कर दिया गया है; वरन् कार्य-समितिका खयाल है कि बारडोलीमें उसके द्वारा गढ़े गये रचनात्मक कार्यक्रमपर यदि कार्यकर्त्ता पूरा ध्यान दें तो आवश्यक सामूहिक अहिंसाका वातावरण स्थापित किया जा सकता है।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी राय है कि जब शासक-वर्ग जनताकी घोषित इच्छाका विरोध करे तब सविनय अवज्ञा करना जनताका अधिकार और कर्त्तव्य भी बन जाता है।

टिप्पणी: यदि किसी एक ही व्यक्ति द्वारा या एक निश्चित संख्यामें आये हुए व्यक्तियोंके द्वारा या लोगोंके किसी दलके द्वारा सरकारी हुक्मों या कानूनोंकी अवज्ञा की जाये तो वह वैयक्तिक सविनय अवज्ञा है। इसलिए एक निषिद्ध सार्वजनिक सभा जिसमें टिकटोंसे प्रवेशपर नियन्त्रण रखा गया है, जिससे किसी भी अनधिकृत व्यक्तिके प्रवेशकी अनुमति नहीं है, वैयक्तिक सविनय अवज्ञाका उदाहरण है, जब कि एक निषिद्ध सभा जिसमें बिना किसी प्रकारके नियन्त्रणके आम जनताको प्रवेश मिले, सामूहिक सविनय अवज्ञाका उदाहरण है। ऐसी सविनय अवज्ञा उस सूरतमें प्रतिरक्षात्मक मानी जायेगी जब एक साधारण कार्यवाहीके लिए कोई सार्वजनिक सभा की जाये, चाहे उसके परिणामस्वरूप लोगोंको गिरफ्तार ही क्यों न किया जाये। जब ऐसी सभा कोई साधारण कार्यवाही पूरी करनेके लिए न की जाये, फक्त गिरफ्तार होने और जेल भेजे जानेके लिए की जाये, तब वह आक्रामक होगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-३-१९२२

१९४. अहमदाबाद और सूरतकी कसौटी

अहमदाबाद और सूरतके निवासियों तथा उनके सच्चे 'नगरपालकों' की अब कसौटी होनेवाली है।[1] हममें सार्वजनिक जीवनका कितना विकास हुआ है, नागरिक एक-दूसरेको किस हदतक कुटुम्बी मानते हैं, उनमें दृढ़ता, प्रतिज्ञा-पालन, स्वार्थत्याग तथा अध्यवसाय कितना है, इन सब बातोंकी परीक्षा अब होकर रहेगी।

यदि नागरिकोंके प्रतिनिधि उपर्युक्त समस्त गुणोंका परिचय देंगे तो उसका एक ही परिणाम होगा — सरकार द्वारा नियुक्त की गई समितिको बिना किसी काम-धन्धेके निकम्मे बैठे रहना पड़ेगा।

नये सुधारोंमें कितना खोखलापन है, यह बात इन दो बड़ी नगरपालिकाओंको बन्द कर देनेसे जितनी अधिक प्रमाणित होती है उतनी किसी अन्य बातसे नहीं हो सकती। यदि नागरिकोंके प्रतिनिधि स्वेच्छाचारी होते तो उनकी सत्ता छीन लेना शायद उचित होता लेकिन यहाँ तो सरकार जानती है और स्थानीय स्वराज्य विभागके भारतीय "मन्त्री" भी जानते हैं कि नागरिक और उनके प्रतिनिधि दोनों इस झगड़ेमें एकमत हैं, दोनों शिक्षा-विभागको स्वतन्त्र रखना चाहते हैं। ऐसा होनेके बावजूद नगरपालिकाके विरुद्ध विधिपूर्वक कुछ कार्रवाई करनेके बदले सरकारने नगरपालिकाको बन्द कर दिया है। मतलब यह हुआ कि सरकार और "हमारे" मन्त्री लोकमतके विरुद्ध हो गये हैं। इसलिए नये सुधारोंमें निरंकुशताके अलावा और कुछ नहीं है और इससे यह भी प्रमाणित होता है कि इन सुधारोंसे प्रजाको कदापि कोई लाभ नहीं हो सकता।

लेकिन इस स्थानपर तो हमारे लिए सुधारोंके लाभालाभका विचार करनेकी अपेक्षा इस बातपर विचार करना ही अधिक उचित होगा कि नागरिकोंको अपनी प्रतिज्ञाका पालन करना चाहिए। ऐसी सामान्य बातोंके विषयमें अगर नागरिक हार जायें तो मैं तो कहूँगा ही, दुनिया भी कहेगी कि वे स्थानीय स्वराज्य भोगनेके योग्य नहीं हैं। स्वराज्यकी योग्यता जैसे उसे प्राप्त करने [की क्षमता] से सिद्ध होती है उसी तरह उसकी रक्षा करनेकी शक्तिसे भी सिद्ध होती है। बाहरसे होनेवाले आक्रमणोंके बावजूद यदि हम अपने अस्तित्वको बनाये रख सकें तभी हम शक्तिमान् कहलाते हैं। बाहरके कीटाणुओंके चढ़ाई करनेपर भी जो व्यक्ति नीरोग रह सकता है, उसीका शरीर स्वस्थ माना जाता है। इस लड़ाईका केन्द्रबिन्दु शिक्षा है। अन्य बातोंके सम्बन्धमें नागरिक अपने अधिकारोंकी रक्षा करें अथवा न करें लेकिन शिक्षाके विषयमें यदि पराजित होते हैं तो वे बिलकुल पराजित हुए माने जायेंगे और तब अवश्यमेव यही सिद्ध होगा कि नागरिक-गण स्वतन्त्र रूपसे विचार या कार्य करनेके योग्य नहीं हुए हैं। यदि वे अपनी टेक छोड़ते हैं तो उससे यह सिद्ध होगा कि प्रतिनिधियोंमें एक तरहकी चतुराई थी इसलिए वे सरकारसे जूझ तो जाते थे और इस लड़ाईमें

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १९-२-१९२२ का उप-शीर्षक "अहमदाबाद और सूरत निवासियोंसे"।

नागरिकोंकी रस भी आता था लेकिन वे स्वयं कुछ करनेका अथवा सोचनेका कष्ट नहीं उठाते थे।

इसलिए दोनों शहरोंके नागरिकोंका सबसे पहला कर्त्तव्य यह है कि वे अपने बच्चोंकी शिक्षापर अपना पूरा-पूरा अधिकार रखें, इतना ही नहीं, अपनी शिक्षाको सुदृढ़ आधारपर ऐसा सुन्दर रूप दें कि किसीके मनमें सरकारी स्कूलमें जानेका लालच ही न उठे।

इस कामको करते हुए हमें मालूम होगा कि हमारे व्यवहारमें जितना अंश बनावटी है वह ज्यादा नहीं टिकेगा। नागरिक सच्चे असहयोगी होंगे तो ही वे अपने बच्चोंको सरकारी स्कूलोंमें नहीं भेजेंगे। इसी तरह यदि उन्हें अपने बच्चोंकी शिक्षाकी सच्ची चिन्ता होगी तो वे शिक्षाके आधारको सुदृढ़ बनायेंगे। अहमदाबाद तथा सूरतके शिक्षित लोग शिक्षा प्रदान करनेमें मदद करेंगे, नागरिक शिक्षा प्रदान करनेके लिए जगह देंगे, अनेक प्रकारकी आवश्यक सुविधाएँ जुटायेंगे और सरकारी समितिको बता देंगे कि अपने बच्चोंकी शिक्षाके लिए वे अनेक बलिदान करनेके लिए तैयार हैं।

इस शिक्षापर होनेवाले खर्चके लिए पैसा जुटानेका सवाल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मेरा तो स्पष्ट मत है कि नागरिक शिक्षा विभागके अन्तर्गत जो कर देते हैं उसे न देनेका उन्हें पूरा-पूरा अधिकार है। लेकिन वैसा हो या न हो, अहमदाबाद और सूरतके निवासियोंको उतना पैसा इकट्ठा करना मुश्किल नहीं होना चाहिए। आवश्यक पैसे इकट्ठे करके वे अपनी एकता और दृढ़ता प्रगट कर सकेंगे। शिक्षाके निमित्त दिया गया पैसा कोई दान नहीं है। यह तो पूंजी लगानेका सबसे अच्छा क्षेत्र है। इससे माँ-बापको पूरा-पूरा लाभ मिलेगा। मुझे उम्मीद है कि इन दोनों शहरोंके नागरिक तुरन्त ही यह सब व्यवस्था कर लेंगे। यदि अहमदाबाद और सूरत इस कार्यको अच्छी तरहसे पूरा करेंगे तो इसमें कोई शक नहीं कि वे समस्त भारतवर्षके सम्मुख एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। और ऐसे उदाहरणोंका, हम जिस स्वराज्यके लिए लड़ रहे हैं उसपर भी गहरा असर पड़े बिना न रहेगा।

यदि ये शहर इतना कार्य, द्वेष अथवा रोषको किंचित् भी बढ़ाये बिना, तनिक भी शान्ति-भंग किये बिना, कर सकें तो हम संसारको बता सकेंगे कि हम शान्तिमय असहयोगको कितने सुन्दर ढंगसे चला सकते हैं।

मैं चाहता हूँ कि अन्य मामलोंमें भी नागरिक स्वतन्त्र होकर दिखा दें। लेकिन नेताओंसे मैं यह विशेष आग्रहके साथ कहना चाहता हूँ कि वे प्रत्येक कदम अच्छी तरहसे सोच-विचारकर और धीमे-धीमे उठायें।

मैंने लोगोंको अकसर यह कहते सुना है कि बारडोलीमें सविनय अवज्ञाके मुलतवी हो जाने तथा नगरपालिकाओंपर उनका जो अधिकार था उसके छिन जानेसे नागरिक निरुत्साहित हो गये हैं। यदि ऐसा है तो नागरिक न तो असहयोगको समझ पाये हैं और न हमारी लड़ाईकी खूबीको ही। बारडोलीमें जो प्रस्ताव पास किया गया है वैसे प्रस्ताव तो असहयोगकी लड़ाईमें पास होते ही रहते हैं। यह तो एक महान् लड़ाई है और ऐसी लड़ाईमें अनेक व्यूह रचे और तोड़े जाते हैं। सबका हेतु एक ही होता है। व्यूह रचनेकी जितनी आवश्यकता होती है उतनी ही उसे तोड़नेकी भी होती है।

सत्याग्रहके युद्धमें पराजय होती ही नहीं; लेकिन सामान्य युद्धमें तो पराजय भी होती है, तब भी सेना धीरज नहीं छोड़ती। हमारे विरुद्ध यह आरोप लगाया गया है कि भारतवासी पराजयको झेल ही नहीं सकते। एक बार पराजित होनेपर ही वे भागने लगते हैं। मैं तो यह उम्मीद किये बैठा हूँ कि हिन्दुस्तान इस आरोपको मिथ्या सिद्ध कर दिखायेगा। बारडोली-जैसे प्रस्तावोंको तो मैं हमारी हारकी निशानी भी नहीं मानता। मैं तो यही मानता हूँ कि यह हमारी सचाई और हमारे साहसकी निशानी है।

इसके सिवा, अहमदाबाद और सूरतकी लड़ाई तो स्थानीय लड़ाई है। उसपर बारडोलीके प्रस्तावका कोई प्रभाव नहीं होना चाहिए; और नगरपालिका बन्द हो गई, इसके लिए किसीको निराशा क्यों होनी चाहिए? हमारी कोशिश ही इस परिणामको प्राप्त करनेकी थी। हमारी लड़ाईका रहस्य ही यह है कि हर कदमपर सरकार ऐसी स्थिति स्वीकार करती जाये, जिसका बचाव करना उसके लिए कठिन होगा। यह लड़ाई सरकारकी निरंकुशताको प्रगट करनेकी लड़ाई है। सरकारने समितियाँ नियुक्त कीं, इसका परिणाम यह हुआ है कि सूरत तथा अहमदाबादकी नगरपालिकाएँ पूरी तरह असहयोगी हो गई हैं। अब उनके वेगको रोकनेके लिए सिर्फ नागरिक ही रह गये हैं। यह बात सच है कि कुछ-एक मकानोंपर से हमारा कब्जा चला गया, लेकिन उससे क्या? नागरिक प्रतिनिधि आमके पेड़के नीचे अपनी बैठकें कर सकते हैं। अपना कामकाज चलानेके लिए उन्हें पत्थरके मकानोंकी जरूरत नहीं है। नई समितियाँ बलात् लोगोंके पाखाने साफ नहीं कर सकतीं और न ही सड़कोंपर रोशनी कर सकती हैं। नागरिक जितना करने देंगे उतना ही नई समितियाँ कर सकेंगी — यह बात नागरिक एक हफ्तेमें ही सिद्ध कर सकते हैं। इसलिए मैं तो किसी भी तरहसे निराश होनेका कोई कारण नहीं देखता। निराशा तो हमारी नासमझीकी ही निशानी हो सकती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-२-१९२२

१९५. टिप्पणियाँ

कलकत्ताकी जेलमें

कलकत्ताकी प्रेसिडेंसी जेलसे हरिलाल गांधी लिखते हैं:[1]

कलकत्ताके कैदियोंकी सजाकी अवधि आधी किये जानेके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंमें जो समाचार प्रकाशित हुआ है वह बादमें अधिकांश कैदियोंके बारेमें निर्मूल सिद्ध हुआ है।

चौथाई कैसे दी जा सकती है?

करमसदके[2] बड़े पाटीदारोंने व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा करनेकी तैयारीमें इतना साहस दिखाया था कि वे स्वयं बरबाद होनेके लिए तैयार हो गये थे। अब जब बारडोलीके प्रस्तावके अनुसार उन्हें लगान भरना है तो यह उन्हें अवश्य बुरा लगेगा। और उसमें भी यदि सरकारी अधिकारी वैर निकालनेकी खातिर उनसे चौथाई माँगें तो यह तो उनके लिए असह्य ही हो जायेगा।

लेकिन सरकारसे हमने मर्यादापालनकी आशा ही कहाँ रखी है? अगर उसे अवसर मिले तो क्या वह वैर निकाले बिना रह सकती है? हमारी भलमनसाहत इसीमें है कि हम क्रोध न करें और उसे वैर निकालने दें। हम उसके पास इसे माफ करवानेके लिए भी न जायें।

ऐसा जुर्माना भरना तो हमारे प्रायश्चित्तका एक भाग है। जो बरबाद होनेके लिए तैयार बैठे हैं उन्हें चौथाई देनेमें भला क्या आपत्ति हो सकती है?

लेकिन ऐसा जुर्माना देनेवाले यह समझ लें कि स्वराज्य मिलने अथवा समझौता होनेपर यदि वे जुर्माना वापस माँगेंगे तो वह उन्हें वापस मिल सकेगा। जिनसे चौथाई माँगी जाये उनसे मेरा अनुरोध है कि वे उसे चुका दें पर उसका पूरा-पूरा हिसाब रखें।

सत्याग्रहका पन्थ न्यारा है, वह मर्यादापालनका, सहनशीलताका पन्थ है। हमें ऐसा विचार भी नहीं करना चाहिए कि समय आनेपर ऐसे अधिकारियोंसे बदला लेंगे। यदि कोई हमसे वैर निकालता है और हम बदलेमें कुछ नहीं करते तो उसके वैरका संग्रह अन्ततः समाप्त हो जाता है। यह अनिवार्य नियम है कि जिस क्रियाकी प्रतिक्रिया न हो उस क्रियाका अन्तमें नाश हो जाता है। जो इस नियमको जान लेता है वह फिर कभी बदला लेनेका विचार ही नहीं करता।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२. आनन्द ताल्लुकेमें, जो श्री अब्बास तैयबजीके नेतृत्वमें सविनय अवज्ञाकी तैयारी कर रहा था।

झरियामें सविनय अवज्ञा

कांग्रेस सप्ताहके दौरान झरियाके प्रतिनिधियोंको मैंने सलाह दी थी कि वहाँके लोगोंको सक्रिय सविनय अवज्ञाके जंजालमें नहीं पड़ना चाहिए और यह कहा था कि उसपर मैं 'नवजीवन' में एक टिप्पणी भी लिखूँगा। लेकिन मैं भूल गया। अपनी इस भूलके लिए मैं उन भाइयोंसे क्षमा-याचना करता हूँ। झरियाकी स्थिति असाधारण है। वहाँ हजारों मजदूर रहते हैं; और उनके सम्पर्कमें आनेवाले मालदार गुजराती, मारवाड़ी, बंगाली तथा अन्य व्यापारी लोग रहते हैं। वहाँ सक्रिय सविनय अवज्ञा करनेका अर्थ होगा वहाँके मजदूर-वर्गको जगाना। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा करनेसे भी मजदूरोंके उत्तेजित हो जानेकी सम्भावना है। इसलिए मैंने यह सलाह दी कि ऐसे स्थानपर फिलहाल तुरन्त ही सक्रिय सविनय अवज्ञा नहीं की जा सकती। मजदूर-वर्गको सक्रिय सविनय अवज्ञामें शामिल करनेका अर्थ होगा शान्ति-भंग होनेका खतरा मोल लेना। अतएव मैंने सलाह दी थी कि ऐसे भागोंमें खादी, चरखा, मद्यपान-निषेध आदि कार्योंको खूब बढ़ाया जाये और झरिया जैसे कोयलेकी खान है उसी तरह द्रव्यकी खान भी है, इसलिए झरियाको, बिहारकी समस्त प्रवृत्तियोंके लिए जितना धन चाहिए, उतना धन इकट्ठा करके देना चाहिए। वहाँके रामजस बाबू आदि अमीर लोग ऐसे कार्योंमें भरपूर सहायता दे सकते हैं और यदि वे बिहार कांग्रेस कमेटीकी पैसे सम्बन्धी मुश्किलको दूर करें तथा मजदूरोंमें खादीका प्रचार करें, स्वयं कातें, मजदूरोंको कातना और बुनना सिखायें, मजदूरोंसे शराब छुड़वायें और मजदूरोंको उनके कर्त्तव्यसे तथा उनके अधिकारोंसे अवगत करायें तो मैं समझूँगा कि उन्होंने असहयोग पूरा योगदान दिया है।

एजेन्सी अदालतोंमें वकालत

एक मित्र लिखते हैं: "कहते हैं आपने ऐसी सलाह दी है कि एजेन्सी अदालतोंमें तो हर कोई असहयोगी वकालत कर सकता है। क्या यह बात सच है?" मैंने ऐसी सलाह किसीको नहीं दी है। लेकिन अभी हाल ही में काठियावाड़में श्री मनसुखलाल मेहता तथा मणिलाल कोठारीपर जो मुकदमे चल रहे हैं उनके सम्बन्धमें मैंने यह अवश्य कहा था कि वे एजेन्सी अदालतमें लड़ सकते हैं और इसलिए वे वकील नियुक्त कर सकते हैं। वे दोनों देशी राज्योंकी रियाया हैं और दोनों देशी राज्योंमें अपने और दूसरोंके अधिकारोंकी रक्षाके लिए प्रयत्न कर रहे हैं। देशी राज्योंकी परिस्थितियों-से उत्पन्न होनेवाले मामलोंके सम्बन्धमें वे असहयोगी नहीं हैं। इसलिए यदि वे इस समय देशी राज्योंके मामलोंमें पड़ना चाहते हैं तो उन्हें अदालतों आदिमें से होकर गुजरना होगा नहीं तो वे दीन-दुनिया दोनोंसे जायेंगे।

लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई वकील जो असहयोग आन्दोलनमें शामिल हो गया है वह एजेन्सी अदालतमें जाकर वकालत करे, इसका अर्थ यह भी नहीं है कि कोई असहयोगी जान-बूझकर एजेन्सी अदालतमें जाये, और यह भी नहीं कि किसी व्यक्तिने असहयोगीके नाते एजेन्सीके इलाकेमें कुछ काम किया हो तो उस सम्बन्धमें वह अपनी ओरसे वकील खड़ा कर सकता है। हाँ, उसका अर्थ यह अवश्य है कि अगर

किसी असहयोगीको देशी राज्योंमें किसीसे अपना पैसा लेना हो तो उसके सम्बन्धमें वह देशी राज्योंकी अदालतोंमें लड़ सकता है। और वहाँ वकीलको भी नियुक्त कर सकता है। हमारा असहयोग देशी राज्यों अथवा उनकी अदालतोंके साथ नहीं है, अतः देशी राज्योंकी अदालतोंके साथका सम्बन्ध सर्वथा त्याज्य नहीं है।

लेकिन ये सब कार्य उलझन भरे हैं। इसलिए असहयोगीको चाहिए कि वह अपने-आपको ऐसी विषम स्थितिमें न डाले और इसी कारण मैंने अनेक बार कहा भी है कि फिलहाल जहांतक उनसे बन सके वहांतक असहयोगियोंका देशी राज्योंके झमेलेमें न पड़ना ही ठीक है, नहीं तो उनके उसीमें उलझ जानेकी सम्भावना है। लेकिन जिसे ऐसा करनेमें कोई आपत्ति नहीं है अथवा अनायास ही कोई ऐसे झगड़ेमें पड़ जाये और अगर वह कानूनकी शरण लेता है तो इसमें असहयोगकी वर्तमान नीतिके अनुसार मैं कोई बाधा नहीं देखता।

उपर्युक्त सज्जनोंको देशी राज्योंके प्रश्नको लेकर गिरफ्तार किया गया है। एजेन्सी अधिकारीने देशी राज्योंकी रियायाके अधिकारोंपर प्रहार किया है। इसमें अगर वे सज्जन कुछ कानूनी कार्रवाई करते हैं तो इसमें मुझे कोई अड़चन दिखाई नहीं देती। ब्रिटिश भारतमें उनकी स्थिति असहयोगीकी है, लेकिन वे काठियावाड़में पकड़े गये हैं, अतः वे वहाँ जमानत देकर छूट सकते हैं और अपना बचाव कर सकते हैं।

एजेन्सी भी तो ब्रिटिश साम्राज्यका ही एक अंग है, ऐसा प्रश्न उठ सकता है। इसके अलावा कोई व्यक्ति यह प्रश्न भी कर सकता है कि देशी राज्योंकी अदालतोंमें मुकदमा लड़नेकी बात तो समझमें आती है लेकिन एजेन्सी अदालतोंमें लड़नेकी बात समझमें नहीं आती। इसमें दो पक्ष हैं। एजेन्सी जिस तरह ब्रिटिश साम्राज्यका अंग है उसी तरह देशी राज्योंका भी है। देशी राज्योंके अस्तित्वके कारण ही एजेन्सीका अस्तित्व है। इसीसे देशी राज्योंके प्रश्नोंको लेकर एजेन्सी अदालतमें जाया जा सकता है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति एजेन्सीमें असहयोगका प्रचार करनेके लिए पकड़ा गया हो तो न वह अपना बचाव कर सकता है, न जमानत देकर छूट सकता है और इसीलिए मैंने शुरूसे ही यह सलाह दी है कि देशी राज्योंकी हदमें असहयोग आन्दोलन शुरू नहीं किया जाना चाहिए। वहाँ तो सिर्फ स्वदेशी आदि प्रवृत्तियोंका, जिनके सम्बन्धमें कभी कोई विवाद ही नहीं उठ सकता, विकास किया जाना चाहिए और सो भी आर्थिक और नैतिक दृष्टिकोणको ध्यानमें रखकर। और इसीलिए वहाँ कांग्रेस कमेटियों आदिकी भी स्थापना नहीं करनी चाहिए तथा वहाँ जो लोग कांग्रेस कमेटीके सदस्य बनना चाहते हैं उन्हें ब्रिटिश भारतमें स्थापित किसी कांग्रेस कमेटीमें अपना नाम दर्ज करवाना चाहिए।

इन धर्म-संकटोंसे उबरनेकी एक ही शुद्ध चाबी है, उसका उपयोग करनेसे कभी कोई भूल नहीं हो सकती। यदि हम किसी प्रकारके भय, उदाहरणके लिए जेल जानेके डरसे अथवा स्वार्थसे प्रेरित होकर कोई कदम उठाते हैं तो हमारा वैसा न करना ही अच्छा है। असहयोगीको निडर और निस्स्वार्थ होना चाहिए। सत्य-

परायण, अहिंसक, निडर और निस्स्वार्थ असहयोगी कभी भूल नहीं कर सकता। वह अपनी अन्तरात्मासे पूछकर सुखपूर्वक आगे बढ़ता जाता है।

इसके विपरीत

उपर्युक्त टिप्पणीमें हमने असहयोगके विरुद्ध आचरणका आभास देनेवाले उदाहरणोंपर विचार किया। इन्दौरसे एक संवाददाता इससे ठीक विपरीत एक उदाहरणके बारेमें लिखते हैं। वे लिखते हैं कि जब युवराज इन्दौर आनेवाले थे तब इन्दौर छावनीमें रहनेवाले तीन सज्जनों, पण्डित आर्यदत्त, सेठ छोटालाल तथा सेठ बद्रीनारायणको छावनी छोड़कर चले जानेका आदेश मिला। उन्होंने इस आदेशकी अवहेलना की। वे पकड़े गये। उन्होंने न वकील नियुक्त किये और न अपना बचाव किया। वे एक मासकी सादी कैद भोग रहे हैं। इस तरह इस उदाहरणमें हम देखते हैं कि कांग्रेस कमेटी द्वारा निर्धारित असहयोग करते हुए कुछ व्यक्ति पकड़े गये और जेल गये। यही संवाददाता लिखते हैं कि अन्य चौदह स्वयंसेवक भी पकड़ लिये गये हैं। एक रामनारायण नामक पहलवानको एक सैनिकने बहुत मारा किन्तु उस पहलवानने शान्तिसे काम लिया हालाँकि उसमें सैनिकसे निपट लेनेकी पर्याप्त शक्ति थी।

"अस्पृश्यता -- एक अतिरिक्त अंग"[1]

एक 'अन्त्यज' भाई अमरेलीसे लिखते हैं:

> **आपकी जन्मभूमिमें अन्त्यजोंके प्रति अधिक तिरस्कार है। काठियावाड़में तो अस्पृश्यताकी बात ही क्या की जाये? मैं पोरबन्दरतक हो आया हूँ। राजकोट, भावनगर और अमरेलीमें दो-चार प्रतिशत कम है लेकिन कुल मिलाकर गुजरातकी अपेक्षा काठियावाड़में बहुत अधिक है।**

मेरी जन्मभूमि है इससे क्या हुआ? बापके कुएँमें डूब मरना पुत्रत्वका लक्षण नहीं है। उपर्युक्त पत्रको प्रकाशित करते हुए मुझे अपनी जन्मभूमिपर लज्जा आती है। जिस काठियावाड़में नरसिंह मेहता-जैसे महान् भक्त हुए, जहाँ सुदामाने जन्म लिया, जहाँ स्वामिनारायणने[2] विहार किया, जहाँ अर्जुनके सखा [भगवान् श्रीकृष्ण] ने स्त्री-पुरुषोंको अपने पीछे पागल बना दिया, उस काठियावाड़के बुद्धिमान लोग यदि अधर्मको धर्म मानें, अस्पृश्यताको पुण्य मानकर मनुष्य-जातिका तिरस्कार करें तो उसका परिणाम अधोगतिके अतिरिक्त और क्या हो सकता है?

लेकिन यदि मैं काठियावाड़की आशा छोड़ बैठूँ तो मुझे अपनी ही आशा छोड़ देनी होगी। काठियावाड़के नवयुवकोंने खादीनगरमें पाखाना साफ करनेकी हामी भरी थी, इस बातको मैं भूला नहीं हूँ।[3]

१. ये शब्द सत्रहवीं सदीके प्रसिद्ध कवि अखा भगतके हैं।
२. स्वामी सहजानन्द (१७८१-१८३०); स्वामिनारायण नामक वैष्णव सम्प्रदायके संस्थापक।
३. दिसम्बर १९२१ में अहमदाबादमें हुए कांग्रेस अधिवेशनमें।

काठियावाड़में बहुत सारे युवक अन्त्यजोंकी सेवा किया करते हैं। लेकिन अब ऐसे कार्योंका जोड़ नहीं गुणा होना चाहिए। और यदि ऐसा हो तो काठियावाड़पर जो आक्षेप किया जाता है वह दूर हो जायेगा। इस प्रश्नका समाधान काठियावाड़ी युवकोंके धैर्य, उनकी विनयशीलता और धर्मपरायणतापर निर्भर करता है। यदि युवकवर्ग मर्यादा छोड़कर गुरुजनोंकी निन्दा करेगा तो वह अस्पृश्यताका त्याग करनेके अपने विचारोंका प्रसार नहीं कर सकेगा। लेकिन यदि वे अस्पृश्यताको अधर्म मानकर अन्य धर्मोंका सूक्ष्म रीतिसे पालन करेंगे तो समाजपर उनकी छाप पड़े बिना न रहेगी।

मोतीलाल तेजावत और भील

मेरे सुझावपर श्री मणिलाल कोठारी इस विषयकी जाँच-पड़ताल करनेके लिए सिरोही आदि स्थानोंपर गये थे। उनकी ओरसे जो समाचार प्राप्त हुए हैं उनसे पता चलता है कि भाई मोतीलाल तेजावतने भीलोंमें मुख्य रूपसे मद्यनिषेध और मांसाहार आदि छोड़नेका कार्य किया है। इसमें सन्देह नहीं कि उनकी प्रवृत्तिसे भीलोंमें जागृति आई है। यदि वे भीलोंके झुण्डको लेकर स्थान-स्थानपर न घूमते होते, किसी एक स्थानपर रहते, जिससे उनसे आसानीसे मिला जा सकता तो टीका करनेका कुछ कारण ही न रह जाता। श्री मणिलालकी मार्फत उन्होंने जो पत्र भेजा है उसे मैं प्रकाशित कर रहा हूँ।[1]

यह पत्र थोड़ा-बहुत अज्ञानसे भरा हुआ है। अंग्रेजोंका तो इस प्रश्नके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है और राज्योंके सम्मुख इस प्रश्नको विधिपूर्वक लाया जाना चाहिए था। श्री मणिलाल कहते हैं कि उन्हें पालनपुर, दाँता और सिरोहीमें राज्योंकी ओरसे पूरी-पूरी मदद मिली है। मोतीलाल तथा भीलोंने भी उनकी बातें सुनी हैं [और उनका विश्वास है कि] लोग शान्तिसे ही काम लेना चाहते हैं। मुझे उम्मीद है कि देशी राज्य भीलोंकी बात सुनेंगे और उन्हें न्याय प्रदान करेंगे तो भील सुखी होंगे। मोतीलालसे अगर कुछ भूल हो गई हो तो उसे दरगुजर करके और भीलोंपर उनका जो असर है उसका सदुपयोग करके यदि देशी राज्य भीलोंकी स्थितिको सुधारनेकी ओर ध्यान देंगे तो राजा और प्रजा दोनोंका भला होगा।

विदेशी कपड़ेकी दुकानोंपर धरना

मैंने सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें लिखनेका जो वचन दिया था उसकी याद दिलानेके लिए झरियासे मुझे जो पत्र मिला है उसमें एक दुःखद खबर भी है। यह संवाददाता लिखता है कि वहाँके व्यापारियोंने विदेशी कपड़ा न मँगवानेकी जो प्रतिज्ञा ली थी उसे उन्होंने भंग किया है। प्राचीन कालमें व्यापारियोंकी प्रतिज्ञाका जितना मूल्य था आज उतना ही कम हो गया जान पड़ता है। प्रतिज्ञा-भंगकी ऐसी ही खबरें कलकत्तेसे भी आई हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि ऐसे समयमें अगर धरना

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें कहा गया था कि श्री तेजावतने भीलोंमें सत्याग्रहका प्रचार किया जिससे राज्योंके अधिकारी अप्रसन्न हो उठे हैं। न तो इन राज्योंके अधिकारियोंने और न ब्रिटिश अधिकारियोंने ही उनकी प्रार्थनाकी ओर कोई ध्यान दिया।

न दिया जाये तो क्या किया जाये। हमें शान्तिपूर्ण ढंगसे धरना देनेका अधिकार है, इस विषयमें तो मुझे तनिक भी शंका नहीं है। शान्तिपूर्ण धरना हमेशा शान्त नहीं होता, यह मैं जानता हूँ और इसीलिए इसका विरोध करता हूँ। इसके अतिरिक्त जबतक विदेशी कपड़ेके प्रति अरुचि-भाव सामान्य नहीं हो जाता तबतक धरना देना भी मुझे अनुचित लगता है। ऐसा भी हो सकता है कि जिस रिवाजका विरोध करनेके लिए जनमतको पूरी तरह तैयार न किया गया हो उस रिवाजको दूर करनेके लिए दिये गये धरनेको लोकमत सहन न करे। यह तो हुआ एक पक्ष।

दूसरा पक्ष यह है कि जहाँ प्रतिज्ञा भंग की गई हो वहाँ प्रतिज्ञा भंग करनेवालोंको शरमिन्दा करनेका और उनसे लोगोंको सावधान करनेका उपाय भी हमारे पास अवश्य होना चाहिए। इसके दो सभ्य उपाय हैं — एक धरना और दूसरा सम्बन्ध-त्याग। दोनोंमें एक ही भाव निहित है। जो व्यापारी ऐसी हुंडीको जिसकी मियाद पूरी हो चुकी हो वापस करता है उस व्यापारीके साथ व्यवहार बन्द करनेका समाजको अधिकार है। इस सम्बन्ध-त्यागमें जाति-बहिष्कार अथवा सेवा-बहिष्कार नहीं आता, केवल व्यापार-त्याग आता है। ऐसा त्याग हमेशा सम्भव नहीं होता इसलिए धरना देना ही एकमात्र व्यावहारिक और सरल मार्ग रह जाता है। मैं यह टिप्पणी कांग्रेसकी बैठकसे पहले, मंगलवारके दिन लिख रहा हूँ।[1] कांग्रेस क्या निर्णय करती है, यह देखना है। लेकिन झरियाके लोगोंको तो मैं यही सलाह देता हूँ कि जहाँ स्पष्ट रूपसे प्रतिज्ञा भंग की गई हो वहाँ उन्हें धरना देनेका अधिकार है — हाँ, यह धरना पूरी तरह शान्तिमय होना चाहिए। उस अधिकारका उपयोग करनेसे पहले यह जरूरी है कि जिन लोगोंने वचनभंग किया है वे उनके पास जायें तथा उनसे विनती करें व उन्हें सावधान करें। सब प्रतिबन्धोंके सम्बन्धमें इतना याद रखना चाहिए कि प्रतिबन्ध शान्ति बनाये रखनेके लिए ही लागू किये जाते हैं। जहाँ शान्ति भंग होनेका तनिक भी भय न हो वहाँ धरना देनेका प्रतिबन्ध होनेके बावजूद धरना दिया जा सकता है। रामजस बाबू-जैसे प्रतिष्ठित सज्जनको वचन-भंग करनेवाले व्यापारीकी दुकानपर धरना देनेसे कौन रोक सकता है? हाँ, इसके साथ यह शर्त अवश्य है कि रामजस बाबूको भी अपने साथ हजार स्वयंसेवकोंकी टोली रखकर धरना नहीं देना चाहिए। जहाँ धरना देनेका उद्देश्य भय उत्पन्न न कर लज्जित करना है, उसमें धरना देनेवालों की संख्या बहुत ज्यादा न हो। उसके लिए दो-चार आदमी बहुत हैं और वे जाने-माने चरित्रवान् होने चाहिए।

लेकिन मेरी तो व्यापारी-मात्रसे विनम्र प्रार्थना है कि वे जनता अथवा कांग्रेसके स्वयंसेवकोंको धरना देनेकी परेशानीमें डालने या उन्हें जिम्मेदारी उठानेके लिए मजबूर न करें। देशमें विदेशी कपड़ेका त्याग बड़े प्रमाणमें हो रहा है। उससे देशके लाखों रुपये बच गये हैं और इनमें से हजारों गरीबोंके घरोंमें गये हैं। ऐसे अर्थलाभ और धर्मलाभकी प्रवृत्तिको वे अपने स्वार्थकी खातिर वचन-भंग करके कैसे रोक सकते हैं? उनकी दुकानोंपर धरना देना पड़े यह बात उन्हें कैसे सहन हो सकती है?

१. अ० भा० कां० कमेटी की बैठक २४-२-१९२२ को दिल्लीमें हुई थी।

व्यापारी और पतिव्रता स्त्रीकी एक जैसी स्थिति होनी चाहिए। दोनोंको अपने ऊपर पहरा बिठाये जानेकी बातपर लज्जित होना चाहिए। जिस तरह पतिव्रता नारी अपना शील भंग करे तो समाजको भारी आघात पहुँचता है उसी तरह व्यापारी जब वचन भंग करता है तब समाजपर भारी प्रहार करता है। क्या व्यापारी लोग इस धर्मयज्ञमें अपने वचनका पालन करने जितना भाग भी नहीं लेंगे?

अहमदाबादकी स्वयंसेविकाएँ

रतनपोलमें[1] खादी-प्रचारका काम करनेवाली स्वयंसेविकाओंके कामकी रिपोर्ट मेरे पास पड़ी है। इसमें स्वयंसेविकाओं और विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंके बीच हुई बातचीतका और कपड़ा खरीदनेको आई बहनोंके साथ हुई बातचीतका विवरण भी है।

इन बहनोंने विदेशी कपड़ा खरीदनेके लिए आनेवाली बहनोंके साथ जो बातचीत की, उसका परिणाम यह हुआ कि कपड़ा खरीदनेके बदले वे वापस चली गईं और उन्होंने वचन दिया कि वे भविष्यमें विदेशी कपड़ा नहीं लेंगी। उन्होंने व्यापारियोंको समझाया लेकिन वे न समझे। उन्होंने तो बहनोंको यह कहकर बहकानेकी कोशिश की: "हमारे पास जो माल है उसे तो बेचना ही पड़ेगा, बादमें विदेशी कपड़ा नहीं लेंगे।" सब जानते हैं कि इस कथनमें कुछ सार नहीं है। जो व्यक्ति जेबमें पड़ी बीड़ी अथवा बोतलमें पड़ी शराबको पीनेके बाद बीड़ी अथवा शराब छोड़नेका विचार करता है वह उसे कभी छोड़ ही नहीं सकता। पीनेवाला जब अपने पास पड़ी बीड़ी अथवा शराबको फेंक देता है तभी वह उससे मुक्त होता है। होता यह है कि पास पड़े हुए मालको बेचनेवाले दुकानदारका भण्डार कभी समाप्त ही नहीं होता। इसके अलावा व्यापारियोंने कहा: "हम अगर अभी न बेचें तो हमें जो नुकसान होगा, उसे कौन पूरा करेगा?" यह कथन अविवेकपूर्ण है। जो व्यक्ति देशकी खातिर इतनी छोटी-सी असुविधाको भी सहन नहीं कर सकता उससे क्या आशा की जा सकती है? जब बिक्री नहीं होती, या बाजारमें मन्दी होती है, या लूटपाट होती है तब उनके उस नुकसानको कौन पूरा करता है? यह मालूम होनेपर कि अमुक व्यापार त्याज्य है, यदि हम देश-हितकी खातिर उसका त्याग करते हैं तो इसमें क्या आत्मत्याग है — यह बात मेरी समझमें नहीं आती।

लेकिन ऐसी स्थितिमें बहनोंको क्या करना चाहिए? उन्हें [व्यापारियोंको] विनयपूर्वक समझाना चाहिए, ताने न देने चाहिए बल्कि धैर्यपूर्वक उन्हें लाभालाभकी बात समझानी चाहिए और उसके बाद भी अगर वे न मानें तो शान्त हो जाना चाहिए, लेकिन अधिक वाद-विवादमें पड़कर कटुता नहीं पैदा करनी चाहिए। जिनके पास बहुत सारा विदेशी माल भरा पड़ा हो उनसे आशा रखनेकी अपेक्षा जो थोड़ा-सा विदेशी कपड़ा खरीदने आते हैं उनकी समझपर, उनके देशाभिमानपर अधिक विश्वास रखना ही श्रेयस्कर है।

१. अहमदाबादका एक प्रसिद्ध बाजार।

'नवजीवन' का बहिष्कार नहीं

मैंने गत सप्ताह एक संवाददाता द्वारा दी गई यह खबर प्रकाशित की थी कि वेरावलमें सत्ताधीशोंने 'नवजीवन' पर रोक लगायी है। दूसरा संवाददाता लिखता है कि यह समाचार निराधार है, वह स्वयं लोगोंको 'नवजीवन' देता है और उसे कोई रोकता नहीं।

खादीका भण्डार

पाठकोंने 'नवजीवन' में कांग्रेस खादी कार्यालयकी ओरसे जारी किया गया विज्ञापन देखा होगा। 'नवजीवन' में विज्ञापन नहीं दिये जाते तो फिर यह अपवाद क्यों हो — यह सोचकर बादमें उसे देना बन्द कर दिया। खादी कार्यालयने इसका विरोध किया है। यहाँ मुझे यह कह देना चाहिए कि 'नवजीवन' ने उस विज्ञापनके पैसे नहीं लिये हैं। दोनों पक्षोंकी बात सही है। हमारा इरादा यह रहा है कि 'नवजीवन' की सारी जगहका उपयोग केवल पाठ्य-सामग्रीके प्रकाशनमें ही होना चाहिए, इसलिए मुफ्त विज्ञापन लेना भी मुश्किल काम है। उसमें यह प्रश्न उठता है कि किसका लें और किसका न लें? ऐसा होनेपर भी यह कहा जा सकता है कि खादीकी खातिर ही 'नवजीवन' का अस्तित्व है, इसलिए मैं उसे इस बार विज्ञापनके तौरपर प्रकाशित करनेकी अपेक्षा अधिक महत्त्व प्रदान करना चाहता हूँ। खादी गुजरातमें किसी भी स्थानपर पड़ी नहीं रहनी चाहिए। जब कि गुजरातमें अब भी विदेशी कपड़ा पहननेवाले अथवा मिलका कपड़ा पहननेवाले पड़े हैं तबतक यह कैसे कह सकते हैं कि गुजरातमें खादीका उपयोग किया जाता है। इसलिए मुझे उम्मीद है कि जितनी खादी कार्यालयके पास पड़ी है उसे व्यापारी और खादी पहननेवाले व्यक्ति खरीदकर उस कार्यालयको नई खादी भरनेका अवकाश देंगे। कोटकी खादीका भाव आठ आने प्रतिगज और कमीजोंकी खादीका भाव सात आने प्रतिगज है। जो पाठक यह भार कम कर सकते हैं उन्हें मेरी सलाह है कि वे कांग्रेस कमेटीको लिखें और ऐसा करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-२-१९२२

१९६. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंसे

दिल्ली
२६ फरवरी, १९२२

भेंट लिये जानेपर महात्मा गांधीने पत्र-प्रतिनिधियोंसे निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये :

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी[1] कार्यवाही बड़ी ही मननीय रही।

कमेटीमें जो-कुछ हुआ मैं उस सबको प्रकट करनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। इससे यह न समझा जाये कि मैं कोई बात छिपाना चाहता हूँ या मैं किसी बातपर शर्मिन्दा हूँ। एक बात बिलकुल साफ झलक रही थी कि बारडोलीमें पास हुए प्रस्तावोंको[2] लेकर सदस्योंमें गहरी निराशा और तीव्र असन्तोष था। चूंकि ये प्रस्ताव सरकारी विज्ञप्तिका[3] उत्तर[4] देनेके ठीक बाद ही पास हुए थे, सदस्योंको इस बातका मर्म समझनेमें कठिनाई हुई कि मैंने वाइसरायको लिखे गये पत्रमें[5] सूचित कार्यक्रम क्यों बदल दिया। लोगोंको तो यह शक भी हुआ कि मैं यह काम पण्डित मालवीयजीके प्रभावमें आकर कर रहा हूँ। कहा तो किसीने नहीं मगर जाहिर तो हो ही रहा था। अन्ततोगत्वा लोग यह बात समझ गये कि मैंने यह निर्णय चौरीचौराकी दुर्घटनाके बाद मालवीयजीसे मिलनेसे पूर्व ही स्वतन्त्र रूपसे कर लिया था। व्यक्तिगत रूपसे तो मुझे यह स्वीकार कर लेनेमें कि मैंने पण्डितजीकी कोई बात मान ली है, जितनी प्रसन्नता होती उतनी और किसी चीजसे न होती। किन्तु मुझे इस बातका सदा बड़ा दुःख रहा है कि असहयोग और सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें मैं पण्डितजीकी रायसे सहमत नहीं हो सका हूँ। मैं यह-सब केवल अपनी भावनाकी तीव्रता प्रकट करनेके लिए कह रहा हूँ।

घोर असन्तोष और विरोधके होते हुए भी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्योंने अन्ततोगत्वा एक लम्बी बहसके बाद बारडोलीके प्रस्तावोंको प्रायः पूराका-पूरा मान लिया। इससे कांग्रेसके प्रति उनकी निष्ठा और अनुशासनके प्रति प्रेमका प्रचुर प्रमाण मिलता है। मैं यह मानता हूँ कि स्वयं मुझे व्याख्यात्मक प्रस्तावके शब्द पसन्द नहीं आये। इसमें अनावश्यक रूपसे सफाई पेश की गई है; परिभाषाएँ, कांग्रेसकी नीतिका दुहराया जाना और सत्याग्रहका उल्लेख ये तीनों बातें अनुपयुक्त प्रतीत होती हैं, परन्तु जब लोगोंकी उद्विग्नताको शान्त करना तथा भ्रम और गलतबयानी बचाना आवश्यक

१. यह बैठक २४ और २५ फरवरी, १९२२ को दिल्लीमें हुई थी।
२. ११ और १२ फरवरीके।
३. ६ फरवरीकी; देखिए परिशिष्ट २।
४. ७ फरवरीको।
५. यह पत्र १ फरवरीको भेजा गया था।

मालूम होने लगा तब मैंने पुनरुक्ति दोष और प्रगल्भताको स्वीकार कर लेना, जो कि इस प्रस्तावमें निश्चित रूपसे मौजूद हैं, अस्पष्टता और दुरूहतासे अच्छा माना।

सर विलियम विन्सेंटने बारडोली प्रस्तावोंकी जो व्याख्या की है उसे मैं सामान्यतः स्वीकार करता हूँ। वे यह सर्वथा ठीक कहते हैं कि बारडोली प्रस्तावका यह अर्थ कदापि नहीं होता कि कांग्रेसकी नीति उलट दी गई है या असहयोग सम्बन्धी कांग्रेस-कार्यक्रममें कोई संशोधन हुआ है। और इसका अर्थ केवल इतना ही है कि सामूहिक सविनय अवज्ञा स्थगित कर दी गई है और अन्य आक्रामक ढंगके आन्दोलन भी, जबतक उनके फिर जारी करनेकी सलाह न दी जाये, स्थगित रहेंगे। और हो भी क्या सकता था। बारडोलीके प्रस्ताव तो जनताके सामने रखे गये थे और ये प्रस्ताव एक प्रकारसे प्रायश्चित्तके रूपमें थे और इन प्रस्तावों द्वारा असहयोगसे सहानुभूति रखनेवाली जनताको निश्चित रूपसे यह भी बताना था कि जो लोग हिंसामें विश्वास रखते हैं उनकी सहानुभूतिकी आवश्यकता नहीं है। इतना ही नहीं, हिंसा हमारे आन्दोलनके लिए हानिकारक मानी गई है।

मैं आलोचकोंको, जिनमें से कई मेरे घनिष्ठ मित्र भी हैं, चेताना चाहता हूँ कि वे कुछ दिनोंसे भावुकतामें बहने लगे हैं। मैं ऐसे आलोचकोंको बताना चाहता हूँ कि व्याख्यात्मक प्रस्तावसे बारडोली प्रस्तावोंमें कोई खास परिवर्तन हुआ न समझा जाये। केवल दो बातोंमें परिवर्तन हुआ है। एक तो यह है कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंकी सीधी देखभालमें जाने-बूझे, नेक चाल-चलनवाले तथा अधिकार-प्राप्त लोगोंको ही विदेशी दुकानोंपर धरना देनेकी पुनः अनुमति मिलनी चाहिए। इस बातपर क्षोभसे भरी हुई शिकायतें आई हैं कि विदेशी कपड़ेके व्यापारी विदेशी कपड़ेके प्रति जनताकी नापसन्दगीकी कोई परवाह नहीं करते। शिकायत करनेवालोंमें विलायती कपड़े पहननेवाले लोग भी हैं। ये व्यापारी गम्भीरतापूर्वक विदेशी कपड़ा न मँगानेकी प्रतिज्ञा लेनेके बाद भी उसे तोड़ देते हैं। जनताने इन व्यापारियोंकी स्वार्थसे भरी हुई और देशद्रोहपूर्ण मनोवृत्तिके प्रति ठीक ही रोष प्रकट किया है क्योंकि उन्होंने रुपया कमानेके लिए जनताकी इस भावनाकी कतई परवाह नहीं की कि देशमें विदेशी कपड़ा अब और न मँगाया जाये। यह समझना एक भारी भूल मानी जायेगी कि विदेशी कपड़ेका विरोध किसी द्वेष या दुर्भावके कारण किया जाता है। विदेशी कपड़ोंके प्रति अरुचि होना राष्ट्रीय चेतनाका द्योतक है। वह एक उच्च कोटिकी आर्थिक वस्तुस्थितिका परिचायक है। हमारे इस कथनकी सत्यता इस बातसे और भी समर्थित होती है कि भारतकी मिलोंमें बने कपड़ोंके प्रति विरोधी भावना जोर पकड़ रही है। भारतकी मिलोंमें काम करनेवालों के विरुद्ध दुर्भावका प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन जबतक राष्ट्रकी समझमें यह बात नहीं आ जाती कि मिलका कपड़ा खरीदना जनताके लिए उतना ही दुश्वार है जितना उसका होटलोंसे भोजन खरीदना, और मेरा खयाल है किसी दिन राष्ट्र इसे समझ जायेगा, तबतक विदेशी कपड़ोंकी दुकानोंपर धरना देनेके बारेमें जो सार्वजनिक माँग की जा रही है, उसके विरोधमें खड़ा होना असम्भव है। मैं यही आशा कर सकता हूँ कि भारतके व्यापारी जो अबतक ऐसे व्यापारमें लगे हुए थे जिससे जनताकी गरीबी

बराबर बढ़ती ही रही है, समयको पहचानकर चेतेंगे और जापानी सामुराईका[1] उदाहरण सामने रखते हुए थोड़ेसे स्वार्थत्यागकी आवश्यकताको अनुभव करेंगे। मैं विदेशी कपड़ेके व्यापारको त्याग देना केवल छोटी बात इसलिए समझता हूँ कि अगर ये व्यापारी खादीके उत्पादन और व्यवसायका कार्य आरम्भ कर दें तो यह उनके लिए प्रतिष्ठायुक्त जीविकाका साधन हो जायेगा और फिर शान्तिमय धरनेकी कोई आवश्यकता ही न रह जायेगी। अगर वे थोड़ा सहयोग-भर दें तो मैं देशमें श्रेष्ठ स्त्री-पुरुषोंको विदेशी कपड़ेके धरनेसे हटाकर खादीके निपुण कातने, धुनने और बुननेवाले बन जानेके लिए तथा बहुत शीघ्रतासे खादी बनानेके लिए प्रेरित करना पसन्द करूँगा।

दूसरा संशोधन यह हुआ है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने प्रान्तीय कमेटियों-को यह अधिकार दे दिया कि वह व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाकी इजाजत दे सकती है — चाहे वह रक्षात्मक हो, चाहे आक्रामक। किन्तु उसका यह अर्थ नहीं कि प्रान्तोंको इस प्रकारकी अवज्ञामें फौरन लग जाना चाहिए। उससे प्रत्येक प्रान्तको यह पूर्ण अधिकार-भर मिला है कि यदि आवश्यकता समझी जाये और यदि प्रान्तमें अहिंसाका वांछित वातावरण मौजूद हो तो वह प्रान्त ऐसा कर सकता है। यद्यपि प्रान्तोंको उनका वह स्वायत्ताधिकार फिरसे मिल गया है जो उन्हें दिल्लीमें[2] गत नवम्बरमें दिया गया था तथापि मेरा उनसे आग्रहपूर्ण निवेदन है कि वे पूरी तौरसे विचार किये बिना जल्दीमें आकर कोई काम न करें। निश्चय ही मेरी तो यह सलाह है कि अगर सविनय अवज्ञाकी नितान्त आवश्यकता प्रतीत न हो तो वे थोड़ा विश्राम कर लें और स्वयंसेवकोंकी सूचियोंमें से ऐसे नाम निकाल दें जो कांग्रेसकी प्रतिज्ञाके प्रति पूर्ण आस्था नहीं रखते।

यदि प्रान्तीय कमेटियाँ व्यक्तिगत अवज्ञाको पुनः आरम्भ करनेके पहले अपने-अपने घरको सँभालें और इस बातका इतमीनान कर लें कि हर अवस्थामें पूर्ण रूपसे अहिंसा, कर्मणा ही नहीं मनसा और वाचा भी रखी जा सकेगी तो इस आन्दोलनकी शक्ति उस हालतमें बहुत-कुछ बढ़ जायेगी। यद्यपि पूरे देशपर नजर डालें तो यह कहना बिलकुल ठीक होगा कि देशमें अहिंसात्मक भावनाओंकी काफी वृद्धि हुई है तथापि अभी उन्नति करनेकी गुंजाइश बनी हुई है और अभी तो सदा इस बातकी आशंका बनी रहती है कि कहीं गड़बड़ी न हो जाये। सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों ही प्रकारकी सविनय अवज्ञाके लिए आदर्श व्यवस्था वही है जब सर्वथा शान्ति रहे। अवज्ञा प्रदर्शनात्मक न हो। यदि कोई गिरफ्तार हो जाये तो उसके साथ-साथ भीड़के जानेकी कोई जरूरत नहीं है। जनताकी अब भी यह इच्छा है कि अदालतोंमें भीड़ लगाई जाये या जो लोग जेलमें ले जाये जा रहे हैं वे उनके पीछे-पीछे भीड़ लगाकर चलें।

१. जापानकी एक लड़ाकू जाति।
२. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४३२-३५।

मैं और भी बहुत-सी बातें बतला सकता हूँ जिनपर ध्यान देना बहुत जरूरी है। यदि सब शर्तें पूरी हो गई हों तो, प्रान्तोंको काम करनेकी स्वतन्त्रता है, फिर भी मेरी सलाह है कि वे जल्दबाजी न करें।

प्रश्न: क्या आप समझते हैं कि इन कार्रवाइयोंको स्थगित करने और कांग्रेस कमेटी द्वारा उनकी फिरसे इजाजत न दी जानेके बीच जो थोड़ा-सा समय बीता है उसमें हवा इतनी साफ हो गई है कि ऐसी अनुमति पुनः दे दी जाये।

उत्तर: मेरा खयाल तो यह था कि प्रस्ताव ही इस बातको साफ कर देता है। यदि आप बारडोलीके निर्णयोंका अवलोकन करें तो आप देखेंगे कि सामूहिक अवज्ञाके लिए बहुत कड़ी शर्त लगाई गई है। आपको यह भी मालूम होगा कि व्यक्तिगत अवज्ञाके सम्बन्धमें इतनी सख्त शर्त नहीं लगाई गई है। सामूहिक अवज्ञा उसी समयतक के लिए बन्द की गई है जबतक अन्यथा आदेश न दिये जायें। इसका अर्थ यह है कि यद्यपि सामूहिक अवज्ञा बन्द की जा रही है तथापि कार्यकारिणी समितिने अन्य कार्रवाइयोंको भी इसी विचारसे बन्द करना ठीक समझा है कि समूची स्थितिपर पूरी तरह विचार किया जा सके और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी भी सब बातोंपर नजर डाल ले। इसमें कांग्रेस कमेटीने केवल इतना ही परिवर्तन किया है कि व्यक्तिगत अवज्ञाका समय स्वयं स्थिर न करके यह काम उसने प्रान्तीय कमेटियोंको सौंप दिया है। ये कमेटियाँ क्या निर्णय करेंगी सो मैं नहीं जानता। जैसा कि आप जानते ही होंगे मैंने स्वयं यही सलाह दी है कि फिलहाल तो किसी प्रकारकी अवज्ञामें हाथ न डाला जाये पर यदि किसी प्रान्तका ऐसा खयाल हो कि वहाँकी हवापर चौरीचौराकी दुर्घटनासे कोई प्रभाव नहीं पड़ा है और इसलिए वहाँ किसी प्रकारके हिंसा-काण्डकी सम्भावना नहीं है, और साथ ही यदि उसे इस बातका भी विश्वास हो गया हो कि उन सब शर्तोंकी पूर्ति हो गई है जिनको कि कांग्रेसने जरूरी बतलाया है तो उस प्रान्तको व्यक्तिगत अवज्ञाका पूरा अधिकार है। इसलिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने कोई ऐसा निर्णय नहीं किया है कि समयका अमुक अन्तराल पर्याप्त होगा अथवा कोई बड़ा अन्तराल आवश्यक होगा। प्रत्येक प्रान्तको अपने लिए स्वयं निर्णय करना है। और यह देखते हुए कि भिन्न-भिन्न प्रान्त अपने-अपने स्वत्वोंकी रक्षाके लिए बहुत सजग रहते हैं और सत्याग्रहके बारेमें अपनी व्यवस्था आप कर सकनेकी योग्यतामें दूसरे लोगोंके सन्देहको नापसन्द करते हैं, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके लिए यह असम्भव था कि वह प्रान्तोंके स्वायत्त शासनकी माँगको स्वीकार न करती।

परन्तु ईश्वरकी तीसरी चेतावनी पानेके बाद भी इतनी जल्दी आपने वह प्रान्तीय स्वाधीनता कैसे दे दी जिसका कमसे-कम संयुक्त-प्रान्तने उचित उपयोग नहीं किया था?

यही तीसरी चेतावनी मुझे तत्काल सामुदायिक अवज्ञाके लिए उद्यत होनेसे रोक रही है। अब उसे आरम्भ करनेसे पहले मैं सौ बार सोचूँगा। प्रान्तोंको स्वायत्ताधिकारसे थोड़े दिनोंके लिए ही वंचित किया गया था सो भी इसलिए कि कांग्रेस संगठनोंपर

हमारा पूरा-पूरा अधिकार हो जाये और वे केन्द्रीय संस्थाके आदेशोंका किस हदतक पालन करते हैं यह भी मालूम हो जाये। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंने जिस शालीनताके साथ कार्यकारिणीके निश्चयोंका पालन किया है उससे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके प्रति उनकी निष्ठा प्रकट होती है। अगर इस समय प्रान्तीय स्वायत्ताधिकार पुनः न दे दिया जाता तो प्रान्तीय कमेटियाँ और कार्यकर्त्तागण खिन्न हो जाते। यह भी नहीं कहा जा सकता कि अगर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंको काम करनेकी पूरी स्वाधीनता न होती तो चौरीचौराकी घटना घटित न होती। यद्यपि कांग्रेस ऐसा मानती है कि चौरीचौरामें भीड़के कृत्योंके सम्बन्धमें की गई भर्त्सना अनुचित रूपसे कठोर है, तथापि जनताके दृष्टिकोणसे कहा जा सकता है कि उक्त काण्डके लिए कांग्रेस संस्थाएँ और सरकार समान रूपसे उत्तरदायी हैं। अर्थात् सरकारने ऐसे नेताओंको जिनकी अहिंसा-भक्ति और कांग्रेस-कार्यके संचालनकी योग्यता सर्वविदित थी, गिरफ्तार करके कार्यक्षेत्रसे हटा दिया और जनता जितना सह सकती थी उसपर उससे अधिक बोझ डाल दिया। ऐसी हालतमें मोटे तौरपर देखते हुए ऐसे भीषण काण्डोंका हो जाना कोई आश्चर्यकी बात नहीं मानी जा सकती। फिर गोरखपुर या भारतमें ही उत्तेजनाके अतिरेकमें जनताके पागल हो जानेकी घटना अनोखी नहीं है, दुनियाके सभी भागों-में ऐसा होता आया है। फिर भी कांग्रेस इस घटनाकी निन्दा करती है, इसका कारण यह है कि उसने अहिंसाकी प्रतिज्ञा ले रखी है।

यह देखते हुए कि कांग्रेस द्वारा निश्चित की हुई शर्तोंका अब अधिक निष्ठासे पालन किया जा रहा है, क्या आप बतला सकते हैं कि स्वराज्य-प्राप्तिमें और कितना समय लगेगा?

समयके सम्बन्धमें भविष्यवाणी करना बहुत कठिन है। कारण यह है कि कुछ बातें ऐसी हैं जो भविष्यवाणीके लिए उत्साहित करती हैं परन्तु दूसरी ओर ऐसी बातें भी देखनेमें आती हैं जिनके कारण सुदूर भविष्यमें भी कोई तिथि निर्धारित कर सकनेका साहस नहीं होता।

क्या आपने कभी अपनी तानाशाहीका उपयोग किया है?

कभी नहीं। नियमानुसार उसका उपयोग जहाँ किया जा सकता है वैसा कोई वैध अवसर नहीं आया। उसका उपयोग तभी हो सकता है जब कांग्रेस संस्थाएँ सर-कारके जुल्मके कारण अपंग बन जायें।

मान लीजिए कि आप गिरफ्तार कर लिये गये, तो क्या उस समयके लिए आप किसीको अपना उत्तराधिकारी मनोनीत करेंगे?

नहीं। मुझे किसीको नामजद करनेका कोई अधिकार नहीं है। चूँकि कांग्रेसकी संस्थाएँ काम करने लायक बनी हुई हैं इसलिए वैसी सत्ता धारण करना असंगत है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १-३-१९२२

१९७. टिप्पणियाँ

कांग्रेसको मूर्ति न बना डालिए

हमें कांग्रेसको कोरी पत्थरकी मूर्ति नहीं बना डालना चाहिए। मुझे यह अच्छा मालूम होता है कि प्रत्येक नर-नारी कांग्रेसी बन जाये और समझके साथ तथा खुशी-खुशी उसके प्रस्तावोंके अनुसार व्यवहार करे। पर केवल इसी खयालसे कि कांग्रेस एक पुरानी या महान् संस्था है, उसके सभासद होना अथवा पसन्द हों या न हों, उसके प्रस्तावोंको मान लेना मुझे जरा भी पसन्द नहीं है। बहुमतका नियम एक हद-तक ही लागू हो सकता है। छोटी-मोटी और तफसीलकी बातोंमें ही बहुमतके अधीन होना उचित है। बहुमतके हर किसी प्रस्तावके अधीन हो जाना तो गुलामी कहलाती है। जैसे किसीको परिषद् थोड़े-बहुत अंशोंमें भी कल्याणकारक संस्था मालूम होती है उसका केवल कांग्रेसके प्रस्तावकी खातिर ही उससे अलग हो जाना या उसके लिए उम्मेदवार बननेकी इच्छा न करना, मैं अनुचित मानता हूँ। उसी प्रकार केवल इसी लिए कि कांग्रेस कहती है, किसी वकीलका वकालत बन्द कर देना भी गलत है। प्रजातन्त्रका अर्थ यह नहीं है कि लोग भेड़ोंकी तरह बरतें। प्रजातन्त्रमें तो व्यक्तिगत विचार तथा कार्यकी स्वतन्त्रताकी रक्षा प्राणपणसे की जाती है। इसलिए मेरा यह खयाल है कि अल्पमतवालों को बहुमतसे भिन्न काम करनेका तबतक पूरा अधिकार है जबतक वे उक्त काम कांग्रेसके नामपर न करें। वकालत करनेवाले वकील कांग्रेसके सभासद हो सकते हैं, पर वे असहयोगी नहीं कहे जा सकते। वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्य नहीं हो सकते और उन्हें होना भी नहीं चाहिए। इसी प्रकार जो व्यक्ति शुद्ध खादी न पहनते हों, जो खिताब धारण किये हों, अथवा जो परिषद्के सभासद हों, वे कांग्रेसी तो हो सकते हैं पर 'असहयोगी' नहीं माने जा सकते।

कांग्रेसका सदस्य उन प्रस्तावोंसे बँध नहीं जाता है जो उसे स्वीकार न हों; यही नहीं बल्कि मेरा तो खयाल यह है कि उसे इससे भी आगे बढ़ जानेका हक है। शर्त सिर्फ इतनी ही है कि उसका काम कांग्रेसके मूल सिद्धान्तके विरुद्ध नहीं होना चाहिए और वह कांग्रेसके नामपर न किया जाना चाहिए। मान लीजिए कि कांग्रेसके कुछ प्रतिबन्ध किसी एक प्रान्तको अनुकूल नहीं जान पड़ते, और उस प्रान्तने अपना मत उनके प्रतिकूल दिया है, तथा उस प्रान्तको यह भी महसूस होता हो कि हम तो स्वयं कार्यक्रम चला सकते हैं, तो ऐसे प्रान्तको इस बातका पूरा हक है कि वह आगे बढ़ जाये, सफलता प्राप्त करके यह दिखा दे कि उसका कांग्रेसके प्रतिबन्धके बावजूद कार्य करना उचित था। कांग्रेसके प्रस्ताव सारे देशके लिए महत्तम समा-पवर्तककी तरह हो सकते हैं। यह तो समझा जा सकता है कि किसी निश्चित प्रान्तकी जरूरतोंको देखते हुए वे बहुत कम बैठते हों। ऐसा प्रान्त यदि पूरा विश्वास रखता हो और उसका कार्य कांग्रेसके किसी हितको चोट न पहुँचाता हो तो अपनी

जिम्मेवारीपर अपने ढंगके अनुसार, वह बेशक आगे बढ़ सकता है। कांग्रेस यदि उसके इस साहसको निन्दनीय बताये, तो उसके लिए उसे तैयार रहना चाहिए। मेरी रायमें तो प्रजासत्ताकी भावनाका यही तकाजा है। यह पूर्वोक्त उदाहरण कौटुम्बिक सविनय अवज्ञाका है। इसीके अनुसार चलकर हम इस झूठी मूर्ति-पूजासे बच सकते हैं।

खिलाफत समितियोंसे अनुरोध

बहुत-से क्षेत्रोंसे मेरे पास बराबर ये शिकायतें आ रही हैं कि स्वयंसेवकोंके लिए कांग्रेसका जो प्रतिज्ञापत्र है, खिलाफत सदस्य उसका पालन नहीं कर रहे हैं और वे उसपर धर्म-सम्बन्धी एतराज उठाते हैं। मैं यह बता देना चाहता हूँ कि प्रख्यात उलेमाओंने कांग्रेसमें सभी धार्मिक आपत्तियोंपर विचार कर लिया था, और प्रतिज्ञापत्र उनकी सलाहसे तैयार किया गया था। इसलिए मैं खिलाफत समितियोंसे यह अनुरोध करूँगा कि वे कांग्रेसको अपना पूरा सहयोग दें। वस्तुतः किसी भी खिलाफत समितिसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रत्येक मुसलमानको चाहिए कि वह कांग्रेससे भी सम्बन्ध रखना अपना कर्त्तव्य माने। राष्ट्रीय संगठन केवल एक ही हो सकता है। वह संगठन कांग्रेस है, और मुसलमानोंको उसे उसी तरह अपनाना चाहिए जिस तरह हिन्दुओंने उसे अपनाया है। हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रदर्शनके लिए कमसे-कम इतना तो किया ही जाना चाहिए।

खद्दर अनिवार्य है

मुझे यह देखकर दुःख हुआ कि जमीयत-उल-उलेमाने[1] कार्य-समितिके पास स्वयंसेवकोंके लिए जो प्रतिज्ञापत्र भेजा है वह बहुत ही असन्तोपजनक है। इस प्रतिज्ञापत्रमें खद्दरके व्यक्तिगत उपयोगपर जोर नहीं दिया गया है। प्रत्येक शर्त कांग्रेस प्रतिज्ञापत्रका अभिन्न अंग है और मैं उसे उतना ही आवश्यक मानता हूँ जितना कि हिन्दू-मुस्लिम एकताको। एकताके भंग होनेसे स्वराज्य भंग हो जायेगा। खद्दरको छोड़ देनेसे जनताको आर्थिक और नैतिक अधःपतनसे उबारना असम्भव होगा। यदि आप अहिंसा-प्रेमी हैं तो आपको जातियोंकी एकता और भारतके छः करोड़ घरोंमें चरखेकी पुनः प्रतिष्ठाके द्वारा सरकारसे लड़नेके लिए आवश्यक शक्ति प्राप्त होगी। मैं खुशीसे यह माने लेता हूँ कि आप सरकारसे, एकता और चरखेके बिना भी, शस्त्रोंकी सहायतासे आसानीके साथ लड़ सकते हैं। पर उसका परिणाम स्वराज्य नहीं होगा बल्कि एक लुटेरेका स्थान उससे बड़ा लुटेरा ले लेगा और जनता इन दोनोंके बीच और भी ज्यादा पिसेगी। मैं हिन्दुओं और मुसलमानोंसे, जिन्हें हिन्दुस्तानसे मोहब्बत है, कहता हूँ कि वे आयें और इस तरहकी सम्भावनाके खिलाफ जानकी बाजी लगाकर भी संघर्ष करें। इसलिए मेरा जमीयतसे यह अनुरोध है कि वह कार्य-समितिकी प्रार्थनाओंको तुरन्त अमलमें लाये। खिलाफत कमेटियोंसे कांग्रेस संगठनोंको, कुल मिलाकर भारी शक्ति और सहायता मिलती रही है। समयके साथ-

१. मुसलमानोंकी धार्मिक संस्था।

साथ इस सहयोगको और भी मजबूत होना चाहिए। इस बातका भी अन्देशा है कि ये दो संगठन कहीं विरोधी दिशाओंमें न बढ़ने लगें। जैसे एक आँखको प्रतिक्षण दूसरी आँखके पूर्ण सहयोगकी जरूरत है वैसे ही हरेक आदमीको दूसरेकी सहायता करनी चाहिए।

इसमें शक नहीं कि दोनों संगठनोंके काममें फर्क रहेगा। लेकिन बुनियादी मसलों-पर, जैसे अहिंसा, खद्दर और सभी जातियोंकी एकतामें फर्क या कमीवेशीकी कोई गुंजाइश नहीं है। मुझे मालूम हुआ है कि जमीयतको यह बताया गया है कि खद्दर हमेशा नहीं मिलता। बेशक कुछ जगहोंपर, जहाँ कार्यकर्त्ताओंने अपनी जिम्मेदारी पूरी नहीं की है, वह सुलभ नहीं है। लेकिन उन्हें यह मालूम होना चाहिए कि बम्बई और अहमदाबादमें और बहुत-सी दूसरी जगहोंमें जितना भी चाहिए उतना खद्दर मिल सकता है। गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी निम्नलिखित दरोंपर खद्दर देती है:

कोटके मतलबका खद्दर: ९ आने गज, कमीजके मतलबका खद्दर: ७ आने गज।

अनावश्यक घबराहट

मुझे दुःख है कि कुछ हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही इस बातसे घबराये हुए हैं कि मैं पूरी तौरसे अहिंसाका कायल हूँ। मैं उसके प्रचारमें जोर-शोरसे लगा हुआ हूँ और इसके सम्बन्धमें किसी प्रकारका समझौता नहीं करता। मुझे दुःख है कि इससे कुछ हिन्दू-मुसलमान दोनों घबरा गये हैं। वे मानते हैं कि मैं धर्मकी जड़ें खोखली कर रहा हूँ और अपने दुराग्रही प्रचार द्वारा भारतको ऐसी हानि पहुँचा रहा हूँ जिसकी पूर्ति होना असम्भव है। मालूम होता है कि वे हिंसाको अपना धर्म मान बैठे हैं। यदि मैं उनके सामने पूर्ण अहिंसाकी बात करता हूँ तो उनकी भावनाओंको ठेस लगती है और वे धड़ाधड़ 'महाभारत' और 'कुरान' के वचन पेश करने लगते हैं कि देखिए इनमें हिंसाकी प्रशंसा की गई है और उसकी अनुमति भी दी गई है। 'महाभारत' के सम्बन्धमें तो मैं बिना किसी संकोचके अपनी राय जाहिर कर सकता हूँ; लेकिन मैं समझता हूँ, परम धार्मिक मुसलमान भाई भी इस बातको अस्वीकार नहीं करेंगे कि हजरत पैगम्बरके सन्देशको समझ लेनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त है। मैं साहसके साथ कहता हूँ कि हिंसा किसी भी सम्प्रदायके मूल सिद्धान्तोंमें नहीं आती। बल्कि अधिकांश धर्मोंमें अधिकांश अवसरोंपर अहिंसाका पालन ही कर्त्तव्य माना गया है और हिंसाको तो किसी-किसी परिस्थितिमें ही जायज कहा गया है। लेकिन मैंने तो भारतवर्षके सामने अहिंसाके आत्यंतिक रूपको रखा ही नहीं है। कांग्रेसके मंचसे जिस अहिंसाका प्रचार मैं करता हूँ वह तो बतौर एक व्यवहार-नियमके है। लेकिन व्यवहार-नियमपर भी तो मन, वचन और कायासे दृढ़ रहनेकी आवश्यकता है। यदि मैं इस बातको मानता हूँ कि प्रामाणिकता सर्वश्रेष्ठ व्यवहार-नियम है, तो जबतक मैं ऐसा मानता हूँ तबतक मेरा मन, वचन और कायासे प्रामाणिक रहना जरूरी ही है, अन्यथा मैं पाखण्डी कहलाऊँगा। अहिंसा व्यवहार-नियम है, अतएव जब वह असफल या बेकार सिद्ध हो जाये तब यथासमय सूचना देकर उसका त्याग किया जा सकता है। लेकिन यह तो एक साधारण नीति-नियम है कि जबतक हम एक व्यवहार-नियमको मान रहे हैं

तबतक हमें उसके अनुसार सच्चे दिलसे चलते रहना चाहिए। एक निश्चित मार्गसे जाना तो साधारण व्यवहार-नियम हुआ। पर जिस सिपाहीके कदम लड़खड़ाते हैं वह तो तुरन्त ही निकाल दिये जानेके योग्य है। इसलिए जब लोग मुझसे अहिंसाके सम्बन्धमें संदिग्ध चित्तसे बातचीत करते हैं या अहिंसा शब्दका उच्चारण करते ही घबराने लगते हैं, तब मैं दुविधामें पड़ जाता हूँ। यदि उनका यह विश्वास है कि अहिंसासे हमारा काम नहीं निकल सकता तो उन्हें उसका त्याग कर देना चाहिए; यह नहीं कि हृदयमें उसके प्रति विरोध-भाव होते हुए वे उसकी उपयोगिताके कायल होनेका दावा करें। मान लीजिए, मैं हिंसामें — शस्त्र-प्रयोगमें — यहाँतक कि उसके समयानुकूल होनेमें भी विश्वास न रखते हुए, एक हिंसक दलमें शामिल होकर तोपके सामने खड़ा हो जाता हूँ, मगर मेरे दिलमें धुकधुकी लगी हुई है, तो यह कितनी घातक बात होगी? यदि मैं कहूँ कि मुझमें एक मक्खीको मारनेकी शक्ति है तो पाठक इस बातको मान लेंगे लेकिन मैं तो मक्खी तकके मारनेका कायल नहीं हूँ। अब फर्ज कीजिए, मैं मक्खी-मार दलमें उसको समयोपयोगी समझकर शामिल हो गया, तो क्या धावेमें शामिल होनेकी अनुमति मिलनेके पहले मुझसे यह आशा न की जायेगी कि जबतक मैं उस मक्खी मारनेवाली सेनामें शामिल हूँ तबतक विनाशकी तमाम उपलब्ध शस्त्र-सामग्रीका उपयोग करूँगा? यदि वे लोग जो कांग्रेस और खिलाफत समितियोंमें हैं, इस साधारण सत्य-सिद्धान्तको समझ जायें तो हम निश्चयपूर्वक या तो इसी वर्षके अन्दर संघर्षमें विजय प्राप्त कर लेंगे या अहिंसासे हमारा जी इतना ऊब उठेगा कि हम उसका परित्याग कर देंगे और किसी दूसरे कार्यक्रमकी योजना बनायेंगे।

मेरा खयाल है कि स्वामी श्रद्धानन्दजीकी, उनके उस प्रस्तावके लिए जो वे उपस्थित करना चाहते थे, व्यर्थ ही टीका-टिप्पणी की गई है। उनकी दलील बिलकुल उचित थी। उनकी धारणा है कि हम वास्तवमें व्यवहार-नियमके तौरपर भी सामूहिक रूपसे अहिंसाको नहीं मानते। अतएव हम अहिंसाके कार्यक्रमको हरगिज पूरा नहीं उतार सकते। इसलिए उनका कहना था कि चलो परिषदोंमें ही चलें और वहाँसे जो भी टुकड़े मिल जायें वहीं ले लें। वे उन लोगोंकी स्थितिकी अयथार्थता बताना चाहते थे जो अहिंसाको केवल जबानसे मानते हैं, पर वास्तवमें जो अन्तिम छुटकारेके लिए हिंसा-काण्डकी आशा लगाये बैठे हैं। मैं जोर देकर कहता हूँ कि यदि कांग्रेसवादी इस व्यवहार-नियमको पूरी तरह नहीं मानते तो अपनेको उसका अनुयायी बताकर वे देशको हानि पहुँचा रहे हैं। यदि भावी सरकारकी नींव हिंसापर रखी जानेवाली हो तो विधान सभाओंके पक्षपाती निस्सन्देह सर्वाधिक बुद्धिमान हैं; क्योंकि इन परिषदोंकी मार्फत उन्हीं साधनों और तजवीजोंसे जिनके द्वारा हमारे वर्तमान शासक हमपर राज्य कर रहे हैं, विधायकगण उनसे अधिकार छीन लेनेकी आशा करते हैं। मुझे इस बातमें कोई शक नहीं कि जो लोग अपने दिलोंमें हिंसाके भावोंका पोषण करते रहते हैं, वे देखेंगे कि अहिंसाके सम्बन्धमें कोरी बातें बनानेसे कोई लाभ नहीं हो सकता। इसलिए मैं अपनी पूरी शक्तिके साथ आग्रह करता हूँ कि जो लोग अहिंसाके कायल नहीं हैं उन्हें कांग्रेस और असहयोग दोनोंसे अपना नाता तोड़

लेना चाहिए और परिषदोंके लिए उम्मीदवार बन जाना चाहिए, अथवा वकीलोंको फिरसे अदालतोंमें और विद्यार्थियोंको सरकारी कालेज-स्कूलोंमें जाने लगना चाहिए। इस बातके बारेमें कोई जरा भी सन्देह न करे कि 'अहिंसा'के द्वारा जिस स्वराज्यकी स्थापना होगी वह उस स्वराज्यसे अवश्य ही भिन्न होगा जो सशस्त्र बलवेके द्वारा स्थापित किया जायेगा। स्वराज्य हो जानेपर भी पुलिस और दण्ड तो रहेंगे ही। पर उस समय न तो सरकार ही और न लोग ही ऐसे पाशविक अत्याचार कर पायेंगे जैसे कि हम आज अपनी आँखोंसे देख रहे हैं। जो लोग, फिर वे चाहे हिन्दू कहलाते हों चाहे मुसलमान, अहिंसाको व्यवहार-नियमके तौरपर पूरी तरह नहीं मानते हैं उन्हें असहयोग और अहिंसा दोनोंको छोड़ देना चाहिए।

जहाँतक मेरा सवाल है, मुझे भरोसा है कि न तो 'कुरान'में और न 'महाभारत'में ही कहीं हिंसा करनेकी अनुमति दी गई है या उसकी विजयको विजय माना गया है। यद्यपि कुदरतमें हमको काफी आकर्षण दिखाई देता है तथापि वह आकर्षणके ही सहारे टिकी हुई है। कुदरतका काम पारस्परिक प्रेमकी ही बदौलत चलता है। मनुष्य संहारके द्वारा अपना निर्वाह नहीं करते। आत्मप्रेम औरोंके प्रति प्रेमभावके लिए विवश करता है। राष्ट्रोंमें एकता इसलिए होती है कि राष्ट्रोंके अंगभूत निवासीगण परस्पर आदर-भाव रखते हैं। किसी-न-किसी दिन हमें अपना राष्ट्रीय न्याय सारे विश्वतक व्याप्त करना पड़ेगा, जैसा कि हमने अपने कौटुम्बिक न्यायको राष्ट्रके — एक बड़े कुटुम्बके निर्माणमें व्याप्त किया है। ईश्वरका यह आदेश है कि भारतको ऐसा ही होना चाहिए; क्योंकि जहाँतक युक्ति और तर्ककी पहुँच हो सकती है, भारत सशस्त्र बगावतके द्वारा पुश्तोंतक आजाद नहीं हो सकता। भारत तो सिर्फ राष्ट्रीय हिंसासे दूर रहकर ही आजाद हो सकता है। भारत अब ऐसे शासनसे थक गया है जो हिंसा-काण्डपर आधारित है। मेरे नजदीक तो भारतके मैदानी इलाकोंमें रहनेवालोंका यही सन्देश है। वे यह नहीं जानते कि संगठित रूपसे सशस्त्र युद्ध कैसा होता है और उन्हें आजाद तो होना ही है; क्योंकि वे आजादी चाहते हैं। उन्हें यह अच्छी तरह मालूम हो गया है कि हिंसा-काण्डके द्वारा प्राप्त सत्ताका फल यही होगा कि हम और अधिक पीसे जायेंगे।

कुछ भी हो अहिंसाके धर्मकी नहीं, व्यवहार-नियमकी उत्पत्ति तो इसी विचारधारासे हुई है। और जिस प्रकार कोई मुसलमान या हिन्दू हिंसामें विश्वास रखता हुआ भी अपने परिवारके लिए अहिंसा-धर्मका ही व्यवहार करता है उसी प्रकार उन दोनोंसे यह कहा जा रहा है कि अहिंसाके इस व्यवहार-नियमको आप लोग अपने पारस्परिक व्यवहारमें तथा भिन्न-भिन्न जातियों (जिनमें अंग्रेज भाई भी शामिल हों) और श्रेणियोंके प्रति व्यवहारमें अपनाइए। जो लोग इस व्यवहार-नियमके कायल न हों और जो उसके अनुसार पूरी तौरसे आचरण न करना चाहते हों उनका इस आन्दोलनके अन्दर रहना इसकी गतिको कुण्ठित करना है।

प्रान्तीय कमेटियोंको सलाह

इससे यह स्पष्ट है कि मैं प्रान्तीय संगठनोंसे क्या चाहता हूँ। फिलहाल उन्हें जहाँतक मुमकिन हो सरकारके कानूनोंको भंग नहीं करना चाहिए। जबतक वे अपने

हृदयको टटोल न लें तबतक उन्हें कोई कदम आगे नहीं बढ़ाना चाहिए, बल्कि अपने यहाँ पूर्ण शान्तिमय वातावरण तैयार करना चाहिए। क्रोधके आवेशमें जो लोग जेल गये हैं उनसे हमें कोई लाभ नहीं हुआ। मैं मुसलमानोंके इस विचारसे, जो हिन्दुओंका भी विचार है कि महज जेल जानेके ही लिए जेल नहीं जाना चाहिए, सहमत हूँ। जेलोंमें जाना तो तभी उपयोगी हो सकता है जब धर्म या देशके लिए वहाँ जाया जाये और जब वही लोग जायें जो खादी पहनते हों और जिनके दिलसे हिंसा और क्रोधका भाव निकल गया हो। यदि प्रान्तोंमें ऐसे स्त्री-पुरुष न हों तो उन्हें सविनय अवज्ञा कदापि प्रारम्भ नहीं करनी चाहिए।

रचनात्मक कार्यक्रम

रचनात्मक कार्यक्रमकी आयोजना इसीलिए की गई है। इससे हमारा चित्त स्थिर और शान्त होगा, हमारी संगठन-शक्ति जाग्रत होगी, हम परिश्रमी और उद्योगी बनेंगे, हम स्वराज्यके योग्य होंगे, और हममें गम्भीरता आ जायेगी। सम्भव है कि लोग हमें धिक्कारें, हमपर हँसे, हमें खरी-खोटी सुनायें, मारें-पीटें और बकें-झकें तो भी हमें इन सब बातोंको अवश्य सहन करना चाहिए, क्योंकि हमने अहिंसाकी प्रतिज्ञा लेनेके उपरान्त भी अपने हृदयमें हिंसा-भावको कायम रखा। मुझे यह बात साफ-साफ कह देनी चाहिए कि जबतक हम जान-बूझकर अपनी त्रुटियोंको नहीं सुधारेंगे, अहिंसा-वृत्तिका विकास नहीं करेंगे और खादी तैयार न करेंगे तबतक हम न तो खिलाफतकी कारगर सेवा कर सकते हैं, न पंजाबके अन्यायोंका परिमार्जन करा सकते हैं और न स्वराज्य ही प्राप्त कर सकते हैं। यदि मैं अपने साथियों तथा सर्वसाधारणको इस बातका निश्चय न दिला सकूँ कि इस रचनात्मक कार्यक्रमके अनुसार जोर-शोरसे काम करनेकी अत्यन्त और तुरन्त आवश्यकता है तो मेरा नेतृत्व बिलकुल बेकार है।

हमको यह देखना चाहिए कि हमें सारे भारतसे १ करोड़ ऐसे लोग मिल सकते हैं या नहीं, जो इस बातको मानते हों कि हमें शान्तिमय अर्थात् अहिंसात्मक और वैध या दूसरे शब्दोंमें सत्यताके साधनोंके द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना है।

(हमें स्वदेशी-प्रचारके लिए रुपया अवश्य एकत्र करना होगा और हमें यह जानना होगा कि भारतमें ऐसे कितने लोग हैं जो सचाईके साथ तिलक स्वराज्य-कोषमें अपने पिछले सालकी आमदनीमें से एक सैकड़ा रकम देनेके लिए तैयार हैं। अखिल भारतीय कांग्रेस कांग्रेसियों तथा उनके समर्थकोंसे चन्देकी उम्मीद रखती है।

हमें पानीकी तरह रुपया बहाकर चरखेका प्रचार घर-घरमें करना चाहिए, तथा खादी तैयार करनी चाहिए और जहाँ-जहाँ उसकी जरूरत हो तहाँ-तहाँ उसे भिजवाना चाहिए।)

हम अपने 'अछूत' भाइयोंकी उपेक्षा तो वास्तवमें बहुत समयसे कर रहे हैं। वे कितने वर्षोंसे हमारी गुलामी करते चले आ रहे हैं। अब हमें उनकी सेवा करनी होगी।

शराबखानोंपर धरना देनेसे कुछ लाभ जरूर हुआ है; पर वह ठोस नहीं माना जा सकता। जबतक हमारा प्रवेश नशेबाजोंके घरोंमें नहीं हो जाता तबतक

हम कोई वास्तविक प्रगति नहीं कर पायेंगे। हमें यह जानना होगा कि वह शराब पीता क्यों है? हम शराबकी जगह दूसरी कौनसी वस्तु उसे दे सकते हैं? इसके सिवा हमें भारतके तमाम शराब पीनेवालोंकी गणना करनी होगी।

समाज-सेवा विभागको लोगोंने बड़ी हेय दृष्टिसे देखा है। यदि असहयोग आन्दोलनका कोई कुत्सित उद्देश्य नहीं है तो इस विभागको एक कामकी चीज मानना चाहिए। हम तकलीफ और मुसीबतके मौकेपर प्रत्येक — शत्रु और मित्र दोनों — की समान भावसे सेवा करना चाहते हैं। इसके द्वारा हम राजनैतिक अलगाव और कार्य-भेदके रहते हुए भी परस्पर मीठा सम्बन्ध रख पायेंगे।

लोग हँसते हैं

समाज-सेवा तथा शराबखोरी छुड़ानेके कार्यको स्वराज्य-युद्धका अंग बतानेपर लोग हँसा करते हैं। इस प्रकार उनके हँसनेसे यह दुखद सत्य प्रमाणित होता है कि स्वराज्यकी आवश्यक बातोंके सम्बन्धमें बहुत ज्यादा अज्ञान फैला हुआ है। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि मानवी स्वभाव और मानवी समाजके सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक विभागोंके बीच लोहेकी ऐसी अभेद्य दीवारें नहीं हैं कि जिसमें से पानीकी एक बूँद भी इधरसे उधर न जा सके। एककी दूसरेपर क्रिया-प्रतिक्रिया होती रहती है। इसके अलावा हिन्दू-मुसलमानोंकी एक बहुत बड़ी संख्या इस युद्धको धार्मिक समझकर इसमें शामिल हुई है। जनता इसमें इसीलिए शरीक हुई है कि वह खिलाफत और गायकी रक्षा करना चाहती है। मुसलमानोंको खिलाफतकी सहायताकी आशासे वंचित कर दीजिए, बस वे कांग्रेसके पास भी नहीं फटकेंगे। हिन्दुओंसे कहिए कि आप कांग्रेस-में रहकर गोरक्षा नहीं कर सकते — एक भी हिन्दू उसमें न टिकेगा। नैतिक सुधारों-पर तथा समाज-सेवापर हँसना मानो स्वराज्य, खिलाफत और पंजाबके मामलों-पर हँसना है।

और तो और पाठशालाओंके संगठनपर भी लोग हँसे बिना न रहे। आइए, जरा सोचें, इसका मतलब क्या है? हमने सरकारी विद्यालयोंकी शान तो मिट्टीमें मिला दी है। लड़कोंकी पढ़ाईके प्रति उदासीन रहकर धरना देना — १९२० में तो कदाचित् आवश्यक था पर अब सरकारी विद्यालयोंपर धरना देना अथवा राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाओंकी उपेक्षा करना अपराध है। अब तो हम उसी अवस्थामें अधिक लड़के-लड़कियोंको अपनी ओर खींच सकते हैं जब हमारे वर्तमान राष्ट्रीय विद्यालय बेहतर पायेपर हों। राष्ट्रीय स्कूलोंमें आ जानेपर विद्यार्थीगण एक ऐसी संस्थामें शामिल होनेका लाभ उठा सकते हैं जहाँ वे स्वतन्त्रताके वायुमण्डलमें साँस ले सकते हैं और जहाँ उन्हें सन्देहकी दृष्टिसे नहीं देखा जाता। परन्तु इसके साथ वहाँ धुनने, सूत कातने और बुननेके वैज्ञानिक प्रशिक्षण तथा देशकी आवश्यकताओंके अनुकूल बौद्धिक शिक्षाकी भी व्यवस्था होनी चाहिए। हम अपने प्रयोगमें सफलता प्राप्त करके यह दिखा सकेंगे कि राष्ट्रीय विद्यालयोंमें अधिक अच्छी शिक्षा दी जाती है।

और पंचायतोंको भी लोगोंने नहीं छोड़ा। आलोचकगण शायद इस बातको जानते ही नहीं थे कि भारतके कितने ही भागोंमें सर्वसाधारणने सरकारी अदालतोंमें

जाना छोड़ दिया है। यदि हम प्रामाणिक पंचायतोंकी स्थापना न करेंगे तो लोग अवश्य ही फिरसे उन्हीं सरकारी अदालतोंकी शरण लेंगे।

राजनैतिक परिणाम

इनमें से कोई बात ऐसी नहीं है जिसका राजनैतिक परिणाम बहुत व्यापक न हो। खादीके पर्याप्त मात्रामें उत्पादन और उसका व्यापक उपयोग होनेसे एक तो विदेशी कपड़ेका बहिष्कार सदाके लिए हो जायेगा और दूसरे ६० करोड़ रुपये हर साल गरीब लोगोंमें अपने-आप बँट जाया करेंगे। शराब और अफीमके दुर्व्यसनोंके लुप्त हो जानेसे हर साल लोगोंके १७ करोड़ रुपये बचेंगे और सरकारकी इतनी ही आमदनी कम हो जायेगी। अछूतोंके लिए रचनात्मक कार्य करनेसे कांग्रेसको छः करोड़ लोगोंके सहयोगका लाभ होगा और कांग्रेससे उनका चिर सम्बन्ध बना रहेगा। यदि समाज-सेवा-संघकी स्थापना हो गई और उसका काम ठीक-ठीक चला तो उसकी बदौलत सहयोगियों (चाहे भारतीय हों या अंग्रेज) और असहयोगियोंकी अनबन दूर हो जायेगी। अतएव इस पूरे रचनात्मक कार्यक्रमके अनुसार काम करना मानो अपना अभीष्ट प्राप्त कर लेना है। इसमें असफल होना प्रभावी सविनय अवज्ञाकी सारी सम्भावनाको दूर हटा देना है।

खिलाफतके बारेमें

कुछ मुसलमान दोस्तोंने कहा है, "आपका कार्यक्रम स्वराज्यके लिए तो ठीक है, पर यह इतना धीमा है कि खिलाफतकी रक्षाके लिए लाभप्रद नहीं है। खिलाफतका सवाल कुछ ही महीनोंमें तय हो जानेको है, इसलिए जो-कुछ भी किया जा सकता हो अभी किया जाना चाहिए।" आइए हम इस सवालपर विचार करें। ईश्वरकी कृपासे खिलाफतका ध्येय गाजी मुस्तफा कमाल पाशाके हाथोंमें सुरक्षित है। उन्होंने खिलाफतकी प्रतिष्ठा जिस तरह पुनःस्थापित की है, उस तरह आजका कोई भी मुसलमान नहीं कर पाया है। भारतने अपने धनसे जो थोड़ी-बहुत सहायता की है उसका कुछ महत्त्व तो है ही; पर अधिक सहायता तो उसने हिन्दू-मुस्लिम एकता द्वारा और सरकारको साफ-साफ शब्दोंमें यह बताकर की है कि यदि इंग्लैंडने अपनी टर्की-विरोधी नीति जारी रखी और भारतीय साधनोंको टर्कीके खिलाफ इस्तेमाल किया, तो यह देश सरकारसे कोई सम्बन्ध नहीं रखेगा और पूर्ण स्वतन्त्रताकी घोषणा कर देगा। इस घोषणामें जितना बल होगा, इस्लामकी प्रतिष्ठा और मुस्तफा कमाल पाशाकी शक्ति भी उतनी ही बढ़ेगी। कुछ लोगोंका यह खयाल है कि कुछ हजार आदमियों-के, चाहे वे किसी भी योग्यताके क्यों न हों, जेल जानेसे सरकारको जो अस्थायी परेशानी होगी सिर्फ उसीसे वह हमारी इच्छाओंके आगे झुक जायेगी। हमें सरकारकी ताकत कम करके नहीं आँकनी चाहिए। मुझे यकीन है कि सरकारमें अभीतक इतनी शक्ति है कि वह हिंसाकी पूरी भावनाको कुचल सकती है। और किसी भी तरह जेल चले जाना, हिंसाके सिवा और कुछ नहीं है। पवित्रात्माओं और ईश्वरसे डरनेवाले लोगोंके कष्ट-सहनका ही प्रभाव पड़ता है, भेड़िया-धसानका नहीं। भारत जितना पवित्र होता जायेगा, उसकी शक्ति उतनी ही बढ़ती जायेगी। जो शरीरसे दुर्बल

हैं, उनका एकमात्र हथियार उनकी पवित्रता है। शरीरसे शक्तिशाली लोग, उद्दण्डताके जोशमें आकर प्रायः अपने 'कठोर तत्त्वों'को ही गतिमान बना देते हैं और मानो सर्वशक्तिमान् प्रभुके कार्यको हथिया लेना चाहते हैं। परन्तु उस 'कठोर तत्त्व'का वास्ता जब ऐसे तत्त्वसे पड़ता है जो उसके जैसा नहीं, बल्कि उससे बिलकुल विपरीत है, तो वह हवामें घूँसा मारने जैसा हो जाता है। एक ठोस पदार्थ केवल एक अन्य ठोस पदार्थपर ही हमला कर सकता है और उसके विरुद्ध बढ़ सकता है। आप हवामें किले नहीं बना सकते। इसलिए जो मुसलमान अधीर हैं उन्हें यह वस्तुस्थिति, जो बिलकुल साफ है, समझ लेनी चाहिए कि भीड़का हलका और असंगठित तूफान चाहे जेल जाने, चाहे इमारतोंको जलाने, चाहे शोर-भरे प्रदर्शन करनेके रूपमें प्रकट हो, वह उन लोगोंके 'कठोर तत्त्व'की संगठित उद्दण्डताका मुकाबला नहीं कर सकेगा जो अपनेको 'संसारके सर्वाधिक दृढ़ व्रती' राष्ट्र समझते हैं। इस भयंकर उद्दण्डताका मुकाबला तो केवल पवित्र और विनीत व्यक्तियोंकी पूर्ण विनम्रता ही कर सकती है। ईश्वर निःसहायकी सहायता करता है; परन्तु जिन्हें यह विश्वास है कि वे स्वयं कुछ कर सकते हैं उनकी नहीं करता। 'कुरान'के हरएक पृष्ठमें मुझ-जैसे गैर-मुस्लिमको सबसे महान् पाठ यही मिलता है। 'कुरान' का हर सफा करुणामय और दयालु भगवान्के नामसे शुरू होता है। इसलिए हम शरीरसे दुर्बल भले ही हों, पर हमें आत्मासे शक्तिशाली होना चाहिए।

यदि मुसलमानोंका अहिंसाकी नीतिमें विश्वास है तो उन्हें उसे उचित मौका देना चाहिए। लेकिन यदि उनके दिलोंमें गुस्सा अर्थात् हिंसा भरी हुई है, तो वे उसे आजमा ही नहीं सकेंगे।

जैसी स्थिति है उसमें हम गाली-गलौज, धमकी, बल-प्रदर्शन और हिंसात्मक धरनेसे जितने लोगोंको अपने साथ सहयोग करनेके लिए मजबूर कर पायेंगे, उनसे कहीं अधिकको अपने खिलाफ कर लेंगे। और जब हम खुद जोर-जबरदस्तीसे सरकारके साथ सहयोग करनेको तैयार नहीं हैं तो उसी तरह दूसरोंसे सहयोग प्राप्त करनेका साहस हम कैसे कर सकते हैं? जिस नियमके पालनकी हम दूसरोंसे आशा रखते हैं, क्या उसका पालन हमें खुद नहीं करना चाहिए?

सेवरकी सन्धिमें[1] यदि हमारी इच्छानुसार संशोधन नहीं किया जाता है तो मामला इससे खत्म नहीं हो जाता। भारतका बल तो तभी प्रमाणित होगा जब वह अपनी माँगसे रत्ती-भर पीछे न हटनेके संकल्पपर अटल रहे। सब-कुछ हो जानेपर भी हो सकता है, मुस्तफा कमाल जजीरत-उल-अरबके[2] निपटारेपर जोर न दें। जबतक मुसलमानोंको वह अक्षुण्णरूपमें वापस न मिल जाये, तबतक हमें संघर्ष जारी रखना चाहिए। यदि मुसलमान यह सोचते हैं कि वे हथियारोंके बलपर अपना मकसद हासिल कर सकते हैं, तो उन्हें इस अहिंसा सम्बन्धी इकरारसे बेशक दामन छुड़ा लेना

१. इस सन्धि द्वारा टर्की साम्राज्यका विभाजन हुआ था।

२. इसके शाब्दिक अर्थ हैं 'अरबका टापू'। मुसलमान धर्माधिकारियोंकी व्याख्याके अनुसार इसमें सीरिया, फिलस्तीन, मेसोपोटामिया तथा अरबका प्रायद्वीप शामिल हैं।

चाहिए। लेकिन यदि वे समझते हैं कि यह सम्भव नहीं है तो उन्हें उसका पालन मन, वचन और कर्मसे करते रहना चाहिए। और तब वे देखेंगे कि अपने दुःख-मोचनका और खिलाफतके अन्यायके प्रतिकारका इससे अधिक अचूक और शीघ्र फलदायी उपाय दूसरा नहीं है।

उत्तेजनाकी जरूरत

कुछ मित्रोंका तर्क है कि संघर्ष जारी रखनेके लिए लोगोंको थोड़ी-बहुत उत्तेजना आवश्यक है। किसी भी व्यक्ति या राष्ट्रको केवल उत्तेजनाओंपर जीवित नहीं रखा जा सकता। अभी कलतक उत्तेजना-ही-उत्तेजना थी। और अब उस उफानके बैठ जानेका समय आ पहुँचा है। अगर आक्रामक कार्यवाहियाँ बन्द हो जानेके फलस्वरूप अवसाद उत्पन्न हो जाता है और लोग हमारा साथ छोड़ने लगते हैं तो यह बात हमारे ध्येयमें बाधक नहीं बनती; इतना ही नहीं, बल्कि उससे उसे सहायता ही मिलेगी। तब हमारे सिर किसी चौरीचौरा-जैसे काण्डकी जिम्मेदारी नहीं आयेगी। तब हम साबित कदमोंसे आगे बढ़ सकेंगे और पीछे मुड़कर देखनेका खतरा ही नहीं रहेगा। परन्तु यदि आवेशहीनताके बावजूद हम प्रगति करते रहें और लोग हमारा साथ देते रहें तो वह इस बातका पक्का प्रमाण होगा कि लोग अहिंसाके सन्देशको समझ गये ह, और वे रचनात्मक कार्य करनेकी उतनी ही क्षमता रखते हैं जितनी उन्होंने ध्वंसात्मक कार्य करनेमें दिखाई है। परिणाम चाहे कुछ भी हो, इस उत्तेजनाका शमन हर हालतमें आवश्यक है।

कलाबाजियाँ

बारडोलीके प्रस्तावोंकी आलोचना करते हुए श्री केलकरने 'मराठा'में जो लेख लिखा है, मैंने उसे ध्यानसे पढ़ा है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे प्रति उन्होंने शिष्टता और शालीनता बरती है। काश, मैं उन्हें और उनकी तरह सोचनेवाले बहुतसे लोगोंको यह समझा सकता कि जिसे वे कलाबाजी कहते हैं वह एक अनिवार्य कार्यवाही थी। पिछली बातपर डटे रहना एक वांछनीय गुण जरूर है, परन्तु यदि तथ्योंकी ओरसे आँखें मूंद ली जायें तो वही गुण अभिशाप बन जाता है। मैंने फौजोंकी मोर्चेबन्दियोंको घन्टे-घन्टेपर बदलते देखा है। जुलू विद्रोहके दिनोंमें एक बार हम सब सोये पड़े थे। अगले दिनके लिए हमें निश्चित आदेश मिल चुके थे। लेकिन आधी रातको अचानक हमें जगा दिया गया और यह हुक्म मिला कि हम अनाजके बोरोंके पीछे, जो दीवारके रूपमें चिने हुए थे, चले जायें और उनकी आड़ ले लें, क्योंकि खबर यह मिली थी कि जिस पहाड़ीपर हम डेरा डाले पड़े हैं, दुश्मन उसपर दबे पाँव चढ़ता चला आ रहा है। एक घन्टे बाद पता चला कि वह डर झूठा था और हमें अपने तम्बुओंमें लौट जानेकी इजाजत मिल गई। ये सभी 'कलाबाजियाँ' आवश्यक परिवर्तन थे। निदान बदलनेसे उपचार भी बदल जाता है। एक ही चिकित्सक एक दिन रोगको मलेरिया समझता है और कुनेनकी एक बड़ी मात्रा दे देता है; अगले दिन उसे वह मोतीझरा लगता है तो सब दवाएँ बन्द करके वह मरीजकी सावधानीसे परिचर्या करने तथा खानेको कुछ भी न देनेका आदेश देता है; बादमें यदि उसे वह

क्षय प्रतीत हो तो वह जलवायु परिवर्तन और पौष्टिक भोजनकी सलाह देता है। आप उस चिकित्सकको सनकी कहिएगा या सतर्क और ईमानदार?

मुझे श्री केलकरके सुझावके अनुसार वम्बई परिषद्के[1] समय जो-कुछ करना चाहिए था, यदि मैं उसे कर गुजरता तो वह मेरी बुद्धिहीनता न सही मिथ्याचार और उदासीनता तो अवश्य ही कहलाती। वह यदि मूर्खता नहीं तो — नरमदलीय मित्रोंको जो-कुछ दिया जा चुका था, उससे ज्यादा देना मिथ्याचार होता, क्योंकि भारतीय आकाश मुझे तव स्वच्छ नीलवर्णका लग रहा था और ऐसा मालूम होता था कि वह वैसा ही रहेगा। मेरे निदानको गलत वताया जा सकता है, पर उसपर आधारित मेरे निर्णयको दोष नहीं दिया जा सकता। और सम्भवतः मैं उन माँगों-पर पर्दा भी नहीं डाल सकता था, खासकर वाइसरायकी कलकत्तेकी उस घोषणाके वावजूद जिसमें यह कहा गया था कि खिलाफत और पंजावके मामलोंमें कोई उम्मीद नहीं रखनी चाहिए और चूँकि सुधारोंको[2] अभी हाल ही में मंजूर किया गया है इसलिए उनमें वृद्धिकी कोई आशा नहीं की जानी चाहिए। यदि मैं यह न कहता कि हमारी माँगें सुनिश्चित और बिलकुल साफ हैं, तो वह वाइसराय और नरमदलीय मित्रोंके प्रति भी अन्याय होता। सामूहिक सविनय अवज्ञाको उस समय स्थगित करना एक कमजोरी होती। परन्तु जब चौरीचौराका क्षितिज अन्धकारमय दिखा तब मुझे रोगका दूसरा ही रूप दिखाई दिया। यदि अब मैं वहुत ही साफ शब्दोंमें यह घोषित न करता कि मरीजके इलाजमें आमूल परिवर्तन आवश्यक है, तो यह मेरी जड़ता होती। चौरीचौराके बाद सविनय अवज्ञाको स्थगित न करना एक अक्षम्य दुर्वलता ही होती। मैं पाठकको यह विश्वास दिलाता हूँ कि इस निर्णयका वारडोलीके तैयार न होनेसे कोई सम्बन्ध नहीं था। क्योंकि मेरे विचारमें वारडोली ताल्लुका, संघर्षकी पूरी-पूरी योग्यता रखता था। मैं यह वात 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन'के स्तम्भोंमें कई वार कह चुका हूँ कि मैं वारडोलीको संघर्षके लिए बिलकुल तैयार मानता हूँ।

असलियत यह है कि आलोचक सविनय अवज्ञाके गूढ़ार्थोंको समझ नहीं रहे हैं। उसके साथ 'सविनय'का जो जवरदस्त विशेषण लगा हुआ है, अनजाने ही वे उसकी उपेक्षा करने लगते हैं।

वारडोलीके निर्णयपर मैं जितना ही विचार करता हूँ और दिल्लीमें की गई वहसों और वातचीतोंको मन-ही-मन जितना दोहराता हूँ, उतना ही मुझे यह विश्वास होता जाता है कि वह निर्णय ठीक था और प्रान्तोंको फिलहाल सभी उग्र कार्रवाइयाँ रोक देनी चाहिए, चाहे इसके कारण हमें कमजोर ही क्यों न समझा जाये और हमें जनताकी वाहवाही और उसके समर्थनसे हाथ ही क्यों न धोने पड़ें।

ऐसी मूर्तिपूजा पाप है

यद्यपि मैं खुद ही मूर्तिपूजक हूँ, किन्तु जैसा कि मेरे मित्र अपने अनुभवसे जानते हैं, मैं मूर्तिपूजाका विरोधी भी हूँ। मूर्तिपूजाकी जड़ें मनुष्यके हृदयमें हैं, और

१. नेताओंकी परिषद्, १४ और १५ जनवरी, १९२२।
२. मॉन्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधार।

हम शायद सबसे अधिक अपने शरीरको ही पूजते हैं। पर यहाँ, इस टिप्पणीमें, मैं उस मूर्तिपूजापर विचार नहीं कर रहा हूँ जो उचित और शास्त्र-सम्मत है। मैं तो यह सब केवल उस पापमय कृत्यकी ओर ध्यान आकर्षित करनेके लिए लिख रहा हूँ जो दक्षिणमें कहीं-कहीं शुरू हो गया लगता है—मेरे चित्रको धार्मिक रथ-यात्राओंमें निकाला गया है। श्री एन्ड्रयूजने तार भेजकर मेरा ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचा है कि यदि यह व्यापार चलता रहा तो इससे दंगा तक हो सकता है, क्योंकि सभी इस बातको सहन नहीं कर सकते कि धर्म सम्बन्धी उत्सवोंमें ऐतिहासिक व्यक्तियों या जीवित पुरुषोंके चित्र रथोंपर निकाले जायें। प्रचलित मूर्तियोंकी जगह मेरे चित्र रखना, मेरी दृष्टिमें घोर अपराध है। इससे इन अन्धे श्रद्धालु लोगोंको तो कोई लाभ होगा नहीं, पर यह उन भक्तोंके प्रति, जो अपनी आराध्य मूर्तियोंका अपमान सहन नहीं कर सकते, हिंसा होगी। अति प्राचीन कालकी दिव्यात्माओंकी मूर्तियोंको पूजनेके लिए लोगोंके पास काफी कारण होता है। पर यदि किसीसे जीवित व्यक्तियोंके प्रति अपनी भक्ति उस रूपमें प्रकट करनेके लिए कहा जाये, जिस तरह कि मद्रास अहातेमें कहीं-कहीं किया गया है तो उसे यह बात बहुत ही अटपटी लगेगी। यदि हमारा लक्ष्य लोकतन्त्रीय भावनाकी यथार्थ अभिव्यक्ति है, तो इस तरहकी अन्धी या आत्यंतिक वीर-पूजाके लिए उसमें कोई स्थान नहीं है। इसलिए मेरा प्रत्येक कांग्रेस कार्यकर्त्तासे यह अनुरोध है कि वह जब भी इस तरहकी अन्धभक्ति देखे, उसको तरह न दे और सभी उचित उपायोंसे लोगोंको उससे विरत करे।

बेकारकी धमकी

श्रीमती सरोजिनी नायडूका[1] यह विशेष सौभाग्य प्रतीत होता है कि उनपर मुकदमा चलानेकी धमकी दी गई है या कमसे-कम अपने वक्तव्योंका प्रतिवाद करनेको कहा गया है। स्मरण रखना चाहिए कि मार्शल लॉके दिनोंमें किये गये सरकारी कृत्योंके बारेमें उन्होंने जो आरोप लगाये थे, श्री मॉन्टेग्युने उन्हें माननेसे इनकार कर दिया था। उस चुनौतीको स्वीकार करते हुए श्रीमती नायडूने कांग्रेस जाँच-आयोगकी रिपोर्टसे विस्तृत उद्धरण दिये थे। यदि उनका कथन ठीक नहीं है, तो इसकी जिम्मेदारी कांग्रेस आयोगके सदस्योंपर है न कि उनपर। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि इंडिया ऑफिस पूर्ण रूपसे यह भी नहीं जानता कि उस रिपोर्टमें क्या-क्या लिखा है।

इस बार मद्रास सरकारने उनपर मुकदमा चलानेकी सचमुच धमकी दी है। मैं चाहता हूँ कि वह अपनी धमकी पूरी कर दिखाये। तब भारतको, अपनी पैरवी आप ही करनेवाली इस भारतीय कवयित्रीके वक्तव्यको सुननेका एक दुर्लभ अवसर मिलेगा। पर, कचहरीमें इस असहयोगी कवयित्रीको सुननेके लिए इतनी भीड़ उमड़ पड़ेगी कि वह मुकदमा या तो किसी खुले मैदानमें चलाना होगा (उसमें कोई हर्ज नहीं है) या फिर जेलके भीतर। पूरे हिन्दुस्तानमें कोई भी भवन या कमरा इतना बड़ा नहीं है जिसमें वह सारा जनसमूह, जो बरतानवी पिंजरेमें बन्द बुलबुले-हिन्दको एक नजर देखनेके लिए आतुर होगा, समा सके।

१. १८७९-१९४९; कवयित्री; १९२५ के कांग्रेस-अधिवेशनकी अध्यक्षा।

श्रीमती नायडूने अपने इन आरोपोंको बिना विलम्ब किये दोहरा दिया है। वीर केशव मेनन तथा अन्य बहुतसे लोगोंने आगे बढ़कर उनके वक्तव्यका समर्थन किया है। श्री टी० प्रकाशम्‌ने उस लड़केका चित्र छाप दिया है जिसके हाथ निर्दयतापूर्वक काट दिये गये थे। श्रीमती नायडूने सरकारको यह चुनौती दी है कि वह या तो उनपर मुकदमा चलाये, या उनसे माफी माँगे, या बिना किसी शर्तके उन आरोपोंकी जाँचके लिए एक निष्पक्ष गैर-सरकारी आयोग नियुक्त करे। भारतको मद्रासकी बहादुर सरकारके जवाबका इन्तजार है। मुझे इस बातपर आश्चर्य है कि लॉर्ड विलिंग्डनने उचित शालीनता नहीं दिखाई। उन्हें व्यक्तिगत रूपसे श्रीमती नायडूसे यह पूछना चाहिए था कि उन्होंने वे आरोप कहीं असावधानीमें तो नहीं लगाये हैं, और यदि ऐसा नहीं है तो क्या वे उन्हें सिद्ध करनेमें सरकारकी सहायता कर सकती हैं। क्या अंग्रेज अभिजातवर्ग क्रोधोन्मादमें अपनी परम्परागत उदारताको भी भुला बैठा है? भारतकी इस अत्यन्त सम्मानित बेटीने जनताके पक्षमें आवाज उठानेका साहस दिखाया है, तो इसलिए क्या सरकारको उनका अपमान करना ही चाहिए? मैं चाहता हूँ कि लॉर्ड विलिंग्डन भी जनोचित क्षमायाचना करें और सो भी खूबसूरतीके साथ। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि सरकारने जो प्रतिष्ठा गँवाई है इस सौजन्यके फलस्वरूप उसमें से कुछ तो उसे अवश्य ही पुनः प्राप्त हो जायेगी। इससे संघर्षपर अच्छा या बुरा कोई असर नहीं पड़नेवाला है। सरकारकी यह शालीनता तपे तवेपर एक बूँद ही होगी।

राजपूतानाके भील

राजपूतानेके भील सीधे-सादे और बहादुर लोग हैं। उनकी कुछ शिकायतें हैं। मोतीलाल तेजावतके रूपमें उन्हें एक मित्र और सहायक मिल गया है। यह कहा जाता है कि वह उन्हें शराब, जुआ और मांस छोड़ने तथा नियमित और मेहनती जीवन बितानेकी प्रेरणा देता रहा है। वह उन्हें उनकी शिकायतोंको रफा करानेके बारेमें भी सलाह-मशविरा देता आया है। बस मुझे उसमें एक ही दोष दिखाई दिया है, वह यह कि वह जहाँ भी जाता है उसके साथ उसके अनुयायियोंका एक बड़ा दल रहता है। इससे रियासतोंमें घबराहट पैदा हो गई है। मोतीलालके बारेमें तरह-तरहकी बातें सुननेके बाद, मैंने श्री मणिलाल कोठारीसे छानबीन करनेको कहा। उन्होंने सम्बन्धित रियासतोंकी अनुमति और सहायतासे वैसा किया और भीलोंने उन्हें यह यकीन दिलाया है कि उनका इरादा किसी तरहकी शरारत करनेका नहीं है। वे मोतीलालसे भी मिले हैं। उसने श्री कोठारीको विश्वास दिलाया है कि उसके उद्देश्य शान्तिपूर्ण हैं। परन्तु दुर्भाग्यसे इस बीच यह खबर मिली है कि ईडर रियासतने भीलोंके खिलाफ कार्यवाही की है और उनमें से चारको मार डाला है। मेरे पास पूरा ब्योरा नहीं है और न मुझे यही मालूम है कि यह काम किसलिए किया गया है। मैं केवल यही आशा कर सकता हूँ कि भीलोंकी शिकायतोंको दूर करनेके लिए वे एक पंच न्यायालय नियुक्त कर दें और मोतीलाल, यदि पहाड़ियोंसे बाहर निकल कर आत्म-समर्पण कर दे, तो उसे माफ कर दिया जाये। रियासतों और सुधारकोंने भीलोंकी ओर

बहुत अरसेसे कोई ध्यान नहीं दिया है। यदि उनकी ओर सहायताका हाथ बढ़ाया जाये तो वे भारतके गौरव बन सकते हैं। उन्हें जरूरत सिर्फ इस बातकी है कि उनके घरोंमें चरखा हो और उनके बच्चोंके लिए ऐसे स्कूल हों जहाँ वे सीधी-सादी शिक्षा प्राप्त कर सकें। देशमें आज जो व्यापक जागृति आई है उसमें रियासतें और सुधारकगण किसी भी कौमकी उपेक्षा नहीं कर सकते।

आन्ध्रपर मुसीबत

एक संवाददाता लिखते हैं:[1]

जिस तरहके व्यवहारकी रिपोर्ट की गई है, उसपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं है। अधिकारियोंको यह एक बहुत नायाब मौका हाथ लगा है। और वे चाहते होंगे कि आन्ध्रके लोगोंकी हिम्मतको तोड़कर उन्हें हमेशाके लिए कुचलकर रख दिया जाये। इस समय मेरे पास बारडोली-जैसी कोई शक्ति नहीं है कि मैं लोगोंके सामने एक नमूना पेश कर सकता। पर मैं उनसे आग्रह यही करूँगा कि वे धैर्य रखें, क्रुद्ध न हों और भयभीत भी न हों। अन्यायीके विरुद्ध मनमें कोई दुर्भावना रखे बिना, उन्हें सभी अत्याचार सह लेने चाहिए। वह हमारी सम्पत्ति और देहपर अधिकार कर सकता है किन्तु हमसे हमारा संकल्प नहीं छीन सकता।

पीड़ित असम

'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें असमके दमनकी बहुत खबरें छप चुकी हैं। मेरे खयालमें असमने शायद सबसे अधिक कष्ट सहा है। वहाँ कोई भी उल्लेखनीय नेता बाहर नहीं बचा है। जो बचे हैं उन्हें असाधारण कठिनाइयोंमें काम करना पड़ रहा है। नीचे जो सजीव विवरण[2] दिया जा रहा है, उसपर टीका-टिप्पणीकी जरूरत नहीं है।

पाठकोंको [इसके साथ] १६ फरवरीके 'यंग इंडिया' का पृष्ठ १०५ फिरसे पढ़ जाना चाहिए। जो भी कार्यकर्त्ता बचे हुए हैं, उन्हें मेरी यही सलाह है कि फिलहाल सभी उग्र कार्यवाहियाँ रोक दी जायें। वे अपनी पूरी शक्तिसे रचनात्मक कार्यमें लग जायें। हमारे साथियोंमें यदि तनिक भी हिंसाकी भावना आ गई हो, तो उसे दूर करें। कांग्रेस-दफ्तर असमके सुन्दर पेड़ोंके नीचे लगाइए। यदि हम अपने प्रति सच्चे बने रहे, तो यह तूफान पलक मारते ही गुजर जायेगा।

अजमेरमें अन्धेर

पण्डित गौरीशंकर भार्गवने दिल्लीसे निम्नलिखित तार[3] भेजा है जो अपने आपमें स्पष्ट है:

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें वर्णनात्मक ढंगसे यह कहा गया था कि गुण्टूर जिलेमें, कर-आन्दोलन बन्द कर देनेपर भी स्वयंसेवकोंको गिरफ्तार किया गया और मारा-पीटा गया।

२. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें विभिन्न स्थानोंपर कांग्रेसके कार्यालयोंकी लूटपाट, उनको जला देनेका विवरण तथा स्वयंसेवकोंको मनमानी सजाएँ देनेके समाचार थे।

३. यहाँ केवल सम्बन्धित अंश ही दिया गया है।

स्थानीय अधिकारियोंने अजमेरकी खबरें बिलकुल दबा रखी हैं, स्थानीय नेताओंके नामसे जो भी तार आते-जाते हैं उन सबको वे सेंसर करते हैं।... जैसा कि स्वाभाविक था, शुरू-शुरूमें यहाँ हिंसात्मक भावना थी। परन्तु महात्माजीके अहिंसात्मक आन्दोलनकी बदौलत तथा स्थानीय नेताओंके प्रयाससे... समस्त जनताने बड़ीसे-बड़ी उत्तेजनाके समय भी भारी धैर्य और आत्मसंयमका परिचय दिया है। यदि चौरीचौरा-जैसी कुछ इक्का-दुक्का मिसालें मिलती हैं, तो देश-भरमें अहिंसाकी मिसालें भी बहुत अधिक हैं।... न्यायका पूर्ण अभाव दीखता है। अजमेरके बहुतसे प्रतिभाशाली नवयुवकोंको, फतवा बाँटनेपर, जेलमें ठूँस दिया गया है। लेकिन वही फतवा जब बीस संगठित स्वयंसेवकों द्वारा कचहरीके अन्दर सवारों और पुलिसके सिपाहियोंमें बाँटा गया तो वे गिरफ्तार नहीं किये गये।... यह है सरकारका कानून और इन्साफ! कुँवर चाँदकरण शारदाके मामलेमें वकील यह चाहते थे कि मुकदमा जेलकी बजाय खुली अदालतमें चलाया जाये। लेकिन कमिश्नरने वकीलोंसे कहा कि वे पहले पण्डित गौरीशंकर भार्गवसे यह आश्वासन ले लें कि पूर्ण शान्ति और व्यवस्था रहेगी; ...उन्होंने कमिश्नर या सरकारके साथ सहयोग करनेवाले वकीलोंको ऐसा कोई वचन देना स्वीकार नहीं किया। परन्तु ...बताया कि अहिंसा उनका मूल सिद्धान्त है, इसलिए शान्ति भंग होनेकी तनिक भी आशंका नहीं हो सकती। कुँवर चाँदकरण शारदाका मुकदमा इसके बाद ही खुली अदालतमें लाया गया।

...ये [खबरें] दिल्ली तारघरसे भेजी जा रही हैं...।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-३-१९२२

१९८. कांग्रेसकी बैठक

हालमें[1] दिल्लीमें अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी जो बैठक हुई वह कुछ बातोंमें कांग्रेसके अधिवेशनसे भी अधिक स्मरणीय रही। देशमें भीतर-ही-भीतर जाने-अनजाने हिंसाका इतना प्रबल प्रवाह बह रहा है कि मैं वास्तवमें यही प्रार्थना कर रहा था कि इस बार मेरी करारी हार हो जाये। मेरे साथ हमेशा बहुत ही थोड़े लोग रहे हैं। पाठक इस बातको नहीं जानते कि दक्षिण आफ्रिकामें जब मैंने लड़ाई छेड़ी, तब प्रायः सभी साथी मुझसे सहमत थे, पर बादमें ६४ और आगे चलकर तो केवल १६ सज्जन ही मेरे साथ रह गये। कुछ समय बीतनेपर फिरसे विशाल बहुमत मेरी ओर हो गया। उन दिनोंमें जब कि अल्पमत मेरी तरफ था वहाँ अच्छेसे-अच्छा और पुख्तासे-पुख्ता काम हुआ था।

सरकार अगर किसी बातसे डरती है तो इसी विशाल बहुमतसे जो मेरी ओर दिखाई देता है। पर वह शायद नहीं जानती कि मैं तो उससे भी अधिक इस बहुमतसे डरता हूँ। अन्धविश्वासी लोगोंके दलके-दल बिना सोचे-विचारे जहाँ मैं जाता हूँ वहाँ उमड़ पड़ते हैं। मैं तो इससे सचमुच तंग आ गया हूँ। यदि वे मेरे प्रति तिरस्कार और क्रोध प्रदर्शित करते तो उससे मुझे अपनी ठीक स्थितिका भान हो जाता और तब मुझे न हिमालय-जैसी भूल अथवा किसी दूसरी गलत-अन्दाजीको कबूल करनेकी आवश्यकता पड़ती, न पीछे हटना पड़ता, और न फिरसे नई व्यवस्था करनी पड़ती।

परन्तु होनहार कुछ और ही थी।

एक मित्रने मुझे सावधान किया, कहीं आप अपने 'सर्वाधिकारीपन' का दुरु-योग न कर बैठिएगा। पर वे नहीं जानते कि मैंने उस अधिकारका उपयोग आजतक नहीं किया; भले ही उसका कारण यही रहा हो कि उसके उपयोग करनेका बाकायदा मौका ही अबतक उपस्थित नहीं हुआ था। इस 'सर्वाधिकारीपन' का अवसर तो तभी आ सकता है जब सरकार कांग्रेसके सामान्य तंत्रको भी अपंग बना दे।

पर अपने 'सर्वाधिकारीपन' का दुरुपयोग करना तो दूर रहा, मुझे तो यहाँतक लगने लगा है कि कहीं मेरा ही 'दुरुपयोग' न किया जा रहा हो और मुझे उसकी खबर न हो। मैं अब इस बातसे इतना सशंकित रहने लगा हूँ जितना पहले कभी नहीं रहा। पर मेरी ढाल तो सिर्फ मेरी निर्लज्जता है। मैंने कांग्रेस कमेटीके सदस्योंको जता दिया है कि मेरा रोग तो असाध्य है। जब-जब लोगोंसे भूल होगी तब-तब उसे कबूल किये बिना मुझसे नहीं रहा जायेगा। मैं इस दुनियामें अगर किसी जालिमके आगे सिर झुकाता हूँ तो वह है 'मेरे अन्तस्तलकी शान्त सूक्ष्म आवाज'। और यद्यपि मेरा साथ देनेवालोंकी संख्या घटते-घटते न्यून हो जाये और मेरे अकेले पड़ जानेकी नौबत आ जाये तो भी मेरा विनम्र विश्वास है कि मुझमें उस समय भी खड़े रह सकनेका साहस है। मेरे लेखे सच्ची और सही स्थिति यही है।

१. २४-२५ फरवरी, १९२२ को।

आज मैं पहलेसे कहीं अधिक दुखी और शायद अधिक समझदार हूँ। मैं देखता हूँ कि हमारी अहिंसा सतही है। हमारे मनोंमें क्रोधकी आग सुलग रही है। सरकार अपने विवेकहीन कृत्यों द्वारा इस क्रोधाग्निमें मानो घी डाल रही है। प्रायः ऐसा मालूम होता है कि सरकार भारत-भूमिको खूनसे लथपथ, आगकी ज्वालाओंसे धधकती हुई और लूट-मारसे संत्रस्त देखना चाहती है, ताकि उसे फिर यह दावा करनेका मौका मिल जाये कि इन उपायोंको दवा देनेकी सामर्थ्य केवल उसीमें है।

अतएव ऐसा मालूम होता है कि हम केवल असहाय अवस्थाके कारण अहिंसाको अपना रहे हैं; कुछ ऐसा ही दिखाई देता है कि हम अपने दिलोंमें इस अभिलाषाको पोषित कर रहे हैं कि मौका पाते ही बदला लें।

क्या किसी निर्बल व्यक्ति द्वारा जबरदस्ती अपनाई गई दिखाऊ अहिंसासे सच्ची और स्वेच्छा-प्रेरित अहिंसा उत्पन्न हो सकती है? तो क्या मैं जिस प्रयोगमें लगा हुआ हूँ वह व्यर्थकी चीज है? यदि ज्वाला धधक उठी; स्त्री, पुरुष, बालक सबकी जानोंके लाले पड़ गये और हम-एक दूसरेका गला काटनेपर उतारू हो गये तब क्या स्थिति होगी? ऐसी भीषण स्थितिमें यदि मैं आमरण उपवास करता हुआ मर भी जाऊँ तो उससे क्या बननेवाला है?

तो फिर करना क्या चाहिए? क्या यह कि झूठ बोलूँ और उस बातको अच्छा कहने लगूँ जिसे मैं बुरा समझता हूँ? यह कहना कि बनावटी और जबरदस्तीके सहयोगके अन्दरसे सच्चा और स्वेच्छा-प्रेरित सहयोग पैदा होगा, ऐसा कहनेके बराबर है कि अँधेरेसे प्रकाशका प्रादुर्भाव होगा।

सरकारसे सहयोग करना वैसा ही दुर्बलतापूर्ण और पापमय है जितना कि व्यवहार-नियमके तौरपर स्थगित रखी गई हिंसाकी ओर झुकना।

इस कठिनाईसे पार पाना लगभग असम्भव है। यह बात मेरे दिलमें दिनोंदिन साफ होती जा रही है कि यह अहिंसा सिर्फ एक सतही चीज है और इसलिए बार-बार गलतियाँ होंगी और मुझे बार-बार पीछे हटना होगा; उसी प्रकार जैसे किसी मार्ग-विहीन वन-प्रान्तरमें भटकता राही कभी रुकता है, कभी लौट पड़ता है, कभी ठोकर खाकर गिरता और चोटें खाता है। यहाँतक कि वह लहूलुहान हो जाता है।

मैंने सोचा था कि लोग थोड़े-बहुत निराश और नाखुश तो होंगे ही, पर इतने भीषण विरोधका मैंने अनुमान नहीं किया था। यह साफ दिखाई पड़ गया कि कार्यकर्त्तागण कोई भी गम्भीर रचनात्मक कार्य करनेको तैयार नहीं हैं। रचनात्मक कार्यक्रम उनको चित्ताकर्षक नहीं लगा। वे अपनेको समाजका सुधार करनेवाले लोगोंमें नहीं गिनते और उनकी रायमें समाज-सुधारके नीरस कार्यक्रमके द्वारा सरकारसे सत्ता नहीं छीनी जा सकती। वे तो 'अहिंसामय' घूंसा जमानेके पक्षमें हैं। उन्हें रचनात्मक कार्यक्रम बहुत ही थोथा मालूम होता है। वे इस बातको सोचना भी नहीं चाहते कि इस प्रकार बच्चोंकी तरह गुस्सा दिखाकर हम सरकारको परास्त कर भी दें, पर गम्भीरता और परिश्रमपूर्वक संगठन और रचनात्मक कार्य किये बिना हम एक दिन भी देशका शासन नहीं चला सकते।

हमें जेलोंमें, जैसा कि मौ० मुहम्मद अली कहा करते हैं, 'गलत निमित्त बना-कर' न जाना चाहिए। जैसे-तैसे जेल जानेसे स्वराज्य नहीं मिल सकता और न कानून-

मात्रको तोड़कर हममें आज्ञापालन और अनुशासनकी भावना ही उद्दीप्त हो सकती है। जेल तो पक्के मुजरिम भी जाते हैं; किन्तु उससे 'स्वाधीनताका द्वार' नहीं खुल जाता। जेल तो सर्वथा निर्दोष व्यक्तियोंके ही लिए 'स्वतन्त्रताके मन्दिर' हैं। सुकरातकी फाँसीने अमरताको प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दिया और यों आजतक अगणित खूनी फाँसीके तख्तेपर लटक चुके हैं। भला कहीं हम ऐसे हजारों लोगोंको जो नाम-मात्रके लिए शान्तिप्रिय हैं पर जिनके दिलोंमें द्वेष, वैर और हिंसा-भाव भरे हुए हैं, जेल भेजकर स्वराज्यको हस्तगत कर सकते हैं?

हाँ, यदि हम शस्त्र लेकर लड़ते होते और प्रहार करते तथा प्रहार सहते होते तो बात दूसरी थी। आतंकवाद, आक्रमण और हत्या करके जेल जानेसे सरकार अवश्य ही परेशान तो होगी और जब वह थक जायेगी तब सिर भी झुका दे सकती है, जैसा कि दूसरी जगहोंमें उसने किया है। पर आज जो लड़ाई हम लड़ रहे हैं वह ऐसी नहीं है। हमें इसमें सत्यपर अटल रहना चाहिए। पर यदि हम मानते हों कि स्वराज्य 'शक्ति-प्रदर्शन' से आ सकता है तो हमें 'अहिंसा' का त्याग कर देना चाहिए और फिर हम जैसा चाहें वैसा हिंसा-काण्ड करें। तब हमारा यह कार्य पुरुषोचित, प्रामाणिक और विचारपूर्ण होगा; संसारमें आजतक ऐसा ही होता चला आया है। उस अवस्थामें हमपर कोई ढोंग और पाखण्ड रचनेका भीषण इलजाम तो नहीं लगा सकेगा।

लेकिन अधिकांश लोगोंने मेरी यह बात न सुनी। मैंने उन्हें खूब सावधान किया, सच्चे दिलसे कहा कि यदि आप अपने ध्येयकी प्राप्तिके लिए 'अहिंसा' को अनिवार्य न मानते हों तो मेरे प्रस्तावको नामंजूर कर दीजिए। तिसपर भी उन्होंने उसमें कोई सुधार किये बिना ही उसे स्वीकार किया है। इसलिए मैं कहता हूँ कि आप अपने उत्तरदायित्वको पहचानिए। आप घर पहुँचते ही सविनय अवज्ञा शुरू करनेके लिए बँधे हुए नहीं हैं, बल्कि आपको खामोशीके साथ रचनात्मक काममें लग जाना उचित है। मैं उनसे आग्रह करता हूँ कि आप फौरन संघर्ष शुरू करने सम्बन्धी चीख-पुकारकी ओर ध्यान न दें। अभी जो काम करना है वह जेल जाना नहीं, और न भाषण, लेखन और सम्मेलन-स्वातन्त्र्य ही है; बल्कि आत्म-शुद्धि, आत्म-निरीक्षण और खामोशीके साथ किया जानेवाला संगठन है। हमसे अपना आधार छूट गया है। यदि हम नहीं सँभले तो इस अगाध पानीमें डुबकियाँ लगाते हुए प्राण गँवा देंगे।

जेल काटनेवाले देश-सेवकोंकी चिन्ता निरर्थक है। मैंने तो ज्यों ही चौरीचौराका हाल सुना, उसे प्रायश्चित-रूपी यज्ञकी पहली आहुति मान लिया। वे इसीलिए जेलमें गये हैं कि जनताकी सामर्थ्यसे छूटें — निस्सन्देह आशा यही थी कि स्वराज्य-संसदका पहला काम होगा जेलोंके फाटक खोलना। परन्तु परमात्माकी मरजी कुछ और ही थी। हम बाहर रह जानेवालों ने कोशिश तो की; लेकिन नाकामयाब हुए। अब तो पूरी सजा भोगनेसे ही काम चलेगा। जो लोग भूलसे, भ्रमसे अथवा इस आन्दोलनके सम्बन्धमें किसी गलत खयालके कारण जेल चले गये हों वे माफी माँगकर या दरख्वास्त देकर रिहा हो सकते हैं। इस छँटनीसे आन्दोलनका बल ही बढ़ेगा, घटेगा नहीं। जिन लोगोंका दिल मजबूत है वे तो इस अनायास प्राप्त अधिक कष्ट-सहनके अवसरसे

आनन्दित ही होंगे। हजारों रूसी कैदी बरसोंसे रूसके जेलखानोंमें आजतक 'सड़ रहे' हैं। बेचारे आजतक आजाद नहीं हो पाये। स्वाधीनता बड़ी मानिनी है। उसे राजी और प्रसन्न कर पाना बड़ा ही कठिन है। हमने कष्ट-सहनकी सामर्थ्यका तो परिचय दे दिया। पर हमने अभी काफी कष्ट-सहन नहीं किया है। यदि लोग निष्क्रिय रूपमें शान्त बने रहें और कुछ थोड़े ही लोग सक्रिय रूपमें, सचाईके साथ, जान-बूझकर मन, वचन, और कर्मसे शान्तिमय बने रहें तो हम जल्दीसे-जल्दी और कमसे-कम कष्ट सहन करके अपने ध्येयतक पहुँच सकते हैं। परन्तु यदि हम ऐसे लोगोंको जेल भेजेंगे जो अपने दिलोंमें हिंसाको छिपाये हुए हैं तो हम अपने ध्येयसे न जाने कबतक दूर-ही-दूर बने रहेंगे।

अतएव बहुमतवालों का अब यह कर्त्तव्य है कि वे अपने-अपने प्रान्तोंमें लोगोंके ताने-उलाहनोंका खयाल न करें, अपमानको सहन करें, और साथी लोग छोड़कर चले जायें तो उसे भी बरदाश्त करें; पर सत्य-मार्गसे एक इंच भी न हटते हुए निश्चयके साथ अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ते चले जायें। अधिकारी लोग भूलसे इसे हमारी कमजोरी समझकर हमें और अधिक पीड़ित क्यों न करें, हमें उसे सहन करना चाहिए। यहाँतक कि हमें प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा भी छोड़ देनी चाहिए और आर्थिक तथा सामाजिक सुधारमें अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिए। यह रचनात्मक कार्य अरुचिकर भले ही लगे पर है स्वास्थ्यप्रद। हमें अत्यन्त विनयपूर्वक अपने नरम दलवाले भाइयोंको यकीन दिलाना चाहिए कि वे हमसे जरा भी भय न खायें; उन्हें हमसे जरा भी नुकसान न पहुँचेगा। हमें जमींदार भाइयोंको भी आश्वस्त कर देना चाहिए कि हमारे दिलमें आपके लिए कोई बदी नहीं है।

औसत अंग्रेज घमण्डी होता है। वह हमको समझता नहीं और अपनेको हमसे कहीं ऊँचा मानता है। उसका खयाल है कि वह हम भारतवासियोंपर राज्य करनेके लिए ही पैदा हुआ है। उनको अपने किलों और तोपोंका बड़ा भरोसा है। उन्हींको वे अपनी रक्षाका साधन मानते हैं। वे हमें तुच्छ समझते हैं। वे हमसे जबरदस्ती सहयोग अर्थात् गुलामी कराना चाहते हैं। हमें ऐसे आदमियोंका दिल भी जीतना है; पर यह उनके आगे घुटने टेककर नहीं, बल्कि उनसे अलग रहकर और साथ ही बिना उनसे द्वेष किये, बिना उन्हें चोट पहुँचाये। उन्हें दिक करना — सताना कायरता है। अगर हम केवल इतना ही करें कि अपनेको उनका गुलाम न मानें और उनकी जी-हुजूरी न करें तो हम अपने कर्त्तव्यका पालन कर चुके। चूहेकी खैर तो बिल्लीसे दूर रहनेमें ही है। उससे दोस्ती रखनेका मतलब तो अपनेको उसके हवाले कर देना है। मगर हमें उन चन्द अंग्रेज भाइयोंका खयाल रखना है जो जाति-अभिमानके रोगसे खुद अपनी तथा अपने साथी अंग्रेज भाइयोंकी मुक्तिकी कोशिश कर रहे हैं।

अल्पमतवालोंका आदर्श दूसरा ही है। उन्हें इस कार्यक्रममें विश्वास नहीं है। तब क्या उनके लिए यह उचित और देशभक्तिपूर्ण बात नहीं है कि वे एक नये दल और नवीन संगठनकी सृष्टि कर लें? वे तभी देशमें अपने मतका प्रचार कर सकते हैं। जिन्हें कांग्रेसके ध्येयमें विश्वास न हो उन्हें चाहिए कि वे उससे अलग हो जायें। राष्ट्रीय संस्था होनेका अर्थ ध्येयविहीन होना नहीं है। उदाहरणके लिए जो व्यक्ति

स्वराज्यका कायल नहीं है उसके लिए कांग्रेसमें स्थान नहीं है। उसी तरह मेरी राय है कि जो 'शान्तिमय और जायज तरीकों' को नहीं मानता वह भी कांग्रेसमें नहीं रह सकता। कोई कांग्रेसी असहयोगका कायल न होते हुए तो उसके अन्दर रह सकता है; परन्तु यदि वह हिंसा और असत्यमें विश्वास रखता है तो वह कांग्रेसी नहीं बना रह सकता। अतएव जब मैंने देखा कि कांग्रेसके ध्येय-विषयक प्रस्तावकी टिप्पणीका विरोध हो रहा है तब मेरे हृदयको गहरा आघात पहुँचा। और जब मैंने 'शान्तिमय' और 'जायज' शब्दोंकी व्याख्या करते हुए 'अहिंसा' और 'सत्य' शब्द प्रस्तुत किये और उनका भी विरोध हुआ तब तो मुझे और भी गहरी व्यथा हुई।[१] मेरे पास इन शब्दोंकी योजनाका कारण था। मुझसे संजीदगीके साथ यह कहा गया था कि कांग्रेसके ध्येयमें यह आग्रह नहीं है कि अहिंसा और सत्य स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अनिवार्य हैं। दुःखकारक वाद-विवादको टालनेके लिए मैंने उन पर्यायोंको हटा लिया; पर मुझे यह जरूर लगा कि सत्यपर घातक प्रहार हुआ है।

यह तो ठीक ही है कि विरोध करनेवाले सज्जन भी वैसे ही देशभक्त हैं जैसा मैं होनेका दावा करता हूँ; वे स्वराज्यके लिए भी उतने ही उत्सुक हैं जितने कि दूसरे तमाम कांग्रेसी हैं; लेकिन मैं इतना जरूर कहूँगा कि उनकी देशभक्तिकी भावना-का यह तकाजा है कि वे अहिंसा और सत्यका निष्ठा और दृढ़ताके साथ पालन करें और यदि वे इनके कायल न हों तो उन्हें चाहिए कि कांग्रेस-संगठनसे अपना सम्बन्ध तोड़ लें।

क्या राष्ट्रीय मितव्ययिताकी दृष्टिसे यह उचित न होगा कि सभी आदर्शोंकी ठीक-ठीक परिभाषा हो जाये और लोग उसके अनुसार स्वतन्त्र रूपसे काम करें? फिर जो आदर्श अधिकसे-अधिक लोकप्रिय होगा वही श्रेष्ठ माना जायेगा। यदि हम प्रजातन्त्रके सच्चे भावोंका विकास चाहते हैं तो हम अड़ंगा-नीतिके बजाय अलग होकर स्वतन्त्र रूपसे काम करनेकी नीतिको अपनायें।

कांग्रेसके इस अधिवेशनमें यह बात बिलकुल साफ हो गई कि देशके स्वराज्य-तक पहुँचनेमें बाधक हम हैं, सरकार नहीं। सरकारकी हरएक गलतीसे हमारा काम आगे बढ़ता है; किन्तु अपने कर्त्तव्यकी अवहेलनाके कारण हमारी प्रगति रुकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-३-१९२२

१. देखिए "प्रस्ताव: बारडोली कार्य-समितिके", १२-२-१९२२ की पाद-टिप्पणी ३।

१९९. सरकार द्वारा प्रतिवाद

१. जेलोंमें कोड़ोंकी मार

सम्पादक
'यंग इंडिया'

प्रिय महोदय,

१७ फरवरी, १९२२ के अपने पत्र संख्या ४०२–सी·के बाद अब मैं आपका ध्यान पत्रके रूपमें लिखे गये श्री महादेव देसाईके उस लेखकी ओर खींचना चाहता हूँ जिसका शीर्षक आपने 'जेलोंमें कोड़ोंकी मार' दिया है और जिसे आपने गत १९ जनवरीके अपने अंकमें छापा है। उस पत्रमें कोड़े लगानेकी छः घटनाओंका विवरण दिया गया है और भाव यह निकलता है कि उनका सम्बन्ध राजनीतिक कैदियोंसे था। इनमें से दो स्थानोंपर कुछ व्यक्तियोंके नाम दिय गये हैं। ये नाम हैं कैलाशनाथ और लछमीनारायण शर्मा। नैनी सेन्ट्रल जलके सुपरिंटेंडेंटसे पूछताछ की गई. . .मैं दावेसे कह सकता हूँ कि कैलाशनाथ या लछमीनारायणको, जिनके नाम आपके द्वारा प्रकाशित पत्रके लेखकने दिये हैं, नैनी जेलमें कभी कोड़े नहीं लगाये गये, और न उन्हें कोई अन्य सजा ही दी गई है। कैदी नम्बर १४८८ कैलाशनाथको, कठोर कारावासका दण्ड भोगते हुए भी कामसे इनकार करने पर, केवल 'चेतावनी' दी गई थी।

लखनऊ
१८-२-१९२२

भवदीय,
जे० ई० गोंडगे
प्रचार आयुक्त

सरकारका यह साफ इनकार[१] नितान्त अविश्वसनीय है। जो वक्तव्य विशुद्ध चरित्रवाले एक जनसेवी द्वारा दिये गये हैं उनका खण्डन पूर्ण और निष्पक्ष जाँच कराये बिना कदापि स्वीकार नहीं किया जा सकता, विशेषकर जब वह खण्डन ऐसे व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत किया गया हो जिनका उसमें कोई स्वार्थ निहित है। मैं पाठकोंका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलाना चाहता हूँ कि इलाहाबादके 'इंडिपेंडेंट' में इस आशयका एक वक्तव्य छपा है कि जेलके एक अधिकारीने श्री लछमीनारायणको कोड़े लगानेकी बात एक कांग्रेसीके आगे स्वीकार कर ली है। सम्भव है कि जेल अधिकारीका 'कोड़े लगाने' की बातसे इनकार करना वाक्छल ही हो। 'यंग इंडिया' में जो पत्र छपा है, वह अनुवाद है। गुजरातीमें हंटर लगाने, कोड़े लगाने और बेंत लगानेके लिए एक ही

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

शब्द है। मैं अधिकारियोंकी अनधिकृत शारीरिक दण्डसे इनकार करनेकी आदतसे वाकिफ हूँ। क्या सरकार यह चाहती है कि यदि जेलके रजिस्टरमें शारीरिक दंडकी बात दर्ज नहीं है, तो लोगोंको यह मान लेना चाहिए कि वह दिया ही नहीं गया? इस प्रतिवादको छापकर निश्चय ही मेरी उद्विग्नता और बढ़ गई है। क्योंकि इससे अमानुषिकता जारी रखने और प्रतिवादों द्वारा उसपर पर्दा डालनेका इरादा जाहिर होता है। प्रचार आयुक्त अपराधी पक्षोंके ऐसे प्रतिवाद भेजकर, जिनकी प्रमाणों द्वारा पुष्टि नहीं की गई है, अपने कर्त्तव्यका पालन ठीक तरह नहीं कर रहे हैं।

२. देहरादूनकी घटना

सम्पादक
'यंग इंडिया'

प्रिय महोदय,

. . . भारत सरकारकी विज्ञप्तिके अपने प्रत्युत्तरमें आपने 'गैरकानूनी दमन' के उदाहरण देते हुए सातवें स्थलपर इस प्रकार लिखा है: "देहरादूनमें एक लड़केपर गोली चलाई गई और वहाँ एक सार्वजनिक सभाको जबरदस्ती तितर-बितर किया गया।" . . . इससे स्पष्ट ध्वनि यह निकलती है कि लड़केपर गोली सरकारी अधिकारियोंने चलाई थी। शायद आपका संकेत २४ दिसम्बर, १९२१ की गोली चलनेकी उस घटनाकी ओर है जिसमें मैडन नामके एक नौजवान यूरोपीयने एक मुसलमान युवकपर गोली चलाई थी। मैडन सरकारी कर्मचारी नहीं है। दुर्घटना किसी निजी झगड़ेके कारण हुई थी। . . . मैडनपर मुकदमा चलाया गया और भारतीय दंड संहिताकी धारा ३०७, ३२६ के अधीन उसे सेशन सुपुर्द कर दिया गया। . . . सार्वजनिक सभाको क्रूरतापूर्वक और जबरदस्ती तितर-बितर करनेके आरोपके सम्बन्धमें, निःसन्देह, आपको गलत सूचना मिली है। तथ्य इस प्रकार हैं:

(१) स्वयंसेवकोंके जुलूस देहरादूनमें एक भारी मुसीबत बन गये थे और उनका रवैया कई मौकोंपर बहुत ही भड़कानेवाला होता था।

(२) मजिस्ट्रेटकी अनुमतिसे, पुलिस अधीक्षकने कुछ इलाकोंमें उनपर पाबन्दी लगा दी। ऐसा असहयोगियोंके हितमें ही किया गया था, क्योंकि जनतामें कुछ लोग इस बारेमें अधीर हो उठे थे।

(३) स्थानीय उग्रपंथी पत्र 'गढ़वाली' ने इन प्रदर्शनोंकी बुद्धिहीनता और मूर्खतापर टीका-टिप्पणी की थी।

(४) स्वयंसेवकोंने पुलिस अधीक्षकके आदेशकी अवज्ञा करनेका निश्चय किया . . .।

(५) सभाको तितर-बितर करनेके लिए बहुत ही थोड़ा बलप्रयोग किया गया था और किसीको चोट नहीं आई। . . .

लखनऊ
१५ फरवरी

भवदीय,
जे० ई० गोंडगे

प्रचार आयुक्तने गोली चलनेकी घटनाके[1] सम्बन्धमें निश्चय ही मेरी गलती पकड़ी है। मुझे अधिक सावधान रहना और यह बताना चाहिए था कि गोली चलानेवाला कोई सरकारी कर्मचारी नहीं था। मैं अब यह महसूस कर रहा हूँ कि इसकी चर्चा ही अप्रासंगिक और सरकारके प्रति अन्यायपूर्ण थी। गोली चलनेकी इस घटनाका गैरकानूनी दमनसे कोई सरोकार नहीं है। मैं इस गलतीके लिए क्षमा माँगता हूँ और अधिकारियोंको यह विश्वास दिलाता हूँ कि वह जान-बूझकर नहीं की गई थी।

परन्तु दूसरे प्रतिवादका मुझपर कोई प्रभाव नहीं पड़ सका। मैं पहले तो, बल-प्रयोगकी आवश्यकताको अस्वीकार करता हूँ; और दूसरे यदि मेरे संवाददाताके भेजे हुए बयानपर यकीन किया जाये तो जो बलप्रयोग हुआ वह आवश्यकतासे बहुत अधिक था। जनता इस सरकारी प्रतिवादपर विश्वास नहीं कर सकती। मुझे आशा है कि गोली चलानेकी घटनाको लेकर मुझसे जो भूल हुई है उसका उपयोग सभाको जबरदस्ती तितर-बितर करनेके विवरणको गलत या कम महत्त्वपूर्ण बतानेमें न किया जायेगा। गोली चलानेकी घटनाके विवरणमें जो भूल हुई उसका मुख्य कारण तथ्योंका ठीक-ठीक न समझा जाना था।

३. बम्बई जेलकी एक झाँकी

सूचना-निदेशक, बम्बईके अभिवादन सहित।

'यंग इंडिया'के १९ जनवरीके अंकमें 'हिन्दू' का एक उद्धरण छपा था, जो "एक पंजाबी मार्शल लॉ कैदी रहमत रसूल"के साथ हैदराबाद सेंट्रल जेलमें हो रहे तथाकथित दुर्व्यवहारके बारेमें था।[2] ऐसा लगता है कि लेखका संकेत हिम्मत रसूल नामके एक गुजराती कैदीकी ओर है, जिसे ११ अप्रैल, १९१९को अहमदाबादमें टेलिग्राफके तार काटने, तार-घरमें आग लगाने और बलवा करने पर, अहमदाबादके विशेष न्यायाधिकरण द्वारा काले पानीकी सजा दी गई थी। आरोप और उनके सम्बन्धमें वास्तविक तथ्य इस प्रकार हैं:[3]

असलियत यह है कि १३ दिसम्बरको जब इस कैदीको खड़े होनेका हुक्म मिला तो वह खड़ा नहीं हुआ और बहुत ही उत्तेजित हो गया और सुपरिंटेंडेंटके साथ बड़ी गुस्ताखीसे पेश आया। सजा जो बताई गई है वह नहीं, बल्कि एक महीनेके लिए टाटके कपड़ोंकी तथा तीन माहकी सादी बेड़ियोंकी सजा दी गई थी। इस जेलमें आनेके बाद अबतक इस कैदीको ग्यारह बार सजा दी जा चुकी

१. ऊपर उनके पत्रके केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।
२. देखिए "मार्शल लॉसे भी बदतर", १९-१-१९२२।
३. यहाँ उद्धृत नहीं किये गये हैं।

है, जिसमें ३० बेंत और दस दिनके लिए आड़ी छड़दार बेड़ियाँ भी शामिल थीं, जिसकी वजह बेहद उद्दण्डता और कामसे बराबर इनकार करना था। वह इस समय तीन महीनेका एकाकी कारावास भोग रहा है। यह सजा उसे अण्डमानमें कामसे इनकार करने और हुक्म न मानने पर दी गई थी। उसकी 'हिस्ट्री शीट' में उसे "हिंसक स्वभावका" व्यक्ति बताया गया है।

२० फरवरी, १९२२

मैं इसे पाशविक दण्डकी एक बेरहमीसे भरी सफाई कहना चाहता हूँ। यह जनतासे साफ-साफ यह कहना है कि "हाँ, हमने ऐसा किया है और हम बराबर ऐसा करते रहेंगे।" मैंने यह घटना सरकारको सुधारनेकी दृष्टिसे प्रकाशित नहीं की थी। इसलिए इस लज्जाविहीन स्वीकृतिसे मुझे क्षोभ नहीं हुआ है। पाठकको इस बातपर ध्यान देना चाहिए कि इस सारी विज्ञप्तिमें एक भी आरोपको अस्वीकार नहीं किया गया है। कैदीका नाम या ब्योरा सही था या नहीं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। ये तथ्य कि कैदीको तीन दिनतक भूखा रहना पड़ा, उसे अपने हाथ अपमानजनक ढंगसे फैलाने होते थे, उसे एक महीने टाटके कपड़े और तीन महीने डण्डा बेड़ी पहननी पड़ी, तीस बेंत खाने पड़े, और यह कि इस समय वह तीन महीनेके लिए एकाकी कारावासका दण्ड भोग रहा है; 'हिन्दू' में लगाये गये आरोपोंकी पर्याप्त पुष्टि कर देते हैं। मैं यह माननेके लिए तैयार हूँ कि हर कैदी, जिसे जेलमें सजा मिलती है, सरकारी भाषामें उग्र स्वभावका हुआ करता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-३-१९२२

२००. झूठसे भरा एक इश्तिहार

दिल्लीमें मुझे एक इश्तिहार दिया गया था :

असहयोगियोंके लिए महात्मा गांधीका सन्देश

हड़तालें बन्द करो

असहयोगकी सभी कार्रवाइयाँ रोक दो

दिल्लीके नागरिको!

सैकड़ों और हजारोंकी संख्यामें आओ!!

हिज रायल हाइनेस प्रिंस आफ वेल्सका स्वागत करो।

इससे केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह इश्तिहार सरकार द्वारा या उसकी तरफसे जारी किया गया है। काश कि मैं सचमुच इस तरहका सन्देश दे सकता। पर स्थिति यह है कि दुर्भाग्यवश मुझे इससे बिलकुल उलटा सन्देश देना पड़ा है। बारडोलीके प्रस्तावोंमें हड़ताल सम्बन्धी निर्णय खास तौरपर जैसाका-तैसा रहने दिया गया था। असहयोगकी कार्रवाइयाँ स्थगित नहीं की गई थीं। केवल उग्र किस्मकी सविनय अवज्ञा और उसके लिए उग्र किस्मकी तैयारियाँ ही स्थगित की गई थीं। इस इश्तिहारमें झूठी बातें तो हैं ही, पर संयोजक यह भी नहीं सोच पाये

कि इस तरहके झूठसे आन्दोलन केवल और मजबूत होगा। लेकिन मैं एक असहयोगी होनेके नाते, यह भी नहीं चाहता कि सहयोगी झूठका सहारा लें। मुझसे यह कहनेकी जरूरत नहीं कि असहयोगी भी झूठ बोलते देखे गये हैं। यह बात सर्वविदित है कि नैतिकताके मार्गसे भटकनेपर मैं दोस्त या दुश्मन किसीका भी लिहाज नहीं करता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-३-१९२२

२०१. पत्र: मु० रा० जयकरको

[२ मार्च, १९२२][1]

मुझे यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि आप अचानक ही बीमार हो गये और आपको पालघर लौटा जाना पड़ा।

मैं चाहता हूँ कि आप 'यंग इंडिया'की प्रत्येक पंक्ति ध्यानसे पढ़ जायें। मैं आपको यह पत्र यही बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने उन्हीं विचारोंकी पुष्टि-भर की है जो बारडोली छोड़ते समय मेरे मनमें उठे थे। जहाँ-तक मेरा प्रभाव काम देगा, मैं विभिन्न प्रान्तोंमें लोगोंको प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा भी शुरू करनेसे रोकूँगा। फिलहाल मैंने उन्हें रचनात्मक कार्यक्रमकी ओर ध्यान केन्द्रित करनेको राजी कर लिया है, किन्तु इस सबका अर्थ यह नहीं है कि सरकारके प्रति मेरे रुखमें कोई परिवर्तन हो गया है। उसकी धोखेबाजी, उसकी मक्कारी, हिंसाके प्रति उसकी निर्लज्जतापूर्ण आसक्ति मेरे मनको पहलेसे भी अधिक उसके खिलाफ कर रही है और ऐसा समय आ सकता है जब मैं जन-समुदायसे उतनी ही घृणा करने लगूँ जितनी कि इस सरकारसे, यद्यपि कारण भिन्न होगा।

क्या इस रचनात्मक कार्यक्रमको चलानेमें आप तहेदिलसे मेरा हाथ न बँटायेंगे? मैं चाहूँगा कि आप गोलमेज परिषद् आयोजित करानेके प्रयत्नमें जो कि इस समय व्यर्थ-सा प्रयत्न है, अपनेको न लगाये रहें, और न आप कैदियोंकी बात ही सोचते रहें। जेलमें वे विश्रामरूपी चिकित्साका लाभ उठाते हुए बिलकुल ठीक रहेंगे। मेरी बहुत इच्छा है कि आप रचनात्मक कार्यक्रमके किसी-न-किसी अंगकी ओर अपना पूरा ध्यान दें। यदि आपका स्वास्थ्य ठीक है, जैसी कि आशा है, तो मैं आपको यहाँ आने और अपने साथ एक दिन शान्त रूपसे बितानेका कष्ट देना चाहता हूँ। मैंने जिन तरीकोंसे काम करनेका सुझाव दिया है उसकी सम्भावनाओंपर हम आपसमें विचार-विनिमय कर सकेंगे। मैं बुधवारतक अहमदाबादमें हूँ। अगला सोमवार, जैसा कि आप जानते हैं, मेरा मौनवार है। यह पत्र आपको शुक्रवारको मिल जायेगा। आप शनिवार, रविवार, मंगलवार या बुधको आ सकते हैं। जितना पहले आ सकें, उतना अच्छा।

[अंग्रेजीसे]

स्टोरी ऑफ माई लाइफ

१. साधन-सूत्रसे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

सर शंकरन् नायरके पत्रके उद्धरण

सम्पादक
'टाइम्स ऑफ इंडिया'

महोदय,

समाचारपत्रोंमें प्रकाशित कुछ वक्तव्योंको देखते हुए मैं आपसे इस पत्रको अपने स्तम्भोंमें स्थान देनेकी प्रार्थना करना चाहता हूँ।

हम आपसमें बातचीत करने और एक सम्मानजनक समझौतेके उपाय खोजनेके लिए निमन्त्रित किये गये थे। मैं तथा कई दूसरे लोग इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि श्री गांधी और उनके अनुयायियोंसे आगे बातचीत करना बेकार है। मैं जिसे सम्मान-जनक समझौता समझता हूँ, श्री गांधी उसमें सम्मिलित होना नहीं चाहते और ऐसा शक होता है कि समझौता हो भी जाये तो उसका पालन ईमानदारीसे नहीं किया जायेगा।

ऐसा कहनेके कारण बताना ठीक ही होगा।

कल सम्मेलनमें घोषणापत्रके हस्ताक्षरकर्त्ताओंने कुछ प्रस्ताव रखे। श्री गांधीने उन प्रस्तावोंको स्वीकार नहीं किया। किन्तु सम्मेलनने एक समिति नियुक्त की जिसमें स्वयं उन्हींके अनुरोधपर स्वयं उन्हें या उनके किसी अनुयायीको नहीं रखा गया, इसके कारण बादमें स्पष्ट हो जायेंगे। इस समितिने यथासम्भव उनकी इच्छाकी पूर्ति करनेके लिए कुछ प्रस्ताव तैयार किये। उन्होंने ये प्रस्ताव भी स्वीकार नहीं किये। उन्होंने दो लम्बे भाषण दिये। इनमें उन्होंने जहाँतक वाइसरायके साथ बातचीत करनेका सम्बन्ध है, अपनी स्थिति इस तरह बताई:

सरकारकी तरफसे "पश्चात्ताप" अवश्य व्यक्त किया जाना चाहिए। सरकारने जो कदम अभी हालमें उठाये हैं वे सब अनुकूल वातावरण तैयार करनेके लिए बिना किसी शर्तके वापस ले लिये जाने चाहिए; कानूनकी कुछ धाराओंकी अवधि बढ़ानेसे सम्बन्धित विज्ञप्तियाँ न सिर्फ रद की जानी चाहिए बल्कि कांग्रेस और खिलाफतके सभी गिरफ्तार या सजायाफ्ता स्वयंसेवकोंको रिहा किया जाना चाहिए; साथ ही वे सब अन्य लोग भी रिहा कर दिये जाने चाहिए जिन्हें हालमें ही भारतीय दण्ड संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिताकी सामान्य धाराओंके अन्तर्गत सजाएँ दी गई हैं। इस पिछली माँगके एक मुद्देमें बादमें फेरफार कर दिया गया। श्री गांधीने कहा कि

उनके साथ सहानुभूति दिखानेके लिए नहीं, वरन् केवल अनुकूल वातावरण तैयार करने और सरकारकी तरफसे पश्चात्ताप व्यक्त करानेके लिए ही ऐसा करना उचित है . . .

उन्होंने निःसन्देह सरकारका उल्लेख करते हुए यह सम्मति भी प्रकट की कि "हम चाहे जितना आगे बढ़ें, आप फौजी कानूनकी घोषणा कदापि नहीं कर सकते"। श्री गांधीके अनुयायी, यहाँतक कि जिन्होंने कुछ बातोंमें उनका हलका विरोध भी किया था वे भी, उनके रुखका समर्थन करते हैं। . . .

श्री गांधी कोई बातचीत या समझौता अपनी ही शर्तोंपर करना चाहते हैं, अन्यथा नहीं। और वे शर्तें मानने योग्य कदापि नहीं हैं। . . .

पंजाबके सम्बन्धमें उन्होंने इस तथ्यपर जोर दिया कि कांग्रेस-दल कांग्रेस उप-समितिकी रिपोर्टमें प्रस्तुत प्रस्तावोंपर अमल करनेसे ही सन्तुष्ट होगा, अन्य किसी बातसे नहीं। इसमें न केवल छोटे अधिकारियोंको सजा देनेकी बात है, वरन् सर माइकेल ओ'डायर और डायर आदिकी पेंशनें बन्द करनेकी लगभग अमान्य शर्तें भी आती हैं।

खिलाफतके मसलेके सम्बन्धमें श्री गांधीने कहा कि फ्रांसीसियोंको सीरियासे अवश्य चले जाना चाहिए। यह निःसन्देह सर्वथा अमान्य शर्त है। वे चाहते हैं कि इंग्लैंड मिस्रसे चला जाये। इसपर भी कोई टिप्पणी करनेकी जरूरत नहीं है।

जहाँतक स्वराज्यका सम्बन्ध है वे चाहते हैं कि केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारोंको तुरन्त पूरा औपनिवेशिक दर्जा दे दिया जाये। दर्जा और उसकी रूपरेखा जनताके विधिवत् चुने हुए प्रतिनिधि तय करेंगे। प्रतिनिधियोंके चुनावके लिए मतदान आदिके सम्बन्धमें कांग्रेस संविधान स्वीकार किया जाये।

उन्होंने यह बात बार-बार जोर देकर कही कि ये माँगें कमसे-कम हैं और इन्हें सरकार तथा गोलमेज सम्मेलनको स्वीकार करना ही चाहिए। . . .

सम्मेलनसे पूर्व ये शर्तें रखी गई हैं कि कुछ सजायाफ्ता लोगोंको जैसे कि स्वयंसेवकोंको रिहा कर दिया जाये और अन्य लोगोंके मामलोंपर विचार करनेके लिए एक जाँच-अदालत नियुक्त की जाये। यद्यपि जाँच-अदालतके सभी न्यायाधीश सरकार द्वारा नियुक्त नहीं किये जायेंगे, पर अगर सरकार इस सुझावको स्वीकार करनेके लिए तैयार हो तो मुझे भी मामलोंपर पुनर्विचारके लिए एक जाँच-अदालतकी नियुक्तिमें कोई आपत्ति नहीं है। यह बात अली-भाइयों और उनकी जैसी स्थितिके अन्य लोगोंपर लागू नहीं होती; पर इन कैदियों (फतवा कैदियों) की रिहाईकी अनिवार्य माँग सम्मेलनकी अनिवार्य, प्रारम्भिक शर्तके रूपमें ही की गई है।

किन्तु मेरी राय तो यह है कि कुछ खास कैदियोंकी रिहाईकी माँगको अपने सम्मेलनमें शामिल होनेकी शर्तकी तरह पेश करनेकी बात, यदि हमें सचमुच सम्मेलनकी दरकार है, छोड़ देनी चाहिए। मैं मानता हूँ कि जबतक किसी तरहकी हिंसाका अन्देशा न हो, सरकारको श्री गांधीके आन्दोलनमें दखल नहीं देना चाहिए। . . .

सर्वश्री मुहम्मद अली और शौकत अली तथा उसी कोटिके अन्य कैदियोंके सम्बन्धमें सरकार और भी अधिक दृढ़ है। श्री गांधी और हममें से अनेक यह जानते

हैं कि वे अहिंसात्मक आन्दोलनका सिद्धान्त स्वीकार नहीं करते। श्री गांधीने यह वादा किया था कि यदि उनके अहिंसात्मक आन्दोलनके तरीकेपर अमल किया जाये तो वे एक सालके अन्दर स्वराज्य हासिल कर लेंगे। उन लोगोंने उनके इस वादेको ध्यानमें रखकर ही हिंसाका आग्रह छोड़ दिया था। वह साल बीत गया है और अब मुसलमानोंका खयाल है कि श्री गांधीके साथ किया गया समझौता समाप्त हो गया है। . . . अतः अब मुसलमान उन शर्तोंसे बँधे हुए नहीं हैं जो श्री गांधीने स्वयं मान ली थीं। . . . वे सरकारके विरुद्ध ही नहीं, उन दूसरोंके विरुद्ध भी जो उनके आन्दोलनमें शामिल न हों, हिंसा करनेसे न झिझकेंगे। अभी हालकी घटनाएँ इसका प्रमाण हैं।

सभी परिस्थितियाँ इस निष्कर्षकी ओर संकेत करती हैं कि वे और उनके मित्र रिहा होनेपर आन्दोलन जारी रखेंगे। इसलिए मैं इनकी बिना शर्त रिहाईका आग्रह करना या इसे सरकारके साथ बातचीत करनेसे पूर्व शर्तकी तरह पेश करना ठीक नहीं समझता। इनके साथ अलग किस्मके व्यवहारकी माँगका एकमात्र आधार बताया जाता है उनके निकट धार्मिक आदेशोंका देशके कानूनोंसे भी बढ़कर होना। किन्तु मलाबारमें जो-कुछ हो रहा है, उसे देखते हुए इसे अमान्य करना होगा। बल्कि दूसरी ओर यह बिना शर्त रिहाईके खिलाफ जबरदस्त दलील है क्योंकि ऐसी रिहाईसे उन्हें ऐसा कार्य-क्रम अपनानेकी स्वतन्त्रता मिल जायेगी जिसे अदालतोंने गैरकानूनी घोषित किया है और जिसके परिणाम विनाशकारी हो सकते हैं। इसका एक और कारण यह है कि श्री गांधी और उनके मित्र तथा स्वयं अभियुक्त गिरफ्तारियों तथा सजाओंका स्वागत करते हैं। इसलिए मैं विश्वास करता हूँ कि यदि मैं उनकी रिहाईकी माँगका उद्देश्य सरकारको नीचा दिखाना या प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलनको होनेसे रोकना बताऊँ तो मैं अनुदार नहीं समझा जाऊँगा। सम्भव है कि इन लोगोंको रिहा न करनेकी बातका बहाना लेकर सविनय अवज्ञा अर्थात् लगानबन्दी आदि आरम्भ की जाये। तब आन्दोलनका गैरकानूनी रूप और भोंडापन बिलकुल नंगे रूपमें सामने आ जायेगा। यह उस नीतिकी समुचित परिणति ही है जिसका जन्म एक सालमें स्वराज्य प्राप्तिके झूठे वादेसे हुआ है। यह वादा अज्ञानी जनसाधारणको गुमराह करनेके इरादेसे किया गया था। इसके सभी समझदार समर्थक यह जानते रहे होंगे कि इसे पूरा करना असम्भव है। . . .

चूँकि मेरी राय है कि मैं श्री गांधी और उनके अनुयायियोंके सम्मेलनकी माँग करनेमें या किसी अन्य विषयमें, अनेक कारणोंसे जिनमें से कुछ ऊपर दिये गये हैं, साथ नहीं दे सकता और महत्त्वपूर्ण सवालोंपर जिनपर सम्मेलन श्री गांधीसे सहमत है मेरा सम्मेलनसे भी मतभेद है इसलिए मैं इस सम्मेलनको, जिसका मैं अध्यक्ष था, छोड़ देनेको बाध्य हूँ। . . .

सी० शंकरन् नायर

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, १७-१-१९२२

परिशिष्ट २

वाइसरायको लिखित गांधीजीके पत्रके सम्बन्धमें भारत सरकारकी विज्ञप्ति

दिल्ली
६ फरवरी, १९२२

गत ४ फरवरीको श्री गांधीने सामूहिक सत्याग्रह प्रारम्भ करनेके अपने संकल्पको उचित ठहराते हुए जो घोषणापत्र प्रकाशित किया है उनमें कई गलत बयानियाँ हैं। इन गलत बयानियोंमें से कुछ तो इतने महत्त्वकी हैं कि भारत सरकार उनका प्रतिवाद किये बिना नहीं रह सकती। सबसे पहले भारत सरकार श्री गांधीके इस कथनका प्रबल रूपसे खण्डन करती है कि उसने गैरकानूनी ढंगसे दमन शुरू कर दिया है। सरकार उनके इस कथनको भी निराधार मानती है कि वर्तमान असहयोगी दल लोगोंकी सभा, सम्मेलन, भाषण और लेखनकी स्वतन्त्रताके मौलिक अधिकारकी रक्षाके लिए वर्तमान सत्याग्रह आन्दोलन छेड़नेपर विवश हुआ है।

सबसे पहले भारत सरकार इस तथ्यकी ओर ध्यान दिलाना चाहती है कि सत्याग्रहके कार्यक्रमको अपनानेका निर्णय अन्तिम रूपसे ४ नवम्बरको किया गया था और राजद्रोहात्मक सभा कानून अथवा दण्ड विधान संशोधन कानूनसे सम्बन्धित हालकी विज्ञप्तियाँ जिनका उल्लेख श्री गांधीने स्पष्ट शब्दोंमें किया है, उसके बाद जारी की गई हैं। अपनेको श्री गांधीके अनुयायी माननेवाले और असहयोग आन्दोलनमें शामिल होनेवाले लोगों द्वारा किये गये भयंकर गैरकानूनी कामोंके परिणामस्वरूप ही सरकारको कुछ कार्रवाइयाँ करनी पड़ी हैं जिनका उद्देश्य यह है कि शान्तिप्रिय नागरिक अपने वैध कारोबार सुरक्षित रूपसे चलाते रहें। और ये कार्रवाइयाँ पूर्ण रूपसे कानून-सम्मत हैं। असहयोग आन्दोलनके प्रारम्भसे ही भारत सरकारने, इस इच्छासे कि राजनीतिक आन्दोलन फिरसे उग्रतर रूप धारण न कर ले, उसके उग्र हो जानेके बावजूद अपनी कार्रवाइयाँ उसी हदतक सीमित रखी हैं जिस हदतक कानून, व्यवस्था तथा सार्वजनिक शान्तिकी रक्षाके लिए वे आवश्यक थीं।

गत वर्ष नवम्बर मासतक स्वयंसेवक संस्थाओंके खिलाफ, दिल्लीको छोड़कर और किसी जगह कोई कार्रवाई नहीं की गई थी। परन्तु नवम्बरमें सरकारको एक नई और भयानक परिस्थितिका सामना करना पड़ा। गत वर्ष सैनिकों और पुलिसके सिपाहियोंको राजभक्तिसे डिगानेका योजनाबद्ध प्रयास किया गया और शान्ति-भंगकी बहुत-सी घटनाएँ हुईं जिन्हें भोली-भाली और उत्तेजनशील जनताके बीच असहयोगियों द्वारा किये गये प्रचारका सीधा परिणाम ही माना जा सकता है। उन उपद्रवोंके फलस्वरूप बहुतोंकी जानें गईं, लोगोंमें कानूनको न माननेका खतरनाक जज्बा पैदा हुआ और वैध सत्ताके प्रति तिरस्कारकी भावनामें वृद्धि हुई। अन्तमें हालत यहाँतक बिगड़ी कि गत

नवम्वर मासमें वम्वई शहरमें गम्भीर उपद्रव हुए जिनमें ५३ लोग मारे गये और लगभग ४०० घायल हुए। उसी दिन अन्य अनेक स्थानोंमें कानूनके खिलाफ की गई भयानक कार्रवाइयाँ देखनेमें आईं और इस अवसरपर यह स्पष्ट दिखाई दिया कि अनेक स्वयंसेवक संस्थाओंने हिंसा करने और धमकी देने, दैनन्दिन जीवनमें वाधा डालनेका विधिवत् आन्दोलन आरम्भ कर दिया है। इस आन्दोलनकी रोक-थामके लिए दण्ड संहिता और आपराधिक कार्रवाईकी दण्ड प्रक्रिया संहिताके अन्तर्गत कार्रवाइयाँ प्रभावहीन सिद्ध हुईं।

ऐसी परिस्थितिमें सरकारको अनिच्छापूर्वक अधिक व्यापक और कठोर कदम उठाने पड़े।

फिर भी, राजद्रोहात्मक-सभा-कानूनके अन्तर्गत की गई कार्रवाइयाँ उन कुछ ही जिलोंतक सीमित रखी गईं जिनमें शान्ति-भंगका खतरा गम्भीर था। और १९०८ के दण्ड विधान संशोधन कानूनके अन्तर्गत केवल उन्हीं संस्थाओंके विरुद्ध कार्रवाई की गई जिनके अधिकांश सदस्य हिंसात्मक कार्य और जोर-जवरदस्ती कर रहे थे। इस विज्ञप्तिमें उन सव प्रमाणोंको जिनसे भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें इस प्रकारके कदमोंका उठाया जाना उचित ठहरता है, विस्तारसे देना सम्भव नहीं है। परन्तु अगर प्रमाण चाहिए तो वे विभिन्न प्रान्तोंकी व्यवस्थापिका सभाओंके प्रकाशित कार्य-विवरणोंसे, विभिन्न प्रान्तोंकी सरकारी विज्ञप्तियोंसे तथा प्रान्तोंके शासकोंके भाषणोंसे प्रचुर रूपमें मिल सकते हैं। सरकारने लोगोंसे न्याय और व्यवस्थाका पालन कराने और सम्राट्के शान्तिप्रिय और राजभक्त प्रजाजनोंकी रक्षाके लिए कृत-संकल्प रहनेके साथ-साथ इस वातकी यथासम्भव सावधानी रखी है कि जहाँ सम्भव हो वहाँ जेलके कष्ट कम किये जायें और कोई ऐसा कदम न उठाया जाये जिससे वदलेके भावसे प्रेरित सख्ती प्रकट हो। स्थानीय सरकारों द्वारा जारी किये गये हुक्मोंसे यह वात भली प्रकार प्रमाणित हो जायेगी। अनेक अपराधी रिहा कर दिये गये हैं, सजाओंकी अवधि घटा दी गई है और राजद्रोहात्मक सभा कानून और जाव्ता फौजदारी संशोधन कानूनके अन्तर्गत दोषी पाये गये सजायाफ्ता लोगोंके मामलोंमें विशेष छूट दी गई है। इसलिए यह आरोप विलकुल निराधार है कि सरकारने अविवेकपूर्ण और गैरकानूनी ढंगकी दमन-नीति अपनाई है।

श्री गांधीने एक और आरोप लगाया है। वह यह है कि सरकारकी अभी हालकी कार्रवाइयाँ सभ्यताकी उस नीतिके प्रतिकूल हैं जिसका परिचय परमश्रेष्ठने अली-भाइयोंकी क्षमायाचनाके अवसरपर दिया था। वह नीति थी — भारत सरकार असहयोग-सम्वन्धी गति-विधियोंमें तवतक कोई हस्तक्षेप नहीं करेगी जवतक वाणी और कर्मकी अहिंसा वरती जाती रहेगी। भारत सरकारने गत ३० मईको जो विज्ञप्ति प्रकाशित की थी उससे लिये गये निम्न उद्धरणसे यह निश्चित रूपसे सिद्ध हो जाता है कि यह आरोप मिथ्या है। यह वतानेके वाद कि श्री शौकत अली और श्री मुहम्मद अलीके अपने हस्ताक्षरोंसे युक्त वक्तव्यमें दिये गये गम्भीर आश्वासनको देखते हुए भारत सरकारने उनके खिलाफ मुकदमा न चलानेका निर्णय किया है; भारत सरकारने कहा था, "हिंसात्मक कार्योंके लिए उत्तेजना देनेवाले भाषणोंके सम्वन्धमें लोगोंपर मुकदमा चलानेका हमारा जो प्रारम्भिक संकल्प है उससे यह निष्कर्ष नहीं निकाल

लिया जाना चाहिए कि किसी हलके ढंगके राजद्रोहके लिए भड़काना कानूनके विरुद्ध अपराध नहीं है। भारत सरकार यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि वह राज्यके विरुद्ध किये गये अपराधोंके सम्बन्धमें जब-जब ठीक समझेगी उन लोगोंके खिलाफ कानूनी कार्रवाई करेगी जो कानूनको तोड़ेंगे।"

अव भारत सरकारको इस आरोपका उत्तर देना वच रहता है कि यद्यपि वम्वई सम्मेलनमें रखी गई वे शर्तें जो वाइसराय महोदयके कलकत्तेके भाषणमें जरूरी वताई गई थीं कांग्रेसकी कार्यकारिणी समितिने स्वीकार कर ली थीं, फिर भी परमश्रेष्ठने सम्मेलन बुलानेके प्रस्तावको एकदम ठुकरा दिया। यह बात वास्तविकतासे कितनी दूर है यह तो परमश्रेष्ठके भाषण तथा उस सम्मेलनमें प्रस्तावित शर्तोंकी तुलना करनेपर स्पष्ट हो जायेगा। परमश्रेष्ठने अपने उस भाषणमें इस वातपर वड़ा जोर दिया था कि सम्मेलनमें किसी प्रश्नपर विचार करनेसे पहले यह अत्यावश्यक है कि असहयोगी दल अपने अवैध कार्योंको वन्द कर दे। परन्तु सम्मेलनके प्रस्तावोंमें इस मुद्देपर कोई आश्वासन नहीं दिया गया है। इसके विपरीत सरकारसे ऐसी रियायतें माँगी गई हैं जिनमें दण्ड विधान संशोधन कानून और राजद्रोहात्मक सभा कानूनके अन्तर्गत जारी की गई विज्ञप्तियोंकी वापसी और उनके अन्तर्गत दण्डित लोगोंकी रिहाई ही नहीं शामिल है; वल्कि उन अपराधियोंकी रिहाई भी आती है जिन्हें सैनिकोंको राजभक्तिसे डिगानेकी कोशिश करनेके अपराधमें सजाएँ दी गई हैं। इसके अतिरिक्त उनमें देशके सामान्य कानूनके अन्तर्गत सजा पाये हुए लोगोंके मामले पंचोंकी समितिके सुपुर्द करनेकी माँग भी की गई है। परन्तु उनमें ऐसी कोई बात नहीं कही गई है कि हड़ताल, धरना और सत्याग्रहको छोड़कर असहयोगियोंकी अन्य गैर-कानूनी कार्रवाइयाँ वन्द कर दी जायेंगी। इसके अतिरिक्त उस सम्मेलनमें श्री गांधीने जो-कुछ कहा उससे प्रकट होता है कि वे निषिद्ध संस्थाओंमें स्वयंसेवकोंकी भरती और सत्याग्रहकी तैयारियाँ जारी रखना चाहते हैं। तिसपर श्री गांधीने यह भी बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलन केवल उनके आदेशोंको लेखबद्ध करनेके लिए ही वुलाया जायेगा। इसलिए यह कहना व्यर्थ है कि इस प्रकारकी शर्तोंसे परमश्रेष्ठकी वताई हुई मुख्य शर्तें पूरी होती हैं। उचित रूपसे यह भी नहीं कहा जा सकता कि वे परमश्रेष्ठकी भावनाओंको ध्यानमें रखकर प्रस्तुत की गई हैं।

अन्तमें, भारत सरकार श्री गांधीके इस घोषणापत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें दी हुई माँगोंकी ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहती है। ये माँगें कांग्रेस कार्यकारिणी समितिकी माँगोंसे भी अधिक हैं। उनकी माँगोंका रूप अव यह है: (१) अहिंसात्मक गतिविधियोंके सम्वन्धमें दण्डित या विचाराधीन सभी कैदियोंकी रिहाई और (२) इस वातकी गारंटी कि सरकार असहयोगी दलके अहिंसात्मक कार्योंमें वाधा न डालेगी, भले ही वे भारतीय दण्ड संहिताके अन्तर्गत क्यों न आयें — या दूसरे शब्दोंमें कहें तो सरकार इस वातका वादा करे कि वह अनिश्चित कालतक असहयोगके विरुद्ध देशके सामान्य और पुराने कानूनोंको कार्यान्वित नहीं करेगी। इन रियायतोंके वदलेमें श्री गांधीका प्रस्ताव है कि वे असहयोगी दलके विद्रोहात्मक, अवैध प्रचार तथा अन्य कार्योंको जारी रखना चाहते हैं और वदलेमें देना केवल इतना ही चाहते हैं कि जवतक जेलोंमें वन्द अपराधी

रिहा होकर स्थितिपर पुनर्विचार नहीं कर लेते तबतक सत्याग्रह बन्द रखा जायेगा। उसी अनुच्छेदमें वे इस बातकी फिर पुष्टि करते हैं कि उनके दलकी माँगें ऐसी हैं जिनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

भारत सरकारको विश्वास है कि सभी विवेकशील और समझदार नागरिक यह स्वीकार करेंगे कि श्री गांधीके इस घोषणापत्रमें परमश्रेष्ठके कलकत्तेके भाषणका किसी भी रूपसे सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलता। वे यह भी मानेंगे कि उनकी माँगें ऐसी हैं जिनपर कोई भी सरकार — उन्हें मानना तो दूर रहा विचारतक करनेके लिए तैयार नहीं होगी। अब भारतके लोगोंके सामने जो विकल्प बच रहता है वह स्पष्ट है और उसे किसी प्रकारके शब्दजालसे छिपाया नहीं जा सकता। अब प्रश्न राजनीतिक विकासके इस या उस कार्यक्रमके बीच चुनाव करनेका नहीं रह गया है बल्कि खतरनाक नतीजोंसे भरी अराजकता और समस्त सभ्य शासनोंके आधारभूत सिद्धान्तोंके बीच चुनाव करनेका रह गया है। सामूहिक सत्याग्रह राज्यके लिए इतना भयावह है कि उसका सामना पूर्ण दृढ़ता और कठोरतासे करना आवश्यक है। सरकारको अब इसमें कोई सन्देह नहीं बचा है कि उसे इस सत्याग्रहको दबानेके लिए जो भी कार्रवाई करनी पड़ेगी, उसमें उसे सम्राट्की समस्त राजभक्त प्रजा और कानूनके पाबन्द नागरिकोंका सहयोग और समर्थन मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९२१-२२

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागज़ातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

राष्ट्रीय अभिलेखागार: (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया), नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जिनमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागज़ात रखे हैं, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'आज': बनारससे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'गुजराती': बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'नवजीवन' (१९१९-१९३२): गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'यंग इंडिया' (१९१८-३२): गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'लीडर': इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दी नवजीवन' (१९२१-३२): गांधीजी द्वारा सम्पादित तथा अहमदाबादसे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

आन्ध्र गवर्नमेंट रेकर्ड्स।

'जेल डायरी': सी० राजगोपालाचारी, स्वराज्य प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग कम्पनी, मद्रास, १९२२।

'बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी): जवाहरलाल नेहरू; एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई १९५८।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३६वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी): एलिस एम० बार्न्ज द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी': कृष्णदास, रिचर्ड बी० ग्रेग द्वारा सम्पादित संक्षिप्त (अंग्रेजी) संस्करण, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५१।

'सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी', खण्ड २; (अंग्रेजी): कृष्णदास; प्रकाशक: रामविनोद सिन्हा; गांधी कुटीर, दिघवाड़ा (बिहार), १९२८।

'स्टोरी ऑफ माई लाइफ' खण्ड १ (१८७३-१९२२), (अंग्रेजी): मु० रा० जयकर; एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई १९५८।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१५ दिसम्बर, १९२१ से ३ मार्च, १९२२ तक)

१५ दिसम्बर: गांधीजीने 'यंग इंडिया'में प्रकाशित "एक उलझन और उसका हल" शीर्षक लेखमें लिखा कि "असहयोगी सरकारके साथ संग्राम कर रहे हैं"। देशबन्धु दासकी पत्नीकी गिरफ्तारीपर टीका करते हुए महिलाओंसे सरकारकी चुनौतीको स्वीकार कर असहयोग आन्दोलनमें भाग लेनेका अनुरोध किया। श्रीप्रकाशको उनके पिता बाबू भगवानदासकी गिरफ्तारीपर बधाईका तार भेजा।

१७ दिसम्बर: जवाहरलाल नेहरूको भारतीय दण्ड विधि संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत ६ महीनेकी सादी कैद और १०० रुपये जुर्मानेकी सजा दी गई।

१९ दिसम्बर: मालवीयजीको तार भेजा कि जबतक सरकार अपनी गलती न माने और सभी मसलोंका निबटारा करनेकी कोशिश न करे तबतक गोलमेज सम्मेलन सफल नहीं होगा।

देशबन्धु दास और मौलाना आजादको भेजे तारमें प्रस्तावित हड़ताल स्थगित करनेकी शर्तें बताईं।

खण्ड १२४–क और १२३–क के अधीन जमानत जमा करानेसे इनकार करनेपर एस० ई० स्टोक्सको ६ महीनेकी सादी कैदकी सजा दी गई।

भारतीय दण्ड विधि संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत लाला शंकरलालको ४ मासकी कड़ी कैदकी सजा।

२० दिसम्बर: अहमदाबादमें गांधीजीने प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलनके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे भेंट की।

इलाहाबादमें 'इंडिपेंडेंट' की जमानत जब्त हो गई; 'अभ्युदय'के सम्पादक कृष्णकान्त मालवीय और गोविन्द मालवीयको धरना देनेके कारण गिरफ्तार कर लिया गया। संयुक्त प्रान्त कांग्रेस कमेटीके मन्त्री जियाराम सक्सेनाको १८ महीनेकी कड़ी कैदकी सजा दी गई।

हैदराबाद (सिन्ध)में प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मन्त्री जयरामदास दौलतरामको भारतीय दण्ड संहिताके खण्ड १२४–क के अधीन गिरफ्तार कर लिया गया।

२० दिसम्बर या उसके पश्चात्: मालवीयजीको तार भेजा कि 'मैं प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलन होनेतक असहयोग आन्दोलनको स्थगित नहीं कर सकता।

२१ दिसम्बर: कलकत्तेमें मालवीयजीके नेतृत्वमें एक शिष्टमण्डल वाइसरायसे मिला। वाइसरायने शिष्टमण्डलको उत्तर देते हुए कहा कि अगर सरकारको खुले आम और साफ-साफ चुनौती दी जाती है तो सम्मेलन बुलानेकी बातपर विचार करना भी असम्भव है। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और ए० सुब्रह्मण्य शास्त्रीको खण्ड १४४ के अधीन जारी किये गये आदेशकी सविनय अवज्ञा करनेके अपराधमें तीन-तीन महीनेकी कड़ी कैदकी सजा दी गई।

कृष्णकान्त मालवीय, चन्द्रकान्त मालवीय और गोविन्द मालवीयको दण्ड विधि संशोधन अधिनियमके अधीन सौ-सौ रुपयेका जुर्माना; बादमें इन्हें छोड़ दिया गया।

२२ दिसम्बर: 'इंडिपेंडेंट'का प्रथम हस्तलिखित अंक प्रकाशित हुआ।

२३ दिसम्बर: गांधीजी अहमदाबादमें हुई कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए। उसमें मनोनीत अध्यक्ष देशबन्धु दासकी अनुपस्थितिमें आगामी कांग्रेस अधिवेशनके लिए हकीम अजमलखाँको अध्यक्ष चुना गया।

२४ दिसम्बर: 'इंडिपेंडेंट'का हस्तलिखित अंक प्रकाशित करनेके लिए महादेव देसाईको एक सालकी कड़ी कैदकी सजा।

वाइसरायके २१ दिसम्बरके भाषणके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे हुई भेंटके दौरान गांधीजीने कहा कि "सरकारको एक वैध, अनुशासित, दृढ़ परन्तु सर्वथा अहिंसात्मक आन्दोलनके विरुद्ध अपनी आक्रामक कार्रवाइयाँ बन्द करनी चाहिए; सार्वजनिक सभाएँ करने और संस्थाएँ कायम करनेके अधिकारके बारेमें समझौतेकी कोई गुंजाइश नहीं। हम अपने इसी अधिकारके लिए लड़ रहे हैं।"

२५ दिसम्बर: अहमदाबादमें विषय-समितिकी बैठकमें कांग्रेस स्वयंसेवक दलने सविनय अवज्ञा आदिसे सम्बन्धित प्रस्ताव पेश किया।

२७ दिसम्बर: विषय-समितिकी बैठकमें भाषण। अहमदाबादमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस-का ३६वाँ खुला अधिवेशन प्रारम्भ हुआ; गांधीजी उसमें शामिल हुए।

गांधीजीने खिलाफत सम्मेलनमें भाग लिया।

२८ दिसम्बर: विषय-समितिकी बैठकमें प्रस्तावित गोलमेज सम्मेलनके सम्बन्धमें भाषण। खुले अधिवेशनमें अहिंसात्मक असहयोगपर प्रस्ताव पेश किया। हसरत मोहानीके पूर्ण स्वराज्य सम्बन्धी प्रस्तावपर भी भाषण दिया।

२९ दिसम्बर: बंगालसे आये प्रतिनिधियोंसे बातचीत की। असहयोगी कैदियोंको जेलकी मर्यादाका पालन किस प्रकार करना चाहिए इस विषयपर एक लेख 'यंग इंडिया' में लिखा।

३० दिसम्बर: संयुक्त-प्रान्तके कांग्रेसी नेताओंसे बातचीत।

मुस्लिम लीगके अधिवेशनमें भाग लिया।

३१ दिसम्बर: गांधीजी गुजरात विद्यापीठमें पॉल रिचर्डका भाषण सुनने गये; स्वयं भी भाषण दिया।

१९२२

४ जनवरी: 'सर्वेंट' के सम्पादक श्यामसुन्दर चक्रवर्तीको अदालतकी मान-हानिके अपराधमें ३ मासकी सादी कैदकी सजा।

५ जनवरी: 'यंग इंडिया' में लिखते हुए गांधीजीने भाषण और गोष्ठीकी स्वतन्त्रताका अधिकार प्राप्त करनेके प्रयत्नको देशके लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना।

७ जनवरी: लाजपतराय और सन्तानम्‌को एक-एक सालकी कड़ी कैदकी सजा दी गई।

८ जनवरी: 'नवजीवन' में गांधीजीने खिलाफत परिषद् और मुस्लिम लीग सम्मेलन-पर विवेचन किया तथा हिन्दू-मुस्लिम एकताको मजबूत करनेके उपाय सुझाये।

१३ जनवरी : युवराजके आगमनपर मद्रासमें हड़ताल।

१४ जनवरीके पूर्व : वम्वईमें होनेवाली नेताओंकी परिषद्के सम्वन्धमें गांधीजीकी 'वॉम्वे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे भेंट।

१४ जनवरी : सर शंकरन् नायरकी अध्यक्षतामें वम्वईमें नेताओंकी परिषद्का समारम्भ; गांधीजीने उसमें भाषण दिया। परिषद्ने प्रस्ताव तैयार करनेके लिए समिति नियुक्त की।

१५ जनवरी : परिषद् द्वारा नियुक्त समितिकी वैठकमें गांधीजीने भाग लिया; सर शंकरन् नायर वैठकसे उठकर चले गये।
शामको सम्मेलन पुनः प्रारम्भ हुआ; सर विश्वेश्वरैयाको अध्यक्ष चुना गया। गोलमेज सम्मेलनके सम्वन्धमें वाइसरायके साथ हो रही वातचीतको ध्यानमें रखते हुए गांधीजीने ३१ जनवरी, १९२२ तक सविनय अवज्ञा स्थगित रखना स्वीकार किया।

१७ जनवरी : वम्वईमें कांग्रेसकी कार्य-समितिने नेता परिषद्के सुझावोंपर विचार किया तथा सविनय अवज्ञाको ३१ जनवरी, १९२२ तक स्थगित रखनेका प्रस्ताव पास किया। सर शंकरन् नायरने 'टाइम्स ऑफ इंडिया' को पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने नेता परिषद्के विषयमें अपने दृष्टिकोणका स्पष्टीकरण किया। 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित सर शंकरन् नायरके पत्रके सम्वन्धमें गांधीजीकी 'वॉम्वे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे भेंट।

१९ जनवरी : गांधीजीने 'यंग इंडिया' में प्रकाशित 'मार्शल लॉसे भी वदतर' शीर्षक लेखमें सरकारके 'वर्वरतापूर्ण दमन' की भर्त्सना की।
"मद्रासमें गुण्डागर्दी" नामक अपने दूसरे लेखमें १३ जनवरीको हुई हड़तालके अवसरपर हुई हुल्लड़वाजीकी भर्त्सना की।
वावू भगवानदास रिहा कर दिये गये।

२६ जनवरी : गांधीजीने सत्याग्रह आश्रम, अहमदावादकी एक सभामें भाषण दिया।

२९ जनवरी : वारडोली ताल्लुका सम्मेलनमें भाषण दिया; सम्मेलनने यह प्रस्ताव पास किया कि यदि कार्य-समितिने कोई दूसरा निर्णय नहीं किया अथवा गोलमेज सम्मेलन नहीं वुलाया गया तो वारडोली ताल्लुका तुरन्त सविनय अवज्ञा प्रारम्भ कर देगा। केन्द्रीय विधान मण्डलमें हुई वहसपर 'नवजीवन' में टीका करते हुए गांधीजीने घोषित किया कि असहयोगियोंकी स्थिति तथा सरकारकी स्थितिमें "उतना ही अन्तर है जितना उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुवके वीच।"

३० जनवरी : गांधीजीने वारडोलीके पटेलोंसे अनुरोध किया कि वे अपने त्यागपत्र तुरन्त उनके पास भेज दें ताकि सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनेके समय उन्हें सरकारके पास भेजा जा सके।

३१ जनवरी : सूरतमें कार्य-समितिकी वैठक इस आशयका प्रस्ताव पास किया कि विदेशोंमें भारतकी राजनीतिक स्थितिके सम्वन्धमें प्रचार अत्यन्त आवश्यक है।
सूरतकी सार्वजनिक सभामें गांधीजीका भाषण।

लाजपतराय, के० सन्तानम्, मलिक खाँ और डा० गोपीचन्द रिहा हुए; लाजपतराय १९०८के दण्ड विधि संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत पुनः गिरफ्तार कर लिये गये।

१ फरवरी : वाइसरायको पत्र लिखा कि यदि सरकार अहिंसक हलचलोंमें हस्तक्षेप न करने, वाणी, सभा-संगठन और अखबारोंकी पूर्ण स्वतन्त्रताके सम्बन्धमें अपनी नीतिकी स्पष्ट घोषणा नहीं करती तथा असहयोगी कैदियोंको रिहा नहीं करती तो बारडोलीमें सामूहिक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ कर दी जायेगी।

४ फरवरी : चौरीचौराका काण्ड; थानेपर हमला; इक्कीस सिपाही तथा चौकीदार मार डाले गये।

५ फरवरी : बारडोलीमें, सविनय अवज्ञाके लिए बारडोलीकी उपयुक्तताके सम्बन्धमें गांधीजीने 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे भेंट की।

बारडोलीकी जनताके नाम लिखी गई पत्रिका संख्या १ का वितरण।

६ फरवरी : वाइसरायके नाम लिखे गांधीजीके पत्रके उत्तरमें सरकारने एक विज्ञप्ति जारी की।

७ फरवरी : समाचारपत्रोंको गांधीजीने सरकारी विज्ञप्तिका प्रत्युत्तर भेजा।

८ फरवरी : बारडोलीसे कार्य-समितिके सदस्योंके नाम गश्तीपत्र भेजकर सविनय अवज्ञाके स्थगनके बारेमें उनका मत माँगा।

बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष हरदयाल नागको बिना शर्त रिहा कर दिया गया।

९ फरवरी : अहमदाबाद नगरपालिका भंग कर दी गई।

'यंग इंडिया' में गांधीजीने सरकारी अनाचारकी चर्चा की तथा घोषित किया कि प्रतिरक्षात्मक सविनय अवज्ञा "हर कीमतपर जारी रखनी चाहिये।"

१० फरवरी : बारडोलीमें, कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंकी बैठकमें गांधीजीने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको तुरन्त बन्द कर देनेके अपने निर्णयकी घोषणा की।

११ फरवरी : बारडोलीमें कार्य-समितिकी बैठक।

१२ फरवरी : चौरीचौरा-काण्डका प्रायश्चित्त करनेके लिए गांधीजी द्वारा पाँच दिनका उपवास।

कार्य-समितिकी बैठकने चौरीचौराकी घटनाओंको मद्देनजर रखते हुए सविनय अवज्ञा स्थगित करनेका प्रस्ताव पास किया।

'नवजीवन' में गांधीजीने चौरीचौरा-काण्डकी भर्त्सना की।

एक दूसरे लेखमें उन्होंने पुनः उन शर्तोंको दोहराया जिनका कि स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए जनता द्वारा पालन किया जाना जरूरी था।

१४ फरवरी : युवराज दिल्ली पहुँचे।

१५ फरवरी : बारडोलीमें, अपने भावी कार्यक्रमके सम्बन्धमें गांधीजीकी 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिसे भेंट।

सर डैनियल हैमिल्टनको पत्र लिखा जिसमें भारतके लिए चरखेके महत्त्वकी चर्चा की।

इंग्लैंडमें लॉर्ड सभाने भारतीय मामलोंके लिए लॉर्ड सभा और कॉमन सभाके सदस्योंकी एक स्थायी संयुक्त समिति नियुक्त करनेका प्रस्ताव किया।

१६ फरवरी : गांधीजीने 'यंग इंडिया' में "चौरीचौरा हत्याकाण्ड" के विषयमें लिखा।

१९ फरवरी : पण्डित जवाहरलाल नेहरूको पत्र लिखकर कार्य-समितिके उस प्रस्तावका स्पष्टीकरण किया जिसके अनुसार सविनय अवज्ञाको स्थगित करनेका निश्चय किया गया था।

२२ फरवरी : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्षको पत्र लिखा कि भारतकी राजनैतिक स्थितिसे सम्बन्धित समाचारोंका प्रचार करनेके लिए विदेशोंमें एजेंसियाँ स्थापित करनेका प्रस्ताव फिलहाल अवांछनीय है।

२३ फरवरी : सर विलियम विन्सेंटने केन्द्रीय विधान-सभामें असहयोग आन्दोलनके सम्बन्धमें सरकारी नीतिकी घोषणा की।

२४ फरवरी : दिल्लीमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक शुरू हुई।
वाइसरायने दमन कानूनको रद्द करनेवाले विधेयकपर मंजूरी दे दी।

२५ फरवरी : दिल्लीमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें कार्य-समितिका वह प्रस्ताव, जो १२ फरवरीको बारडोलीमें पास किया गया था, कुछ संशोधनोंके बाद स्वीकार कर लिया गया।

२६ फरवरी : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक तथा उसके प्रस्तावोंके सम्बन्धमें गांधीजीने दिल्लीमें समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे भेंट की।

३ मार्च : जवाहरलाल नेहरू तथा अन्य छः लोग निश्चित अवधिसे पहले ही लखनऊ जेलसे रिहा कर दिये गये।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

ए

ओ

औ

क

ख

घ

च

ध

न

प

फ

ब

य

श

स

ह